AN ANALYTICAL STUDY OF

THE SUKTIS IN THE COMPLETE WORKS

OF

TULSIDAS

THESIS SUBMITTED TO
THE UNIVERSITY OF COCHIN
FOR THE DEGREE OF
DOCTOR OF PHILOSOPHY

BY

V. PADMINI

UNDER THE SUPERVISION OF

Dr. N. E. VISWANATH IYER

DEPARTMENT OF HINDI

UNIVERSITY OF COCHIN

COCHIN - 22

1975

analytical study of the Suktis in the

Complete works of

TULSIDAS

[त]ुलसी - साहित्य में सूक्तियां

प्रस्तुत कर्ता

वि० पद्मिनी

निर्देशक- डा० एन०ई० विश्वनाथय्यर
हिन्दी विभाग
कोचिन विश्वविद्यालय
कोचिन -२२

१९७५

This is certify that this thesis is a bonafide record owork carried out by Smt. V. Padmini, under my supervion for Ph.D and no part of this has hitherto been sultted for a degree in any University.

Sd/-

Dr.N.E. Viswanatha Iyer, M.A.
(Sanskrit, Hindi) Ph.D.
Supervising Teacher.

Departmt of Hindi,
Cochin 'iversity,
Cochin-.

भू मि का
ooooooooooooooooo

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का विषय है - ` तुलसी दास की सूक्तियाँ का विशद अध्य ` । इसमें संपूर्ण तुलसी - साहित्य में उपलब्ध सूक्तियाँ का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है ।

प्रात: स्मरणीय तुलसीदास के कृतित्व पर अभी तक अनेक शोध-प्रबंध लिखे जा चुके हैं । इसलिए इस नये प्रबन्ध के औचित्य पर सहज ही प्रश्न उठ सकता है इसके स्पष्टीकरण में , मै विनम्रता से यही निवेदन करना चाहती हूं कि सूक्ति के विशेष प्रसंग को लेकर तुलसी साहित्य का अध्ययन, मनन कम किया गया है । अभी तक तुलसी की सूक्तियाँ का स्वतंत्र विवेचन किसी भी शोध-ग्रन्थ में नं हुआ । तुलसी की सूक्तियां कालिदास की सूक्तियाँ की तरह भाव-पूर्ण औ मधुर है यद्यपि इनके विषय विभिन्न है तो भी मुख्यता भक्ति भावना की है ।न सूक्तियाँ पर विचार करते करते मुझे लगा कि यह अत्यन्त गंभीर शोध विषय हो सकता है । अतएव मैने यथा-संभव प्रयत्न करके यह छोटा सा प्रबन्ध प्रस्तुत किया है ।

विषय विवेचन का क्रम प्रस्तुत करते हुए यह निवेदन है कि इस शोध प्रबन्ध संपूर्ण विचारों को आठ अध्यायों में बताने का प्रयत्न हुआ है ।

प्रथम अध्याय में उत्तर भारत के वैष्णव-भक्ति-आन्दोलन का एक सामान्य अध्ययन है । सबसे पहले दक्षिण में भक्ति का प्रादुर्भाव हुआ था । वहां वैष्णव भक्ति के अनेक श्रेष्ठ आचार्य हुए । भक्ति की वह धारा दक्षिण से धीरे-धीरे उत्तर भारत की ओर बहने लगी । भक्ति- आन्दोलन के प्रसंग पर रामानन्द जी का नाम अत्यधिक आदर से लिया जाता है । उत्तर भारत में आकर भक्ति-धारा दो विभाग में विभक्त हो गयी । कृष्ण भक्ति शाखा और राम भक्ति शाखा । कृष्ण भक्ति शाखा के अग्रणी कवि सूरदास है । रामभक्ति शाखा

के उन्नायक गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी प्रतिमा के प्रकाश से पूरे साहित्य को चमत्कृत कर दिया । विदेशी महाकवियों के बीच भी तुलसीदास जी का श्रेष्ठ स्थान रहा है । अत: उनके बाद जो कवि हुए वे तुलसीदास जी के सामने निष्प्रभ हो गये । इस अध्याय के अन्त में रामकाव्य कारों में तुलसी का स्थान भी निर्धारित किया है ।

द्वितीय अध्याय में सूक्ति की प्रचलित परिभाषायें दी गयी हैं । संस्कृत साहित्य सूक्ति से संबंधित ग्रन्थों से भरा रहता है । संस्कृत में सूक्ति साहित्य का भी खूब विकास हुआ है । प्राकृत , पालि और अपभ्रंश भाषाओं में भी सूक्ति-प्रधान ग्रन्थ उपलब्ध हैं । हिन्दी साहित्य के प्राचीन कवियों में रहीम, वृन्द,तुलसी आदि कवियों ने सूक्ति - प्रधान दोहों की रचना की है । उपर्युक्त चारों भाषाओं में संस्कृत भाषा सूक्तियों की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है ।

तृतीय अध्याय में तुलसी के काव्यों की भूमिका प्रस्तुत की गयी है । ' रामचरित मानस ' उनका लोकप्रिय ग्रन्थ है । जिसकी प्रशस्ति संसार भर में फैली है । सभी दृष्टियों से इस गन्थ का अध्ययन इस अध्याय में प्रस्तुत है । इसके बाद विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, गीतावली, कृष्णगीतावली, रामाज्ञाप्रश्न, रामललानहछू, पार्वतीमंगल, जानकीमंगल, बरवै रामायण, वैराग्य सन्दीपनी और हनुमान बाहुक के बारे में चर्चा है । अलंकार , रस आदि की ओर भी दृष्टिपात किया है । इस प्रकार गोस्वामी की संपूर्ण रचनाओं का एक छोटा सा अध्ययन इसमें मिल सकता है ।

चतुर्थ अध्याय में ' रामचरित मानस ' की श्रेष्ठ सूक्तियों का विस्तृत अध्ययन है ।' मानस ' में अनेक विविध विषयक सूक्तियां हैं । हर एक सूक्ति को लेकर उसका विशद अध्ययन इसमें प्रस्तुत है । उदाहरणार्थ तुलसीदास जी ने राम - नाम - जप की महिमा, राम-कथा की महिमा, राम- महिमा, राम-विमुख की दुर्गति , सत्संग का महत्व आदि अनेक विषयों से संबंधित बहुत सी सूक्तियां

मानस ` में दी है। इनके अलावा विविध- विषयक सूक्तियां भी उपलब्ध होती हैं। उनका भी विशद उल्लेख है।

पंचम अध्याय में ` दोहावली ` की प्रमुख सूक्तियों की विशद चर्चा है।` दोहावली ` में भी रामनाम - जप की महिमा, राम-कथा की महिमा आदि सूक्तियों की ही प्रधानता है। यह तो एक संग्रह ग्रन्थ है। इसमें मिलने वाली कुछ सूक्तियां ` मानस `, रामाज्ञाप्रश्न आदि ग्रन्थों में भी मिलती हैं। इस प्रकार अनेक सूक्तियों का संकलन है यह ग्रन्थ। भगवान रामचन्द्र जी की कथा की धारा इसमें प्रवहमान नहीं। अनेक नैतिक सूक्तियों का संकलन होने के कारण इस ग्रन्थ की महत्ता अत्यधिक बढ़ी है।

छठे अध्याय का प्रतिपादन विषय तो तुलसी की अन्य कृतियों में उपलब्ध प्रमुख सूक्तियों का विश्लेषण है।` विनय पत्रिका ` रामभक्त तुलसीदास ने ` शिवभक्ति ` और रामभक्ति में समन्वय स्थापित किया है। शिव की महिमा से संबंधित सूक्तियां मिलती हैं, साथ साथ राम से संबंधित सूक्तियां भी।` कवितावली ` में राम से संबंधित कुछ सुन्दर सूक्तियों के अलावा और भी कुछ सूक्तियां हैं। ` गीतावली ` और ` कृष्णागीतावली ` में बहुत कम सूक्तियां हैं। ` पार्वती मंगल ` और ` जानकी मंगल ` में सामान्य तथ्यों पर आधारित सूक्तियां उपलब्ध होती हैं। इनकी संख्या भी थोड़ी है। ` राम लला नहछू ` में उल्लेखनीय कोई सूक्ति नहीं है। ` रामाज्ञाप्रश्न ` में ज्योतिष से संबंधित सूक्तियों की प्रधानता है। ` बरवै रामायण ` में राम - नाम से संबंधित सूक्तियों की प्रधानता है। ` वैराग्य सन्दीपनी ` में सन्तों की महिमा, वैराग्य की श्रेष्ठता और शान्ति की पवित्रता से संबंधित सूक्तियां हैं। ` हनुमान बाहुक ` में रामचन्द्र के श्रेष्ठ भक्त हनुमान की महिमा का गान है। इनमें सूक्ति अधिक नहीं हैं।

प्रबन्ध के सातवें अध्याय में सूक्तियों में अभिव्यक्त गोस्वामीजी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला गया है। यहां संपूर्ण ग्रन्थों की सूक्तियों को लेकर उन्हें विषयानुसार विभाजित किया है। उन सूक्तियों में अभिव्यक्त उनके व्यक्तित्व और विचार की झांकी मिली, उसे भी अंकित कर दिया है। विविध विषयक सूक्तियों में भी उनका व्यक्तित्व और विचार स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त हुआ है। उनकी सूक्तियों से यह बात स्पष्ट है कि गुरु के प्रति उनके हृदय में अत्यधिक पूज्य - भावना है। वे बुरे और अच्छे लोगों की संगति में रह चुके है, इसी कारण सत्संगति की महिमा की जानकारी उनमें रहती है। इस प्रकार उनकी सूक्तियों का अध्ययन करने पर उनके कई विचार समझ में आते हैं, साथ साथ उनका व्यक्तित्व भी।

आठवें अध्याय में सूक्तियों का स्रोत जानने का यत्न किया गया है। महाकवि तुलसीदास जी ने कई संस्कृत ग्रन्थों का आश्रय लिया है। वाल्मीकि-रामायण, अध्यात्म रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत्, भगवद्गीता आदि संस्कृत के श्रेष्ठ ग्रन्थों से उन्हें सूक्तियां लिखने की प्रेरणा मिली है। इन ग्रन्थों के अलावा संस्कृत के कई उत्कृष्ट ग्रन्थों से उन्होंने अपनी सूक्तियों की सामग्री ली है। उनकी कुछ सूक्तियां संस्कृत ग्रन्थों का ठीक ठीक अनुवाद - सी लगती हैं। कुछ सूक्तियों के लिए उन्होंने केवल सार ग्रहण किया है। कुछ सूक्तियां लोगों के बीच में प्रचलित लोकोक्तियों पर आधारित हैं। इसी अध्याय में सूक्तियों के साहित्यिक सौष्ठव पर भी प्रकाश डाला गया है। अलंकार, रस, छन्द, भाषा आदि की दृष्टि से सूक्तियों की महत्ता बढ़ गयी है। इनका अध्ययन करने पर अलंकार, रस आदि के क्षेत्र में उनकी कुशलता जानी जा सकती है। यहां सूक्तियों का कलापक्ष भी अत्यधिक चमक उठा है। यह शोध - प्रबन्ध का अन्तिम अध्याय है।

परिशिष्ट में तुलसीदास की संपूर्ण सूक्तियों को अकारादि क्रम में रखा गया है।

इस प्रकार समस्त शोध प्रबन्ध में तुलसीदास की सूक्तियों का अध्ययन नवीन प्रकार से अंकित करने का प्रयास किया गया है ।

इस शोध प्रबन्ध के प्रस्तुतीकरण में सर्वप्रथम श्रेय मेरे पूज्य गुरुदेव डा० एन०ई० विश्वनाथय्यरजी को देना चाहिए । उन्होंने मेरे हर प्रयत्न में मेरा साथ दिया है । उन्होंने अपने व्यस्त जीवन में भी मुझे ठीक-ठीक पथ पर चलाने के लिए समय निकाल लिया है । उनके प्रति हमेशा मेरे मन में आदर की भावना रहेगी । अगर उनका सहयोग मुझे नहीं मिलता तो मैं इस प्रकार का एक शोध-प्रबन्ध कभी नहीं लिख सकती । मेरे इस छोटे शोध-प्रबन्ध को रूप देने में उनके सुझावों ने ही वास्तविक सहायता दी है । मैं उनके प्रति हमेशा आभारी हूं । विभाग के दूसरे प्राध्यापकों ने भी मेरी खूब सहायता की है ।

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी जी ने मेरी कई जिज्ञासाओं का समाधान जिस वात्सल्य से किया था उसका मैं सादर स्मरण किये बिना नहीं रह सकती ।

कोचिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग का ग्रन्थागार भी ग्रन्थागारों के लिए एक सुन्दर नमूना है । यहां से मुझे आवश्यक सभी ग्रन्थ प्राप्त हो गये हैं । इस पुस्तकालय में तुलसीदास जी से संबंधित अनेक आलोचना ग्रन्थ मुझे मिले हैं । इसी कारण पुस्तकों की खोज करते करते इधर - उधर घूमना नहीं पड़ा । इस पुस्तकालय की अध्यक्षा भी मेरी श्रद्धा की पात्र रही है ।

कई विद्वानों के शोध प्रबन्धों से मैंने प्रेरणा ग्रहण की है । अन्य जितने विद्वज्जन मेरे इस कठिन प्रयत्न में मेरे साथ साथ रहे हैं उन सभी के प्रति आभार व्यक्त करना मैं अपना कर्तव्य समझती हूं । मेरे शोध - प्रबन्ध के नेता कवि तो राम चरित के अमर गायक गोस्वामी तुलसीदास जी हैं । मैं यह छोटा शोध- प्रबन्ध उन्हीं पूज्य पुरुष के चरण-कमलों पर सादर समर्पित करती हूं ।

वि. पद्मिनी

हिन्दी-विभाग
कोचिन विश्वविद्यालय
कोचिन-२२.

:000000000000:

विषय - सूची

पहला अध्याय :-

उत्तर भारत के वैष्णव - भक्त कवियों का सामान्य अध्ययन और भक्त कवियों में तुलसी का स्थान

'विष्णु' शब्द की व्याख्या - वैष्णव-भक्ति- वैष्णवों की सामान्य विशेषतायें - भक्ति की व्याख्या - भक्तिकालीन परिस्थितियां - भक्तिधारा- वैष्णव - भक्त - आचार्य - रामानन्द परंपरा - निर्गुण भक्ति शाखा- इस धारा के प्रमुख कवि कबीरदास - सगुण भक्ति शाखा - कृष्ण भक्ति धारा- इस भक्ति धारा के विभिन्न संप्रदाय- अष्टछाप - कृष्ण भक्ति शाखा के फुटकल कवि- राम भक्ति शाखा-इस शाखा के प्रमुख कवि तुलसीदास - भक्त कवियों के बीच तुलसी का स्थान । पृष्ठ-संख्या - २ — ५५

द्वितीय अध्याय :-

सुभाषित या सूक्ति की व्याख्या और साहित्य में उसका स्थान

सूक्तियों के विभिन्न रूप - संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी में सूक्तियों का स्रोत और उसका विकास सूक्ति - सुभाषित और सूक्ति की व्याख्या - साहित्य में सूक्ति का स्थान - सूक्ति के विभिन्न प्रकार - सूक्ति का मूल स्रोत और उसका विकास- संस्कृत साहित्य में सूक्ति नीति - पालि - साहित्य में सूक्ति नीति - प्राकृत साहित्य में सूक्ति नीति- अपभ्रंश - साहित्य में सूक्ति नीति - हिन्दी साहित्य में सूक्ति का स्थान । पृष्ठ-संख्या -५६ — २०२

तृतीय अध्याय :-

तुलसी के काव्यों की भूमिका

गोस्वामी तुलसीदास के जीवन के संबंध में विभिन्न विद्वानों में मत-भेद गोस्वामी जी की रचनाओं का अध्ययन - रामललानहछू - वैराग्य सन्दीपनी - बरवै रामायण - पार्वती मंगल - जानकी मंगल - रामाज्ञाप्रश्न- दोहावली - कवितावली - हनुमान-बाहुक - कृष्ण गीतावली - गीतावली - विनयपत्रिका रामचरित मानस । पृ० - संख्या - २०३ — २२५

चतुर्थ अध्याय :-

रामचरित मानस की प्रमुख सूक्तियों का विशद अध्ययन ।

राम-नाम-महिमा - इस कथा की महिमा राम-भक्ति की महिमा - राम भजन महिमा- राम की कृपा की महिमा - राम की महिमा- राम विमुख की दुर्गति - गुरु महिमा- सन्त महिमा - संगति का परिणाम - खल निन्दा भाग्यवाद - नारी - तपस्या की महिमा - समन्वय - भावना - स्वामी - सेवक संबंध - ब्राह्मण-महिमा - मित्र - विषय वासना - राजनीति - परहित का महत्व - सत्य महिमा - विविध विषयक सूक्तियों का अध्ययन ।

पंचम अध्याय :-

दोहावली की प्रमुख सूक्तियों का विशद अध्ययन भगवान राम से संबंधित सूक्तियां - भक्ति की पवित्रता - सज्जन- प्रशंसा-सत्संग का महत्व - विश्वास का महत्व - ज्योतिष -मूर्ख-व्यक्ति-समन्वय - साधना - नारी - अवसर की प्रधानता - प्रेम - मित्रता का महत्व - वेष-भूषा की अप्रधानता ।

छठा अध्याय :-

गोस्वामी जी की अन्य रचनाओं की प्रमुख सूक्तियों का विशद अध्ययन

विनयपत्रिका - कवितावली - गीतावली - जानकीमंगल - पार्वती मंगल - श्रीकृष्णगीतावली - रामाज्ञाप्रश्न - वैराग्य सन्दीपनी - बरवै रामायण- हनुमान बाहुक - प्रष्ठ - संख्या - ४७२ — ५५९

सा त वां अ ध्या य :-

सूक्तियों में अभिव्यक्त गोस्वामी का व्यक्तित्व और उनके विचार

व्यक्तित्व के तीन स्रोत -

गोस्वामी जी की प्रकृति - गोस्वामी जी के विचार - सूक्तियों के आधार पर । प्रष्ठ - संख्या - ५५२ — ६६०

आ ठ वां अ ध्या य :-

तुलसी दास जी की सूक्तियों का स्रोत और सूक्तियों का साहित्यिक सौष्ठव ।

संस्कृत के श्रेष्ठ ग्रन्थों में सूक्ति का स्रोत

उचित शब्द - योजना - अलंकार - विधान भाषा - रस - छन्द । प्रष्ठ - संख्या - ६६५ — ७६७

उपसंहार प्रष्ठ - संख्या - ७६५ — ७७०

परिशिष्ट - सूक्तियों की अकारादि - सूची - प्रष्ठ संख्या - ७७२ — ८५७

सहायक ग्रन्थ - सूची प्रष्ठ - संख्या - ८५५ — ८८८

ooooooooooooooo

प ह ला अ ध्या य

oooooooooooooo

उत्तर भारत के वैष्णव भक्ति - आन्दोलन का एक सामान्य अध्ययन और भक्त - कवियों के बीच तुलसीदास का स्थान

कहा गया है कि वैष्णव वे हैं जो दूसरों की पीड़ा भली-भांति समझकर उसे दूसरे के कार्य में लगे रहते हैं। [१] गांधी जी भी इस तत्व से सहमत होने वाले है। दूसरों के दु:खों को जी-जान से वैष्णव जन दूर करते हैं, उनका हृदय तो पवित्र और सच्चा होता है।

वैष्णव- भक्ति में इष्टदेव के नामस्मरण पर अत्यधिक महत्ता दी गयी है। भगवान की लीलाओं का गायन उन्हें अत्यधिक पसन्द है और उनकी कथाओं का श्रवण भी। नाम- स्मरण से पापी अपने पाप-कर्मों से एकदम मुक्त होकर पवित्र बन जाता है।

ये वैष्णव - भक्त सब कुछ अपने भगवानों के चरण- कमलों पर अर्पित करते हैं। उनकी एकमात्र अभिलाषा भगवान की रूप-माधुरी का पान करने और उसी में मग्न होने की है।

डा० द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने अपने ग्रन्थ में वैष्णव-भक्ति की विशेषता के संबन्ध में कहा है :- " वैष्णव भक्ति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें दूसरों की पीड़ा, वेदना एवं व्याधि को अपनी ही समझ, उनके प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकट की जाती है।" । [२] वे किसी भी प्राणी में भेदभाव नहीं मानते।

१- वैष्णव जन तो तेने कहिये पीर पराई जाणे रे ।। कल्याण पत्रिका,
वर्ष -४४ अंक-११
गांधी जीवन का सूत्र
पृष्ठ-१२५६

२- साकेत में काव्य संस्कृति और दर्शन : डा० द्वारिका प्रसाद सक्सेना
पृष्ठ-३४८

शरणागति की महत्ता पर वे बल देते हैं। भक्त की रक्षा का सारा उत्तरदायित्व भगवान पर निर्भर रहता है। शरणार्थी भक्त की उपेक्षा भगवान कभी नहीं करते।

सारे वैष्णव-भक्त कवि गुरु की संकुचित ज्ञान-राशि पर गर्व करते हैं और उन पूज्य गुरुवर के चरणकमलों पर श्रद्धा और आदर के फूल समर्पित करते हैं।

निर्गुण भक्त कबीरदास जी गुरु को गोविन्द से भी बड़ा मानते हैं :-

' गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागूं पांव।
बलिहारी गुरु आपने गोविन्द दियो बताय॥ [१]

भक्तिकाल के दूसरे कवियों ने भी ' गुरु ' को श्रेष्ठ स्थान दे दिया है। गोस्वामी जी ने भी यह आदर-भावना व्यक्त की है।

' बंदौ गुरु पद कंज कृपासिंधु नर रूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रवि कर निकर॥ [२]

' भागवत - धर्म ', वैष्णव धर्म का एक दूसरा नाम है। पं० बलदेव प्रसाद उपाध्याय ने कहा है - ' वैष्णव - धर्म भक्ति-प्रधान धर्म है और भक्ति का संबंध मानव-हृदय से है। मानव-हृदय की एकता उद्घोषित की गयी है। फलत: वैष्णव-धर्म किसी भी मानव को भगवत्प्रेम से वंचित रखने के लिए उद्यत

१- कबीर वचनावली - अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध (संग्रह कर्ता)
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, बारहवां संस्करण, संवत्-२०२१, पृष्ठ-१२१ (१२६) श्लोक३००

२- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी - बालकाण्ड, पृष्ठ-७

नहीं है । [१]

वैष्णव का अर्थ है - आत्मशुद्धि और नीतिमय जीवन, अहिंसा और सत्य ।

' वैष्णव - भावना की सबसे महत्वपूर्ण बात व्यक्तिगत ईश्वर की कल्पना और उसकी भक्ति है '। [२]

विष्णु की उपासना में मन को केन्द्रित करनेवाले है वैष्णव - भक्त । लेकिन क्रमश: विष्णु के किसी एक रूप की आराधना करनेवाले वैष्णवों की कोटि में रखे जाने लगे ।

वैष्णव भक्ति ने जीवन की गतिविधियों पर अपना प्रकाश डाला है । साहित्य भी इस प्रभाव से बच नहीं सका ।

भक्ति की व्याख्या :-

सभी भक्त कवियों ने भक्ति को श्रेष्ठ साधन माना है । ' भज ' धातु से बना हुआ है भक्ति -शब्द में मन की स्वाभाविक भाव-धारा होने के कारण भक्ति का अत्यधिक महत्व होता है । श्रद्धा और विश्वास के सहित होने पर ही भक्ति का मूल्य बढ़ जाता है ।

' शाण्डिल्य भक्ति सूत्र ' में भक्ति को व्याख्या यों दी है :-

' सा परानुरक्तिरीश्वरे ' - अर्थात् ईश्वर के प्रति अपूर्व अनुराग रखने को ' भक्ति ' की संज्ञा दी जाती है ।

१- भागवत-संप्रदाय- पं० बलदेव प्रसाद उपाध्याय - प्रथम संस्करण, पृष्ठ-५

२- हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ- डा० जय किशन प्रसाद खण्डेलवाल, पृष्ठ-१२२, संस्करण १९७२

' भक्ति रसामृत सिन्धु ' में भक्ति का स्वरूप स्पष्ट किया गया है ।

' अन्याभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम् ।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा ।। [1]

' श्रीमद् भागवत में भी भक्ति की चर्चा मिलती है ।

' वासुदेवे भगवति भक्तियोग: प्रयोजित: ।
जनयत्याशु वैराग्यं ज्ञानं च यदहैतुकम् ।। [2]

उपर्युक्त ग्रन्थों के अलावा तैत्तरीयोपनिषद् , कठोपनिषद् विष्णु पुराण आदि ग्रन्थों में भी भक्ति की स्पष्ट व्याख्या मिलती है ।

' श्रीमद् भागवत ' में भक्ति का स्वरूप और भी स्पष्ट किया गया है । भागवत में ' नवधा ' भक्ति का उल्लेख मिलता है

' श्रवणं कीर्तनं विष्णो : स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ।। [3]

१-भक्ति रसामृत सिंधु- भाष्यकार आचार्य विश्वेश्वर, सिद्धान्त शिरोमणि संपादक -विजयेन्द्र स्नातक,पृष्ठ-१०-श्लोक-११

२-श्रीमद्भागवत महापुराणम् - महर्षि वेदव्यास प्रणीतं, सरल हिन्दी व्याख्या सहितं गीताप्रेस गोरखपुर, अध्यायं-२-श्लोक-७,पृष्ठ-५२

३-श्रीमदभागवत महापुराणम् - महर्षि वेदव्यास प्रणीतं , सरल हिन्दी व्याख्या सहितम्, स्कन्ध-७, अध्याय-५ श्लोक-२३ पृष्ठ-७६६

जो भगवान के चरणकमलों के प्रति अनन्य भक्ति रखता है वही यथार्थ भक्त है ।

गोस्वामी जी तो ज्ञान और भक्ति में कुछ भी अन्तर नहीं मानते । भक्ति के प्रभाव से माया दूर हट जाती है ।[१] भक्ति रूपी चिन्तामणि भक्तों के अन्तर्मन को हमेशा प्रकाशमान करती रहती है ।

दूसरे अनुसंधाता ने भक्ति की व्याख्या यों दी है :-

" एक वाक्य में कह सकते हैं कि भक्ति जीव की भगवदोन्मुख उदात्तीकृत और नि:स्वार्थ भावधारा है जो अनन्यता और आत्म समर्पण के अनिवार्य तत्वों से समन्वित होती हुई प्रिय संयोग के परम समुद्र में प्रविष्ट हो जाती है ।"[२]

पुराण ग्रन्थों और अन्य कुछ पौराणिक ग्रन्थों में भक्ति का उल्लेख मिलता है । मन के कोमल भाव भगवान की भक्ति का सहारा पाकर जाग उठते हैं ।

हिन्दी के भक्ति-साहित्य के उद्भव के पहले देश की राजनीतिक दशा कैसी थी, धार्मिक दशा कैसी थी, यह भी समझना है । उस समय मुसलमानों की प्रतिष्ठा अत्यधिक बढ़ चुकी थी । लेकिन हिन्दू जनता को इसका बुरा परिणाम भोगना पड़ा । मुसलमान कई प्रकार से हिन्दुओं को सताते रहते थे । उन्होंने मन्दिरों

१- भगतिहि ग्यानहिं नहिं कछु भेदा । उभय हरहिं भव संभव खेदा ।।
रामचरितमानस- विजयानन्द त्रिपाठी
उत्तरकाण्ड-पृष्ठ-२१०

२- हिन्दी और तेलुगु वैष्णव भक्ति - साहित्य -
डा० के०रामनाथन, पृष्ठ-७६
प्रथम संस्करण-१९६८

और मूर्तियों को तोड फोड डाला । हिन्दू - जनता आर्द्र होकर दीन स्वर में करूणक्रन्दन करती थी, भगवान से करूणा की दृष्टि डालने की प्रार्थना करती थी ।

धार्मिक दशा भी गिरी हुई थी । ज्ञान, कर्म और भक्ति इन तीनों के सामंजस्य से धार्मिक दशा की उन्नति कर सकते थे । लेकिन इन तीनों का मेल न होने के कारण धार्मिक दशा अत्यधिक बिगड़ी हुई थी ।

फिर भी भक्ति की स्वच्छन्द और पवित्र धारा ने सारी सामाजिक अस्तव्यस्तता को मिटा डाला और सुन्दर सामाजिक स्थिति का प्रोद्घाटन किया भक्ति के सूत्र में हिन्दू और मुसलमान दोनों ~~एकता के सूत्र में~~ पिरोये गये ।

भक्ति-भावना की धारा वैदिक काल से अविराम गति से प्रवाहित है । आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति किये हुए सन्तों को ` तमिल ` में ` आलवार ` नाम से अभिहित किया जाता था । तमिल प्रदेश के वैष्णव भक्त आलवारों ने वैष्णव-भक्ति -आन्दोलन का सूत्रपात किया । इन आलवार भक्तों के आविर्भाव के बाद इस आन्दोलन ने एक जन- आन्दोलन का रूप प्राप्त कर लिया । आलवार भक्तों से ही वैष्णव -भक्ति-आन्दोलन का प्रारंभ हुआ । हिन्दी प्रदेश के और आलवारों के भक्ति आन्दोलनों में अत्यधिक संबंध रहा है । कुछ विद्वान वैदिक युग से ही वैष्णव भक्ति-धारा को प्रवहमान मानते है । आलवारों के द्वारा ही वैष्णव -भक्ति विशाल रंगभूमि में पहुंच गयी, उसके विहार का क्षेत्र बढ़ने लगा । तब जाति का कोई प्रश्न नहीं रह गया था । सभी जातियों के लोग इस विशाल क्षेत्र में आ गये । इन आलवारों ने वैष्णव भक्ति को लोक-धर्म बनाने का स्तुत्य कार्य किया । ये लोग ईसा की छठी शताब्दी से नवीं शताब्दी तक वैष्णव -भक्ति आन्दोलन के लिए प्रयत्न करते रहे ।

दक्षिण का वैष्णव भक्ति आन्दोलन और उत्तर का वैष्णव भक्ति आन्दोलन इन दोनों का संबंध रहा है । तमिल प्रदेश में ` वैष्णव ` मतावलंबियों

को आल्वार और शैव मतावलंबियों को ' नायनमार ' पुकारा जाता था। उस युग में ' भक्ति ' की अत्यधिक प्रधानता थी। और इसी कारण भक्ति का स्तर अत्यधिक ऊंचा उठा था। प्रसिद्ध आल्वार वैष्णव भक्त कवियों का उदय इसी समय हुआ था। इन वैष्णव और शैव संतों ने भक्ति की जिस पुनीत गंगा को प्रवाहित किया था, उसी में नहाकर सारे लोग अनुपम आनन्द के अधिकारी बन गये। उन भक्तों ने वैष्णव - भक्ति आन्दोलन को आगे बढ़ाने में एकता से परिश्रम किया था।

आल्वारों के संबंध में डा० मलिक मोहम्मद ने जो कुछ कहा है वह ठीक ही निकला है।

> यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं कि आज वैष्णव-धर्म का जो स्वरूप दृष्टिगोचर होता है, उसको वह रूप देने का पूरा पूरा श्रेय आल्वारों को है। आल्वारों ने भक्ति को यदि वह रूप नहीं दिया होता तो आज वैष्णव भक्ति का स्वरूप कुछ भिन्न ही होता, इसमें सन्देह नहीं।' [१]

आल्वार नाम-स्मरण को अत्यधिक प्रधानता देनेवाले थे। भगवान की सेवा में लीन रहना सच्चे भक्त का लक्षण है।

१- वैष्णव-भक्ति आन्दोलन का अध्ययन - डा० मलिक मोहम्मद,
पृष्ठ-६६
पहला संस्करण-१६७२

इन शैवों और वैष्णवों के विचारों में वस्तुत: कोई भेद नहीं है । केवल आराध्य देवों में अन्तर दीख पडता है । आल्वार और शैव सन्तों की अनुपम देन है ।

आल्वारों की रचनाओं का एक संग्रह मिलता है जिसका नाम है `दिव्य प्रबन्धम्` । ४००० पद होने के कारण यह ग्रन्थ `नालायिर दिव्य प्रबन्धम्` के नाम से जाना जाता है ।

शैव-भक्त कवि :-

इन शैव-भक्तों की संख्या ६३ होने पर भी प्रमुख शैव कवि चार-पांच ही रहे हैं । `अप्पर` नामक कवि का, शैव- नायनमारों में प्रमुख स्थान है जिनका सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ है `तेवारम्` । अप्पर के अलावा संबन्धर, सुन्दरमूर्ति और माणिक्कवाचकर नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।

उपर्युक्त वैष्णव आल्वार और शैव नायनमारों के सम्मिलित प्रयत्न से वैष्णव-भक्ति-आन्दोलन उत्तरोत्तर व्यापक रूप धारण करता रहा । वैष्णव भक्ति -धारा को नया सुन्दर रूप देने का सारा श्रेय आल्वारों को है ।

आल्वारों के वाद आचार्य नाथमुनि का नाम विशेष आदर से लिया जाता है । संस्कृत तथा तमिल के प्रकाण्ड पण्डित नाथमुनि ने आल्वारों के पदों का संग्रह किया जो `नालायिर दिव्य प्रबन्धम्` के नाम से विख्यात है । इस विद्वान ने सभी जातियों के लोगों के लिए भक्ति का दरवाजा खोलकर रखा । विशिष्टाद्वैतावाद की नींव नाथमुनि ने ही डाली है । `न्याय तत्व`, `पुरुष निर्णय`, `योग रहस्य` ये तीनों ग्रन्थ संस्कृत में लिखी उनकी रचनायें हैं । भक्ति आन्दोलन के प्रचार के लिए उस समय के आचार्यों का योगदान बहुत महत्वपूर्ण रहा है ।

डा० रतिभानुसिंह ने ठीक ही कहा है --` सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत

दिनों तक देश के उत्तरी भाग से कुछ पृथकता रखनेवाले दक्षिण भारत को भी ~~उत्तर भाग से कुछ पृथकता रखनेवाले दक्षिण भारत को भी~~ उत्तर भारत के निकट संपर्क में लाने, दोनों की आध्यात्मिक मान्यताओं में सामंजस्य स्थापित करने तथा संपूर्ण भारत में भक्ति आन्दोलन का व्यापक प्रचार एवं भक्ति की शास्त्रीय स्थापना करने की दृष्टि से इन आचार्यों का पृथक महत्व है।' [१]

यामुनाचार्य :-

नाथमुनि के पौत्र यामुनाचार्य ने भी वैष्णव -धर्म के प्रचार के लिए पर्याप्त योगदान किया है। ' भागवत धर्म ' की स्थापना में इनका हाथ अत्यधिक रहा है। यामुनाचार्य की रचनायें हैं - ' स्तोत्र रत्नम् ', ' चन्द:श्लोकी ', ' सिद्धि-त्रय ', ' आगम-प्रामाण्य ', ' गीतार्थ -संग्रह ', और महापुरुष-निर्णय। जनता तक भागवत सिद्धान्तों को पहुंचाने का महत्वपूर्ण कार्य इन्होंने किया है।

रामानुजाचार्य :-

वैष्णव - संप्रदाय के प्रवर्तकों में रामानुजाचार्य का नाम अत्यधिक पूज्य-भावना से लिया जाता है। इस आचार्य ने दक्षिण -भारत में भक्ति-भावना को सुस्पष्ट और सुदृढ़ रूप दे दिया। उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व ने लोगों को उनकी ओर आकृष्ट किया। उन्हीं के अतिशय प्रभाव से भक्तिमय वातावरण की सृष्टि हो गयी। उनके पूर्व - कालीन आचार्यों के होते हुए भी

१- भक्ति- आंदोलन का अध्ययन - डा० रतिभानु सिंह नाहर

पृष्ठ-१६६

वैष्णव-मत को सुन्दर और सुव्यवस्थित रूप देने का पूरा श्रेय रामानुजाचार्य को ही है। समस्त भारत इस आचार्य की भक्ति-नदी में आप्लावित हो उठी। डा० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल ने अपने ग्रन्थ में कहा है -

'रामानुज की भक्ति में चिन्तन और ज्ञान का विशेष स्थान है।' [1]

इन्होंने भक्ति के राजपथ पर सभी जातियों के लोगों को चलने दिया और छोटी समझी जानेवाली जाति के लोगों को शिष्य के रूप में ग्रहण किया। अपने मत के प्रचार के लिए इन्होंने जनता की भाषा को अपनाया। नाथमुनि, यामुनाचार्य जैसे आचार्यों ने जिस वैष्णव मत का कलेवर अलंकृत किया उस वैष्णव मत के पोषण का सारा श्रेय श्री रामानुजाचार्य को है।

रामानुजाचार्य ने अपने 'श्री संप्रदाय' की स्थापना चौदहवीं शताब्दी में की है।

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनके संबंध में कहा है - 'रामानुजाचार्य मर्यादा के बड़े पक्षपाती थे। उनके संप्रदाय में खान-पान, आचार-विचार आदि पर बड़ा जोर दिया जाता है।' [2]

रामानुजाचार्य ने 'यामुनाचार्य' का शिष्यत्व ग्रहण कर इस श्री-संप्रदाय की स्थापना की। उनकी रचनायें :- उनकी श्रेष्ठ रचनाओं पर कुछ विचार करना आवश्यक है। वेदार्थ संग्रह, वेदांतसार, वेदांत दीप, गीता- भाष्य, गद्य-त्रय, श्री भाष्य आदि ग्रन्थों में उन्होंने भक्ति-विषयक सिद्धान्तों का प्रतिपादन

१- हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ- डा० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल
अष्टम संस्करण, १९७२, पृष्ठ -१५६

२- हिन्दी साहित्य की भूमिका- डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी,
पृष्ठ-६१, छठी बार-१९५९

किया है । उनके ग्रन्थ और भाष्य संस्कृत में रचित हैं । उनका सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ श्री भाष्य है जिसमें उनके विशिष्टाद्वैतवाद का निरूपण सुचारू ढंग से हुआ है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी उनके विशिष्टाद्वैतवाद पर कुछ विचार व्यक्त करते हैं :-

उनके विशिष्टाद्वैतवाद के अनुसार चिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म के ही अंश जगत के सारे प्राणी हैं जो उसी से उत्पन्न होते हैं और और उसी में लीन होते हैं । [१]

रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैतवाद :-

रामानुजाचार्य ने अद्वैतवाद का खण्डन इसलिए प्रारंभ किया जिससे कि भक्ति का प्रचार हो सके । उनके अनुसार ब्रह्म से जीवात्मा और जगत में भिन्नता दीख पडने पर भी सचमुच भिन्नता नहीं है ।

रामानुजाचार्य की एक लंबी शिष्य-परंपरा है । उनके ७४ शिष्यों ने वैष्णव-भक्ति-आन्दोलन को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण कार्य किया है ।

माध्वाचार्य :-

रामानुजाचार्य के बाद माध्वाचार्य का समय आता है । ` आनन्द तीर्थ ` नाम से भी ये अभिहित किये जाते हैं । वैष्णव धर्म के प्रचार-कार्य में रामानुजाचार्य के अलावा माध्वाचार्य, निंबार्काचार्य, विष्णु स्वामी इन आचार्यों का भी हाथ रहा है ।

इनके द्वारा ` द्वैतमत ` की स्थापना हुई जिसके द्वारा ` शंकर ` के मायावाद का विरोध किया गया है । वे रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैत मत को स्वीकार करने के लिए भी तैयार नहीं हुए । उनके द्वारा स्थापित ` द्वैतमत `

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
पृष्ठ-११४

की अत्यधिक श्रेष्ठता मानी गयी है । दक्षिण भारत का यह एक श्रेष्ठ मत है ।

' प्रस्थानत्रयी ' उनका लिखा हुआ भाष्य है । इसके अतिरिक्त उन्होंने ' ब्रह्मसूत्र - भाष्य, अणुभाष्य, दशोपनिषद भाष्य, गीता भाष्य ' इन भाष्यों की रचना की है ।

माध्वमत में सभी अवतारों का उल्लेख होने पर भी ' राधाकृष्ण ' के बारे में वे मौन ही रहे हैं । माध्वाचार्य ने पूर्ण द्वैत की स्थापना भक्तों के लिए पहले पहल की है । दक्षिण और उत्तर भारत के लोग उनके मत के अनुयायी रहे हैं ।

डा० रतिभानु सिंह नाहर ने माध्वाचार्य के संबंध में कहा है :-

" भक्ति की पूर्ण स्थापना में पूर्ववर्ती आचार्य के प्रशंसनीय कार्यों को अभी भी एक ऐसे उन्नायक की आवश्यकता थी जो इस आन्दोलन को अत्यधिक स्फूर्ति प्रदान करता और वह आवश्यकता माध्वाचार्य के आविर्भाव से ही पूर्ण हुई ।" १

माध्वाचार्य का दार्शनिक मत श्री संप्रदाय से करीब करीब मेल खाता है । इसीकारण माध्व- संप्रदाय पर श्री संप्रदाय का प्रभाव पड़ना एक मामूली बात है , इसमें अचरज केलिए स्थान नहीं ।

उनके प्रमुख शिष्य रहे - नरहरितीर्थ, पद्मनाभ तीर्थ, माधव तीर्थ, अक्षोभ्यतीर्थ आदि । इन माध्व संप्रदायवालों ने मोक्ष- प्राप्ति के अनेक साधन माने हैं - गुरु सेवा, शरणागति, वैराग्य, बड़ों के प्रति प्रेम, दया आदि । दक्षिणी कर्नाटक इस संप्रदाय का मुख्य केन्द्र रहा है ।

माध्वाचार्य ने उपनिषदों, वेदान्त सूत्रों, और कतिपय स्वतंत्र ग्रन्थों

१- भक्ति आन्दोलन का अध्ययन - डा० रतिभानुसिंह नाहर
पृष्ठ-१७१

की रचना की है । वैष्णव-भक्ति आन्दोलन चलाने में माध्वाचार्य किसी के पीछे नहीं रहे ।

निंबार्काचार्य और उनका संप्रदाय :-

कर्नाटक प्रान्त में जन्मे व्यक्ति होने पर भी ये अधिकांश समय वृन्दावन में ही रहे । इनका आविर्भाव ११६२ ई० में हुआ था ।

ये आचार्य निंबार्क-संप्रदाय के प्रवर्तक है । इनका मत 'द्वैताद्वैत' या 'भेदाभेद' नाम से जाना जाता है । माध्वाचार्य के समान इन्होंने भी शंकर के मायावाद का खण्डन किया है । राधा-कृष्ण भक्ति का शास्त्रीय ढंग से विवरण करने का कार्य इन्होंने किया है । निंबार्क संप्रदाय, श्री संप्रदाय से कुछ कुछ संबंधित है ।

निंबार्काचार्य के महत्वपूर्ण ग्रन्थ ये हैं - वेदान्त - पारिजात सौरभ। और सिद्धान्तों के प्रतिपादन का महत्वपूर्ण कार्य किया है ।

राधा और कृष्ण की उपासना पर जोर डालनेवाला निंबार्क संप्रदाय रामानुजाचार्य की भक्ति पद्धति से भी साम्य रखता है । डा० बदरी नारायण श्रीवास्तव ने अपने ग्रन्थ में निंबार्क संप्रदाय के संबंध में कहा है - 'निंबार्क-संप्रदाय में भगवत्कृपा को ही मोक्ष का साधन कहा गया है । नवधा-भक्ति के अभ्यास से भगवत्प्रेम मिलता है । इस संप्रदाय में शांत, दास्य, सख्य, वात्सल्य और उज्वल आदि ही भक्ति के पांच भेद माने गये हैं । [१]

१- रामानन्द-संप्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव -
डा० बदरी नारायण श्री वास्तव
प्रथम संस्करण - पृष्ठ-२४

विष्णु स्वामी और उनका संप्रदाय :-

दक्षिण के वैष्णव भक्त आचार्यों में विष्णुस्वामी का नाम भी विशेष आदर से लिया जाता है, जिन पर रुद्र-संप्रदाय की स्थापना का सारा श्रेय पड़ता है । उस समय विष्णु स्वामी नाम के चार आचार्यों के नाम बतलाये गये हैं । विष्णु स्वामी वे हैं जो तमिल प्रदेश के पाण्ड्य राजा के राजगुरु के पुत्र हैं जिन्होंने ' सर्वज्ञ सूक्त ' नामक भाष्य की रचना की, जो वेदान्त - सूत्रों पर आधारित है । कांचीपुरम के निवासी थे दूसरे विष्णुस्वामी । तीसरे विष्णुस्वामी वल्लभाचार्य की गुरु परंपरा के थे ।

विष्णुस्वामी का उदय पहले पहल कब हुआ, इसका ठीक ठीक ज्ञान हमें नहीं मिलता । जो हो, यह बात ठीक है कि उनका उदय याने आविर्भाव तमिल प्रदेश में हुआ था ।

' सर्वज्ञ सूक्त ' नामक ग्रन्थ विष्णुस्वामी का लिखा हुआ है जिसमें इस संप्रदाय के सिद्धान्तों का प्रतिपादन मिलता है । ' शुद्धाद्वैतवाद ' के प्रवर्तक विष्णुस्वामी जिनका कुछ संबंध ' माधव मत ' से है । विष्णुस्वामी मानते है कि माया सच्चिदानन्द स्वरूप ईश्वर के अधीन है । वे ईश्वर और जीव के बीच भिन्नता मानते हैं ।

दक्षिण में उत्पन्न ये वैष्णव संप्रदाय हिन्दी के क्षेत्र को बहुत प्रभावित करने में समर्थ सिद्ध हुए ।

राघवानन्द :-

रामानन्द स्वामी के गुरु राघवानन्द राम के प्रति पुनीत भक्ति रखने वाले उधर के आचार्य है । ' भक्तमाल ' से हमें यह सूचना मिलती है कि ये हर्यानन्द

स्वामी के शिष्य हैं । उनकी रचनाओं का कोई पता नहीं मिलता । फिर भी ' सिद्धान्त-पंचतन्मात्रा ' उनसे रचित ग्रन्थ मालूम पड़ता है । लेकिन इसकी सत्यता पर विश्वास नहीं किया जा सकता ।

रामानन्द :-

ये दक्षिण और उत्तर के वैष्णव भक्ति-आन्दोलन के संयोजक के रूप में विराजमान है । वैष्णव-भक्ति को प्रश्रय देकर उसका प्रचार और प्रसार करने वाले आचार्य है रामानन्दजी ।लोक का कल्याण करनेवाले विष्णु के रूप को उन्होंने महत्व दिया है । भगवान रामचन्द्रजी को अत्यधिक पूज्य पुरुष मानकर उनकी उपासना पर बल दिया गया है ।

पहले दक्षिण में उद्भूत भक्ति-आन्दोलन की लहर धीरे धीरे उत्तर भारत की ओर बही । रामानन्द जी के प्रादुर्भाव से यह भक्ति धारा उत्तर में अविराम गति से बहने लगी ।

रामानन्द जी ने रामानुजाचार्य के मतावलंबी होने पर भी विष्णु के राम रूप को उपासना का केन्द्र बनाया । रामानन्दी संप्रदाय की यही विशेषता है ।

वर्णाश्रम की चहार दीवारी को तोड़कर वे जाति के स्वच्छन्द और विशाल क्षेत्र में आ गये । आचार्य शुक्ल जी उपर्युक्त विचार से सहमत है :-

रामानुज संप्रदाय में दीक्षा केवल द्विजातियों को दी जाती थी, पर स्वामी रामानन्द ने राम-भक्ति के द्वार सब जातियों के लिए खोल दिया और एक उत्साही विरक्त दल का संघटन किया जो आज भी ' वैरागी ' के नाम से प्रसिद्ध है । [१]

१-हिन्दी साहित्य का इतिहास- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ-११६
चौदहवां पुनर्मुद्रण, संवत्-२०१६

रामानन्द जी वैरागी संप्रदाय के प्रवर्तक हैं । उन्हीं को रामावत संप्रदाय की स्थापना का पूरा श्रेय प्राप्त होता है । वे अपने संप्रदाय में विभिन्न विरोधी मतों को भी स्थान देते थे । इसी कारण वे समन्वयात्मक दृष्टि रखने वाले आचार्य माने जाते हैं । रामोपासना के नवीन पन्थ का निर्माण इन्हीं के पुनीत हाथों संपन्न हुआ ।

डा० रतिभानु सिंह नाहर इस पर विचार करते हुए कहते हैं :- भक्ति आन्दोलन को जिस नयी दिशा की अपेक्षा थी उसका सृजन रामानन्दजी ने अपने अथक परिश्रम तथा लगन से करके इसमें एक नई प्रगति ला दी थी ।'[1]

उत्तर - भारत में काशी व मथुरा , वैष्णव भक्ति के प्रचार के केन्द्र रहे हैं । पं० बलदेव उपाध्याय मानते हैं - ' दक्षिण भारत से लेकर उत्तर-भारत में विष्णु -भक्ति के प्रधान प्रचारक रामानन्द ही माने जाते हैं ।'[2] दक्षिण और उत्तर के भक्ति आन्दोलन को सम्मिलित करने वाले महापुरुष रामानन्द होने पर भी कुछ इस तत्व को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होते ।

रामानन्द के विचार में मोक्षप्राप्ति के प्रमुख साधनों में भक्ति को प्रमुख स्थान देना परम आवश्यक है । उनके मन की भक्ति-भावना ही यहां स्पष्टत: उमड़ पड़ी है । उन्होंने सगुण तथा निर्गुण दोनों संप्रदायवालों केलिए

१-भक्ति आन्दोलन का अध्ययन - डा० रतिभानु सिंह नाहर
पृष्ठ-१६७

२-भागवत संप्रदाय - पं० बलदेव उपाध्याय, प्रथम संस्करण-२०१० वि०
पृष्ठ-२४३

स्वीकृत एक पद्धति को अपनाया है । शायद इसी कारण वे सगुण- निर्गुण भक्ति धारा के केन्द्र माने गये है ।

रचनायें :-

वैष्णव मताब्जभास्कर ' और ' श्रीरामार्चन पद्धति ' ये दोनों संस्कृत में रचित उनकी महत्वपूर्ण रचनायें हैं । उनका ' आनन्द भाष्य ' अत्यधिक उत्कृष्ट माना जाता है ।

शिष्य-परंपरा :-

' भक्तमाल ' में रामानन्द के शिष्यों का उल्लेख मिलता है - आनन्तानंद सुखानंद, सुरसुरानन्द, नरह्यानिन्द, भवानंद, पीपा, कबीर, सेना, धन्ना, रैदास, परमानन्द, महानन्द और श्रीआनंद उनकी शिष्य-परंपरा में आते हैं । रामानन्द जी के इन शिष्यों में कबीर और रैदास के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । उनके शिष्यगणों ने राम-भक्ति की पुष्टि और प्रचार का गुरुभार वहन किया । ये शिष्य स्वतंत्र विचार रखनेवाले व्यक्ति थे । अत: इनके नाम से अलग पंथ की स्थापना हुई ।

उनके शिष्यों के बीच ' कबीर दास ' श्रेष्ठ स्थान के अधिकारी हैं । उन्होंने अपने स्वतंत्र मत की स्थापना की । रैदास , पीपा आदि कवियों के भी शिष्य हुए हैं ।

रामानन्द ने भगवान के चरणों पर अपने आपको अर्पित किया । उनके अनुसार भक्ति के क्षेत्र में ऊंच नीच का भाव रखना अच्छा नहीं, जाति की भी कोई परवाह नहीं करना है । वैष्णव भक्ति-आन्दोलन का क्षेत्र व्यापक बनाने के कार्य में रामानन्द जी और उनके शिष्यों ने कठिन प्रयत्न किया ।

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने उनके संबंध में कहा है :-

सच पूछा जाय तो मध्य युग की समग्र स्वाधीन चिन्ता के गुरु रामानन्द ही थे ।' [१]

डा० रामकुमार वर्मा रामानन्द जी को राम-भक्ति के वास्तविक आचार्य मानते हैं -

उत्तरी भारत में राम-भक्ति का जो प्रचार हुआ उसका एकमात्र श्रेय रामानन्द ही को है । रामानन्द के पूर्व यद्यपि अनेक वैष्णव भक्त हो चुके थे तथापि रामभक्ति के वास्तविक आचार्य रामानन्द ही समझे गए ।' [२]

रामानन्द-संप्रदाय के समान सुसंगठित संप्रदाय उत्तर भारत में नहीं हुआ । हृदय की पवित्रता पर वे अत्यधिक आस्था रखते थे । उनके विचार परिस्थिति के अनुकूल परिवर्तित होते हैं । हिन्दी साहित्य केलिए उनकी सेवा कम नहीं है ।

पन्द्रहवीं शताब्दी में भक्ति की नदी दक्षिण से उत्तर की ओर बहने के लिए रामानन्द ही प्रेरणा-स्रोत के रूप में खड़े थे । उत्तर-भारत में आकर भक्ति की यह धारा दो शाखाओं में विभक्त हो गयी । ब्रह्म के निर्गुण और सगुण रूप के आधार पर निर्गुण भक्ति धारा और सगुण भक्ति धारा बन गयी ।

१- हिन्दी साहित्य की भूमिका - डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी पृष्ठ- ५४

निर्गुण भक्ति शाखा :-

निर्गुण भक्ति-धारा में ईश्वर के निर्गुण रूप की उपासना की जाती है। कबीर, नानक, दादू आदि सन्त भगवान के सगुण रूप पर आकृष्ट न होकर उनके निर्गुण रूप पर मुग्ध होते थे। वे प्रभु को निराकार मानकर उसी में तल्लीन होते थे।

निर्गुण भक्ति धारा की ज्ञानाश्रयी शाखा के प्रवर्तक कबीरदास और प्रेममार्गी शाखा के प्रवर्तक मलिक मोहम्मद जायसी हैं।

कबीरदास :-

निर्गुण भक्ति-धारा के उन्नायक कबीरदास जी ने भक्ति-आंदोलन को आगे बढ़ाने के कार्य में महत्वपूर्ण साहित्यिक योगदान दिया है। उनका जन्म-संवत् १४५६ के लगभग माना गया है। माना जाता है कि उनका जन्म एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से हुआ। लेकिन उनका पालन पोषण एक मुसलमान परिवार में हुआ था।

पढ़े लिखे न होने पर भी इन्होंने सत्संगति से वेद, उपनिषद आदि का ज्ञान प्राप्त किया।

समाज सुधारक :- वे एक सच्चे समाज सुधारक के रूप में उपस्थित होते हैं। बाह्याडंबर पर वे तनिक भी विश्वास नहीं रखते थे और आन्तरिक साधना पर बल देते थे। धार्मिक पाखण्डों का उन्होंने खूब विरोध किया। उन्होंने समाज में उच्च और निम्न जाति के लोगों में एकता बनाये रखकर एक सुन्दर समाज की नींव डाली।

डा० जयकिशन प्रसाद कबीरदास जी के जीवन के उपर्युक्त पहलू पर विचार कर कहते हैं :-

वास्तव में भारतीय समाज में बन्धुत्व के भाव कबीर के द्वारा व्यक्त किये गये ।` १

कबीरदास की ऐसी सामाजिक -व्यवस्था पर लोग अत्यधिक गर्व करते हैं ।

गुरु के प्रति व्यवहार :-

कबीरदास ने गुरु को ब्रह्म से भी ऊंचा पद दिया है ।

` गुरु गोविन्द दोऊ खडे काके लागूं पांय ।
बलिहारी वा गुरु की, गोविन्द दिया मिलाय ।। [२]

गुरु हमारे जीवन के पथ-प्रदर्शक है, हमें अज्ञान-पथ से ज्ञान-पथ में लाते है, ऐसे गुरु की वन्दना अगर न करें तो ज़रा सोचो, आगे क्या हो जाएगा ।

उनकी रचना-

उनकी वाणी का जो ` बीजक ` नामक संग्रह है उसके रमैनी , सबद, साखी- ऐसे तीन खंड है । उनकी कविता में छन्दों और अलंकारों का स्थान गौण है । ~~उनकी कविता में छन्दों और अलंकारों का स्थान गौण है, वरन्~~ काव्य का भावपक्ष अत्यधिक गंभीर हो उठा है ।

१- हिन्दी साहित्य कीप्रवृत्तियां - डा० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल
पृष्ठ-१३४

२- कबीर वचनावली- संग्रह कर्ता- अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध,
पृष्ठत्११६ श्लोक-३००

मानव-मात्र को उन्होंने जो सन्देश दिया है वह अत्यधिक याद रखने योग्य है।

डा० रामकुमार वर्मा उनके सन्देश की गरिमा यों बताते हैं -

' कबीर का सन्देश कृत्रिम भेदभाव रहित विश्व - प्रेम - मूलक था, यद्यपि वह विश्वव्यापी न हो सका।' [१]

अब सूफी संतों के सांस्कृतिक समन्वयात्मक प्रयत्न की ओर ध्यान देना है। सूफी आन्दोलन का इतिहास पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी तक चलता रहा।

ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती जब भारत में प्रचारक के रूप में आ गये तभी से सूफीमत का आविर्भाव हुआ। उनके चार संप्रदाय माने गये हैं।

(अ) चिश्ती - संप्रदाय
(आ) सुहरावर्दी संप्रदाय
(इ) कादरी संप्रदाय
(ई) नक्शबन्दी संप्रदाय

चिश्ती संप्रदाय के प्रचारक रहे हैं मुइनुद्दीन चिश्ती। भारत में इस संप्रदाय का विशेष प्रचार हुआ। सुहरावर्दी संप्रदाय के प्रचारक जियाउद्दीन अबुल नजीब तथा अब्दुल कादिर रहे, कादरी संप्रदाय के शेख अब्दुल कादर जिलानी और नक्शबन्दी के ख्वाजा बहाउद्दीन नक्शबन्द। ये सूफी और वैष्णव आपसी संपर्क में रहने वाले थे। इसीलिए सूफीमत पर वैष्णव भक्ति का असर पड़ा है।

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन - डा० रामकुमार वर्मा
पंचम संस्करण, पृष्ठ-२६६

सगुण भक्ति धारा :-

इस धारा के कवि भगवान के सगुण रूप की उपासना को अधिक सुगम मानते है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी का कहना है -

सगुणोपासक भक्त भगवान के सगुण और निर्गुण दोनों रूप मानता है , पर भक्ति केलिए सगुण रूप ही स्वीकार करता है, निर्गुण- रूप ज्ञान-मार्गियों के लिए छोड़ देता है । ` १

सगुण भक्ति शाखा में कृष्ण की उपासना करनेवाले कृष्ण-भक्ति शाखा के और राम की उपासना करने वाले राम भक्ति-शाखा के अन्तर्गत आते हैं ।

डा० मुंशीराम शर्मा इस युग के भक्ति काव्य के बारे में कहते है - ` इस युग का भक्तिकाव्य एक ऐसा मंजुल उद्यान है, जिसके एक पार्श्व को श्याम-रंग-मग्ना कलिन्दजा सिंचित कर रही है और दूसरे पार्श्व को मर्यादामात्र की श्वेतिमा से मंडित रामगंगा ।` २

मुंशीराम शर्मा के इस कथन में अत्यधिक चारुता भरी है ।

सगुण भक्त भगवान के अवतार में आस्था रखते हैं और उनकी लीला-माधुरी का आनन्द उठाते हैं ।

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
पृष्ठ-७९

२- भक्ति का विकास - डा० मुंशीराम शर्मा -
चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
पृष्ठ-४१०

कृष्ण भक्ति शाखा :-

दक्षिण के आचार्यों के अनुयायी भक्तों के द्वारा भक्ति की आंधी ने उत्तर भारत में भी हलचल मचायी। वैष्णव आचार्यों ने जो संप्रदाय चलाये उन संप्रदायों के कारण सारा दक्षिण और उत्तर भारत वैष्णव-भक्ति से सराबोर हो उठा। लोकरंजक कृष्ण को उपासना-मूर्ति के रूप में स्वीकार कर कृष्ण-भक्ति शाखा के कवि काव्य-रचना करने लगे। हिन्दी प्रदेश में १६ वीं शताब्दी के आसपास प्रचलित संप्रदायों ने वैष्णव-भक्ति-आन्दोलन को आगे बढ़ाने का सफल प्रयत्न किया। उत्तर-भारत के वैष्णव-संप्रदाय रामभक्ति और कृष्णभक्ति के प्रचारकार्य में लगे रहे।

कृष्ण भक्त कवियों में विद्यापति को सबसे पहला स्थान देना चाहिए।

विद्यापति :-

मैथिली कोकिल विद्यापति ने श्रृंगार-लीलाओं में मग्न राधा और कृष्ण का सुनहला चित्र खींचा है। आश्रित कवि होने के कारण उन्हें उस राजा को सन्तुष्ट रखना था। शायद इसी कारण वे कभी श्रृंगार की नदी में उन्मक्त होकर थिरकते रहते थे।

विद्यापति श्रृंगारी कवि हैं या भक्त कवि ? इस बात को लेकर विद्वानों में काफी मतभेद है। उन्हें श्रृंगारी कवि कहने के लिए प्रभूत प्रमाण हमारे सम्मुख उपस्थित हैं। संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित होने पर भी इन्होंने संस्कृत के अतिरिक्त अवहट्ठ और मैथिली भाषा में भी काव्य-रचना की है। संस्कृत में उन्होंने ' शैव सर्वस्वसार, दुर्गाभक्तितरंगिणी, पुरुष परीक्षा आदिकाव्य, अवहट्ठ भाषा में कीर्तिलता, कीर्तिपताका और मैथिली भाषा में पदावलियों की रचना की है।

डा० रामकुमार वर्मा ने उचित ही लिखा है -

'विद्यापति की कविता में यद्यपि अधिक व्यक्तिगत विचार नहीं है, पर उसमें भावोन्माद की प्रचंड धारा वर्षा-कालीन नदी के वेग से किसी प्रकार भी कम नहीं है।'[१]

कृष्ण को उपासना-मूर्ति मानकर उनके विभिन्न रूपों को लेकर कुछ संप्रदाय विकसित हुए, जिनके नाम नीचे दिये गये हैं।

वल्लभ संप्रदाय, चैतन्य संप्रदाय, राधावल्लभ संप्रदाय और हरिदासी संप्रदाय या सखी-संप्रदाय ।

भक्ति-आन्दोलन को नया मोड़ देने का सारा श्रेय वल्लभाचार्य और चैतन्य महाप्रभु को है।

वल्लभ संप्रदाय :-

इस संप्रदाय के भीतर बहुत कृष्ण भक्त कवि हुए। श्री वल्लभाचार्य ने अपने दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हुए एक संप्रदाय की स्थापना की जो वल्लभ-संप्रदाय के नाम से प्रचलित है।

इनका जन्म समय सन् १४७८ ई० में पड़ता है। इनके पिता तैलंग ब्राह्मण थे, इनके पिता का नाम लक्ष्मण भट्ट है और माता का इल्लमागरू है। छोटी उम्र में ही इन्होंने वेद, पुराण, दर्शन आदि का अध्ययन किया।

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा
पृष्ठ-५०७

डा० मालिक मोहम्मद ने कहा है :- ` कहा जाता है कि वल्लभाचार्य ने १० वर्ष की आयु में ही वेद, वेदांत , दर्शन तथा पुराणों का अध्ययन कर लिया था और वे काशी में प्रसिद्ध हो गए ।` [१]

उन्होंने अनेक देशों का भ्रमण किया, तीर्थस्थानों में काशी उनका प्रमुख केन्द्र रही है । काशी के अलावा मथुरा, वृन्दावन आदि देशों का भी पर्यटन उन्होंने किया । उन्होंने श्रेष्ठ वैष्णव-भक्तों की मुलाकात से उनसे वैष्णव सिद्धान्तों का अध्ययन किया । विद्वानों से शास्त्रार्थ करके वे अपने मत के प्रचार में लगे रहे । अपने संप्रदाय के केन्द्र के रूप में उन्होंने व्रज-भूमि को ही अपनाया था ।

कृष्णदेव भारी ने अपने ग्रन्थ में लिखा है :-

` वैष्णव-धर्म के प्रचार में स्वामी रामानन्द से भी अधिक कार्य वल्लभाचार्य ने किया है ।` [२]

समस्त उत्तरभारत वल्लभाचार्य के अनुपम तेज से प्रभावित हो गया ।

नास्तिकों और अन्य मतवादियों का खण्डन करने में भी वे चूके नहीं थे । अपने मत का प्रचार करने केलिए अनेक देशों का पर्यटन कर अन्त में उन्होंने व्रजभूमि में अपनी गद्दी की स्थापना की । फिर उन्होंने श्री नाथ जी के मन्दिर का निर्माण किया ।

१- वैष्णव भक्ति आन्दोलन का अध्ययन - डा० मलिक मोहम्मद
पृष्ठ ३६८

२- मध्यकालीन कृष्ण काव्य - कृष्णदेव भारी
पृष्ठ-२५, प्रथम संस्करण १९७०

अपने सिद्धान्तों को प्रचार करने के लिए उन्होंने कुछ ग्रन्थों की भी रचना की । उनके प्रमुख ग्रन्थ ये है :-

पूर्व मीमांसा भाष्य, उत्तरमीमांसा या ब्रह्म सूत्र भाष्य, श्रीमद्भागवत की सूक्ष्म टीका, तत्वदीपनिबंध और सोलह छोटे छोटे प्रकरण ग्रन्थ ।

शुद्धाद्वैत ` नाम से उनका दार्शनिक सिद्धान्त चलता है । उनके मत में ब्रह्म, सत्, चित् और आनन्द स्वरूप है । वे जगत की वास्तविकता पर अत्यधिक विश्वास है ।

शुक्ल जी ने उनकी उपासना पद्धति के बारे में यों कहा है - वल्लभ संप्रदाय में जो उपासना पद्धति या सेवा-पद्धति ग्रहण की गई उसमें भोग, राग तथा विलास की प्रभुत सामग्री के प्रदर्शन की प्रधानता रही है ।` [१]

` पुष्टिमार्ग ` की स्थापना वल्लभाचार्य जी ने ही की । उनके अनुसार जीव के पुष्टि-जीव, मर्यादा-जीव, प्रवाह-जीव ऐसे तीन भेद हैं । कृष्ण भक्ति-साहित्य पुष्टि मार्गी भक्त कवियों के द्वारा संपन्न हुआ है ।

भक्ति-साधना मार्ग में वल्लभाचार्य का शुद्धाद्वैतवाद ` पुष्टिमार्ग ` के नाम से पुकारा गया है । वल्लभाचार्य के अनुसार जीव भगवान का अनुग्रह पाने में असमर्थ निकलता है तो वह जीवन में कभी सुख का अनुभव नहीं कर सकता ।

वल्लभाचार्य के छोटे पुत्र विट्ठलनाथ जी ने वल्लभ संप्रदाय के प्रचार का महत्वपूर्ण कार्य किया । विट्ठलनाथ जी ने कुछ ग्रन्थों की रचना की जिनके नाम इस प्रकार है :-

विद्वन्मण्डल, भक्तिहंस, भक्ति-निर्णय, निबन्ध-प्रकाश-टीका, सुबोधिनी टिप्पणी, शृंगार-रस-मण्डल `

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल-पृष्ठ-१५३ संवत् २०१६

अष्टछाप ` नामक आठ कवियों की मण्डली की स्थापना विट्ठलनाथ जी के पुनीत हाथों द्वारा संपन्न हुई । 'यह अष्टछाप ही है, जिसकी प्रेरणा से समस्त भारतीय जीवन कृष्ण भक्ति के रंग में रंगा गया ; चारों और मन्दिरों में कृष्ण-संकीर्तन की पवित्र,मधुर और संगीतमय ध्वनि गूंज उठी । ` [१] उपर्युक्त कथन कृष्णदेव भारी का है ।

विट्ठलनाथ जी ने पुष्टिमार्गी कवियों में से श्रेष्ठ आठ कवियों को चुनकर ` अष्ट छाप ` की प्रतिष्ठा की । उन अष्टछापी कवियों के नाम नीचे दिये हैं -

सूरदास, परमानन्द दास, चन्द्रभुजदास, नन्ददास, कृष्णदास,

कुंभनदास, छीतस्वामी और गोविन्दस्वामी अष्टछाप के कवि है । इनमें सूरदास, परमानन्द दास , कुंभनदास और कृष्णदास ये चारों वल्लभाचार्यजी के प्रिय शिष्य है । गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास ये चारों विट्ठलनाथ जी के शिष्य हैं ।

अष्टछाप के इन कवियों में ` सूरदास ` ही सर्वश्रेष्ठ कवि हैं , इसी कारण पहले पहल उन्हीं पर विचार करना है ।

सूरदास ने हिन्दी साहित्य को काव्य-सौन्दर्य के द्वारा समृद्ध किया है । उन्होंने बालकृष्ण को आलंबन के रूप में लेकर जो वात्सल्य-धारा बहायी उसमें निमज्जित होकर सारे लोगों ने अनुपम आनन्द पाया । श्रृंगार रस के क्षेत्र को भी उन्होंने नहीं छोडा है । विलास केली कुशला राधा, कृष्ण के साथ जो जो लीलायें करती हैं उसका सुन्दर वर्णन उन्होंने किया है ।

१- मध्यकालीन कृष्णकाव्य - कृष्णदेव भारी - पृष्ठ -३७

सूरदास का काल-निर्णय अभी तक नहीं हुआ है । केवल उनके कुछ पदों और किंवदन्तियों से उनके समय का हल्का ज्ञान प्राप्त होता है । भक्तमाल चौरासी वैष्णवन की वार्ता, आइने- अकबरी, आदि ग्रन्थों से उनकी जीवनी का कुछ कुछ पता लगाया जा सकता है ।

इन्होंने संवत् १५८० में वल्लभाचार्य जी का शिष्यत्व ग्रहण किया । सूर का क्षेत्र तुलसी के समान उतना विस्तृत नहीं, फिर भी उन्होंने सारे जीवन का संस्पर्श कर काव्य लिखा है ।

शुक्ल जी ने अपने इतिहास में जो कुछ लिखा है वह सही निकला है :-

> जिस प्रकार रामचरित का गान करने वाले भक्त कवियों में गोस्वामी तुलसीदास का स्थान सर्वश्रेष्ठ है उसी प्रकार कृष्ण चरित गाने वाले भक्त कवियों में महात्मा सूरदास जी का । `[१]

सूरदास जी के तीनों ग्रन्थ - सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य लहरी- हिन्दी साहित्य के अमूल्य रत्न हैं । इन तीनों ग्रन्थों में सूरसागर की प्रामाणिकता को मानने वाले लोग ही अधिक हैं । इस ग्रन्थ को एक श्रेष्ठ कृति मानने में कोई आपत्ति नहीं ।

सूरसागर की प्रमुख कथा का आधार ` भागवत ` का दशम स्कंध है । कृष्ण के जन्म से लेकर उनके मथुरा जाने तक की घटनाओं का सुन्दर और सुमधुर चित्रण इसमें मिलता है ।

यद्यपि सूरदास जी ने अपने काव्यों में सभी रसों का प्रयोग किया है तो भी उन्हें वात्सल्य रस के क्षेत्र में जितनी सफलता मिली है उतनी सफलता और

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी
पृष्ठ-१६३

किसी को नहीं मिली है । वे बाल-मनोविज्ञान के कोने कोने झांक गये हैं । मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी वे सफल निकले हैं । डा० रामकुमार वर्मा ने इसी संदर्भ में कहा है :-

> ' सूरदास ने शिशु और बाल-जीवन की प्रत्येक भावना का इतना गंभीर अध्ययन किया है कि वे प्रत्येक भावना का और परिस्थिति के चित्र बड़ी कुशलता और स्वाभाविकता से उतार सकते हैं । विविध-मानसिक अवस्थाओं के जो चित्र खींचे गए हैं, वे मानवी भावनाओं के इतिहास में कभी पुराने नहीं होंगे ।' १

उन्होंने रसराज श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का मनोरम चित्रण किया है । कृष्ण और गोपियों की रति-क्रीडाओं का वर्णन उन्होंने किया है ।

सूरदास जी ने साहित्यिक ब्रजभाषा में अपनी कृतियों की रचना की है । ब्रजभाषा की कोमल कान्त पदावलियों से अलंकृत होने के कारण उनकी रचनायें अत्यधिक सुमधुर हो उठी हैं । सूरदास जी को कृष्णकाव्य का उन्नायक कविकुलतिलक कहने में कोई अत्युक्ति नहीं है ।

<u>न न्द दा स :-</u>

सूरदास के बाद अष्टछाप के कवियों में दूसरा नाम नन्ददास का है । भंवरगीत और रास पंचाध्यायी ' ये दोनों ग्रन्थ साहित्यिक भाषा में उनके रचित उत्कृष्ट ग्रन्थ हैं । इसके अलावा उन्होंने और कुछ ग्रन्थों की भी रचना की है । जिनके नाम इस प्रकार हैं - रूपमंजरी, रस मंजरी, अनेकार्थमंजरी,

---

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा
पृष्ठ-५३२-५३२
पंचम संस्करण-१९६४

विरह मंजरी, मानमंजरी, भाषा दशमस्कन्ध, सुदामा चरित, गोवर्द्धन-लीला, सिद्धान्त पंचाध्यायी, रुक्मिणी मंगल, दानलीला, जोगलीला आदि ।

माधुर्य एवं प्रसाद गुणों से ओतप्रोत उनके काव्य, भाषा-सौष्ठव की दृष्टि से अत्यधिक ऊपर उठ गये है ।

कृष्णदेव झारी मानते है :- ` नन्ददास की भाषा का प्रवाह और संगीत माधुर्य संस्कृत के ` गीतगोविन्द ` और मैथिल कवि विद्यापति की मधुर पदावली की याद दिलाते है ।` [१]

नन्ददास ने श्रृंगार ,करुणा, शांत इन तीनों रसों का विस्तृत वर्णन किया है ।

उन्होंने प्रवाहमयी ब्रजभाषा में काव्यों का सरस वर्णन किया है । नन्ददास की कविता के संबंध में डा० रामकुमार वर्मा लिखते है :-

> ` यदि तुलसी की कविता भागीरथी सी और सूर की पदावली यमुना के सदृश है, तो नन्ददास की मधुर कविता, सरस्वती के समान होकर कविता-त्रिवेणी की पूर्ति करती है ।` [२]

१- मध्यकालीन कृष्णकाव्य - कृष्णदेव झारी , पृष्ठ-६६

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-

परमानन्ददास :-

अष्टछाप के कवियों में वल्लभाचार्य के शिष्य परमानन्द दास का श्रेष्ठ स्थान है । इनकी कवितायें अत्यधिक सरस और तन्मय हो उठी हैं । अपने उपास्य देव श्रीकृष्ण की हृदय हारी लीलाओं में ये तल्लीन होकर उन्हें काव्य बद्ध कर देते थे । भगवत्प्रेम में अपने आप को भूलकर उसी में मग्न रहते थे । सूरदास के बाद वात्सल्य रस की अभिव्यंजना में ये कवि अत्यधिक सफल हो उठे हैं । उनके रचित ग्रन्थ का नाम है " परमानन्द सागर "

कृष्णदास :-

अष्ट छाप के अन्य कवियों से इनकी आयु बड़ी है । गृहस्थाश्रम का पालन करनेवाले थे व्यक्ति भगवान कृष्ण की भक्ति में तल्लीन रहने वाले कृष्णदास का कवि रूप भक्तरूप से गौण थे, अर्थात् ये पहले भक्त थे , बाद में कवि ।

कृष्णदास ने जिन पदों की रचना की है उनमें संयोग श्रृंगार का वर्णन अधिक मिलता है । उन्होंने सुन्दर और कोमल ब्रजभाषा में कृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है ।

चतुर्भुजदास :-

ये कुंभनदास के सुपुत्र थे । चतुर्भुज कीर्तन संग्रह , कीर्तनावली और दानलीला ये तीनों उनके पदों का संग्रह हैं । कृष्ण की लीलाओं का वर्णन सुचारू ढंग से उन्होंने किया । सरल भाषा में वे लिखा करते थे । ये कवि के साथ साथ गायक भी थे ।

गो वि न्द स्वा मी :-

कवि तथा गायक होने के कारण उन्होंने कृष्ण की विभिन्न लीलाओं का गान किया है। सरल ब्रजभाषा को उन्होंने अपनाया था। उन्होंने स्फुट पदों की रचना की है।

छी त स्वा मी :-

विट्ठलनाथ जी के शिष्य छीतस्वामी ने अष्टछाप के दूसरे कवियों के समान कोमल और सरस पदों की रचना की है। इनके पदों में श्रृंगारिकता का पुट भी मिलता है। इन्होंने भक्ति-संबंधी पदों की भी रचना की है।

कुं भ न दा स :-

अष्टछाप के अन्य कवियों से इनकी आयु बड़ी है। गृहस्थाश्रम का पालन करने वाले ये व्यक्ति विरागी भी थे। इन्होंने सुन्दर और कोमल ब्रजभाषा में कृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है।

चैतन्य महाप्रभु और उनका गौडीय संप्रदाय (सोलहवीं शताब्दी)

चैतन्य महाप्रभु वैष्णव भक्ति धारा के प्रमुख आचार्य हैं। उन्होंने भक्ति - रस से सारे उत्तर - भारत को आप्लावित किया और उसके फलस्वरूप समूचे उत्तर भारत में एक नवीन स्फूर्ति पैदा हुई।

उनका जन्म बंगाल में नदिया नामक स्थान में सन् १४८५ में हुआ। प्रथम पत्नी के देहान्त हो जाने के कारण उन्होंने दूसरा विवाह कर लिया।

उन्हें समस्त शास्त्रों का गंभीर ज्ञान था। ' ईश्वरपुरी ' नामक वैष्णव

से प्रभावित होकर इन्होंने सन्यास - आश्रम में प्रवेश किया और घर-बार छोड़कर विरक्त जीवन बिताने लगे । ये हरि - नाम - स्मरण को मुक्ति का साधन मानकर उसी मार्ग पर आगे बढ़ने लगे । ये तो भक्ति-भावना में मग्न होकर उसी में लीन रहते थे । ' नाम स्मरण ' से मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है, यही उनका विचार है । वर्णव्यवस्था पर उनकी आस्था नहीं थी ।

उन्होंने दक्षिण भारत के क्षेत्रों और भारत के प्रमुख तीर्थस्थानों का पर्यटन किया ।

'शिक्षाष्टक ' नामक ग्रन्थ चैतन्य महाप्रभु का लिखा हुआ है । वे कृष्ण की भक्ति की उमंग में अपने आपको खो देते थे । कोई कोई उन्हें कृष्ण का अवतार मानने केलिए तैयार थे ।

' कृष्ण भक्ति में चैतन्य ने राधा को विशेष स्थान दिया । संकीर्तन और नगर कीर्तन के द्वारा चैतन्य ने श्रीकृष्ण-भक्ति से समस्त उत्तर भारत को आप्लावित कर दिया । ' [1]

' अचिन्त्य भेदाभेद ' नाम से उनका मत प्रचलित है । भक्ति की उच्च कोटि तक पहुंचकर वे स्वयं राधा हो जाते हैं । उन्होंने भक्ति के विविध साधनों पर बल दिया है ।

चैतन्य महाप्रभु और उनके गौडीय संप्रदाय का उत्तर भारत में श्रेष्ठ स्थान है ।

राधावल्लभ संप्रदाय :-

श्री हित हरिवंश इस संप्रदाय के प्रवर्तक माने जाते है । इस संप्रदाय में

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा
पृष्ठ-६०६

में राधा और कृष्ण की युगल मूर्ति की उपासना की जाती थी । निंबार्क स्वामी की साधना -पद्धति के अनुयायी होकर हित हरिवंश ने ` राधावल्लभीय संप्रदाय ` नामक अलग संप्रदाय की स्थापना की । वे युगल मूर्ति की उपासना करने में अनुपम आनन्द का अनुभव करते थे । कृष्ण की अपेक्षा राधा की भक्ति में तल्लीन होना उन्हें अधिक पसन्द है ।

इस संप्रदाय में प्रेम तत्व को अत्यधिक महत्व दिया गया है । ` हित ` शब्द प्रेम केलिए प्रयुक्त किया गया है ।

हितहरिवंश ने किसी मौलिक दार्शनिक मत का प्रतिपादन नहीं किया । हितचौरासी में उनके सिद्धान्तों का प्रतिपादन मिलता है । इसमें कृष्ण की रसिकता ही मुख्य विषय है । ` भक्ति के मूल तत्व तथा उसके आलंबन आश्रयादि उपकरणों का सूक्ष्म विवेचन ही इस संप्रदाय का दर्शन कहा जा सकता है ।` [१]

हितहरिवंश के - राधासुधानिधि, हित-चौरासी - ये दोनों ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध हैं । राधा और कृष्ण की अलौकिक रूप छवि ही इन ग्रन्थों का प्रतिपाद्य विषय है । वियोग-भावना से अधिक संयोग-भावना का प्रमुख वर्णन इन्होंने किया है । ` भागवत रसिक की बानी ` हितहरिवंश की रचनाओं का संग्रह है ।

ब्रजभाषा के लोकप्रिय कवि होने के कारण इनकी रचनाओं में ब्रजभाषा का व्यवस्थित रूप देखा जा सकता है । ` इन्होंने ब्रजभाषा की बडी मधुर रचना की , इसीलिए ये श्रीकृष्ण की वंशी के अवतार कहे जाते थे ।` [२]

१- हिन्दी और तेलुगु वैष्णव भक्ति-साहित्य- तुलनात्मक अध्ययन - डा० के० राम नाथन, पृष्ठ-१०५, प्रथम संस्करण-१९६८

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ- ५६१

ब्रज की साहित्य-सृष्टि अधिकांशत: इस संप्रदाय के कवियों ने की है। काव्य सौष्ठव की दृष्टि से भी इस संप्रदाय के साहित्य का श्रेष्ठ स्थान है। हिन्दी साहित्य की दृष्टि से भी इसका अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

हरिदासी अथवा सखी संप्रदाय

सोलहवीं शती में इस संप्रदाय का आरंभ हुआ। स्वामी हरिदास इस संप्रदाय के मुख्य प्रवर्तक थे। इसे कुछ विद्वान निंबार्क संप्रदाय की शाखा मानते हैं। कारण यह हो सकता है कि हरिदास निंबार्क संप्रदाय के थे। किसी सिद्धान्त का प्रतिपादन उन्होंने अपने संप्रदाय के द्वारा नहीं किया। वे सखी भाव से राधा-कृष्ण की भक्ति-भावना में निमग्न हो गये। निंबार्क संप्रदाय के सिद्धान्तों का अनुसरण करके हरिदास जी अपने संप्रदाय के प्रचलन-कार्य में लगे रहे।

इस संप्रदाय में भी राधा-कृष्ण की युगल मूर्तियों की उपासना की जाती थी।

हरिदास जी की 'अष्टादश सिद्धान्त', 'केलिमाला' ये दो रचनायें प्राप्त हैं 'अष्टादश सिद्धान्त' उनके अठारह पदों का संकलन है और केलिमाल युगलमूर्ति राधा-कृष्ण की श्रृंगरिक लीलाओं का वर्णन है।

श्रृंगार-केलि का वर्णन होने से उन्हें श्रृंगारी कवि नहीं कहा जा सकता, कहना उचित भी नहीं, क्योंकि परमात्मा भगवान कृष्ण, राधा के प्रति उनके हृदय की उमडती भक्ति धारा ही उनकी रचनाओं में प्रवहमान है।

उपर्युक्त संप्रदायों में न पडनेवाले कुछ कवि होते हैं, उनका मूल्यांकन करना भी आवश्यक प्रतीत होता है।

मी रा बा ई :-

मीराबाई किसी संप्रदाय के अन्दर नहीं पडती थीं । ये मेड़तिया के राठौर रत्नसिंह की पुत्री थीं । मीराबाई ने संवत् १५७३ में चौकडी नामक गाँव में जन्म लिया था । उदयपुर के महाराणा कुमार भोजराज के साथ इनका विवाह हुआ था । पर अधिक समय तक इनके पति जीवित नहीं रहे ।

मीराबाई तो किसी भी संप्रदाय के घेरे में कृष्णभक्ति के उन्मुक्त वातावरण को चुनकर भक्ति में मग्न होने लगी । भगवान कृष्ण की भक्ति में ये अपने को भूलकर सन्तों की मण्डली में जाकर बैठती थीं । भक्ति के उन्माद में पडकर ये नाचती गाती थीं ।

ये माधुर्य भाव की उपासना में लीन रहा करती थीं । गीता गोविन्द की टीका, नरसीजी का माहरा, राग गोविन्द, राग सोरठ पद संग्रह ये चारों उनकी रचनायें है ।

मीरा ने भक्ति संबंधी कुछ पदावलियाँ की रचना की है, जो राग-रागनियों में गाने योग्य हैं । राजस्थानी-मिश्रित भाषा और शुद्ध साहित्यिक ब्रजभाषा में ये पद लिखा करती थीं । इनके काव्यों में गूंज उठनेवाली एकमात्र आवाज़ भक्ति की है ।

र स खा न :-

जाति के मुसलमान होते हुए भी वे श्रीकृष्ण के प्रेम में अत्यधिक तल्लीन रहनेवाले व्यक्ति थे । कृष्ण-काव्य केलिए उनकी देन अत्यधिक महत्वपूर्ण है ।

इनकी जीवनी की प्रमाणिक बातों की उपलब्धि अभी तक नहीं हुई है । ` शिवसिंह सरोज, भक्तमाल, मूल गोसाई चरित्र ` इन ग्रन्थों से उनसे

संबंधित कुछ बातें मिलती हैं । इन बातों से उनकी जन्म-तिथि और निधन-तिथि का ऊहापोह करना पडता है ।

प्रेम-वाटिका और सुजान-रसखान ये दोनों रसखान की रचनायें हैं । प्रेमवाटिका में प्रेम की महत्ता पर बल देकर उन्होंने प्रेम को भगवान से भी बढकर माना है । उनका प्रेम वासनामूलक न होकर पवित्र प्रेम है, वे भगवान के प्रेम में मग्न रहनेवाले थे ।

कवित्त- सवैयों में लिखे गये ` सुजान-रसखान ` में प्रधानतया गोपियों और कृष्ण के बीच में होनेवाली लीलाओं और प्रेम का वर्णन मिलता है ।

कोमल ब्रजभाषा में उन्होंने कवितायें लिखी हैं । ब्रजभाषा का पूरा पूरा सौन्दर्य उनकी रचनाओं में झलक पडता है ।

वे अपने इष्ट देव की भक्ति में इतनी तल्लीन है कि वे परिस्थिति तक भूल जाते हैं । इस मुसलमान कृष्ण-भक्त कवि की प्रशंसा कुछ विद्वानों ने की है ।

र ही म :-

रहीम अब्दुर्रहीम खानखाना अकबर के दरबारी कवि थे । उन्होंने सूक्तियों की रचना की है जो सारे लोगों के लिए पथ प्रदर्शक सिद्ध हुई है ।

उन्होंने कुछ ग्रन्थों की रचना की है जिनके नाम नीचे दिये गये हैं :-

(अ) रहीम दोहावली या सतसई

(आ) बरवै नायिका - भेद

(इ) रास पंचाध्यायी

(ई) श्रृंगार सोरठ

(उ) मदनाष्टक

उन्होंने कुछ काव्यों की और भी रचना की है लेकिन उपर्युक्त ग्रन्थ ही प्रसिद्ध निकले हैं।

डा० रामकुमार वर्मा ने इन्हीं ग्रन्थों को ही श्रेष्ठ माना है। [१]

` बरवै नायिका भेद ` को उनकी सफल रचना मानने में कोई आपत्ति नहीं। ` रहीम दोहावली ` से हमें इसका स्पष्ट ज्ञान मिलता है कि वे हिन्दी के एक श्रेष्ठ सूक्तिकार हैं। भक्ति, नीति आदि से संबंधित सूक्तियों की रचना उन्होंने की है।

` मदनाष्टक `, रास पंचाध्यायी ये दोनों काव्य भगवान कृष्ण से संबन्धित होने के कारण कृष्ण काव्य के अन्तर्गत रखे जाते हैं।

भाषा के क्षेत्र में रहीम पूर्ण सफल निकले हैं। ब्रजभाषा और अवधी भाषा के ज्ञाता वे तुर्की, फारसी, अरबी और संस्कृत आदि भाषाओं का ज्ञान भी रखते थे।

मुसलमान कवि रहीम हिन्दू धर्म से अत्यधिक आकृष्ट होने के कारण ही भग-वान श्रीकृष्ण की भक्ति में तल्लीन रहते थे।

न रो त्त म दा स :-

इन्हें कृष्ण-भक्त कवियों की कोटि में रखा जा सकता है।

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा
पृष्ठ-६००

उनके लिखे ग्रन्थ केवल दो ही है , सुदामा चरित और ध्रुव-चरित्र ।

' सुदामा चरित ' [६] के छोटी रचना होने पर भी इस ग्रन्थ की श्रेष्ठता के कारण ही नरोत्तमदास लोकप्रिय कवि बन गये । इस ग्रन्थ में भगवान श्रीकृष्ण और उनके आत्म- मित्र सुदामा की अनुपम मैत्री की एक सुन्दर झांकी मिलती है । अन्य कवियों के समान इन्होंने कृष्ण और गोपियों के बीच में होनेवाली लीलाओं का वर्णन न कर कृष्ण और सुदामा के द्वारा मित्रता का आदर्श हमारे सामने प्रस्तुत किया है, यही इस काव्य की श्रेष्ठता का निदान है ।

' ध्रुव चरित्र ' नामक ग्रन्थ अप्राप्य होने के कारण इसके संबंध में कुछ भी कहा नहीं जा सकता ।

नरोत्तमदास जी चलती हुई प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग करते हैं । अत: उनकी भाषा अत्यधिक स्वभाविक बन पडी है । भावों के अनुसार भाषा का प्रयोग करने में वे पटु हैं ।

राम भक्ति शाखा :-

रामानन्द जी ही राम भक्ति शाखा के सूत्रधार रहे है । उत्तर भारत में राम भक्ति के प्रचार का महत्वपूर्ण कार्य इनके हाथों संपन्न हुआ । दूसरे वैष्णव भक्तों के होते हुए भी राम-भक्ति धारा के प्रसंग में रामानन्द जी को उसका सारा श्रेय दिया जाना चाहिए ।

राम भक्ति शाखा के उन्नायक, हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य स्थान के अधिकारी भक्त कवि गोस्वामी जी के अलावा और कौन हो सकता है ? भक्ति-आन्दोलन के प्रसंग में भी कवि-कुल-चूडामणि गोस्वामी जी का स्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण है । गोस्वामी जी की प्रखर प्रतिमा के आगे राम भक्ति

शाखा के अन्य कवियों की आभा मन्द पड गयी । गोस्वामी जी के बाद राम भक्ति धारा मन्द गति से बहने लगी ।

> ' उन्होंने अपनी प्रतिभा के प्रकाश से राम काव्य को ही नहीं, वरन समस्त हिन्दी साहित्य को आलोकित कर दिया है । अभी तक हिन्दी साहित्य के इतिहास में तुलसीदास ही प्रथम कवि है जिन्होंने दोहा और चौपाई में रामकथा को पहली बार प्रस्तुत किया ।'[१]

सारी सामाजिक कुरीतियाँ और धार्मिक अत्याचारों के प्रति जागरूक होकर गोस्वामीजी उन्हें एकदम हमारी पुण्य-भूमि से निकाल दिया ।

कृष्ण भक्तिसाहित्य लोकरंजनकारी है तो रामभक्ति साहित्य ने लोक-रक्षक का काम किया । उसके उत्तम उदाहरण के रूप में गोस्वामी जी हमारे सामने आते हैं ।

उन्होंने जनता को नीतिवाक्य सुनाया जिससे प्रभावित होकर जनता का उद्धार हो गया । उनके विचारों में कितनी गरिमा है । कितनी महिमा है ।

> ' निस्सन्देह गोस्वामी तुलसीदास साहित्यिक, सामाजिक ,धार्मिक तथा नैतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में बेजोड असाधारण-प्रतिभा-संपन्न महाकवि हुए हैं । न केवल भारतीय विद्वन्मण्डली ने ही इनकी भारतीय सन्त्रस्त संभ्रान्त जनता को शान्ति, सुधारस पान करवाने की अनुपम देनों के लिए मुक्तकंठ से प्रशंसा की है, अपितु विदेशी निष्पक्ष समालोचक भी इनकी हृदय से सराहना करते हुए नहीं अघाते ।'[२]

१-हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास-डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३३६

२-तुलसीदास के काव्य में नैतिक मूल्य - डा० चरणदास शर्मा (शास्त्री) प्रथम संस्करण-१९७२, पृष्ठ-६५

देशी तथा विदेशी विद्वानों ने भी इनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा का ज्ञान पाया है । और इसी कारण वे निस्संकोच भाव से उनकी प्रशंसा की है ।

प्रत्येक साहित्य में युगीन परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है । अगर वह प्रभाव न पड़ा तो वह साहित्य कैसे कहला सकता । साहित्यकार या कवि को तत्कालीन परिस्थितियों पर एक दृष्टि रखकर साहित्य या कविता की सर्जना करनी चाहिए । तभी वह उसमें विजयी बन सकता है । इन्हीं कारणों से तुलसीदास के युग की प्रत्येक परिस्थिति याने - राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा साहित्यिक पर एक विशद अध्ययन आवश्यक है ।

राजनीतिक परिस्थिति :-

कवि की रचनाओं में परिस्थिति का प्रभाव पड़ने के कारण उस पर हमें दृष्टिपात करना यदि अपनी मन-पसन्द परिस्थिति न हो तो वह अवश्य उसके विरुद्ध आवाज़ उठाता है और परिवर्तन लाने की कोशिश भी करता है । इसी कारण यह जान लेना आवश्यक है कि समसामयिक परिस्थितियों ने कवि के जीवन को कितना प्रभावित किया है और आगामी युगों को उसने कैसे प्रभावित किया है ।

भारत में मुगलों का शासन चल रहा था । अकबर और जहांगीर गोस्वामीजी के समकालीन दो विलासी सम्राट रहे थे ।

> ' अकबर तथा जहांगीर की नीति शासन को किसी धर्म या वर्ग की शक्ति पर आश्रित न रखकर संपूर्ण राष्ट्र पर आश्रित करने की थी ।' [१]

१- तुलसीदास के काव्य में नैतिक मूल्य - डा० चरणदास शर्मा
पृष्ठ-१००

अधिकार प्राप्त करने के लिए मुगल राजाओं में भी सदा झगड़ा होता रहा था । राजाओं में अधिकार-लिप्सा का मोह प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था । उनके शासन के संबन्ध में राजपति दीक्षित ने कहा है-

> मुगलों का शासन प्रकृतित: सैनिक शासन था । अतएव उसे केन्द्रीय एकतन्त्र शासन प्रणाली कह सकते है । इसमें राजा का वही स्थान था जो धनाढ्य नागरिक का होता है ।[1]

ये राजा विलासिता में मग्न रहकर अपने कर्तव्य तक भूल जाते थे । जनता का कल्याण करने का विचार इन विलासी-राजाओं के मन में नहीं था ।

पन्द्रहवीं शताब्दी ईसवी के अन्त या सोलहवीं शताब्दी ईसवी के प्रारंभ काल में गोस्वामीजी अवतरित हुए । उस समय लोदी वंश के इब्राहीम लोदी को मुगल-वंशज बाबर ने परास्त कर दिल्ली पर अपना अधिकार जमाया था । हुमायूं के बाद अकबर गद्दी पर बैठ गये । गोस्वामीजी सारे राजकीय परिवर्तनों के प्रति जागरूक होकर बैठे थे ।

उस समय राजनीतिक नियमों का पालन नहीं होता था । अधिकार पाने के लिए पिता-पुत्र, भाई-भाई का वध हो रहा था । इन सभी घटनाओं से गोस्वामीजी का हृदय कराह उठा ।

उस समय देश की सामाजिक या सांस्कृतिक उन्नति की कोई गुंजाइश नहीं थी क्योंकि उस समय की राजनीतिक अवस्था अस्तव्यस्त थी ।

१- तुलसीदास और उनका युग - राजपति दीक्षित - द्वितीयवृत्ति
संवत्-२०१८, पृष्ठ-१२

इस बिगडी हुई राजनीतिक हालत से उन पर गहरी चोट हुई । राम राज्य की उच्च धारणा रखनेवाले गोस्वामीजी के सामने प्रतिक्रिया स्वरूप रघुवंश के आदर्श राजाओं के चित्र जाग उठे । रघुवंशी राजा अत्यधिक प्रजावत्सल थे , नीतिसंपन्न थे, प्रजा के लिए वे जीते थे । उन राजाओं के बीच लडाई-झगडा या रक्तपात कभी नहीं होता था ।

डा० रतिभानुसिंह नाहर इस प्रकार की बिगडी हुई अवस्था में तुलसी जैसे व्यक्ति के अवतार को अत्यधिक आवश्यक मानते है -

` आज का उत्तरी भारत महात्मा तुलसीदास की देन है, यह उक्ति अक्षरश: सत्य है । विभिन्न सामाजिक, धार्मिक , आर्थिक आदि विषमताओं के कुष्ठ रोग से पीडित समाज को उस समय तुलसी जैसे व्यक्तित्व की ही आवश्यकता है ।` [१]

हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री वि०वि० गिरि ने ` नवभारत टैम्स नामक पत्र में अपने उद्गार व्यक्त किये हैं :-

` यह वह समय था जब हमारे सामाजिक जीवन में नैतिक मूल्यों का ह्रास हो चुका था,जनता में अज्ञान का बोलबाला था, लोग आपसी झगड़ों में फंसे हुए थे, धर्म एक निरर्थक कर्मकाण्ड बन कर रह गया था , और पण्डितों के आपसी मतभेदों तथा कलह के कारण सब जगह अव्यवस्था फैली हुई थी, ऐसे वातावरण में तुलसीदास नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को प्रकाश में ले आये जो सदा से ही हमारी संस्कृति के मूलाधार रहे ।` [२]

१- भक्ति आन्दोलन का अध्ययन- डा० रतिभा नु सिंह नाहर, पृष्ठ-३१३

२- नवभारत टैम्स- दैनिक पत्र - १९७०, अगस्त ११

राष्ट्रपति के उपर्युक्त उद्गार अत्यधिक वास्तविक बन पडे है ।

गोस्वामीजी ने रामचरित मानस नामक विख्यात ग्रन्थ को माध्यम के रूप में स्वीकार कर अपने विचारों को व्यक्त किया है । तत्कालीन राजनैतिक व्यवस्था के प्रति उन्होंने खीझ भरे खीझ भरे शब्द सुनाये है । उपर्युक्त परिस्थितियों के प्रतिक्रिया- स्वरूप उन्होंने राजनैतिक आदर्शों के बारे में कहा है । स्पष्ट है, तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों ने कवि के कोमल और दयालु हृदय पर अत्यधिक चोट पहुंचा दिया । इन बिगडी हुई परिस्थितियों से अपने राज्य की रक्षा करने का विचार उनके मन में जागृत हो उठा । उन्होंने साहित्य-सर्जना द्वारा अपने कर्तव्यों को पूरा करना चाहा ।

सामाजिक परिस्थिति :-

तत्कालीन सामाजिक अवस्था भी राजनीतिक अवस्था से कम बिगडी नहीं थी । डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने ठीक ही कहा है -

> ' जिस युग में इनका जन्म हुआ था, उस युग के समाज के सामने कोई ऊंचा आदर्श नहीं था । समाज के उच्च स्तर के लोग विलासिता के पंक में उसी तरह मग्न थे जिस प्रकार कुछ वर्ष पूर्व सूरदास ने देखा था ।' १

वर्णव्यवस्था का, हमारे समाजिक जीवन में अत्यधिक महत्व है । वर्णव्यवस्था की श्रेष्ठता के संबंध में गौरीशंकर हीराचन्द ओझाजी ने

१- हिन्दी साहित्य की भूमिका - डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
पृष्ठ-१११

कहा है -

` प्राचीन भारतीयों के सामाजिक जीवन की सबसे मुख्य संस्था वर्ण व्यवस्था है । इसी की भित्ति पर हिन्दू समाज का भवन खड़ा है जो अत्यन्त प्राचीन काल से अनंत बाधाओं का सामना करते हुए भी अब तक न टूट सका ।` [१]

लेकिन गोस्वामीजी के समय वर्ण-व्यवस्था शिथिल बन पड़ी थी मानस ` में उन्होंने लिखा है :-

बरन धर्म नहिं आश्रम चारी । श्रुति विरोध रत सब नर नारी ।।` [२]

डा० भगीरथ मिश्र का कथन है -

वर्णाश्रम व्यवस्था पर तुलसी का अटल विश्वास है । ` [३]

गोस्वामीजी की दृष्टि में ब्राह्मण अत्यधिक पूज्य व्यक्ति हैं, उनकी महिमा का गान ` मानस ` में मिलता है । लेकिन गोस्वामीजी के समय के ब्राह्मण वैसा नहीं थे, बुरे मार्ग की ओर कदम रखनेवाले थे ।` मानस ` के उत्तरकाण्ड में उन्होंने लिखा है -

` विप्र निरच्छर लोलुप कामी । निराचार सठ वृषली स्वामी ।` [४]

१- मध्यकालीन भारतीय संस्कृति- गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, पृष्ठ-३१-३२

२- रामचरित मानस: विजयानन्दत्रिपाठी - उत्तरकाण्ड - पृष्ठ-१६७

३- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-२७, पंचम संस्करण-१९६६

४- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी , उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१७२

ब्राह्मणों के कुनीतिपूर्ण व्यवहार पर वे क्रुद्ध थे । ~~रुष्ट थे~~ ।

उस समय आश्रम व्यवस्था भी नहीं थी । ' मानस ' के ' उत्तरकाण्ड ' में उन्होंने इसका उल्लेख किया है । ऊंचे और निचले स्तर के लोगों में भेदभाव खूब था । उस समय की आर्थिक स्थिति भी शोचनीय थी ।

कवितावली में गोस्वामीजी ने उस समय की बुरी आर्थिक स्थिति का चित्रण किया है ।

नारी की हालत :-

उस समय नारी केवल बादशाहों की काम-पूर्ति का साधन मानी जाती थी । विलास-केली-कुशला नारी उन्माद की नदी में उच्छृंखल होकर थिरकने वाली थी । पारिवारिक जीवन में उसे बन्धन में जीना पड़ता था । बादशाहों के रनिवास में बहुत स्त्रियां रखी गयी थीं जो इन बादशाहों की काम-पिपासा को बुझाने के कार्य में लगी रहती थीं । स्त्री के प्रति इन बादशाहों के हृदय में कोई ममता नहीं थी, बल्कि वासना ही जाग उठती थी ।

' मानस ' में कवि ने इसकी ओर संकेत किया है -

' नारि बिबस नर सकल गोसाईं । नाचहिं नट मर्कट की नाईं ।'[१]

मुसलमानों और हिन्दुओं के बीच बहुपत्नीत्व का प्रचलन था ।

इस प्रकार उनके समय में नारी प्रतिपल बुराई की ओर गिरती जा रही थी । गोस्वामी जी जैसे समाज सुधारक व्यक्ति ऐसी सामाजिक दुरवस्था पर जरूर आंसू बहायेंगे ? उनका हृदय द्रवित हो उठा । नारी को इस निम्न स्तर से

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६६

ऊपर उठाकर उसकी लाज रखना उन्होंने अपना ध्येय समझा और इसके लिए प्रयत्न भी किया ।

' मानस ' और ' कवितावली ' में उन्होंने जिन सामाजिक कुरीतियों का वर्णन किया है उनमें सत्यता की बातें ही मिलती हैं । कवि ने अपनी आंखों-देखा वर्णन ही किया है ।

तत्कालीन कलुषित सामाजिक अस्तव्यस्तता का एक चित्र खींचने के बाद उन्होंने रामचन्द्रजी के आदर्श समाज के द्वारा राम-राज्य का आदर्श सारे लोगों के सम्मुख रखा । उन्होंने सोचा कि शायद इससे लोगों के मन का कालुष्य दूर हो जाएगा और उनके मन में नयी चेतना और स्फूर्ति भर जाएगी ।

अकबर के समय जनता में त्राहि-त्राहि मची थी । उस समय की अस्तव्यस्तता के बारे में कहा गया है -

> ' सन् १५५६ और १५७३ में पड़े हुए दुर्भिक्षों में आदमी अपने ही सगे संबन्धियों को खा जाते थे । चारों ओर उजाड़ दिखाई देता था और खेत जोतने केलिए जीवित आदमी बहुत कम रह गये थे । इस प्रकार दुर्भिक्ष , अकाल और महामारी के समय में जनता की रक्षा का ध्यान शासकों को बहुत कम था । समाज की व्यवस्था बड़ी बिगड़ी हुई थी । और संगठन छिन्न-भिन्न था । ' [१]

डा० शिवकुमार शर्मा ने भी तत्कालीन समाज का अनुमान इस प्रकार किया है -

> ' तुलसी के समय का समाज आदर्श विहीन,संस्कृति रहित,पथ भ्रष्ट, मर्यादा-पतित तथा नितांत ह्रासोन्मुख था । ' [२]

१- तुलसी - उदयभानुसिंह - पृष्ठ-२७

२- हिन्दी साहित्य:युग और प्रवृत्तियाँ- डा० शिवकुमार शर्मा, पृष्ठ-२१३
पंचम संस्करण-१६७०

हिन्दू - धर्म के ग्रन्थों में अनेक देवी - देवताओं और उपदेवताओं का उल्लेख मिलता है। विद्वानों के मत में ये अपेक्षाकृत अर्वाचीन रहे हैं। हिन्दी-धर्म के प्रथम ग्रन्थ-वेद-में सिर्फ चुने हुए देवताओं का ही वर्णन है तिस पर उनके नाम भी कहीं भिन्न थे। स्तुति-प्रधान ऋग्वेद में इसके उदाहरण मिलते हैं। उसके अनुसार विष्णु को उतना महत्व प्राप्त नहीं था जितना कि बाद में प्राप्त हुआ।

विष्णु :-

ऋग्वेद में विष्णु को श्रेष्ठ देवता का स्थान नहीं मिला था। वैदिक साहित्य विष्णु की महत्ता की घोषणा नहीं करता। लेकिन बाद में ` विष्णु ` को श्रेष्ठ स्थान मिलने लगा। ब्राह्मण -ग्रन्थ विष्णु की महत्ता की घोषणा करते हैं

कैलचरल हेरिटेज ओफ इण्डिया में बताया गया है :-

> Vishnu is respected as one of the great Gods in some sections of the Rig Veda. But he was not regarded as the greatest God in early Vedic times.[1]

विष्णु में आस्था रखनेवाले लोगों को वैष्णव कहलाया जा सकता है। ` वैष्णव की कुटिया भली नहीं साकट बड गाऊं ` - ऐसे कबीरदास जी भी विष्णु की लोकप्रियता की घोषणा करते है।

धीरे धीरे ` वैष्णव ` शब्द के अर्थ का विकास होता गया और बाद में वह शब्द अहिंसा, भक्ति आदि का द्योतक हो गया। ` नरसी ` के प्रसिद्ध गीतमें

---

1. The cultural Heritage of India, Haridas Bhattacharyya Volume IV Second Edition-1956 - Page-108

धार्मिक स्थिति :-

गोस्वामीजी ने ` मानस ` में यह दिखाया है कि कलियुग के कल्मषों द्वारा सारे धर्म ग्रस्त हो चुके थे । स्पष्ट है, वह युग धार्मिक दृष्टि से संभ्रान्त जागृति का समय था ।

मुसलमान तो मन्दिरों और मूर्तियों को तोड़ने के कार्य में लगे रहे , इससे हिन्दू लोगों में कट्टरता की वृद्धि होती जा रही थी । इस्लाम धर्म मूर्तिपूजा का विरोध करता था, ये लोग भगवान के निर्गुण , निराकार रूप की उपासना करनेवाले थे । वे एक ही ईश्वर की सत्ता को मानने वाले थे । मुसलमान बादशाहों के मूर्ति-भंजन का दृश्य देखकर मूर्तियों के प्रति लोगों की आस्था मिट गयी । और इसी कारण उनका मन निर्गुणोपासना की ओर मुड़ गया । कबीर तो भगवान के निर्गुण रूप को माननेवाले थे, लेकिन तुलसीदास जी भगवान के सगुण रूप पर भरोसा रखते थे । फिर भी उन्होंने निर्गुण और सगुण भक्तों में समन्वय का सूत्रपात किया ।

` सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा । ` १

लेकिन साधारण लोगों को भगवान के सगुण रूप की उपासना करना अधिक आसान है ।

उनके समय निर्गुणों और सगुणों के बीच द्वन्द्व चल रहा था । निर्गुण भक्त तो भगवान के निर्गुण रूप की और सगुण , भगवान के सगुण रूप की उपासना को श्रेष्ठ मानते थे ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - बालकाण्ड पृष्ठ-२२०

शैवों और वैष्णवों के बीच भी विद्वेष चल रहा था ।

उस समय तान्त्रिक क्रियाओं ने ' कर्म ' को दूषित कर दिया । ' ज्ञान ' की कोई महत्ता नहीं थी, उसकी अवहेलना की जाती थी । इसीकारण धार्मिक दृष्टि से देश पतन के गर्त की ओर गिरता जा रहा था । उससे देश की रक्षा करने के लिए वास्तव में गोस्वामीजी अवतरित हुए ।

डा० चरणदास शर्मा ने जो कुछ कहा है वह यहां उल्लेखनीय है -

' इस प्रकार की परिस्थिति में तुलसी के विचारक ने ज्ञान,कर्म तथा उपासना की त्रिसूत्री को मानव प्रेम की रज्जू से एकत्रित करके धर्म के पूर्ण स्वरूप को जनता-जनार्दन के समक्ष ला खड़ा कर दिया जिसके दर्शन केलिए चिरकाल से लालायित हिन्दू जनता तो कृतकृत्य हुई ही, विदेशी भी चमत्कृत हो उठे । ' [१]

साहित्यिक परिस्थिति :-

गोस्वामीजी के समय के पूर्व कुछ साहित्यिक पद्धतियां प्रचलित हैं ।

वीर काव्य पद्धति :- वीरों , राजाओं के गुणगान में वीरकाव्य पद्धति का प्रयोग होता था । इसमें कवित्त, छप्पय, तोमर आदि छन्दों का प्रयोग होता था ।

साखी-शैली में दोहे लिखे जाते थे । दोहा-चौपाई वाली शैली में सूफी कवि लिखते थे । कवित्त- सवैया पद्धति को तुलसीदास के समकालीन कुछ कवियों ने अपनाया है ।

१- तुलसीदास के काव्य में नैतिक मूल्य- डा० चरणदास शर्मा
पृष्ठ-११३

तुलसीदासजी ने उपर्युक्त सभी काव्य-पद्धतियों को अपनाकर कविता लिखी है । काव्य के सभी रूपों पर उनका अनन्य अधिकार था । उन्होंने ` रामचरित मानस ` नामक महाकाव्य की रचना की, महाकाव्य के अलावा उन्होंने मुक्तक और खण्ड-काव्य भी लिखे हैं । उन्होंने कंटकाकीर्ण काव्य-मार्ग को एक सुन्दर पथ बना दिया ।

उपर्युक्त विश्लेषण , से गोस्वामीजी के समय की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और साहित्यिक परिस्थितियों का एक चित्र हमारे सामने उभर आता है ।

उक्त संघर्षमय और जटिल परिस्थितियों में कविशिरोमणि गोस्वामीजी का प्रादुर्भाव हुआ । भारतीय नभोमण्डल में गोस्वामीजी का उदय एक जाज्वल्य-मान नक्षत्र के समान था जिसने कोटिशः सूर्यों की आभा को मन्द करके साहित्य-जगत और गगन को देदीप्यमान आलोक से आलोकित किया । वे तो ठीक शुभ मुहूर्त में भारत में अवतरित हो उठे जब भारतीय हिन्दू संस्कृति गहन तिमिर में आच्छादित हो रही थी । गोस्वामीजी दलितों और शोषितों का कल्याण करने का उद्देश्य रखनेवाले है । अज्ञान-तिमिर में डूबे हुए संसार को उससे उभारने केलिए उन्होंने साहित्यिक कृतियों की रचना की ।

इस भयंकर नैतिक अन्धकार के युग में सहसा गोस्वामीजी तुलसीदास जी का आविर्भाव हुआ जिन्होंने एकान्त में बैठकर अपनी ` स्वान्त सुखाय ` की हुई रचना से ऐसी अमृतवर्षा की कि मुमूर्षु अवस्था में पड़ा हुआ हिन्दू समाज सहसा चेतन होकर जाग उठा और उनका सारस्वत काव्य ` रामचरितमानस ` मूर्ख और पण्डित, धनी और निर्धन, राजा और प्रजा, कुटी और राजप्रासाद सबमें समान रूप से समादृत होकर, जन-मन-रंजक बनकर हमें प्रकाश और शक्ति देता आ रहा है ।`[१]

१- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी,
पृष्ठ-२४-२५

जनता का कल्याण करने के उद्देश्य से उन्होंने ` मानस ` जैसे अनुपम काव्य की रचना की जो ` सुरसरि ` गंगा के समान सारे भेद भावों को मिटानेवाला है । गोस्वामीजी जैसे उच्च व्यक्तित्व रखनेवाले ही इस महत्तम कार्य में विजयी हो सकते थे।

` मा न स ` :-

रामभक्ति साहित्य का उज्ज्वल और चमकता प्रकाशपुंज गोस्वामीजी का ग्रन्थ-रत्न है ` रामचरितमानस ` ।

महाकाव्य के लिए आवश्यक सभी गुणों की योजना ` मानस ` में है ।

अलंकार, रस, भाषा आदि की दृष्टि से उनका यह ग्रन्थ अनुपम निकलता है । अलंकारों की सुन्दर सजावट से उनके काव्य की शोभा दस गुनी बढ़ी है । ` रामचरित मानस की कोई चौपाई भले ही बिना उपमा की मिल जाय, किन्तु उसका कोई पृष्ठ कठिनता से ऐसा मिलेगा, जिसमें किसी सुन्दर उपमा का प्रयोग न हो । उपमायें साधारण नहीं हैं, वे अमूल्य रत्न-राशि हैं ।` [१]

उन्होंने अवधी-भाषा के अलावा ब्रजभाषा को भी अपनाकर भाषा पर अपना अदम्य अधिकार स्थापित किया है । उनकी भाषा में सफाई की मात्रा अत्यधिक है ।

` तुलसीदास जी की भाषा, भाव के अनुकूल ही नहीं, पात्र के अनुकूल भी

१- तुलसीदास की उपमाएं : पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय
हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास से उद्धृत(डा०रामकुमार वर्मा)
पृष्ठ-४५६

है, देशकाल के अनुसार भी ।` १ जनसाधारण की समझ में आनेवाली भाषा में लिखना उन्हें अधिक पसन्द है ।

उन्होंने काव्य में रसों की उचित योजना की है । सीमित क्षेत्र में शृंगार का चित्रण साहित्य में मिलना बहुत कठिन है ।

> `हमारी दृष्टि में जिस प्रकार `गीता` ज्ञान एवं भक्ति के विवेचन से युक्त होकर भी एक कर्मयोग शास्त्र है, उसी प्रकार `रामचरित मानस` कर्म एवं ज्ञान के विवेचन से युक्त होकर भी एक अलौकिक भक्ति-योग शास्त्र है ।` १

राम-भक्ति शाखा के अग्रणीय कवि तुलसीदास थे । मगर उनके बाद भी कुछ कवि हुए । लेकिन गोस्वामीजी के सामने उन कवियों का अधिक महत्व नहीं था । तथापि उन कवियों पर भी संक्षेप में विचार करना है ।

अ ग्र दा स :-

नाभादास के गुरु और जयपुर के निवासी अग्रदास रसिक संप्रदाय के आचार्य के रूप में माने गये हैं ।

इनकी जीवनी से संबन्धित प्रामाणिक बातों की उपलब्धि नहीं होती । आचार्य शुक्ल जी सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इनका आविर्भाव मानते हैं ।

अग्रदास की चार पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं - हितोपदेश उपाख्यान बावनी, ध्यानमंजरी, रामध्यान मंजरी, और कुंडलिया ।

१- रामचरित मानस में भक्ति :- डा० सत्यनारायण शर्मा
पृष्ठ-१७७, प्रथम संस्करण-१९७०

इन कृतियों में ' ध्यानमंजरी ' का सर्वाधिक महत्त्व है। कवि ने रसिक भक्तों केलिए इस ग्रन्थ का निर्माण किया, ऐसा कहा गया है।

अग्रदास के उपदेशों का संकलन है ' कुंडलिया ' । इनकी रचनाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान मिल गया है।

ना भा दा स :-

संवत् १६५७ के लगभग इनका आविर्भाव माना जाता है। अग्रदास के शिष्य नाभादास, रामभक्ति में अपने मन और हृदय को झुकाकर उसी में मग्न रहे।

कहा जाता है कि वे जन्म से अन्धे थे।

नाभादास ने भक्तमाल (संवत १६४२) नामक उत्कृष्ट ग्रन्थ की रचना की है। इस प्रसिद्ध ग्रन्थ में अनेक भक्तों का परिचय दिया गया है। प्रियादास ने इस ग्रन्थ की टीका भी लिखी है।

' गोस्वामीजी के रामायण के बाद ' भक्तमाल ' की सर्वाधिक लोकप्रिय भक्ति पुस्तक थी।' [१]

' भक्तमाल ' के अलावा इन्होंने और दो पुस्तकें भी लिखी हैं, लेकिन उन ग्रन्थों का महत्त्व नहीं माना गया है।

से ना प ति :-

इनका जन्म संवत् १६४६ में पड़ता है। ये तो सरस कवि है, इसी कारण इनकी उचनायें कोमलता और सरसता से ओतप्रोत हैं।

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास:- डा० रामकुमार वर्मा
पृष्ठ-२५६

भाषा पर सेनापति का अधिकार रहता है, इसलिए उन्होंने प्रवाहमयी भाषा में ग्रन्थ लिखे हैं ।

` कवित्त-रत्नाकर ` नामक ग्रन्थ के अतिरिक्त ` काव्य कल्पद्रुम ` भी इनका ग्रन्थ कहा जाता है ।

अलंकारों ने इनकी रचनाओं की सुन्दरता को बढ़ा दिया है । श्रृंगार रस के दोनों पक्षों का मनोहारी वर्णन उनके काव्य में मिलता है ।

प्राणचन्द चौहान :-

` रामायण महानाटक ` उनका श्रेष्ठ ग्रन्थ है, जिसका प्रतिपाद्य विषय राम की कथा है । उनकी अन्य रचनाओं का कोई पता नहीं मिलता ।

हृदय राम :-

पंजाब के निवासी इस विद्वान के पिता का नाम कृष्णदास है । ` भाषा हनुमन्नाटक ` नामक जिस ग्रन्थ की रचना उन्होंने की उस ग्रन्थ के संवाद कवित्त-सवैयों में मिलते हैं । हृदयराम की यह विशेषता बतायी जाती है कि उन्होंने सभी काव्य-पद्धतियों को स्वीकार किया है ।

इन कवियों के अतिरिक्त और कुछ कवि भी मिलते हैं, लेकिन वे तो निम्न कोटि के कवि हैं, इसीकारण उनका उल्लेख यहां नहीं किया गया है ।

वैष्णव - भक्ति आन्दोलन की देन

स्पष्ट है, वैष्णव -भक्ति -आन्दोलन का इतिहास तो बहुत विस्तृत है । इस आन्दोलन की महत्वपूर्ण देन क्या है, इसके बारे में हमें विचार करना है ।

मध्ययुग में जिस भक्ति-साहित्य का उद्भव हुआ उसमें अनेक कवि हुए, इन कवियों ने अपनी उत्कृष्ट रचनाओं के द्वारा भक्ति साहित्य को अत्यधिक पुष्ट किया है।

वैष्णव भक्ति भावना के विकास के सोपान के रूप में वेद, उपनिषद्, महाकाव्य आदि आते हैं। सबसे पहले उपनिषदों से भक्ति-भावना का उद्भव हुआ। 'भगवद् गीता' भी भक्ति आन्दोलन के विकास के लिए सहायक सिद्ध हुई। आलवारों के 'प्रबन्धम्' का भी महत्वपूर्ण स्थान है। आलवारों ने वैष्णव-भक्ति का सीमा - विस्तार किया, इसी कारण साधारण लोग भी इससे फायदा उठा सके। इसके परिणाम स्वरूप वैष्णव भक्ति आन्दोलन ने एक जन-आन्दोलन का रूप धारण किया।

वैष्णव संप्रदाय के आचार्यों ने इस वैष्णव-भक्ति-आन्दोलन को ओजस्वी बनाने में अत्यधिक सहायता की। धीरे धीरे यह आन्दोलन देश के अनेकों भागों में प्रचलित हुआ। इस प्रकार इस आन्दोलन ने एक विस्तृत रूप धारण कर लिया।

दक्षिण के वैष्णव-भक्ति-आन्दोलन की धारा उत्तर-भारत की ओर प्रवाहित होने लगी। दक्षिण और उत्तर के भक्ति आन्दोलन के बीच की कड़ी के रूप में रामानन्द जी आते हैं। हिन्दी प्रदेश में भी रामानन्दजी ने ही इस आन्दोलन को जन-आन्दोलन का रूप दे दिया। अनेक भक्त कवियों ने एक भक्ति मय वातावरण की सृष्टि की, इन कवियों ने भक्ति-साहित्य को अत्यधिक पुष्ट किया।

भारतीय जन-जीवन को प्रभावित करने का महत्वपूर्ण कार्य इस आन्दोलन द्वारा हुआ। इस आन्दोलन के द्वारा कला का अत्यधिक विकास हुआ, अनेक वैष्णव मन्दिरों की स्थापना हुई।

तमिल और हिन्दी के वैष्णव-भक्ति-साहित्य ने इस आन्दोलन को व्यापक बनाने का महत्वपूर्ण कार्य किया । इस अन्दोलन ने तमिल प्रदेश में उद्भूत होकर हिन्दी प्रदेश में विकास की चरम सीमा को प्राप्त किया ।

भक्त कवियों के बीच तुलसीदास का स्थान

गोस्वामीजी रामचरित के निरन्तर मनन द्वारा अपने जीवन को अमूल्य बना देनेवाले एक महान कवि थे । उनकी महिमा का बखान कौन कर सकता ? ' विमल संतोष, विमल विज्ञान वैराग्य, विमल वैराग्य, विशुद्ध संतोष, विमल-ज्ञान, ~~विमल-विज्ञान~~ तथा अन्तिम अविरल हरि भक्ति के सात सोपानों की ऊंचाई पर मानव मन को ले जाने का स्तुत्य और सफल प्रयत्न गोस्वामी तुलसीदास ने किया । '

भक्त कवियों के बीच उनका स्थान निर्धारित करने के लिए केवल ' रामचरित मानस ' काफी है । राम के आदर्श चरित के द्वारा उन्होंने कल्याण का मार्ग सभी लोगों को दिखा दिया । जन-साधारण के कवि होने के नाते उनकी प्रशस्ति अत्यधिक बढ़ गयी ।

मानवतावाद ही मानस का ' जीवन-दर्शन ' कहा जा सकता है । इस दर्शन ने निराशा रूपी जल में डूबे हुए लोगों में जीवन दायिनी शक्ति पैदा की ।

१- रामभक्ति शाखा - रामनिरंजन पांडेय

पृष्ठ-२

प्रथम संस्करण-१९६०

इस ग्रन्थ ने उत्तर भारत के हर एक आदमी के हृदय की अत्यधिक गहराई तक प्रवेश कर उनके जीवन को रूप देने का सफल प्रयत्न किया ।

इस ग्रन्थ की श्रेष्ठता का वर्णन करने में सभी असफल निकलते हैं ।
मानस श्रद्धा और भक्ति का गंभीर प्रशान्त सागर है । प्रेम,वीरता, दया, क्षमा, उदारता, कर्तव्य-परायणता आदि भाव तो उस सागर के ऊपरी तल पर दिखाई पड़नेवाली उत्ताल तरंगों के समान है । `[1]

भक्त कवियों के बीच इनका स्थान इतना ऊंचा होने का एक कारण यह है कि वे अपने इष्टदेव रामचन्द्र जी के आदर्श चरित्र पर आवलंबित होकर संपूर्ण मानव जीवन की विशद समीक्षा कर लेते हैं, ऐसा महत्तम कार्य हिन्दी साहित्य के किसी दूसरे कवि ने नहीं किया है । उन्हें साहित्य के सर्वोच्च पद पर अधिष्ठित करना है, उस स्थान के अधिकारी केवल गोस्वामीजी ही है , तभी सारे लोग गौरवान्वित हो उठेंगे ।

होमर, व्यास, कालिदास, शेक्सपीयर, गेटे आदि विश्व-कवियों की टक्कर में गोस्वामीजी मान्य हो चुके हैं ।

:::::::::

१- हिन्दी साहित्य का स्वरूप विकास - डा० शंभूनाथ सिंह
द्वितीयावृत्ति-१९६२
पृष्ठ- ५१६

दूसरा अध्याय

सुभाषित या सूक्ति की व्याख्या और साहित्य में उसका स्थान । सूक्तियों के विभिन्न भेद । संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी में सूक्ति का स्रोत और उसका विकास ।

सू क्ति -

सूक्तियां हमारे जीवन के अजस्र प्रेरणा-स्रोत हैं। इनसे हमें जीवन के उत्कृष्ट पथ पर चलने का संकेत मिलता है। इस अनोखे संसार में सुखपूर्वक जीने के लिए सूक्तियों की जानकारी जरूर चाहिए। थोड़े शब्दों से अत्यधिक प्रभावित करने की शक्ति इनमें रहती है।

सूक्तियों के संबंध में रमाशंकर गुप्त ने कुछ सुन्दर शब्द सुनाये हैं।

सूक्तियां साहित्य गगन में देदीप्यमान उज्ज्वल नक्षत्र के समान हैं। इनकी आभा देश और काल की संकुचित सीमा पार करके सर्वदा एक समान और एक रस रहनेवाली है।' [१]

साहित्यजगत में सूक्तियों का अपना विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। ये सूक्तियां आपत्ति के समय हमें प्रेरणा-स्रोत के रूप में आती हैं। इसके अलावा, ये हमारे कथन में एक प्रकार का जोश पैदा करती हैं। गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करनेवाले भी इनसे फायदा उठाते हैं। महान व्यक्तियों के नीतियुक्त कथन तो सभी प्रकार की समस्याओं का हल करने के लिए लागू होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति सूक्ति की आवश्यकता महसूस करता है। इस प्रकार ये सूक्तियां मानव जीवन के हर क्षेत्र में विशेष उपयोगी होती हैं।

सूक्ति का प्रभाव अमोघ है, इसी कारण वह जल्दी ही पाठकों के हृदय पर अमिट प्रभाव डालती है। नीरस हृदय को भी सरस बनाने की अद्भुत

१- सूक्तिसागर - संकलनकर्ता - रमाशंकर गुप्त
पृष्ठ-६

क्षमता इन सूक्तियों में रहती है ।

जीवन के शाश्वत सत्यों का उद्घाटन सूक्तियों में मिलता है । हमारे अन्धकाराच्छन्न मार्ग को प्रकाशित करने का कार्य ये सूक्तियां करती है । हमारे नित्य प्रति के जीवन से भी इनका अटूट संबन्ध रहता है ।

सुभाषित या सूक्ति की व्याख्या

'सूक्ति' शब्द की व्याख्या कोश ग्रन्थों में यों मिलती है

'सूक्तं - सुष्ठु उक्तम्- शोभनोक्ति विशिष्टम्' ।[१]

सूक्त - सु + वच् - सुन्दर कथने विशिष्टैकार्थ- प्रतिपादके एकट्कत्ये वेदमन्त्र समुदाये च यथा श्री सूक्तं पुरुष सूक्त मित्यादि । सूक्ति- सुष्ठूक्तौस्त्री ।' [२]

'सूक्तिकाव्य' की व्याख्या साहित्यकोशकार ने यों दी है :-

सूक्तिकाव्य - 'वह काव्य जिसमें कवि के जीवन के अनुभवों का सार चेतावनी के रूप में अभिव्यक्त होता है । सूक्तिकाव्य मुक्तक रूप में लिखे जा सकते हैं ।' [३]

१- श्रीशब्दकल्पद्रुम: :- स्यार राजा राधाकान्तदेव बहादुरेण विरचित: पंचमो भाग:- तृतीय संस्करण -२०२४ वि०पृष्ठ-३८२

२- श्री वाचस्पत्यम् - तर्कवाचस्पति श्री तारानाथ भट्टाचार्येण संकलितम् षष्ठो भाग: विक्रम संवत्-२०१८ , पृष्ठ-५३२३

३- साहित्यकोश - (भाग-२) संपादक - धीरेन्द्र वर्मा प्रथम संस्करण - संवत्-२०२०, पृष्ठ-६३५

शब्दतारावली ' नामक मलयालम कोश - ग्रन्थ में ' सूक्त ' शब्द की व्याख्या यों दी गयी है ।

' सूक्त - सु + उक्ति = अच्छी तरह कहा गया ।

सूक्तं -- वेद-वाक्य - स्तुति, उत्तम कथन, सुभाषित आदि अर्थ होते हैं ।

सूक्ति- युक्ति-संगत वाक्य ।[१]

डा० रामसागर त्रिपाठी ने सूक्ति की परिभाषा दी है :-

' उपदेशात्मक सूक्तों को सूक्ति या सुभाषित काव्य के नाम से अभिहित किया जा सकता है ।'[२]

' लघु हिन्दी शब्द सागर ' में सूक्त और सूक्ति की व्याख्या मिलती है ।

सूक्त - वेदमंत्रों या ऋचाओं का समूह, उत्तम कथन
सूक्ति - उत्तम उक्ति या कथन, सुंदर पद या वाक्य आदि, सुभाषित ।[३]

१- शब्दतारावली - (मलयालम कोश) - श्री० पद्मनाभ पिल्लै पंचम संस्करण- १९६४, पृष्ठ-१४१२

२- मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी - डा० रामसागर त्रिपाठी, पृष्ठ-४३

३- लघु हिन्दी शब्द सागर - करुणापति त्रिपाठी , पृष्ठ-१०२४, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, प्रथम संस्करण-संवत् २०१२

' हिन्दी नीति काव्य ' में भोलानाथ तिवारी ने सूक्ति की जो परिभाषा दी है वह इस प्रकार है :-

' जो उक्ति कथन के ढंग के अनूठेपन, रचना-वैचित्र्य,चमत्कार, कवि के ढंग के अनूठेपन, श्रम या निपुणता के विचार में ही प्रवृत्त करे वह है सूक्ति ।' [१]

शुक्ल जी की उपर्युक्त परिभाषा देने के बाद डा० भोलानाथ तिवारी स्वयं लिखते है :-

' तत्वत: सुन्दर ढंग से कही गई उक्ति या बात ही सूक्ति या सुभाषित है ।' [२]

' सुभाषित ' की परिभाषा के बारे में विचार करना है :-

' साहित्य कोश ' में सुभाषित के लिए ' सूक्तिकाव्य ' कहा गया है । सुभाषित के बारे में कहा गया है :-

' सूक्तिकाव्य मुक्तक रूप में तो लिखे ही जाते है । प्रबन्धों में भी कहीं कहीं आ जाते है । इनमें जो बहुत ही सुन्दर या नैतिकता पूर्ण सूक्तियां होती है उन्हें सुभाषित कहा जाता है ।' [३]

१-' कविता क्या है ' - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी- चिन्तामणि, भाग-२
पृष्ठ-१७२, हिन्दी नीति काव्य (डा०भोलानाथ तिवारी)
से उद्धृत-पृष्ठ-६

२- हिन्दी नीति काव्य-डा० भोलानाथ तिवारी - पृष्ठ-६
प्रथम संस्करण-१९५८

३- साहित्य कोश- (भाग-२) संपादक- धीरेन्द्र वर्मा , पृष्ठ-८५७

'शब्द कल्पद्रुम' में सुभाषित शब्द की व्याख्या दी गई है ।

'सुभाषित - सुष्ठु भाषितं यस्य

नीचादप्युत्तमां विद्यां बालादपि सुभाषितम् । '[१]

'शब्द तारावली' नामक मलयालम कोश ग्रन्थ में कहा गया है :-

सुभाषितं - सु + भाषित = अच्छा शब्द

अच्छी तरह कहा गया ।[२]

'सुभाषित सप्तशती' नामक ग्रन्थ की भूमिका में 'काका कालेलकर' ने लिखा है :-

'एक एक सुभाषित या तो जीवन के अनुभव का एकांगी या गहरा निचोड़ होता है, या प्रेरणादायी श्रद्धा को चंद चुने हुए शब्दों में टकसाली रूप देता है । '[३]

१- श्री शब्दकल्पद्रुम: - पंचमो भाग: राजा राधाकान्त देव बहादुरेण विरचित: पृष्ठ-३७६

२- शब्द तारावली - श्री० पद्मनाभ पिल्लै - पृष्ठ-१४०८

३- सुभाषित सप्तशती - संकलनकर्ता - मंगलदेव शास्त्री, पृष्ठ-५, पहलीबार - १९६०

सुभाषित काव्य ` के संबन्ध में वाचस्पति गैरोला ने जो कुछ बताया है वह उल्लेखनीय है।

> सुभाषित काव्य संस्कृत साहित्य के श्रृंगार हैं। संस्कृत के छोटे बड़े सभी तरह के ग्रन्थकारों ने सुभाषित काव्यों की सूक्तियों को अपने अपने ग्रन्थों में उद्धृत कर उनके प्रति अपना अनुराग प्रकट किया।` [१]

अंग्रेजी में ` सूक्ति ` के लिए ` अफोरिज्म ` , मक्सिं, आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं।

> Aphorism:- A terse saying embodying a general truth as ' Art is long and life is short. [2]

वेवरली इनसैक्लोपीडिया में ` अफोरिज्म ` की व्याख्या इस प्रकार मिलती है।

> Aphorism:- Brief statement of principle, artistic, moral or scientific, embracing the whole subject (Hence the name) in the most concise form.[3]

१- संस्कृत साहित्य का इतिहास :- वाचस्पति गैरोला, पृष्ठ-६२२ प्रथम संस्करण- विक्रमवीं संवत्-२०१७

2. The Random Housx Dictionary of the English language. The unabridged edition. Jess Stem-Editor in Chief copy right-1970,69,67,1966 by Random House . Page-69

3. The wagerley Encyclopedia- Edited by, Gordan Stowell Printed in Great Britain, Page-65

अफोरिज्म ' और ' मक्सिम ' की परिभाषा और एक ग्रन्थ में यों दी गयी है।

> 'Aphorism and maxim may alike be briefly defined as pithy sentences with a general bearing on life. Maxim is the slightly narrower term being more appropriate when confined to a principle by which the author would guide himself or seek to guide others. [1]

> 'Indeed aphoriem is a time less and international mode of expression of men and also of things, for aphrism extends not only to human nature in solitude and society not only to the moralities and [illegible] the arts, but to the whole setting seen objectively, the impersonal forces of fate and fortune, the nature of the superhuman and Devine.'[2]

---

1. Encyclopaedia of literature- Cassell. Edited by S.H. Steniberg. Volume-I, First published-1953, Page.24
2. Encyclopaedia of literature- Cassell. Edited by S.H.Stenibery Volume I. First published.1953.Page.24-25

राजस्थानी कहावतें ' नामक ग्रन्थ में ' मक्सिम ' की परिभाषा मिलती है ।

> Maxim is the sententions expressien of some general truth or rule of Conduct, that it is a; proverb when it gets its wings by winning popular acceptance and flutters out into the high ways and by ways of the world. [1]

> Aphorism only states some broad truth of general bearing, a maxim besides stating the truth enjoys a rule of conduct as its consequence.[2]

अब ' सूक्तिकाव्य ' की व्याख्या करती है ।

सूक्तिकाव्य :-

' वह काव्य जिसमें कवि के जीवन - अनुभवों का

---

1. Introductory note to stevenson's book of proverb Maxims and familiar phrase.
राजस्थानी कहावतें - कन्हैयालाल सहल - पृष्ठ-३७ से उद्धृत

2. Studies in literature by J.V.Morley- Page-62
राजस्थानी कहावतें - से उद्धृत- पृष्ठ-३४

सार चेतावनी-रूप में अभिव्यक्त होता है।` [१]

डा० रामसागर त्रिपाठी ने भी `सूक्तिकाव्य` के बारे में कहा है :-

`इसमें लोक वृत्त अथवा नैतिक शिक्षा का अभिधान काव्य की अनुरंजन कारिणी भाषा में किया जाता है और इसमें गुडमिश्रित औषधि की भांति चमत्कार उत्पन्न करते हुए सदुपदेश दिया जाता है।` [२]

नीतिकाव्य` की परिभाषा पर हमें दृष्टिपात करना चाहिए। नैतिक शिक्षा देनेवाले काव्यों को नैतिक काव्य कहते हैं। इन नैतिक काव्यों का विषय तो नीति होता है।

डा० भोलानाथ तिवारी ने नीतिकाव्य के दो रूप माने हैं :-

:१: सूक्ति
:२: पद्य

सूक्ति में नीति की बातें सुन्दर ढंग से कही जाती है। [३]

अतएव हमें समझना चाहिए कि सूक्तिकाव्य और नीतिकाव्य दोनों लगभग समानता रखते हैं।

१- साहित्यकोश- (भाग-२) संपादक- धीरेन्द्र वर्मा
प्रथम संस्करण - संवत्-२०१५, पृष्ठ ८५७

२- मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी - डा० रामसागर त्रिपाठी, पृष्ठ-४१, प्रथम संस्करण-१९६०

३- हिन्दी नीतिकाव्य - डा० भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ-२०

डा० रामस्वरूप शास्त्री ` रसिकेश ` ने संस्कृत कोशों में ` नीति ` शब्द का जो अर्थ मिलता है उसकी ओर संकेत किया है । ` संस्कृत के विभिन्न कोशों में नीति शब्द जिन जिन अर्थों में व्यवहृत हुआ है, प्राय: उन सभी का संग्रह वाचस्पत्य तथा शब्दार्थ - चिन्तामणि नामक कोशों में कर दिया गया है । ` [१]

साहित्य में सूक्ति का स्थान

सूक्ति में जीवन के अनुभवों से संबन्धित बातों का वर्णन होता है । ये सूक्तियां मानसिक द्वन्द्वों से दु:खी आदमी को अनुपम शांति दा देती हैं तो भी उनमें एक मनुष्य के मन को प्रभावित करने की अपूर्व शक्ति रहती है । विद्यार्थी भी सूक्ति से बहुत लाभ उठा सकते हैं ।

सूक्तियां नीरस न होकर सरस और माधुर्यपूर्ण होती है । ये साहित्य में रस का संचार भी करती हैं । वक्तृत्व-कला को चमकाने की अद्भुत क्षमता इन सूक्तियों में निहित है । मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सूक्ति अपना अधिकार जमा सकी है ।

सूक्ति के विभिन्न प्रकार

सूक्ति-काव्य को विद्वानों ने तीन भागों में विभक्त किया है । धार्मिक सूक्ति, आर्थिक सूक्ति, कामपरक सूक्ति, इस प्रकार सूक्ति के तीन

१- हिन्दी में नीतिकाव्य का विकास - डा० रामस्वरूप शास्त्री ` रसिकेश ` पृष्ठ-१३, संवत्-१६०० वि० तक १६६२

भेद की लेकर उसका अध्ययन करना है ।

धार्मिक सूक्ति :-

धार्मिक सूक्ति में सत्य, त्याग, उदारता, अहिंसा आदि धर्मों के मूल तत्वों की प्रधानता होती है अर्थात् इसमें सत्य से संबन्धित सूक्तियां मिलती हैं, त्याग से संबन्धित सूक्तियां मिलतीहैं, उदारता और अहिंसा से संबन्धित सूक्तियां मिलती हैं ।

उदाहरण स्वरूप तुलसीदास जी का एक दोहा ले सकते हैं :-

नहिं असत्य सम पातक पुंजा । गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा ।
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए । वेद पुरान विदित मनु गाए ।। [१]

उपर्युक्त सूक्ति, धार्मिक सूक्ति के अन्तर्गत आती है, क्योंकि उसमें सत्य की, जो धर्म के मूल तत्वों में एक है , महिमा का वर्णन किया गया है ।

अहिंसा संबन्धी एक सूक्ति को ले सकते हैं

मार्ग मल छोड़हुं भलो भलो न जाले धाउ ।। [२]

यह भी धार्मिक सूक्ति के अन्तर्गत आती है ।

१- रामचरित मानस : - विजयानन्द त्रिपाठी - अयोध्याकाण्ड
पृष्ठ-४६

२- दोहावली (तुलसीकृत) अनुवादक- हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१४५

धार्मिक सूक्तियों में सांप्रदायिक विचारों के प्रचारार्थ लिखी गयी सूक्तियां होती है, सदाचार का उपदेश देने वाली सूक्तियां भी होती है।

वैराग्य परक सूक्तियां धार्मिक सूक्तियों के अन्तर्गत आती हैं, इन सूक्तियों में वैराग्य की प्रधानता होती है।

आर्थिक सूक्तियां :

भौतिक जीवन में विजय प्राप्त करने का उपदेश इन सूक्तियों में निहित रहता है। एक व्यक्ति को भौतिक जीवन की सफलता केलिए कुछ तत्वों का पालन करना पडता है, उन्हीं का पालन करने पर वह जीवन में सफलता पा सकता है। स्वार्थ-वृत्तियों की उपेक्षा करने की बात पर ज़ोर दिया जाता है। अन्धा होकर स्वार्थ के पीछे भागना मूर्खता है। इन सूक्तियों का धर्मानुकूल होना अनिवार्य नहीं है। इसी कारण इस प्रकार की सूक्तियों में धर्मभावना क्षीण रहती है।

आर्थिक सूक्तियों के तथ्योक्ति और अन्योक्ति-ऐसे दो रूप होते हैं।

तथ्योक्ति- रामसागर त्रिपाठी लिखते है -

'तथ्योक्ति के रूप में किसी लोक प्रसिद्ध तथ्य अथवा लोकोपयोगी तत्व का अभिधान या तो अप्रस्तुत योजना इत्यादि किसी अर्थ-चमत्कार के साथ होता है अथवा शब्द चमत्कार की ही प्रधानता रहती है।' [१]

इसमें आर्थिक तत्व ही प्रमुख होते हैं।

१- मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी - डा० रामसागर त्रिपाठी
पृष्ठ-४८०

अन्योक्ति :-

इसमें कोई बात व्यंजना के द्वारा कही जाती है । अत: बात की रमणीयता अत्यधिक बढ़ जाती है । इसमें बात बहुत प्रभावशालिनी भी होती है ।

कामपरक-सूक्तियां :-

स्त्री और पुरुष के संबन्धित विषयों पर कुछ तथ्यों का उद्घाटन इसमें होता है । ये तथ्य दो प्रकार के होते हैं -

स्वभाव संबन्धी और प्रभाव संबंधी । इन तथ्यों का उद्घाटन ही इसमें होता है ।

' कामसंबंधी सूक्तियों में स्त्रियों के स्वभाव और उनके प्रेम की अस्थिरता इत्यादि को लेकर एक ओर उनके परित्याग का उपदेश दिया गया है और दूसरी ओर उनकी प्रशंसा तथा सौन्दर्य वर्णन के द्वारा उनके उपभोग की ओर प्रवृत्त करने की चेष्टा की गई । ' [१]

सूक्ति का मूल स्रोत और उसका विकास

पहले पहल संस्कृत साहित्य में सूक्तियों का जो स्थान है उसकी छानबीन करनी चाहिए । संस्कृत, पालि, प्राकृत अपभ्रंश आदि भाषायें हिन्दी भाषा के पूर्ववर्ती समय में आनेवाली भाषायें हैं । इसी कारण इन पूर्ववती भाषाओं के नीति-साहित्य का अध्ययन पहले करना है, उसके बाद हिन्दी-भाषा के नीति साहित्य का अध्ययन करना है ।

१- मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी - डा० रामसागर त्रिपाठी
पृष्ठ-१६८

संस्कृत-भाषा का नीति साहित्य अत्यधिक समृद्ध है । वैदिक साहित्य, लौकिक साहित्य ,~~लौकिक साहित्य~~ इन दो वर्गों में संस्कृत साहित्य बांटा गया है । नैतिक दृष्टि से वैदिक साहित्य की अत्यधिक महत्ता नहीं । फिर भी कुछ कुछ उक्तियां मिलती हैं जिनमें उपदेशात्मकता रहती है ।

` ऋग्वेद ` सबसे पुरा वेद ग्रन्थ माना गया है । यह ग्रन्थ नीति और उपदेश से अधिक संबन्ध नहीं रखता , तो भी इसमें कुछ कुछ उपदेशात्मक उक्तियां मिलती हैं । डा० रामसागर त्रिपाठी ऋग्वेद को सूक्तिकाव्य का मूल स्रोत मानकर मानकर कहते है कि ` ऋग्वेद तथा दूसरे वैदिक सूक्तों में हमें अनेक स्थानों पर सदाचार का प्रतिपादन प्राप्त होता है ।` १

अत: हमें समझना चाहिए कि इसी आदि-ग्रन्थ में सूक्तियों का उद्भव हुआ है ।

ऋग्वेद के अतिरिक्त साम, यजु: और अथर्व नामक तीन वैदिक संहितायें होती है । लेकिन इन में नीति का अंश बहुत कम है । वरन कुछ कुछ नीति की बातें अवश्य मिलती है ।

इन वैदिक संहिताओं के बाद ब्राह्मण-ग्रन्थों की विवेचना करनी है । ब्राह्मण-ग्रन्थों में यज्ञ संबन्धी बातों की प्रधानता होने पर भी इनमें नैतिक बातों का उल्लेख मिलता है । ब्राह्मण -ग्रन्थों में सत्य की प्रशंसा मिलती है, असत्य की निन्दा मिलती है, अहंकार से दूर रहने का उपदेश मिलता है । ऐतरेय, कौषीतकि, शतपथ आदि प्रमुख ग्रन्थ के रूप में माने गये हैं ।

उपनिषद् :-

आगे उपनिषदों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए । उपनिषदों में

१- मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी - डा० रामसागर त्रिपाठी पृष्ठ-१६८

प्रमुख उपनिषद ग्रन्थ ये हैं - ईशोपनिषद्, कठोपनिषद्, केनोपनिषद्, मंडूक्योपनिषद्, तैत्तरीयोपनिषद्, बृहदारण्यकोपनिषद् आदि । यद्यपि इन उपनिषदों का प्रतिपाद्य विषय दर्शन और अध्यात्म है तो भी यत्र तत्र आचार और धर्मनीति की बातें मिलती हैं । इसमें सत्य, दान, दया आदि के महत्व के बारे में और गुरु के महत्व के बारे में सूक्तियां हैं ।

अब हमें उपदेशात्मक कथाओं पर दृष्टि डालनी है । इन नीति कथाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ग्रन्थ हैं- पंचतंत्र और हितोपदेश ।

मूल पंचतंत्र की कथाएं केवल एक संस्करण में उपलब्ध नहीं होती, बल्कि चार संस्करणों में मिलती है । बृहत्कथामंजरी तथा कथा सरित्सागर में पंचतंत्र का दूसरा संस्करण उपलब्ध होता है । पंचतंत्र का तीसरा और चौथा संस्करण भी प्राप्त होता है ।

नीतिकथा का दूसरा संग्रह ` हितोपदेश ` नाम से प्रसिद्ध है । हितोपदेश के रचयिता कवि ` नारायण पंडित ` हैं जो बंगाल के राजा धवलचन्द के राजकवि हैं ।

इन नीतिकथाओं के उद्देश्य के संबंध में धीरेन्द्रवर्मा ने कहा है :-

> ` नीतिकथाओं का उद्देश्य रोचक कहानियों द्वारा सदुपदेश देना था ।` [१]

१- हिन्दी साहित्य : डा० धीरेन्द्र वर्मा - ब्रजेश्वर वर्मा
पृष्ठ-२७४, प्रथम संस्करण-१९६२

कहानी तो छोटे बच्चे भी पसन्द करते हैं , इसलिए उपदेश के माध्यम से बालक की छोटी मति पर अद्भुत परिवर्तन किया जा सकता है । सरल तथा मुहावरेदार संस्कृत गद्य का प्रयोग इन कथाओं में किया गया है । प्रधान कथा के साथ अनेक उपकथायें भी चलती हैं ।

आगे पंचतंत्र में कही गयी सूक्तियों के संबंध में विचार करना है ।

' न गृहं गृहमित्याहु: गृहिणी गृहमुच्यते ।
गृहं हि गृहिणीहीन मरण्य सदृशं मतम् ।। [१]

घर (मकान) को घर कहने के लिए वहां पत्नी होनी चाहिए, पत्नी के अभाव में घर जंगल के समान है ।

पंचतंत्र की और एक सूक्ति देखिए :-

मितं ददाति हि पिता मितं भ्राता मितं सुत: ।
अमितस्य हि दातारं भर्तारं का न पूजयेत् ।। [२]

पिता, भाई , पुत्र ये सब स्त्री को परिमित धन और सुख देते हैं, लेकिन पति के समान अमित दानी कोई भी नहीं है ।

पंचतंत्र लोक- व्यवहार की शिक्षा, कथाओं के ज़रिये देनेवाला अनुपम ग्रन्थ है । इसमें नैतिक सूक्तियां भरी पडी हैं । जैसे -

---

१- पंचतंत्रम् : विष्णुशर्मा प्रणीत - विद्याभवन संस्कृत गद्यमाला,
पृष्ठ-५५

२- ,, ,, पृष्ठ-५६

सेवक महिमा

मृत्यैर्विना स्वयं राजा लोकानुग्रह कारिभि :
मयूखैरिव दीप्तांशुस्तेजस्व्यापि न शोभते ।। [१]

कुसंगति का दुष्परिणाम

असतां संगदोषेण साधवो यान्ति विक्रियाम् ।
दुर्योधन प्रसंगेन भीष्मो गोहरणो गत: ।। [२]

लौकिक संस्कृत में नीति का अंश कहां तक है, इस बात पर विचार करना है । सबसे प्राचीन महाकाव्य है वाल्मीकि रामायण जिसमें अनेकों सूक्तियाँ बिखरी पड़ी है । इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम की जीवनी के द्वारा कवि ने आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श पत्नी, आदर्श समाज और आदर्श परिवार का एक सुन्दर रूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है ।

' महाभारत ' को नैतिक दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान मिला है । नीति के फुटकर छन्दों के अलावा विदुर नीति, भीष्म नीति आदि भी इसमें मिलती है ।

१- पंचतंत्रम् - विष्णुशर्मा प्रणीतं , टीकाकार गोकुल दास गुप्त
संपादक - पं० रामचन्द्र झा
पृष्ठ -३१

२- ,, ,, पृष्ठ-१२३

' महाभारत ' के वनपर्व में अहिंसा, भाग्य, धर्म , स्त्री आदि विषयों से संबद्ध नैतिक सूक्तियां मिलती हैं । धर्म से संबन्धित एक सूक्ति का उल्लेख ' वनपर्व ' में इस प्रकार हुआ है ।

धर्मं यो बाधते धर्मो न स धर्मः कुधर्म तत् ।
अविरोधात् तु यो धर्मः स धर्मः सत्यविक्रम ।। [१]

मनुस्मृति ' में धर्म का उल्लेख इस प्रकार हुआ है ।

धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ।। [२]

वनपर्व ' में पतिव्रता नारी के संबंध में निम्नलिखित सूक्ति मिलती है ।

पत्याश्रयो हि मे धर्मो मतः स्त्रीणां सनातनः ।
स देवः सा गतिर्नान्या तस्य का विप्रियं चरेत् ।। [३]

१- श्रीमन्महाभारतम् - (मूलमात्रम्) द्वितीय खण्डम् वनपर्व- अध्याय-१३२ श्लोक-११, महर्षि श्रीकृष्णद्वैपायन प्रणीत - प्रकाशक- गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ-५६३

२- मनुस्मृति- पं० हरगोविन्द शास्त्री, संपादक- मणिप्रभा हिन्दी व्याख्योपेता पृष्ठ- ३८, अध्याय-२, श्लोक-१३, द्वितीय संस्करण-२०२१

३- श्री मन्महाभारतम् (मूलमात्रम् , द्वितीय खण्डम्) वनपर्व: अध्याय-२३३-श्लोक-३७, पृष्ठ-६६४ महर्षि श्रीकृष्णद्वैपायन प्रणीतं - द्वितीयो भाग:

पति से युक्त या पति के साथ रहना स्त्री का सनातन धर्म माना गया है। पति ही पत्नी का देवता है, उसकी गति है, वही पत्नी का एक मात्र सहारा है, उसके लिए सिवा पति के दूसरा कोई आसरा नहीं है।

उद्योग पर्व में नैतिक, धार्मिक तथा सांसारिक ज्ञान संबंधी सूक्तियां मिलती हैं :-

क्षमा की महिमा के संबन्ध में इस पर्व में जो कुछ कहा गया है उसकी ओर दृष्टि डालनी है :

ना त: श्रीमत्तरं किंचिदन्यत् पथ्यतमं मतम् ।
प्रभविष्णोर्यथा तात क्षमा सर्वत्र सर्वदा ।।
क्षमेदशक्त: सर्वस्य शक्तिमान् धर्मकारणात् ।
अर्थानर्थौ समौ यस्य तस्य नित्यं क्षमा हिता ।।[1]

आदमी के लिए क्षमा के समान हितकारी दूसरा कोई धर्म नहीं है।

भीष्म पर्व में 'भगवद्गीता' का उल्लेख हुआ है। 'भगवद्गीता' में क्षत्रियों के धर्म के संबन्ध में कहा गया है :-

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वर भावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ।।[2]

१- श्रीमन्महाभारतम् (मूलमात्रम् , द्वितीयखण्ड) उद्योगपर्व- अध्याय-३९, श्लोक ५८-५९
महर्षि श्रीकृष्ण द्वैपायन प्रणीतं- द्वितीयो भाग: पृष्ठ-१३७

२- श्रीमन्महाभारतम् (मूलमात्रम्। द्वितीय खण्ड) भीष्मपर्व - अध्याय-४२ श्लोक-४३, महर्षि श्रीकृष्ण द्वैपायन प्रणीतं

स्त्री पर्व ' में विदुर नैतिकतापूर्ण बाते कहते है । ' शान्तिपर्व ' में राजनीति की बातें मिलती है ।

त्रायते हि यदा सर्वं वाचा कायेन कर्मणा ।
पुत्रस्यापि न मृष्येच्च स राज्ञो धर्म उच्यते ।। [१]

मन, वाणी और शरीर से सारे लोगों की रक्षा करना राजा का परम-धर्म माना गया है ।

' अनुशासन पर्व ' मैं विधि और निषेध की वैविध्यपूर्ण बातें मिलती है ।

डा० चरणदास शर्मा ने महाभारत की प्रशंसा यों की है :-

समूचे ग्रन्थ-भर में ही अनेक नैतिक आदर्शों का परिचय मिलेगा किन्तु उद्योगपर्व, वनपर्व, शान्तिपर्व, राज-धर्मपर्व तथा मोक्ष धर्म पर्व इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है । ' [२]

रामायण में, महाभारत इन ग्रन्थों के अतिरिक्त कालिदास के रघुवंश, कुमारसंभव, भारवि का किरातार्जुनीय, भट्टि का भट्टिकाव्य, श्रीहर्ष का नैषधीय चरित आदि ग्रन्थों में भी नैतिक सूक्तियां दृष्टिगत होती है ।

१- श्रीमन्महाभारतम् - (मूलमात्रम्)
शान्तिपर्व - अध्याय-६१, श्लोक -३२, पृष्ठ-३४३

२- तुलसीदास के काव्य में नैतिक मूल्य - डा० चरणदास शर्मा
पृष्ठ-६३

आगे संस्कृत के स्मृति - साहित्य की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होता है। स्मृति-साहित्य भी नैतिक उक्तियों से समृद्ध प्रमुख तीन स्मृति ग्रन्थ हैं - मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति और नारद स्मृति। इन स्मृति ग्रन्थों में आचार, व्यवहार आदि बातों को वर्ण्य-विषय के रूप में स्वीकार किया है। इन ग्रन्थों में चार-वर्णों और चार आश्रमों के बारे में नैतिकता पूर्ण कथन मिलते हैं। पतिव्रता नारी के कर्तव्यों के प्रति भी स्मृति- ग्रन्थकार जागरूक रहे हैं।

' मनुस्मृति नामक प्रसिद्ध स्मृति-ग्रन्थ में अनके उपदेशात्मक वचन मिलते हैं, जनता के बीच में इनका अत्यधिक प्रचार है जैसे

' नारुंतुद: स्यादार्तोऽपि न परद्रोह कर्म धी : ।
यथास्योद्विजते वाचा नालोक्यां तामुदीरयेत् ।। [१]

स्वयं दु:ख का अनुभव करने पर भी दूसरों को दु:खी मत करना, उनके द्रोह करने का विचार तक नहीं करना है।

राजनीति से संबन्धित सूक्ति भी ' मनुस्मृति ' से मिलती है।

' संग्रामेष्वनिवर्तित्वं प्रजानाम् चैव पालनम् ।
शु श्रूषा ब्राह्मणानां च राज्ञां श्रेयस्करं परम् ।। [२]

इसमें राजा के धर्म के संबन्ध में कहा गया है।' मनुस्मृति ' में अनेक विषयों से संबन्धित सूक्तियां मिलती हैं।

१- मनुस्मृति- पं० हरगोविन्द शास्त्री - मणिप्रभा हिन्दी व्याख्योपेता।
द्वितीय संस्करण - संवत् - २०२१
पृष्ठ-७५ श्लोक -१६२

२- मनुस्मति : - पं० हरगोविन्द शास्त्री, पृष्ठ-३३६ श्लोक- ८८

बाकी पुराणों में नैतिक अंश कितना है, इसकी जानकारी भी आवश्यक है। प्रमुख पुराण ग्रन्थ हैं :-

ब्रह्म पुराण, पद्मपुराण, मार्कण्डेय पुराण, विष्णुपुराण, शिवपुराण, भागवत पुराण, अग्नि पुराण, स्कन्द पुराण, गरुडा पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण आदि।

पुराणों में नीति-संबंधी बातें अधिक-मात्रा में मिलती हैं। अनेक विषयों से संबन्धित नैतिक उक्तियां पौराणिक ग्रन्थों में उपलब्ध होती हैं।

संस्कृत में नीति ग्रन्थों की एक लंबी सूची मिलती है। उन सभी ग्रन्थों का उल्लेख न कर केवल प्रमुख नीति ग्रन्थों पर कुछ विचार करना है।

नीति ग्रन्थों में चाणक्य नीति, और भर्तृहरि का नीतिशतक सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

भर्तृहरि के `शतकत्रयम्` में नीतिशतक, वैराग्य शतक और श्रृंगार शतक इन तीनों का संकलन हुआ है और इसी कारण इसे `शतकत्रयम्` कहते हैं।

नीतिशतक में सुन्दर नैतिक उक्तियां मिलती हैं।

शक्या वारयितुं जलेन हुतभुक् छत्रेण सूर्यातपो ।
नागेन्द्रो निशितांकुशेन समदो दण्डेन गोगर्दभौ ।।
व्याधि र्भेषज संग्रहैश्च विविधैर्मन्त्र प्रयोगैर्विषं ।
सर्वस्यौषधमस्ति शास्त्र विहितं मूर्खस्य नास्त्यौषधम् ।।[१]

केवल मूर्खों की कोई दवा नहीं होती।

१- शतकत्रयम् - भर्तृहरिकृत संपादक- श्रीकृष्णदास, अनुवादक- श्रीकान्तखरे पृष्ठ-२२

दुर्जनों के संबन्ध में कहा गया है

दुर्जन: परिहर्तव्यो विद्यया भूषितोऽपि सन् ।
मणिनालंकृत: सर्प: किमसौ न भयंकर : ।। [१]

दुर्जन की उपेक्षा करना ही अच्छा है चाहे वह विद्या से अलंकृत व्यक्ति हो ।

नीतिशतक ' का और एक सुभाषित है :-

दानेन तुल्यो निधिरस्ति नान्यो ।
लोभाच्च नान्योऽस्ति रिपु: पृथिव्याम् ।।
विभूषणं शीलसमं न चान्यत् ।
सन्तोष तुल्यं धनमस्ति नान्यत् ।। [२]

संस्कृत के सुभाषित काव्यों पर दृष्टिपात करना है ।

' सुभाषित काव्य संस्कृत साहित्य के श्रृंगार हैं । संस्कृत के छोटे बडे सभी तरह के ग्रन्थकारों ने सुभाषित काव्यों की सूक्तियों को अपने अपने ग्रन्थों में उद्धृत कर, उनके प्रति अपना अनुराग प्रकट किया ।' [३]

१-शतकत्रयम् - भर्तृहरिकृत - संपादक - श्रीकृष्ण दास
अनुवादक- श्रीकान्त खरे, पृष्ठ-३८

२- ,, ,, ,, ,, -७०

३- संस्कृत साहित्य का इतिहास: वाचस्पति गैरोला,
प्रथम संस्करण, विक्रमवीं, संवत्-२०१७ , पृष्ठ-६२१

स्पष्ट है, सुभाषित काव्य अत्यधिक लोकप्रिय बन पडे हैं ।

संस्कृत का पहला सुभाषित संग्रह ' कवीन्द्र-वचन-समुच्चय' है । इसकी एक हस्तलिपि की उपलब्धि हो गयी है । जो नेपाली भाषा में मिलती है । प्राचीन लेखकों की सूक्तियों का संकलन इसमें हुआ है । उपर्युक्त ग्रन्थ के बाद अमितगति नामक विद्वान ने सुभाषित विषयक ' सुभाषित रत्न सन्देह ' की रचना की । श्रीधरदास ' सदुक्ति कर्णामृत ' का लेखक है यादववंशीय राजा के राजकवि है जल्हण जिन्होंने ' सूक्तिमुक्तावली ' नामक एक सुभाषित ग्रन्थ का निर्माण किया । राजविद्वान सायणाचार्य ने ' सुभाषित सुधानिधि ' नामक सूक्ति-प्रधान ग्रन्थ लिखा है।

जोनराज के शिष्य श्रीधर ने ' सुभाषितावली ' की , वल्लभदेव ने भी ' सुभाषितावली ' की , पेद्दिड भट्ट ने ' सूक्तिवारिधि की और, हरिकवि ने ' सुभाषित हारावली ' की रचना करके सुभाषित काव्य - परंपरा को समृद्ध किया । सुभाषित त्रिंशती, सुभाषित रत्नाकर, सूक्तिसंग्रह, सुभाषित रत्न भांडागार आदि ग्रन्थ भी इस परंपरा के अमूल्य रत्न हैं ।

' सुभाषित रत्न भांडागार ' में विविध विषयों से संबन्धित, सुन्दर सूक्तियां मिलती हैं । इस ग्रन्थ में सुभाषित के बारे में कहा है :-

' भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाण भारती ।
तस्माद्धि काव्यं मधुरं तस्मादपि सुभाषितम् ।
सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया ।' [१]

सुभाषित रत्न भांडागार सचमुच सूक्ति का भंडार ही है ।

१- सुभाषित रत्न भांडागारम्- पाण्डुरंगत्मज काशिनाथ शर्मणा, समुद्धृत सूक्तिसंग्रह: -पृष्ठ-३०, पंचमं संस्करणम् - सन- १६११

सुभाषितरत्न भांडागार के संपादक ने ` सूक्ति ` के बारे में सुन्दर ढंग से कहा है :-

` अभिसारिकेव रमयति सूक्ति: सोत्कर्ष शृंगारा ।
आस्वादित दयिता धरसु धारसस्येव सूक्तयो मधुरा: ।`[१]

सूक्ति अभिसारिका के समान अत्यधिक शोभित होती है । इसमें सूक्तियों को उदाहरण सहित व्यक्त किया गया है ।

` परोपकार: कर्तव्य: प्राणैरपि धनैरपि । परोपकारजं
पण्यं न स्यात्क्रतुशतैरपि । परं परोपकारार्थं यो जीवति
स जीवति ` ।[२]

परोपकार हमारे प्राणों से भी महत्व रखता है । परहित केलिए जो जीता है वास्तव में उसी का जीवन धन्य होता है ।

सत्य के महत्व के संबन्ध में कहा गया है :-

` अश्वमेधसहस्राद्धि सत्यमेव विशिष्यते । गोभिर्विप्रैश्च
सतीभि: सत्यादिभि: । `[३]

इस प्रकार इस ` भण्डागार ` में सुभाषितरूपी रत्न भरे पड़े हैं ।

१- सुभाषितरत्न भांडागारम - पाण्डुरंगात्मज काशिनाथ शर्मण
पृष्ठ-३० समुद्धृत:

२- ,, ,, पृष्ठ-७८ ,,

३- ,, ,, पृष्ठ-८७ ,,

इस प्रकार संस्कृत साहित्य में नीति का एक प्रमुख स्थान रह गया है । संस्कृत में अनेक लेखकों ने सूक्ति-ग्रन्थों की रचना की है , सुभाषितों की भी रचना की है ।

पालि - साहित्य में सूक्ति

पालि भाषा का मूल नाम ` मागधी भाषा ` है । इस भाषा का साहित्य पिटक साहित्य, अनुपिटक साहित्य ऐसे दो रूपों में विभक्त किया गया है । बुद्ध के मुंह से निकली अमृतमयी वाणी का संग्रह उनके शिष्यों ने किया, जो ` त्रिपिटक ` नाम से अत्यधिक प्रसिद्ध हो गया है । बुद्ध की वाणी होने के कारण इसमें उनकी भाषा और शैली का दिग्दर्शन होता है । ` पालि ` शब्द का अर्थ तक बुद्ध-वचन माना गया है । बुद्ध के वचन होने के कारण यह भाषा इसी नाम से पुकारी जाने लगी, सो बाद में भी वही नाम इस भाषा के लिए प्रयुक्त होने लगा ।

ऊपर कहा गया है - पालि साहित्य पिटक और अनुपिटक नाम से विभक्त मिलता है । उसमें ` पिटक साहित्य ` तीन भागों में बांटा गया है । सुत्तपिटक, विनयपिटक और अभिधम्म पिटक ।

सुत्तपिटक ` का प्रतिपाद्य विषय
का परिचय है। बहुत विषयों से संबन्धित कथ

इसमें इन्द्रिय-संयम
आचार-विचार की महत्ता,
नर-शरीर की असारता आदि
से मिलते हैं । नैतिक दृष्टि
के ` धम्मपद ` और `

धर्म और उन सिद्धा
इसमें ही मिलता है ।
लिया गया है । श्रद्धा
पवित्र रखने की आवश्यक
अलौकिक विषयों से संबं
अत्यधिक महत्व रखने
पर विस्तृत

आगे धम्मपद का विशेष अध्ययन आवश्यक है ।

डा० भोलानाथ तिवारी ने इस ग्रन्थ के संबन्ध में कहा है -

' धम्मपद बौद्ध-धर्म की गीता कहा गया है । यह बौद्धों का सबसे अधिक लोकप्रिय तथा प्रतिनिधि ग्रन्थ है ।'[1]

' धम्मपद ' में नीति-विषयक बातों की प्रमुखता है । इस ग्रन्थ में संगृहीत गाथाएं संस्कृत के पौराणिक ग्रन्थों के श्लोकों से साम्य रखती है । ये उपदेशात्मक ढंग से न मिलकर काव्यात्मक ढंग में मिलती हैं । पाप से संबन्धित यह उक्ति देखिए ।

नहिं पापं कतं कम्मं सज्जु खीरं व मुच्चति ।
डहन्तं बालमन्वेति भस्मच्छन्नोव पावको ।।[2]

पाप कर्म सदा मूर्ख आदमी का पीछा करता है ।

इस ग्रन्थ में व्यावहारिक नैतिक-वाक्य मिलते हैं ।

मूर्ख के संबन्ध में एक गाथा मिलती है :-

' यो बालो मञ्ञति बाल्यं पण्डितो वापि तेन सो ।
बालो च पण्डित मानी, स वे बालो ति वुच्चति।।[3]

१- हिन्दी नीति-काव्य - डा० भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ-४२

२- धम्मपद - २४०- कौसल्लायन - ई० १६२५
हिन्दी नीति काव्य से उद्धृत - पृष्ठ-४३

३- ,, ,, - पृष्ठ-४३
हिन्दी नीतिकाव्य से उद्धृत - डा० भोलानाथ तिवारी

पालि भाषा के साहित्य में ` धम्मपद ` का स्थान नैतिक दृष्टि से अत्यधिक उच्च है ।

जातक :-

बुद्ध के जन्म के पूर्व की कथा इसमें मिलती है । इस ग्रन्थ में मिलनेवाली कथायें लोक कथा के रूप में मिलती हैं जिन्हें बुद्ध के धार्मिक उपदेशों का रूप मिल गया है । ` जातक ` का प्रभाव संस्कृत के कथा-साहित्य पर भी पड़ा मिलता है ।

` जातक ` में व्यावहारिक उपदेशों के अलावा धर्म और नीति की बातें भी मिलती हैं । ` पंचतंत्र ` के समान इसमें भी एककथा कहने के बाद उसमें निहित नीति भी बतायी गयी है । उदाहरण-

` सेय्यो अमित्तो मेधावी यंचे बाला नु कंपको ।
पस्स रोहिणिकं जम्मि मातरं हन्त्वान सोचती ।।[१]

मूर्ख और कृपालु मित्र से से बुद्धिमान शत्रु ही अधिक अच्छा है । ` जातक ` में व्यावहारिक जीवन केलिए उपयोगी नीति की बातें मिलती हैं । इस ग्रन्थ में अनेक विषयों से संबन्धित उपदेशात्मक वचन मिलते हैं । राजनीति और धर्म से संबन्धित नीति के वचन भी हैं ।

` विनय पिटक ` में भिक्षुओं के आचार- व्यवहारों पर ज़ोर दिया जाता है । उनके दैनिक जीवन की दशा का चित्रण इसमें मिलता है । इसमें नैतिक उक्तियां अधिक मात्रा में नहीं मिलती ।

` अभिधम्म पिटक ` में नीति वचनों की संख्या बहुत कम है ।

१- जातक, १ , पृष्ठ-३२३-२५ (प्रथम संस्करण) कौसल्लायन
हिन्दी नीतिकाव्य से उद्धृत , पृष्ठ-४४

प्राकृत - साहित्य में सूक्ति

प्राकृत ` का तात्पर्य संस्कृत से होता है। विद्वान का कहना है :-

` प्रकृति: संस्कृतं तत्र भवं तत आगतं वा प्राकृतम् ` ।

संस्कृत से निःसृत है यह भाषा । पण्डित भी यह मानने केलिए तैयार है कि संस्कृत को प्राकृत की जननी मानना ठीक है ।

प्राकृत भाषा में साहित्य-रचना नहीं की जाती थी ; किन्तु बोलचाल की भाषा के तौर पर यह प्रयुक्त होती थी । धार्मिक ग्रन्थों के प्रणयन केलिए इस भाषा को जैनधर्म के अनुयायी स्वीकार करते थे । तत्कालीन संस्कृत-वांङमय् के आदर्श पर प्राकृत साहित्य का अधिकांश भाग निर्मित हुआ । इसमें कथा-साहित्य, गाथा-साहित्य आदि की भी रचना होती थी । प्राकृत भाषा की कहानी में धार्मिक बातों का उल्लेख होता था ।

प्राकृत के कवि जिस मुक्तक छन्द का प्रयोग किया करते थे उस मुक्तक छन्द के अनुकरण में सूक्तियों के सृजन की परंपरा चली । वैसे मुक्तकों द्वारा सूक्तियों की सृष्टि होती रही है ।

` सूक्ति ` सुभाषित आदि का जो संग्रह है वह प्राकृत साहित्य का एक विभाग है । उदाहरणार्थ किसी कथा का निर्देश अवश्य मिलता है । नीति,उपदेश आदि के पद्य इसमें संग्रहीत हैं । इस प्रकार की प्राचीन रचना ` धर्मदासगणिकृत उपदेशमाला ` है । ५४४ गाथाएं इसमें संग्रहीत हैं । ` धर्मदास ` का मूल नाम राजा विजयसेन था । विरागी होने के बाद उन्होंने भगवान महावीर से दीक्षा लेने का निश्चय किया, और दीक्षा ले ली । उपदेशमाला ` की रचना का उद्देश्य ही अपने पुत्र रणसिंह को उपदेश देना

था । आसड़कृत -उपदेशकन्दली , हरिभद्ररचित उपदेश-पद, उपदेश शतक आदि बहुत से ग्रन्थ इस साहित्य में उपलब्ध होता है ।

प्राकृत-साहित्य के कई प्रकार होते हैं, लेकिन नैतिक दृष्टि से उनमें धार्मिक और साहित्यिक प्राकृत का अत्यधिक महत्व होता है । ` प्राकृत धम्मपद ` नामक ग्रन्थ मूल ` पालि ` का रूपान्तर होने के कारण उसका उतना महत्व नहीं रह गया है । इसीकारण इसे प्राकृत का एक मौलिक ग्रन्थ कहना उचित नहीं ।

अब धार्मिक या जैन प्राकृत साहित्य की बात आती है । समझना है कि यह साहित्य नीति की दृष्टि से कहां तक सफल हुआ है । धर्मदास गणि ने ` उपदेशमाला ` नामक एक ग्रन्थ की रचना की है , ` उपदेशमाला ` के अलावा और कुछ ग्रन्थ भी प्राप्त होते हैं । उन ग्रन्थों के नाम हैं -

` ज्ञान पंचमी कथा ` जो महेश्वर सूरि की कृति है, ` धर्मोपदेश माला विवरण ` जो जयसिंह सूरि की कृति है, ` धर्मोपदेश और `कथा कोष प्रकरण ` जो जिनेश्वर सूरि की कृति है । इन ग्रन्थों में भी कथाओं के माध्यम से उपदेश देने की रीति अपनायी गयी है ।

जैन प्राकृत साहित्य में अनेक उत्कृष्ट ग्रन्थ हैं । विमलसूरि नामक कवि ने ` पउम चरित्र ` नामक ग्रन्थ की रचना की है , हरिभद्र ने ` समराइच्च कहा ` की , और धनेश्वर मुनि ने ` सुरसुन्दरी चरिय ` नामक ग्रन्थ की रचना की है । उपर्युक्त तीनों प्रबन्ध काव्यों में थोड़ी मात्रा में नीति के वचन मिलते हैं ।

साहित्यिक प्राकृत, जैन प्राकृत साहित्य से नीति के क्षेत्र में दो कदम आगे बढ़ गया है । इस साहित्य के अन्तर्गत दो सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ-रत्न

मिलते हैं। जिनके नाम हैं - 'गाहा सतसई' और 'वज्जालग्ग'। 'नीति सूक्ति-कोश' नामक ग्रन्थ में इन दोनों ग्रन्थों के बारे में कहा है :-

'प्राकृत भाषा के दो प्राचीन संग्रह सुप्रसिद्ध हैं - गाहा सतसई (गाथा सप्तशती) और वज्जालग्गा।' [१]

'गाथा सप्तशती' नामक इस मुक्तक काव्य का भारतीय साहित्य में श्रेष्ठ स्थान है। मुक्तक काव्यों के बीच यह ग्रन्थ रत्न के समान शोभित होता है। इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता के संबंध में 'संस्कृत साहित्य का इतिहास' नामक ग्रन्थ में यों बताया गया है :-

'ग्रन्थ-रूप में प्रामणिकता से उपलब्ध होनेवाला पहला सुभाषित काव्य 'गाथा सप्तशती' है जो कि महाराष्ट्री प्राकृत के सात सौ श्लोकों में लिखित है।' [२]

उपर्युक्त कथन से इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता स्पष्ट हो जाती है।

यह एक संकलन-ग्रन्थ है, न किसी एक कवि की रचना है। राजा सातवाहन इस ग्रन्थ का संग्रहकर्ता है जिन्होंने ७०० प्राकृत गाथाओं को इसमें सम्मिलित किया है।

१- नीति सूक्ति- कोश :- डा० रामसरूप शास्त्री 'रसिकेश' - प्रथम संस्करण-१९६८, पृष्ठ-१०

२- संस्कृत साहित्य का इतिहास :- वाचस्पति गैरोला पृष्ठ-९२२

इस ग्रन्थ में श्रृंगार की प्रधानता के साथ साथ भक्ति, नीति आदि की भी प्रधानता है। सज्जनों और दुर्जनों से संबन्धित नैतिक उक्तियां इसमें मिलती हैं। इसके अलावा अन्य विषयों से संबंधित सूक्तियां भी मिलती हैं।

' गाथा सप्तसती ' में सूक्ति के रूप में कोई बात कही गयी है। इसी कारण इसका प्रभाव लोगों पर अत्यधिक पड़ा है।

पांच प्राकृतों का वर्णन इतिहास में हुआ है, उन प्राकृतों के नाम निम्नलिखित हैं -

शैरसैनी, मागधी, अर्धमागधी, महाराष्ट्री और पैशाची। ये पांचों प्रा कृत साहित्यिक महत्वा रखते हैं। महाराष्ट्री प्राकृत सर्वोत्कृष्ट प्राकृत माना गया है। महाराष्ट्री प्राकृत में ' गाथा सप्तशती ' लिखा गया है।

' गाथा सप्तशती ' से एक दो उदाहरण यहां प्रस्तुत कर सकते है

नीच व्यक्ति के संबंध में एक सूक्ति लिखी गयी है :-

अउलीणो दोमुहओ ता महुरो भोअणां मुहे जाव।
मुरओ व्व खलो जिण्णाम्मि भोअणे विरसमारसइ ।। [१]

१- गाथा सप्तशती - ३, ५३, हिन्दी नीतिकाव्य
(डा० भोला नाथ तिवारी) से उद्धृत
पृष्ठ-४६, डा० भोलानाथ तिवारी

मृदंग के उदाहरण के ज़रिये नीच व्यक्ति के स्वभाव का चित्रण यहाँ हुआ है । दुष्ट व्यक्ति मुंह में भोजन रहने पर सुन्दर वाणी बोलता है, नहीं तो बुरी वाणी बोलता है ।

वज्जालग्गा :-

' गाथा सप्तशती ' के समान यह भी एक संग्रह ग्रन्थ है , मुक्तक ग्रन्थ है । इसका संग्रहकार जयवल्लभ है । इस ग्रन्थ का भी प्रमुख विषय श्रृंगार होते हुए भी नीति से संबन्धित गाथाएं भी इसमें मिलती हैं ।

नीति-सूक्ति-कोश में कहा गया है :-

' वज्जालग्गा महाराष्ट्री प्राकृत का द्वितीय महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । धर्म, अर्थ तथा काम के प्रतिपादक इस संग्रह में नीति विषयक अनेक सुन्दर उक्तियां उपलब्ध होती हैं ' । [१]

' रावणवहो ' , गउडवहो इन दोनों प्रबन्धात्मक ग्रन्थों में भी नीति की झांकी मिलती है ।

' प्राकृत सुभाषित संग्रह ' नामक ग्रन्थ में वी०एम०शाह ने इस भाषा के प्राय: सभी प्रकार के ग्रन्थों में नीति के वाक्यों को एकत्रित किया और बाद में उनका संग्रह भी किया । इस संग्रह ग्रन्थ से प्राकृत भाषा के अधिकांश नैतिक उक्तियों का स्पष्टत: उल्लेख मिलता है । इसी कारण नीति की दृष्टि से इस ग्रन्थ को प्रतिनिधि ग्रन्थ कहने में कोई अत्युक्ति नहीं है । इसमें विभिन्न विषयक नैतिक छन्द मिलते हैं ।

१- हिन्दी में नीति काव्य का विकास - डा० रामस्वरूप शास्त्री ' रसिकेश ' पृष्ठ-२०

निहणंति घणं धरणीयलं मिह्य जणि ऊणकिविण जणा ।
पायालं गन्तव्वं ता गच्छ अग्गठाणं पि ।। [१]

निष्कर्ष यही है कि प्राकृत-साहित्य नैतिक दृष्टि से बहुत संपन्न नहीं है । तो भी प्राकृत के जिन ग्रन्थों में नीति का अंश आया है उन्हें अत्यधिक सुन्दर ढंग से सजाने के कारण , अर्थात् प्रस्तुत करने के कारण इन नीति-छन्दों का श्रेष्ठ स्थान रह गया है । इस साहित्य में राजनीति से संबन्धित नैतिक उक्तियां नहीं के बराबर हैं, लेकिन लोकव्यवहार से संबन्धित नैतिक छन्द अधिक मिलते हैं ।

अपभ्रंश साहित्य में सूक्ति

अपभ्रंश साहित्य में नैतिक-धारा का विकास हुआ या नहीं , इसके बारे में अध्ययन करना है ।

अपभ्रंश के जैन, बौद्ध , शैव और ऐहिकता-परक धाराओं में शैव धारा को छोड़कर बाकी तीनों धाराएं नीति की दृष्टि से महत्व रखती हैं ।

आगे प्रत्येक धारा को लेकर उसमें सूक्ति का अंश कितना है ? यह देखना है । जैन धारा में आनेवाले मुक्तककाव्य हैं, रामसिंह मुनि का `पाहुड दोहा` , देवसेन का सावयधम्म और जिनदत्त सूरि का उपदेश रसायन ।

१- प्राकृत सुभाषित संग्रह - पृष्ठ-४३
नीति सूक्ति-कोश (डा० रामस्वरूप शास्त्री रसिकेश) से उद्धृत
पृष्ठ-११

` पाहुड दोहा ` में कुछ विषयों से संबन्धित सूक्तियां मिल जाती हैं । ` साव्यधम्म दोहा ` में उपदेश-प्रधान वचन मिलने के कारण नैतिक दृष्टि से इस ग्रन्थ का अत्यधिक महत्व माना गया है ।` उपदेश रसायन ` में भी शिक्षा प्रद ग्रन्थ है । योगीन्द्र देव की दो रचनायें हैं - परमात्म- प्रकाश और योगसार । इनमें भी उपदेशात्मक वचन मिलते हैं ।

स्वयंभू का ` पउमचरिउ` , पुष्पदन्त का ` महापुराण ` , जसहर चरिउ, तथा णायकुमार चरिउ और धनपाल का ` भविसयत्त कहा ` प्रबन्ध काव्यों की कोटि मे आनेवाले ग्रन्थ हैं । इनमें नीति का अंश बहुत कम है ।

ऐतिहासिक धारा के प्रमुख प्रबन्ध काव्य अब्दुल रहमान का सन्देशरासक, और विद्यापति के कीर्तिलता, कीर्तिपताका नामक ग्रन्थ हैं । इन प्रबन्धकाव्यों का नैतिक दृष्टि से कोई महत्व नहीं । लेकिन हेमचन्द्र के ` प्राकृत पैंगलम ` और ` प्रबन्ध चिन्तामणि ` में विभिन्न विषयक सूक्तियां मिलती हैं । डा० नामवर सिंह ने अपने ग्रन्थ में हेमचन्द्र के प्राकृत व्याकरण के संबन्ध में कहा है :-

> ` कहा नहीं जा सकता कि हेमचन्द्र ने यह मधु मधुचक्र किन किन काव्य ग्रन्थों से तैयार किया है । हेमचन्द्र के व्याकरण में जो नीति, अन्योक्ति अथवा धर्म संबन्धी रचनाएं हैं उनमें से कुछ का आदि स्रोत तो जैन काव्य-ग्रन्थों से मिल गया है ।`[१]

१- हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग :-
डा० नामवरसिंह
पृष्ठ-२२४, तृतीय संस्करण, १९६१

हेमचन्द के व्याकरण में शौर्य और श्रृंगार-संबन्धी दोहों का प्रोत अभी तक ज्ञात नहीं हुआ है । लेकिन संपूर्ण अपभ्रंश-साहित्य में हेमचन्द के व्याकरण का श्रेष्ठ स्थान है ।

निष्कर्ष यह है कि इस साहित्य में नीति, सूक्ति आदि केलिए बहुत-सा भाग रह गया अर्थात् इस साहित्य में उपदेशात्मक ग्रन्थों की अधिकता रहती है ।

प्रो० हरिवंश कोछड़ ने अपने ग्रन्थ में बताया है :-

' इन ग्रन्थों में काव्य की अपेक्षा धार्मिक उपदेश भावना प्रधान है । काव्य रस गौण है, धर्म-भाव प्रधान ' ।[१]

जैन-धर्म के उपदेशक इन कृतियों की रचना करते हैं ।

अपभ्रंश काव्य उपर्युक्त दोनों भाषाओं से अर्थात् संस्कृत और पालि से इस बात में श्रेष्ठता रखते है कि ये काव्य धर्म और आचार-नीति के क्षेत्र में अधिक संपन्न ~~भाव~~ बन गये है ।

लेकिन इस काव्य में लोक-व्यवहार की बातें कुछ कठिनाई से मिलती हैं ।

<u>हिन्दी साहित्य में सूक्ति</u>

हिन्दी साहित्य में सूक्तियों का भी अपना विशिष्ट स्थान रहा है ।

१- अपभ्रंश मुक्तक काव्य : अपभ्रंश साहित्य , प्रो० हरिवंश कोछड पृष्ठ-४३

हिन्दी का उपन्यास-साहित्य औपदेशिक दृष्टि से कुछ कुछ श्रेष्ठ बना है । उपन्यास के अलावा कुछ उपदेशात्मक कहानियाँ की भी रचना हुई है ।

लेकिन हिन्दी भाषा की कविता के क्षेत्र में नीति के विकास की विभिन्न सीढ़ियों पर नज़र डालना है ।

हिन्दी साहित्य अपने पूर्व-वर्ती साहित्य से कुछ प्रभावित हो गया है । संस्कृत साहित्य नीति-ग्रन्थों से समृद्ध बन पड़ा है । संस्कृत के नीति-ग्रन्थों का प्रभाव हिन्दी साहित्य में पड़ा है ।

हिन्दी में प्रमुख सूक्तिकार कवि रहे हैं । उन कवियों ने सूक्ति-साहित्य के विकास केलिए अनुपम कृतियों की रचना की है । आगे इसी बात पर विचार करना है कि हिन्दी साहित्य में सूक्ति का उद्भव कहां से हुआ और उस सूक्ति-साहित्य का विकास कैसे हुआ ।

हिन्दी-नीति-साहित्य में पूर्ववर्ती साहित्यों का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव पड़ा है ।

भारत की प्राचीन भाषा संस्कृत होने के कारण इस भाषा से हिन्दी भाषा अवश्य प्रभावित हुई होगी । संस्कृत ग्रन्थों का हिन्दी में अनुवाद भी होता रहता था । पहले पहल हमारे देश में संस्कृत भाषा का अत्यधिक प्रचार था । इस भाषा में अनेक सूक्ति-प्रधान ग्रन्थों का निर्माण हुआ , और इन ग्रन्थों को पढ़कर लोगों का मन सूक्ति-साहित्य की ओर मुड़ने लगा ।

पुराने ज़माने में पाठशालाओं में, छात्रों कोसंस्कृत के साथ साथ प्राकृत-भाषा का भी अध्ययन करना पड़ता था । प्राकृत की प्रसिद्ध कृति

' गाहा सतसई ' से रीतिकाव्य के कुछ शृंगारिक ग्रन्थ प्रभावित हुए हैं। तब हमें समझना चाहिए कि हिन्दी भाषा पर प्राकृत भाषा का प्रभाव ज़रूर पड़ा है।

लेकिन हिन्दी पर पालि भाषा का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से नहीं पड़ा है, प्रामाणिकता के अभाव में यही समझना चाहिए।

अपभ्रंश भाषा से हिन्दी भाषा अछूती नहीं है। हिन्दी साहित्य के आदि काल में कुछ अपभ्रंश रचनायें मिलती हैं। निष्कर्ष यह है कि हिन्दी में सूक्ति का स्रोत उपर्युक्त भाषायें भी हैं।

हिन्दी साहित्य में सूक्ति का स्थान

भक्तिकाल के कबीर, रहीम, तुलसी, वृन्द आदि कवियों ने सूक्तियां लिखी हैं। साहित्य में सूक्ति का स्थान इस प्रकार उन्होंने स्पष्ट कर दिया है। यह सूक्तिधारा भक्ति-युग की खास प्रवृत्ति तक कहला सकती है।

गुरु गोरखनाथ ने गुरु महिमा, वैराग्य, इन्द्रिय निग्रह, इत्यादि पर सूक्तियां लिखी हैं। अधिकांश आचार्य गुरु माहात्म्य, वाह्याडंबर का त्याग, संसार से वैराग्य आदि विभिन्न विषयों को लेकर सूक्ति लिखते थे।

कबीर ने उपदेशात्मक वचन लिखे हैं, उन्होंने भी सूक्ति-साहित्य को समृद्ध करने का परिश्रम किया है।

कबीर दास ने गुरु महिमा संबन्धी सूक्ति लिखी है।

गुरु गोविन्द तौ एक हैं दूजा यहु आकार ।
आपा मेट जीवत मरै , तौ पावै करतार ।। [१]

उन्होंने वाह्याडंबर की घोर निन्दा की

बैसनौं भया तौ का भया, बूझा नहीं बबेक ।
छापा तिलक बनाइ करि, दगध्या लोक अनेक ।। [२]

उन्होंने वाह्याडंबर पर कुछ महत्व नहीं दिया है । वे वाह्याडंबर की उपेक्षा कर भगवान के प्रति वास्तविक भक्ति रखने का उपदेश देते है । हिन्दू और मुसलमानों को माध्यम के रूप में स्वीकार किया। सूक्तियों को साहित्य के श्रेष्ठ पद पर आरूढ़ करने केलिए कबीरदास जी ने प्रयत्न किया । उनके पद, साखी आदि इसके प्रमाण-स्वरूप आते हैं ।

निर्गुण पंथ के दूसरे आचार्य गुरु नानक ने भी कुछ सूक्तियों की रचना की है । उनकी सूक्तियों में अभिव्यक्त विचार यह है कि दूसरों की सेवा करने केलिए हमेशा तैयार रहना चाहिए, उसके लिए कठिन परिश्रम भी करना चाहिए, विषय-वासनाओं से दूर रहना ही चाहिए ।

मलूकदास ने भी सूक्ति-साहित्य को समृद्ध करने का प्रयत्न किया है ।

१- कवीर ग्रन्थावली-सटीक - प्रो० पुष्पपाल सिंह, पृष्ठ-१०४
द्वितीय संस्करण-१९६५

२- कवीर ग्रन्थावली - सटीक - प्रा० पुष्पपालसिंह, पृष्ठ-२२८
द्वितीय संस्करण,१९६५

रहीम ने सतसई की रचना की है जिसमें अनेक सूक्तियां दी गयी हैं। उन्होंने जन-साधारण के बीच होनेवाली घटनाओं से संबन्धित सूक्तियां लिखी हैं। डा० रामसागर त्रिपाठी ` रहीम ` के संबन्ध में लिखते है :-

` इन्हें जीवन की सच्ची परिस्थितियों का मार्मिक अनुभव था उसी को उन्होंने सीधी-सादी भाषा में व्यक्त किया है। इन सूक्तियों के पीछे उनका हृदय झांक रहा है।` १

रहीम की सूक्तियां साधारण लोगों के बीच बहुत प्रचलित हैं। सूक्ति-साहित्य केलिए ` सतसई ` नामक रचना एक अपूर्व देन है।

अकबर के दूसरे कुछ दरबारी कवियों ने भी सूक्ति-संबंधी पद लिखे हैं।

वृन्द ने ` सतसई ` में अनेक सूक्तियां रखी हैं।

महात्मा तुलसीदास की ` दोहावली ` नामक रचना में बहुत सूक्तियों का संकलन हुआ है। ` रामचरितमानस ` में स्थान स्थान पर कवि हमें उपदेश देते हैं। उन्होंने जीवन के विविध प्रसंगों का संस्पर्श कर सूक्तियां लिखी है। ` मानस ` को हम महत्वपूर्ण सूक्तियों का कोश भी कह सकते हैं। ये सूक्तियां एक ज्ञानी और अनुभवी व्यक्ति के कण्ठ से निकली है। इन सूक्तियों की सरसता और भाव-पूर्णता का यही पर्याप्त प्रमाण है कि आज भी उत्तरभारत की जनता, जीवन-क्षेत्र में न्याय, अन्याय, कार्य-अकार्य आदि के विवेचन के प्रमाण के तौर पर उद्धृत करती है। पीढ़ियों से फैलती और जन-मन की गहराई में पैठते हुए ये सूक्तियां अशिक्षित लोगों

१- मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी- डा० रामसागर त्रिपाठी
पृष्ठ-१९५

केलिए भी कण्ठस्थ हो गयी है ।

इसी तथ्य की ओर इशारा करते हुए ` मानस ` के रूसी विद्वान वरान्नीकोव ने यह मत दिया है ।

> ` तुलसीदास के सुभाषित भारत में अत्यधिक लोकप्रिय हो गए हैं । बहुत से लेखकों के साक्ष्य पर उत्तरभारत में ऐसा मनुष्य ( पुरुष व स्त्री ) कठिनाई से मिलेगा जो पूर्णतया अशिक्षित होने पर भी तुलसी के काव्य की कतिपय सूक्तियाँ न जानता हो` । [१]

तुलसीदास अन्योक्ति, प्रत्यक्षोक्ति दोनों प्रकार की सूक्तियां लिखने में सिद्धहस्त हैं ।

इस प्रकार हिन्दी साहित्य में सूक्तियों को महत्वपूर्ण स्थान मिल गया है । उपर्युक्त सभी कवियों ने सूक्तियाँ लिखकर साहित्य को समृद्ध करने का प्रयत्न किया है ।

कवि बिहारी को भी सूक्तिकारों के बीच एक श्रेष्ठ स्थान मिल गया है ।

भर्तृहरि के ` नीतिशतक ` के तीन शीर्षक होते हैं - नीति, श्रृंगार और वैराग्य । ` नीतिशतक ` से प्रभावित होकर रामचरित उपाध्याय ने ` वृजसतसई ` की रचना की है जिसके नीति, श्रृंगार और वैराग्य नामक तीन भाग होते हैं।

१- मानस की (रूसी) भूमिका-मूल लेखक , श्री ए०पी०वरान्नीकोव
अनुवादक: केसरी नारायण शुक्ल, पृष्ठ-६४, संस्करण-१९५५

' तुलसी सूक्ति-सुधा ' नामक ग्रन्थ में श्री वियोगी हरि ने तुलसीदास की सूक्तियों को विषयानुसार क्रमबद्ध कर उनका संकलन किया है।

हिन्दी के कबीर, वृन्द, रहीम, बिहारी, गंग, तुलसी आदि सूक्तिकारों ने अनेक सूक्तियों की रचना करके इस साहित्य को पुष्ट करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है।

तुलसीदास के ' मानस ' और ' दोहावली ' नामक कृतियों में अनके सूक्तियां भरी पड़ी है। ' मानस ' में अनेक विषयों से संबन्धित सूक्तियां मिलती हैं, वैसे दोहावली में भी। दोहावली में मुक्तक छन्दों की रचना हुई है, प्रत्येक छन्द में एक सुन्दर उक्ति कही गयी है।

हिन्दी में सूक्ति से संबन्धित ग्रन्थ प्रकाशित होकर बाहर निकल रहे हैं।

श्री रमाशंकर गुप्त ने ' सूक्तिसागर ' नामक एक ग्रन्थ की रचना की है जिसमें अनेक कवियों की सूक्तियों का संग्रह किया गया है।

फिर डा० रामस्वरूप शास्त्री ' रसिकेश ' ने ' नीति-सूक्ति-कोश नामक एक ग्रन्थ लिखा है। इसमें सूक्ति से संबन्धित कुछ बातें मिलती है उसके साथ साथ सूक्तियां भी मिलती हैं।

' बृहत्सूक्ति कोश ' बारह भागों में प्रस्तुत हुआ है। डा० चरण दास शर्मा ने ' तुलसीदास के काव्य में नैतिक मूल्य ' नामक जिस ग्रन्थ की रचना की है उसमें नीति से संबन्धित बातें मिलती हैं।

हिन्दी में सूक्ति का विकास होता रहता है। संस्कृत भाषा प्राकृत भाषा, पालि भाषा और अपभ्रंश भाषा से गुजर कर सूक्ति, हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण किया।

हिन्दी साहित्य में सूक्ति का विकास अवश्य हुआ है।

00000000000000000000

ती स रा अ ध्या य

000000000000000

तु ल सी के का व्यों की

भू मि का

गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी साहित्य के महत्वपूर्ण स्थान के अधिकारी है। उनके हृदय से भक्ति के जो उद्गार निकले हैं वे विश्व के भक्ति-साहित्य में अत्यधिक महत्व रखते हैं। वे तो जन-साधारण के कवि है, उनके जीवन के तीव्र विकारों को समझकर उसको भली-भांति कविता में लाने का प्रयत्न उन्होंने किया है। सभी लोगों का कल्याण करना उनका लक्ष्य रहा है। रामचरितमानस तो उनका अद्वितीय काव्य-ग्रन्थ है। `मानस` मन्दाकिनी में निमग्न होकर भक्त-हंस अनके मोतियों को चुगते रहते हैं। `मानस` के बाद विनयपत्रिका उनकी अत्यधिक प्रौढ़ रचना है। हिन्दी साहित्य-गगन में उसकी चमक कभी मन्द नहीं पड़ेगी।

जन्मस्थान :

तुलसीदास के जन्म-स्थान के संबन्ध में अनेक धारणायें प्रचलित हैं। इस पर प्रमुख विद्वानों ने जो विचार व्यक्त किये हैं उनपर हमें विचार करना है।

विदेशी विद्वानों में एच०एच०विल्सन, गार्सां द तासी, एफ० एस०ग्राउज़, जार्ज ग्रियर्सन, और एफ०आर०आलविन प्रमुख हैं। ये उनका जन्म-स्थान हाजीपुर, हस्तिनापुर, राजापुर, काशी, अयोध्या, तारी और सोरों मानते हैं। [१]

भारतीय विद्वानों में शिवनन्दन सहाय, रामकिशोर शुक्ल, श्यामसुन्दर दास, पीतांबर दत्त बड़थ्वाल, राम नरेश त्रिपाठी, रामदत्त

१- गोस्वामी तुलसीदास- व्यक्तित्व, दर्शन, साहित्य।
रामदत्त भारद्वाज, १९६२, पृष्ठ-१२५

भरद्वाज, माता प्रसाद गुप्त आदि उल्लेखनीय व्यक्ति हैं । उपर्युक्त मत का सम्यक विवेचन आवश्यक प्रतीत होने के कारण हमें एक एक स्थान को लेकर मत भेदों पर विचार करना है ।

हाजीपुर :-

एच०एच०विल्सन ` दि स्केच आफ दि रिलीजस सेक्ट्स आव दि हिन्दूज में आपने जो विचार व्यक्त किये हैं उनसे मालूम होता है कि वे हाजीपुर को गोस्वामी जी का जन्म स्थान माननेवाले हैं । गार्सा-द-तासी ने विल्सन के इस मत का समर्थन किया । ग्राउज़ और ग्रियर्सन इस मत से सहमत हैं । इससे प्रतीत होता है कि गोस्वामी जी चित्रकूट के निकट हाजीपुर के निवासी थे । लेकिन भारतीय विद्वान राम बहोरी शुक्ल उनका जन्मस्थान हाजीपुर मानने केलिए तैयार नहीं ।

हस्तिनापुर :-

इस स्थान को कवि की जन्म-भूमि मानने वाले विद्वान हैं एफ० एस०ग्राउज़ ।` भक्तसिंधु ` को आधार मानकर वे इस तथ्य पर बल देते हैं लेकिन उन्होंने अपने इस मत पर बल न देने के कारण, अर्थात् उनका जन्मस्थान हस्तिनापुर कहने पर भी उसे सत्य मानने केलिए तैयार न होने के कारण उनके इस मतो की पुष्टि नहीं हुई है । [१]

ग्रियर्सन इस मत को नहीं मानते हैं । वे तारी और राजापुर को मानने केलिए अधिक उत्सुक हैं ।

१- गोस्वामी तुलसीदास- व्यक्तित्व,दर्शन,साहित्य - रामदत्त भरद्वाज
प्रथम संस्करण,१९७२ , पृष्ठ-१८

राजापुर:-

राजापुर को उनका जन्म-स्थान सिद्ध करने केलिए जो जो सामग्री तैयार की गयी है उसी पर विचार करना है ।

(१) तुलसी चरित, मूलगोसाई चरित, घटरामायण का परिशिष्ट मूल गोसाई - चरित की तिथियां श्रीधर पाठक, डा० माताप्रसाद गुप्त आदि विद्वानों की दृष्टि में अशुद्ध है ।[1]

तुलसी चरित को बाबू शिव नन्दन सहाय,पं० रामस्वरूप मिश्र, पं० रामनरेश त्रिपाठी, डा० श्याम सुन्दर दास आदि विद्वान प्रामणिक मानने केलिए तैयार नहीं ।[2]

घट-रामायण के अनुसार भी ` राजापुर ` उनका जन्म-स्थान नहीं कहा जा सकता ।

माता प्रसाद गुप्त का मत है - ` यह अवश्य है, राममक्त होने के नाते निकटवर्ती और अत्यन्त रमणीय रामतीर्थ चित्रकूट को छोड़कर राजापुर जैसे स्थान को अन्यथा साधना-भूमि बनाना तुलसीदास के लिए कम संभव लगता है ।[3]

१- गोस्वामी तुलसीदास - व्यक्तित्व, दर्शन,साहित्य - रामदत्त भरद्वाज
प्रथम संस्करण १६७२ , पृष्ठ २२७

२- ,, ,, ,, पृष्ठ २२७

३- तुलसीदास - माताप्रसाद गुप्त, तृतीय संस्करण १६५३,
पृष्ठ-१५२

राजापुर को उनका जन्मस्थान मानने केलिए मा० भगीरथ मिश्र तैयार नहीं होते - ` राजापुर को तुलसी ने बसाया था, यह मानना कठिन है, क्यों कि यदि यह मानें तो तुलसी कहीं बाहर से आये थे और इतने प्रसिद्ध थे कि वे एक शहर बसा सकते थे, यह भी मानना पडता है ` ।[१]

राजापुर को उनका जन्मस्थान माननेवाले विदेशी विद्वान है ग्रियर्सन महोदय । वे भारतीय विद्वानों से प्रभावित होने के कारण शायद उन्होंने यों माना है । राजापुर को उनका जन्मस्थान माननेवाले विदेशी विद्वान ये है - जे०ई० कारपेंटर, डी०पी०हिल, डब्ल्यू०सी०मैक्डूगल, मैक्फी, रेवरेण्ड एटकिंस और वोंदविल है । रेवरेण्ड ग्रीव्स ` राजापुर `को उनका जन्मस्थान नहीं मानते ।

राजापुर को जन्म-स्थान माननेवाले भारतीय विद्वान है - शिवनन्दन सहाय, भगवान दास, लक्ष्मीनारायण सुधांशु आदि ।

अयोध्या :-

गोस्वामीजी का जन्मभूमि अयोध्या माननेवाले विद्वान हैं उफ०आर०आलविन ।[२] पुष्ट प्रमाणों के अभाव में आलविन का यह मत प्रामणिक नहीं जान पडता । इसी कारण उनके इस मत को स्वीकार करना मुश्किल सा पडता है ।

१- तुलसी रसायन :- डा० भगीरथ मिश्र - पंचम संस्करण,१९६६
पृष्ठ-५९

२- रामचरित मानस की पाश्चात्य समीक्षा :- डा० सुखवीर सिंह
प्रथम संस्करण-१९७१, पृष्ठ-१९

डा० भगीरथ मिश्र का मत है -

इसमें एक तुलसी चौरा है । कहते हैं गोस्वामीजी ने यही `मानस ` की रचना की थी । दूसरी महत्व की वस्तु` मानस के ` बालकाण्ड ` की एक प्रति है जो जहां ` श्रवणकुंज ` नामक मन्दिर में है । कहा जाता है कि इसमें कई स्थानों पर गोस्वामीजी के हाथ के संशोधन हैं । [१]

काशी :-

रजनीकान्त शास्त्री गोस्वामी जी का जन्मस्थान ` काशी ` मानने वाले हैं । ` विनयपत्रिका ` की ये पंक्तियां अपने मत की पुष्टि के लिए वे स्वीकार करते हैं ।

` दियो सुकुल जनम शरीर सुन्दर हेतु जो फल चारि को ।
जो पाइ पंडित परम पद पावत पुरारि मुरारि को ।।
यह भरतखण्ड समीप सुरसरि थल भलो संगत भली ।
तेरी कुमति कायर कल्प वल्ली चाहति विषफल फली ।।[२]

इससे प्रतीत होता है कि उनका जन्म गंगा के किनारे हुआ था । वे अपने मत की पुष्टि के लिए ` मानस ` की इस पंक्ति को भी उद्धृत करते हैं :-

---

१- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र, पंचम संस्करण-१६६६
पृष्ठ-५८

२- विनयपत्रिका - पं० राजनाथ शर्मा , पृष्ठ-३०४

मुक्ति जन्म महि जानि ज्ञान खानि अघहानि कर ।
जहं बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कसन न ।।[१]

लेकिन ' कवितावली ' की इन पंक्तियों से इस बात का निराकरण हो जाता है कि उनका जन्म काशी में हुआ । हमें अनुमान लगाना पडता है कि उनका जन्म गंगातट वर्ती किसी भी स्थान में हुआ था ।[२]

रामदत्त भरद्वाज का विचार है - गोस्वामीजी का संबन्ध काशी से घनिष्ठ रहा, यह निर्विवाद है और जैसा कि ' रामचरितमानस और विनयपत्रिका से स्पष्ट है । उनका वार्द्धक्य वहां बीता ' ।[३] लेकिन काशी को वे गोस्वामीजी की जन्मभूमि नहीं मानते ।

तारी (अन्तर्वेद स्थित)

ग्रियर्सन तारी को उनका जन्मस्थान मानने वाले विद्वान है ।[४] उनके मत को मानने वाले हैं श्री सीताराम शरण भगवान प्रसाद । तारी नामक गांव एटा जिले के सहावर कस्बे से सवा दो मील उत्तरपूर्व में स्थित है । ग्रियर्सन की यही मान्यता है कि गोस्वामीजी की जन्मभूमि होने का दावा करनेवाले स्थानों में तारी का दावा सर्वश्रेष्ठ प्रतीत होता है ।

१-रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - किष्किन्धाकाण्ड - पृष्ठ-२
[तुलसी कृत]
२-तुलसीदास - डा०माताप्रसाद गुप्त , प्रथम संस्करण १६५३, पृष्ठ-१४१

३-गोस्वामी तुलसीदास:- व्यक्तित्व,दर्शन,साहित्य, डा० रामदत्त भरद्वाज -१६६२,पृष्ठ-१४१

४-रामचरित मानस की पाश्चात्य समीक्षा- डा० सुखबीर सिंह, पृष्ठ-२०

डा० रामदत्त भरद्वाज का निष्कर्ष है कि - ' उक्त तारी गोस्वामीजी की जन्मस्थली नहीं, हुलसी की है । किन्तु इस बात की अधिक संभावना है कि तारी में गोस्वामीजी की गर्भ-स्थिति हुई थी । [१]

माताप्रसाद गुप्त मानते है कि ' तारी का उल्लेख भी कदाचित् जनश्रुति के अतिरिक्त किसी और आधार पर नहीं किया गया है । [२]

रामपुर :-

इस मत के प्रमुख विद्वान हैं रामदत्त भरद्वाज । उनकी राय में गोस्वामीजी अयोध्या केलिए ' रामपुर ' शब्द स्वीकार करते है । इसकी पुष्टि केलिए वे ' गीतावली ' की निम्नलिखित पंक्तियों का उद्धृत करते है :-

मुनि सुर सुजन समाज के सुधारि काज ।
बिगरि बिगारि जहां जहां जाकी रही है ।
पुर पांव धारि हैं उधारि हैं तुलसीहू से जन ।
जिन जानि कै गरीबी गाढ़ी गही है । [३]

उनके अनुसार ' तुलसीदास का जन्मस्थान ' रामपुर ' है और वहीं उनके पूर्व-पुरुष रहते थे । किन्तु दोनों रामपुर भिन्न स्थान हैं । भगवान् रामचन्द्र का जन्मस्थान रामपुरग्राम है । [४]

१- गोस्वामी तुलसीदास- व्यक्तित्व : दर्शन, साहित्य,
डा०रामदत्त भरद्वाज,पृष्ठ-१५६

२- तुलसीदास- डा०माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-१४२

३- गीतावली-(तुलसीकृत)प्रकाशक-हनुमानप्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-२१५-२१६

४- गोस्वामी तुलसीदास - व्यक्तित्व, दर्शन,साहित्य -
डा० रामदत्त भरद्वाज,पृष्ठ-१५३

सोरों :-

पं० रामनरेश त्रिपाठी का विचार है कि गोस्वामीजी का जन्म-स्थान सोरों या सूकर-खेत ही है । वे इसके लिए कुछ प्रमाण उपस्थित करते है ।

सोरों ` में मै कई विद्वानों से मिला जिनमें विद्वबर पं० गंगा वल्लभ, पांड्ये, व्याकरणाचार्य,काव्यतीर्थ, न्यायशास्त्री ,वैधराज, प्रिंसिपल मेहता, संस्कृत विधालय और पंडित गोविन्द वल्लभ शास्त्री मुख्य हैं । सबने तुलसीदास का जन्मस्थान सोरों ही बताया । [१] अपने मत की पुष्ट करने केलिए वे यह भी कहते है कि कवितावली, गीतावली, दोहावली,विनयपत्रिका आदि ग्रन्थों में सोरो में प्रचलित शब्दों और मुहावरों का प्रयोग मिलता है ।

डा० माताप्रसाद गुप्त ने रामनरेश त्रिपाठी के मत का विरोध किया है । वे कहते है - ` फलत: भले ही अपने बालपन में अपने गुरु के साथ उन्होंने सूकरखेत की - जिसे यदि एक बार सोरों के विद्वानों के अनुसार सोरों ही मान लिया जाए - यात्रा की हो, तो भी सोरों से तुलसीदास का कोई निकट का संबन्ध प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर प्रमाणित नहीं होता है । [२] इस प्रकार इस महान कवि के जन्म-स्थान के संबन्ध में विद्वानों में अत्यधिक वाद-विवाद पैदा हुए हैं । किसी विद्वान ने हाजीपुर को और किसी ने हस्तिनापुर को, और एक ने काशी को, अयोध्या को, राजापुर को , सोरों को जन्म-स्थान माना है । लेकिन एक अन्तिम फैसला अभी तक नहीं हुआ । यह प्रश्न उलझन में ही पड़ा हैं ।

१-तुलसीदास और उनका काव्य:- पं० रामनरेश त्रिपाठी, तृतीय संस्करण पृष्ठ-७१

२-तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त,पृष्ठ-१६१

निष्कर्ष यही निकालना पड़ता है कि उनका जन्मस्थान राजापुर या सोरों न होकर सोरों या सूकर क्षेत (शूकरक्षेत्र) के पास कोई स्थान हो सकता है । माता-पिता के देहत्याग के उपरान्त घूमते फिरते सूकर क्षेत्र पहुंच गये । वहां गुरु नरहरिदास का शिष्यत्व ग्रहण कर उन्होंने विद्याध्ययन किया । विरागी होने के बाद वे काशी, अयोध्या, चित्रकूट, आदि स्थानों में घूमते रहे । वैसे गोस्वामीजी का संबन्ध इन सभी स्थानों से माना जाता है ।

जन्मतिथि :-

गोस्वामीजी की जन्म-तिथि के संबन्ध में भी विद्वानों में मतभेद है ।

शिव सिंह सरोज ` में कही गयी उनकी जन्मतिथि (सं० १५८३) आधार रहित होने के कारण स्वीकार नहीं कर सकता ।[१]

तुलसी साहित्य के विदेशी विद्वान विल्सन अपने ग्रन्थ ` स्केच आव दि रिलीजस सेक्ट्स आफ दि हिन्दूज ` के आधार पर उनकी जन्म-तिथि संवत् १६०० मानते है । [२] लेकिन गार्सा दि तासी, जो इतिहास लेखक है और एफ०आर०आलचिन, विल्सन के कथन का समर्थन करते है ।

डा० जार्ज ग्रियर्सन उनकी जन्म-तिथि सं०१५८६ मानते है जो घट रामायण ` पर आधारित है । [३]

१- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-६२

२- रामचरित मानस की पाश्चात्य समीक्षा, सुखबीर सिंह, पृष्ठ-१७

३- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-६२

डा० माताप्रसाद गुप्त का भी यही मत है - ' जब उन्होंने रामचरित मानस ' की रचना की थी उनका जन्म संवत् १५८९, भादों सुदी १२, मंगलवार को हुआ था । यह तिथि गणना से शुद्ध उतरती है । इस तिथि को मानने में कोई असंभावना भी नहीं दिखाई पड़ती, इसलिए इस तिथि को हम कवि की जन्म-तिथि के रूप में ग्रहण कर सकते है । [1]

श्री चन्द्रबली पांडेय, ग्रियर्सन और माताप्रसाद गुप्त के मत को मानने वाले है ।

वेणीमाधव दास जी उनकी जन्म-तिथि का निर्णय निम्न-लिखित दोहे के आधार पर करते है :-

' पन्द्रह सौ चउवन विषै कालिंदी के तीर ।
सावन शुक्ला सप्तमी तुलसी धरेउ सरीर ।। [2]

तुलसी की जन्म-तिथि वि०सं०१५५४ मानने में एक आपत्ति है कि इससे उनकी उम्र १२६ ठहरती है जो ठीक नहीं लगता ।

उपर्युक्त विद्वानों ने जिस तिथि को गोस्वामीजी की जन्म-तिथि को स्वीकार किया है उनमें ग्रियर्सन, माताप्रसाद गुप्त आदि विद्वानों की कही हुई तिथि उपयुक्त प्रतीत होती है । जे०एन-कारपेंटर, जे०एम०फारवहार, एफ०

१- तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-१४०

२- गोस्वामी तुलसीदास- व्यक्तित्व, दर्शन, साहित्य - रामदत्त भारद्वाज पृष्ठ-३८

ई०की, जे०ई०कारपेंटर, जे०एम०मेकफी, डब्ल्यू०सी०मैक्डूगल, आदि अधिकांश विद्वान उनकी जन्म-तिथि संवत् १५८९ वि० मानते हैं। [१] इस तिथि को उनकी जन्म-तिथि मानना ठीक लगता है।

जाति-पाँति :-

पं० रामनरेश त्रिपाठी 'विनयपत्रिका' की निम्नलिखित पंक्ति के आधार पर गोस्वामीजी को ब्राह्मण-वंशी मानते हैं। [२]

> दियो सकुल जनम सरीर सुन्दर हेतु जो फल चारि को।
> जो पाइ पंडित परम पद पावन पुरारि मुरारि को। [३]

'सुकुल' शब्द का अर्थ 'उत्तमकुल' मानने से यह समझना चाहिए कि उनका जन्म अवश्य ब्राह्मण वंश में ही हुआ है।

कवितावली का निम्नलिखित पंक्ति भी इसका प्रमाण-स्वरूप निकलता है।

> 'जायो कुल मंगन, बधावनो, बजायो, सुनि,
> भयो परितापु पापु जननी जनक को। [४]

१- रामचरित मानस की पाश्चात्य भूमिका - डा० सुखबीर सिंह पृष्ठ-१८

२- तुलसीदास और उनका काव्य :- पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-१५

३- विनयपत्रिका- राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-३०४

४- कवितावली- हिन्दी अनुवाद सहित- श्रीकान्त शरण- उत्तरकाण्ड पृष्ठ-३८६

` मंगन कुल ` शब्द से स्पष्ट संकेत मिलता है कि वे ब्राह्मण कुल में उत्पन्न व्यक्ति है। लेकिन गोस्वामीजी की यह उक्ति देखिए :-

मेरे जाति - पाँति न चहौं काहू की जाति पांति।
मेरे कोऊ काम को न हौं काहू के काम का ।।[१]

इन पंक्तियों में उनकी जाति-पांति- हीनता का भाव प्रकट होता है।

कवि की उपजाति के संबन्ध में विद्वानों में मतभेद प्रकट किये हैं - कोई उन्हें सरयूपारीण मानता है तो और कोई कान्यकुब्ज। विल्सन महोदय, ग्रियर्सन , जे०एन०कारपेंटर आदि विदेशी विद्वान उन्हें सरवरिया ब्राह्मण मानते हैं। [२] कवितावली की ` जायो कुल मंगन ` वाली पंक्ति के आधार पर वे गोस्वामीजी को सरयूपारीण मानते हैं। ग्रियर्सन उन्हें कान्यकुब्ज ब्राह्मण इसलिए नहीं मानते कि कान्यकुब्ज दान लेना तथा भिक्षा-याचना आदि गर्हित मानते हैं। किन्तु कवि ने कवितावली में अपने जन्म के संबंध में कहते हुए ` जायो कुल मंगन ` कहा है। [३] पं० रामगुलाम द्विवेदी ने ग्रियर्सन के मत का अनुसरण किया है।

गोस्वामीजी को ` कान्यकुब्ज ` ब्राह्मण माननेवाले विदेशी विद्वान है ग्राउज़ महोदय जिसका समर्थन करनेवाले विद्वान हैं एफ०ई० के। [४]

१- कवितावली - श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-४५६

२- रामचरित मानस की पाश्चात्य समीक्षा- डा० सुखबीर सिंह, पृष्ठ-२५

३- इंडियन ऍटीकरी-१८९३, पृष्ठ-२६४- तुलसीदास- ` माताप्रसाद गुप्त से उद्धृत- पृष्ठ-१६१

४- रामचरित मानस की पाश्चात्य समीक्षा-डा०सुखबीर सिंह, पृष्ठ-२५

डा० रामदत्त भरद्वाज ग्रियर्सन के मत का खण्डन करते हुए कहते है- गोस्वामीजी के ' मंगना ' शब्द का अर्थ ' सरवरिया ब्राह्मण ही लगाया जाय यह आवश्यक नहीं । [1] वैसे मिश्र बन्धु भी गोस्वामीजी को सरयूपारीण मान लेने में दो आपत्तियां उठाते है :-

१: पहली तो यह कि समग्र बांदा तथा राजापुर के निकटवर्ती प्रदेश में कान्यकुब्ज ब्राह्मणों का निवास है, सरयूपारीणों का नहीं । इसलिए स्पष्टत: वे कान्यकुब्ज थे ।

२: वे पाठकों में विवाहित थे जो ब्राह्मणों में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं । तत्पश्चात् द्विवेदियों का स्थान है । पाठकों की पुत्रियों का विवाह द्विवेदियों में नहीं हो सकता था, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपनी कन्या का विवाह निम्नतर कुल में नहीं करता । किन्तु कान्यकुब्जों में पाठक द्विवेदियों की अपेक्षा नीचे समझे जाते हैं । अतएव पाठक और द्विवेदियों का वैवाहिक संबंध औचित्यपूर्ण हो सकता था । २

लेकिन डा० माताप्रसाद गुप्त अन्तिम निर्णय नहीं कर सके है ।

डा० भगीरथ मिश्र का यही निष्कर्ष है कि वे अच्छे कुल के सुन्दर शरीरवाले ब्राह्मण थे ।

१- गोस्वामी तुलसीदास - व्यक्तित्व,दर्शन,साहित्य, रामदत्त भरद्वाज पृष्ठ-१५

२- हिन्दी नवरत्न, पृष्ठ-६-१०, गोस्वामी तुलसीदास: व्यक्तित्व,दर्शन, साहित्य से उद्धृत, पृष्ठ-२४ रामदत्त भरद्वाज

विद्वानों के मतों पर विचार करने पर ग्रियर्सन का मत अधिक युक्तिसंगत मालूम पड़ता है । ' कवितावली ' की ' जायो कुल मंगन ' वाली पंक्ति के आधार पर उन्हें सरयूपारीण ब्राह्मण मानना ठीक लगता है ।

माता - पिता :-

गोस्वामी के पिता का नाम है आत्माराम दुबे और माता का नाम हुलसी । तुलसी-साहित्य के अन्तर्गत केवल तुलसीदास की माता के नाम का उल्लेख मिलता है और पारिवारिक व्यक्तियों में और किसी का नाम नहीं मिलता । उनकी पत्नी का नाम रत्नावली है, श्वसुर का दीनबन्धु पाठक और पुत्र का नाम है तारक ।

रामहिं प्रिय पावन तुलसी सी ।
तुलसीदास हित हिय हुलसी सी ।।[१]

अभुक्त मूल ' में उत्पन्न होने के कारण अशुभ समझकर माता-पिता ने उन्हें त्याग दिया । फिर उनका पालन-पोषण चुनिया नामक स्त्री के हाथों संपन्न हुआ ।' कवितावली ' और ' विनयपत्रिका ' की निम्नलिखित पंक्तियां इस बात को पुष्ट करती हैं कि जन्म के बाद शीघ्र ही माता-पिता से उनका वियोग हो गया ।

मातु पिता जग जाइ तज्यो, बिधि हूं न लिखी कुछ भाल भलाई ।[२]

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड- पृष्ठ-८०

२- कवितावली - श्री कान्तशरण (प्रकाशक) -पृष्ठ-३५८

जननी जनक तज्यो जनमि करम बिनु बिधिहू न सृज्यो अवडेरे ।[१]

तनु तज्यो कुटिल कीट ज्यों तज्यों मातु पिता हूं ।[२]

स्वारथ के साथिन तज्यो तिजरा को सो टोटक औचट उलटि न हेरो ।[३]

' विनयपत्रिका ' की ' तनु तज्यो - - - - - - - वाली पंक्ति में कहा गया है - माता-पिता ने मुझे उत्पन्न कर कुटिल कीट की भांति त्याग किया । '

डा० भगीरथ मिश्र मानते है कि उनके जन्म के बाद माता पिता स्वर्गवासी हो गये ।[४]

गोस्वामीजी के इन आत्मोल्लेखों से यह समझना चाहिए कि उन्हें अपने जीवन के प्रारंभ में ही मां बाप से वंचित होकर जीवन बिताना पड़ा ।

नाम:-

गोस्वामीजी के बचपन का नाम ' तुलसी ' न होकर ' राम बोला ' था । लेकिन जनश्रुति यह है कि ' तुलसी पांच वर्ष के बालक के रूप में उत्पन्न हुए थे और जन्मते ही इन्होंने राम-नाम का उच्चारण किया । इसी से इन्हें ' रामबोला ' नाम मिला ।' लेकिन इसमें वास्तविका कहां तक है, नहीं मालूम ।

१-विनयपत्रिका -राजनाथशर्मा (मूल पाठ सहित) पृष्ठ-४५६
२-,, ,, ,, ,, ५२६
३-,, ,, ,, ,, ५२५
४-तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-४४

` विनयपत्रिका ` में ` रामबोला ` नाम पड़ने का स्पष्टीकरण मिलता है ।

राम को गुलाम , नाम राम बोला राख्यो राम ।
काम यहै नाम द्वै हों कबहूँ कहत हौं ।। [१]

कवितावली ` में उन्होंने लिखा है :-

साहिब सुजान जिन स्वानहू को पच्छ कियो ।
राम बोला नाम हों गुलाम राम साहि को । [२]

` रामबोला ` तो उनके बचपन का नाम मालूम पड़ता है । उनका ` आध्यात्मिक नाम ` भी ` रामबोला ` माना गया है ।

` बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
राम नाम लेत माँगि खात टूक टाक हौं ।
परयो लोकरीति में पुनीत प्रीति राम राय,
मोह बस बैठो तोरि तरकि तराक हौं । [३]

डा० श्यामसुन्दर दास मानते हैं - इनके कुलगुरु तुलसी राम ने अत्यन्त स्नेह के कारण इनका नाम तुलसी भी रख दिया था । इनका नाम तुलसीदास था । इसमें तो सन्देह का स्थान ही नहीं ।` [४]

१- विनयपत्रिका - राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-२१७

२- कवितावली - (संपादक) श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-४४०

३- हनुमान बाहुक- (सटीक) टीकाकार महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य,`वीर `
गीताप्रेस, गोरखपुर,पृष्ठ-३५

४- गोस्वामी तुलसीदास- श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-३०, द्वितीय संस्करण

बाद में इन्हीं विद्वानों ने कहा है कि ` रामबोला ` उनका पहले का नाम था जिसको संस्कार के समय नरहर्यानन्द जी ने बदलकर तुलसी दास कर दिया । [१]

उपर्युक्त कथन से सहमत होना अधिक उपयुक्त मालूम पड़ता है ।

वचपन का जीवन :-

माता-पिता से बिछुड़ने के कारण उनके भविष्य का जीवन अत्यधिक कष्टमय बीता । इसीकारण उन्हें दूसरों की करुणा का पात्र बनना और उनके आश्रय में रहना पड़ा । जीविका चलाने केलिए उन्हें भिक्षा तक मांगनी पड़ी । वे राम पर भरोसा रखकर भिक्षा-वृत्ति करते थे ।

` बारे ते ललात बिललात द्वार द्वार दीन ।
जानत हौं चारि फल चारि ही चनक कौ ।। [२]

` कवितावली ` में आगे भी गोस्वामीजी की दीन हालत का चित्रण मिलता है । ` विनयपत्रिका ` में भी उन्होंने लिखा है :-

द्वार द्वार दीनता कही काढ़ि रद परि पाहूं ।
है दयालु दुनि दस दिसा दुख दोष दलन छम छम
कियो न संभाषन काहूं । [३]

१- गोस्वामी तुलसीदास - श्यामसुन्दरदास, पृष्ठ-३१
द्वितीय संस्करण

२- कवितावली - श्रीकान्त शरण - पृष्ठ-३८६

३- विनयपत्रिका - राजनाथ शर्मा - पृष्ठ-४४६ ४२८

हाहा करि दीनता कही द्वार द्वार बार बार परी न छार मुँह बायो ।

असन बसन बिनु बावरो जहँ तहँ उठि धायो ।

महिमा मान प्रिय प्रान ते तजि खोलि खलिन

आगे खिनु खिनु पेट खलायो ।[१]

कवितावली और विनयपत्रिका के इन आत्मोल्लेखों में गोस्वामीजी के बचपन के जीवन पर काफी प्रकाश पड़ता है ।

गुरु और विद्या :-

गोस्वामीजी के गुरु का नाम नरहरि या नरहरिदास था जिसका उल्लेख उन्होंने ' रामचरितमानस ' के प्रारंभ में अत्यधिक आदर के साथ उनकी वन्दना करते हुए किया है :-

बन्दौ गुरु पद कंज कृपासिन्धु नर रूप हरि ।
महा मोह तम पुंज जासु नाम रवि कर निकर ।।[२]

' नर रूप हरि ' के आधार पर नरहरिदास को उन्होंने गुरु माना है । ये रामानन्दजी के शिष्य गणों में माने जाते हैं । ग्रियर्सन, जे०एन०कारपेन्टर, एडविन ग्रीव्ज आदि विदेशी विद्वान भी इससे सहमत हैं ।

' वेणीमाधव दास के अनुसार उनके गुरु नरहर्यानंद जी थे, जो रामानन्द जी के शिष्य अनंतानंद के शिष्य थे ।'[३]

१-विनयपत्रिका - राजनाथशर्मा ,पृष्ठ-५३०

२-रामचरित मानस-बालकाण्ड-विजयानन्द त्रिपाठी, पृष्ठ-७

३-गोस्वामी तुलसीदास :- डा०श्यामसुन्दरदास,पृष्ठ-३२
हिन्दुस्तानी एकेडेमी,इलाहाबाद

गुरु नरहरि दास के रामोपासक होने के कारण उन्हीं के मुंह से उन्होंने रामकथा का पाठ सुना था ।

मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकर खेत ।

समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेउँ अचेत । [१]

गुरु से अपने मिलन के बारे में कहा गया है कि जब गोस्वामीजी भीख मांगकर जीवन यापन कर रहे थे तब नरहरिदास जो सूकरखेत के निवासी थे अपने तीर्थाटन के दौरे में चित्रकूट पहूंच गये । इस अनाथ बालक की दीन अवस्था पर द्रवीभूत होकर वे उन्हें अपने साथ ले चले । [२]

इन्हीं गुरुदेव ने राम की कथा कहते कहते उनके हृदय में राम भक्ति की पुनीत नदी प्रवाहित की । यहीं उन्होंने शिक्षा की पहली सीढ़ी चढ़ ली । उनकी शिक्षा का मुख्य स्थान ` सूकरक्षेत्र ` (सोरों) है और विषय रामचन्द्र जी की कथा है जिसका उल्लेख ` मैं पुनि निज ` वाली पंक्ति से मिलता है ।

विवाह :-

छोटी उम्र में ही उनका विवाह तारपिता ग्राम के दीनबन्धु पाठक की सुन्दरी कन्या रत्नावली के साथ संपन्न हुआ । इसके बारे में आचार्य सीराम चतुर्वेदी ने यों कहा है :-

---

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी, पृष्ठ -७८
बालकाण्ड

२- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ,पृष्ठ-३५-३६

'एक वार यमद्वितीय के दिन यमुना के उस पार तारपिता ग्राम के दीनबन्धु पाठक नाम के एक सज्जन स्नान के लिए आए और उन्होंने तुलसी की राम कथा सुनी। कथा वाचक के स्वर की मधुरता और उनकी काव्य-शैली पर मुग्ध होकर उन्होंने अपनी विदुषी कन्या रत्नावली का विवाह उनके साथ कर दिया।' [१]

'विनयपत्रिका' में उन्होंने ठीक ही कहा है :-

लरिकाई बीती अचेत चित, चंचलता चौगुनी चाय।

जोबन जर जुबती कुपथ्य करि, भयो त्रिदोस भरि मदन-बाय। [२]

उनके विवाह का ज़िक्र 'हनुमान - बाहुक' में मिलता है।

बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो।
राम नाम लेत मांगि खात टूकटाक हों।
परयो लोकरीत में पुनीत प्रीति राम राय।
मोह बस बैठो तोरि तरकि तराक है। [३]

उनके तारक नामक एक पुत्र भी हुआ जिसकी मृत्यु अकाल में हो गयी।

१- गोस्वामी तुलसीदास- आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठ-३७

२- विनयपत्रिका - राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-२२७

३- हनुमान बाहुक - गीताप्रेस, गोरखपुर (तुलसीकृत) पृष्ठ-३५
टीकाकार - महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य 'वीर'

गोस्वामीजी अपनी रूपवती पत्नी रत्नावली के प्रति स्नेह पाश में ऐसे बंध गये थे कि वे उससे बिछुड़कर एक निमिष तक भी रह नहीं सकते थे ।

गृहत्याग और वैराग्य :-

गोस्वामीजी जब कथा करने गये तब रत्नावली के भाई आकर उसे घर ले गये । पत्नी की अनुपस्थिति ने उन्हें अत्यधिक विवश कर डाला । वियोग सहने में अशक्त होकर वे रात की घोर अंधियारी की परवाह किये बिना उमड़कर बहनेवाली गंगा नदी पारकर ससुराल पहुंच गये । अपने पति के कामुकतापूर्ण व्यवहार से रत्नावली को लज्जा आयी, उसके साथ साथ खीझ भी उसने खूब फटकारा :-

लाज न लागत आपको, दौरे आयहु साथ ।
धिक धिक ऐसे प्रेम को कहा कहौं मैं साथ ।
अस्थि- चरममय देह मम, तामें जैसी प्रीति ।
तैसी जो श्रीराम मंह होति न तौ भवभीति ।। [१]

पत्नी की फटकार सुनकर उनका विषय-लिप्त मन एकदम परिवर्तित हो गया । उनके अन्त:चक्षु खुल गये । घर-गृहस्थी छोड़कर वे विरागी बन गये । विरक्त गोस्वामीजी की क्या धारणा थी ।

१- रामचरित मानस की भूमिका :- तुलसी चरित्र चन्द्रिका, पृष्ठ-१०
राम दास गौड़
गोस्वामी तुलसीदास , व्यक्तित्व, दर्शन साहित्य से उद्घृत, पृष्ठ-२६७

कोऊ कहै करत कुसाज दगाबाज बडो ।

कोऊ कहै राम को गुलामु खरो खूब है ।।[१]

काशी में कुछ दिन रहने के बाद उन्होंने तीर्थाटन के दौर में अनेक पुण्यतीर्थों के दर्शन किये ।

चित्रकूट-निवास :-

विरागी होने के बाद करीब छः महीने तक वे चित्रकूट में रहे ।

सगुन सकल संकट समन चित्रकूट चलि जाहु ।

सीता राम प्रसाद सुभ लघु साधन बड लाहु । [२]

गोस्वामीजी के अन्य कुछ ग्रन्थों में भी चित्रकूट निवास की सूचना मिल जाने के कारण यह अनुमान करना पडता है कि उन्होंने एक से अधिक बार चित्रकूट-यात्रा की थी ।

अयोध्या :-

गोस्वामीजी ने अयोध्या ही में रहकर अपने उत्कृष्ट ग्रन्थ 'रामचरित मानस' की रचना का प्रारंभ किया ।

' संवत सोरह सै इकतीसा । करों कथा हरि पद धरि सीसा ।।

नवमी भौमवार मधु मासा ।अवधपुरी यह चरित प्रकासा ।। [३]

१- कवितावली- (श्रीकान्त शरण) पृष्ठ-४५८ (उत्तरकाण्ड)

२-रामाज्ञाप्रश्न (सिद्धान्त तिलक) श्री श्रीकान्त शरण,पृष्ठ-४४

३-रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी- पृष्ठ-८६

लेकिन भ्रमण करते रहने के कारण ' रामचरित मानस ' के प्रारंभिक तीनों काण्डों की रचना करने के बाद उन्होंने काशी जाकर और वहीं रहकर किष्किन्धा काण्ड प्रारंभ किया ।

' मुक्ति जन्म महि जानि, ज्ञान खानि अघहानि कर ।

जहं बस संभु भवानि , सो कासी सेइय कस न ।। [१]

प्रयाग :-

तीर्थराज प्रयाग के दर्शन करने का उल्लेख तो कवितावली में मिलता है ।

देव कहैं अपनी - अपना , अवलोकन तीरथ राजु चलो रे ।

देखि मिटैं अपराध अगाध निमज्जत साधु- समाजु भलो रे । [२]

प्रयाग और काशी के बीच स्थित सीतामढ़ी का उल्लेख भी उन्होंने किया है ।

काशी-निवास :-

इस महान कवि के जीवन का अधिकांश समय काशी की पुण्य भूमि में बीत गया । पुण्य-नदी गंगा के प्रति भी उनकी अत्यधिक आस्था थी । जीवन की अन्तिम घड़ियां काशी में ही बीतीं । गंगा के पुलिनों में उनका निवास स्थान था ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-२

२- कवितावली - श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-५२७

' चेरो राम राय को सुजस सुनि तेरो हर ।
पाइं तर आइ रह्यों सुरसरि तीर हों । [१]

गोसाई-उपाधि:-

गोस्वामीजी की अत्यधिक महानता के कारण किसी ने उन्हें यह उपाधि दे दी थी । इसका उल्लेख ' हनुमान बाहुक ' मे मिलता है ।

तुलसी गोसाईं भयो, भेडि दिन भूलि गयो ।
ता को फल पावत निदान परिपाक हों ।। [२]

काशी की तत्कालीन अवस्था भी अत्यधिक बिगड़ गयी थी । सामाजिक अस्तव्यस्ता से वहाँ शान्ति नष्ट हो गयी थी । कलियुग की करालता सब कहीं छा गयी थी । यह देखकर उनका मन अत्यधिक व्यथित हो उठा और इसी कारण वे शिवजी से पुकार कर उठे ।

गौरीनाथ भोलानाथ भक्त भवानी नाथ ।
विश्वनाथ पुर फिरी आन कलिकाल की ।।
संकर से गिरिजा सी नारी कासी बासी ।
वद कही सही ससिसेखर कृपाल की ।।[३]

१- कवितावली - श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-५४५

२- हनुमान बाहुक - टीकाकार- महावीर प्रसाद मालवीय ' वीर'
(तुलसीकृत) ,पृष्ठ-३६

३- कवितावली - श्रीकान्त शरण (प्रकाशक) पृष्ठ-५४६

गोस्वामीजी की बीमारी :-

जब काशी में सब कहीं महमारी फैल गयी ~~का प्रकोप हुआ~~ तब गोस्वामीजी भी इस बीमारी की पकड़ से मुक्त नहीं रहे । पीड़ा से मुक्त होने केलिए उन्होंने कई देवताओं की प्रार्थना की । लेकिन किसी ने भी उनकी करुण पुकार नहीं सुनी ।

रोग भयो भूत सो कुसूत भयो तुलसी को ,
भूतनाथ पाहि पदपंकज गहतु हों ।
ज्याइये तो जानकी रमन मन जानि जिय ।
मारिये तो मांगी मीचु सूधिये कहतु हों । [1]

वे दूसरी बार ~~बेर~~ भी बीमारी से पीडित हुए । इस बार उन्हें बाहु में पहले पहल बीमारी का आक्रमण हुआ । हनुमान से उन्होंने ~~अनेकबार~~ बार बिनती की कि मेरी पीड़ा दूर कीजिए -

' बांह की बेदन बांह पगार पुकारत आरत आनन्द भलो ।
श्री रघुबीर निवारिये पीर रहों दरबार परो लटि लूलो' ।[2]

पीडा उनके सारे शरीर में छा गयी । असह्य वेदना का विषपान करते रहने पर भी वे देवताओं से पीडा दूर करने की प्रार्थना करते रहे । बाद में उन्होंने स्वयं अपने ऊपर दोषारोपण किया, भर्त्सना की । क्रमश: सारे शरीर में पीडा व्याप्त हो गयी ।

१- कवितावली - श्रीकान्त शरण (प्रकाशक) पृष्ठ-५४७

२-हनुमान बाहुक - टीकाकार- पं० महावीर प्रसाद मालवीय ' वैद्य '
गीताप्रेस, गोरखपुर , पृष्ठ-३२

पांय पीर , पेट पीर, मुंह पीर ।
जरजर सकल सरीर पीरमई है ।
देवदूत पितर करम खल काल ग्रह ।
मोहिं पर दवरि दमानक सी दई है । [१]

लेकिन किसी ने भी उनकी परवाह नहीं की । सारे शरीर में फोड़े भी निकल आये । उन्होंने सीतापति, शिवजी आदि देवताओं की प्रार्थना की । हनुमान पर उनकी आस्था अन्तिम समय तक रही । लेकिन कहीं से भी उन्हें करुणा की एक बूंद तक न मिली ।

' अपने ही पाप तें त्रिताप तें कि साप तें ,
बढ़ी है वाहु वेदन कही न सहि जाति है ।
औषधि अनेक जन्त्र-मन्त्र टोटकादि किये ।
बादि भये देवता मनाये अधिकाति है ।
चेरो तेरो तुलसी ' तू मेरो ' कह्यो रामदूत ।
ढील तेरी वीर मोहिं पीर ते पिराति है । ' [२]

अन्त में वे दीन,आर्त वाणी में फिर भी हनुमान से करुण कहानी कहकर मौन हो गए ।

डा० माताप्रसाद गुप्त मानते है कि रामकृपा से उनकी पीडा का अन्त हो गया । [३]

१- हनुमान वाहुक - टीकाकार- पं० महावीर प्रसाद मालवीय ' वैद्य '
गीताप्रेस , गोरखपुर, पृष्ठ-३४

२- (तुलसीकृत) हनुमान वाहुक- टीकाकार-पं० महावीर प्रसाद मालवीय' वैद्य'
पृष्ठ-२७-२८

३- तुलसीदास- डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-१८४

उनकी निधन-तिथि :-

काशी के अस्सी घाट पर संवत् १६८० (१६२३ ईसवीं) में चिरकाल मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के पवित्र नाम का जपकर इस रामभक्त की आंखे सदा केलिए बन्द हो गयीं । पं० शिवनन्दन सहाय, गोस्वामीजी की इस निधन तिथि से सहमत है ।[१]

उनकी निधन-तिथि के संबन्ध में अधिकांश विद्वान एकमत हैं । विल्सन, ग्रियर्सन आदि विदेशी विद्वान भी इसी मत के समर्थक हैं ।

' ग्रियर्सन महोदय स्पष्ट रूप से मंगलवार २४ जुलाई सन् १६२३ ई० (१६८० वि०) में असीघाट अर्थात् गंगाजी के किनारे गोस्वामीजी का साकेत वास मानते हैं ।' [२]

उनके स्वर्गवास के संबन्ध में यह तिथि मिली है ।

' संवत सोरह से असी , असी गंगा के तीर ।
श्रावण स्यामा तीज शनि, तुलसी तज्यो शरीर । [३]

डा० माताप्रसाद गुप्त भी उनकी यही निधन-तिथि मानते है । अत: इसी को उनकी निधन-तिथि मानना युक्तिसंगत लगता है ।

१- गोस्वामी तुलसीदास - स्वं० शिवनन्दन सहाय , पृष्ठ-११७

२- इंडियन एंटिक्वरी - (१८६३) पृष्ठ-६८
रामचरित मानस की पाश्चात्य समीक्षा से उद्धृत, पृष्ठ-२६

३- मूलगोसाई चरित, पृष्ठ-११६
तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-१८६ से उद्धृत ।

गोस्वामीजी की रचनायें :-

गोस्वामीजी की रचनाओं के संबन्ध में भी विद्वानों में मत-भेद पैदा है ।

` मूल गोसाईं चरित ` में गोस्वामीजी के तेरह ग्रन्थ माने गये हैं । [१]

१: रामगीतावली
२: कृष्णगीतावली
३: रामचरितमानस
४: दोहावली
५: सतसई
६: विनयावली
७: रामललानहछू
८: पार्वतीमंगल
९: जानकीमंगल
१०: हनुमान बाहुक
११: वैराग्य संदीपिनी
१२: रामाज्ञाप्रश्न
१३: और बरवै रामायण

कवितावली का उल्लेख ` मूल गोसाईं चरित ` में नहीं मिलता । लेकिन ` बाहुक ` का नाम आया है ।

` शिवसिंह सरोज ` में शिवसिंह सेंगर ने लिखा है :- इनके बनाये ग्रन्थों की ठीक ठीक संख्या हम को मालूम नहीं ।

१- मूलगोसाईं चरित, वेणीमाधव दास- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी से उद्धृत , पृष्ठ-४५

चौथाई रामायण, कवितावली, गीतावली, छन्दावली, बरवै, दोहावली, कुंडलिया । इसके अतिरिक्त उसमें ग्यारह और ग्रन्थों के नाम दिए हैं -

सतसई, रामशलाका, कृष्णगीतावली, हनुमान बाहुक, कड़खा छन्द, जानकीमंगल, रोला छन्द, फूलना छन्द, संकट मोचन और विनयपत्रिका । [१]

डा० माताप्रसाद गुप्त का विचार है - कवि की कृतियों में से, जो तीन दर्जन से अधिक हैं, केवल एक दर्जन प्रामाणिक मानी जा सकती हैं और कवि के सभी प्रकार के अध्ययन केलिए सच्चे दृढ़ आधार ये ही एक दर्जन रचनाएं हैं । [२]

डा० जार्ज ग्रियर्सन ने इक्कीस ग्रन्थों का उल्लेख ' नोट्स आन तुलसीदास ' नामक लेख में किया है ।

रामचरित मानस, गीतावली, कवितावली, दोहावली, छप्पय रामायण, राम सतसई, जानकीमंगल, पार्वतीमंग, वैराग्य सन्दीपनी, रामललानहछू, बरवै रामायण, रामाज्ञा प्रश्न, संकट मोचन, विनयपत्रिका, बाहुक, रामशलाका, कुण्डलिया रामायण, करखा रामायण, रोला रामायण फूलना और श्रीकृष्ण गीतावली । [३]

१- गोस्वामीजी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठ-४६

२- तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-१३७

३- इंडियन एंटिकरी Volume XXII 1893. Page-122

तुलसी रसायन से उद्धृत, पृष्ठ-६६

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा ने निम्नलिखित बारह ग्रन्थों को प्रामाणिक माना है ।

रामचरित मानस, रामललानहछू, वैराग्य सन्दीपनी, बरवै रामायण, पार्वतीमंगल, जानकीमंगल, रामाज्ञाप्रश्न, दोहावली कवितावली, गीतावली, कृष्णगीतावली, और विनयपत्रिका

इन्हीं बारह ग्रन्थों को आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, डा० भगीरथ मिश्र जैसे प्रमुख विद्वानों ने प्रामाणिक माना है । अत: इन्हीं ग्रन्थों को प्रामाणिक मानना उचित है ।

रामललानहछू :-

गोस्वामीजी ने बीस पदों और सोहर छन्दों में नहछू की रचना की है । सामाजिक संस्कारों के अवसर पर स्त्रियों का संगीतालाप इसमें प्रमुख बात है । पुत्र जन्म, यज्ञोपवीत आदि अवसरों पर इस प्रकार स्त्रियां गीत गाती हैं ।

रचनाकाल :- डा० श्याम सुन्दर दास ' नहछू ' के रचनाकाल के संबन्ध में कहते हैं :-

' पार्वतीमंगल, जानकीमंगल और रामललानहछू एक ही समय के लिखे हुए ग्रन्थ जान पड़ते हैं । इनकी शैली और भाषा एक ही प्रकार की है । ' २

वेणीमाधव दास जी का कथन है :-
मिथिला में रचना किए, नहछू मंगल दोय ।
पुनि प्राचे मंत्रित किए सुख पावैं सब लोय ।।[३]

१- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-६६
२- गोसाईं चरित - वेणी माधवदास - हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास से उद्धृत । डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३७२

वेणी माधव दास जी के इस कथन से प्रभावित होकर उपर्युक्त विद्वान श्यामसुन्दर दास इसका रचनाकाल संवत् १६३६ के लगभग मानते है। लेकिन 'पार्वती मंगल' मे स्वयं गोस्वामीजी ने इसका रचनाकाल संवत् १६४३ कहा है। इसी के अनुसार ये विद्वान इसका रचनाकाल संवत् १६४३ के लगभग मानते है। [१]

डा० रामकुमार वर्मा का मत है - 'नहछू' मे कवि का प्रयास नहीं रह गया है। इस स्थिति मे या तो 'नहछू' कवि के काव्य-जीवन के प्रभात कीरचना होनी चाहिए।' [२]

डा० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार 'रामलला नहछू' की रचना संवत् १६६५ के पूर्व ही किसी समय हुई होगी।' [३]

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ने इसका रचनाकाल संवत् १६४२-४३ के बीच माना है। [४]

डा० रामदत्त भरद्वाज की राय है कि 'नहछू' दोनों उक्त मंगलों के पीछे की रचना है जब कि स्वयं अथवा किसी की प्रार्थना पर, गोस्वामीजी ने अवधी भोजपुरी मे ही अत्यन्त साधारण स्त्री, पुरुष समाज को घृणित गानों से रोकने केलिए एवं उनके मनोविनोद केलिए इसे लिखा होगा। उसकी रचना संवत् १६६५ के लगभग होनी चाहिए। [५]

१-गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-८२-८३

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३७२

३- तुलसीदास- डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२२६

४- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठ-५६

५- गोस्वामी तुलसीदास- व्यक्तित्व, दर्शन, साहित्य - डा० रामदत्त भरद्वाज पृष्ठ-३३३

विद्वानों के इन मतों पर दृष्टिपात करने पर डा० श्यामसुन्दर दास के कथन को ठीक मानना उचित लगता है। इनके मत के अनुसार नहछू का रचनाकाल संवत् १६४३ है।

विषय:- राम और सीता के विवाह के अवसर पर होनेवाली 'नहछू' क्रिया का वर्णन इसका प्रतिपाद्य विषय है। कर्णवेध, यज्ञोपवीत आदि अवसरों पर 'नहछू' में पहले नख हल्दी से अलंकृत किया जाता है, नाइन यह प्रक्रिया चलानेवाली है। नखों का नहरनी से काटना शुरू होता है। ऐसा वर्णन 'नहछू' में मिलता है।

'नाउनि अति गुन खानि तौ बेगि बोलाई हो ।
करि सिंगार अति लोन तौ विहंसति आई हो ।।
कनक चुनिन सों लसित नहरनी लिय कर हो ।
अति बड़ भाग नउनियां छुए नख हाथ सों हो ।
जो पगु नाउनि धोवइ राम धोवावइ हो ।

< < < <

नख काटत मुसुकाहिं बरनि नहिं जातहि हो । [१]

नहछू की रचना का उद्देश्य लोकाचार की भावना को तीव्र करना है। तुलसीदास लोकाचार को अत्यधिक माननेवाले व्यक्ति हैं।

भाषा:- नहछू की भाषा ठेठ अवधी है। लोकगीतों की शैली यहां देखने को मिलती है।

१- तुलसी ग्रन्थावली - दूसरा खंड- संपादक- रामचन्द्र शुक्ल भगवानदीन, ब्रजरत्नदास, नागरी प्रचारिणी सभा, पृष्ठ-४

अलंकार की दृष्टि से तो यह उच्च कोटि की रचना नहीं है।

किस प्रकार की कृति :- इस रचना में गोस्वामीजी की भक्ति-भावना के साथ साथ श्रृंगार -भावना का भी दिग्दर्शन हुआ है।

उदाहरण :-

आदि सारदा गनपति गौरि मनाइय हो ।
रामलला का नहछू गाइ सुनाइय हो ।। [१]

< < <

श्रृंगार का वर्णन देखिए :-

कटि के छीन बरिनिया छाता पानिहि हो ।
चन्द्रबदनि मृगलोचीन सब रसखानिहि हो ।। [२]

विद्वान नहछू को यज्ञोपवीत के समय का मानते हैं और कुछ विवाह के अवसर का मानते हैं। इस बात में विद्वानों में मत भेद पैदा हो गया है।

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी मानते है :- इन अवसरों पर स्त्रियां जो गीत गाली हैं उनके बदले भगवन्नाम से संबद्ध गीतों का चलन करने केलिए उन्होंने इस अवसर केलिए नहछू का उल्लेख करके २० सोहर छन्दों मे उसकी रचना कर दी। यों भी यह नहछू विवाह के ही प्रसंग का है।` इसे स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित दोहा स्पष्ट प्रमाण के रूप में आता है।

` दूलह के महतारि देखि मन हरखइ हो ।` [३]

१- तुलसी ग्रन्थावली - रामललानहछू , पृष्ठ-३
२- तुलसी ग्रन्थावली - ,, पृष्ठ-३-४
३- तुलसी ग्रन्थावली - ,, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल,पृष्ठ-५

डा० माताप्रसाद गुप्त , नहछू के ` गोद लिहे कौसल्या वाली ` पंक्ति को प्रमाण मानकर कहते हैं कि राम का प्रस्तुत नहछू विवाह के अवसर का है । [१]

पं० रामनरेश त्रिपाठी का मत है कि यह उरामलला नहछू ` मुख्यत: संस्कार के साथ होनेवाले उप-संस्कार केलिए रचा गया है ।` [२]

इन्हीं विद्वानों के मतों को ध्यान में रखकर हमें भी यह स्वीकार करना पडता है कि यह नहछू विवाह के अवसर का है और मिथिला में यह उपसंस्कार संपन्न हुआ है ।

श्रृंगारिक ता का वर्णन होने से कुछ विद्वान इसके तुलसी-कृत मानने में सन्देह प्रकट करते हैं । लेकिन कवि ने प्रसंगानुसार जैसा वर्णन होना चाहिए था, उसी प्रकार का वर्णन किया है । श्रृंगारिकता की आवश्यकता पडने से उन्होंने उसका वर्णन किया ।

वैराग्य सन्दीपनी :-

यह ६२ छन्दवाला , छोटा सा ग्रन्थ है । इसमें दोहा, सोरठा, चौपाई आदि छन्द प्रयुक्त हुए हैं । वैराग्य की प्रमुखता होने के कारण हमें समझना चाहिए कि यह रचना तुलसी ने विरागी होने के बाद ही लिखी होगी ।

` वैराग्य सन्दीपनी ` में प्रमुखत: सन्तों की महिमा, शान्ति की महिमा आदि बातों पर लिखा गया है ।

१- तुलसीदास - डा० माता प्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२२६

२- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-२०५

सन्तों की महिमा के संबंध में लिखा गया है :-

को बरनै मुख एक, तुलसी महिमा संत ।
जिन्ह के बिमल विवेक सेष महेस न कहि सकत । [१]

शान्ति-वर्णन

रैनि को भूषन इंदु है, दिवस को भूषन भानु ।
दास को भूषन भक्ति है, भक्ति को भूषन ज्ञान ।
ज्ञान को भूषन ध्यान है, ध्यान को भूषन त्याग ।
त्याग को भूषन शांतिपद, तुलसी अमल अदाग । [२]

रचनाकाल:- 'मूल गोसाइं चरित' में वेणी माधवदास ने इसका रचनाकाल संवत् १६६६ माना है ।

' बाहुपीर व्याकुल भए, बाहुक रचे सुधीर ।
पुनि विराग संदीपनी, रामाज्ञा सकुनीर । [३]

पं० रामनरेश त्रिपाठी इसका रचनाकाल संवत् १६२० मानते है। [४] वे इसी ग्रन्थ को गोस्वामीजी की सबसे पहली रचना मानते हैं ।

१- वैराग्य संदीपिनी (तुलसीकृत) तिलककार- श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-३८

२- ,, ,, ,, -४५

३- गोसाईं चरित - वेणीमाधव दास- दोहा-८५ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास से उद्धृत, (डा० रामकुमार वर्मा), पृष्ठ-३७४

४- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-२२३

डा० श्यामसुन्दर दास का मत है :- ` इसमें तो सन्देह नहीं कि वैराग्य सन्दीपनी दोहावली के संगृहीत होने से पहले बनी, क्योंकि वैराग्य सन्दीपनी के कई दोहे दोहावली में संगृहीत हैं। दोहावली का संग्रह १६४० में हुआ था। इससे यह ग्रन्थ १६४० से पहले ही बन चुका होगा।[१]

डा० भगीरथ मिश्र जी भी उपर्युक्त विद्वान की राय से सहमत है - ` वैराग्य संदीपनी की रचना विद्वानों ने दोहावली के पहले मानी है क्यों कि इसमें कुछ दोहे वही जो दोहावली में भी संकलित है और प्रौढ़ता की दृष्टि से प्रारंभिक रचना ही जान पड़ता है।` [२]

प्रमुख विद्वानों ने इसकी रचना-तिथि संवत् १६४० से पूर्व मानी है, इसलिए हमें भी इस तिथि को ठीक मानना उचित है। इस ग्रन्थ की ठीक ठीक रचना-तिथि बताना मुश्किल-सा पड़ता है। इस कृति का प्रतिपाद्य विषय, जीवन वृत, विचारधारा आदि बातों के आधार पर इसकी रचना तिथि का अनुमान किया जा सकता है। आसक्तिपूर्ण जीवन से वैराग्य की ओर उनके जीवन का मोड हुआ। इस समय उनके जीवन में वैराग्य की अत्यधिक प्रधानता थी। गृहस्थ जीवन की अशान्तिपूर्ण वातावरण से मुक्त होकर उन्होंने शान्ति का अनुभव किया। इन्हीं कारणों से वैराग्य सन्दीपनी को कवि की आरंभिक कृति मानना उचित है।

विषय:- यह ग्रन्थ मंगलाचरण, संत स्वभाव-वर्णन, संत-महिमा-वर्णन, शान्ति-वर्णन ऐसे चार प्रकरणों में विभक्त किया गया है। भक्ति को प्राप्त करने केलिए सदाचार, सत्संग और वैराग्य को साधनों के रूप में स्वीकार किया गया है।

१- गोस्वामी तुलसीदास - डा० श्याम सुन्दर दास, पृष्ठ-७६

२- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-७१

गोस्वामीजी ने राम का ध्यान कर राम-नाम की महत्ता पर लिखा है।

'अति अनन्य जो हरि को दासा । रटै नाम निसि दिन बासा ।
तुलसी तेहि समान नहीं कोई । हम नीके देखा सब कोई ।।[१]

फिर सन्तों के स्वाभाव के संबन्ध में उन्होंने सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है।

बोलै बचन बिचारि कै लीन्है संत सभाव ।
तुलसी दुख दुर्बचन के, पंथ देत नहिं पाव ।
सत्रु न काहु करि गनै मित्र गनै नहिं काहि।
तुलसी यह मत संत को बोलै समता माहि।।[२]

फिर उन्होंने शान्ति के संबन्ध में लिखा है :-

अमल अदाग सांतिपद सारा ।
सकल कलेसन करत प्रहारा ।।
तुलसी उरधार जो कोई ।
रहै आनन्द सिंधु महं सोई।।
विविध पाप संभव जो तापा ।
मिटहिं दोष दु:ख दुसह कलापा ।।
परम सांति सुख रहै समाई ।
तहं उतपात न भेदै आई ।।[३]

१- वैराग्य संदीपिनी- (तुलसीकृत) तिलककार- श्रीश्रीकान्त शरण- व्याख्याकार, पृष्ठ-४३
२- ,, ,, ,, -२७
३- ,, ,, ,, -४८-४६

परम-शान्ति की अवस्था में हम सारा क्लेश भूल जाते हैं और परम आनन्द की अनुभूति करने लगते हैं ।

अलंकार:- इस ग्रन्थ में कुछ अलंकारों के संबन्ध में कुछ उल्लेखनीय बात नहीं ।

रस:- इसमें रसराज श्रृंगार का एकदम अभाव दीख पड़ता है । विरागी गोस्वामीजी का दिग्दर्शन इस ग्रन्थ में हुआ है ।

बरवै रामायण:-

` बरवै रामायण स्वतंत्र ग्रन्थ के रूप में लिखी रचना नहीं है, वरन समय समय पर लिखे गये बरवै छन्दों का संकलन है` ।[१] कवि ने प्रबन्ध काव्य के रूप में सात काण्डों में यह काव्य लिखा है । ६६ छन्दों में इसका कलेवर अलंकृत है । इसमें मंगलाचरण का अभाव है ।

लिखने की प्रेरणा:- बरवै पढ़ने से मिली, प्रेरणा तुलसी को रहीम के बरवै पढ़ने से मिली, ऐसा अनुमान किया गया है । लेकिन इसे ठीक मानने पर यह गोस्वामीजी की रचना प्रतीत नहीं होती, उसके बाद की रचना मालूम होती है ।` मूल गोसाइं चरित्र ` में वेणी माधवदास ने इस रचना के बारे में जो लिखा है वह भी देखना है ।

` कवि रहीम बरवै रचै पठये मुनि वर पास ।
लखि तहं सुन्दर छन्द में रचना कियेउ प्रकास ।।२

१- तुलसी रसायन- डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-७१

२- वेणीमाधव दास कृत ` मूल गोसाईं चरित ` -तुलसीदास और उनका साहित्य- डा० विमलकुमार जैन से उद्धृत,पृष्ठ-१६६

रचनाकाल:- डा० माग्यवती सिंह ने इसके रचनाकाल के संबन्ध मे अपना मत व्यक्त किया है । ` इसमें समय समय पर लिखे गये छन्दों का संकलन है । अत: बहुत कुछ संभव है कि उसका संग्रह वेणीमाधव के अनुसार संवत् १६६६ में हुआ है ।`[१]

डा० रामकुमार वर्मा वेणीमाधव दास की दी हुई रचना-तिथि १६६६ को ठीक मानते है । वे अपना कोई मत निर्धारित नहीं करते ।

डा० श्यामसुन्दर दास इसकी रचना-तिथि संवत् १६६६ मानते है ।[२] वे बरवै-रामायण को हिन्दी साहित्य का अमूल्य रत्न मानने के पक्ष में है ।

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने इसका रचनाकाल संवत् १६२०-१६४० के आसपास मानने वाले है ।[३]

डा० माताप्रसाद गुप्त इसकी रचना-तिथि के बारे में कुछ भी नहीं कहते ।

अधिकांश विद्वान संवत् १६६६ को इसका रचनाकाल मानने के पक्ष में है ।

काव्य-सौन्दर्य :- सीता की अनुपम सौन्दर्य-छटा का वर्णन तो अत्यधिक सुन्दर हुआ है ।

१- तुलसी मानस रत्नाकर - डा० माग्यवती सिंह, पृष्ठ-४०

२- गोस्वामी तुलसीदास - डा० श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-८६

३- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी , पृष्ठ-२२६

देखिए :-

सम सुवरन सुखमाकर सुखद न थोर ।
सीय अंग सखि कोमल कनक कठोर ।।
सियमुख सरद कमल जिमि किमि कहि जाइ ।
निसि मलीन वह, निसि दिन यह बिगसाइ ।
बड़े नयन कुटि भृकुटि भाल बिसाल ।
तुलसी सोहत मनहिं मनोहर बाल ।
चंपक हरवा अंग मिलि अधिक सोहाइ ।
जानि परै सिय हियरे जब कुंभिलाइ ।
सिय तुव अंग रंग मिलि अधिक उदोत ।
हार बेलि पहिरावौं चंपक होत ।।[१]

यह रूप-वर्णन कितना हृदय हारी बन गया है । राम के सौन्दर्य का अंकन भी अत्यधिक अनुपम हुवा है ।

साधु सुसील सुमति सुचि सरल सुभाव ।
राम नीतिरत काम कहां यह पाव ।
कुंकुम तिलक भाल श्रुति कुंडल लोल ।
काक पच्छ मिलि सखि कस लसत कपोल ।
भाल तिलक सर सोहत भौंह कमान ।
मुख अनुहरिया केवल चंद्र समान ।।[२]

काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से इस काव्य की अत्यधिक महत्ता है ।

१- बरवै रामायण - श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-२-७
२- ,, ,, पृष्ठ-८-६

अलंकार:- बरवै-रामायण को एक अलंकार-प्रधान ग्रन्थ कहने में कोई अत्युक्ति नहीं। इसमें अनके अलंकार प्रत्युक्त हुए हैं।

व्यतिरेक अलंकार :- व्यतिरेक का एक सुन्दर उदाहरण देखिए :-

' सिय मुख सरद कमल जिमि किमि कहि जाइ।
निसी मलीन वह निसि दिन यह बिगसाइ ।।[१]

सीता का मुख शरदकालीन कमल से कैसे उपमित किया जाता है ? कमलरात्रि में कुम्हला जाता है, लेकिन सीता का मुख-कमल दिन-रात विकसित रहता है।

तद्गुण अलंकार

केस मुकुत सखि मरकत मनिमय होत।
हाथ लेत पुनि मुकुता करत उदोत ।।[२]

प्रतीत अलंकार

गरब करहु रघुनन्दन जनि मन मांह।
देखहु आपनि मूरति सिय के छांह ।।[३]

अतिशयोक्ति

अब जीवन कै है कपि आस न कोइ।
कन गुरिया कै मुंदरी कंकन होइ ।। [४]

१- बरवै रामायण- श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-१४
२- ,, ,, -२
३- ,, ,, -१६
४- ,, ,, -५०

विशेषोक्ति

राम सुजस कर चहुं जुग होत प्रचार ।
असुरन चहं लखि लागत जग अंधिआर ।।[१]

इस प्रकार विविध अलंकार बरवै - रामायण में देखे जा सकते है ।

रस :- रस की दृष्टि से बरवै रामायण विशेष सफल हुआ है । शान्त रस की योजना इसमें पर्याप्त मात्रा में हुई है ।

भाषा :- पूर्वी अवधी का प्रयोग इसमें हुआ है । परिस्थिति के अनुकूल सुख या दु:ख की ओर मुडनेवाली भाषा है ।

सीता के विरण वर्णन में कवि की भाषा अत्यधिक दु:खमयी होकर बहती है ।

` सीय बरन सन केतकि अति हिय हारि ।
केहिसि भंवर कर हरवा हृदय बिहारि ।। [२]

पंडित रामचन्द्र शुक्लजी ने कवि के भाषा-सौन्दर्य पर मुग्ध होकर यों लिखा है:- कि ` अवधी भाषा जिस सौष्ठव के साथ ढली है बरवै छन्द में उतनी और किसी भी छन्द में नहीं ढ़ल सकी ` ।

इस प्रकार सभी काव्यांगों से बरवै - रामायण का काव्य-कलेवर अलंकृत है ।

१- बरवै रामायण - श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-५२
२- ,, ,, पृष्ठ-३६

डा० भगीरथ मिश्र इसकी काव्य-सुन्दरता की प्रशंसा यों की है ।

' कलात्मक सौन्दर्य की बारीकी इन्हें काव्य-प्रेमी जनों का कण्ठहार बनाये है, प्रत्येक बरवै मणिमुक्ता के समान आभाम्य है । और पाठक की यह इच्छा होती है कि ऐसे ही छन्दों का आनन्द वे प्राप्त करें । प्राप्त छन्द वृहद् मणिमाला के बिखरे मणि हैं जो इस रूप में संकलित हुए है । [1]

पार्वती मंगल :-

गोस्वामीजी के काव्य कानन में विकसित और एक सुमन है पार्वतीमंगल । इसका सौरभ भी अन्य सुमनों की भांति चारों ओर प्रसरित है ।

रचना-तिथि:- डा० माताप्रसाद गुप्त इसकी रचना-तिथि संवत् १६४३ फाल्गुन शुक्ल ५ गुरुवार को मानते है । स्वयं गोस्वामीजी का कहना है :-

जय संवत फागुन सुदि पांचै गुरु दिनु ।
अस्विनि विरचेंउ मंगल सुनि सुख धिनु धिनु ।। [2]

पं० सुधाकर द्विवेदी जी के अनुसार इसकी रचना-तिथि संवत् १६४३ में है । ग्रियर्सन भी इसी तिथि को ठीक मानते है ।

डा० श्यामसुन्दरदास ने पहले ही कहा है कि ' पार्वतीमंगल, जानकीमंगल, नहछू इन तीनों की रचना एक ही समय हुई । इससे समझना चाहिए कि इन तीनों की रचना संवत् १६४३ के लगभग हुई होगी । [3]

१- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-७२
२- पार्वतीमंगल (तुलसीकृत) गीताप्रेस, गोरखपुर,पृष्ठ-६
३- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-८३

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ' पार्वतीमंगल ' की निम्नलिखित पंक्ति के आधार पर इसका रचनाकाल संवत् १६४३ वि० मानते हैं ।

जय संबत फागुन सुदि पाँचै गुरु दिनु ।
अरिचनि बिरचेउं मंगल सुनि सुखदिनु दिनु ।। [१]

पं० रामनरेश त्रिपाठी, डा० भगीरथ मिश्र, शिवनन्दन सहाय, और रामदत्त भरद्वाज भी उक्त तिथि को ठीक मानते हैं ।

अधिकांश विद्वान संवत् १६४३ को इसकी रचना-तिथि मानने के पक्ष में है । इसी कारण इसी तिथि को ठीक माना जा सकता है ।

अब एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि रामचरितमानस जैसे विश्व-विख्यात रचना के उपरान्त इस ग्रन्थ का निमार्ण क्यों किया । कारण यह होगा कि इसका पाठ करने केलिए स्तोत्र रूप में शिव-पार्वती के विवाह की कथा रची होगी ।

काव्य शरीर :-

यह एक छोटा सा खण्डकाव्य है । सोहर और हरिगीतिका छन्दों में कवि ने इसमें १६४ छन्दों की रचना की है जो अत्यधिक सुन्दर हो गये हैं ।

पार्वती के जन्म का संक्षेप में वर्णन, फिर उसकी तपस्या, विवाह आदि का विस्तृत वर्णन ' पार्वती मंगल ' में मिलता है ।

डा० भगीरथ मिश्र इसे शिव-पार्वती आख्यान के अन्तर्गत पार्वती-परिणय प्रसंग के आधार पर लिखा गया ' खण्डकाव्य ' मानते है ।

१- तुलसीकृत- पार्वतीमंगल , गीताप्रेस,गोरखपुर,पृष्ठ-६०

कथानक का विकास सुसंगठित और सौष्ठवपूर्ण है ।[१]

देवाधिदेव शिव के द्वारा जगज्जननी पार्वती के मंगलमय पाणि-ग्रहण का काव्यमय चित्रण ही इस काव्य का मुख्य विषय है । इसीकारण इसका नाम ' पार्वतीमंगल ' रखा है । मंगल यहां विवाह केलिए प्रयुक्त है ।

आधार-ग्रन्थ:- कुमार संभव के आधार पर कवि ने ' पार्वतीमंगल ' का सुन्दर सुगठित रूप प्रस्तुत किया है । कहीं कुमार संभव के श्लोकों का अनुवाद कर दिया गया है ।

दिने दिने सा परिवर्धमाना लब्धोदया चान्द्रमसीव लेखा ।[२]

सित पाख बाढ़ति चन्द्रिका जनु चन्द्र भूषन भा लहीं ।[३]

मानस से समानता :- ' मानस ' की पंक्तियों की छाया पार्वती मंगल में अवश्य दीख पडती है ।

मानस

पुनि परिहरे सुखानेउ परना । उमहि नाम तब भयउ अपरना ।[४]

पार्वतीमंगल

नाम अपरना भयउ परन जब परिहरे ।[५]

१- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-७२

२- कुमारसंभवम्(कालिदास) हिन्दी व्याख्याकार-श्री प्रद्युम्न पांडेय पृष्ठ-७, प्रथम सर्ग-श्लोक-२५

३- पार्वतीमंगल (तुलसीकृत) गीताप्रेस,गोरखपुर,पृष्ठ-६

४- रामचरितमानस- विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-१५३

५- पार्वतीमंगल (तुलसीकृत) गीताप्रेस,गोरखपुर,पृष्ठ-१४

मानस

अब सुख सोवत सोच नहिं, भीख मांगि भव खाहिं । [१]

पार्वतीमंगल

भीख मांगि भव खाहिं चिता नित सोवहि । [२]

इस प्रकार ` पार्वतीमंगल ` की कुछ पंक्तियाँ में ` मानस की झलक पड़ी है ।

मानस और पार्वतीमंगल की कथा में अन्तर:-

` मानस ` में जो शिव-पार्वती की कथा है उससे भिन्न है पार्वतीमंगल की कथा । अन्तर यह है कि ` पार्वतीमंगल ` में पार्वती को शिव के प्रति जो प्रेम या ममता है उसकी परीक्षा लेने केलिए शिव ब्रह्मचारी का वेश धारण कर आते हैं । लेकिन ` मानस ` में सप्तर्षि इसकीपरीक्षा लेते हैं । सप्तर्षियों के प्रश्नों का उत्तर ` मानस ` में पार्वती स्वयं देती है लेकिन ` पार्वतीमंगल ` में सखी द्वारा देती है ।

अब कलापक्ष की दृष्टि से इस काव्य का मूल्यांकन करना चाहिए ।

अलंकार :- इसमें अनेक सुन्दर अलंकार अनायास ही आये हैं जिस पर कवि की तूलिका सफल हो उठी है ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - बालकाण्ड ,पृष्ठ-२६३

२- पार्वतीमंगल (तुलसीकृत) गीताप्रेस, गोरखपुर,पृष्ठ-१७

उत्प्रेक्षा

सित पाख बाढ़ति चन्द्रिका जनु चन्द्र भूषन भालहिं । [१]

दृष्टान्त

जौ वर लागि करहु तपु तौ लरिकाइय ।
पारस जौ घर मिलै तौ मेरु कि जाइय ।। [२]

अनुप्रास

बिनइ गुरु हि गुनि गनहि गिरिहि गन नाथहि । [३]

रूपक

प्रेम पाट पटडोरि गौरि हर गुन मनि ।
मंगलहार रचेउ कविमति मृगलोचनि ।। [४]

रस

इसमें रसराज श्रृंगार का प्रयोग हुआ है । साथ ही साथ वियोग, हास्य, भयानक आदि रसों का स्थान स्थान पर प्रयोग हुआ है ।

वियोग-श्रृंगार

उमा नेह बस बिकल देह सुधि बुधि गई ।
कलप बेलि बन बढ़त विषम हिम जनु दई ।। [५]

१- पार्वतमंगल (तुलसीकृत) टीकाकार हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-६
२- ,, ,, पृष्ठ-१६
३- ,, ,, पृष्ठ-५
४- ,, ,, पृष्ठ-४०
५- ,, ,, पृष्ठ-१२

हास्यरस

तुलसी बराती भूत प्रेत पिसाच पसुपति संग लसे ।
गज-छाल व्याल कपाल माल बिलोकि बर सुर
हरि हंसे ।।[१]

भयानक रस

कमठ खपर मढ़ि खाल निसान बजावहिं ।
नर कपाल जल भरि भरि पिअहिं पिआवहिं ।।[२]

भाषा

भाषा और भाव का सामंजस्य बहुत ही अनूठा है । ठेठ अवधी (पूर्वी अवधी) भाषा प्रवाहमयी होकर बहती है । शब्दयोजना अत्यधिक गंभीर हो उठी है। मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग भी अत्यधिक सुन्दर हुआ है ।

बिनु कामना कलेस न बूझइ । [३]

`पारस जौ घर मिलै तौ मेरु कि जाइब । [४]

`सुधा कि रोगिहि चाहइ सन कि राजहि । [५]

१- पावर्तमंगल (तुलसीदास कृत) हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-२८
२- ,, ,, पृष्ठ-२६
३- ,, ,, पृष्ठ-१६
४- ,, ,, पृष्ठ-१६
५- ,, ,, पृष्ठ-१६

अब हमें देखना है कि किन कि विद्वानों ने इस कृति को तुलसी कृत मानने में सन्देह प्रकट किया है । मिश्रबन्धु इसे तुलसीकृत मानने में सन्देह प्रकट करते है । उनका सन्देह यह है कि रामभक्त गोस्वामीजी ने शिवभक्ति से संबन्धित ` पार्वतीमंगल ` की रचना क्यों की ।

यह जरूरत नहीं कि दोनों तरह के काव्य तुलसी न लिखें। शिव और राम के संबन्ध का बोध भी उन्हें था । दोनों की समानता-मानस और पार्वतीमंगल-दोनों के तुलसीकृत होने के प्रमाण हैं । काशी में रहते काशीनाथ की वन्दना करके लिखना अनुचित नहीं लगता ।

समन्वयवादी दृष्टिकोण :-

गोस्वामीजी के समन्वयवादी दृष्टिकोण का यह स्पष्ट परिचायक है । वे शिवभक्ति और रामभक्ति दोनों को मिलाकर चलनेवाले है । उनकी राय है कि राम की भक्ति शिव की भक्ति से ही पवित्र हो सकती है ।

डा० भगीरथ मिश्र इस ग्रन्थ के उद्देश्य के संबन्ध में कहते हैं :- पुस्तक के उपसंहार तथा समस्त वर्णन से यह जान पड़ता है कि यह मंगल उन्होंने महिलाओं के गीत या पढ़नार्थ लिखा है ।` १

जानकीमंगल :-

कविकुल चूड़ामणि भक्तप्रवर गोस्वामीजी कृत अनुपम ग्रन्थ है ` जानकीमंगल ` । मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र और जगन्माता आद्याशक्ति सीतादेवी के मंगलमय पाणिग्रहण की गाथा इसमें गायी गयी है ।

१- तुलसी रसायन- डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-७०

२२६ छन्दों में समाप्त इस छोटे काव्य की शैली ' पार्वती मंगल ' की ही है । इसे खण्डकाव्य कहना भी उचित है । इसके सोहर छन्दों की संख्या १९२ और हरिगीतिका छन्दों की संख्या २४ है । यद्यपि रामचरितमानस में जानकी की विवाह-कथा आयी है तो भी स्तोत्र के रूप में ही शायद तुलसी ने इसकी रचना की होगी ।

रचनाकाल:- ' जानकीमंगल ' के रचनाकाल के संबन्ध में हमें विचार करना है ।

पार्वतीमंगल और जानकीमंगल दोनों लगभग एक ही समय ही रचे गये, ऐसा प्रतीत होता है । दोनों की भाषा-शैली में समानता है । कवि स्वयं इसकी रचना-तिथि का निर्देश नहीं देते । उसके अलावा रचना-तिथि का निर्णय करने के लिए सहायक कोई घटना का उल्लेख भी नहीं मिलता ।

बाबा बेणी माधव दास ' मूल गोसाईं चरित ' में लिखते हैं :-

' मिथिला में रचना किये, नहछू मंगल दोइ ।' [1]

पार्वतीमंगल में रचना तिथि संवत् १६४३ कवि ने स्वयं लिखा है । तब तो ~~संवत् १६४० के पहले~~ इन मंगल-काव्यों की रचना-तिथि उसी समय मानना ठीक प्रतीत होता है ।

महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी इसकी रचना-तिथि संवत् १६४२ को मानने वाले हैं ।

डा० माताप्रसाद गुप्त ने यों कहा है :- रामाज्ञाप्रश्न (सं० १६२२) तथा मानस (सं०१६३२) से जानकी-मंगल के इस अंतर को व्यक्त करने के लिए फलत: यदि प्रस्तुत कृति का रचनाकाल हम अनुमानत: सं० १६२६ के

१-मूल गोसाईं चरित-बेणी माधवदास-दोहा-६४ , हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास से उद्धृत,पृष्ठ-३७७

लगभग अर्थात् ` रामाज्ञाप्रश्न ` तथा रामचरित मानस के बीचों बीच मानें तो संभवत: हम सत्य से अधिक दूर न होंगे।` [१]

डा० श्यामसुन्दर दास तो पार्वतीमंगल की रचना-तिथि संवत् १६४३ को ही जानकीमंगल की रचनातिथि मानते हैं। दोनों काव्यों की भाषा, छन्द और शैली एक प्रकार की होने के कारण वे इस तिथि को ठीक मानते हैं।` [२]

डा०रामकुमार वर्मा संवत्-१६४३ को ही इसका रचनाकाल मानते हैं। [३] डा०भगीरथ मिश्र इसी तिथि को (संवत् १६४३) ठीक मानने के पक्ष में है। [४] इन तर्कों के परिणाम स्वरूप इसकी रचना संवत् १६४३ के आसपास मानना युक्तियुक्त है। अधिकांश विद्वान इसे ठीक मानते हैं।

आधार ग्रन्थ:-` वाल्मीकि रामायण ` के कथानक का प्रभाव पड़ने के कारण भगीरथ मिश्र और रामनरेश त्रिपाठी इसका आधार ग्रन्थ ` वाल्मीकि रामायण` मानते हैं।

` मानस ` से ` जानकीमंगल ` की कथा में कुछ अन्तर आया है।` मानस ` में परशुराम धनुर्भंग के अवसर पर आता है; लेकिन ` जानकीमंगल` में शादी के बाद विदाई के उपरान्त आते हैं। परशुराम और राम के बीच का संवाद भी छोटा है।` मानस ` में पुष्पवाटिका प्रसंग का

१- तुलसीदास (डा०माताप्रसाद गुप्त) ,पृष्ठ-२३८

२- गोस्वामी तुलसीदास - डा० श्यामसुन्दर दास,पृष्ठ-८२

३- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-३७७

४- तुलसी रसायन -डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-७४

जो सरस वर्णन हुआ है उसका ` जानकीमंगल ` में एकदम अभाव है ।

कथानक का विस्तार

प्रमुख रूप से इसमें सीता के स्वयंवर का वर्णन मिलता है ।

सीता की अनुपम छवि का वर्णन देखिए :-

रूप राशि जेहि ओर सुभायं निहारइ ।
कमल सर श्रेनि मयन जनु डारइ ।। [१]

काव्य के अन्य गुण जैसे अलंकार , रस, भाषा आदि के बारे में भी विचार करना है ।

अलंकार

सुन्दर अलंकारों का सुचारू ढंग से इसमें प्रयोग मिलता है । ये अलंकार भी ` जानकी मंगल ` की मनोहारिता में चार चांद लगा देते हैं ।

उत्प्रेक्षा

काक पच्छ ऋषि परसत पानि सरोजनि ।
लाल कमल जनु लालत बाल मनोजनि ।। [२]

रूपक की छटा भी दर्शनीय है

धनु सिन्धु नृप बल जल बढ़्यो रघुवरहिं कुंभज लेखहू

१- जानकीमंगल (तुलसीकृत) टीकाकार हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-२५

२- जानकीमंगल- हनुमान प्रसाद पोद्दार (तुलसीकृत) पृष्ठ-२०

३- ,, ,, पृष्ठ-२६

दृष्टान्त

सो छवि जाइ न बरनि देखि मन मानै ।
सुधापन करि मूक कि स्वाद बखानै ।।[१]

अलंकारों की सजावट ~~बहुत सजावट~~ बहुत सुन्दर हुई है ।

रस:- 'जानकीमंगल' में शृंगार रस का मर्यादित चित्रण उन्होंने किया है ।

नहिं तन सम्हारहिं छबि निहारहिं निमिष रिपु जनु रनु जए ।
चक्कवै लोचन राम रूप, सुराज सुख भोगी भये ।।[२]

भाषा:- ठेठ और सुन्दर अवधी भाषा में कवि ने 'जानकीमंगल' की रचना की है । शब्दों का चयन अत्यधिक कौशल के साथ किया गया है ।

रामचरित मानस और जानकीमंगल में साम्य :- 'मानस' और 'जानकी-मंगल में कुछ साम्य दिखलायी पडता है ।

मानस

(१) कोउ न बुझाय कहै नृप पाहीं ।
ये बालक अस हठ भल नाहीं ।।[३]

(२) कहं धनु कुलिसहुं चाहि कठोरा ।
कहं स्यामल मृदुगत किसोरा ।। [४]

१- जानकीमंगल- हनुमान प्रसाद पोद्दार (तुलसीकृत) पृष्ठ-२६
२- ,, ,, पृष्ठ-३६
३- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी -बालकाण्ड,पृष्ठ-४२६
४- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-४३३

(३) सो धनु राजकुंवर कर देहीं ।
बाल मराल कि मन्दर लेहीं ।[१]

जानकीमंगल

एक कहहिं कुंवर धरइ किसोर कुलिस कठोर सिव धनु है महा ।
किमि लेहिं बाल मराल मंदर नृपहिं अस काहु न कहा ।।[२]

रामाज्ञाप्रश्न:-

यह गोस्वामीजी के शकुन संबन्धी विचारों से ओतप्रोत रचना है । इसका अध्ययन करने से हम इस निष्कर्ष पर पहुंच जाते हैं कि गोस्वामीजी ज्योतिर्विद्या में भी निपुण है । ऐसा अनुमान किया गया है कि अपने मित्र गंगाराम ज्योतिषी को, जो प्रह्लाद-घाट पर रहते थे, काशी नरेश के कोप से बचाने केलिए शकुन विचारने के लक्ष्य से इसकी रचना की ।

रामाज्ञाप्रश्न सात सर्गोंवाला ग्रन्थ है । हर एक सर्ग में सात सप्तक हैं और हर एक सप्तक में सात दोहे हैं । कुल मिलाकर कवि ने ३४३ छन्दों की रचना इसमें की है ।

रचनाकाल:- इस ग्रन्थ के रचनाकाल का संकेत इसी ग्रन्थ से मिलता है ।

सगुन सत्य ससि नयन गुन अवधि अधिक नय बान ।
होइ सुफल सुभ जासु जस प्रीति प्रतीति प्रमान ।।[३]

डा० भगीरथ मिश्र उपर्युक्त दोहे के आधार पर इसका रचनाकाल संवत् १६२२ मानते हैं ।

१- रामचरितमानस - विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-४२६
२- जानकीमंगल- टीकाकार, हनुमान प्रसाद पोद्दार(तुलसीकृत)गीताप्रेस, गोरखपुर,पृष्ठ-१६
~~३- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दरदास, पृष्ठ-१६६~~
३- रामाज्ञाप्रश्न - श्रीकान्तशरण - पृष्ठ - २६६ [तुलसीकृत]

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने इसका रचनाकाल संवत् १६२० और -२५ के बीच माना है । [१]

डा० श्यामसुन्दरदास इसकी रचना-तिथि संवत् १६५५ मानते हैं । [२]

डा० रामदत्त भरद्वाज के मत में रामाज्ञा-प्रश्न की रचना गोस्वामीजी के गृहत्याग के बाद संवत् १६२१ के लगभग हुई होगी । [३]

डा० रामकुमार वर्मा की झुकाव राम नरेश त्रिपाठी जी के मत की ओर है ।

निष्कर्ष यह है कि संवत् १६२०-२५ के बीच इसका रचनाकाल मानना युक्ति-संगत लगता है, रामनरेश त्रिपाठी का यही मत है । संवत् १६५५ को रचनाकाल मानना अयुक्त प्रतीत होता है । क्यों कि बाद की रचना होना तो उसकी रचना-शैली अवश्य कुछ प्रौढ़ होती । आरंभ कालीन रचनाओं में वर्णन-कौशल तो कम ही होगा । ' मानस ' के पूर्व इसका रचनाकाल मानना उचित है । बाद की रचनायें काव्य सौन्दर्य के धनी होगी ।

आधार ग्रन्थ :- इस ग्रन्थ में रामकथा का जो वर्णन आया है उसका आधार वाल्मीकि -रामायण है ।

कथावस्तु:- अन्य ग्रन्थों के समान इसमें भी कथानक की धारा बहती है । रामजन्म, विश्वमित्र का आगमन, सीता स्वयंवर , वनवास ,दण्डकारण्य चित्रण आदि घटनाओं का वर्णन मिलता है । इसमें शकुन विचारने की विधि बतायी गयी है ।

१- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी , पृष्ठ-२२४

२- गोस्वामी तुलसीदास - डा० श्याम सुन्दर दास,पृष्ठ-८५

~~३- रामाज्ञाप्रश्न (गोस्वामी तुलसीदास कृत)- श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-५५~~

३. गोस्वामी तुलसीदास :-व्यक्तित्व, दर्शन, साहित्य- रामदत्त भरद्वाज पृष्ठ-३२८

ज्योतिर्विद्या में उनका ज्ञान स्पष्ट करनेवाला एक उदाहरण देखिए :-

' माया मृग पहिचानि प्रभु , चले सीय रुचि जानि ।
कंचक चोर प्रपंच कृत, सगुन कहब हित हानि ।।[१]

आलंकारिक सुन्दरता से यह ग्रन्थ नहीं सजाया गया है ।

भाषा :- सरल भाषा में रामाज्ञाप्रश्न की रचना हुई है । उनकी भाषा में लोकोक्तियों का प्रचुर प्रयोग मिलता है । भाषा पर उनका समान अधिकार है ।

दोहावली :-

कवि कोकिल गोस्वामीजी की और एक अनुपम ग्रन्थ है दोहावली उनके कर कमलों से सजाये गये इस ग्रन्थ में हम सूक्तिरूपी मोती पा सकते हैं । अनेक सूक्तियों का संकलन इसमें हुआ है । ये विविधता लिये हुए हैं । इसमें राम-नाम-महिमा, भक्ति की महिमा, सत्संग महिमा, राम-कृपा-की महिमा आदि अनेक विषयों से संबन्धित दोहे इसमें मिलते हैं ।

डा० भगीरथमिश्र ने कहा है - ' इसमें कोई एक दोहा दूसरे दोहे का मुखापेक्षी नहीं । साथ ही साथ प्रमुख उद्देश्य नीति वर्णन है । समाज, धर्म, व्यक्ति, और राजनीति के सुन्दर प्रसंग इसमें देखने को मिलते हैं ।[२]

दोहावली के अनेक दोहे ' मानस ' रामाज्ञाप्रश्न, वैराग्य सन्दीपनी आदि ग्रन्थों में दृष्टिगोचर होते हैं । वैराग्य सन्दीपनी और रामाज्ञाप्रश्न दोनों ग्रन्थों में प्राप्त एक दोहा ' दोहावली ' में संग्रहीत है

१- रामाज्ञाप्रश्न (गोस्वामी तुलसीदासकृत) श्री श्रीकान्त शरण,पृष्ठ-५५
२- तुलसीरसायन- डा० भगीरथ मिश्र , पृष्ठ-७६

' एक भरोसो एक बल एक आस विश्वास ।
(एक राम घन स्याम हित) ~~राम रूप स्वामी~~ जलद चातक तुलसीदास।।[१]

रचनाकाल:- डा० श्यामसुन्दर दास का कहना है - संवत् १६४० में तुलसीदास जी ने अपने भिन्न भिन्न ग्रन्थों से दोहावली का संग्रह किया ।

मिथिला ते काशी गए चालिस संवत लाग ।
दोहावली संग्रह किए सहित विमल अनुराग ।।

गोसाइं-चरित के उपर्युक्त दोहे के आधार पर ये विद्वान इसकी रचना-तिथि संवत् १६४० मानते हैं । [२]

डा० माताप्रसाद गुप्त निम्नलिखित दोहे को स्वीकार करते हुए कहते हैं :-

' तुलसी जान्यो दशरथ हि धरमु न सत्य समान ।
रामु तजे जिहि लागि बिनु राम परि हरे प्रान ।।

यह दोहा सं०१६६६ के उक्त पंचनामे के शीर्ष में भी है । जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है, इसलिए यह १६६६ का या पूर्व का होना चाहिए ।[३]

पं० रामनरेश त्रिपाठी का मत है :- दोहावली के दोहे संवत् १६२० से बनने शुरू हुए, संवत् १६७२ तक बनते और संग्रह होते रहे । [४]

१- दोहावली- (तुलसीदास जी रचित) अनुवादक- हनुमानप्रसाद पोद्दार पृष्ठ-६६

२- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-८०

३- तुलसीदास- डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२५८

४- तुलसीदास और उनका काव्य- पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-२२५

डा० रामकुमार वर्मा कहते है - ` दोहावली में यदि संवत् १६६५ से १६८० तक की घटनाओं का वर्णन है तो उसका संग्रह संवत् १६४० में किस भाँति हो सकता है ? तुलसीदास के जीवन के अन्तिम दिनों की रचना दोहावली में होने के कारण ऐसा अनुमान भी होता है कि इसका संग्रह स्वयं तुलसीदास के हाथ से न होकर किस भक्त के हाथ से हुआ होगा ।` [१]

निष्कर्ष यही निकलता है कि दोहावली के कुछ दोहे उनकी छात्रावस्था से संबन्धित रहते हैं जैसे-

काल तोपची तुपक महि, दारू अनय कराल ।
पाप पलीता कठिन गुरु गोला पुहुमीपाल ।।[२]

कुछ दोहे गोस्वामीजी के जीवन की अन्तिम अवस्था यानी वृद्धा-वस्था से संबन्धित होते हैं । इसके दोहे गोस्वामीजी संवत् १६२० से रचने लगे, संवत १६७२ तक होते होते इसका संकलन भी पूरा हुआ होगा । पं० रामनरेश त्रिपाठी इसी मत के समर्थक है

डा० भगीरथ मिश्र और उदयभानुसिंह मानते हैं इसकी रचना एक सुदीर्घ समय में हुई है। वृद्धावस्था तक इसकी रचना का आयाम फैला हुआ है, ऐसा मानना पडता है । जीवन के अन्तिम समय से संबन्धित दोहे बाद में रचित होंगे, फिर इसका संकलन हुआ होगा । ` मानस ` वैराग्य सन्दीपनी, रामाज्ञा-प्रश्न आदि ग्रन्थों के दोहे इसमें संकलित होने के कारण यह कृति अवश्य पीछे की रचना मानना उचित है ।

मुक्तक रचना :-

इसे मुक्तक रचना मानना अधिक सुन्दर लगता है । इसमें एक

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३८३

दोहा दूसरे से संबन्धित नहीं, अर्थात् एक दोहा अपने में पूर्ण है । इसी कारण इसे शुद्ध मुक्तक रचना मानने में कोई आपत्ति नहीं ।

इसमें समाज, नीति, धर्म, आचार, भक्ति, राजनीति, ज्योतिष आदि विषयों से संबन्धित दोहे प्राप्त होते हैं । नीति-काव्य वर्णन तो इस ग्रन्थ का प्रमुख उद्देश्य लगता है । इसमें रामकथा का श्रृंखलाबद्ध वर्णन नहीं मिलता । राम-नाम-महिमा, और राम की भक्ति से संबंधित अनेक दोहे इसमें मिलते हैं ।

राम-कथा की महिमा

राम कथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुवीर बिहारु ।।[1]

राम-नाम का महत्व

नाम राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु ।
जो सुमिरत भयो भाँग तें तुलसी तुलसीदासु ।। [2]

राम प्रेम की महत्ता

राम सनेही राम गति राम चरन रति जाहि ।
तुलसी फल जग जनम को दियो बिधाता ताहि ।।[3]

१- दोहावली (तुलसीदास जी रचित) अनुवादक - हनुमान प्रसाद पोद्दार पृष्ठ-६८

२- ,, ,, पृष्ठ-१६

३- ,, ,, पृष्ठ-३०

दोहावली में राज्यादर्श- संबन्धी दोहे मिलते हैं। कलियुगीन राजाओं के अनीतिपूर्ण व्यवहार का स्पष्टीकरण भी इन दोहों से मिलता है।

राज करत बिनु काजहीं करहिं कुचालि कुसाज।
तुलसी ते दस कंध ज्यों जइहैं सहित समाज ।।[1]

भक्ति के प्रतीक के रूप में गोस्वामीजी ने चातक को लेकर राम के प्रति उनकी भक्ति की चरम सीमा दिखायी है।

चातक तुलसी के मतें स्वातिहुं पिए न पानि।
प्रेम तृष्णा बाढ़ति भली घटें घटैगी आनि ।।[2]

इस प्रकार दोहावली में विभिन्न विषयक सूक्तियां मिलती हैं।

भाषा :- 'दोहावली' सुन्दर और परिष्कृत अवधी भाषा में लिखा गया है। इसकी भाषा बहुत प्रसाद गुण संपन्न है।

अलंकार, रस आदि की दृष्टि से इस ग्रन्थ का अध्ययन नहीं किया जा सकता।

कवितावली :-

गोस्वामीजी कृत और एक ग्रन्थ सुमन है कवितावली। यह गोस्वामीजी की उत्कृष्ट कृतियों में एक है।

काव्य का स्वरूप :- नायक रामचन्द्र जी के जीवन की संपूर्ण घटनायें इस ग्रन्थ में न मिलने के कारण इसे प्रबन्ध-काव्य की कोटि में नहीं रखा जा सकता। भावों का जो सागर कवि के हृदय में उमड पडा उसे उन्होंने अभिव्यक्ति दी। शायद इसी कारण इसमें क्रमबद्धता का अभाव है। प्रत्येक काण्ड की शैली दूसरे से भिन्न है। सात कांडोंवाला यह ग्रन्थ काण्डों के नामकरण की दृष्टि से 'मानस' के समान है। इस ग्रन्थ में ३२५ छन्दों का प्रयोग हुआ है।

१- दोहावली- अनुवादक - हनुमान प्रसाद पोद्दार- पृष्ठ-१४३

इसे एक संग्रह ग्रन्थ मानना अधिक उचित है । क्योंकि इसमें भिन्न भिन्न प्रसंगों की रचना भिन्न भिन्न समय में हुई है । फिर उनका संग्रह कर दिया होगा ।

इस ग्रन्थ में कुछ घटनाओं को ज्यों ही छोड़ दिया गया है । राज्याभिषेक की सज्जा, मंथरा-कैकेयी संवाद, बरात का वर्णन आदि घटनाओं का चित्रण नहीं है ।

`उत्तरकाण्ड` में कथांश का वर्णन न कर उन्होंने राम-नाम-माहात्म्य, देश की बुरी हालत, कुछ तीर्थों की स्तुति के अलावा वैयक्तिक बातों पर भी प्रकाश डाला है ।

रचनाकाल:- वेणीमाधव दास के अनुसार `गोसाईं चरित` में कुछ कवितों की रचना गीतावली के बाद और `मानस` के पूर्व की है ।[१]

लेकिन डा० रामकुमार वर्मा का मत है - यह भी निश्चित है कि इस काल के बाद भी कवितों की रचना हुई, क्योंकि `कवितावली` में मीन की सनीचरी का वर्णन है जिसका समय संवत् १६६६ से १६७२ माना गया है ।[२] यदि वेणी माधव दास का प्रमाण न भी माना जाये तो कवितावली के कुछ कवितों का रचनाकाल संवत् १६६६ के लगभग ठहरता ही है ।[३]

मूल गोसाईं चरित` के आधार पर डा० श्यामसुन्दर दास का मत है :- इनमें काशी में महामारी पड़ने का, गोसाईंजी की रुग्णावस्था का, मीन की सनीचरी का और रुद्रबीसी का वर्णन है, गणना से रुद्रबीसी १६६५

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-४०८

२- इंडियन एंटीकरी - भाग २२ ,पृष्ठ-६७, डा० रामकुमार वर्मा के इतिहास सेउद्धृत , पृष्ठ-४०८

३- डा० रामकुमार वर्मा-हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास,पृष्ठ-४०८

से १६८५ तक और मीन की सनीचरी १६६६ से १६७२ तक थी ।
उत्तराकाण्ड तो अवश्य ही भिन्न भिन्न अवसरों पर रचे गए हों ।
कवितावली का कथाभाग और सीतावट विषयक कवित्त संवत् १६२८ और १६३२
के बीच में बनाए गए हैं और शेषांश १६६६ के पीछे ' । [१]

डा० माताप्रसाद गुप्त विद्वानों के मतों पर विचार करते हुए कहते हैं:- ' कवितावली के कथा-भाग और सीतावट संबन्धी कवित्तों को हम १६२८-३२ की रचना और ' बाहुक ' के छन्दों को संवत् १६६६ की ही रचना क्यों मानें, इसके लिए ' मूल गोसाईं चरित ' के साक्ष्य के अतिरिक्त कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता, शेष कथन के संबन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है । [२]

पं० रामनरेश त्रिपाठी माताप्रसाद गुप्त के मत से सहमत होकर कहते हैं- कवितावली का प्रारंभ भी संवत् १६२५ के आसपास हो चुका था पर इसकी समाप्ति संवत् १६८० के आसपास कभी हुई होगी । [३]

डा० रामदत्त भरद्वाज कवितावली की समाप्ति संवत् १६४२ वि० में मानते हैं । [४]

उपर्युक्त विद्वानों के मतों पर दृष्टिपात करने पर मालूम पड़ता है कि कवितावली एक ही समय पर लिखी गयी रचना नहीं है । विभिन्न समयों पर लिखे गये कवित्तों का संकलन अन्त में हुआ होगा । काव्यकला की दृष्टि से प्रौढ़ कृति होने के कारण यह गोस्वामीजी के आरंभकालीन रचना नहीं है,

---

१- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दर दास,पृष्ठ-७१-७२, द्वितीय संस्करण -१९५२

२- तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२६३

३- तुलसीदास और उनका काव्य- पं० रामनरेश त्रिपाठी,पृष्ठ-२२४ तृतीय संस्करण-१९५८

४-गोस्वामी तुलसीदास-व्यक्तित्व ,दर्शन,साहित्य- रामदत्त भरद्वाज,पृष्ठ-३२६

ऐसा अनुमान करना पड़ता है । कवितावली का कथाभाग डा० श्यामसुन्दर दास के मतानुसार संवत् १६२८ और १६३२ के बीच रचे गये होंगे । रुद्रबीसी, मीन की सनीचरी, महामारी आदि घटनायें गोस्वामीजी की वृद्धावस्था से संबन्धित हैं । इसके अलावा कुछ पदों में वृद्धावस्था में अनुभूत रोगों और कष्टों का वर्णन हुआ है । अन्तिम काल का संकेत भी ' कवितावली ' में मिलता है । इनसे स्पष्ट है कि तुलसी के जीवन काल के अन्तिम वर्षों में कवितावली के उत्तरकाण्ड के अनेक कवित्तों की रचना हुई । अत: संवत् १६८० के आसपास कवितावली के उत्तरकाण्ड की रचना हुई होगी । फिर इसका संकलन हुआ होगा । ' कवितावली ' का ' क्षेमकरीवाला ' छन्द उनके अन्तिम प्रयाण समय का माना जाता है ।

कुंकुम रंग सुअंग जितो मुख चंद सों चन्द सों होड़ परी है ।
बोलत बोल समृद्धि चुवै अवलोकत सोक विषाद हरी है ।
गौरी कै गंग विहंगिनि बेस कि मंगल मूरति मोद भरी है ।
देखु सप्रेम पयान समै सब सोच विमोचनि क्षेमकरी है ।[1]

इस छन्द से स्पष्ट है कि कवि ने जीवन के अन्तिम समयों में इसकी रचना की है । इसी निष्कर्ष पर हम पहुंचते हैं ।

व्यक्तिगत जीवन पर प्रकाश :- गोस्वामीजी के वैयक्तिक जीवन की झलक ' कवितावली ' में मिलती है ।

' मातु पिता जग जाय तज्यो, विधि हू न लिखी कछु भाल भलाई ।
नीच निरादर-भाजन, कादर, कूकर, टूकन लागि ललाई ।।

१- कवितावली- श्री कान्त शरण, पृष्ठ-५६६ (उत्तरकाण्ड) [सिद्धान्त तिलक]

राम सुभाउ सुन्यों तुलसी प्रभु सों कह्यो बारक पेट खलाई ।
स्वारथ को परमारथ को रघुनाथ सों साहिब खोरि न लाई ।।[1]

कवि के वैयक्तिक जीवन का अध्ययन करने पर हमारा हृदय करुणा से ओतप्रोत हो जाता है । वैयक्तिक जीवन से संबन्धित और भी कुछ छन्द मिलते हैं ।

` जायो कुल मंगल, बधावनों बजायो सुनि ।
भयो परिताम पाप जननी जनक को ।।
बारे ते ललात बिललात द्वार द्वार दीन ।
जानत हो चारिफल चारि ही चनक को ।।[2]

यहां वैयक्तिक जीवन की करुणापूर्ण हालत की ओर इशारा किया गया है ।

अलंकार:-

` भूषन बिनु न विराजई कविता वनिता मित `

केशवदास की इस उक्ति के अनुसार अलंकार काव्य की शोभा बढ़ानेवाला आभूषण है ।

गोस्वामीजी ने अलंकार-प्रयोग केलिए काव्य की रचना नहीं की, लेकिन अलंकार स्वत: आये हैं ।

१- कवितावली - श्री श्रीकान्त शरण (उत्तरकाण्ड) पृष्ठ-३५८

२- ,, ,, पृष्ठ-३८६

उत्प्रेक्षा

तुलसी तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकति लोचन लाहु अली ।
अनुराग-तड़ाग मैं भानु उदै विगसीं मनो मंजुल कंज-कली ।। [1]

रूपक

अरविंद सो आनन, रूपमरंद आनंदित लोचन-भृंग पिये । [2]

अनुप्रास

तुलसी मनरंजन रंजित अंजन नयन सुखंजन-जातक से । [3]

उपमा

अरविंद सो आनन , रूपमरंद आनंदित लोचन भृंग पिये । [4]

अनेक अलंकारों का सुन्दर प्रयोग इसमें हुआ है ।

रसयोजना:- प्राय: सभी रसों की उचित योजना इसमें हुई है । मर्यादा की रक्षा करने के लिए उन्होंने रसराज श्रृंगार का वर्णन नाम-मात्र केलिए किया है ।

श्रृंगार

जल को गये लक्खन हैं लरिका, परिखौ, पिय छांह घरीक
हृवै ठाढे ।
पौंछि पसेउ बयारि करौं, अरु पायं पखारिहौं भूभुरि डाढे ।।

१- कवितावली - श्री कान्त शरण - पृष्ठ-७८ अयोध्याकाण्ड
२- ,, ,, पृष्ठ-४ बालकाण्ड
३- ,, ,, पृष्ठ-२ ,,
४- ,, ,, पृष्ठ-४ ,,

तुलसी रघुबीर प्रिया श्रम जानि कै बैठि बिलंब लौं कंटक काढे ।
जानकी नाह को नेह लख्यो, पुलको तनु बारि बिलोचन बाढे ।।[1]

यहां संयोग श्रृंगार की एक झांकी मिलती है ।

वीररस:- इस रस का वर्णन अत्यधिक ओजस्वी शब्दों में युद्ध-वर्णन के प्रसंग में हुआ है ।

साजि कै सनाह गजगाह सउछाह दल ।
महाबली धाये बीर जातुधान धीर के ।।
इहां भालु बंदर बिसाल मेरु मंदर सो ।
लिये सैल साल तोरि नीर निधि तीर के ।।[2]

वीररस पूर्ण वातावरण की सृष्टि इसमें अच्छी तरह हुई है ।

करुणा:- एक या दो स्थानों पर इस रस की योजना हुई है ।

' पुर तें निकसी रघुबीर बधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै ।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गए मधुराधर वै ।
फिर बूझति हैं चलनो अब केतिक पर्न कुटी करिहौ कित ह्वै ?
तिय की लखि आतुरता पिय की अंखियां अति चारु चलीं जल च्वै ।।[3]

१- कवितावली - श्रीकान्त शरण - पृष्ठ-६२ अयोध्याकाण्ड

२- कवितावली ,, पृष्ठ-२१४ लंकाकाण्ड

३- कवितावली ,, पृष्ठ-६० अयोध्याकाण्ड

इन रसों के अलावा वीभत्स, रौद्र, भयानक, शान्त, हास्य, वात्सल्य आदि रसों की उचित योजना भी इस काव्य में हुई है ।

अनेक व्यंग्य चित्र भी कवि ने उपस्थित किये हैं जो कवि की लेखनी की विदग्धता दिखाती है ।

परसे पग धूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहों जू ।[१]

उत्तम-काव्य की कोटि में इस काव्य को इसलिए रखा जा सकता है कि इसमें ध्वनिगुण है ।

भाषा:- संस्कृत शब्दों से प्रभावित शुद्ध ब्रजभाषा की सरिता 'कवितावली' में बहती है । कहीं कहीं अवधी के शब्द दीख पड़ते हैं । रसानुकूल भाषा के प्रयोग से काव्य की सुन्दरता अत्यधिक बढ़ी है ।

मुख पंकज, कंज विलोचन मंजु मनोज- सरासन सी बनी भौंहैं ।[२]

गोस्वामीजी ने युद्धों के प्रसंग में ओजपूर्ण शब्दों का, कोमल प्रसंगों पर श्रवणसुखद कोमल शब्दों का और कहीं कहीं प्रसाद गुण युक्त भाषा का प्रयोग किया है ।

शैली:- व्यास शैली का प्रयोग इसमें देखा जा सकता है । लोकोक्तियों और मुहावरों को भी इसमें पर्याप्त स्थान मिला है ।

'आगि बड़वागि तें बड़ी है आगि पेट की ।'[३]

१- कवितावली, श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-५२, अयोध्याकाण्ड
२- कवितावली, ,, पृष्ठ-८२ ,,
३- कवितावली, ,, पृष्ठ-४३१ उत्तरकाण्ड

छन्द:- कवित्त, सवैया, छप्पय, झूलना आदि सुन्दर छन्दों का प्रयोग कवि ने किया है। ये छन्द तो कितने सरस और ओजपूर्ण बन पड़े हैं।

कवितावली पर सूरसागर का प्रभाव :-

'सूरसागर' से प्रभावित कुछ छन्दों को 'कवितावली' में देख सकते हैं।

सखी री कौन तिहारे जात ?
राजिव नैन धनुष कर लीन्हे, बदन मनोहर गात ।।

इनमें को पति आहिं तिहारे पुरजनि पूछे धाइ ।
राजिव नैन मैन की मूरति सैननि दियो बताइ ।।[१]

कवितावली

पूछति ग्रामवधू सियसों 'कहो सांवरे से, सखि रावरे को है ?
सुनि सुंदर बैन सुधारस - साने, सयानी हैं जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसुकाइ चली ।[२]

डा० भाग्यवती सिंह ने तुलसी के काव्य-कौशल की ठीक ठीक प्रशंसा की है।

'तुलसी के काव्य गुणों की पूर्ण-रूपेण व्याख्या करना तो वैसा ही असफल प्रयास होगा जैसे -

'तुलसी वारिद बूंद गहि चाहत चढ़न अकास' ।।[३]

१-सूरसागर- (सूरदास) संपादक-नन्ददुलारे वाजपेयी, तृतीय संस्करण, २०१५, नवमस्कन्ध पृष्ठ, २००-२०१ छन्द ४३-४५
२-कवितावली- श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-७६-७७
३- तुलसी मानस रत्नाकर-डा० भाग्यवतीसिंह, पृष्ठ-६६

हनुमान बाहुक :-

गोस्वामीजी कृत और एक सुन्दर काव्य है ` हनुमान-बाहुक ` । इस कृति में कवि ने ` हनुमान ` की पावन-मूर्ति का स्मरण किया है । कवि ने हनुमान से आर्त पुकार कर उठी है ।

कुछ विद्वान तो ` हनुमान बाहुक ` को प्रामाणिक ग्रन्थ मानने केलिए तैयार नहीं होते । डा० ग्रियर्सन, पं० रामगुलाम द्विवेदी आदि विद्वान इसे प्रामाणिक नहीं मानते । मिश्र बन्धु इसकी प्रामाणिकता पर विश्वास रखते है ।

४४ छन्दों में ` बाहुक ` की रचना हुई है । छप्पय, झूलना, मतगयंद, घनाक्षरी आदि छन्द इसमें प्रयुक्त हैं ।

रचनाकाल:- वेणीमाधव दास ने इसकी रचना संवत् १६६६ में मानी है ।

बाहुपीर व्याकुल भये, रचे सुधीर ।
पुनि विराग संदीपिनी रामाज्ञा सकीर ।।[१]

डा० रामकुमार वर्मा का कहना है - कविता की प्रौढ़ता देखकर अनुमान भी यही होता है कि यह रचना तुलसीदास के जीवन के परवर्ती काल की है । ~~यदि इस बाहु-पीडा से हम तुलसीदास की मृत्यु मानें तब तो यह तुलसीदास की अंतिम रचना है ।~~ [१]

~~डा० रामकुमार वर्मा का कथन है~~ - ` यदि इस बाहु-पीडा से हम तुलसीदास की मृत्यु मानें तब तो यह तुलसीदास की अंतिम रचना है और इसका रचनाकाल संवत् १६८० है । यदि उपर्युक्त घटना सही न भी हो तो यह रचना संवत् १६६६ के लगभग की तो माननी ही चाहिए ।` [२]

१- मूलगोसाई चरित,दोहा-६५ हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डा० रामकुमार वर्मा, से उद्धृत,पृष्ठ-३८६
२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास,डा० रामकुमार वर्मा,पृष्ठ-३८६

डा० श्यामसुन्दर दास का मत है - बाहुक की जो तिथि मूल गोसाईं चरित ' में दी हुई है, वह उन्होंने ठीक मान ली थी । [१]

डा० माताप्रसाद गुप्त का कहना है कि कवितावली के कथा भाग और सीतावट संबन्धी कवितों को हम संवत् १६६६ की ही रचना क्यों मानें, इसकेलिए ' मूल गोसाईं चरित ' के साक्ष्य के अतिरिक्त कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता । ' [२]

अधिकांश विद्वान संवत् १६६६ को ' बाहुक ' का रचनाकाल मानते हैं ।

कवि के जीवन की सान्ध्य वेला में घटित कुछ घटनाओं का वर्णन इसमें मिलता है ।

पांयपीर, पेट पीर, बांह पीर, मुंह पीर ।
जरजर सकल सरीर पीरमई है ।।
दैवभूत पितर करम खल काल ग्रह।
मोहि पर दवरि दमानक सी दई है । [३]

उपर्युक्त घटनाओं से अनुमान करना पड़ता है कि ' हनुमान बाहुक ' कवि के अन्तिम समय के आसपास लिखे गये होंगे । निष्कर्ष यही है कि संवत् १६८० के आसपास याने गोस्वामीजी के जीवन-काल के अन्तिम वर्षों में इसकी रचना हुई है ।

१- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-१०१
डा० माताप्रसाद गुप्त के ' तुलसीदास ' नामक ग्रन्थ से उद्धृत, पृष्ठ-२६३

२- तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२६३

३- हनुमान बाहुक - टीकाकार- महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य ' वीर '
पृष्ठ-३४

काव्य-शरीर का स्वरूप:- सबसे पहले हनुमानजी का यशोगान इसमें मिलता है।

सिंधु तरन सिय सोच - हरन रवि बाल बरन तनु।`[१]
भुज बिसाल मूरति कराल कालहु को काल जनु`।

हनुमान के प्रति उनकी भक्ति की तीव्रता यहां स्पष्ट हो उठी है।

अपनी बाहुपीडा दूर करने केलिए उन्होंने हनुमान से प्रार्थना की है। उस पीडा से वे तिलमिला उठते हैं। हनुमान के प्रति गोस्वामीजी की यह प्रार्थना - यानी वेदना दूर करने की - इतनी हृदय द्रावक है कि वह पढ़ने पर वेदनामयी अनुभूतियां उत्पन्न होती हैं और हमारा हृदय गोस्वामीजी के प्रति करुणा से आर्द्र हो जाता है।

बांह की बेदन बांह पगार।
पुकारत आरत आंनद भूली।।
श्रीरघुबीर निवारिये पीर।
रहों दरबार परो लटि लूली।।[२]

इस प्रकार विनती करके वे स्वयं चुप हो जाते हैं।

वाहुक - कवितावली का परिशिष्ट

कवितावली के परिशिष्ट के रूप में `वाहुक` को माननेवाले कुछ विद्वान हैं। अधिकांश प्रतियों में `वाहुक` को कवितावली से संलग्न माना गया है। उन विद्वानों में प्रमुख ये हैं :-

---

१- हनुमान वाहुक- हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-५
२- ,, ,, पृष्ठ-३२

डा० माताप्रसाद गुप्त, डा० भगीरथ मिश्र, बाबू श्यामसुन्दर दास, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पं० रामचन्द्र भारद्वाज, पं० रामनरेश त्रिपाठी आदि ।

डा० माताप्रसाद गुप्त मानते है कि ` वह प्रकृत्या कवितावली के अन्तिम अंश से किसी प्रकार भिन्न नहीं है । [१]

लेकिन स्व० शिवनन्दन सहाय इसे एक स्वतंत्र ग्रन्थ मानते है । उनका कहना है कि ` कवितावली से इसका कुछ संबंध नहीं । ` [२]

नागरी - प्रचारिणी - सभा की ओर से प्रकाशित तुलसी ग्रन्थावली ` में बाहुक को कवितावली के परिशिष्ट स्वरूप स्वीकार किया गया है । लेकिन गीताप्रेस, श्रीकान्त शरण, लाला भगवानदीन इन संस्करणों में ` बाहुक ` कवितावली के साथ सम्मिलित नहीं है ।

लेकिन बाहुक को कवितावली का परिशिष्ट मानना अधिक युक्तिसंगत लगता है । इसका कारण यह है कि ` कवितावली ` के अन्तिम पद्यों से ` बाहुक ` के पद्य मिलते हैं । इसी कारण यही स्वीकार करना अच्छा है ।

भाषा:- इसमें भावों की अनुगामिनी भाषा-सरिता अबाध गति से बहती जाती है । शुद्ध ब्रजभाषा का प्रयोग इसमें हुआ है । उत्कृष्ट और गंभीर शैली में तथा सुन्दर और सजग प्रौढ़ शब्दावलियों का प्रयोग इसमें हुआ है ।

गोस्वामीजी की इस रचना में भावों की तीव्रता दृष्टव्य है । हनुमान बाहुक कविश्रेष्ठ वैष्णव भक्त गोस्वामीजी की सुन्दर रचना है ।

१- तुलसीदास- डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२६२

२- गोस्वामी तुलसीदास - स्व० शिवनन्दन सहाय, पृष्ठ-२६१

कृष्ण गीतावली :-

कृष्णगीतावली गीतिकाव्य की कोटि में आता है । काल कल मुरली निनाद अपनी मुरली से पैदा करनेवाले बालक कृष्ण की मनमोहक छवि ने हमारे गोस्वामीजी को अत्यधिक आकृष्ट किया होगा । ६२ स्फुट पदों में कवि ने इसकी रचना की है । भगवान श्रीकृष्ण की लोकरंजनकारी लीलायें गोस्वामीजी ने अपनी तूलिका से कितनी मनोहारिता से चित्रण किया है ; यह इसका अध्ययन करने से ही समझ सकता है ।

यह भी एक संग्रह ग्रन्थ है । कृष्ण के जीवन की सभी घटनायें इसमें वर्णित नहीं । सूरसागर से प्रभावित होकर शायद कवि ने यह ग्रन्थ लिखा होगा ।

कथानक का स्वरूप :- प्रमुख रूप से इसमें कृष्ण की बाल-सुलभ क्रीडाओं का चित्रण हुआ है । यह पढ़ने पर हमें ऐसा अनुभव होता है कि मानों कृष्ण सामने आकर अनेक लीलायें कर रहा हो ।

कृष्ण की तोतली बातें सुनकर किसका हृदय आनन्द से नहीं भर जाता ।

' छोटी मोटी मिसी रोटी चिकनी चुपरि कै तू ।
दै री मैया ! लै कन्हैया ! सो कब ? अबहिं तात ।
सिगरियै हौंही खैहौं, बलदाऊ को न दैहौं ।
सो क्यों भटू तेरो कहा करि इत उत जात ।। [1]

कृष्ण के मथुरा चले जाने पर गोपियां विरह-वेदना में तड़पती रहती हैं ।

१- कृष्णगीतावली- श्रीकान्त शरण - (सिद्धान्त तिलक) पृष्ठ-५

'सखि तैं सीतल मोकों लागै माई री तरनि ।
याके उएं बरति अधिक अंग अंग द्रव ।
वाके उएं मिटति रजनि जनित जरनि ।
सब बिरीत भए माधव बिनु ।
हित जो करत अनहित की करनि ।।[1]

गोस्वामीजी उद्धव के मुख से सगुण-निर्गुण की बातें कराते है ।

'काहे को कहत बचन संवारि ।
ग्यान गाहक नाहिनै ब्रज मधुप अनत सिधारि ।
जुगुति धूम बघारिबे की समुझिहैं न गंवारि ।
जोगिजन मुनिमंडली मों जाइ रीति ढारि ।
सुनै तिन्ह की कौन तुलसी जिन्हहि जाति न हारि ।
सकति खारो कियो चाहत मेघहू को बारि ।।[2]

उद्धव गोपियों को सगुण-निर्गुण की बातें समझाकर वापस लौट जाते है ।

रचनाकाल:- डा० श्यामसुन्दर दास संवत् १६२८ को इसका रचनाकाल मानते है ।[3]

१- कृष्ण गीतावली - श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-६३

२- कृष्ण गीतावली - श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-१३६ (तुलसीकृत)

३- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्याम सुन्दर दास, पृष्ठ-६७

विषय शैली के आधार पर डा० माताप्रसाद गुप्त इसके रचनाकाल के संबन्ध में कहते है - ' पदावली रामायण, राम-गीतावली' तथा ' कृष्ण गीतावली' परस्पर सापेक्ष लगती है क्योंकि एक विषय की पदावली दूसरे में नहीं है, इसलिए उपर्युक्त ग्रन्थ दो पुस्तकों के साथ इसका भी संकलन-काल संवत् १६५८ के लगभग मानें तो कदाचित् हम सत्य से अधिक दूर न होंगे । [१]

वेणीमाधव दास इसका रचनाकाल संवत् १६२८ मानते है

जब सोरह से बसु बीस चढ़यौ । पद जोरि सबै शुचि ग्रन्थ गढ़यौ ।।

तेहि राम गीतावलि नाम धर्यौ । अरु कृष्ण-गीतावलि
रांचि सर्यौ ।।[२]

डा० रामकुमार वर्मा कोई निश्चित तिथि नहीं देते । जिस तरह जानकीमंगल और पार्वतीमंगल युग्म है उसी प्रकार रामगीतावली और कृष्ण गीतावली है । दोनों की रचना से यह ज्ञात होता है कि ग्रन्थ उस समय लिखे गए होंगे जब कवि पर ब्रजभाषा और कृष्णकाव्य का अत्यधिक प्रभाव होगा । [३]

पं० रामनरेश त्रिपाठी संवत् १६४३ और संवत् १६५० के बीच इसका रचनाकाल मानते है । [४]

डा० रामदत्त भरद्वाज मानते है कि इसका निर्माण ब्रज में ब्रजयात्रा के समय, नन्ददास और ब्रज के गोसाइयों के प्रभाव से संवत् १६२६ के

१- तुलसीदास-डा० माताप्रसाद गुप्त,पृष्ठ-२५३-२५४,तृतीय संस्करण,सन्-१६५३

२- वेणीमाधव दास कृत ' मूल गोसाई चरित ' -हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३८४

३- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास,डा० रामकुमार वर्मा,पृष्ठ-३८५

४- तुलसीदास और उनका काव्य- पं० रामनरेश त्रिपाठी,तृतीय संस्करण,पृष्ठ-२२७

पश्चात १६३६ वि० तक होना अधिक संगत है ।[१]

यद्यपि एक संग्रह ग्रन्थ होने के कारण कृष्णगीतावली का निर्माण एक ही समय में नहीं हुआ होगा । रचनाकाल के संबन्ध में कहीं से कुछ भी नहीं मिलता । इसी कारण रचना की शैली के आधार पर हमें किसी तिथि का अनुमान करना पड़ता है ।

शायद उन्हें यह ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा अपनी ब्रजयात्रा के समय मिली होगी । व्यवस्थित विषय निर्वाह से हमें यह मानना पड़ता है कि इसके रचनाकाल का आयाम विस्तृत नहीं । शैली की प्रौढ़ता से स्पष्ट होता है कि यह कृति गोस्वामीजी ने पहले पहल नहीं लिखी है । रचना करते करते शैली में प्रौढ़ता आ जाती है । इसका रचनाकाल ' मानस ' के बाद संवत् १६४३- १६५० के बीच मानना उपयुक्त सा लगता है ।

<u>समन्वय-भावना</u> :- कृष्णगीतावली, राम एवं कृष्ण के प्रेमी गोस्वामीजी की अभेद बुद्धि और विशाल हृदय की परिचायिका है । उनकी समन्वयवादी भावना ने सगुण निर्गुण का समन्वय किया, शैवों और वैष्णवों का समन्वय किया । राम-भक्तों और कृष्ण भक्तों को आपस में एकता के सूत्र में बांधना भी उनका उद्देश्य था ।

<u>अलंकार</u> :- अलंकार प्रयोग की दृष्टि से तो यह ग्रन्थ उतना प्रमुख नहीं निकला है । उत्प्रेक्षा और रूपक का प्रयोग किंचित् मात्रा में हुआ है ।

<u>उत्प्रेक्षा</u>

चिक्कन कुटिल अलक अवली छवि कहि न जाइ सोभा अनूपतर ।
बाल भुवंगिनि निकर मनहुं मिलि रहीं घेरि रस जानि सुधाकर।।[२]

१- गोस्वामीजी तुलसीदास -व्यक्तित्व,दर्शन,साहित्य- डा० रामदत्तभारद्वाज पृष्ठ-३२६

२- कृष्णगीतावली - (तुलसीकृत) श्रीकान्त शरण (सिद्धान्त तिलक) पृष्ठ-३८

रूपक

मयौ सौक मय कौक - कौकनद भ्रम भ्रमरनि सुखदाई ।
चित चकोर मन मोर कुमुद मुद सकल विकल अधिकाई ।।[१]

भाषा:- इस ग्रन्थ मैं सुन्दर और प्रौढ़ ब्रजभाषा का प्रयोग सुचारु ढंग से हुआ है । बोलचाल की मुहावरेदार ब्रजभाषा इस ग्रन्थ मैं दर्शनीय है ।

गीतावली :-

कवि ने ललित पदों की रचना करके एक गीतिकाव्य का निर्माण किया है । इसमें प्रबन्धात्मकता की गति मन्द पड़ गयी है । कथात्मक विकास पर कवि ने अधिक ध्यान न देकर भाव की गहराई पर अत्यधिक ध्यान देकर इसी अंश को पुष्ट किया है । गीतावली की भाव-संपत्ति ने उसे एक आकर्षक गीति काव्य बना दिया है । गोस्वामीजी के सुमधुर कंठ से निर्गलित और एक गीतिकाव्य है ' गीतावली ' । इसमें अनेक रागों का प्रयोग मिलता है ।

गीतावली का विषय :- सात काण्डों मैं राम कथा का वर्णन गीतावली का विषय है । महाकाव्य के लक्षण जैसे मंगलाचरण, प्रबन्धात्मकता आदि इसमें दीख नहीं पड़ते , इसलिए इसे महाकाव्य नहीं कहा जा सकता । रामचन्द्र की संपूर्ण जीवन-गाथा का वर्णन होने से इसे खण्डकाव्य की कोटि मैं भी नहीं रखा जा सकता ।

डा० भगीरथ मिश्र इसे गोस्वामीजी की ललित पद-रचना मानते है ।'[२]

१- कृष्णगीतावली- (तुलसीकृत) श्रीकान्त शरण (सिद्धान्त तिलक) पृष्ठ-६०

२- तुलसी रसायन- डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-७६

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी इसे गीतिकाव्य मानने का कारण देते है - ` गीतावली के सभी पद गेय है । इसे राग-रागिनियों में रचने का उद्देश्य यही रहा कि साहित्य रसिकों के अतिरिक्त संगीत प्रेमियों को भी इन पदों के माध्यम से राम-चरित के सुधा - रस का पान करा दिया जाय । [१]

इसे गीतिकाव्य मानना अधिक उचित-सा लगता है ।

रचनाकाल:- डा० श्याम सुन्दर दास का कथन है :-

रामचन्द्र के जीवन संबन्धी जितने भावुक स्थल थे उन पर तुलसीदासजी ने पद बनाए । इस प्रकार प्राय: समस्त रामकथा पदों में हो गयी- संवत् १६२८ में इन पदों का कृष्णगीतावली और राम-गीतावली के नाम से अलग संग्रह किया गया है । ` [२]

डा० माताप्रसाद गुप्त इसके रचनाकाल के बारे में कहते है:-

रामगीतावली ` की प्रति संवत् १६६६ की है । इसलिए असंभव नहीं कि विनयपत्रिका पाठ के साथ ` गीतावली ` पाठ भी १६६६६ के बाद का हो । [३] ये विद्वान गीतावली के दो पाठ मानते है, एक है पदावली-रामायण, दूसरा है गीतावली । ।

विस्तृत चर्चा के बाद रामदत्त भारद्वाज कहते है -` इस परिस्थिति में गीतावली को १६४३ से १६५० विक्रमों के बीच की रचना मानना ठीक होगा ।[४]

१- गोस्वामी तुलसीदास-आचार्य सीताराम चतुर्वेदी,पृष्ठ-१८७

२- गोस्वामी तुलसीदास - डा० श्याम सुन्दर दास,पृष्ठ-६७

३- तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२४६

४- गोस्वामी तुलसीदास- व्यक्तित्व ,दर्शन,साहित्य - रामदत्त भारद्वाज पृष्ठ-३३३

वेणीमाधव दास ने संवत् १६२८ को इसका रचनाकाल माना है।[१] उन्होंने 'गीतावली' को रामगीतावली नाम दिया है।

डा० रामकुमार वर्मा मानते हैं - 'मूल गोसाईं-चरित' के अनुसार गीतावली तुलसीदास की प्रथम रचना है, किन्तु गीतावली की शैली और कथावस्तु को देखते हुए यह अनुमान करना पड़ता है कि इसकी रचना 'मानस' के पीछे हुई होगी।[२]

वे इसका निर्माण संवत् १६४३ के आसपास माननेवाले हैं।

पं० रामनरेश त्रिपाठी गीतावली को संवत् १६२५ से १६२८ तक की रचना मानते हैं।[३]

प्रौढ़ साहित्यिक कृति होने के नाते गीतावली को कवि के साहित्यिक जीवन की प्रारंभिक कृति मानना उपयुक्त नहीं लगता। इस ग्रन्थ में कवि का रचना-कौशल स्पष्ट झलकता है। इसी कारण 'रामचरित मानस' के बाद इसका रचनाकाल मानना उचित सा लगता है। इसी कारण डा० माता प्रसाद गुप्त के मत को स्वीकार करना ठीक लगता है। डा० गुप्तजी इसे संवत् १६६६ के बाद की कृति मानते हैं।

कथावस्तु :- गीतावली का कथानक 'वाल्मीकि- रामायण' पर आधारित है।

इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम राम-जन्म की सूचना मिलती है। अनेक पदों में नटखट बालक राम की बाल केलियां वर्णित है। यहां से कथा प्रारंभ होकर होती है।

१- मूलगोसाईं चरित- वेणीमाधव दास, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३८६

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ठ-३८६ पंचम संस्करण-१९६४

३- तुलसीदास और उनका काव्य- पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-२२४

अलंकार:- अलंकारों की मनोहारिता से काव्य की श्रीवृद्धि अत्यधिक बढ़ती है। अलंकार के क्षेत्र में गोस्वामीजी की सिद्धहस्तता से मुग्ध होकर डा० भाग्यवती सिंह ने कहा है :- 'ये अलंकार केशव के अलंकारों की भाँति कविता-कामिनी के सौन्दर्य को विकृत नहीं करते और चपलता स्वतः आ जाती है।'[1]

उपमा, अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का सुन्दर विधान इसमें हुआ है।

उपमा

काम तून तल सरिस जानु जुग उरु करिकर करमहि बिलखावति।
रसना रचित रतन चामीकर पीत बसन कटि कसे सरसावति ।[2]

अनुप्रास

राजत नयन मंजु अंजन युत खंजन कंज मीन मद नाए। [3]

उत्प्रेक्षा

पीन जानु उर चारु जटिल मनि नूपुर पद कल मुखर सोहाई।
पीत पराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लसि रहे लोभाई ।।[4]

रूपक

सुखमा सुख सील अयन नयन निरखि निरखि नील।
कंचित कुच कुंडल कल नासिका चित पोहैं। [5]

१- तुलसी मानस रत्नाकर-डा०भाग्यवतीसिंह,पृष्ठ-७४ (उत्तरकाण्ड)
२- गीतावली -हनुमानप्रसाद पोद्दार-गीताप्रेस,गोरखपुर,पृष्ठ-४०६
३- ,, ,, ,, पृष्ठ-७२ ,बालकाण्ड
नवम संस्करण-संवत २०१७
४- गीतावली - हनुमान प्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-१६६,बालकाण्ड
५- ,, ,, पृष्ठ-३८६,उत्तरकाण्ड

अनेक आलंकारों के सुन्दर विधान से `गीतावली` का आलंकारिक पक्ष अत्यधिक प्रबल हो उठा है ।

भाषा :-संस्कृत गर्भित ब्रजभाषा की कोमल कान्त पदावली का प्रयोग अत्यधिक सुमधुर ढंग से इसमें किया गया है । भाषा अत्यन्त मधुर और रसमयी है । तत्सम सुगठित शब्दों के प्रयोग ने भाषा को सुन्दर और सुगठित बना दिया है ।

नाम-मात्र केलिए फारसी और अवधी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । प्रसंगानुकूल भाषा में माधुर्य,ओज और प्रसाद गुण विद्यमान हैं । लोकोक्तियों का प्रयोग कवि ने उचित ढंग से किया है ।

डा०भाग्यवतीसिंह ने गोस्वामीजी की भाषा-कुशलता पर मुग्ध होकर कहा है :- `भाषा के क्षेत्र में तुलसी में शब्द निर्माण की अद्भुत क्षमता है ।`[१]

इस प्रकार `गीतावली` की भाषा तो अत्यधिक प्रौढ़ हो गयी है ।

गीतावली और सूरसागर के पदों में कुछ समानता दिखायी पड़ती है ।

सूरसागर

आजु दसरथ कैं आंगन भीर ।
ये भू भार उतारन कारन प्रगटे स्याम सरीर ।[२]

गीतावली

आजु सुदिन सुभ घरी सुहाई ।
रूप सील गुन धाम राम नृप-भवन प्रगट भए आई ।।[३]

१- तुलसी मानस रत्नाकर - डा०भाग्यवती सिंह,पृष्ठ-१८७

२- सूरसागर-संपादक नन्ददुलारे वाजपेयी,पृष्ठ-१६१

३- गीतावली -हनुमान प्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-१७ बालकाण्ड

और भी कुछ पदों में साम्य दृष्टिगोचर होता है ।

रस-योजना :- नाना रसों की सुमधुर योजना इसमें हुई है । श्रृंगार, वीर, रौद्र, करुण आदि रस इसमें दृष्टिगोचर होते हैं । श्रृंगार की उन्मत्त धारा इसमें प्रवाहित नहीं । श्रृंगार के दोनों पक्षों का चित्रण इसमें मिलता है । लेकिन नाम-मात्र के लिए इस रस की योजना हुई है ।

सखिन सहित तेहि औसर बिधि के संजोग ।
गिरिजाजू लखन राम जाने रतिपति काम ।।
राघौजू श्रीजानकी लोचन मिलिबे को मोद ।
कहिबे को जोगु न मैं बातें सी बनाई है ।
स्वामी सीय सखिन्ह लखन तुलसी को तैसो ।
तैसो मन भयो जाकी जैसिये सगाई है । [१]

वियोग का प्रसंग भी इसमें मिलता ह । राम से वियुक्त सीता की विरह-वेदना का चित्रण देखिए :-

मेरे नयन चकोर प्रीति बस राका ससि मुख दिखरावहिंग ।
मधुप मराल मोर चातक ह्वै लोचन बहु प्रकार धावाहिंग ।
बिरह अगिनि जरि रही लता ज्यों कृपादृष्टि जल पलुहावहिंगे ।
निज वियोग दुख जानि दयानिधि मधुर वचन कहि समुझावहिंगे । [२]

वन-गमन -प्रसंग पर करुणा-रस की निष्पत्ति हुई है ।

१- गीतावली-हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-१२०, बालकाण्ड
२- गीतावली-हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-३०३, सुन्दरकाण्ड (तुलसीकृत)

राघौ ! कौन जतन घर रहिहौं ?
बार बार भरि अंक गोद लै ललन कौन सों कहिहौं ।
इहि आंगन बिहरत मेरे बारे तुम सो संग सिसु लीन्हें ।
कैसे प्रान रहत सुमिरत सुत बहु बिनोद तुम कीन्हें ।
जिन्ह श्रवननि बनगवन सुनति हौं मोते कौन अभागी ।
जुग सम निमिष जाहिं रघुनंदन वदन कमल बिनु देखे ।
जो तनु रहै बरष बीते बलि कहा, प्रीति इहि लेखे ।।[१]

गीतावली में वात्सल्य रस का परिपाक अन्य ग्रन्थों से कुछ अधिक है । इस ग्रन्थ में तुलसी की लेखनी ने वात्सल्य रस के क्षेत्र में अपनी पूरी सिद्धहस्तता दिखायी है ।

स्तनपान करानेवाली यशोदा माता और उसके दुधमुँहे बच्चे का चित्रण कितना हृदय ग्राही हो गया है ।

सुभग सेज सोभित कौसल्या रुचिर राम सिसु गोद लिये ।
बार बार बिधुबदन बिलोकति लोचन चारु चकोर किये ।
कबहुं पौढ़ि पयपान करावति कबहुं राखति लाइ हिये ।
बालकेलि गावति हलरावति पुलकति प्रेम पीयूष पिये ।।[२]

१- गीतावली हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-१०७ , अयोध्याकाण्ड
२- ,, ,, पृष्ठ-३६ बालकाण्ड

उत्तरकाण्ड में शान्त रस का परिपाक द्रष्टव्य है ।

सूत मागध प्रवीन बेनु बीना धुनि द्वारे गायक सरस राग रागे ।
स्यामल सलोने गात आलस बस जंभात प्रिया प्रेमरस पागे ।
उनींदे लोचन चारु , मुख सुखमा सिंगार हेरि हारे मार भूरि भागे ।।
सहज सुहाई छवि उपमा न लहैं कवि मुदित बिलोकन लागे ।
तुलसीदास निसि बासर अनूप रूप रहत प्रेम अनुरागे ।।[१]

इस प्रकार रसयोजना की दृष्टि से गीतावली एक सफल रचना है ।

विनयपत्रिका :-

गोस्वामीजी कृत और एक गीतिकाव्य है विनयपत्रिका । इसमें भक्त कवि के मानस की भक्ति सरणी अविराम रूप से प्रवाहित हुई है जो अत्यधिक सुमधुर होउठी है । यह ग्रन्थ भक्तों के कंठ का आभूषण है । भक्ति-काव्यों में यह अनुपम ग्रन्थ ` मानस ` के बाद गोस्वामीजी की उत्कृष्ट रचना निकलती है ।

कलियुग के कराल और भीषण अत्याचारों से पीडित समाज का उद्धार करने केलिए प्रार्थना रूप में यह ` पत्रिका ` राम के दरबार में उन्होंने भेजी थी । इसमें पत्रिका भेजने से लेकर उसे स्वीकार करने तक का वर्णन मिलता है ।

१- गीतावली - हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-३८२,उत्तर काण्ड (तुलसीकृत)

गेय पदों में लिखे हुए इस ग्रन्थ में अनेक रागों का प्रयोग हुआ है। राग-रागिनियों में रचित पदों से गोस्वामीजी का, संगीत के प्रति, अनुराग व्यक्त होता है।

लेकिन इसे गीतिकाव्य मानने को कुछ विद्वान तैयार नहीं। आचार्य सीताराम चतुर्वेदी इसे विनय के पदों में लिखा हुआ सुविस्तृत पत्र मानते हैं।[१]

डा० रामकुमार वर्मा विनयपत्रिका को पूर्ण रचना मानते है। वे कहते हैं कि रचना-तिथि का निर्देश न देने के कारण और विचारों की विश्रृंखलता के कारण इसे संग्रह-ग्रन्थ मानने वाले कुछ विद्वान हैं।[२]

डा० माताप्रसाद गुप्त जी का मत है कि गीतावली की भांति विनयपत्रिका भी एक संग्रह काव्य ग्रन्थ है। संग्रह ग्रन्थ मानना अधिक उचित सा लगता है।

रचनाकाल :- इस ग्रन्थ में रचना-तिथि के संबन्ध में कवि ने कुछ भी नहीं कहा है।

डा० माताप्रसाद गुप्त का कहना है - रामगीतावली ` को विनयपत्रिका ` रूप कब मिला यह कहना कठिन है।

रामगीतावली का यह परिवर्धित संस्करण उसके कुछ समय पीछे संकलित हुआ और असंभव नहीं कि रामगीतावली की उक्त प्रति की तिथि, संवत् १६६६ के बाद की हो, फिर भी यह प्राय: निश्चित माना जा सकता है कि विनय-

---

१-हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-४२८

२-हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-४२८, पंचम संस्करण, १६६४

पत्रिका पाठ का संकलन कवि ने स्वत: अपने जीवन काल में किया होगा ।`[१]

बाबू श्यामसुन्दरदास का मत है :- मूल चरित के अनुसार गोस्वामीजी ने ` रामचरित मानस ` के अनंतर विनयपत्रिका ही लिखी । ——— अतएव १६६३ और १६३६ के बीच में किसी समय विनयपत्रिका बनी होगी । [२]

वेणीमाधवदास ने विनयपत्रिका का रचनाकाल संवत् १६३६ के लगभग दिया है, जब वे मिथिला यात्रा केलिए प्रस्थान करनेवाले थे । [३]

डा० रामदास गौड, डा० श्यामसुन्दरदास जी के अनुमान से सहमत होकर कहते हैं - ` विनयपत्रिका ` का निर्माण तो रामचरित मानस के कुछ ही उपरान्त मानना ठीक प्रतीत होता है । क्योंकि रामचरितमानस के प्रचारोपरान्त उस पर प्रतिकूल टीका टिप्पणियां हुई होंगी और गोस्वामीजी को विविध कष्ट मिले होंगे, जिनके निवारणार्थ यह अर्जी उपस्थित की गयी ।[४]

पं० रामनरेश त्रिपाठी का मत है :- विनयपत्रिका तुलसीदास का अन्तिम ग्रन्थ है । इसका संकलन तुलसीदास ने स्वयं किया था - - - - - । यह आदि से अन्त तक एक उद्देश्य को लक्ष्य में रखकर लिखा गया है । इसकी रचना कवि की एक बैठक की नहीं जान पडती । संभव है, संवत् १६४० में

१- तुलसीदास-डा० माताप्रसाद गुप्त,पृष्ठ-२५२

२- गोसाईं चरित -वेणीमाधव दास -दोहा-५१,हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (डा०रामकुमार वर्मा)से उद्धृत,पृष्ठ-४१७

२- गोस्वामी तुलसीदास-डा०श्यामसुन्दर दास,पृष्ठ-७८-७६ द्वितीय संस्करण१६५२

४- गोस्वामी तुलसीदास-व्यक्तित्व,दर्शन,साहित्य- रामदत्त भारद्वाज पृष्ठ-३३१

इसके कुछ पद बने हों और फिर सब को मिलाकर संवत् १६६६ के बाद पत्रिका पूर्ण कर दी गई हो । इसमें काशी की महामारी का कहीं भी संकेत नहीं है । इससे निश्चय ही यह संवत् १६६८ के पहले बन चुकी थी ।' [१]

डा० रामकुमार वर्मा भी त्रिपाठी जी के मत से सहमत हैं ।

हमें भी उपर्युक्त विद्वानों के कथन से सहमत होना अच्छा लगता है । ' विनयपत्रिका ' कवि की वृद्धावस्था में लिखी रचना मालूम पड़ती है । निम्नलिखित पंक्तियों पर ज़रा ध्यान देना है :-

तुलसीदास अपनाइये कीजे न ढील,
अब जीवन अवधि अति नेरे ।।[२]

' विनयपत्रिका ' की इन पंक्तियों से हमें यह सूचना मिलती है कि गोस्वामीजी को इस दुनिया से विदा लेने का समय निकट आ गया है अर्थात् वे मृत्यु के पास ही खड़े हैं । अतः संवत् १६६८ के पहले ' विनयपत्रिका ' का रचनाकाल मानना चाहिए ।

<u>काव्य-शरीर</u> :- मंगलाचरण के रूप में विघ्नेश्वर की स्तुति मिलती है । फिर अनेक देवी-देवताओं की स्तुति है । रामचन्द्र जी की कीर्ति गाने के पश्चात् व्यक्तिगत जीवन की वेदना से परिपूरित चित्र गोस्वामीजी उपस्थित करते हैं । इसके बाद कलियुग की कुरीतियों का वर्णन है । इन कलियुगीन कुरीतियों से दु:खी होकर इनसे समाज की रक्षा करने के लिए वे यह ' पत्रिका राम के दरबार में पेश करते हैं । इसके साथ साथ यह ग्रन्थ समाप्त हो जाता है ।

१- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-२२६

२- विनयपत्रिका- राजनाथ शर्मा (टीकाकार) पृष्ठ-५२७
प्रथम संस्करण, १९६३

अलंकार:- अलंकारों की दृष्टि से ` विनयपत्रिका ` का अध्ययन करना है।
रूपक अलंकार की छटा देखिए :-

हरि तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों
साधन-धाम विबुध, दुरलभ , तनु मोहि कृपा करि दीन्हों ।
कोटिहुं मुख कहि जात न प्रभु के एक एक उपकार ।
तदपि नाथ कछु और मांगिहों दीजे परम उदार ।
विषय वारि मन मीन भिन्न नहिं होत कबहुं पल एक ।
ताते सहों विपति अति दारून जनमत जोनि अनेक ।
कृपा डोरि बनसी पद अंकुस परम प्रेम मृदु चारो ।
एहि विधि बेधि हरहु मेरो दुख कौतुक राम तिहारो ।
हों स्तुति बिदित उपाय सकल सुर केहि केहि दीन निहोरै ।
तुलसिदास यहि जीव मोह रजु सोइ बांध्यो सोइ छोरै । [१]

रस:- विनयपत्रिका में केवल शान्त रस की धारा उमड़ पड़ी है।` मानस को छोडकर इसी ग्रन्थ में इस रस की इतनी अधिक पुष्टि हुई है।

ऐसे राम दीन हितकारी ।
अति कोमल करुना निधान बिनु कारन पर उपकारी ।
साधन हीन दीन निज अघबस सिला भई मुनि नारी ।
गृह तें गवनि परसि पद पावन घोर साप तें तारी ।।[२]

भाषा:- ब्रजभाषा में रचित इस ग्रन्थ में तत्सम और तद्भव शब्दों का प्रयोग बहुत सुन्दर हुआ है। तत्सम शब्द अधिक मात्रा में दीख पडते हैं। भाषा की सरलता की ओर नज़र डालिए :-

---

१- विनयपत्रिका-रामनाथ शर्मा , पृष्ठ-६६, (तुलसीकृत)
२- ,, ,, पृष्ठ-३६३

ऐसो को उदार जग मांही ।
बिनु सेवा जो द्रवे दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ।
जो गति जोग बिराग जतन करि नहिं पावत मुनि ग्यानी ।
सो गति देत गीध सबरी कहं प्रभु न बहुत जिय जानी ।। [१]

सिरसि संकुचित कला जटा पिंगल जटा पटल सतकोटि विद्युच्छटायं । [२]

इन पंक्तियों में भाषा अत्यधिक सुन्दर है । इस प्रकार के उदाहरण जगह जगह पर द्रष्टव्य हैं । संस्कृत पदों का व्यवहार भी इस ग्रन्थ में देख सकते हैं ।

मोह तम तरनि हर रुद्र संकर सरन,
हरन मम सोक लोकाभिरामं ।
भाल ससि भाल, सुबिसाल लोचन ,
कमल काम सत कोटि लावन्य धामं ।। [३]

इसमें अरबी, फारसी , बुन्देलखण्डी शब्दों का प्रयोग हुआ है ।

समन्वय-भावना :- गोस्वामीजी की समन्वय-भावना का स्पष्ट उदाहरण है यह ग्रन्थ । राम की भक्ति के साथ साथ वे शिव की भक्ति में भी तल्लीन थे । शैव-धर्म से प्रेरित होने के कारण ही काशी का वर्णन उन्होंने किया है ।

' तुलसी बसि हरपुरी राम जपु जो भयो चहे सुपासी ।

१- विनयपत्रिका - रामनाथ शर्मा , पृष्ठ-३५७
२- ,, ,, पृष्ठ-७६
३- ,, ,, पृष्ठ-७४

संगीतात्मकता :- गीतिकाव्य होने के कारण संगीतात्मकता का निर्वाह अनिवार्य है । संगीत के ज़रिये भावों का प्रकाशन सहज हो जाता है । संगीत की लहरें इसमें तरंगायित हैं । अनेक पद राग-रागिनियों में लिखे गये हैं । भक्त-भ्रमर इस ग्रन्थ के संगीत लोक की अलौकिकता में निमग्न होकर सब कुछ भूल जाते हैं ।

डा० भाग्यवती सिंह ने ठीक ही लिखा है :-

> अत: विनयपत्रिका भक्ति-प्रधान गीतिकाव्य है जो आज भी भक्त-भ्रमरों के अर्थ,अनुराग, मकरन्द रस प्रभावित कर रहा है और भक्तों का आज भी कण्ठहार है । ` [१]

सभी दृष्टियों से देखने पर भी विनयपत्रिका एक उत्कृष्ट कृति निकलती है । विनयपत्रिका के रचना-कौशल पर मुग्ध होकर डा० भगीरथ मिश्र ने यों कहा है :-

> रामचरित मानस यदि ज्ञान रत्नाकर है तो विनयपत्रिका भावाम्भोधि है । ` [२]

तुलसी सतसई :- यद्यपि ` तुलसी सतसई ` को प्रामाणिक कृति नहीं माना गया है तो भी कुछ विद्वानों ने इस कृति की प्रामाणिकता को स्वीकार किया है । डा० श्यामसुन्दर दास , पं० रामदत्त भारद्वाज, रामनरेश त्रिपाठी, स्व० शिवनन्दन सहाय आदि विद्वान ` सतसई ` को गोस्वामीजी की एक रचना मानने के लिए तैयार हैं । कुछ विद्वान इसे तुलसीकृत मानने में सन्देह प्रकट करते हैं ।

१- तुलसी मानस रत्नाकर - डा० भाग्यवती सिंह, पृष्ठ-८४

२- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र, पृष्ठ-८४

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी और डा० भगीरथ मिश्र के ग्रन्थों में यथाक्रम गोस्वामीजी तुलसीदास, तुलसी रसायन, ' सतसई ' का उल्लेख नहीं मिलता । पं० रामगुलाम शर्मा और महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी हमारे गोस्वामीजी को ' सतसई ' के रचयिता नहीं मानते ।

डा० माताप्रसाद गुप्त जी का कहना है :- ' सतसई ' की प्रतियां बहुत थोड़ी प्राप्त हुई हैं । जो प्राप्त भी हुई हैं, उनमें से कोई ऐसी नहीं है, जो बहुत प्राचीन हो, और पाठ भी उनका, जहां तक पता चलता है, मुद्रित प्रति के पाट से कोई महत्त्वपूर्ण अन्तर नहीं रखता ।' [१] गुप्तजी इन्हीं कारणों से ' सतसई ' का अधिक परिचय देना अनावश्यक मानते हैं ।

आचार्य चन्द्रबली पांडेय ' सतसई ' को तुलसीकृत नहीं मानते । इसमें कहीं तुलसीदास का प्राण भी है ? कहने को प्रबन्ध है ; श्रोता है, घाट है, पर है वास्तव में कुछ भी नहीं जो इसको तुलसी की रचना सिद्ध कर सके । अस्तु किसी भी दृष्टि से इस ' सतसई ' को गोस्वामी तुलसीदास की सतसई कहना ठीक नहीं । उनकी रचना यह हो नहीं सकती ; नकल चाहे जिसकी हो' । [२]

इन विद्वानों के कहने के अनुसार ' सतसई ' को गोस्वामीजी कृत मानने में कुछ कठिनाई है । प्रमाणों के आधार पर ही कुछ कह सकते हैं ।

१- तुलसीदास - डा०माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२२६

२- तुलसीदास - आचार्य चन्द्रबली पांडेय, पृष्ठ-७८

मा न स - ए क अ ध्य य न

रामचरितमानस :-

हिन्दी साहित्य जगत का सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ-रत्न है। रामचरित मानस। अपनी कृति-वाटिका में भक्तिरूपी मकरन्द की वर्षा कर सभी को शीतल बनाने वाले अमर कवि हैं गोस्वामीजी। राम भक्तों में वे मूर्धन्य स्थान के अधिकारी हैं। इस मानस सरोवर में निमज्जित होने से मन का सारा कल्मुष हीने के कारण मनुष्य निर्मल हो जाते हैं। भक्त-भ्रमर इस मानस-मन्दाकिनी में अवगाहन करने से भक्ति-रस से आप्लावित हो उठते हैं। आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के शब्द कितने सार्थक निकले हैं।

> संसार के साहित्यों में रामचरित मानस की जोड़ का दूसरा कोई ग्रन्थ नहीं है। इसमें गोस्वामीजी ने भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साहित्य, नीति, आदर्श समाज और राज्य-व्यवस्था सबका निचोड़ भर भरा है।` [१]

रामनरेश त्रिपाठी `मानस` पर अत्यधिक मोहित हो उठे हैं :-

> हम जितने ही गहरे जाते हैं उतना ही उनके अद्वितीय रामायण की अद्भुत प्रतिमा देखकर चकित हो जाते हैं।` [२]

मानस का रचनाकाल:-

मानस में कवि ने स्वयं इस ग्रन्थ के रचनाकाल के संबंध में कहा है -

---

१- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठ-६२

२- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-१३४

संवत् सोलह पै इकतीसा । करौं कथा हरि पद धरि सीसा ।
नौमी भौमवार मधुमासा । अवधपुरी यह चरित प्रकासा ।। [१]

अर्थात् गोस्वामीजी ने संवत् १६३२ चैत्र शुक्ला नवमी मंगलवार को अयोध्या में रामचरितमानस की रचना का प्रारंभ किया ।

पं० रामनरेश त्रिपाठी जी का मत है :- तुलसीदास ने अयोध्या में पहले पहल अयोध्याकांड लिखा था । ` अवधपुरी ` यह चरित प्रकासा ` यही ध्वनि निकलती भी है ।` [२]

वे निम्नलिखित पंक्तियों को इसके प्रमाण-स्वरूप स्वीकार करते हैं :-

श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि ।
बरनौं रघुबर विमल जसु , जो दायकु फल चारि ।। [३]

डा० माताप्रसाद गुप्त जी मानस की रचना नवमी ` मगलवार ` के बदले ` बुधवार मानने वाले विद्वानों से अधिक सहमत है । इसी कारण वे संवत् १६३२ के चैत्र शुक्ल में नवमी बुधवार को मानस का रचनाकाल मानते हैं । [४]

वेणी माधवदास, डा० रामकुमार वर्मा, बाबू श्यामसुन्दर दास, डा० रामदत्त भारद्वाज, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, डा० भगीरथ मिश्र ये सभी विद्वान मानस का रचनाकाल संवत् १६३२ चैत्र शुक्ला नवमी मंगलवार को मानते

१- रामचरित मानस-पं० विजयानन्द त्रिपाठी, पृष्ठ-८६ बालकाण्ड
२- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृष्ठ-११६
३- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी , अयोधाकाण्ड, पृष्ठ-३
४- तुलसीदास - डा० माताप्रसाद गुप्त, पृष्ठ-२३६

है । इसी कारण इस तिथि को ठीक मानना उचित है ।

मानस में कवि ने ग्रन्थ का समाप्ति-काल नहीं दिया है । मूल गोसाई चरित में वेणी माधव दास ने संवत् १६३३ वि० को 'मानस' की समाप्ति मानी है ।[१]

कुछ विद्वान मानते है कि अरण्यकाण्ड तक की रचना उन्होंने अयोध्या में की और बाकी काण्डों की रचना काशी में ।

डा० श्यामसुन्दर दास जी का अनुमान है 'गोसाई जी ने अरण्य-काण्ड तक तो उसे अयोध्या में लिखा और शेष अंश काशी में ।'[२]

वेणी माधवदास जी ने अयोध्या में ही संपूर्ण ग्रन्थ की रचना माना है ।

निष्कर्ष यह निकलता है कि कवि ने अयोध्या में ही रहकर संपूर्ण मानस की रचना की पूर्ति की । इस अनुमान को ठीक मानना उचित लगता है ।

<u>मानस के आधार-ग्रन्थ</u>

कवि गोस्वामीजी बालकाण्ड में लिखते हैं :-

१- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठ-५१
२- गोस्वामी तुलसीदास- डा० श्यामसुन्दर दास, पृष्ठ-७५

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्,
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।
स्वान्त: सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा -
भाषा निबन्ध मति मंजुल मातनोति । [१]

अर्थात् अनेक पुराण, वेद,शास्त्र आदि से जो कुछ सम्मत है, रामायण में लिखा है, अन्यत्र भी जो कुछ कहा गया है, उसी को गोस्वामीजी ने अपने सुख केलिए भाषा में पुन: लिखा । इससे स्पष्ट है कि तुलसीदास ने वेद,पुराण वाल्मीकि रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थों का आधार ग्रहण किया है । मुख्यत: वाल्मीकि रामायण रामकथा का उद्गम प्रतीत होता है ।

मानस के अध्ययन से ज्ञात होता है कि कवि ने अनेक संस्कृत ग्रन्थों का आश्रय ग्रहण किया है । ' संस्कृत नन्दन कानन में विचरण करके तुलसीदास रूपी मधुप ने समस्त फूलों का रस लेकर जो मधु तैयार करके हिन्दू जाति को दान में दिया है उसकी तुलना संसार के किसी दान से नहीं की जा सकती । [२]

गोस्वामीजी ने वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, श्रीमद्भागवत, प्रसन्नराघव, हनुमन्नाटक आदि ग्रन्थों से काफ़ी सहायता ग्रहण की है । संस्कृत के और अनेक ग्रन्थों का रूपान्तर करके इसमें प्रयुक्त किया है -

भगवद्गीता, अगस्त्य रामायण, अग्निवेश - रामायण, आनन्द-रामायण,उत्तररामचरित, कुमारसंभव, गर्गसंहिता, गालव संहिता, चंपू-रामायण चाणक्य-नीति, देवी-भागवत, पंचतंत्र, पद्मपुराण, पराशर-संहिता,भट्टिकाव्य, प्रस्ताव-रत्नाकर , रघुवंश,हितोपदेश,सुभाषित-रत्न-भंडागार,अग्निपुराण,

---

१- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी,पृष्ठ-४ बालकाण्ड

२- तुलसीदास और उनका काव्य, पं० रामनरेश त्रिपाठी,पृष्ठ-१३४

शिवपुराण आदि कितने ही ग्रन्थों का आधार उन्होंने ग्रहण किया है ।

' रामचरित मानस ' की मूलकथा का आधार ' वाल्मीकि - रामायण होने पर भी ' मानस ' की कथा कुछ स्थलों पर वाल्मीकि-रामायण से भिन्नता रखती है ।

' आध्यात्म रामायण ' का प्रभाव मानस पर खूब पडा है । ' महाभारत ' की रामकथा की जांच भी उन्होंने की और उससे भी लाभ उठाया है । ' भागवत ' के आधार पर गोस्वामीजी ने कलियुग की करालता का चित्र खींचा है ।

' प्रसन्न राघव ' में राम-सीता के प्रथम दर्शन का चित्रण , परशुराम और लक्ष्मण के बीच का संवाद- इन घटनाओं का जो वर्णन मिलता है, इन्हीं को ' मानस ' में भी स्वीकार किया है ।

इन सभी ग्रन्थों का आधार ग्रहण करते हुए भी गोस्वामीजी ने नूतन कथा प्रसंगों की योजना करके ' मानस ' को अत्यधिक मनोरम बना दिया है ।

वाल्मीकि रामायण :-

आदि कवि ने विष्णु के रूप में रामचन्द्र को माना है । लेकिन गोस्वामीजी ने त्रिदेवों से ऊंचा स्थान राम को दिया है ।

फुलवारी में राम-सीता का पहला मिलन ' वाल्मीकि रामायण में वर्जित है । लेकिन ' मानस ' में इसका हृदयहारी वर्णन मिलता है ।

मन्थरा - वाला प्रसंग दोनों ग्रन्थों में भिन्नता रखता है ।

जयन्त-वाली कथा और हनुमान-राम के मिलन की कथा में भी परिवर्तन आ गया है । ग्रन्थ का उपसंहार वाल्मीकि-रामायण से भिन्न है

और कुछ प्रसंगों पर भी भिन्नता आयी है।

अध्यात्म रामायण :-

अध्यात्म - रामायण में उमा महेश्वर संवाद के रूप में कथा मिलती है तो मानस में चार वक्ता और चार श्रोता के ज़रिये बात को संभाला है। ' मानस ' में अध्यात्म रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा का समावेश नहीं हो पाया है।

' अध्यात्म रामायण ' में राम ' विष्णु ' का अवतार मानागया है। ' मानस ' का दृष्टिकोण ' अध्यात्म रामायण ' से अधिक सहारा पाता है। ' वाल्मीकि रामायण ' की कथा ' मानस ' की कथा केलिए करीब स्वीकृत है और सामग्री ' अध्यात्म रामायण ' से ली है।

' प्रसन्न राघव ' की निम्नलिखित पंक्ति ' मानस ' की पंक्ति से मेल खाती है।

प्रसन्न राघव :-

> अयि देव्याकर्ण्य तावत्त्वत् संदिष्टं देवेन देव्या हिमांशुखण्डांशुर्नवजल
>
> धरो दावदहन : ।[1]

मानस

> कहेउ राम वियोग तव सीता । मो कहं सकल भय विपरीता ।
> नव तरु किसलय मनहुं कृसानू । काल निसा सम निसि ससि मानू ।।[2]

१- प्रसन्न राघवम्- महाकवि श्री जयदेव विरचितं , व्याख्याकार आचार्य शेष राज शर्मा, पृष्ठ-३४६-३४७, द्वितीय संस्करण, सं०२०२०

२- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी- सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-६६

कथावस्तु:- मंगलाचरण के बाद सुर-वन्दना, गुरु-वन्दना,समष्टि-वन्दना सन्त-वन्दना, राम-चरणों के प्रति प्रेम, खलों की वन्दना, इसी प्रकार की अनेक वन्दनाओं के बाद कथावस्तु का विस्तार होता है । सात-काण्डों में कथा की व्याप्ति हुई है । राम-जन्म से लेकर राज्याभिषेक तक की कथावस्तु का वर्णन इसमें मिलता है । फिर राम-राज्य की विशेषता,कलि-युग वर्णन आदि भी मिलते हैं ।

महाकाव्यत्व :- रामचरित मानस नि:स्सन्देह एक महाकाव्य कहा जा सकता है । महाकाव्य के सभी लक्षण इसमें स्पष्टत: दीख पडते हैं । अलंकार, रस, शैली, आदि सभी काव्य-गुणों से पुष्ट रचना है ` मानस ` । दोहा - चौपाइयों में मानस महाकाव्य की रचना हुई है। प्रमुख रूप से शान्त रस का चित्रण होने पर भी श्रृंगार,वीर,हास्य, करुण,रौद्र, वीभत्स आदि नव रसों की सुन्दर योजना भी इसमें हुई है । श्रृंगार-रस का वर्णन मर्यादा की सीमित परिधि के अन्तर्गत हुआ है , वह अत्यधिक हृदय-हारी बन गया है ।

गोस्वामीजी का मर्यादित श्रृंगार -वर्णन विद्वानों से प्रशंसित है ।

पं० उदय भानुसिंह मानते है - ` सभी दृष्टियों से ` रामचरित मानस ` उत्कृष्ट कोटि का महाकाव्य है । वह तुलसी की महती प्रतिभा का महिमामय फल है । ` १

पारिवारिक बात :- एक सुगठित परिवार का चित्र ` मानस ` के द्वारा कवि ने हमारे सामने उपस्थित किया है । इस परिवार में कोई भी सदस्य एक दूसरे के प्रति वैराग्य-भाव नहीं रखतो । सब अंग मिल जुलकर एक दूसरे की सहायता कर सुख से जीते हैं । इस दशरथ-परिवार द्वारा एक आदर्श समाज का चित्रण तुलसी का लक्ष्य प्रतीत होता है । सामाजिक मर्यादाओं पर

१- तुलसीकाव्य मीमांसा- उदयभानु सिंह - पृष्ठ-४३७

उनका ध्यान अत्यधिक रहा है। पिता, माता, पुत्र, पति, पत्नी, भाई, बहन, मित्र, सेवक, स्वामी इन लोगों के पारस्परिक व्यवहार पर तुलसी की कलम चली है। इसके द्वारा वे लोकशिक्षा के प्रचारक भी बन गये।

देखिए :-

एहि ते अधिकु धरमु नहिं दूजा।
सादर सास ससुर पद पूजा ।।
जब जब मातु करिहि सुधि मोरी।
होइहि प्रेम विकल मति भोरी ।। [१]

माता-पिता का संतान के प्रति वात्सल्य

इसमें सन्देह नहीं है कि माता-पिता के हृदय में पुत्र के प्रति वात्सल्य की मधुरवर्षिणी धारा ही बहती है। 'मानस' में पारिवारिक जीवन के इस पहलू का मनोरम चित्रण हुआ है।

'धूसर धूरि भरे तनु आये। भूपति विहँसि गोद बैठाये। [२]

वनवास केलिए जाने के पहले राम जब कौशल्या के पास आते हैं तब मानों वात्सल्य की एक नदी ही कौशल्या के हृदय में उमड़ पड़ती है।

वह प्रसंग देखिए :-

बार बार मुख चुंबति माता। नयन नेह जलु पुलकित गाता।
गोद राखि पुनि हृदयं लगाये। स्रवत प्रेम रस पयद सुहाये। [३]

१- रामचरित मानस - अयोध्याकाण्ड (विजयानन्द त्रिपाठी) पृष्ठ-६३
२- ,, बालकाण्ड ,, पृष्ठ-३५१
३- ,, अयोध्याकाण्ड ,, पृष्ठ-८१

माता-पिता के आज्ञापालन की महत्ता पर गोस्वामीजी ज़ोर देते हैं :-

मातु पिता गुरु स्वामि सिख , सिर धरि करहिं सुभायं ।
लहेउ लाभु तिन्ह जनम कर नतरु जनम जग जायं ।।[१]

पिता के वचन का पालन करने केलिए राम वन चले गये । यहां पिता और पुत्र के बीच का संबन्ध कितना आदर्शमय निकला है, कितना पवित्र निकला है ।

राम कहते है -

धरम धुरीन धरम गति जानी । कहेउ मातु सन अति मृदु बानी ।
पिता दीन्ह मोहि कानन राजू । जहं सब भांति मोर बड़ काजू ।।[२]

परिवार के सभी अंग आपस में प्रेम के सूत्र में बन्धित होना चाहिए । अन्यथा पारिवारिक, जीवन का क्या महत्व होता है ?

भ्रातृ-स्नेह :- वन-वास की समाप्ति पर राम जब अयोध्या लौट आते हैं तब भरत के हृदय में भाई के प्रति प्रेम का एक सागर ही उमड़ पड़ता है । भाई-भाई के बीच का वह प्रेम-सूत्र किससे टूटा जाता है ? दोनों भाई गले लगाते हैं और वैसे उस पुनीत बन्धन को आदर्श बनाते हैं ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी, अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१०६

२- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी, अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-८२

गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज ।
नमत जिनेहि सुर नर मुनि संकर अज ।
परे भूमि नांहि उठत उठाये ।
बर करि कृपा सिंधु उर लाये ।
स्यामल गात रोम भए ठाढे ।
नव राजीव नयन जल बाढे ।। [१]

सब कुछ त्यागकर , अपनी प्राणप्रिया ऊर्मिला को छोड़कर , भाई राम के चरणकमलों का अनुगमन कर वन जानेवाले लक्ष्मण को देखिए :-

गुरु पितु मातु न जानऊं काहू ।
कहऊं स्वभाव नाथ पतिआहू ।।
जहं लगि जगत सनेह सगाई ।
प्रीति प्रतीति निगम निजु गाई ।
मेरे सबइ एक तुम्ह स्वामी ।
दीनबन्धु उर अंतरजामी ।। [२]

गुरु-शिष्य:- गुरु और शिष्य के संबन्ध को गोस्वामीजी अत्यधिक श्रेष्ठ मानते हैं । उनके बीच का व्यवहार आदर्श-निष्ठ होना चाहिए ।

सहज सुहृद गुरु-स्वामि सिख, जो न करइ सिर मानि ।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हित हानि ।। [३]

१- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी - उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१४
२- ,, ,, अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१०८
३- ,, ,, ,, पृष्ठ-९६

गुरु और स्वामी ये दोनों स्वाभाविक रूप से हितचिन्तक होते हैं। इनकी शिक्षा का पालन न करनेवाला अवश्य पछताता है, उसके हित की हानि होती है। गोस्वामीजी यही शिक्षा देते हैं कि गुरुजनों के वचन का पालन करने पर ही कल्याण होता है। 'मानस' में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।

गोस्वामीजी गुरु को अत्यधिक पूज्य-भावना से देखनेवाले हैं। गुरु ज्ञान-राशि का संचित कोश है। वे ही हमारे अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर कर देते हैं। गुरु के प्रति राम की पूज्य-भावना देखिए :-

गुरु आगमन सुनत रघुनाथा। द्वार आइ नायउ पद माथा।
सादर अरघ देइ घर आने। सोरह भाँति पूजि सनमाने। [१]

सेवक-स्वामी-संबन्ध :- सेवक और स्वामी आपस में प्रेम के सूत्र में बन्धित होना चाहिए। सच्चा सेवक अपने स्वामी की भलाई केलिए सब कुछ त्याग देता है। भरत का कहना है

जो सेवकु साहिबहि संकोची। निज हित चहइ तासु मति पोची।
सेवक हित साहिब सेवकाई। करइ सकल सुख लोभ बिहाई। [२]

डा०श्यामसुन्दर दास जी का कहना है :- 'इस परिवार का प्रत्येक व्यक्ति समाज के सामने कोई न कोई आदर्श उपस्थित करता है। दशरथ सत्य प्रतिज्ञता और पुत्र प्रेम के, राम पितृ-भक्ति के, भरत भ्रातृ भक्ति के, लक्ष्मण अपूर्व सहन-शक्ति के, कौशल्या प्रेममयी माता का और सीता पति-परायणा

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी- अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ २५-२६

~~- गोस्वामी तुलसीदास- डा०श्यामसुन्दर दास- द्वितीय संस्करण-१९५२,पृष्ठ-१५०-१५१~~

२- रामचरितमानस - विजयानन्द त्रि० - अयोध्याकांड - पृष्ठ-३५६

पत्नी का आदर्श है। कैकेयी भी जगत के सामने एक आदर्श रखती है, वह है पश्चस्ताप का आदर्श।` [१]

दांपत्य-प्रेम :- आदर्श दांपत्य-प्रेम का प्रोद्घाटन कवि ने किया है। सीता के हृदय में राम के साथ वन जाने की उत्कट अभिलाषा रहती है। अपने पति केलिए वह वन के कष्टों को अत्यधिक खुशी के साथ फेलने केलिए तैयार है। पति के वियोग में पत्नी क्या कुछ सुख अनुभव कर सकती है ?

सीता कहती है :-

खग मृग परिजन नगर वन, वलकल विमल दुकूल।
नाथ साथ सुर सदन सम, परन साल सुख मूल।। [२]

दांपत्य-प्रेम का और एक सुन्दर पहलू देखिए। राम और लक्ष्मण में से अपने पति को केवल आंखों से इशारा करके सीता अपनी सखियों को दिखा देती है :-

`सहज सुभाय सुभग तन गोरे।
नामु लखन लघु देवर मोरे।।
बहुरि वदन बिधु अंचल ढांकी।
पिय तन चितइ भौंह करि बांकी।
खंजन मंजु तिरीछे नैननि।
निजपति कहेउ तिन्हहिं सिय सैननि।। [३]

दांपत्य प्रेम का इतना मर्यादित और सुमधुर चित्र और कहाँ मिल सकता है।

१- गोस्वामी तुलसीदास -डा० श्यामसुन्दर दास-द्वितीय संस्करण-१९५२पृष्ठ-१५०-१५१
२- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-९९
३- ,, ,, ,, पृष्ठ-१७०

दांपत्य-जीवन पारस्परिक विश्वास पर आधारित है । पति के बिना पत्नी का जीवन नरक-तुल्य है ।

जहं लगि नाथ नेह अरु नाते ।
प्रिय बिनु तियहिं तरनिहुं ते ताते ।।
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू ।
पति विहीन सबु सोक समाजू ।। [१]

<u>समाज का विस्तृत-चित्र:-</u> (मानस में सामाजिकता)

गोस्वामीजी ने सामाजिक मर्यादा से युक्त समाज को आदर्श माना है । उस प्रकार के सामाजिक जीवन का दिग्दर्शन मानस में कराया है ।

<u>मानस में धर्म :-</u> गोस्वामीजी जब अवतरित हुए उस समय हमारी धार्मिक-स्थिति अत्यधिक शोचनीय थी । उस समय धर्म के क्षेत्र में आपसी विद्रोह अपनी जड जमा चुकी थी । गोस्वामीजी ने उसे जड़ से उखाडने के लिए तन मन से काम किया । तुलसी ने अपनी अद्भुत प्रतिभा से शैवों, शाक्तों और वैष्णवों में आपसी मेल स्थापित किया । इस प्रकार उन्होंने धार्मिक विद्वेष का सर्वनाश कर डाला ।

वैष्णव-धर्म के अन्तर्गत उन्होंने शैवों, शाक्तों और पुष्टिमार्गियों को मिलाया ।

सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं । रामहि ते सपनेहुं न सोहाहीं ।
बिनु छल विस्वनाथ पद नेहू । राम भगत कर लच्छन एहू ।। [२]

१- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६८
२- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-२००

गोस्वामीजी ने ज्ञान और भक्ति के विरोध का परिमार्जन कर धार्मिक सिद्धान्तों में समानता स्थापित की ।

डा० रामकुमार वर्मा ने कहा है :- ` भक्ति की सर्वोच्च साधना ही तुलसीदास के धर्म की मर्यादा है ।` [१]

गोस्वामीजी ने धर्म की व्याख्या यों दी है :-

परहित सरिस धर्म नहिं भाई ।
पर पीडा सम नहिं अधमाई ।। [२]

वर्णाश्रम-धर्म :- भारत की समाज-व्यवस्था का आधार-स्तंभ वर्णव्यवस्था और आश्रम-धर्म है । व्यक्ति-स्वतंत्र ही उनकी वर्ण-व्यवस्था का उद्देश्य है । वे अवश्य वरनाश्रम-वादी थे । उन्होंने उत्तरकाण्ड में तत्कालीन सामाजिक दुरवस्था का चित्र खींचा है ।

बरन धरम नहिं आश्रम चारी । श्रुति विरोध रत सब नरनारी ।।
द्विज श्रुति बंचक भूप प्रजासन । कोउ नहि मान निगम अनुसासन ।। [३]

अनेक चौपाइयों में उन्होंने कलियुगीन सामाजिक दुरवस्था का चित्रण किया है । इस निम्नस्तर से समाज की उन्नति करना उन्होंने अपना कर्तव्य समझा । एक आदर्श सामाजिक व्यवस्था में वरनाश्रम-धर्म का अपना महत्वपूर्ण स्थान है ।

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-४५४

२- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी,उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-७७

३- ,, ,, ,, पृष्ठ-१६७

चारों वर्णों में जिस वर्ण में आध्यात्मिकता का अंश अधिक है उसे महत्व दिया जाता है। इस दृष्टि से ब्राह्मणों का सबसे अधिक महत्व है। गोस्वामीजी ब्राह्मणों को अत्यधिक आदर-भाव से देखते थे और समाज में उन्हें पूज्य स्थान भी देते थे।

गोस्वामीजी ने मानस के बालकाण्ड में ही विप्र की वन्दना की है :-

वंदौं प्रथम महीसुर चरना।
मोह जनित संसय सब हरना।। [१]

मनुस्मृति में कहा गया है :-

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा दानं प्रतिग्रहं
चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् । [२]

मानस में गोस्वामीजी ने अनेक चौपाइयों में ब्राह्मण की महिमा का गान किया है। ब्राह्मणों को वे इसलिए पूज्य मानते है कि वे ब्रह्मज्ञानी है। लेकिन वेद-विरुद्ध आचरण करने वाला ब्राह्मण पूज्य नहीं होता।

श्रेष्ठ आचरण करनेवाले शूद्र, क्षत्रिय, और वैश्य भी पूज्य होते हैं।

आश्रम व्यवस्था :- समाज में आश्रम-व्यवस्था के चार भाग माने गये हैं :-

ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और सन्यास आश्रम। सुसंगठित समाज की सृष्टि केलिए गोस्वामीजी ने आश्रम व्यवस्था पर ज़ोर दिया है।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड, पृष्ठ-१०

२- मनुस्मृति-अध्याय१, श्लोक ८८, हरगोविन्द शास्त्री, द्वितीय संस्करण-२०२१ पृष्ठ-२७

ब्रह्मचर्याश्रम में उपनयन के बाद बालक राम गुरु के पास जाकर ज्ञान अर्जित करता है।

गुरु गृह पढ़न गये रघुराई।
अल्प काल विद्या सब पाई। [१]

राम के आदर्श पारिवारिक जीवन में गृहस्थाश्रम नज़र आता है। दांपत्य जीवन का सुमधुर चित्रण इसमें मिलता है।

राम सीता को वन जाने से इनकार करने पर सीताजी का कहना है।

कंद मूल फल अमिअ अहारू।
अवध सौध सत सरिस पहारू।
छिनु छिनु प्रभु पद कमल विलोकी।
रहिहौं मुदित दिवस जिमि कोकी।। [२]

कुछ वर्ष गृहस्थाश्रम में जीवन बिताने के बाद मनुष्य संयम का जीवन व्यतीत करता है।

वानप्रस्थ आश्रम में तपस्या की प्रधानता है। फिर सन्यासाश्रम में मनुष्य सांसारिक बन्धनों की उपेक्षा कर मोक्ष प्राप्त करने में लगे रहते हैं।

'संत कहहि अस नीति दसानन।
चौथेपन जाइहिं नृप कानन।।' [३]

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी-बालकाण्ड, पृष्ठ-३५२
२- ,, ,, अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६६
३- ,, ,, लंका काण्ड ,पृष्ठ-१६३

इन चारों आश्रमों से गुजर जाने पर मनुष्य मोक्ष रूपी परम-धाम प्राप्त कर सकते हैं।

संस्कृति :- गोस्वामीजी संस्कृति के परम पुजारी थे। संस्कृति को बनाये रखने में वे क्रियाशील रहते थे। पतनोन्मुख भारतीय संस्कृति को मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र की कणसुखद कीर्ति-गाथा से उच्च बनाने का कार्य उन्होंने किया।

' सब के गृह गृह होहिं पुराना।
राम चरित पावन विधि नाना ।। [१]

' मानस ' में जातकर्म, नामकरण, कर्णवेध, उपनयन, विवाह इन संस्कारों का वर्णन मिलता है।

' मानस ' में नारी के प्रति दृष्टिकोण :- गोस्वामीजी नारी को आदर और सम्मान की दृष्टि से देखनेवाले कवि हैं।' मानस ' में प्रत्येक नारी को कर्तव्य परायण दिखलाया गया है। सीता को जगज्जननी के रूप में चित्रित किया गया है।

' गोस्वामीजी नारी की दिव्य विभूति के पारखी थे'। [२]

नारी-वर्ग का प्रतिनिधित्व करनेवाली सीता पतिव्रत-धर्म का मूर्तिभाव है। चौदह-वर्ष वन में रहकर, सारी कठिनाइयां सहकर, पति की पाद-सेवा करने से ही उसे चैन मिलता था, सुख मिलता था। पति के कल्याण केलिए, दूसरों के कल्याण केलिए, वह अपने आप को रामचन्द्र के चरणों पर समर्पित करती है।

१- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-५५

२- तुलसी मानस रत्नाकर, - डा० भाग्यवती सिंह,पृष्ठ-२०६

कैकेयी तो पश्चाताप का आदर्श हमें सिखाती है और वह स्वयं पाप निवृत्त और पवित्र हो जाती है। आदर्श माता का रूप सुमित्रा में द्रष्टव्य है। पति-परायणा सीता की कर्तव्य परायणता के सामने हम नतमस्तक हो जाते है।

गोस्वामीजी के मन का श्रद्धा-भाव इन नारी जनों के ज़रिये स्पष्ट होता है।

नारी-धर्म :- ` मानस ` में नारी के कर्तव्यों की ओर उन्होंने कितनी बार इशारा किया है।

` सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ।
जसु गावत श्रुति चारि अजहुं तुलसि का हरिहि प्रिय ।।`[१]

इसके अलावा नारी-धर्म संबंधी अनेक पंक्तियां ` मानस ` में मिलती है।

कुछ लोगों का विचार है कि गोस्वामीजी ने ` मानस ` में कहीं कहीं नारी-निन्दा की है। लेकिन इस समाज-सुधारक नेता पर इस प्रकार का आरोप लगाना अनुचित है, अन्याय है। गोस्वामीजी ने धर्म के विपरीत आचरण करनेवाली नारी के संबन्ध में कुछ रूखा वचन कहा है। लेकिन उस प्रकार की नारी हमेशा निन्दनीय है, इसमें सन्देह नहीं। उसके प्रति आक्षेप करने से कोई दोष नहीं। डा० रामकुमार वर्मा का कहना है - ` मानस पर निष्पक्ष दृष्टि डाली जाय तो ज्ञात होगा कि नारी के प्रति भर्त्सना के ऐसे प्रमाण इसी समय उपस्थित किए गए, है जब नारी ने धर्म के विपरीत आचरण किया है, अथवा निन्दात्मक वाक्य कहनेवाले व्यक्ति वस्तु स्थिति देखते हुए नीतिमय वाक्य कहते हैं। `[२]

१- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-४६०

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-४४१-४४२

' ढोल गंवार शूद्र पशु नारी ।
सकल ताड़ना के अधिकारी ।। [१]

यहां गोस्वामीजी के युग पर आलोक पड़ता है । मुगलकालीन विलासिनी नारियों की ओर उन्होंने यह तीखा व्यंग्य छोड़ा जो उचित भी है ।

विधिहुं न नारि हृदय गति जानी ।
सकल कपट अघ अवगुन खानी ।। ' [२]

इन पंक्तियों को लेकर अलग अलग अध्ययन किया जाय तो स्पष्ट होगा कि इनके पीछे तुलसी के युग का प्रतिबिंब झलक रहा है या कोई न कोई उचित कारण इस प्रकार कहने केलिए अवश्य होगा ।

जिस नारी ने तुलसीदास जी को इस अलौकिक रास्ते पर चला दिया उसी नारी के प्रति क्या वे निन्दा के वचन कहेंगे ? ऐसा कभी नहीं होगा ।

मानस में भक्ति :- ' मानस ' ही स्वयं भक्ति का एक सरोवर है । भक्ति-पथ सचमुच राजपथ है जिस पर चलने से मनुष्य सभी सांसारिक कष्टों से विमुक्त होकर परम आनन्द धाम का अनुभव करता है । भक्ति के वात्सल्य,दास्य,माधुर्य,शान्त,सख्य ये पांच भेद होते हैं । इनमें हमारे गोस्वामीजी दास्य-भाव की भक्ति के अनुयायी है, पोषक हैं ।

' सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि ।
भजहु राम पद पंकज अस सिद्धान्त बिचारि ।। [३]

१- रामचरित मानस - पं० विजयानन्द त्रिपाठी - सुन्दरकाण्ड- पृष्ठ-१७४
२- ,, ,, अयोध्याकाण्ड-पृष्ठ-२२७
३- ,, ,, उत्तर काण्ड -पृष्ठ-२२२

दास्य-भक्ति केलिए आवश्यक आत्मसमर्पण अनन्यता आदि तत्वों की योजना भी इसमें हुई है ।

डा० माताप्रसाद गुप्त ने गोस्वामीजी की भक्ति संबन्धी यह बात कही है -

' फलत: रामभक्ति ही उनकी संपूर्ण जीवन-परिधि का केन्द्र - बिन्दु है' ।[१]

तुलसी की भक्ति तो वेदसम्मत ही है ।

' श्रुति सम्मत हरि भगति - पथ संजुत विरति विवेक ' [२]

उनका मत है कि सच्चे भक्त मुक्ति की इच्छा नहीं करते ।

' राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं ।
अनइच्छित आवै बरि आईं ।। [३]

' श्रीमद्भागवत' में भक्ति के ये भेद बतलाये गये हैं :-

श्रवणं कीर्तनं विष्णो : स्मरणं पादसेवनं ।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ।।[४]

भक्ति के भेद ये हैं - भगवत्कथा का श्रवण, गुण-कथन, स्मरण, पाद-सेवन, पूजा, वन्दना, दास्य-भाव की भक्ति करना, सखा-भाव और आत्मसमर्पण ।

१- तुलसीदास-डा०माताप्रसाद गुप्त, तृतीय संस्करण-१९५३,पृष्ठ-२७९

२- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७३

३- ,, ,, ,, २२१

४- श्री मद्भागवत महापुराणम्-महर्षि वेदव्यास प्रणीतं, सरल हिन्दी व्याख्यासहितम् पृष्ठ-७९९,अध्याय-५,स्कन्ध-७,श्लोक-२३,गीताप्रेस,गोरखपुर

गोस्वामीजी ने ` नवधा ` भक्ति को अपनाया है । नारद-भक्ति-सूत्र में नवधा भक्ति के भेद यों किया है । ईश्वर के गुण - माहात्म्य-आसक्ति, पूजा सक्ति, रूपासक्ति, स्मरणासक्ति, दास्यासक्ति, सख्यासक्ति, कान्तासक्ति, वात्सल्यासक्ति, आत्म निवेदनासक्ति, तन्मयतासक्ति, परमविरहासक्ति । कलिकाल में गोस्वामीजी ने ` नवधा ` भक्ति को प्रधानता दी है । गोस्वामीजी का निचोड़ यह है :-

` जाके हृदय भगति जसि प्रीति ।
प्रभु तहं प्रगट सदा तेहिं रीती ।। [१]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने गोस्वामीजी की भक्ति-पद्धति के संबन्ध में कहा है :- ` गोस्वामीजी की भक्ति-पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता है उसकी सर्वांगपूर्णता । जीवन के किसी पक्ष को सर्वथा छोड़कर वह नहीं चलती । सब पक्षों के साथ उसका सामंजस्य है, न उसका कर्म या धर्म से विरोध है, न ज्ञान से । धर्म तो उसका नित्य लक्षण है । तुलसी की भक्ति को धर्म और ज्ञान दोनों की रसानुभूति कह सकते है । ` [२]

मानस में राजनीति :- ` मानस ` कलेवर ` में गोस्वामीजी ने राजनीति को भी मिलाया है । भक्त कवि होने पर भी वे सुधारक भी थे । भक्त कवि के अन्य मानसिक उद्गारों के साथ साथ राजनीतिक उद्गार भी बाहर निकलते हैं । अन्य ग्रन्थों की अपेक्षा ` मानस ` में उनके राजनैतिक विचार अत्यधिक उभर आये हैं ।

१- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) राजनाथ शर्मा (संपादक) पृष्ठ-३७७

२- हिन्दी साहित्य का इतिहास,-आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चौदहवां संस्करण संवत् २०१६ विं०,पृष्ठ-१३७

प्रजा की भलाई करना राजा का मुख्य कर्तव्य है। अगर राजा, प्रजा के सुख केलिए काम नहीं करते तो वह अवश्य नरक में पड जाता है।

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।
सो नृपु अवसि नरक अधिकारी ।। [1]

सारी प्रजा पर समान दृष्टि रखनेवाले राजा ही श्रेष्ठ है।

मुखिया मुखु सो चाहिए खान पान कहुं एक ।
पाले पोषै सकल अंग तुलसी सहित विवेक । [2]

राजा के लिए साम, दाम आदि नीतियों की आवश्यकता है।

साम दाम अरु दंड बिभेदा ।
नृप उर बसहिं नाथ कह बेदा ।। [3]

वचन का पालन करना राजा का प्रमुख कर्तव्य है :-

रघुकुल रीति सदा चलि आई ।
प्रान जाहु बरु बचनु न जाई ।। [4]

प्रजा की उन्नति ही राजा का लक्ष्य होना चाहिए।

पंक न रेनु सोह असि धरनी ।
नीति निपुन नृप कै जसि करनी ।। [5]

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - अयोध्याकांड-पृष्ठ-१०६
२- ,, ,, ,, पृष्ठ-४५६
३- ,, ,, लंकाकाण्ड पृष्ठ-२५५
४- ,, ,, अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४५
५- ,, ,, किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-४१

आश्रम-धर्म का पालन करना राजा केलिए परम-आवश्यक है ।

संत कहहिं अस नीति दसानन ।
चौथे पन जाइहिं नृप कानन । [१]

इस प्रकार गोस्वामीजी ने कितने राजनैतिक तत्वों का प्रतिपादन किया है । राजा में किन किन गुणों की आवश्यकता है, इसका विवरण उन्होंने दिया है ।

संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि गोस्वामीजी का राजनैतिक आदर्श अत्यधिक ऊँचा उठ गया है ।

मानस में दर्शन :-

दर्शनशास्त्र की कठिन बातों को गोस्वामीजी ने सरल ढंग से 'मानस' में प्रस्तुत किया है । उन्होंने संस्कृत के दर्शन - ग्रन्थों का सहारा भी ले लिया है । डा० रामकुमार वर्मा ने ठीक ही कहा है :-

'तत्कालीन साहित्य में कोई भी ऐसा कवि नहीं है जिसने दर्शन-शास्त्र का परिचय इतनी दक्षता के साथ दिया हो' । [२]

गोस्वामीजी का दर्शन अत्यधिक परिमार्जित है । राम-नारद-संवाद, गरुड-काकभुशुंडि संवाद आदि प्रसंगों पर कवि के दार्शनिक विचार प्रकट हो गए है ।

गोस्वामीजी अद्वैतवादी है या विशिष्टाद्वैतवादी - इसका ठीक निर्णय नहीं हो पाया है ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी - लंका काण्ड, पृष्ठ-१६३
२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-४४३

तुलसी की विचार पद्धति में हमें शंकर और रामानुज दोनों के मतों का समन्वय मिलता है, परन्तु व्यवहार की दृष्टि से वे रामानुज के विशिष्टाद्वैतवाद को अधिक मानते हैं ।[१]

सीय राममय सब जग जानी । करौं प्रनाम जोरि जुग पानी ।[२]

यहां विशिष्टाद्वैतवादी तुलसी का रूप परिलक्षित होता है । शंकर के अद्वैतवाद में ईश्वर और जीव में अभेदत्व स्थापित किया गया है । माया का प्रभाव भी इसमें सम्मिलित है ।

गोस्वामीजी मानते हैं कि संसार सत्य और झूठ का एक मिश्रण है ।

यन्मायावशवर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादिदेवासुरा ।
यत्सत्वादमृषैव भाति सकलं रज्जौयथा है भ्रमः
यत्पादप्लवमे कमेवाहि भवाम्भोधेस्तितीर्षावताम् ।
वन्दे हम् तमशेष कारण परं रामाख्यमीशं हरिम ।।३

निष्कर्ष यही निकलता है कि वे किसी मत विशेष के बन्धन में नहीं पडते ।

तुलसी के विचार में ईश्वरांशी होने पर भी जीव और ईश्र में भिन्नता है ।

वे निर्गुण और सगुण ब्रह्म में अन्तर नहीं मानते ।

१- तुलसी रसायन - डा० भगीरथ मिश्र,पृष्ठ-१७०-१९१
२- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी-बालकाण्ड,पृष्ठ-२४
३- ,, ,, ,, पृष्ठ-३

अगुनहिं सगुनहिं नहिं कछु भेदा ।
गावहिं बुध पुराण मुनि वेदा ।।
अगुन अरूप अलख अज जाई ।
भगत प्रेम बस सगुन सो होई ।। [१]

तुलसी के ये राम अवतार भी धारण करते हैं :-

व्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप।
भगत हेतु नाना विधि करत चरित्र अनूप ।। [२]

गोस्वामी ने माया के दो भेद माने हैं - विद्या माया और अविद्या माया ।

उन्होंने माया के संबन्ध में कहा है :-

' मैं अरु मोर तोर तें माया । जेहि बस कीन्हें जीव निकाया ।
गो-गोचर जंह लगि मन जाई । सो सब माया जानेहु भाई ।। [३]

भक्तों पर केवल विद्या-माया का प्रभाव पड सकता है, लेकिन अविद्या का नहीं ।

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी उनके दार्शनिक मत को भक्तिवाद मानते हैं ।

भक्तिवाद के पांच भेदों में से गोस्वामीजी दास्य-भाव की भक्ति के अधिक निकट हैं ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी , बालकाण्ड,पृष्ठ-२२०

२- ,, ,, ,, पृष्ठ-३५४

३- ,, ,, अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५२६-५२७

निम्नलिखित दोहा से उनका वास्तविक दार्शनिक - मत करीब स्पष्ट होता है :-

एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास ।
एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास ।। [१]

समन्वय वादी तुलसीदास :- हिन्दी साहित्य में गोस्वामीजी जैसे समन्वय-कर्ता नहीं हुआ है । समन्वय की यह विराट-चेष्टा हर क्षेत्र में दिखायी पड़ती है ।

सज्जन-दुर्जन का समन्वय, सन्त-असन्त का समन्वय, गार्हस्थ्य-वैराग्य का समन्वय , ब्राह्मण-चण्डाल का समन्वय, विष्णु-शिव का समन्वय , दर्शन का समन्वय ऐसे विविध क्षेत्रों में उनकी यही समन्वय वादिता स्पष्ट हो उठी है ।

संत-दुर्जन

बंदौ संत असज्जन चरना । दुख प्रद उभय बीच कछु बरना । [२]

यहां संतो और दुर्जनों की एक साथ चरण-वन्दना की गयी है । वर्णाश्रम धर्म को मानने वाले जनक राजा विरागी होने पर भी गृहस्थ हैं ।

' सहज बिराग रूप मन मोरा । थकित होत जिमि चंद चकोरा ।
तातें प्रभु पूछौं सति भाऊ । कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ ।। [३]

यहां गार्हस्थ्य और वैराग्य का समन्वय किया गया है ।

१- दोहावली - टीकाकार- हनुमान प्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-६६
२- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड,पृष्ठ-१८
३- ,, ,, ,, पृष्ठ-३७२

निर्गुण और सगुण भक्ति में समन्वय स्थापित करने का स्तुत्य प्रयत्न उन्होंने किया है :-

अगुनहिं सगुनहिं नहिं कछु भेदा ।
गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा ।।
अगुन अरूप अलख अज जोई ।
भगत प्रेम बस सगुन सो होई ।। [१]

~~गोस्वामीजी ने~~ भक्ति और ज्ञान के बीच जो विविध मत चल रहे थे गोस्वामीजी ने उन्हें एकमत कर दिया ।

भगतिहिं ग्यानहिं नहिं कछु भेदा ।
उभय हरहिं भव संभव खेदा ।। [२]

उच्च और नीच जाति में जन्मे व्यक्तियों के बीच में भी उन्होंने समन्वय स्थापित किया है ।

नीच जाति के होने पर भी केवट राम के चरण-कमलों को धोता है ।

' अति आनंद उमगि अनुरागा । चरन सरोज पखारन लागा ।
बरषि सुमन सुर सकल सिहांहीं । एहि सम पुन्य पुंज कोउ नांहीं ।।[३]

इसके अलावा, राम शबरी के जूठे बेरों को अत्यधिक खुशी से चखते हैं । राम जाति की परवाह किये बिना इन फलों को खाते हैं ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड, पृष्ठ-२२०
२- ,, ,, उत्तरकाण्ड पृष्ठ-२१०
३- ,, ,, अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१५०

राम का भक्त अगर शिव के प्रेमी नहीं है तो उसका कल्याण कभी नहीं होता ।

सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं ।
रामहि ते सपनेहुं न सोहाहीं ।
बिनु छल विस्वनाथ पद नेहू ।
राम भगत कर लच्छन एहू ।। [१]

ऐसे शैवों और वैष्णवों को उन्होंने समन्वय के सूत्र में बांध दिया ।

डा० बलदेव प्रसाद जी ने कहा है - ` तुलसी की रचनाओं में न केवल मानव-धर्म और भारतीय संस्कृति की ही श्रेष्ठ बातें हैं वरन गीता से लेकर गांधीवाद तक के सभी सिद्धान्तों का समन्वय मिलता है । ` [२]

मानस की भाषा

सुसंस्कृत और मधुर भाषा में लिखनेवाले हमारे गोस्वामीजी के भाषा-क्षेत्र की कुशलता के बारे में क्या कहना है ? उनकी भाषा सभी को आकृष्ट करने वाली है ।

आचार्य रामचन्द्र शुक्लजी ने उनकी भाषा पर मुग्ध होकर यों कहा है : ` भाषा पर जैसा अधिकार गोस्वामीजी का था, वैसा और किसी हिंदी कवि का नहीं । पहली बात तो यह ध्यान देने की है कि ` अवधी ` और ` ब्रज ` काव्य-भाषा की दोनों शाखाओं पर उनका समान पूर्ण अधिकार था` । [३]

१- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी - बालकाण्ड,पृष्ठ-२००

२- तुलसी मानस रत्नाकर - डा० भाग्यवती सिंह, पृष्ठ-१४६ से उद्धृत

३- गोस्वामीजी तुलसीदास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, सं०२०१६ वि०
पृष्ठ-१४८

सस्कृत गर्भित अवधी भाषा में ` मानस ` की रचना हुई है। अवधी भाषा का पूरा सौन्दर्य इस ग्रन्थ में लबालब भरा हुआ है।

तत्कालीन जन-समाज की भाषा अवधी थी। अवधी के साथ साथ इसमें संस्कृत का भी प्रयोग हुआ है। ब्रज, बुन्देलखण्डी, भोजपुरी, फारसी, अरबी आदि भाषाओं के शब्द भी ` मानस ` में यत्र तत्र देखने को मिलते हैं।

भाषा में लिखे जाने के कारण ` मानस इतना लोकप्रिय हो गया है।

स्वान्त सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा ■
भाषा निबंधमतिमंजुल मातनो ति। [१]

इसी कारण पण्डित और साधारण लोग एक साथ ` मानस ` का अध्ययन कर इससे आनन्द उठा सके। भाषा में लिखे जाने के कारण यह ग्रन्थ राजमहल से लेकर झोंपडी तक आज भी पूजे जाते हैं। अपना सन्देश सभी स्तरों के लोगों तक फैलाना कवि का उद्देश्य रहा है। इसी कारण ` भाषा ` में ` मानस ` की रचना की गयी। संस्कृत के तत्सम शब्दों को उन्होंने सरल बनाकर तद्भव रूप में प्रयुक्त किया है। भाषा में लिखी रचनायें उस समय हास्य का कारण बनती थीं।

देखिए:-

भाषा भनिति भोरि मति मोरी।
हंसिबे जोग हंसे नहिं खोरी ।।[२]

लेकिन गोस्वामीजी ने भाषा में मानस की रचना करके इसके विरुद्ध लेखनी चलायी।

१- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड, पृष्ठ-४

२- ,, ,, ,, पृष्ठ-२७

विदेशी शब्दों को स्वीकार कर उसे अत्यधिक कोमल बना दिया है ।

सत्य कहहुं लिखि कागद कोरे

यहां कागज़ केलिए ` कागद ` रूप अपनाया है ।

जे जड़ चेतन जीव जहाना : यहां जहान केलिए 'जहाना' का प्रयोग मिलता है । इस प्रकार के कई उदाहरण ` मानस ` से मिल सकते हैं ।

सरल भाषा में काव्य लिखना वे पसन्द करते हैं ।

' सरल कबित कीरति बिमल, सोइ आदरहिं सुजान ।
सहज बयर बिसराइ रिपु जो सुनि करहिं बखान । [१]

मानस की भाषा की सरलता तो सराहनीय ही है । इस प्रकार इसकी भाषा सारे गुणों से अत्यधिक संपन्न हो उठी है । अलंकार, रस, छन्द आदि दृष्टि से भी यह महाकाव्य किसी दूसरे महाकाव्य के पीछे नहीं पड़ते ।

` मानस ` का उद्देश्य :-

` मानस ` रचना का उद्देश्य स्वयं उन्होंने लिखा है कि केवल ` स्वान्त-सुखाय ` मानस की रचना की गयी है । लेकिन यह ` स्व ` शब्द बड़े व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । अर्थात् मानव के ही नहीं, प्राणिमात्र के सुख केलिए इसकी रचना हुई है । ` मानस ` रचना द्वारा संपूर्ण मानव का कल्याण उनका लक्ष्य है, न केवल अपने अन्त:करण का सुख ही इस रचना का उद्देश्य नहीं है । एक नयी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना करना भी उनका उद्देश्य प्रतीत होती है ।

१- रामचरित मानस - विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड, पृष्ठ-४०

सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे भवन्तु निरामय: ।

मानस का सन्देश :- महान कवि गोस्वामीजी की कल्पना रामराज्य के चारों ओर मंडराती रहती है । ` रामराज्य ` के समान आदर्शोन्मुख समाज की स्थापना का सन्देश अपनी कृति ` मानस ` द्वारा दिया है जिसमें वर्णाश्रम-धर्म, आश्रम-धर्म आदि की प्रधानता है । उनका मानव-जाति केलिए यह भी सन्देश रहा होगा :-

` परहित सरिस धरम नहिं भाई, परपीड़ा सम नहिं अधमाई । [१]

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी गोस्वामीजी को संबोधित करके कहते है:- हिन्दू जाति पर, भारतवर्ष पर, संपूर्ण मानवता पर तुमने अपने महाकाव्य के दिव्य और शाश्वत संदेशों का जो अपार ऋण लाद दिया है उससे क्या कभी हिन्दू जाति, भारत और मानवता उऋण हो सकती है ? । [२]

सुरसरि के समान यह ` मानस ` संपूर्ण मानव जाति को मंगलमय सिद्ध होता है । लेकिन रामराज्य का सपना सफल होने में कुछ सन्देह पैदा होता है ।

अपने समय के पतनोन्मुख जनसमाज के सामने जीवन का आदर्श प्रस्तुत करना मानसकार ने अपना लक्ष्य समझा और इस लक्ष्य की पूर्ति केलिए इस अनुपम ग्रन्थ की रचना की । लोकरक्षक रामचन्द्र के मर्यादा-पाश से बंधित जीवन-गाथा मानव-मात्र केलिए आदर्श न थी बल्कि सभी स्तर के लोगों को परिस्थितियों का सामना करने का निर्देश भी मिल जाय, ऐसे चरित्रों की योजना राम के जीवन में हुई है । इस मानस-सरोवर में स्नान करने से मन का सारा कल्मष नष्ट होकर मनुष्य पवित्र बन जाता है ।

१- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी,उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७
२- गोस्वामी तुलसीदास-आचार्य सीताराम चतुर्वेदी,संवत्-२०१३,पृष्ठ-१

तुलसी की वाणी मनुष्य जीवन की प्रत्येक दशा तक पहुंचने वाली है ।[१]

डा० रामकुमार वर्मा ` मानस ` का मंथन कर उससे सार निकाला है । तुलसीदास ने मानव-हृदय की सूक्ष्म प्रवृत्तियों का कितना अधिक अन्वेषण किया था और वे उनका प्रकाशन कितनी कुशलता से कर सकते थे, यह उनके मानस ` के विद्यार्थी जानते हैं ।[२]

मानस का महत्व :- कवि कोकिल गोस्वामीजी की सुन्दर लेखनी से नि:सृत इस ग्रन्थ-रत्न का महत्व हिन्दी साहित्य में ही नहीं, विश्व-साहित्य में भी अतुलनीय है । सारे संसार के साहित्य में इस ग्रन्थ रत्न की आभा छिटकी हुई है । हिन्दी साहित्य के कवि सार्वभौम गोस्वामीजी के इस ग्रन्थ की प्रशंसा देशी-विदेशी सभी विद्वानों ने मुक्तकंठ से की है । डा० ग्रियर्सन गोस्वामीजी को महात्मा बुद्ध के बाद का लोकनायक मानते हैं । `मानस ` लोकप्रिय भाषा में लोकप्रिय विचारों को लेकर, लिखे जाने के कारण इतना लोकप्रिय हो गया । यह सर्वगुण संपन्न महाकाव्य को विश्व के अन्य महाकाव्यों को जैसे, होमर का इलियड, मिल्टन का पारडैस-लोस्ट आदि के समकक्ष आसानी से रखा जा सकता है ।

निष्कर्ष :- राम-काव्य के एक छत्र अधिपति गोस्वामीजी और उनके अनुपम ग्रन्थ ` रामचरित मानस ` के महात्म्य के संबन्ध में जो कुछ कहें, वह अपूर्ण ही ही रहेगा । विश्व-महाकाव्यों की कोटि में ` मानस ` का स्थान अपरिमेय है, अवर्णनीय है, अतुलनीय है ।

१- गोस्वामी तुलसीदास - सीताराम चतुर्वेदी , पृष्ठ-१५२

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डा० रामकुमार वर्मा, पृष्ट-४६१

डा० भगीरथ मिश्र कहते है :- ` यह अपूर्व है। विश्व-साहित्य मे इसकी समता रखनेवाले ग्रन्थ सुदुर्लभ है` । [१] विदेशों मे भी इस ग्रन्थ-रत्न की प्रशस्ति फैली है ।

` मानस ` पर विशेष अध्ययन किये गये विद्वान डा० ग्रियर्सन लिखते है :-

' I give much less than the usual estimate when I say that fully ninety millions of people base their theories of moral and religious conduct upon his (Tulsidas) writings. If we take the influence exercised by him at the present time, as our test, he is one of the three of four writers of Asia . . . . . Over the whole gangetic valley , his great work (The Ramayana) is better than the Bible is an England. '[2]

हमारे लोकप्रिय नेता महात्मा गांधी ` मानस ` की प्रशंसा करते हुए कहते है :-

` गीता और तुलसीदास की रामायण के संगीत से जो स्फूर्ति और उत्तेजना मुझे मिलती है वैसी और किसी से नहीं ` । [३]

१- तुलसी रसायन-डा० भगीरथ मिश्र,पृष्ठ-८६

२- Encyclopedia of Religion and Ethics, page.421, Edi. 1921
डा० भगीरथ मिश्र के तुलसी रसायन से उद्धृत

३- गांधी नवजीवन-डा०भगीरथ मिश्र के तुलसी रसायन से उद्धृत,पृष्ठ-८

रामकाव्य - परंपरा में मानस ` के पूर्व या बाद में ` मानस ` के समान इतनी गंभीर और उत्कृष्ट रचना उपलब्ध नहीं होती । ग्रन्थ वाटिका में इस मानस सुमन की महक युगों तक दूसरों को महका करती थी, आज भी महका रही है, आगे भी महकती रहेगी, इसमें सन्देह नहीं । सारा साहित्य उपवन इसकी खुशबू से सुगन्धित रहता है ।

निष्कर्ष

संक्षेप में उनकी रचनाओं के बारे में यही कहा जा सकता है कि वे उनकी सभी रचनायें काव्य-गुणों की दृष्टि से उत्कृष्ट निकली हैं । रामचरित मानस विश्व-साहित्य की सर्वोत्कृष्ट कृतियों में एक है । उसकी महत्ता विशेष काल तक सीमित नहीं ।` मानस ` के बाद ` विनयपत्रिका ` का अपना महत्व अपरिमेय है । अन्य सभी रचनाओं का भी विशेष महत्व है ।

उनकी रचनायें जीवन की गंध से अछूती नहीं है । अपने व्यक्तित्व की छाप उनकी रचनाओं में खूब झलक पड़ी है - खासकर विनयपत्रिका , कवितावली ,हनुमान बाहुक आदि ग्रन्थों में ।

अपनी रचनाओं के द्वारा गोस्वामीजी ने पाठकों के हृदय में एक गरिमामय स्थान पाया है । पाठकों के हृदय गोस्वामीजी के प्रति श्रद्धा और आदर से अभिमण्डित रहेंगे । इसमें सन्देह नहीं ।

0000000000000000000

चौथा अध्याय

0000000000000

रामचरित मानस की प्रमुख सूक्तियों

का विशद

अध्ययन

रामचरित मानस ` में भगवान राम से संबन्धित अनेक सूक्ति वचन मिलते हैं। इसके अलावा और भी अनेक व्यावहारिक सूक्तियाँ भी प्राप्त होती हैं। ` मानस ` में बडी संख्या में सूक्तियां मिलती है जिससे इसे सूक्तिसागर कहा जा सकता है जिसमें निमज्जन करने से हम सूक्ति-रूपी मोती पा सकते हैं। मानस ` में तुलसी का उपदेशक रूप अत्यधिक निखर उठा है।

आचार्य शुक्ल जी का कथन है :- ` रामचरित मानस ` में तुलसी केवल कवि के रूप में ही नहीं, उपदेशक के रूप मे भी सामने आते हैं ` । [1]भक्तवर तुलसी ऐसे हैं जो सूक्तियां रेशम पर मणि के समान रख देते है।

` पूज्येषु अनुरागः भक्ति ` के अनेक रूप होते हैं। पण्डितों ने नवधा -भक्ति का वर्णन किया है। श्रवण,कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य, आत्म निवेदन नवधा-भक्ति के नौ भेद होते हैं। इसमें भगवान के नाम गुण, महात्म्य आदि का स्मरण रखना स्मरण-भक्ति है।

भगवान को या परमात्मा को पाने केलिए तीन उपाय बताये गये हैं, ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्ति योग। भागवतकार परमात्मा को पाने के विभिन्न उपाय बतलाते हुए कलिकाल केलिए नाम-कीर्तन को सबसे उचित और सबसे सरल घोषित करते हैं।

यत्फलं नास्ति तपसा न योगेन समाधिना ।
तत्फलं लभते सम्यक्कलौ केशवकीर्तनात् ।।[2]

१- हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ-१४०

२- श्रीमद्भागवत महापुराणम् वेदव्यास प्रणीतं (हिन्दी व्याख्या सहित) प्रथम खण्ड- अध्याय-१, श्लोक-६८, पृष्ठ-७, पंचम संस्करण,संवत्२०२१ प्रकाशक - गीताप्रेस,गोरखपुर

तपस्या, योग आदि साधनाओं से न मिलनेवाला फल हरिकीर्तन से मिल जाता है।

राम-नाम-महिमा

भगवान रामचन्द्रजी के उपासक गोस्वामीजी की सभी रचनाओं में राम-नाम-महात्म्य के संबन्ध में उल्लेख मिलता है। अपने इष्टदेव के चरण कमलों पर सब कुछ समर्पण करने की उनकी भावना कितनी महान है।

सभी भक्त कवियों ने नाम-कीर्तन के चमत्कार की कथायें सुनायी हैं। क्या प्रह्लाद,क्या अजामिल, क्या गजेन्द्र सभी भक्तों को केवल नाम कीर्तन से भगवान मिले हैं। तुलसी केलिए राम-नाम ही एकमात्र संबल ठहरा। अत: वे राम-नाम की महिमा अनेक रूपकों और उपमाओं से समझाते है।

अत्यधिक पवित्र राम-नाम अमंगलों को दूर कर मंगल का विधान करता है। पुराण,श्रुति आदि भी राम-नाम की महिमा का गान करते है।[१]

सुकवि की कविता होने पर भी राम-नाम के बिना वह श्रेष्ठ नहीं कहलाती। जैसे वस्त्र के बिना अन्य साज सज्जा के होते हुए भी नारी शोभनीय नहीं होती।[२]

१- एहि यहं रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा।
   मंगल भवन अमंगल हारी । उमा सहित जेहि जपत पुरारी।
   तुलसीदास कृत मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

२-भनिति विचित्र सुकवि कृत न जोऊ
   राम नाम बिनु सोह न सोऊ।
   बिधुवदनी सब भांति संवारी।
   सोह न बसन बिना बर नारी।
   मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०, (विजयानन्द त्रिपाठी)

गोस्वामीजी ने नाम और नामी में अभेदत्व स्थापित किया है। इन दोनों को गोस्वामीजी ईश्वर की उपाधि मानते हैं।[१]

उन्होंने नाम को रूप से अधिक महत्ता दी है क्योंकि नाम के श्रवण मात्र से रूप का बोध हमारे मन में होता है। एक को दूसरे से बड़ा या छोटा नहीं कहा जा सकता। वे रूप को नाम के अधीन मानने वाले हैं।[२]

नाम और रूप की गति अकथनीय है। अगुण और सगुण के बीच नाम कार्य करता है।[३]

१- समुझत सरिस नाम अरु नामी। प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी।
नाम रूप दुइ ईस उपाधि। अकथ अनादि सुसामुझि साधी।।

तुलसीकृत- 'मानस' - (विजयानन्द त्रिपाठी) बालकाण्ड, पृष्ठ-५७

२- रूप बिशेष नाम बिनु जाने। करतल गत न परहिं पहिचाने।
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखें। आवत हृदयं सनेह बिसेखें।।

तुलसीकृत-मानस (विजयानन्द त्रिपाठी) बालकाण्ड, पृष्ठ-५८

३- नाम रूप गति अकथ कहानी। समुझत सुखद न परति बखानी।
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी।।

मानस - बालकाण्ड, पृष्ठ-५८

नाम के प्रभाव से ही अजामिल, गज, गणिका आदि का उद्धार हो गया था । नाम का माहात्म्य कहते नहीं बनता । उसकी गुण-गाथा कहने में हम अशक्त है ।[१]

राम नाम सभी मनोरथों को सिद्ध करने वाला है । इसीकारण गोस्वामीजी राम-नाम को कल्पवृक्ष मानते है । कलियुग में यह नाम अमंगलों को दूर करने में समर्थ है । नीच मनुष्य का उद्धार नाम के प्रभाव से होता है ।[२]

नाम की अमोधिनी शक्ति से चारों युगों, तीनों कालों और तीनों लोकों में जीव दु:ख से निवृत्त हो जाते हैं ।[३]

कालिकाल में कर्म,भक्ति या ज्ञान पर भरोसा नहीं रखा जा सकता । केवल राम-नाम पर ही भरोसा रखा जा सकता है ।[४]

१- अपतु अजामिलु गजु गनिकाऊ । भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ।
कहउं कहां लगि नाम बड़ाई । रामु न सकहिं नाम गुन गाई ।।
तुलसीकृत - मानस(विजयानन्द त्रिपाठी)बालकाण्ड,पृष्ठ-६८

२- नाम राम को कल्पतरु कलि कल्यान निवासु ।
जो सुमिरत भयो भांग ते तुलसी तुलसीदास ।।
मानस-बालकाण्ड(विजयानन्द त्रिपाठी) पृष्ठ-६८

३- चहुं जुग तीनि काल तिहुं लोका । भये नाम जपि जीव बिसोका ।
वेद पुरान संत मत एहू । सकल सुकृत फल राम सनेहू ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६६

४- नहिं काल करम भगति बिवेकू । राम नाम अवलंबन एकू ।
कालनेमि कलि कपट निधानू ।नाम सुमति समरथ हनुमानू ।।
मानस, बालकाण्ड, पृष्ठ-७०

किसी भी भाव से, याने कुभाव से या क्रोध से राम-नाम का जप किया करो, मंगल अवश्य होता है। नाम की महिमा का गान उपनिषद्, वेद,पुराण, आदि में भी मिलता है । [१]

नामरूपी कल्पतरु के प्रभाव से इच्छित वस्तुयें अवश्य मिल जाती हैं और सारे सांसारिक जंजाल नष्ट हो जाते हैं । [२]

एक बार नाम स्मरण करने से ही उसका स्वयं उद्धार हो जाता है । राम नाम दूसरों का भी उद्धार करता है । बार बार नाम स्मरण करने से भवसागर आसानी से पार किया जा सकता है । [३]

नाम-स्मरण करनेवाले लोगों के दु:ख ऐसे दूर हो जाते है जैसे सूर्य रात का अन्त कर देता है । नाम संसार के भय का नाश भी कर देता है । सभी प्रकार से भलाई करन में नाम समर्थ है । [४]

१- भाय कुभाय अनख आलसहूं । नाम जपत मंगल दिसि दसहूं ।
सुमिरि सो नाम राम गुन गाथा । करौं नाइ रघुनाथहि माथा ।।
मानस - बालकाण्ड,पृष्ठ-७२

२- नाम कामतरु काल कराला । सुमिरत समन सकल जगजाला ।
राम नाम कलि अभिमत दाता । हित परलोक लोक पितु माता ।।
मानस- बालकाण्ड ,पृष्ठ-७०

३- सहित दोष दास दुरासा । दलइ नाम जिमि रविनिसि नासा ।
भंजेउ राम आपु भव चापू । भव भय भंजन नाम प्रतापु ।।
मानस - बालकाण्ड, पृष्ठ-६३

३- राम नाम कर अमित प्रभावा । संत पुरान उपनिषत गावा ।।
मानस- बालकाण्ड,पृष्ठ-२१५

अत्यधिक लगन से नाम का स्मरण करने पर राम जल्दी प्रसन्न हो जाते है। वे हमारे सारे अमंगलों को दूर कर मंगल ला देते है। [१]

ब्रह्म के सगुण, निर्गुण ऐसे दो रूप होते है। इन दोनों रूपों से भी नाम की श्रेष्ठता बतायी गयी है। [२]

राम नाम भक्तों के मन को पवित्र कर देता है। कलियुग के सारे कल्मषों को दूर करने की अपूर्व शक्ति इसमें छिपी रहती है। [३]

कलियुग में भगवान का नाम ही एक मात्र सहारा है। [४]

१- राम भगत हित नरतनु धारी। सहि संकट किय साधु सुखारी।
नामु सप्रेम जपत अनयास। भगत होहिं मुद मंगल वासा ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६३

२- अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।
मोरे मत बड नाम दुहूंते। किय जेहि जुग निज बस निज बूते ।।
मानस - बालकाण्ड, पृष्ठ-६३

३- दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन। जनमत अमित नाम किये पावन।
निसिचर निकर दले रघुनंदन। नामु सकल कलि कलुष निकंदन।
मानस- बालकाण्ड, पृष्ठ-६४

४- चहुं चतुर कहुं नाम अधारा। ग्यानी प्रभुहिं बिसेष पियारा
चहुं जुग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ ।।

मानस- बालकाण्ड, पृष्ठ-६०

प्रेम पूर्वक राम-नाम का स्मरण करने पर मोह दूर भाग जाता है। यह नाम चिन्ता को दूर करके हमारे अशान्त मन को शान्ति दे देता है।[१]

नाम ब्रह्म और राम से भी बड़ा है।[२]

भगवान प्रथम युग में ध्यान से, दूसरे युग में यज्ञ से और पूजन से द्वापर युग में सन्तुष्ट होते है। पर कलियुगीन कुरीतियों से बचने का एकमात्र मार्ग नाम श्रवण है।[३]

राम नाम से वाणी की शोभा बढ़ती है। उसके बिना वाणी अलंकृत होने पर भी उसमें सुन्दरता नहीं होती।[४]

एक ही बार- नाम-स्मरण करने से उसका उद्धार हो जाता है, दूसरों का भी उद्धार होता है।[५]

१- सेवक सुमिरत नामु सप्रीति। विनु श्रम प्रबल मोह दलु जीती।
फिरत सनेह मगन सुख अपने। नाम प्रसाद सोच नहिं सपने।।
मानस -बालकाण्ड, पृष्ठ-६५

२-ब्रह्म राम ते नामु बड़ बरदायक बरदानि।
रामचरित सत कोटि महं लिये महेस जिय जानि।।
मानस, बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

३- ध्यानु प्रथम जुग मख विधि दूजें। द्वापर परितोषत प्रभु पूजें।
कलि केवल मल मूल मलीना। पाप पयोनिधि जन मन मीना।।
मानस, बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

४- रामनाम बिनु गिरा न सोहा। देखु विचारि त्यागि मद मोहा।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-११०

५- वारक नाम कहत जग जेऊ। होत तरन तारन नर तेऊ।
मानस-अयोध्याकांड, पृष्ठ-३१२

जाति की परवाह किये बिना राम-नाम सभी का हित कर डालता है। किरात, आभीर, चण्डाल आदि सभी प्रकार की जातियों के लोग नाम-स्मरण से पवित्र हो जाते हैं।[१]

राम की महिमा

गोस्वामीजी भगवान रामचन्द्रजी की कथा के महत्त्व का उल्लेख अपनी रचनाओं में किया है। अपनी इष्टदेव की महिमा का बखान कितनी ही बार कह चुकने पर भी वे उससे तृप्त नहीं होते। राम की रोमांचकारी कथा एक बार सुनने पर दुबारा वह सुनने केलिए हम तरसते रहते हैं।

जो अत्यधिक आदर भाव से राम की कथा सुनते है उन्हें चार पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है।[२]

प्रभु से जो प्रेम रखते हैं उन्हें ही राम की कथा अच्छी लगती है। दूसरे लोगों को यह कथा अच्छी नहीं लगती।[३]

१- आभीर जवन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।
कहि नाम बारक तेपि पावन होहि राम नमामि ते।।
मानस, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२५०

२- सुनि समुझहिं जन मुदित मन मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु साधु समाज प्रयाग।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१२

३(अ) प्रभु पद प्रीति न सामुझि नीकी। तिन्हहिं कथा सुनि लागिहि फीकी।
हरिहर पद रति मति न कुतर की तिन्ह कहुं मधुर कथा रघुबर की।।
मानस, बालकाण्ड, पृष्ठ-२७

गोस्वामीजी मानते है कि ' रामकथा जगमंगल करनी ' होती है। रामकथा कलियुग के पापों को दूर कर कल्याण कर देती है। [१]

रामचरित को सरोवर बनाकर कवि कहते है कि इस सरोवर में नहाना अत्यधिक श्रेष्ठ है। जो राम की कथा अनुराग से सुनने, कहने और समझने पर उसका कल्याण अवश्य होता है। उसके सारे पाप दूर हो जाते है। [२]

राम कथा रूपी चिन्तामणि सन्तों की सुमतिरूपी सुन्दरी का श्रृंगार है। [३]

गोस्वामीजी राम चरित को ज्ञान,वैराग्य, योग आदि का गुरु मानते हैं और संसार रोग का वैद्य भी मानते है। रामचरित में सारे रोगों को दूर करने की शक्ति होती है। [४]

१- मंगल करनि कलिमल हरनि, तुलसी कथा रघुनाथ की।
गति कूर कविता सरित की ज्यों सरित पावन पाथ की।
मानस। बालकाण्ड,-३२ (विजयानन्द त्रिपाठी)

२- मनिति मोरि सिवकृपा विभाती ससि समाज मिलि मनहु सुराती।
जे एहि कथहिं सनेह समेता कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता।
होइहहिं राम चरन अनुरागी मलि मल रहित सुमंगल रहित सुमंगल भागी।।
मानस,बालकाण्ड-पृष्ठ-४३

३- रामचरित चिन्तामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू।।
जग मंगल गुन ग्राम राम के दानि मुकुति धन धरम धाम के।।
मानस,बालकण्ड,पृष्ठ-८२

४- सद्गुरू ग्यान विराग रोग के विबुध वैद भव भीम रोग के।
जननि जनक सियराम प्रेम के। बीज सकल व्रत धरम नेम के।
मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-८२

रामचरित के प्रभाव से हमारा शोक दूर हो जाता है। सारे पाप भी नष्ट हो जाते हैं। राम-कथा की यही अद्भुत विशेषता है। भक्तों के मन की विषय वासनायें इसी कारण नष्ट हो जाती हैं, वैसे भक्त का मन पवित्र हो जाता है।[१]

राम कथा रूपी कल्पवृक्ष सारे अभीष्टों की पूर्ति कर डालता है। कल्पवृक्ष सारी इच्छाओं की पूर्ति कर डालता है। वैसे रामचन्द्र जी सारे मनोरथों की पूर्ति कर डालते हैं।[२]

सारी अनीतियों को नष्ट करने की शक्ति रामकथा में होती है। किसी भेद भाव के बिना वे सभी को सुख देते हैं।[३]

विद्वानों को आराम पहुंचाने वाली रामकथा सभी लोगों के मन को सन्तुष्ट करने में समर्थ है और कलिमला को दूर करने में भी समर्थ है। गोस्वामीजी ने कलियुग को सांप से उपमित कर रामकथा को भरणी माना है जो कलियुगका नाश करनेवाली होती है।[४]

१- समन पाप संताप सोक के। प्रिय पालक परलोक के।
सचिव सुभट भूपति बिचार के, कुंभज लोभ उदधि अपार के।।
मानस, बालकाण्ड,पृष्ठ-८३

२- अभिमत दानि देव तरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरिहर से।
सुकवि सरद नभ मन उडुगन से। राम भगत जग जीवन धन से।।
मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-८४

३- कुपथ कुतरक कुचालि कलि कपट दंभ पाषण्ड
दहन राम गुनग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड।
रामचरित राकेस कर सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित हित बिसेषि बड लाहु।।
मानस, बालकाण्ड पृष्ठ-८५

४-बुध बिश्राम सकल जन रंजनि। राम कथा कलि कलुष बिभंजनि।
राम कथा कलि पन्नग भरनी। पुनि बिबेक पावक कहुं अरनी।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७६

कलियुग में राम कथा सारे अभीष्टों की पूर्ति करनेवाली कामधेनु है। सज्जनों केलिए वह सजीवन मूरि है। गोस्वामीजी रामकथा को अमृत की नदी मानते है। वह भय का नाश कर देती है। [१]

नरक का नाश करनेवाली असुर सेना से राम-कथा को उपमित किया है। सन्त समाज केलिए यह अत्यधिक श्रेष्ठ है. यह संसार का भार धारण करने वाली पृथ्वी होती है। [२]

उन्होंने रामकथा को यमुना कहा है जो यमगणों को नष्ट करने वाला है और इसे काशी भी कहा है जो जीवन्मुक्ति का साधन है। सभी को यह कथा सुनने से आनन्द की उपलब्धि अवश्य होती है। [३]

मानस को सरोवर मानकर गोस्वामीजी कहते है कि आदर भाव से राम कथा सुनने वाले ही रामचरित मानस पर अधिकार स्थापित कर सकते हैं। कवि कहते है कि ' रामकथा ससि किरण ' के समान है। सन्त लोग हमेशा

१- रामकथा कलि कामद गाई सुजन सजीवन मुरि सुहाई।
सोइ वसुधा तल सुधा तरंगिनि। भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनि।।
मानस ,बालकण्ड,पृष्ठ-७९

२- असुर सेन सम नरक निकंदिनि। साधु बिबुध कुल हित गिरि नंदिनि।
संत समाज पयोधि रमासी। विस्व भार भर अचल छमासी।।

मानस, बालकाण्ड,पृष्ठ-८०

३- जमगन मुह मसि जग जमुनासी । जीवन मुकुति हेतु जनु कासी।
मानस , बालकाण्ड, पृष्ठ-८०

उसका पान किया करते हैं । [१]

यह अजीब रामकथा मूर्खों की समझ में नहीं आती । कुछ विद्वान ही इस चरित का रस पा सकते हैं । वे इस राम-कथा का मंथन कर उसमें से रस निकाल सकते हैं । [२]

राम-कथा श्रवण से यह परिणाम निकलता है कि मूर्ख की भी हालत अत्यधिक सुधर जाती है । [३]

रामकथा का गान करने से ही हम आसानी से भव सागर पार कर सकते हैं । हरि चरणों का अनुराग वही पा सकता है । [४]

१- जे गावहिं यह चरित संभारे । तेइ एहि ताल चतुर रखवारे ।
सदा सुनहिं सादर नर नारी । तेइ सुर वर मानस अधिकारी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

२- अति विचित्र रघुपति चरित जानहिं परम सुजान ।
जे मति मंद विमोह बस, हृदय धरहिं कछु आन ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१२१

३- सुनहिं विमुख अरु विषई ।लहहिं भगति गति संपति नाईं ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३७

४- यह चरित जे गावहि हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूप
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३३२

(अ) भवसागर चह पार जो पावा । रामकथा ताकहुं दृढ़ नावा ।
विषइन्ह कहं पुनि हरि गुनग्रामा । श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

उसकी भलाई अवश्य होती है । जो रामकथा का श्रवण करता है । राम कथा के प्रभाव से भगवान के चरण कमलों की प्राप्ति होती, भक्ति की धारा हृदय मे उमडने लगती है । सारे पाप भी नष्ट हो जाते है । [१]

नीच मनुष्य राम कथा सुनने के अधिकारी नहीं हैं । ब्राह्मणों का उपद्रव करने वालों से यह कथा कभी नहीं कहना है । सत्संगति चाहने वाले ही राम के चरित के प्रेमी होते है । [२]

यह कथा सुनने के अधिकारी वे हैं जो गुरु के प्रति श्रद्धा रखते हैं, जो नीति मे निपुण रहते है और जो द्विज सेवक होते हैं । [३]

मन मे कुटिलता रखकर इस पुनीत राम कथा का गान नहीं करना चाहिए । अत्यधिक आदर भाव से राम-कथा का गान करना चाहिए । [४]

१- बिमल कथा हरि पद दायनी । भगति होइ सुनि अनपायनी ।
उमा कहिउ सब कथा सुहाई । जो भुसुंडि खगपतिहि सुनाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६४

२- द्विज द्रोहिहिं न सुनाइय कबहूं । सुरपति सरिस होइ नृप जबहूं ।
रामकथा के तेइ अधिकारी । जिन्ह कै सत संगति अति प्यारी ।।
मानस - उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४६

३- गुरुपद प्रीति नीति रत जेई । द्विज सेवक अधिकारी तेई ।
ता कहुं यह विशेष सुखदाई । जाहि प्रानप्रिय श्री रघुराई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड- पृष्ठ-२४७

४- मन कामना सिद्ध नर पावा । जे यह कथा कपट तजि गावा ।
कहहि सुनहि अनुमोदन करहीं । ते गोपद इव भवनिधि तरहीं ।।

राम-कथा की महिमा बताना कुछ कठिन बात है क्योंकि यह सुनने मात्र से जीव सारे पापों से मुक्त होकर राम-धाम प्राप्त कर सकते है। [१]

राम -भक्ति की महिमा

सारे संसार के संचालक भगवान रामचन्द्र जी अपने भक्तों पर कृपा की वर्षा करके सभी को आनन्द सागर में डुबोते है। राम अपने भक्तों की रक्षा सभी प्रकार से करते हैं। पतितपावन रामजी के चरण कमलों के प्रति हमेशा अनुराग रखना हमारा कर्तव्य है।

तुलसीदास जी सबसे पहले रामभक्त थे, बाद में ही कवि या सांसारिक व्यक्ति। अपने को चातक और राम भक्ति को जल कहने वाले तुलसी की दृष्टि में सारा संसार ` सिया राम मय ` था। वे घोषित कर गये थे कि :-

जाके प्रिय न राम बैदेही
सो त्यागिये कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही।

इतनी दृढ़ता से राम की भक्ति की घोषणा करनेवाले अन्य कवि हिन्दी जगत में नहीं हुए। शायद इसी दृढ़ता से आतंकित होकर बाद में आने वाले राम कवि तुलसी से होड लेने में सकुचाते है। उनका हर प्रिय-पात्र राम का यश गाता है। उन्होंने ` मानस ` में राम-भक्ति का महत्व तरह तरह से गाया है।

१- रघुवंश भूषन चरित यह नर कहहि सुनहि जे गावहीं।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु, श्रम राम धाम सिधावहीं।।
मानस-उत्तरकाण्ड- पृष्ठ-२५०, टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

रामजी के महत्व से हमारा अज्ञानरूपी अन्धकार दूर हो जाता है और हम ज्ञानरूपी प्रकाश से अभिभूत हो जाते हैं। उनकी भक्ति में अपने को खोना चाहिए। [१]

भक्ति के बिना जीव का कोई मूल्य नहीं। उसका जीना ही व्यर्थ है। प्रभु के गुणों का गान करना जीव का परम लक्ष्य होना चाहिए। हरि-भक्त को हरिकथा-श्रवण में मस्त होना चाहिए। प्रभु-गुण का गान करना, उसका श्रवण करना, इसी में भक्त के जीवन की सफलता निहित है। [२]

भक्ति में तन-मन से लीन होना चाहिए और उसमें छल का लेश-मात्र भी न रहना चाहिए। असली भक्ति में आनन्दानुभूति का अनुभव हो सकता है। [३]

लोग सांसारिक विषयवासनाओं में पड़कर इधर उधर भटकते रहते हैं। केवल राम-भक्ति के सहारे इस फंफट से मुक्ति मिल सकती है। रघुनाथजी का यश-वर्णन सुनने से हमारे सारे मनोरथों की पूर्ति हो जाती है। [४]

१- सुमिरत जाहि मिटै अग्यान।
सोइ सबग्य रामु भगवाना ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१२६, टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

२- जिन्ह हरि भगति हृदय नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१४

३- करम वचन मन छाडि छलु जब लगि जनु न तुम्हार।
तब लगि सुख सपनेहुं नहिं किये कोटि उपचार ।।
मानस-अयोध्याकांड, पृष्ठ-१५४ २५८

४- भव भेषज रघुनाथ जसु, सुनहि जे नर अरु नारि।
तिनकर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि ।।
मानस- किष्किन्ध काण्ड, पृष्ठ-६८

मन्द बुद्धि वाले को रामजी के प्रति अनुराग नहीं होता । राम के प्रति अनुराग रखने से हमारा जन्म सफल होता है । अन्यथा हमें नर-शरीर की प्राप्ति होने से कोई भी फायदा नहीं होता । मूल्यवान नर शरीर को व्यर्थ गँवाना अच्छा नहीं, उसका भली भांति उपयोग करना है । [१]

सूर्य से अलग होकर प्रकाश का कोई अस्तित्व नहीं है । धूप भी सूर्य से अभिन्न है । वैसे परमात्मा से भिन्न होकर जीव का कोई अस्तित्व नहीं है । जीव परमात्मा से भिन्न होकर भी वास्तव में भिन्न नहीं है । [२]

राम चरणों के प्रति अनुराग न रखा जाय तो हमें संसार सागर में पड़कर अनेक प्रकार का कष्ट सहना पड़ता है । हम उस पार नहीं पहुंच पाते । हमेशा दु:ख के सागर में डूबना उतरता रहना पड़ता है । राम के ध्यान से सन्तुष्ट होकर वे सारी इच्छाओं की पूर्ति कर डालते है । [३]

१- निसिचर अधम मलाकर ताहि दीन्ह निज धाम ।
गिरिजा ते नर मंदमति जे न भजहिं श्रीराम ।।
मानस- लंकाकाण्ड, पृष्ठ-३१२

२- अनवद्य अखण्ड न गोचर गो । सब रूप सदा सब होइ न गो।
इति वेद वंदति न दंत कथा । रवि आतम भिन्न न भिन्न जथा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४०

३- भव सिन्धु अगाध परे नरते, पद पंकज प्रेमु न जे करते ।
अति दीन मलीन दुखी नितहि जिन्ह के पद पंकज प्रीति नहीं ।
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के प्रिय संत अनंत ।।

मानस- उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३५

गोस्वामीजी ने मानव के शरीर को संसार सागर पार करने की नाव बताया है। राम की कृपा के सहारे इसको पार कर सकते हैं। कर्णधार के रूप में सद्गुरू की ज़रूरत है। भक्त को यह सागर पार करने में राम सहायता पहुंचाते हैं।[१]

भक्ति को चारों आश्रमों से श्रेष्ठ बताया है। भक्ति की प्राप्ति से चारों आश्रमों पर बल देने की ज़रूरत नहीं। भक्ति की श्रेष्ठता इसी से स्पष्ट है।[२]

भक्तों पर विषयवासना का प्रभाव नहीं पड़ता। अगर पड़े तो वह स्थायी नहीं उस_ मन जल्दी ईश्वर की ओर मुड़ जाता है। राम-चरणों के वास्तविक अनुरागी विषयी नहीं होता।[३]

हरि भक्ति के बिना सब कुछ व्यर्थ है। रोगी केलिए भोग व्यर्थ है। सुख की अवस्था में ही भोग की इच्छा होती है। रोगी हमेशा रोग से चिन्तित होता है। प्राण के बिना सुन्दर शरीर का कोई महत्व नहीं। जिह्वा से नाम-जप करने से कोई फायदा नहीं है। मन लगाकर राम भक्ति में लीन होना

१- नरतन भववारिधि कहुं बेरो। सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो।
करन धार सद्गुरू दृढ़ नावा। दुर्लभ साजु सुलभ करि पावा।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८२ (विजयानन्द त्रिपाठी)

२- चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारी।
जिमि हरि भगति पाइ श्रम तजहि आश्रमी चारी।
मानस- लंकाकाण्ड, पृष्ठ-४२

३- चलो साथ अस मंत्र दृढ़ाई। सुर दुर्लभ सुख सदन बिहाई।
राम चरन पंकज प्रिय जिन्हहीं। विषय भोग बस करहिं कि तिन्हहीं।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१२६

चाहिए । [१]

जो राम की भक्ति नदी में तल्लीन होकर निमग्न रहता है उसका उद्धार अवश्य होता है । जो ज्ञान से मदान्ध होकर अपने को भी भूलकर रहते है वे कैसे राम का आदर नहीं करते । उच्च पद की प्राप्ति होने पर भी उनकी उन्नति कभी नहीं होती । [२]

भक्ति सारे सुखों का मूल कहा गया है । यह बात कितनी सुन्दर निकली है । सत्संगति से ही भक्ति की प्राप्ति हो सकती है । भक्ति मनुष्य की उन्नति का कारण है । [३]

गोस्वामीजी भक्ति मार्ग की सुगमता की ओर इशारा करते है । इस मार्ग में अनेकें कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता । भक्ति के सामने योग, यज्ञ या तप का कुछ महत्व नहीं । सारी कुटिलता छोड़कर भगवान की भक्ति में तल्लीन होना चाहिए । भक्ति-पथ में किसी प्रकार की पीडा का अनुभव नहीं होता । [४]

१- सकल सरीर वादि बहु भोगा । बिनु हरि भगति जायं जप जोग ।
   जांच जीव बिनु देह सुहाई । वादि मोर सब बिनु रघुराई ।।
   मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५२

२- जे ग्यान मान विमल तब भय हरनि भगति न आदरी ।
   ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ।
   विश्वास करि सब आस परिहरि दास तब जे होइ रहे
   जपि नाम तब बिनु श्रम तरहिं भवनाथ सो समरामहे ।।
   मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-११

३- भगति सुतंत्र सकल सुख खानी । बिनु सत संग न पावहिं प्रानी ।
   पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता । संत संगति संसृति कर अंता ।।
   मानस- उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८३

४- कहहु भगति पथ कवन प्रयासा । जोग न मख जप तप उपवासा ।
   सरल सुभाव न मन कुटिलाई । जथा लाभ सन्तोष सदाई ।।
   मानस- उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८४

भक्त के साथी सज्जन होते हैं। सांसारिक सुखानुभवों को वह निकृष्ट मानता है। भक्ति से अत्यधिक आनन्दानुभूति होती है। भक्त के मन में कपट, चतुरता आदि के लिए स्थान नहीं है। परमानन्द सुख का अनुभव वही करता है जो राम की भक्ति में लीन रहता है।[१]

गोस्वामीजी की दृष्टि में रामभक्त सभी गुणों का खजाना है। वह अवश्य पंडित है। उसका हृदय तो मलिनताओं से दूर रहता है। तब तो वह स्वयं ब्रह्म भाषित होता है।[२]

सारे दुःखों को दूर करने की शक्ति भक्ति में निहित रहती है। भक्ति में प्रीति की भी आवश्यकता है। राम का भजन कर हमारे सारे क्लेशों को मिटाना चाहिए।[३]

१- मम गुन ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह।
ताकर सुख सोइ जानै परानंद संदोह ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८५

२- बिरति ज्ञान विज्ञान दृढ़ रामचरित अति नेह।
वायस तन रघुपति भगति मोहि परम सन्दोह ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६७

(अ)भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे।
भजन हीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोलेहुं खगराजा ।।
मानस- उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१४४

(आ)बिनु गुरु होइ कि ज्ञान कि होइ बिराग बिनु।
गावहिं वेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३(विजयानन्द त्रिपाठी)

३- जाने बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीती होइ नहिं प्रीति।
प्रीति बिना नहिं भगति दिढ़ाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३

असली भक्ति में विश्वास की अत्यधिक आवश्यकता है। विश्वास के बिना भक्ति का कोई महत्व नहीं। जिह्वा से केवल नाम का जप करने से कोई महत्व नहीं। अत्यधिक मनोयोग से भक्ति में डूबना चाहिए। [1]

भक्ति का महत्व न समझकर जो उसकी उपेक्षा करते हैं वे अवश्य मूर्ख हैं। ज्ञान भक्ति के संयोग से अत्यधिक मूल्यवान हो जाता है। भक्ति को छोड़ देने से ज्ञान बिना मूल्य के रह जाता है। [2]

विषय वासना से मिलनेवाला सुख क्षणिक है, वह शाश्वत नहीं। हरि भक्ति से मिलने वाला सुख ही शाश्वत है। वह कभी मिटनेवाला नहीं। [3]

राम-भक्त की मुक्ति सुनिश्चित है। वह अवश्य विरागी होता है। विषयवासनाओं से वह एकदम मुक्त रहता है। अत्यधिक मूल्यवान है मनुष्य का जन्म। उसे पाकर फिर नीच योनि में जन्म ग्रहण करना कितना पाप जनक है। हरि-कथा के प्रभाव से सारे विकार दूर हो जाते हैं और इसी के परिणाम स्वरूप

१- बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहि न राम।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१५५

२- जे असि भगति जानि परिहरहीं। केवल ग्यान हेतु श्रम करहीं।
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी। खोजत आक फिरहिं पय लागी।।

मानस- उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२०६

३- सुनु खगेस हरि भगति बिहाई। जो सुख चहहिं आन उपाई।
ते सठ महा सिंधु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहि जड़ करनी।।

मानस- उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२०६

भक्ति के अद्भुत प्रभाव से अविद्या का अन्धकार दूर हो जाता है। अज्ञानान्धकार का नाश हो जाता है और ज्ञानरूपी प्रकाश का उदय हो जाता है।[१]

रामभक्ति रूपी मणि सारे रोगों को दूर करने में समर्थ है। जिसके हृदय में इस मणि की विद्यमानता है उसे सपने में भी दु:ख सताता नहीं। उसके प्रभाव से विष अमृत के रूप में, शत्रु मित्र के रूप में परिणत हो जाता है। मानस रोग भी दूर हो जाता है।[२]

वास्तविक भक्त विषयी नहीं होता। वह उसके जाल में नहीं फंसता। हरिभक्त इन्द्रिय-संयमी होता है।

राम-भक्ति को गोस्वामीजी ने संजीवनी बूटी से उपमित किया है। कठिन रोग से पीड़ित व्यक्ति केलिए रामभक्ति संजीवनी बूटी का कार्य करती है। सगुण ब्रह्म राम सारे मानसिक रोगों को जल्दी दूर कर देते हैं।

१- प्रबल अविद्या तमभिटि जाई। हरहिं सकल सलभ समुदाई।
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसै भगति जाके उर मांही।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२४

२- गरल सुधासम अरि हित होई। तेहि मनि बिनु सुख पाव न कोई।
व्यापहिं मानस रोग न भारी। जिनके बस सब जीव दुखारी।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२४

(अ) रामभगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके।
चतुर सिरोमनि तेइ जग मांहिं। जे मनि लागि सुजन करांही।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२४

रामचन्द्रजी के प्रति प्रेम भाव उद्भूत हो जाता है। मोह के रहने पर रामचरणों के प्रति अनुराग नहीं रहता। [१]

अनुराग या भक्ति के बिना रामचन्द्र जी को वश में करना असंभव बात है। सृष्टि के सभी जीव राम के स्नेह के वशिभूत है। उन्हें आकृष्ट करने का एकमात्र मार्ग स्नेह ही है। जोग, तप,जप आदि मार्गों से राम को नहीं अपनाया जा सकता। [२]

भक्ति के बहाने किसी धार्मिक बात में लीन होना ठीक नहीं है। असली भक्ति में और किसी का ध्यान नहीं रहता। राम भक्ति रूपी दिये को जलने के लिए घी या बत्ती की जरूरत नहीं। वह लगातार जलता रहता है। लोभ रूपी हवा के झोंकों से यह दिया बुझ नहीं जाता। यही इस दिये की अद्भुत शक्ति है। [३]

१- बिरति ज्ञान बिज्ञान दृढ़ रामचरित अति नेह।
   वायस तन रघुपति भगति मोहि परम सन्देह।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६२

(अ) जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई। कोटि भांति कोउ करै उपाई।
   तथा मोक्ष सुख सुनु खगराई। रहि न सकै हरि भगति बिहाई।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२२

२-मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा।) मानस- उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२०८
  किए जोग तप ज्ञान बिरागा।। }

(आ) सब कर मत खगनायक एहा। करिअ रामपद पंकज नेहा।
   श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहांहीं। रघुपति भगति बिन सुख नांही।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६

३-परम प्रकाश रूप दिन राती। नहिं कछु चहिय दिया घृत बाती।
  मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ बात नहिं ताहि बुझावा।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२३

भक्त रोगों से मुक्त होकर स्वस्थ हो जाता है और उसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं सताती । [१]

हरि-भक्ति से अनेक साधनाओं का फल मिलता है । वेद ने अनेक साधनों का उल्लेख किया है । वे साधनायें किये बिना केवल राम-भक्ति से इच्छित फल की प्राप्ति होती है । हरि के प्रति हृदय में असली भक्ति है तो ये साधन न करने पर भी चिन्तित होने की कोई बात नहीं । [२]

भक्तिरूपी मिठास पाने केलिए मदरूपी क्षीरसागर को मथना है । मन्दर के रूप में ज्ञान है रस्सी पकड़ने केलिए सन्तरूपी देवता है । भक्ति की मिठास के बारे में किसी से नहीं जा सकता। वैराग्य और ज्ञान की सहायता से काम,क्रोध मदादि विकारों का नाश कर सकते हैं । इन्हें जीतने से भक्ति मिल सकती है । [३]

१- रघुपति भगति संजीवन मूरी । अनूपान श्रद्धा अति रूरी ।
एहि विधि भलेहि रोग नसांही । नांहिन जतन कोटि नहिं जांहीं ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३५

२- नाना कर्म धर्म व्रत दाना । संयम दम जप तप मख नाना ।
भूतदया द्विज गुरु सेवकाई । विद्या विनय विवेक बड़ाई ।।
जहं लगि साधन वेद बखानी । सब कर फल हरिभगति भवानी ।।
मानस, उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५

३- विरति चर्म असि ज्ञान मद लोभ मोह रिपु मारि ।
जय पाइय सो हरि भगति देखु खगेस विचारि ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२७

भक्ति पाने के मार्ग के संबन्ध में गोस्वामीजी कहते है । नाम-जप भक्ति मार्ग का एक अनिवार्य अंग है । योग साधना, धर्मानुष्ठान करने से भक्ति की पुष्टि होती है । भक्ति में तन-मन लीन होना चाहिए । [१]

अन्य कई गुणों से विभूषित होने पर भी भक्ति के बिना आदमी के सारे गुण व्यर्थ है, निन्दनीय है । उच्च जाति में जन्मे व्यक्ति है, श्रेष्ठ कुल में पैदा हुए है । धार्मिक दृष्टि से भी श्रेष्ठ है, धन से अत्यधिक अनुगृहीत व्यक्ति है, चतुर भी है । इन सभी गुणों से अलंकृत व्यक्ति यदि भक्ति से रहित हो तो उसके उपर्युक्त सारे गुण नगण्य है । उसे जलहीन बादल से उपमित किया गया है । जल से युक्त बादल ही श्रेष्ठ है । वही बादल प्रभु-प्रेम रूपी जल की वर्षा कर सकता है । [२]

राम-भक्त का महत्व :-

राम-भक्त हर कहीं सम्मान प्राप्त करते है । सन्तों के बीच में भी उसका बडा आदर होता है । दार्शनिकों के मत में लोगों का विभाजन उत्तम, मध्यम और अधम के रूप में होता है । सिद्ध उत्तम है, साधक मध्यम और विषयी अधम है । जीव किसी प्रकार का भी हो, अगर वह राम-भक्त हो तो उसकी

१- जप जोग धर्म समूह ते नर भगति अनुपम पावई ।
रघुवीर चरित पुनीत निसि दिनु दास तुलसी गावई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-४६२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

२- जाति पांति कुल धर्म बडाई । धन बल परिजन गुन चतुराई ।
भगति हीन नर सोहै कैसा । बिनु जल वारिद देखिअ जैसा ।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५८३

अन्य सारी बुराइयां नष्ट हो जाती हैं । [१]

राम-भक्त - महिमा

भगवान रामचन्द्रजी के भक्त सारे सांसारिक दु:खों से मुक्त होकर परम पद को प्राप्त हो जाते हैं । संसार में हरि-भजन के दूर न होनेवाला कोई भी दु:ख नहीं है ।

जीव के सारे क्लेश राम-भजन से मिट जाते हैं । अविद्या हरि सेवक पर कोई असर नहीं डाल सकता । उस पर विद्या का ही प्रभाव पडता है । हरि के प्रभाव से मोह माया नष्ट होकर भक्त का हृदय निर्मल हो जाता है । [२]

गोस्वामीजी के मन में जीवन में संपूर्णता लाने केलिए भक्ति की ज़रूरत है । भक्ति के बिना जीवन अपूर्ण रह जाता है । राम-भजन के बिना जीवन फीका-सा लगता है । लवण के बिना व्यंजन में क्या स्वाद रहता है, लवण ही स्वाद का कारण है । सारे सांसारिक सुख भक्ति का सहयोग पाकर मीठा सा लगता है । [३]

१- विषयी साधक सिद्ध सयाने । त्रिविध जीव जग वेद बखाने ।
राम सनेह सरस मन जासू । साधु सभां बड़ आदर तासू ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४०२

२- ऐसहि हरि बिनु भजन खगेसा । मिटइ न जीवन केर कलेसा ।
हरि सेवकहिं न व्याप अविद्या । प्रभु प्रेरित व्यापै तेहि विद्या ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१३६

३- भगति हीन गुन सब सुख तैसे । लवनहीन सुख कवने काजा ।
भजनहीन सुख कवने काजा । अस बिचारि बोलेहु खगराजा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१४४

राम-भजन से मन के बुरे विकार एकदम दूर हो जाते हैं । वैसे आदमी सारे पापों से मुक्त होकर पवित्र हो जाता है । मन में कामवासना रहने पर क्या सपने में भी सुख मिल सकता है ? राम भजन से काम-पिपासा नष्ट हो जाती है । [१]

मनुष्य शरीर पाकर राम का भजन करना हमारा परम कर्तव्य होना चाहिए । इसके बिना हम जीवन में कहां से सुख प्राप्त कर सकते हैं । राम-भजन में समय बिताना चाहिए । नहीं तो हम ने अपने जन्म को व्यर्थ ही गंवा दिया, ऐसा समझना चाहिए । [२]

सर्वशक्तिमान राम को भजनेवाला धन्य है । उनमें जड़ वस्तु को चेतन बनाने की और चेतन वस्तु को जड़ बनाने की शक्ति रहती है । यही उनका कौशल है । [३]

मनुष्य ईश्वर को भी भूलकर विषयवासना में मग्न रहते हैं । वे संसार सागर में पड़कर डूबते उतरते रहते हैं । सागर की बीच ही पड़े रहते हैं । वे

१- बिनु सन्तोष न काम नसाहीं । काम अछत सुख सपनेहु नाहीं ।
राम भजन बिनु मिटहि न कामा । थल विहीन तरु कबहुंकि जामा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३

२- हानि कि जग एहि सम कछु भाई । भजिय न रामहि नर तन पाई ।
अघ कि पिशुनता सम कछु आना । धर्म कि दया सरिस हरिजाना ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२०१

३- जो चेतन कहं जड़ करै, जड़हिं करै चैतन्य ।
अस समरथ रघुनाथ कहिं, भजहि जीव ते धन्य ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२३
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

अपना नाश स्वयं करते हैं। गोस्वामीजी ने नर शरीर की तुलना पारस से की है और विषयवासना को कांच से उपमित किया है। नर शरीर पारस के समान अत्यधिक मूल्यवान है। लेकिन विषय वासना कांच के समान नश्वर विषयी जीव अमूल्य पारस की उपेक्षा करके कांच को लेते है और वे जन्म मरण के जाल मे चक्कर काटते रहते हैं।[१]

असंभव बातें यदि संभव हो जाय तो भी हरि-भजन के बिना संसार सागर पार नहीं किया जा सके। यह निश्चित बात है कि जल का मन्थन करने पर घी नहीं निकलता और बालू से कभी तेल नहीं निकाल सकते। ये बातें संभव करा दी जायं तो भी भव सन्तरण का एकमात्र मार्ग हरि भजन है। अन्य कामों से मन को हटाकर केवल राम-भजन में मन को स्थिर करना है।[२]

हरि भजन न करने से भवभय दूर नहीं होता। इसे स्पष्ट करने केलिए दूसरे उदाहरण देते है। आत्मसुख के अभाव में मन में स्थिरता नहीं आ सकती। स्पर्श का अनुभव करने केलिए वायु की जरूरत है। सिद्धि प्राप्त करने केलिए विश्वास की आवश्यकता है। भक्ति में विश्वास की महत्ता मानी गयी है।[३]

१- सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं विषयरत मंद मंदतर।
कांचु किरिच बदले ते लेहीं। करते डारि पारसमनि देही।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२८

२- कहेउ नाथ हरिचरित अनूप। व्यास समास स्वामि अनुरूपा।
श्रुति सिद्धान्त इहइ उरगारी। राम भजिय सब काम बिसारी।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३८

३- निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ विहीन समीरा।
कवनिउ सिद्धि कि बिनु विश्वास। बिनु हरिभजन न भव भय नासा।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५४
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

राम भजन से सभी लोगों को अच्छी गति मिलती है। कुटिलता को मन में स्थान न देना है। तब कल्याण की प्राप्ति अवश्य होती है। [१]

काम की अपेक्षा कर रामजी का भजने पर ही जीव को सुख मिलता है। नहीं तो मनुष्य को हमेशा दु:ख भोगना पड़ता है। सांसरिक जीवन उसे दु:खद सा लगता है। [२]

निर्वाण पद प्राप्त करने केलिए रामचन्द्रजी का भजन करना है। उसके बिना निर्वाण पद चाहनेवाला व्यक्ति निरा मूर्ख है। चन्द्रमा सोलह कलाओं से उदित हो, सभी तारागण भी चमकते हो, पर्वतों में आग भी लगा दो, तो भी रात की अंधियारी नहीं मिटती। लाखों प्रयत्न करने पर भी सूर्य के बिना अन्धकार का नाश नहीं होता। केवल रामचन्द्रजी में मोहरूपी अन्धकार का नाश करने की शक्ति रहती है। [३]

१- जासु पतित पावन बड़ बाना। गावहिं कवि श्रुति संत पुराना।
   ताहि भजिअ मन तजि कुटिलाई। राम भजे गति केहि नहिं।
      मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४६
      टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

२- तब लगि कुसल न जीव कहुं, सपनेहु मन विश्राम।
   जब लगि भजतन राम कहुं सोक धाम तजि काम।।
      मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-१५३

३- रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निरवान। ग्यानवंत आपि सो नर पसु बिनु पूंछ बिषान।
   राकापति षोडस उअहिं तारागन समुदाइ। सकल गिरिन्ह दव लाइये बिनु रबि रात न जाइ।
      मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१३५

कलियुग में राम-भजन करने पर जल्दी भव-सागर तर जाता है। इस युग में सब कहीं कुरीतियों की बौछार है। कहीं भी योग या यज्ञ नहीं दीख पड़ता। रामचन्द्रजी का गुण-गान ही कलियुग का एकमात्र सहारा है। उससे हमें अच्छी गति मिल सकती है। आदमी को दूसरा कुछ भी प्रयत्न नहीं करना पड़ता।[१]

मन में कलंक रखकर राम का भजन नहीं करना चाहिए। हृदय शुद्ध रहना चाहिए। माया के जाल में फंसना ठीक नहीं, वह हमें कई प्रकार के नाच नचाती है। सारी कुटिलताओं को छोड़कर अगर राम का भजन किया जाय तो रामजी अवश्य कृपा करेंगे।[२]

राम की कृपा की महिमा

जगत का संचालन करने वाले रामचन्द्रजी की कृपा का असर जिस पर पड़ता है वह महा भाग्यवान होता है। वे कृपा-सागर हैं। वे भक्तों गणों के बीच कृपा की वर्षा कर सभी को उस रस में भिगोते रहते हैं।

१- कलि जुग जोग न यज्ञ न ज्ञाना। एक अधार राम गुन गाना।
सब भरोस तजि जो भज रामहि। प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि।।
सो भव तर कछु संसय नाहीं। नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७६

२- भृकुटि विलास नचावै ताहि।
अस प्रभु छाडि भजिअ कहु काही।।
मन क्रम वचन छाडि चतुराई।
भजत कृपा करिहहिं रघुराई।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३४५, विजयानन्द त्रिपाठी

राम की कृपा का पात्र हो जाने पर उसे किसी प्रकार की विघ्न बाधाओं का सामना करना नहीं पडता। मानस मन्दाकिनी में अवगाहन करने से वह सभी प्रकार के तापों या दुःखों से निर्मुक्त हो जाता है। [1]

राम की कृपा से ही उनका चरित स्पष्ट समझ में आता है। नहीं तो उनके चरित्र से कोसों दूर रहना पडता है। [2]

विषयवासनायें राम की कृपा से ही दूर हो जाती है। विषय-वासनाओं का जाल राम जल्दी तोड डालते है। उनकी कृपादृष्टि पडने पर सारी बाधायें आसानी से दूर हो जाती हैं। [3]

विश्वास भक्ति का अभिन्न अंग है। उसके बिना भक्ति का कोई मूल्य नहीं रहता। भक्ति की तीव्रता से अभिभूत होकर रामजी जल्दी द्रवीभूत हो जाते है। राम की कृपा की वर्षा से ही हमें सुख मिलता है। [4]

१- सकल विघ्न व्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपा विलोकहिं।
सोइ सादर सर मज्जन करई। महा-घोर त्रयताप न जरई।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१०२

२- परमानंद प्रेम सुख फूले। बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले।
यह शुभ चरित जान पै सोई। कृपा राम कै जापत होई।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-३३८

३- संत विशुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं रामु कृपा करि जेही।
राम कृपा तव दरसन भयऊ। तव प्रसाद सब संसय गयउ ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२०

४- बिनु विश्वास भगति नहीं तेहि बिनु द्रवहि न राम।
राम कृपा बिनु सपनेहु जीव न लह विश्राम ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१५५

राम की कृपा-दृष्टि पड़ते ही सारे रोग दूर हो जाते हैं और आदमी सांसारिक दु:खों से दूर हो जाता है । हमें सद्गुरु रूपी वैद के वचन पर भरोसा अवश्य रखनी चाहिए । विषय के प्रति मोह भी छोड़ देना चाहिए ।[1]

गोस्वामीजी ने रामभक्ति को मणि कहा है । उसकी प्राप्ति से मनुष्य को दु:ख का अनुभव नहीं करना पड़ता । यह मणि संसार में विद्यमान होने पर भी उसे प्राप्त करने केलिए राम की कृपा की आवश्यकता है । वह मणि प्राप्त करना कठिन कार्य नहीं है ।[2]

रामचन्द्रजी की कृपा से काम,क्रोध, लोभादि विकार नष्ट होते हैं । आसक्ति से दूर रहना परम आवश्यक है ।[3]

रामजी की महिमा

भगवान राम की महिमा का वर्णन करने में कौन समर्थ हो सकता है ?। सभी चराचर जीवों का पालन करनेवाले रामजी हमेशा उनकी भलाई से सन्तुष्ट होनेवाले है । भक्तों पर उनकी विशेष कृपा पड़ती है । अपने भक्तों का देख-भाल वे स्वयं करते हैं ।

१- रामकृपा नासहिं सब रोगा । जौ इहि भांति बनै संजोगा ।
सद्गुरू वैद वचन विश्वासा । संजम यह न विषय कै आसा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३५

२- सो मनि जदपि प्रगट जग अहई । राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई ।
सुगम उपाय पाइवे केरे । नर हतभाग्य देहिं भट भेरे ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२५

३- क्रोध मनोज लोभ मद माया । छूटहिं सकल राम की दाया ।
सो नर इन्द्रजाल नहिं भूला । जा पर होइ सो नर अनुकूला ।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६२

रामजी के गुणों की सीमा नहीं होती । वे सर्वगुण संपन्न महापुरूष है । अपना-स्मरण करने वालों का अज्ञान दूर करने में राम पटु है । भक्तों पर उनका स्पष्ट प्रभाव पडता है । [१]

प्रभु की महिमा सागर के समान अत्यन्त विशाल और गहरी है । उस सागर को कोई भी पार नहीं कर पाता । [२]

प्रभु अनन्त है, तीर्थों के समन पवित्र है साथ साथ वे कराल भी है । राम-नाम के अतिरंजित प्रभाव से सारे पापों का नाश हो जाता है । गहराई केलिए ' पाताल ' शब्द प्रयुक्त किया जाता है । परन्तु राम की महिमा के सामने पाताल की गहराई तुच्छ है । [३]

रामचन्द्र जी की अचलता को हिमाचल से और गंभीरता को समुद्र से उपमित किया है । भगवान तो अपने भक्तों की सारी कामनाओं की पूर्ति कर डालते है । इसी कारण कामधेनु से भी वे उपमित किये गये है । रामजी ने अपना जीवन स्वयं भक्तों और पतितों की भलाई के लिए न्योछावर किया है । [४]

१- सुमिरत जहि मिटे अग्याना । सोइ सरबग्य रामु भगवाना ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१२६

२- तुम्हहिं आदि खग मसक प्रजंता । नभ उडाहिं नहिं पावहिं अंता ।

निमि रघुपति महिमा अवगाहा । तात कबहुं कोउ पाव कि थाहा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५६

३- प्रभु अगाध सत कोटि पताला । समन कोटि सत सरिस कराला ।

तीरथ अमित कोटि सत पावन । नाम अखिल अघपुंज नसावन ।।

मानस,उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५७

४- हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा । सिंधु कोटि सत सम गंभीरा ।

कामधेनु सत कोटि समाना । सकल काम दायक भगवाना ।

मानस,उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१५७

राम चतुर है, चतुरता केलिए अमित कोटि शारदा से उनको उपमित किया है। सृष्टि की निपुणता उनमें अत्यधिक मात्रा में है। रक्षा-पालन में भी वे अत्यधिक ध्यान रखने वाले हैं। अपने आश्रितों को वे कभी नहीं छोड़ते। हर पल उनके मन में उनकी रक्षा का ध्यान रहता है। लेकिन संहार करने की कला में भी वे निपुण हैं। वे अपनी कृपा का जाल सब पर फैलाते हैं। [१]

इतने महान रामचन्द्रजी के चरणों से अनुराग न रखनेवाले का कल्याण कभी नहीं होता। इसमें सन्देह केलिए स्थान नहीं है।

प्रभु सदा भक्त के पक्ष में हैं। भगवान रामजी के प्रति हमारे हृदय में भक्ति की धारा जितनी तीव्र गति से प्रवाहित होती है उसी मात्रा में भगवान हम से प्रेम रखते हैं। अगर हम राम की भक्ति में अत्यधिक तल्लीन होकर रहते हैं तो रामजी कभी हमें नहीं भूलेंगे, हमारी सभी मनोकामनायें पूर्ण कर देते हैं। जैसे भक्ति करते हैं उसी रीति में रामजी प्रत्यक्ष होते हैं। [२]

प्रभु की महिमा अवर्णनीय है। प्रभु की संपत्ति के बारे में कहने की आवश्यकता नहीं। अर्थात् प्रभु उतने बड़े धनवान हैं। वे ही जगत का पालन पोषण करनेवाले है। कोटि भार वहन करने वाले है, जगत के सर्वश्रेष्ठ अधिपति हैं। ईश्वर की महिमा का बखान करना मुश्किल है। [३]

१- सारद कोटि अमित चतुराई। बिधि सत कोटि सृष्टि निपुनाई।
विष्णु कोटि शत पालन करना। रुद्र कोटि सत सम संघरता।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५८

२- जाके हृदय भगति जसि प्रीति। प्रभु तहं प्रगट सदा तेहि रीती।

३- धनद कोटि सत काम धनवाना। माया कोटि प्रपंच निधाना।
भार धरन सत कोटि अहीसा। निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५८

प्रभु भक्त पर हमेशा प्रसन्न चित्त रहते हैं। भक्त के सारे दु:खों को दूर करने में प्रभु हमेशा जागरूक रहते हैं। प्रभु का स्मरण करने मात्र से काल का नाश हो जाता है। भक्ति की मात्रा जितनी है, इसकी परीक्षा भी कर लेते हैं।[१]

वेदों में विषयी, साधक, सिद्ध इस प्रकार तीन वर्गों में जीव का विभाजन किया गया है। विषयी होने पर भी यदि जीव राम की भक्ति में तल्लीन रहता है तो उसका आदर साधु सभा में भी होता है, कहीं भी उसका अनादर नहीं होता। साधक तो हमेशा साधना में लीन रहता है। परमगति प्राप्त करना उसका उद्देश्य है। रामजी के प्रति प्रेम से सभी का हृदय सरस होना चाहिए।[२]

राम के जैसे मर्यादापुरुषोत्तम को इस संसार में देखना बहुत मुश्किल की बात है। उनका यशोगान सुनना कल्याणमय होता है। कपट प्रेम पर नहीं, केवल शुद्ध प्रेम पर राम अत्यधिक सन्तुष्ट होते हैं।[३]

अनंत विश्व में राम का अस्तित्व रहता है। उनकी कथा का विस्तार करना आसान कार्य नहीं।[४]

१- उमा कालभर जाकी ईछा। सोइ प्रभु जन कर प्रीति परीछा।
सुनु सर्वग्य चराचर नायक। प्रनतपालक सुर मुनि सुखदायक।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३८०

२- विषयी साधक सिद्ध सयाने। त्रिविध जीव जग वेद बखाने।
राम सनेह सरस मन जासू। साधु सभां बड़ आदर तासू।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४०२

३- एहिं विधि निज गुन दोष कहि। सबहिं बहुरि सिरनाइ।
बरनउं रघुबर बिरुद जसु सुनि कलि कलुष नसाइ॥
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७४

४- राम अनंत अनंत गुन, अमित कथा विस्तार।
सुनि आचरजु न मानिहहिं जिनके विमल विचार॥
मानस-बालकण्ड,पृष्ठ-८८

प्रभु के स्वभाव की यही विशेषता होती है कि पहले दण्ड देने के बाद ही कृपा की वर्षा कर डालते है । [१]

राम जी में सब कुछ कर डालने की शक्ति निहित है । मच्छर को ब्रह्मा और ब्रह्मा को मच्छर बनाने की ताकत उनमें होती है । प्रभु की यही विशेषता है । [२]

राम की कृपा से अनुगृहीत व्यक्ति ही संसार सागर पार कर सकता है । चाहे वह साधक हो, सिद्ध हो, कविन्ही, सन्यासी हो, ज्ञानी हो , पंडित हो, कोई भी हो । कितने बड़े आदमी होने पर भी उसे राम-भक्त होना चाहिए । तभी तो उसकी महत्ता बढ़ जाती है । [३]

वे अविद्या से उत्पन्न विकारों का नाश करते है । संपूर्ण रामचरित-मानस का अध्ययन करने में जो लोग असमर्थ निकलते है उन्हें गोस्वामीजी उत्तरकाण्ड में एक सौ पांच चौपाइयों का विधान देते है । इन्हीं लोगों को इन चौपाइयों का अध्ययन करना काफी है । [४]

१- सासति करि पुनि करहि पसाऊ । नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११७

२- मसकहिं करै विरंचि प्रभु अजहिं मसक ते हीन ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३७

३- साधक सिद्ध विमुक्त उदासी । कवि कोविद कृतज्ञ सन्यासी ।
जोगी सूर सुतापस ग्यानी । धर्म निरत पंडित बिज्ञानी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४०-४१

४- सतपंच चौपाई मनोहर जानि । जो नर उर धरै ।
दारुन अविद्या पंच जनित विकार श्री रघुवर हरै ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२५०

राम-विमुख की दुर्गति

भगवान रामचन्द्रजी से विमुख व्यक्ति की हालत अत्यधिक दु:खद है। अपने आप बडे होने पर भी भगवान की याद सदा हमारे दिल में होनी चाहिए। हमको समझना चाहिए कि अपने ऊपर एक अनन्य शक्ति विद्यमान है। तभी हम स्वस्थ रह सकते हैं राम से विमुख होने पर हमें जीवन में चैन नहीं मिलता। हमारी अवनति शुरू होती है।

उसकी संपत्ति नष्ट हो जाती है जो राम से विमुख होकर रहता है। प्रभुता नष्ट होने लगती है। उसका सारा श्रेय दूर हो जाता है, भारी संपत्ति के अधिकारी होने पर भी वह संपत्ति स्थायी नहीं रहती। [१]

वह सभी प्रकार के सुखों से युक्त होने पर भी किसी की भी प्रशंसा का पात्र नहीं रह जाता। उसका कल्याण होना संभव नहीं। संसार में वह सुख का सपना भी नहीं देख सकता। उसकी अच्छी गति कभी नहीं होती।

राम से विमुख होने पर सारी बातें बिगड़ जाती हैं। सारा संसार उसे अत्यधिक भयानक सा लगता है। इसीकारण रामजी से प्रेम का संबंध जोड़कर रहना ही अच्छा है। नहीं तो अनर्थ अवश्य होता। रामजी के भजन में तल्लीन होकर रहना, जीना, इससे बढ़कर पुण्य कार्य नहीं हो सकता। हरि से विमुख और धर्म में आस्था न रखनेवाला सांसारिक माया मोह में फंस जाता है।

१- राम विमुख संपति प्रभुताई।
जाइ रही पाई बिन पाई।।
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं।
बरषि गए पुनि तबहिं सुखाहीं।।

मानस- किष्किन्धाकाण्ड
पृष्ठ-१११
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

वह ज्ञान मोह और भक्ति का अधिकारी नहीं, क्यों कि वह हरिविमुख है । [१]

जो प्रभु से प्रेम नहीं करते, उन्हें दु:ख भोगना ही पड़ता है । वे भव-सागर में डूबते उतरते रहते हैं । उससे उन्हें किसी प्रकार की मुक्ति नहीं मिलती । भगवान ही एक मात्र अवलंब है । भगवान से विमुख व्यक्ति की अवस्था सुधर नहीं जाती । [२]

उसका कल्याण कभी नहीं होता । वह ठीक देह विन्यास-वाला होने पर भी पंडित, कवि आदि लोग उसकी कीर्ति नहीं करते । [३]

मृगजल को पीने से क्या प्यास बुझ सकती है ? मरुभूमि में सूर्य की किरणों से जल का केवल भान ही होता है । असल में जल नहीं रहता । जल समझकर पीने केलिए दौड़ते दौड़ते मृग मर जाते हैं । प्यास बुझाना असंभव होता है । वैसे ही खरगोश के सिर में सींग उगना असंभव है । सूर्य अन्धकार का नाश कर देता है, उल्टे अन्धकार सूर्य का नाश कभी नहीं करता ।

१- भवसिन्धु अगाध परे नर ते पद पंकज प्रेम न जे करते ।
अति दीन मलीन दुखी नितही जिन्ह के पद पंकज प्रीति नहीं ।
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के प्रिय संत अनंत ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३५

२- रघपति विमुख जतन कर कोरी । कवन सकै भव बन्धन छोरी
जीव चराचर बस कै राखे । सो माया प्रभु सों भय भाखे ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-३४५

३- रामविमुख लहि विधि सम देही । कवि कोविद न प्रसंसहि तेही ।
राम भगति एहि तन उर जामी । तातें मोहि परम प्रिय स्वामी ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६४
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

उसे स्थायी सुख नहीं मिलता । [१]

गुरु-महिमा

भारतीय संस्कृति शिक्षा के क्षेत्र में गुरु को सबसे श्रेष्ठ पद देती है । विद्या बिना गुरु के नहीं मिलती । पराविद्या के विषय में उपनिषद्कार कहते हैं -

अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्ति ' ।

इस प्राचीन गुरु-भक्ति की परंपरा वर्तमान युग तक अविरल रूप से जारी रही है । हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में जितने भी कवि हुए उन सभी ने गुरु की महिमा गायी है । संत युग की गुरु भक्ति राम-भक्त तुलसी की वाणी में और भी निखर उठी है ।

गोस्वामीजी गुरु को अत्यधिक आदर भाव से देखनेवाले हैं ।

१- तृषा जाइ बरु मृगजाल पाना । बरु जामहि सससीस विषाना ।
अंधकार बरु रविहि नसावै । राम विमुख न जीव सुख पावै ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६
(अ) हिमि ते अनल प्रगट बरु होई । विमुख राम सुख पाव न कोई ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३७

(आ) कमठ पीठि जामहि बरु बारा । वन्ध्यासुत बरु बहु विधि फूला
जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

जिस प्रकार सूर्य उदित होकर अन्धकार को दूर कर देता है उसी प्रकार गुरुजी भी हमारे अज्ञानरूपी अन्धकार को ज्ञान रूप प्रकाश से दूर कर देते है। वे हमारा हृदय ज्ञान से भर देते है।[१]

गोस्वामीजी गुरुजी के चरणकमलों की वन्दना करके कहते है कि गुरु की चरण-धूलि सभी सांसारिक रोगों की औषधि है। गुरु की चरण-धूलि को वे उतना श्रेष्ठ मानते है।[२]

वह चरण धूलि शिवजी के शरीर का अलंकार है। वह धूलि सभी लोगों के हृदय के मल का नाश करनेवाली है। वह मंगलों की खान है।[३]

गुरु के नखों का स्मरण करते रहने से हृदय में दिव्य दृष्टि उत्पन्न होती है। अर्थात् हमारे अन्त चक्षु खुल जाते हैं और हम ज्ञान के नये क्षेत्र में प्रवेश

१- बन्दौं गुरु पद कंज कृपासिन्धु नर रूपहरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रवि कर निकर।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६

२- बन्दउं गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।
अमिअ मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भव रुज परिवारू।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-७

(अ) जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल विभव बस करहीं।
मोहि सम यहु अनु भयउ न दूजे। सब पायेउं रज पावन पूजे।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-७

४- सुकृति संभु तन विमल विभूती। मंजुल मंगल मोद प्रसूती।
जन मन मंजु मुकुर मल हरनी। किएं तिलक गुन गन बस करनी।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-८

गुरु के
करते हैं । बड़े भाग्यवान ही इस सुख के वशीभूत हो सकते हैं । उसके हृदय से अज्ञान की अंधियारी और सारे कल्मष दूर हो जाते है ।[१]

गुरु-चरण-धूलि आंखों को सुख पहुंचाने वाला अंजन है और वह आंखों के सभी दोषों को दूर भी करता है । यह अंजन विवेकरूपी नेत्रों को निर्मल बनाता है । सभी प्रकार से यह अंजन सुख पहुंचाने वाला है ।[२] तुलसी के समय में अंजन परीक्षा करके लोग सिद्ध हो जाते थे । उन्होंने सिद्धता को अंजन कहा है । साधक इस अंजन को आंखों में लगाने से सिद्ध होते है । अंजन नेत्रों को ठंडक पहुंचाता है ।[३]

गुरु से हम अगर छिपाव रखे तो हृदय में विवेक की उत्पत्ति नहीं होगी । मुनि,श्रुति,पुराण, सन्तजन आदि इसी बात पर जोर देते हैं । गुरु से छिपाव रखने पर अज्ञान दूर नहीं होता और हमारा हृदय मोहान्धकार से भर जाता है । हृदय में विवेक का उदय भी नहीं होता ।[३]

१- उघरहिं विमल विलोचन ही के, मिटहिं दोष दुख भव रजनी के ।
   सूझहिं राम चरित मनि मानिक । गुपुत प्रगट जहं जो जेहिं खानिक ।।
   मानस-बाल काण्ड,पृष्ठ-६

२- गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन नयन अमिअ दृग दोष ।
   तेहि करि विमल विवेक विलोचन ।
   बरनऊं राम विभंजन चरित भव मोचन ।
   मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६

३- संत कहहिं असि नीति प्रभु । श्रुति पुरान मुनि गाव ।
   होइ न विमल विवेक उर । गुरु सन किये दुराव ।
   मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११५
   टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

गुरु के वचन पर अत्यधिक भरोसा रखना आवश्यक है। अगर विश्वास नहीं है तो हमें सपने में भी सुख की उपलब्धि नहीं होती है। यह सत्य कभी झूठा नहीं हो सकता। [१]

गुरु अगर हम से कुपित हो जायं तो उससे बचना मुश्किल है। उस कोप से हमारी रक्षा कोई भी ईश्वर भी नहीं कर सकता। प्रधान रक्षक गुरु है। गुरु के कोप से मुक्त रहना अच्छा है। [२]

गुरु तो हमारे हित चिन्तक होते है, इसलिए उनकी आज्ञा का पालन करना हमारा परम कर्तव्य है। अगर हम उनकी शिक्षा का तिरस्कार करें तो बाद में हमें पछताना पडता है। उससे हानि भी होती है, अमंगल अवश्य होता है। [३]

जो माता, पिता, गुरु आदि की शिक्षा का अनुसरण करते हैं उनका इस संसार में जीना सार्थक है। उनकी सेवा करके हमें अपने जन्म को सफल बनाना है। उनकी सेवा करने में तनिक भी पीछे न रहना। [४]

१- गुरु के वचन प्रतीति न जेही। सपनेहुं सुगम न सुख सिधि तेही।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१८५

२- सत्य नाथ पद गहि नृप भाखा। द्विज गुर कोप कहहु को राखा।
राखै गुर जो कोप बिधाता। गुरु बिरोध नहिं कोउ जगत्राता।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२८८

३- सहज सुहृद गुरु सिख जो न करइ सिर मानि।
सो पछताइ अघाइ उर, अवसि होइ हित हानि।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६६

४- गुरु पितु मातु बंधु, सुरसाईं। सेइअहिं प्रान की नाईं।
रामनु प्रान प्रिय जीवन जी के। स्वारथ रहित सखा सबही के।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१११

शरीर में प्राण , अपान,व्यान,समान,उदान ऐसे पांच प्राण होते हैं। गुरु,पिता,माता,भाई,स्वामी ये बाह्य प्राण हैं। इनकी सेवा-शुश्रूषा पर गोस्वामीजी अत्यधिक ज़ोर लगाते है।

लोक और वेद में माना गया है :- गुरु के चरण कमलों के अनुरागी पुरुष दोनों लोकों में बड़े भाग्यवान माने गये है। उन्हें हमेशा कल्याण ही होता है। गुरु से विरोध रखनेवाले की अवनति अवश्य होती है। [१]

गोस्वामीजी ने एक स्थान पर कुल-गुरु को मां बाप से ऊंचा स्थान दिया है। वे कुलगुरु को इन्हीं से भी हितकारी मानते हैं। [२]

शिष्य की भलाई ही गुरु का कर्तव्य होना चाहिए। सदा उसके कल्याण का ध्यान रखना चाहिए। उसके शोकों को दूर करना है। उसका अमंगल करनेवाले नरक के भागी हो जाते हैं। [३]

गुरु से ईर्ष्या कभी नहीं करनी चाहिए। अगर करें तो वह अवश्य नरक में पड़ तिर्यक योनि में शरीर धारण करके वह अनेक जन्मों तक पीडा सहता रहता है। नरक से छुटकारा पाने पर भी वह पवित्र नहीं हो जाता क्यों कि उसका आचरण निंद्य है। गुरु की निंदा करना अच्छी बात नहीं। उनकी

१- जे गुर पद अंबुज अनुरागी। ते लोकहुं वेदहुं बड भागी।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३७३

२- प्रभु प्रिय पूज्य पिता सम आपू। कुलगुरु सम हित माय न बापू।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४२५

३- हरै शिष्य धन सोक न हरई। सो गुर घोर नरक यह परई।

मातु पिता बालकन्हि बोलवहिं उदर भरै सोइ धर्म सिखावहिं।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७०

निन्दा करने से मेंढ़क के रूप में सहस्रों जन्मों तक जीवित रहना पड़ता है । इसी प्रकार गोस्वामीजी कहते है कि गुरु की निन्दा कभी नहीं करनी चाहिए । [१]

हमेशा गुरु का स्नेह पात्र रहना परम आवश्यक है । गुरु ज्ञान प्रदान करनेवाले है । बिना गुरु के ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता । गुरु ही हमें ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले चलने वाले हैं । अज्ञानरूपी अन्धकार में पड़कर घूमने फिरने वालों का सहारा केवल गुरु है । [२]

सद्गुरु सन्देह और भ्रम का नाश करने वाले हैं । वे सन्देहों को दूर करनेवाले है । उनके वचन की अत्यधिक गंभीरता है । मोहान्धकार को दूर करने केलिए उनके वचन सूर्य किरणों के समान तेजस्वी होते है । [३]

गुरु, माता, पिता, स्वामी इनके वचनों का पालन अत्यधिक खुशी के साथ करना चाहिए । उन वचनों को शुभ जानकर उसे मानना चाहिए । [४]

१- जे सठ गुरसन इरषाकरहीं । रौरव नरक कोटि जुग परहीं ।
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा । अयुत जनम भरि पावहिं पीरा ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१८६

२- बिनु गुरु होइ कि ज्ञान कि होइ विराग बिनु । गावहिं वेद पुरान सुख
कि लहिअ हरि भगति बिनु ।
मानस-उत्तर काण्ड, पृष्ठ-१५३

३- सद्गुरु मिले जाहिं जिमि । संसय भ्रम समुदाइ ।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-४३

४- मातु पिता गुरु प्रभु कै बानी । बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१५६
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

गुरु ही भवसागर पार करानेवाले है। गुरु की सहायता के बिना शंकर या ब्रह्मा भी यह संसार सागर पार नहीं करा सकते।

माता, पिता, गुरु, स्वामी इनकी शिक्षा का पालन करने से उसका जन्म सफल होता है। नहीं तो उसका जन्म निष्फल रह जाता है। जन्म को सार्थक बनाने की इच्छा है तो उपर्युक्त नियम का पालन करना पडता है।[१]

सन्त - महिमा

गोस्वामीजी ने सन्तों की महिमा का गान हर कहीं किया है। वे सन्तों की संगति में कुछ समय तक रहे थे। इसी कारण सन्तों का महत्व वे खूब जानते थे।

सन्तों का चरित्र तो अत्यधिक श्रेष्ठ है। गोस्वामीजी ने कपास से उसकी तुलना की है। सन्त तो स्वयं अत्यधिक दु:ख सहते हैं लेकिन दूसरों को सुख पहुंचाने में लगे रहते हैं। कपास कठिन वेदना सहकर दूसरों को सुखी बनाता है। कपास से कपडा बुना जाता है और उससे मनुष्य का शरीर ओढ़ा जाता है। कपास अनेक कष्ट सहकर दूसरों की सहायता करता है। यों सन्त लोगों का लक्ष्य भी दूसरों की सहायता करना है।[२]

१- मातु पिता गुरु स्वामि सिख सिर धरि करहिं सुभायं।
लहेउ लाभु तिन्ह जनमकर नतरु जनम जग जायं॥
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१०६

२- साधु चरित सुभ चरित कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा। वंदनीय जेहिं जग जस पावा॥
मानस, बालकाण्ड, पृष्ठ-११

सन्तों के संग में जाने पर हमें आनन्द की उपलब्धि होती है । उनका समाज स्वयं प्रयाग कहा गया है । प्रयाग में तीन नदियों का मिलन होता है । वहां राममक्ति रूपी गंगा की धारा और ब्रह्म विचार रूपी सरस्वती नदी का मिलन होता है । सन्त स्वयं तीर्थस्थान कहा जाता है ।[१]

गोस्वामीजी सन्तों को कितने आदर की दृष्टि से देखने वाले हैं । सन्त समाज को उन्होंने गुणों की खान कहा है । उनकी वन्दना करने में वे हिचकते नहीं ।[२]

सन्तों की महिमा कहने में सारे देवता, कवि और पण्डित असमर्थ हो जाते हैं । जो लोग उनकी महिमा का ज्ञान रखते है वे ही उनका महत्व समझ सकते हैं । जैसे साग भाजी बेचनेवाला क्या मणिगण का विशेष ज्ञान रखता है ? वह सन्तों की महिमा का बखान कैसे करे ।[३]

सन्त तो अत्यधिक विवेकी होते हैं । वे तो इस गुण-दोष मिश्रित संसार से केवल गुणों को ही ग्रहण करते हैं । उनमें गुण दोष विवेचन की क्षमता

१- मुद मंगल मय संत समाजू । जो जग जंगम तीरथ राजू ।
राम भगति जहं सुरसरि धारा । सरसइ ब्रह्म विचार प्रकासा ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११

२- सुजन समाज सकल गुनखानी । करौं प्रनाम सप्रेम सुबानी ।
मानस-बालकण्ड,पृष्ठ-१०

३- विधि हरिहर कवि कोविद बानी । कहत साधु महिमा सकुचानी ।
सो मोसन कहि जात न कैसे । साक बनिक मनि गुन गन जैसे ।
मानस -बालकाण्ड, पृष्ठ-१४
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

होती है। गोस्वामीजी कहते है कि हंस तो जल मिश्रित दूध से केवल दूध का ही ग्रहण कर पानी छोड देता है। [१]

विवेक के उदय से हम दोषों को छोड़कर केवल गुणों को ग्रहण करते हैं। वह विवेक की ओर देखने वाले हैं।

गोस्वामीजी इस बात पर ज़ोर देते है कि हमें वेष को प्रधानता नहीं देनी चाहिए। अगर सन्त लोग कुवेष में भी रहें तो भी उनका आदर सत्कार सब कहीं होता है। हमें उनकी करनी को प्रधानता देनी चाहिए। [२]

सन्तों का हृदय दूसरों का दु:ख सहकर पिघलने लगता है। वे सुख प्रदान करनेवाले हैं। दूसरों के सुख केलिए वे नित्य परिश्रम करते रहते हैं। [३]

सन्तों की करनी हमेशा दूसरों की भलाई केलिए होती है। अपनी उन्नति केलिए ये कभी प्रयत्न नहीं करते। दूसरों केलिए ही संपत्ति इकट्ठा करते हैं। सन्तों की उपमा वृक्ष, सरिता, पर्वत, पृथ्वी इन सभी से की गयी है, परहित

१- जड़ चेतन गुन दोष मय विश्व कीन्ह करतार।
सत हंस ग्रहहिं गुन पय परिहरि वारि विकार।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२१

२- कियेहु कुबेष साधु सनमानू। जिमि जग जामवंत हनुमान
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२२

(अ) संत विटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबन्ह कै करनी।
मानस, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४०

३- सन्त हृदय संतत सुखकारी। विश्व सुखद जिमि इंदु तमारी।
मानस, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

ही उनका लक्ष्य है । दूसरों का दु:ख देखकर उनका हृदय द्रवीभूत होने लगता है ।[1]

गोस्वामीजी ने भगवान शंकर जी के मुख से कहलवाया है कि सन्त दर्शन के समान दूसरा लाभ कोई नहीं । लेकिन भगवान की कृपा उसके लिए परम आवश्यक है । परम भाग्यवान ही उसे प्राप्त कर सकता है ।[2]

इस संसार में दरिद्रता के समान दु:ख और सन्त मिलन के समान सुख अन्य नहीं है । उनका सहज स्वभाव है दूसरों की भलाई करना ।[3]

सन्त लोग सभी लोगों से समान व्यवहार करते हैं । उन्हें न किसी से राग है न किसी से द्वेष ।उनका शत्रु या मित्र कोई भी नहीं है । वे समरसता का जीवन व्यतीत करते हैं । वे उपकारी की सहायता करते हैं, अपकारी की भी । खुशबूदार फूल केवल एक हाथ को सुगन्धित नहीं करता,दोनों हाथ बराबर सुवासित होते हैं । इसी प्रकार संत समदृष्टि रखनेवाले होते हैं । वे किसी विशेष व्यक्ति पर प्रसन्न होनेवाले नहीं । सभी लोगों की भलाई चाहने वाले हैं ।[4]

१- संत हृदय नवनीत समाना । कहा कविन्ह परि कहै न जाना ।
निज परिताप द्रवै नवनीता । पर दु:ख द्रवहिं संत सुपुनीता ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४२

२- गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन । बिनु हरिकृपा न होइ सो
गावहिं वेद पुरान ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४३

३- नहिं दरिद्र सम दुख जग मांही । संत मिलन सम सुख जग नांही ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२४

४- बंदौ संत समान चित हित अनहित नहिं कोइ ।
अंजलिगत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोइ ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५

सन्तों को मोक्ष के पंथ कहनेवाले हैं, पंडित,कवि,वेद और पुराण। वेद और पुराण में सन्तों की महिमा का वर्णन मिलता है। [१]

संगति का परिणाम

गोस्वामीजी मानते है कि संगति ही हमें अच्छा या बुरा बनाती है। सत्संगति हमें ठीक रास्ते पर ले चलती है। कुसंगति से हम बुरे हो जाते हैं। सत्संगति का परिणाम अच्छा होता है, कुसंगति का बुरा। इस तत्व पर गोस्वामीजी ने अत्यधिक बल दिया है। एक ही वस्तु भिन्न पदार्थों से मिल जाने पर अच्छी या बुरी हो जाती है।

साधु भक्त के घर में पलने वाले तोते भगवान के नाम का उच्चारण किया करते हैं, तो असाधु के घर का तोता गालियां देना ही जानता है। इससे स्पष्ट है कि संगति अच्छे लोगों से होने के कारण तोता अच्छा हो गया, बुरे लोगों से होने के कारण बुरा हो गया। सत्संगति की महिमा सभी लोग जानते हैं, वह छिपी हुई नहीं है। [२]

सत्संग से ही विवेक की उत्पत्ति होती है। उसके लिए भगवान की कृपादृष्टि की भी ज़रूरत है। सभी मंगलों का मूल सत्संगति ही है। सारी सिद्धियों का मूल भी वही है। [३]

१- संत संग अपवर्ग कर कामी भव कर पंथ।कहहिं संत कवि कोविद श्रुति पुरान।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६६

२- सुनि अचरज करै जनि कोई। सत संगति महिमा नहिं गोई।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१३

३- बिनु सत्संग विवेक न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२४

सतसंगति मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४

दुर्जनों पर भी सत्संगति का प्रभाव पडता है । सत्संगति में पडने पर वे भी सुधर जाते हैं । ~~कुसंगति में पडने पर वे भी सुधर जाते हैं ।~~ कुसंगति में पडने पर ~~भी~~ सज्जनों के स्वभाव में कोई परिवर्तन नहीं होता । उनके गुण ज्यों के त्यों रहते हैं । कुसंगति का कोई कुप्रभाव उन पर नहीं पडता । [1]

एक ही पदार्थ भिन्न भिन्न वस्तुओं की संगति से अच्छा या बुरा पदार्थ बन जाता है । वायु के साथ रज भी आकाश में उड जाती है, वही जल के साथ कीचड़ बन जाती है । साधु के घर का तोता -राम नाम से प्रभावित है, असाधु के घर का तोता गालियां ही जानता है । [2]

वैसे कुसंगति से धुआं कारिख हो जाता है लेकिन वही वस्तु स्याही के रूप में पुराण लिखने के काम में आती है । वह धुआं जीवन प्रदान करनेवाला बादल होता है । सत्संगति या कुसंगति में पडने का यही परिणाम है । [3]

गोस्वामीजी मानते हैं- अच्छी वस्तु के बुरी वस्तु से मिलने पर उसमें कुछ भी परिवर्तन नहीं होता । उसके गुण ज्यों के त्यों रहते हैं । बुराई का कोई प्रभाव उस पर नहीं पडता ।

१- सठ सुधरहिं सत संगति पाई । परस कुधातु सोहाई ।
विधि बस सुजन कुसंगति परहीं । फनि मनि सम निज गुण अनुसरहीं ।
मानस-पृष्ठ-१४,बालकाण्ड

२- गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा । कीचहि मिलइ नीच जल संगा ।
साधु असाधु सदन सुक सारी । सुमिरहिं साधु देहिं गनि गारी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३

(३) ग्रह भेषज पवन पट पाइ कुजोग सुजोग ।
होहिं कुवस्तु सुवस्तु जग लखहि सुलक्खन लोग ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३

मदिरा में गंगाजल भी मिला हुआ है। फिर भी अच्छे लोग याने सन्त लोग उसे पीते नहीं। गंगाजल में मदिरा भी मिली हुई है। उसमें सन्त लोग अत्यधिक आदर-भाव से स्नान करते हैं। इससे स्पष्ट है कि बुरी वस्तु से अच्छी वस्तु मिलने पर अच्छी वस्तु की हानि होती है। लेकिन अच्छी वस्तु से बुरी वस्तु के मिलने पर उसकी कोई हानि नहीं होती। [१]

सत्संग की महिमा अत्यधिक सराहनीय है। उनका मत है कि सात स्वर्ग का सुख भी सत्संग के उस सुख के समान नहीं हो सकता। सत्संग का सुख मोक्ष के सुख के समान भी नहीं हो सकता।[२]

गोस्वामीजी ने प्राकृतिक उपमानों से भी सत्संग की महिमा की घोषणा की है। शरद्कालीन धूप का नाश जिस प्रकार चन्द्रमा करता है उसी प्रकार सज्जनों के दर्शन मात्र से पाप दूर हो जाता है। [३]

लेकिन यह सत्संग की प्राप्ति अत्यधिक दुर्लभ है। भाग्य से ही उसकी प्राप्ति संभव है। पुण्यवान लोगों को ही सत्संगति में रहने का सौभाग्य मिलता है। [४]

१-सुरसरि जल कृत बारुनि जाना। कबहुं न संत करहि तेहि पाना।
  सुरसरि मिले सो पावन जैसें। ईस अनीसहि अंतरु तैसें।।
  मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५०

२- तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
  तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत संग।।
  मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-७१

३- चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहइ न संकर द्रोही।
  सरदातप निसि ससि अपहरई। संत दरस जिमि पातक टरई।
  मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६६

४- बडे भाग पाइअ सत संगा। बिनहि प्रयास हो भव भंगा।
  मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६६

हरि कथा से प्रेम बढ़ने केलिए सत्संग की जरूरत है । उससे मोह भी दूर भाग जाता है । मोह नष्ट होने पर ही राम चरण से प्रीति उत्पन्न होती है । सत्संग के अभाव में हरि कथा होती ही नहीं । [१]

स्पष्ट है कि सत्संग ही सब गुणों का मूल है । हरि कथा श्रवण करना जो पसन्द करता है उसे अवश्य सज्जनों की संगति में रहना है । सत्संग ही इन सभी केलिए परम आवश्यक है । [२]

दुनिया में ये सज्जन बहुत कम पाये जाते हैं । उनकी संगति में रहने से बहुत फायदा होता है ।

सत्संगति में जो समय बिताया जाता है वह समय अत्यधिक मूल्यवान है । उसी प्रकार दान में खर्च किये गये धन का अत्यधिक महत्व माना गया है । वैसे पुण्य में लगी हुई मति भी प्रशंसनीय है । [३]

खल-निन्दा

गोस्वामीजी ने अपने पुण्य ग्रन्थ में दुष्टों की भी वन्दना की है ।

१- बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गए बिनु रामपद होइ न दृढ़ अनुराग ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०८

२- संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही । चितवहिं रामु कृपा करि जेही ।
राम कृपा तव दरसन भयऊ । तव प्रसाद सब संसय गयउ ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२०

३- पूँछिहु रामकथा अति पावनि । सुक सनकादि संभु मन भावनि ।
संत संगति दुर्लभ संसारा । निमिष दंड भरि एकौ बारा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६

मूर्ख व्यक्ति को उपदेश देना व्यर्थ है। गोस्वामीजी अच्छे उपदेशक है। कुछ विद्वान उपदेश देने में समर्थ है, लेकिन उन उपदेशों के अनुसार चलना वे पसन्द नहीं करते। उपदेश देने का अधिकारी वही है जो उस उपदेश के अनुसार आचरण करने केलिए तैयार है। उपदेश ऊपर से कडुवा होने पर भी भीतर से अत्यधिक मीठा होता है।

खल हमेशा दूसरों की हानि करने में दत्तचित्त रहते हैं। वे हमेशा दूसरों की अवनति पर अत्यधिक सन्तुष्ट होते हैं और उन्नति पर दुःखी। वे सभी लोगों के प्रतिकूल रहना पसन्द करते हैं। उनके हृदय की कुटिलता यहां व्यक्त होती है।[१]

वे हमेशा पूर्ण चन्द्र केलिए राहु के समान है। औरों का काम बिगाड़ना ही उनका धर्म है और वे दूसरों के दोषों को अत्यधिक बढ़ा चढ़ाकर कहते हैं। जिस प्रकार मक्खी घी पर बैठकर घी को बिगाड देती है उसी प्रकार ये लोग भी दूसरों को बिगाड़ने में समर्थ है।[२]

दूसरों की हानि करने केलिए वे अपने आप को मिटा देते हैं। इसमें भी उन्हें संकोच नहीं। ओले खेती को नष्ट कर देते है और स्वयं अपना अस्तित्व खो देते हैं। हजारों मुखों से वे दूसरों का दोष कह डालते हैं। दोष कहते

१- बहुरि बंदि खल गन सतिभायें। जे बिनु काज दाहिने बायें।
पर हित हानि लाभ जिन केरें। उजरें हरष बिषाद बसेरें।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५

२- हरिहर जस राकेस राहु से। पर अकाज भट सहस्र बाहु से।
जे पर दोष लखहिं सहस्रांखी। परहित घृत जिनके मनमाखी।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

कहते वे थकते नहीं। ओले की भांति दूसरों को कष्ट पहुंचाने केलिए वे कोई भी कर्म करने केलिए भी तैयार हैं। [१]

उनमें अहं की भावना अत्यधिक मात्रा में होती है। चाहे मित्र हो, तो भी उसकी भलाई की बात सुनकर वह स्वयं ईर्ष्या से जल उठता है। [२]

ये दुर्जन तो सांसारिक विषयवासनाओं के पीछे पड़नेवाले हैं। बुराइयों की खान है दुर्जन। वे निर्दयी और कपटी होते हैं। किसी भी व्यक्ति से वे मित्रता का व्यवहार नहीं करते। सभी लोगों से-हितकारियों से भी-घृणा का व्यवहार करते हैं। [३]

वे तो झूठ के दास हैं। उनकी वाणी तो अत्यधिक मीठी होती है। सुननेवालों को उनकी यह वाणी अमृत की वर्षा जैसी लगती है। उनका हृदय पत्थर के समान कठोर है। दूसरों की वेदना से उनका हृदय नहीं पसीजता।

१- पर अकाज लगि तनु परिहरहीं। जिमि हिमि उपल कृषी दलि गरहीं।
बंदौ खल जस सेष सरोषा। सहस्र वदन बरनहिं पर दोषा।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१७

२- उदासीन अरि मीत हित सुनत जरहि खल रीति।
जानु जानि जुग जोरि जनु बिनती करइं सप्रीति।
मानस-बालकण्ड,पृष्ठ-१९

३- काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन।
वयस अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

दुर्जन हमेशा दूसरों को उपद्रव पहुंचाते हैं। वे पर-अपवाद में भी रत है। उनकी निन्दा करना भी उन्हें पसन्द है। उनकी करनी अत्यधिक पैशाचिक है। वे मनुष्य रूप धारण किए हुए राक्षस हैं। १

सारे अवगुण उनमें कूट कूट कर भरे हुए हैं। लोभ तो उनका साथी ही है। लोक से बिछुड़कर रहने में वे अशक्त हैं। २

दूसरों के हृदय को वेदना पहुंचाने वाला कोई काम करना उचित नहीं। दूसरों को कष्ट पहुंचाने वाले को स्वयं अत्यधिक दु:ख सहना पड़ता है। वे तो स्वार्थी हैं, विषयों के पीछे वे भटकते रहते हैं।[3]

दुर्जनों का और एक विशेष प्रकार का स्वभाव देखने को मिलता है। जिन लोगों ने उन्हें उन्नति के शिखर पर चढ़ाया उन्हीं लोगों के साथ अत्यधिक नीचता का व्यवहार वे करते हैं। अग्नि से उत्पन्न धुँआँ बादल बनकर उसे बुझा देता है। ४

१- परद्रोही परदार रत परधन पर अपवाद।
ते नर पामर पापमय देह धरे मनुजाद।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

२- लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रासन।
काहू कै जौ सुनहि बडाई। स्वास लेहिं जनु जूडी आई।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

३- नर सरीर धरि जे पर पीरा। करहिं ते सहहिं महाभव भीरा।
करहि मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत पर लोक नसाना।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७

४- जेहि ते नीच बडाई पावा। सो प्रथमहि हठि ताहि नसावा।
धूम अनल संभव सुनु भाई। तेहि बुझाव घन पदवी पाई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८४

दूसरों की उन्नति से वे जल उठते हैं। चाहे वह मित्र हो, शत्रु क्यों न हो, दूसरों का अमंगल वे चाहते हैं।

दुष्ट मनुष्य कभी अपनी दुष्टता नहीं छोड़ता। इसका स्पष्ट उदाहरण है कौआ। कौवे को कितने ही प्यार से पालने पर भी वह अपने कुत्सित स्वभाव को कभी छोड़ता नहीं। कमल-जोंक ये दोनों, एक साथ ही पैदा होते हैं पर उनका स्वभाव अलग अलग होता है। [१]

अच्छे लोग अपनी भलाई से शोभित होते हैं, पर बुरे लोगों का आभूषण बुराई है। अमृत को सज्जनों से और विष को दुर्जनों से उपमित किया जाता है। सज्जन तो सदा अच्छे कर्म करने में लगे रहते हैं, बुराई की ओर वे झुकते नहीं। लेकिन दुर्जन बुरे कर्म करने में आनन्द पाते है। [२]

वे पाप कर्म करने में अत्यधिक निपुण होते हैं, वैसे सज्जन सत् कर्म करने में अति निपुण हैं। खलों के अवगुणों की सीमा नहीं होती, वैसे सज्जनों के गुणों की भी सीमा नहीं है। [३]

१- वायस पलि अहिं अति अनुरागा। होहिं निरामिष कबहुं कि कागा।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८

ब- उपजहिं एक संग जग माहीं। जलज जोंक जिमि गुन विलगाहीं।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

२- भलो भलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु।

सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीच।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

(३) खल अघ अगुन साधु गुन गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा।

तेहि ते कछु गुन दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०

उन्हें सुधारने की कोशिश करना व्यर्थ है। क्यों कि कितना ही प्रयत्न करने पर भी वे सुधरते नहीं। ग्रह से ग्रसित होने पर मद्य पिलाने से कोई फायदा नहीं है।[१]

खल बुरे स्वाभाव के गुलाम है, इसी कारण वे उसे कभी नहीं छोड़ते। तब वह कैसे उससे दूर रह सकता है।[२]

वे हमेशा झूठ बोलने वाले होते है। उनके व्यवहार में हर कहीं झूठ दिखायी पड़ता है। उनकी वाणी बाहर से मीठी लगती है लेकिन भीतर से अत्यधिक कठोर होती है। उनके व्यवहार में कुटिलता ही कुटिलता भरी हुई है।[३]

भाग्यवाद

गोस्वामीजी मानते है कि विधि टालने से भी टलती नहीं। कवि भाग्यवाद पर आस्था रखनेवाले हैं। 'मानस' में उन्होंने यह विचार व्यक्त

१- ग्रह ग्रहीत पुनि बस तेहि पुनि बीछी मार।
ताहि पि आइअ बारुनी कहहु काह उपचार।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५३

२- खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२

३- झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना।
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाहिं महा अहि हृदय कठोरा।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

किया है । किसी बात का अनुभव होने पर ही उस पर विश्वास आता है । सब कुछ विधि के अनुसार चलता है । [१]

ब्रह्मदेव की लिखावट को कोई भी मिटा नहीं सकता, चाहे वह देवता हो, मुनि क्यों न हो, इसमें कुछ भी परिवर्तन नहीं होता । विधाता के अधीन में सब कुछ रहता है । [२]

गोस्वामीजी होनहार के वश सब कुछ छोड़ देते है । उसी के अनुसार ही सब कुछ होता है । [३]

१- कह मुनीस हिमवंत सुनु जो विधि लिखा लिलाइ ।
देव दनुज नर नाग मुनि कोउ न मेट निहार ।।
मानस -बालकाण्ड,पृष्ठ-१४८

२- अस विचारि सोचहि मति माता ।सो न टरै जो रचै विधाता ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८६
(अ) मेटि जाइ नहिं राम रजाई । कठिन करम गति कछु न बसाई ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४७
(आ)जनि मनहु हियं हानि गलानी । काल करम गति अघटित जानी ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२३२

३-तुलसी जसि भवितव्यता तैसइ मिलै सहाइ ।
आपुन आवइ ताहिं पहिं ताहि तहं लै जाइ ।।
भूपति भावी मिटै नहि जदपि न दूषन तोर ।
किए अन्यथा होइ नहिं विप्रसात अतिघोर ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३००
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

हरि -इच्छा रूपी भावी तो अत्यधिक प्रबल है। उसके सामने किसी का वश नहीं चलता। हानि,लाभ,जीवन,मरण,यश,अपयश ये सभी बातें विधाता के वश की बातें हैं। हानि,मरण आदि न चाहते हुए भी स्वयं आ जाते हैं।[१]

तुलसी को जो सुख भोगने को मिला उसे उन्होंने अपने भाग्य का लेखा माना। शुभ या अशुभ फल देनेवाली कर्मगति की कटु आलोचना करते है गोस्वामीजी।[२]

भाग्य के पलटने पर सब कुछ बदल जाते है। विधि तो कभी कभी हमारी इच्छा के विपरीत सब कुछ कर डालती है। ब्रह्मदेव के नियम के अनुसार सारी बातें होती हैं।[३]

गोस्वामीजी लौकिक जीवन की साधारण बात पर भी ज़ोर देते है। कर्म के अनुसार हमें सुख-दुःख भोगना पड़ता है। अच्छे कर्म के करने से उसका फल अच्छा निकलता है, बुरे कर्म के करने से उसका फल बुरा निकलता है। कर्म पर सब कुछ निर्भर है। जो बोता है वही काटता है।[४]

१- सुनहु भरत भावी प्रबल विलखि कहेउ मुनि नाथ
हानि लाभु जीवन मरनु जसु अपजसु विधि हाथ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४०

२- कौसल्या कह दोसु न काहू। करम विवस दुख सुख छति लाहू।
कठिन करम गति जान विधाता। जो सुभ असुभ सकल फल दाता।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४१०

४- रघुपति सर सिर कटेहु न मरई। विधि विपरीत चरित सब करई।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३७२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

हरि की इच्छा रूपिणि भवितव्यता अत्यधिक दृढ़ है । उसके अनुसार सब कुछ चलता है । [१]

विधाता के रुष्ट हो जाने पर सारी बातें बिगड़ जाती हैं । छोटी सी बिगडी बात को विधाता चाहें तो मेरु के समान कर सकते है । [२]

नारी

रामचरित मानस में नारी के संबन्ध में गोस्वामीजी ने अपना जो विचार व्यक्त किया है उसके आधार पर कुछ लोग उन पर आरोप लगाते हैं कि गोस्वामीजी नारी के प्रति ईर्ष्या रखनेवाले है । और इसी कारण उन्होंने नारी की निन्दा की है । लेकिन लोगों के इस कथन के आधार पर उन्हें नारी-निन्दक नहीं कह सकते । असल में उन्हें नारी के प्रति द्वेष नहीं है । तुलसी के युग के समाज की हालत अत्यधिक शोचनीय थी । उस युग की नारी तो विलासिता में डूबकर अपने आप को भूली हुई थी । इस प्रकार की सामाजिक दुरवस्था वे सहन नहीं कर सकते थे । इसके समाज को उबारना उन्होंने अपना कर्तव्य समझा था । नारी की गिरी अवस्था देखकर ही उन्होंने फटकार का वचन सुनाया । इन उक्तियों के पीछे तुलसी के युग का प्रतिबिंब अवश्य झलक पड़ता है ।

१- प्रेरि सतिहि जेहिं झूठ कहावा । हरिइच्छा भावी बलवाना ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३१

२- भरद्वाज सनु जाहि जब होइ विधाता वाम ।
धूरि मेरु सम जनक सम ताहि व्याल सम दाम ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०९
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी की एतद्विषयक सूक्तियां बडी सशक्त है । स्वभाव से ही नारी जड़ और अज्ञ या मूर्ख होती है । गोस्वामीजी के समय मे शायद नारी सामान्यत: शिक्षित नहीं थी । नारी को अज्ञ कहने का यही कारण होगा - ऐसा अनुमान करना पडता है । [1]

कवि लोगों का कहना है कि नारी का स्वभाव समझ में न आनेवाला है, उतना गूढ है । अथाह है उनका अनोखा स्वभाव है । बातों को वे छिपाकर रखती है । [2]

वे आगे कहते है कि ब्रह्मदेव भी अवगुणों की खान नारी-हृदय को नहीं जान सकते । उसके हृदय में कपट भरा हुवा है । [3]

स्त्री अपने रिश्तेदार होने पर भी सुन्दर आकृतिवालों पर मुग्ध होती है, चाहे वह भाई हो, पिता हो, पुत्र हो, कोई भी हो, उसे कुछ भी परवाह नहीं । विकार की उमंग में पडकर वे अपने आप को भूल जाती है । यहां गोस्वामीजी ने तत्कालीन सामाजिक दुरवस्था में पडी नारी का चित्र यथार्थ खींचा है । [4]

१- कीन्ह कपटु मैं संभु सन, नारि सहज जड़ अग्य ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३३

२- सत्य कहहिं कबि नारि सुभाऊ।सब बिधि अगहु अगाध दुराऊ ।

निज प्रतिबिंबु बरुकु गहि जाई । जानि न जाइ नारि गति भाई ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-७४

३- बिधिहुं न नारि हृदय गति जानि । सकल कपट अघ अवगुन खानी ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२२७

४- भ्राता पिता पुत्र उरगारी । पुरुष मनोहर निरखत नारी ।

होइ बिकल सक मनहिं न रोकी । जिमि रबि मनि द्रव रबिहि बिलोकी ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५३६

नारी को अधम से अधम कहा गया है ।[१]

वे कहते हैं कि युवती-स्त्री की रक्षा अत्यधिक ध्यान से करने पर भी वह किसी के वश में स्थिर नहीं रह सकती । चाहे उसे हृदय में ही रख लिया जाये तो भी कोई फायदा नहीं । संस्कृत में एक उक्ति है ।[२]

अंके स्थितापि युवती परिरक्षणीया, शास्त्रे नृपे
च युक्तौ च कुतो वशित्वम् ।

लोभ, धनमद, प्रभुता नारी आदि पतन के साधन हैं । नारी के नयन-रूपी बाणों के लग जाने से भी मनुष्य का नाश अवश्य संभव है । लोभ से मनुष्य की स्थिति अत्यधिक बिगड़ जाती है । लोभ सबका नाश कर डालता है । धन अत्यधिक मात्रा में हो जाय तो उसकी बुद्धि वक्र हो जाती है । नारी के प्रेम-पाश में पड़कर मनुष्य सारे सगे संबन्धियों को भूल जाता है । और उसके चारों ओर मंडराता रहता है । वह अपने नयन बाणों से सभी से कुटिलता का व्यवहार करता है ।[३]

१- अधम ते अधम अधम अति नारी । तिन्ह महु मैं अतिमन्द अघारी ।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५८३

२- राखिअ नारि जदपि उर माहीं । जुवती शास्त्र नृपति वश नाहीं ।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५८६

३- ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार
कहि कै लोभ विडंवना कीन्हिं न येहि संसार ।
श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि ।
मृग लोचनि के नयन सर को अरु लाग न जाहि ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२२

गोस्वामीजी का मत है कि नारी कर्तव्य पथ में बाधा उपस्थित करती है। स्त्री पर दृष्टि पड़ते ही पुत्र मां-बाप को मानने वाले नहीं होते। गृहस्थ बनने के बाद भी मां बाप की सेवा करनी चाहिए। माता-पिता के बताये रास्ते पर चलना पुत्र का कर्तव्य है। नारी बाधा रूप खड़ी होती। वह अपने नयन जाल में सब को फंसाकर उन्हें वहां बसा देती है।[१]

विलासिता में डूबी नारी को देखकर ही शायद गोस्वामी ने नारी को विषयवासना में लीन कहा है। कामासक्ति की प्यास बुझानेवाले साधनों में नारी का महत्वपूर्ण स्थान है। वह सर्वोत्कृष्ट सांसारिक भोग-साधन है।[२] उस समय नारी केवल विषय भोग का साधन मानी जाती थी। समाज में उसे निम्न कोटि का स्थान मिलता था। शिक्षा पाने का अधिकार उसे नहीं था। उस समय के नारी समाज को देखकर ही यों लिखा गया है कि नारी आसक्ति की जड़ है। विषय वासनाओं में माया की मूर्ति सभी को दु:ख देने वाली कही गयी है। काम, क्रोधादि विकारों में माया सभी को दु:खद है। नारी माया का प्रतिनिधित्व करती है।[३]

१- सुत मानहि मातु पिता तब लौं अबलानन दीख नहीं जब लौं।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१०५१

२- एहि के एक परम बल नारी। तेहि ते उबर सुभट सोइ भारी।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६१

३- काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह के धारि।

तिन्ह महं अति दारुन दु:खद मायारूपी नारि।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६६

(अ) काम, क्रोध, मद, मत्सर भेका। इन्हहि हरष प्रद बरषा एका।

दुर्बासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहं सरद सदा सुखदाई।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६६

(आ) अपन सुनी सठ ता करि बानी। बिहंसा जगत विदित अभिमानी

सभय सुभाव नारि कर सांचा। मंगल महुंभय मन अति कांचा।

मानस-किष्किन्धा काण्ड, पृष्ठ-१३६

स्त्रियों का मन कच्चा होने के कारण उनका स्वभाव अत्यन्त डरपोक होता है। यहां स्त्रियों की भावुक और भयपूर्ण स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। नारी-मनोविज्ञान की बात पर यहां प्रकाश पड़ा है।

माया रूपी नारी के कटाक्ष विक्षेपों से विद्ध होकर मुनि श्रेष्ठ भी नतमस्तक हो जाते हैं। नारी के आकर्षण के चक्कर में कौन नहीं पड़ सकता है।[१]

नारी- धर्म

भारत की संस्कृति मूलत: स्त्री की पूजा करती है। संसार की सृष्टि के मूल में आदि शक्ति को हम पाते हैं। शिव शक्ति से युक्त होकर संसार का सृजन करते हैं। वह शक्ति माता के रूप में हमारा पालन करती है। ऐसी शक्ति की प्रतिनिधि स्वरूपा नारी आदरणीय है। भारत ने उसकी धन्यता का कारण पुरुष की अर्द्धांगिनी बनने में माना है। ' पत्नी ' शब्द की व्युत्पत्ति पति शब्द से निष्पन्न करने वाले व्याकरणकार यागादि में सहधर्मिणी के संग पर ज़ोर देते हैं। साथ ही वे यह घोषणा करते हैं कि पति के बिना, उसकी पूजा के बिना स्त्री का जीवन अपूर्ण और व्यर्थ होता है। यद्यपि आधुनिक युग के स्वतंत्रता-प्रेमी विचारों से यह भाव-धारा मेल शायद न रखती हो, तथापि मध्यकालीन भक्तिकाव्य के सभी प्रणेता स्त्री का चित्रण पुरुष की सहधर्मिणी, प्रेयसी या विरहिणी के रूप में करते हैं।

तुलसी ने सीता, कौसल्या आदि स्त्रियों के आदर्श चरित्र के चित्रण के ज़रिये भारतीय नारी -समाज के सामने आदर्श नारी-जीवन का उदाहरण प्रस्तुत

१- सो मुनि ग्यान निधान मृगनयनी विधु मुख निरखि।
विवस होहिं नारि विश्व माया प्रकट ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२११

किया है । उन्होंने बारंबार स्त्री के धर्म पर सूक्तियां सुनायी हैं ।

गोस्वामीजी ने मानस में नारी-धर्म के बारे में जगह जगह पर सूक्तियां के रूप में अपना विचार व्यक्त किया है ।

गोस्वामीजी नारी-धर्म के बारे में हमेशा जागरूक रहते हैं । पति के चरणों की पूजा करना नारी को अपना कर्तव्य समझना चाहिए । नारी का यह परम धर्म है । पत्नी केलिए पति देवता है । इसी कारण उनकी वन्दना करना नारी का धर्म है । [१]

नारियों का दूसरा धर्म यह बताया गया है कि अत्यधिक आदर से सास-ससुर के चरणों की पूजा करना । नारी का यह और एक धर्म बताया गया है । यहां भारतीय पारिवारिक जीवन के एक सुन्दर पहलू पर प्रकाश डाला गया है । [२]

पत्नी केलिए दूसरे सगे संबन्धी जैसे माता, पिता, भाई आदि से अधिक देने वाले है पति । इसी कारण पति, पत्नी का देवता कहा गया है । पिता के देने की एक सीमा होती है, वैसे अन्य स्वजन की भी । लेकिन एक सीमा तक ये स्वजन देते हैं । पति तो असीम देनेवाले हैं । पति केलिए जो कुछ वस्तुएं है वे सब पत्नी की भी होती है । ऐसे पति की सेवा करने में विमुख रहनेवाली नारी सचमुच अधम है । [३]

१- करेहु सदा संकट पद पूजा । नारि धरम पति देव न दूजा ।
वचन कहत भरे लोचन वारी । बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६७

२- एहि ते अधिकु धरमु नहिं दूजा । सादर सासु ससुर पद पूजा ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६३

३- मातु पिता भ्राता हितकारी । मितप्रद सब सुनु राजकुमारी ।
अमित दानि भर्ता वैदेही । अधम सो नारि जो सेवन तेही ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४८८

मितं ददाति च पिता मितं भ्राता मितं सुता ।
अमितस्य च दातारं भर्तारं कानु सेवयेत् ।

चाहे पति बूढ़ा हो, रोगी हो, मूर्ख हो जो हो, पति की उपेक्षा किसी भी अवस्था में नहीं करनी चाहिए । अवगुणों के होते हुए भी पति अपमान का पात्र नहीं होना चाहिए । यदि उसका अपमान हो जाय तो उसे नरक का दु:ख भोगना पड़ता है । शुद्ध हृदय से पति-सेवा ही स्त्री का एक मात्र व्रत होना चाहिए । इसी एक मात्र व्रत से संपूर्ण धर्म, व्रत आदि का फल उसे मिल जाता है । [1]

पति को धोखा देकर दूसरे पति से संभोग करना कठिन पाप है । ऐसी धोखा देनेवाली नारी अवश्य रौरव नरक में पड़ जाती है । [2]

पातिव्रत्य धर्म धारण करनेवाली स्त्री स्वयं- बिना प्रयत्न के - परम गति को प्राप्त करती है । पातिव्रत्य धर्म की अत्यधिक महिमा है । पुराण

१- धीरजु धर्म मित्र अरु नारी । आपद काल परिखि अहि चारी ।
वृद्ध रोगबस जड़ धनहीना । अंध बधिर क्रोधी अति दीना ।
ऐसेहु पति कर किंत अपमाना । नारि पाव जमपुर दु:ख नाना ।
एकै धर्म एक व्रत नेमा । काय वचन मन पति पद प्रेमा ।
मानस - अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४८८

२- पति वंचक पर पति रति करई । रौरव नरक कल्प सत परई
मानस- अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४८६

टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

यज्ञ, दान आदि पुण्य कर्म करके शुभ गति प्राप्त करता है। लेकिन नारी को पति-सेवा करने से बढ़कर कोई पुण्य-कर्म करने की आवश्यकता नहीं। पति के प्रतिकूल रहनेवाली नारी अवश्य अगले जन्ममें युवावस्था में ही विधवा बन जाती है। विधवा बनना अत्यधिक दारुण दुःख है। [1]

पत्नी को तो पति की इच्छा के अनुसार काम करने वाली होना चाहिए। सास-ससुर का आदर भी उसे करना पड़ता है। पति के बताये रास्ते पर चलकर उनकी आज्ञाओं का पालन करना पत्नी का धर्म है। तभी पतिव्रता नारी बन सकती है। [2]

पति-पत्नी में परस्पर अतिशय श्रद्धा होनी चाहिए। दांपत्य जीवन में तभी मधुरता आ जाती है। पति से बिछुड़कर रहना पत्नी केलिए अत्यधिक दुस्सह है। विरह-जन्य उस दुःख के समान इस संसार में नहीं है अर्थात् आदर्श पत्नी कभी पति से अलग होकर रहना पसन्द नहीं करती। [3]

स्वभाव से ही नारी को अपवित्र कहा गया है। लेकिन अगर वह पति की सेवा अत्यधिक ध्यान से करती है तो उसे अवश्य अच्छी गति याने सद्गति मिल

१- बिनु श्रम नारि परम गति लहई पतिव्रत धर्म छांडि छल गहई।
प्रति प्रतिकूल जनम जंह जाई। विधवा होइ पाइ तरुनाई।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४००

२- सासु ससुर गुर सेवा काहू। पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-५५७

३- मैं पुनि समुझि दीखि मन मांही।
पिय वियोग सम दुखु जग मांही।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-७७

जाती है। पत्नी पति से अलग नहीं होती। उनकी सेवा-शुश्रुषा में जीवन बिताना चाहिए।[१]

तपस्या की महिमा

भारत में पुराने ज़माने से ही तपस्या का अत्यधिक महत्व माना गया है। ऋषि-मुनियों से भरा हमारा देश तप का केन्द्र रहा है। कितने मुनि लोग तपस्या करके निर्वाण पद के अधिकारी बन गये हैं। कठिन तपस्या द्वारा हम अपने अभीष्ट की पूर्ति कर सकते हैं।

अत्यधिक दु:ख सहकर तपस्या का निर्वाह करने पर उसका अन्तिम परिणत फल सुखद होता है। तपस्या दु:खद है लेकिन उसके साथ साथ वह सुखदायी भी है।[१]

तपस्या का बल अमोघ है। ब्रह्मा को भी तपस्या की ज़रूरत है। उसी के बल से विधाता संसार की रचना करते हैं। संसार की रक्षा करने वाले विष्णु और संहार करनेवाले शिवजी का भी एकमात्र बल तपस्या है। तपस्या

१- सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ ।
जसु गावत श्रुति चारि अजहुं तुलसि का हरिहि प्रिय ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६०

२- मातु पितहिं पुनि यह मन भावा ।
तपु सुख प्रद दुख दोष नसावा ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

से सभी वस्तुओं को पा सकते हैं, कुछ भी दुर्लभ नहीं है । [१]

समन्वय-भावना

विभिन्न संस्कृतियों, जातियों और आचार निष्ठाओं से भरी-पूरी भारत में एक समन्वय सूत्र की नितान्त आवश्यकता है । जीवन के सभी स्तरों में रह चुकने के कारण गोस्वामीजी में समन्वय की विराट चेष्टा विद्यमान है । डा० ग्रियर्सन गोस्वामीजी को बुद्धदेव के बाद भारत का सबसे बड़ा लोकनायक मानते हैं । 'मानस' में आरंभ से अन्त तक समन्वय भावना दृष्टिगोचर होती है । उन्होंने पांडित्य और अपाण्डित्य का, लोक और शास्त्र का, गार्हस्थ्य और वैराग्य का, भक्ति और ज्ञान का समन्वय किया है । भावों में ही नहीं, काव्य - रूप में भी उन्होंने सभी काव्य-पद्धतियों का समन्वय करके दिखाया है । दोहा-चौपाई, कवित्त-छप्पय, अनुष्टुप, मन्दाक्रान्ता आदि सभी छन्दों का उत्तम समन्वय है । आचार्य शुक्लजी ने तुलसीदास के इस पक्ष पर अत्यधिक ज़ोर दिया है ।

१- तप अधार सब सृष्टि भवानी । करहि जाइ तपु अस जिय जानि ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४

(अ) जनि अचरज करहु मन माहीं । तप तें दुर्लभ कछु नाहीं ।

तप बल तें जग सृजै विधाता।तपबल विस्नु भए परित्राता ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८४

(आ)तपबल रचै प्रपंचु विधाता । तप बल विस्नु सकल जग त्राता ।

तप बल संभु करहिं संघारा । तप बल सेषु धरै महि भारा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी का मत है मनोवांछित फल पाने केलिए शिवजी की पूजा अवश्य करनी चाहिए । अन्य योग,जप आदि से उसकी सिद्धि नहीं होती ।[१]

शिवजी से प्रेम न रखने वाला राममक्त मक्त होने पर भी वह राम के दर्शन नहीं कर सकते । मनुष्य को राम भक्ति के साथ साथ शिव भक्ति का आश्रय भी ग्रहण करना चाहिए । इन दोनों से विमुख रहना अच्छा नहीं । उसका परिणाम बुरा होगा । सपने में भी उसे सुख का अनुभव नहीं होता । [२]

गोस्वामीजी शिव और राम दोनों के भक्त होने के कारण राम की भक्ति करने के साथ साथ शिवजी की भी आराधना करते है । शिवजी का भजन न करने वाला इस लोक और परलोक में सुखी होकर नहीं रह सकता । उसे दु:खों का साथी रहना पडता है । अर्थात् उसके दु:खों का अन्त नहीं होता । वह सदा अशान्त रहता है । राम के साथ साथ शिव की आराधना करनी चाहिए ।[३]

१- बरदायक प्रनतारति भंजन । कृपासिन्धु सेवक मन रंजन ।
इच्छित फल बिनु सिव अवराधे । लहिअ न कोटि जोग जप साधे ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५१

२- सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं । राम भगत कर लच्छन एहू ।
बिनु छल विश्वनाथ पद नेहू । राम भगत कर लच्छन एहू ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२००

३- न यावद् उमानाथ पादारविंदं । भजन्तीह लोके परे वा नराणां ।।
न तावत्सुखं शांति संताप नाशं । प्रसीद प्रभो सर्व भूताधिवासं ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

हरि और हर से विमुख रहनेवाले का कल्याण नहीं होगा। अगर उसे धर्म में विश्वास नहीं है तो फिर क्या कहना है। इन दोनों में कभी भेद नहीं रखना है। [१]

सगुण भक्त होने पर भी गोस्वामीजी निर्गुण-भक्ति के प्रति विरोध नहीं रखते। वे निर्गुण भक्तों की निन्दा कभी नहीं करते। निर्गुण भक्ति की श्रेष्ठता को मानने केलिए वे तैयार है। वे निर्गुण और सगुण में भेद भावना नहीं मानते, दोनों को समान मानते हैं। यह उनकी समन्वयात्मक मनोवृत्ति का सुन्दर उदाहरण है। [२]

गोस्वामीजी भक्ति और ज्ञान में कुछ भी भेद नहीं मानते। इन दोनों का फल एक ही है, दोनों जीवों के दुःखों को दूर करते हैं। [३]

सेवक-सेव्य भाव के बिना हम कभी भवसागर पार नहीं कर सकते। गोस्वामीजी का यही विश्वास है। [४]

१- हरि हर विमुख धर्मरत नाहीं। ते नर तहं सपनेहु नहिं जाहिं॥
तेहि गिरि पर वट विटप बिसाला। नित नूतन सुन्दर सब काला॥
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०३

२- सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा।
अगुन अरूप अलख अज जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२०

३- भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१०

४- सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिय उरगारि।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२२

स्वामी - सेवक - संबन्ध का महत्व

तुलसीदास का युग राजाओं और रजवाडों और बादशाहों का युग था। वह युग पूर्णत: सामन्तवादी था। स्वामी सर्वप्रभु थे और सेवक दास। स्वामी और सेवक के संबन्ध में एक ओर आज्ञादायक और आज्ञाकारी का संबन्ध था, दूसरी ओर करुणा एवं श्रद्धा का वात्सल्य तथा ममता का संबन्ध था।

भगवान और भक्त के संबन्ध के विषय में अनेक रूपक होते है, कभी वह स्वामी-सेवक संबन्ध होता था, कभी पिता-पुत्र का, कभी अन्य प्रकार का। स्वामी का अर्थ होता है मालिक या स्वत्वाधिकारी। उसका अधिकार केवल दण्ड देने में ही नहीं है, उसे अपने सेवक का पालन पोषण करना है, वात्सल्य देना है। यों सेवक को अपने स्वामी के सुख-दुख में समान रूप से साथ देना है। उसे अनन्य आत्मीयता के साथ, स्वामी से स्वामी के साथ रहना है। स्वामी का तिरस्कार सेवक केलिए शोभा की बात नहीं। सच्चे सेवक को अपने स्वामी के हित केलिए अपने प्राणों का भी बलिदान करना पडता है।

गोस्वामीजी सेव्य-सेवक भाव की भक्ति करने वाले है। यही भक्ति मार्ग उन्हें पसन्द है। गोस्वामीजी का पता है कि सेव्य-सेवक भाव के बिना संसार सागर को पार नहीं किया जा सकता। स्वामी-सेवक संबन्ध पर गोस्वामीजी ने अपना विचार 'मानस' में व्यक्त किया है। सेवक को किसी भी अपवाद की चिन्ता किये बिना स्वामी की सेवा करनी चाहिए। स्वामी की उन्नति ही सेवक का लक्ष्य होना चाहिए। उसके रास्ते में जो जो कठिनाइयां उत्पन्न होती है उनका सामना करने केलिए उसे तैयार होना चाहिए। दूसरों की बुरी उक्ति पर उसे ध्यान नहीं देना चाहिए। [१]

१- करइ स्वामि हित सेवकु सोई। दूषन कोटि देइ किन होई।
अस बिचारि सुचि सेवकु बोले। जो सपनेहु निज धरमु न डोले।
मानस, अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२६५

स्वामी की सेवा कठिन साधना है । उनकी इच्छा-अनिच्छा समझकर उसके अनुसार काम करना चाहिए । यदि स्वामी की इच्छा के विरुद्ध कुछ कार्य हुआ तो उनके मुंह से गालियां बरस पड़ती हैं । सेवक को सब कुछ सुनना पड़ेगा । अन्य धर्मों कीअपेक्षा सेवक-धर्म को निभाना बहुत कठिन है । [१]

स्वामी की दया और सेवक के कर्तव्य पर तुलसी की आस्था थी । सेवक के धर्म को कैलाश से भी भारी कहा गया है । इसी से सेवक को अत्यधिक क्षमाशील होना चाहिए ।कुछ सेवक तो छल,कपट के व्यवहार से स्वामी का अपमान करते हैं । ऐसा करना तो ठीक नहीं है । यह स्वामी के प्रति घोर अन्याय होगा । [२]

स्वामी की भलाई करना सेवक का धर्म है । मालिक को लज्जित करनेवाले कार्य करना उचित नहीं । केवल अपनी भलाई चाहनेवाला मूर्ख है । अपने सुखों की उपेक्षा कर स्वामी की सेवा में तल्लीन होने वाला ही अच्छा सेवक है । [३]

सेवक का पहला कर्तव्य यह है कि स्वामी की आज्ञा का पालन जी-जान से करे । वास्तविक सेवा करने से ही परम आनन्द मिल सकता है ।

१- सिर भर जाउं उचित अस मोरा । सब तें सेवकु धरमु कठोरा ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६२

२- जौं हठ करउं त निपट कुकरमू । हर गिरि ते गुरु सेवक धरमू ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६७

३- जो सेवकु साहिबहि संकोची । निज हित चहइ तासु मति पोची ।

सेवक हित साहिब सेवकाई । करइ सकल सुख लोभ बिहाई ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८६

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

सेवक को अपने जीवन में सुख की आशा करना व्यर्थ है। उसका काम तो उतना कठिन है। जिस प्रकार सेवक को सुख मिलना कठिन है वैसे भिखारी का मान चाहने पर भी मिलता नहीं। व्यसनी को धन मिलना जैसे कठिन है वैसे ही व्यभिचारी को शुभ गति मिलना कठिन है। लोभी यश प्राप्त करने की इच्छा में है। संशयी को सुख की आशा करना व्यर्थ है, वैसे सेवक को सुख की आशा करना व्यर्थ है। [१]

यह मान्य तथ्य है कि सब को सेवक पर प्रीति होती है। लेकिन यह सभी केलिए लागू नहीं होता। सेवकों पर कुदृष्टि रखनेवाले लोग भी हैं, प्रीति रखनेवाले भी हैं। सेवकों को हम से अलग समझना उचित नहीं। उन्हें भाई समझकर उनसे भाई का सा व्यवहार करना चाहिए। [२]

सेव्य-सेवक भाव की भक्ति को गोस्वामीजी श्रेष्ठ मानते हैं। उसके बिना सागर तरना मुश्किल है। रामचन्द्र जी के भजन करने की बात पर वे जोर लगाते हैं। [२]

जो सेवक अपना काम निभाने में समर्थ होता है वही यथार्थ सेवक है। स्वामी का हित समझकर उसके अनुसार काम करने केलिए उसे हमेशा जागरूक रहना परम आवश्यक है। अगर कोई दुश्मन स्वामी के विरुद्ध आ जाय तो उसका सामना करना सेवक का कर्तव्य है। स्वामी सेवक को आज्ञा दे देते हैं। इसका पालन करना सेवक का परम कर्तव्य है। [३]

१- सेवक सुख चह मान भिखारी। व्यसनी धन सुभगति बिभिचारी।
लोभी जसु चह चार गुमानी नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ- ५४१

२- सब मम प्रिय नहिं तुमहि समाना। मृषा को न कहौं मोर यह बाना।
सबके प्रिय सेवक यह नीति। मोरें अधिक दास पर प्रीति।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३६

३- सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि। } मानस-उत्तरकाण्ड
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धाथ बिचारि ।। } पृष्ठ-२२२

स्वामी और सेवक के बीच का आदर्श-संबन्ध अत्यधिक सराहनीय है। अच्छे मालिक तो कभी सेवक को भूलते नहीं। आदर्श संबन्ध के वर्णन से स्पष्ट है कि प्रत्येक व्यावहारिक स्वामी-सेवक संबन्ध अन्यन्त सुन्दर तो नहीं है।[१]

सेवक प्रभु पर अवश्य भरोसा रखता है। यदि प्रभु सेवक की सहायता नहीं करता तब वह दुष्प्रभु होता है। निर्दय धनियों पर यहां व्यंग्य किया गया है। प्रभु ही उसका आश्रय है। उन पर उसकी जीविका चलती है। उसके पालन पोषण का उत्तरदायित्व उन पर रहता है। इसी कारण प्रभु को हमेशा सेवक की बातों पर सावधान रहना चाहिए।[२]

सेवक पर प्रभु के स्नेह की वर्षा होनी चाहिए। सेवक की ओर नीच दृष्टि डालना उचित नहीं। वह मालिक की प्रीति केलिए तड़पता रहता है। उसका एकमात्र सहारा प्रभु है। उसकी उपेक्षा करना ठीक नहीं। तुलसी भगवान और भक्त के संबन्ध की तुलना स्वामी व सेवक के संबन्ध से करते है।[३]

१- जदपि नाथ बहु अवगुन मोरे। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरे।
नाथ जीव तब माया मोहा। सो निस्तरै तुम्हारेहिं छोहा।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-८

२- तापर मैं रघुवीर दोहाई। जानंहु नहिं कछु भजन उपाई।
सेवक सुत पति मातु भरोसे। रहइ असोच बनै प्रभु पोसे।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-६

३- जो रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तो तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा।
सुनहु विभीषण प्रभु कइ रीति। करहिं सदा सेवक पर प्रीति।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३६
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

स्वामी और सेवक दोनों के बीच का संबन्ध अत्यधिक पवित्र होना चाहिए । स्वामी के घर सेवक को जाना है, यही नियम है । लेकिन यदि स्वामी सेवक के घर पधारें तो यह उसका महाभाग्य समझना चाहिए । क्योंकि यह साधारण सी बात नहीं है । सेवक की भलाई ही इसका कारण होता है । उससे उसकी सारी विघ्न-बाधायें दूर होकर कल्याण आ जाता है । सेवक हमेशा स्वामी का आज्ञानुवर्ती रहना चाहिए । उल्टे स्वामी की निन्दा करना सेवक का धर्म नहीं है । स्वामी के नीचे सेवक का स्थान है । [1]

सेवक अपने काम को निभाने में समर्थ होना है । स्वामी की रक्षा सेवक करता है । उनकी आज्ञाओं का नियमानुसार आचरण करनी सच्चे सेवक का लक्षण है । अच्छे सेवक की देख-रेख प्रभु भी करने लगते हैं । [2]

स्वामी की आज्ञाओं का ठीक समय पर पालन करनेवाला ही यथार्थ सेवक है । उसे स्वार्थ, छल कपट आदि की उपेक्षा करके सच्ची सेवकाई में तल्लीन रहना चाहिए । [3]

१- सेवक सदन स्वामि आगमनू । मंगलमूल अमंगल दमनू ।
तदपि उचित जन बोलि सप्रीति। पठइअ काज नाथ असि नीती ।
मानस, पृष्ठ-१६, अयोध्याकाण्ड

२- सेवकु सो जो करै सेवकाई । अरि करनी करि करिअ लराई ।
सुनहु राम जेहिं सिव धनु तोरा । सहसबाहु सम सो रिपु मोरा ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४५५

३- सहज सनेह स्वामि सेवकाई । स्वारथ छल फल चारि विहाई ।
अग्या सम न सुसाहिब सेवा । सो प्रसादु जन पावइ देवा ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४३६

ब्राह्मण- महिमा

तुलसी वेदज्ञ ब्राह्मणों के वंश में उत्पन्न थे। चातुर्वर्ण्य के प्रति उनके मन में अटूट श्रद्धा थी। आधुनिक साहित्य प्रेमी समाज की दृष्टि से तुलसीदासजी कुछ संकुचित जातिवाद के समर्थक लग सकते है। कारण यह है कि बीसवीं शताब्दी का साहित्यिक मूल्यांकन आधुनिक दृष्टि से किया जाता है। तुलसी तो जिस युग में रहते थे उस युग में चातुर्वर्ण्य का हिन्दू समाज में ज़ोर था और उच्च वंशज ब्राह्मण उच्चता का दृढ़ व्रत रखते थे। सभी धार्मिक अनुष्ठानों के अन्त में यही श्लोकार्धा पढ़ा जाता था।

गोब्राह्मणेभ्य सुखमस्तु नित्यम्
लोका: समस्ता सुखिनो भवन्तु ।।

समाज में ब्राह्मण का स्थान अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

गोस्वामीजी ब्राह्मणों को आदर की दृष्टि से देखनेवाले है। उनके प्रति गोस्वामीजी के मन में पूज्य भावना है। लेकिन बुरे स्वभाव वाले ब्राह्मण की निन्दा उन्होंने की है। चार वर्णों में ब्राह्मण- वर्ण अत्यधिक श्रेष्ठ वर्ण माना गया है। समाज में ब्राह्मणों का स्थान अन्य जातियों से उच्च है।

यदि ब्राह्मण किसी को शाप दे तो वह बहुत कठोर होता है। शाप का असर अवश्य पडता है। यही उनकी प्रकृति है। इसलिए उनसे अत्यधिक सोच विचाकर बर्ताव करना चाहिए। १

१- जों न चलब हम कहे तुम्हारें। होउ नास नहिं सोच हमारें।
एकहि उर डरपत मन मेरा। प्रभु महिदेव श्राप अति घोरा।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२८८

ब्राह्मण जन्मतः पूज्य होता है । गोस्वामीजी के मत में ब्राह्मण शील गुण से हीन होने पर भी पूज्य है । वह शाप देनेवाला और कठोर वचन कहने वाला होने पर भी उस पर दोषारोपण करना ठीक नहीं । ज्ञानी होने पर भी शुद्र पूज्य नहीं । ब्राह्मण के पूज्य होने का कारण शायद उसके पूर्व जन्म का कर्म होता है । [१]

ब्राह्मण को कृपालु होना चाहिए । दूसरों के प्रति दया से उसका हृदय भरना चाहिए और उनके दुःखों को सुनकर उसका हृदय आर्द्र होना चाहिए । कुछ लोग तो जान बूझकर अपराध करते हैं । लेकिन उन अपराधों को भी क्षमा करने का साहस उनमें होना चाहिए । [२]

ब्राह्मण , गुरु इन दोनों के कोप से बचना मुश्किल है । उनके कोप से रक्षा करानेवाला कोई भी नहीं है । इसी कारण उन्हें कुपित करने का उद्यम नहीं करना चाहिए । उनकी इच्छा के विरुद्ध कोई भी कार्य करना अच्छा नहीं । [३]

१- सापत ताड़त परुष कहंता । विप्र पूज्य अस गावहिं संता ।
 पूजिय विप्र सील गुन हीना । सूद्र न गुन गन ग्यान प्रवीना ।
 मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८१

२- जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं । पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं ।
 छमहु चूक अनजानत केरी । चहिअ विप्र उर कृपा घनेरी ।
 मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४७०

३- सत्य नाथ पद गहि नृप भाखा । द्विज गुर कोप कहहु को राखा ।
 मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८८
 टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

ब्राह्मण का द्रोह करने से कुल का नाश अवश्य होता है । ठंढ के कारण मच्छर का नाश अवश्य होता है । ठंढ के कारण मच्छर और डांस का नाश हो जाता है । वैसे ब्राह्मण का भी उनका द्रोह करना महान पाप है । [१]

धर्म के रास्ते से अणु मात्र भी विचलित न होने वाला ब्राह्मण ही श्रेष्ठ है, पूजनीय है । तप, श्रुत ये दोनों ब्राह्मण में होने की आवश्यकता है अर्थात् स्वधर्माचरण का पालन जो द्विज करता है वही श्रेष्ठ है । [२]

चातुर्वर्ण्य के प्रति गोस्वामीजी के मन में अत्यधिक श्रद्धा है । ब्राह्मण की सेवा करना पुण्य है । जी-जान से उनकी सेवा करने के समान पुण्य कार्य संसार में नहीं है । छल-कपट को छोड़ देना चाहिए । [३]

वर्णानां ब्राह्मणो गुरु: वेदपाठी भवेद् विप्र :
समी वर्णों से श्रेष्ठ वर्ण ब्राह्मण ही है ।

१- देखि इंदु चकोर समुदाई । चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई ।
मशक दंश बीते हिम त्रासा । जिमि द्विज द्रोह किये कुल नासा ।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-४३

२- धन्य देश सो जहं सुरसरी । धन्य नारि पतिव्रत अनुसरी ।
धन्य सो भूप नीति जो करई । धन्य सो द्विज धरम न टरई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५

३- पुन्य एक जग महु नहिं दूजा । मन क्रम वचन विप्रपद पूजा ।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा । जो तजि कपटु करै द्विज सेवा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८४
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

ब्राह्मण का अपकार कभी नहीं करना चाहिए । इससे वंश का नाश होता है । गोस्वामीजी के समय में सामाजिक जीवन में वर्ण-व्यवस्था नहीं रह गयी हैं। अब वर्ण व्यवस्था नहीं रह गयी है । समाज में सभी का समान स्थान रह गया है । [१]

ब्राह्मणों की निन्दा करना हेय बात है । ब्राह्मण की निन्दा करने से तो उस आदमी को नरक वास करना पडता है और कौवे की नीच योनि में जन्म ग्रहण करना पड़ता है । मनुष्य का जन्म पाने केलिए अनके पुण्य कर्म करना है । नीच योनि में जन्म लेने से हमें मुक्ति नहीं मिलती । पुण्य कर्म करने पर अच्छी योनि में जन्म ग्रहण कर सकता है । [२]

जिसके मन में ब्राह्मण के प्रति अचल भक्ति है उसी का जन्म सफल माना गया है । वही धन्य है । भगवान उस पर अवश्य प्रसन्न होते हैं । [३]

हरितोषन व्रत द्विज सेवकाई ।

प्रभु ब्राह्मण देव मैं जाना । मोहि नित पिता तजे भगवाना ।

१- वंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे । कर्म कि होहिं स्वरूपहिं चीन्हे ।
काहू सुमति कि खल संग जामी । सुभगति पाव कि परत्रिय गामी ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६६

२- हरिगुर निंदक दादुर होई । जन्म सहस्र पाव तनु सोई ।
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि । जग जनमै वायस सरीर धरि ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३०

३- सो धन धन्य प्रथम गति जाकी । धन्य पुन्य रत मति सोई पाकी ।
धन्य घरी सोइ जब सत संगा । धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५

ब्राह्मणों के प्रति गोस्वामीजी में कितनी श्रद्धा की भावना है । ब्राह्मण सारे मोहजनित सन्देहों को दूर करनेवाला है । वह गुणों का आगार है । उसकी वन्दना करना हमारा कर्तव्य है । ब्राह्मण तो सारे वेदों का अध्ययन करनेवाले है । इसलिए वह अवश्य पंडित होता है । [1]

गोस्वामीजी चाहते हैं कि सभी लोग ब्राह्मण से अच्छा व्यवहार करें। वे क्षत्रियों के ब्राह्मण-पूजक होने की आशा रखते थे । ब्राह्मणों को सन्तुष्ट रखने से मंगल अवश्य होता है । लेकिन ब्राह्मण के कुपित होने पर कुछ न कुछ अनिष्ट बात संपन्न होती है । वे गोस्वामीजी ब्राह्मणों को आदर की दृष्टि से देखनेवाले हैं । [2]

गोस्वामीजी अपने दिनों के उन विप्रों पर कटाक्ष करते हैं जो वैदिक आचरण नहीं करते थे । समाज में ब्राह्मण का स्थान अन्य सभी जातियों से श्रेष्ठ है । वे वेदों का ज्ञाता होते हैं । विषय-वासना में दचित होना उसके लिए उचित नहीं समझा जाता था । अपने धर्मों का पालन कर उसे जीना चाहिए । [3]

१- वंदौं प्रथम महीसुर चरना । मोह जनित संसय सब हरना ।
सुजन समाज सकल गुनखानी । करौं प्रनाम सप्रेम सुबानी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१०

२-मुनि तापस जिन्ह तें दुखु लहहीं । ते नरेस बिनु पावक दहहीं ।
मंगल मूल बिप्र परितोषू । दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१८१

३- सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना ।
तजि निज धरमु बिषय लयलीना ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४१
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

मित्र

मित्रता के संबन्ध मैं गोस्वामीजी ने सूक्तियां लिखी है । इसका सुन्दर प्रमाण उनका रामचरित मानस है । अन्य कृतियों मैं भी यह भाव मिलता है । रामचन्द्र और निषाध राज के मिलन के प्रसंग पर मित्रता का उत्तम उदाहरण उन्होंने दिखाया है । ` किष्किन्धाकाण्ड ` मैं राम जिस उदात्त और प्रेम भाव से सुग्रीव आदि वानरों से भैंट करते है, वह भी मित्रता का अच्छा प्रसंग है । इस प्रकार ` मानस ` मैं मित्रता के और भी प्रसंग मिलते हैं । तुलसी की मित्रता राम-भक्ति का माध्यम भी मांगती है ।

गोस्वामीजी ने ` मानस ` मैं अन्य विषयों की तरह मित्रों के संबन्ध मैं कुछ कहा है । व्यक्ति का सबसे बडा सहारा मित्र है । हमैशा मित्र से सहायता ले सकता है । विपत्ति के समय वास्तविक मित्र सहायता केलिए आ जाता है । अपने साथी को ठीक रास्ते से चलाना उसका कर्तव्य है । सच्चा मित्र तो सुख या दु:ख किसी भी हालत मैं अपने साथी की सहायता करता रहता है ।

मित्र के दु:ख से दु:खी होने पर ही वास्तविक मित्रता होती है । जो दु:खी नहीं होते, उनको दैखने मात्र से पाप होता है । यथार्थ मित्रता इसी मैं है । अपने दु:ख को छोटा-सा-मानकर मित्र के दु:ख से दु:खी होना है और उसे दूर करने का परिश्रम भी करना चाहिए । [१]

१- जे न मित्र दुख होहिं दुखारी । तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी ।
निज दुख गिरि सम रज करि जाना । मित्र क दुख रज मेरु समाना ।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-१७

सच्चा मित्र सभी हालत में अपने साथी की सहायता करता है। मित्रों के बीच में लेन देन भी होता रहना चाहिए। उनमें किसी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए।[१]

लेकिन बुरे मित्र की उपेक्षा करना ही उचित है। कुछ तो ऐसे होते हैं जो मीठी बातें सुना सुनाकर हमें अपने जाल में फंसाते हैं। लेकिन दूसरों से उनके बारे में कई तरह की बातें बना बनाकर कहते हैं। वे वास्तविक मैत्री का व्यवहार नहीं निभा पाते। २

कपटी मित्र की उपेक्षा करना ठीक है। उस मित्र से दुःख ही मिलना संभव है, सुख मिलना कठिन है। ऐसे मित्र का होना हानिकारक है। उनका संग छोड़ना ही अच्छा है।[३]

किरात की मित्रता भय उत्पन्न करने वाली है। इसी कारण उससे मैत्री जोड़ना नहीं चाहिए। बुरे लोग बुरी चीज़ों और बुरे लोगों से मित्रता का संबन्ध स्थापित करते हैं। इसी कारण किरातों की मित्रता त्याज्य है।[४]

१- लेतदेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।
विपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।।
मानस-किष्किन्धा काण्ड, पृष्ठ-१७८

२- आगे कह मृदु वचन बनाई। पाछे अनहित मन कुटिलाई।
जाकर चित अहि गति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहिं भलाई
मानस-किष्किन्धा काण्ड, पृष्ठ-१८

३- सेवक सठ नृप कृपिन कुनारी कपटी मित्र सूल सम चारी।
सखा सोच त्यागहु बल मोरे। सब विधि घटब काज मैं तोरे।
मानस-किष्किन्धा काण्ड, पृष्ठ-१८

४- तुम्ह प्रिय पाहुने वन पगु धारे। सेवा जोग न भाग हमारे।
देव काह तुम तुमहिं गोसाईं। ईंधनु पात किरात मिताई।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३६३

विषय वासनायें नाश के कारण है

मनुष्य तो विकार ग्रस्त जीव है । हमेशा वह विकारों का गुलाम कहा गया है । उसकी इस मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना कुछ कठिन है । काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि विषयवासनायें सब लोगों के मन पर अपना अधिकार स्थापित करती है ।

काम, क्रोध और लोभ मुनियों के मन पर भी अधिकार स्थापित करते हैं । तब तो साधारण मनुष्य की बात का क्या कहना है । ये मुनियों के मन को भी हिलाने में समर्थ हैं । मानवीय दुर्बलता का जो ज्ञान है वह इसमें सूचित है । [१]

लोभ के सहायी इच्छा और दंभ है और क्रोध का सहारा कठोर वचन है । नारी काम का सहारा भी माना गया है यहां । पुराने ज़माने में वह कामोपभोग का साधन मात्र थी । इसी कारण उन्हें काम का सहारा कहा गया है । [२]

विषय वासनायें मनुष्य का नाश करने वाली है । काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि विकारों से ग्रसित होकर मनुष्य अन्धा हो जाता है और वह

१- तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान धाम मन करहिं निमिष महुं छोभ ।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६१

२- लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नारि ।
क्रोध के परुष वचन बल मुनिवर कहहिं बिचारि ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२२

पागल के समान कार्य करने लगता है । [१]

लोभ के कारण इस संसार की दुर्दशा हुई है । ज्ञानी, तपस्वी, शूर, कवि, पण्डित आदि लोभ प्रभुता पाने से आदमी मदोन्मत्त हो जाता है । विकारों से दूर रहना मुश्किल है । [२]

नारी के कटाक्ष विक्षेपों से पुरुष मोहित हो जाता है और वह प्रेम रूपी जाल में फंसता है । धन अत्यधिक मात्रा में आने पर आदमी प्राय: मदोन्मत्त हो जाता है । धन-मद से वह अपने आपको भूल जाता है । स्पष्ट है कि लोभ, धनमद प्रभुता, नारी आदि पतन के साधन हैं । विषयी की आंखें खुली रहने पर भी अन्धा होता है उसके अन्दर के नेत्र खुलते नहीं । [३]

१- मोह न अंध कीन्ह केही केही । को जग काम नचाव न जेही ।
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा । केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२२

२- ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार ।
केहि कै लोभ विडंवना कीन्हि न येहि संसार ।
श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि ।
मृगलोचनि के नयन सर को अस लाग न जाहि ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२२

३- काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दु:ख रूप । ते किमि जानहि रघपतिहि
मूढ़ परे तम कूप । निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोइ ।
सुगम अगम नाना चरित, सुनि मुनि मन भ्रम होइ ।
मानस-उत्तरकाण्ड-१२८
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

काम,क्रोधादि विकार सभी को कलंकित करते है। उससे बचना मुश्किल है। शोक से धैर्य का नाश होता है। चिन्ता तो विषैली सांपिनी के समान है। चिन्ताग्रस्त मनुष्य शारीरिक रोग से पीड़ित व्यक्ति से भी दुर्बल रहता है। चिन्ता मनुष्य का नाश कर सकती है। माया के चक्कर में न पड़नेवाला कौन है। [१]

विकारों से ग्रस्त मनुष्य सदा दु:खी रहता है। वे संसाररूपी अन्धकूप में पड़कर रोशनी केलिए तड़पते रहते हैं। उन्हें क्या करना है, क्या न करना चाहिए, इसका विचार नहीं रहता। काम क्रोधादि विकार नरक के द्वार है। [२]

विषयी की व्याख्या

वैराग्य न रखनेवाला जीव विषयी होता है। वह सांसारिक मोह-माया से आकृष्ट होता है और उस जाल में चक्कर काटता रहता है। इन्द्रियों का संयम उसे कठिन महसूस होता है। वह वैराग्य, ज्ञान आदि से दूर रहता है और स्वयं विषयवासनाओं से आकृष्ट होता है। [३]

१- मच्छर कहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा।
चिन्ता सांपिनि को न खाया। को जग जाहि न व्यापी माया।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२३

२- काम,क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुख रूप।
ते किमि जानहि रघुपतिहि मूढ़ परे तम कूप।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२८

३- सुनु मुनि मोह होइ मन तार्के। ग्यान बिराग हृदय नहिं जाके।
ब्रह्म चरज ब्रत रत मति धीरा। तुम्हहिं कि करइ मनो भव पीरा।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३८

काम,क्रोध , लोभ,मद आदि विकार अज्ञान का पोषण करने वाले हैं। नारी को माया की मूर्ति मानकर उसे दु:ख देनेवाली कहा है। गोस्वामीजी ने इन विकारों को मेढ़क मानकर नारी को वर्षा ऋतु मानते हैं। वर्षा ऋतु में मेढ़क का जीवन सरस हो उठता है। वैसे काम,क्रोधादि विकार नारी का आलंबन पाकर अत्यधिक प्रज्वलित होते हैं। [१]

काम की उपेक्षा कर रामजी को भजने पर ही सुख मिलता है। इससे गोस्वामीजी की विरागी-प्रकृति स्पष्ट झलक पड़ती है। कामी व्यक्ति सुखी नहीं रह सकता। राम भजन से वह सुखी होता है। नहीं तो उसे दु:ख सागर में निमग्न रहना पड़ता है। यहां काम की तुच्छता और राम की श्रेष्ठता दिखायी गयी है। [२]

विषयवासना की तृप्ति कभी नहीं होती। जितना विषयवासना का उपभोग किया जाता है उतना उसे पाने की आकांक्षा बढ़ती रहती है। इसी कारण उसकी उपेक्षा करना ही श्रेष्ठ है। [३]

१- काम,क्रोध लोभादि मद,प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महं अति दारून दु:खद मायारूपी नारि।
काम क्रोध मद मत्सर भेका। इन्हहि हरषप्रद वरषा एका।
दुर्वासना कुमुद समुदाई। तिन्ह कहं सरद सदा सुखदाई।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६६

२- तब लगि कुसल न जीव कहुं, सपनेहु मन विश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुं सोक धाम तजि काम।।
मानस-सुन्दर काण्ड,पृष्ठ-१५३

३- जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर तिमि होहिं अपार।
सेवत विषय विवध जिमि नित नित नूतन मार।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३६०

स म का ली न मा न स

राजनीति

मानस में ' राजनीति ' से संबन्ध रखनेवाली कुछ घटनाओं का जिक्र मिलता है। राजनीतिक अवस्था का उद्धार करना उनका लक्ष्य रहा है। तत्कालीन राजनीतिक दशा तो बिगड़ी हुई थी। उसमें परिवर्तन करने का लक्ष्य उनके मन में रहा है और उसके लिए वे खूब प्रयत्न भी करते रहे।

राजा-प्रजा का संबन्ध

प्रजा को सुखी रखना राजा का परम कर्तव्य है। जिस राज्य की प्रजा दु:ख में जलने लगती है उस राज्य के राजा को अवश्य नरक-वास करना पड़ता है। प्रजा के दु:ख दूर करने की शक्ति होते हुए जो ऐसा नहीं करता वह अवश्य दोषी ठहरता है। ' रंजनात् राजा ' ऐसा कहा गया है अर्थात् जो सभी को सुखी बनाता है वही राजा है। [१]

राजा को कुटिलता छोड़कर धर्मात्मा बनना अत्यधिक आवश्यक है। तभी प्रजा में उनको मानने की इच्छा पैदा हो जाती है और इस प्रकार

१- जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृपु अवसि नरक अधिकारी।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१०६

(अ) मुनि तापस जिन्ह तें दुखु लहहीं।
ते नरेस बिनु पावक दहहीं ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ -१८१

उनके स्वभाव में पवित्रता आ जाती है । [१]

राजपद उन्माद का साधन है । राजपद की प्राप्ति होने पर कौन उन्मत्त नहीं बनता ? कौन पागल नहीं हो जाता । गोस्वामीजी अपने समय के दंभी प्रमुखों की तरफ़ संकेत किया है । [२]

उत्तम राजा

प्रजा उत्तम राजा को मिलने पर अत्यधिक सन्तुष्ट होती है । राजा उत्तम हो तो प्रजा की भलाई केलिए हमेशा प्रयत्न करता रहता है । [३]

गोस्वामीजी के मत में कभी राजा को वश में समझना नहीं चाहिए । [४]

१- कहौं सांचु सब सुनि पतियाहू ।
   चहिअ धरमसील नरनाहू ।।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५३

२- भरतहिं दोसु देइ को जाएं ।
   जग बौराइ राजपद पाएं ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३३०

३- राम वास बन संपति भ्राजा ।
   सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३४१

४- शास्त्र सुचिंतिति पुनि पुनि देखिय ।
   भूप सुसेवित बस नहिं लेखिय ।।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-५८८

धन और धर्म से राजनीति सफल होती है । राजा को धनी एवं धार्मिक होना पड़ता है । नीति के रास्ते से होकर राजा को राज्य पाना है । वैसे ठीक धर्म के रास्ते से चलकर धन को इकट्ठा करना है । अपने को भगवान के चरणों पर समर्पित कर सत्कर्म करना है । [१]

राजा की हितकामना करना प्रजा का कर्तव्य है । हमेशा राजा को प्रजा का सहारा मिलना चाहिए । प्रजा के सम्मिलित प्रयत्न के अभाव में राजा को अपना शासन चलाना दुष्कर होता है । उसे राजा का पार्श्वानुवर्ती रहना चाहिए । [२] बताया गया है कि ' राजा न मनुवर्तंत यथा राजा तथा प्रजा'

राजा अगर बुरा होता तो उसका असर समस्त विश्व में छा जाता है । [३]

राजा को समदर्शी होना चाहिए । उसे मुख के समान होना है अर्थात् केवल मुख के जरिये सब कुछ खाया जाता है । लेकिन शरीर के सारे अंग उससे पाले पोसे जाते हैं । केवल मुख का पोषण नहीं होता । प्रजा को दु:ख

१- राजनीतिबिनु धन बिनु धर्मा । हरिहि समर्पे बिनु सत्कर्मा ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५५३

२- रामकृपाल निषाद नेवाजा ।

परिजन प्रजउ चहिअ जस राजा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६२

३- पितु आयसु पालिहिं दुहु भाई ।

लोक वेद भल भूप भलाई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४५६

पहुंचाने वाला कुछ भी काम नहीं करना है, वैसे शासन-व्यवस्था कभी बिगड़ने न देना । राजा को इन्हीं कर्तव्यों का पालन करना है । [१]

राजशासन नीति निपुण राजाओं से शोभित होता है । इसकी तुलना कवि कीचड़ और धूलि से रहित पृथ्वी से करते है । राजा अत्यधिक दयालु भी नहीं होना चाहिए, इससे राजा की तेजस्विता नष्ट हो जाती है, प्रजा उनको मानते भी नहीं, इससे राज-व्यवस्था में अस्तव्यस्तता छा जाती है । लेकिन राजा को अत्यधिक कठोर हृदयवाला भी नहीं होना चाहिए, इससे प्रजा को दु:ख भोगना पड़ता है । [२]

परहित का महत्व

नित्य प्रति के जीवन से संबन्ध रखनेवाली बातों को गोस्वामीजी ने सूक्ति के रूप में बांध दिया है । दूसरों का हित करते रहना, यही हमारा लक्ष्य होना चाहिए । अगर हम दूसरों की भलाई न कर सकें तो भी उनका अपकार कभी न करना । दूसरों का हित करते करते अपने जीवन को सार्थक बनाना है । स्वार्थ की उपेक्षा कर दूसरों की भलाई करना ही परोपकार है ।

१- मुखिआ मुखु सो चाहिए, खान पान कहुं एक ।
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४५६

२- पंक न रेनु सोह अस धरनी ।
नीति निपुन नृप कै जसि करनी ।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४१
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

महाभारत में कई महत्वपूर्ण बातों का वर्णन करके व्यास जी ने कहा है कि संसार के पाप-पुण्य का सारांश श्लोकार्ध में कहा जा सकता है ।

परोपकार : पुण्याय पापाय परपीडनम्

बीसवीं शताब्दी के महान सन्त बापू भी यही मानते हुए बारंबार वह मशहूर गुजराती गीत सुनाते थे :-

वैष्णव जनतो तेने कहिये, जे पीर पराई जाने रे ।

धार्मिक और सामाजिक नीति में परहित का अत्यधिक महत्व माना गया है । लेकिन दूसरों का हित करके ढिंढोरा पीटकर चलना अच्छा नहीं । उपकार करने पर हम बदले में कुछ पाने की इच्छा न करें, तभी उसका महत्व बढ़ता है ।

परोपकार को परम धर्म के रूप में घोषित करते हैं हमारे वेद-ग्रन्थ । कुछ तो दूसरों के हित केलिए अपने शरीर को भी छोड़ देते हैं, उनका जीवन कितना सुमधुर हो उठता है, कितना धन्य होता है । निस्सन्देह, सभी उनकी प्रशंसा करते हैं । दूसरों केलिए जीना, दूसरों केलिए मरना , यह आदर्श कितना उच्च है । [१]

जो हमेशा यह विचार मन में रखता है कि दूसरों का हित करना चाहिए, उसे इस संसार में किस चीज़ की कमी रहती है । उसे सब कुछ मिल जाते हैं । स्वार्थ से मुक्त रहने वाले बहुत कम महापुरुष होते हैं । दूसरों की

१- परहित लागि तजै जो देही संतत संत प्रसंसहि तेहि ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६६

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

भलाई ही उनकी अपनी भलाई है । [1]

परहित को लक्ष्य मानकर जीनेवाले हैं संत लोग । द्रोह की चिन्ता तक वे नहीं करते । मनसा , वाचा, कर्मणा परहित करना उनका आदर्श है । [2]

परहित के समान पवित्र धर्म दूसरा कोई नहीं है । वैसे दूसरों को दु:ख देने के समान कोई दूसरा अधर्म भी नहीं है । गोस्वामीजी की यह सूक्ति अत्यधिक महत्व रखनेवाली है । [3]

सत्य की महिमा

भारतीय नैतिक सिद्धान्त में सत्य का स्थान बहुत उच्च होता है । सत्य का जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है । संसार में सत्य से बढ़कर और कुछ नहीं है । जो सत्य का पालन करता है उसके हृदय में अवश्य भगवान का निवास होता है ।

१- परहित बस जिन्ह के मन मांही ।
तिन्ह कहुं जग दुर्लभ कछु नांही ।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५७६

२- बिसरे गृह सपनेहुं सुधि नांही ।
जिमि पर द्रोह संत मन नांही ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३८

३- परहित सरिस धरम नहिं भाई ।
परपीडा सम नहिं अधमाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७

सत्यस्य वचनं साधु न सत्याद् विद्यते परम् ।
तत्वे नैव सुदुर्ज्ञेयं पश्य सत्य मनुष्ठितम् ।। [१]

नास्ति सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम् ।
स्थितिर्हि सत्यं धर्मस्य तस्मात् सत्यं न लोपयेत् ।। [२]

हमारे सभी आचार्यों ने सत्य पर अधिष्ठित जीवन का मूल्य समझा दिया है । ' धरमु न दूसर सत्य समाना ' - यही आदर्श ऊंचा उठाकर चलनेवाले है गोस्वामीजी । झूठ बोलने से इस लोक और परलोक में सुखी जीवन बिता नहीं सकते । सत्यवादी ही सुख की गोद में आराम से रह सकता है । सत्य की आग में सारे कल्मष जलकर राख हो जाते हैं । हमारे गोस्वामीजी ने सत्य का अक्षरशः पालन करनेवाले रामचन्द्रजी का आदर्श जीवन प्रस्तुत किया है ।

गोस्वामीजी ने सत्य को अत्यधिक महत्व दिया है । इसी कारण वे कहते है कि सत्य के समान पवित्र दूसरा धर्म नहीं है । सभी शास्त्र-ग्रन्थ एक साथ सत्य के महत्व पर बोलते हैं । [३]

३- धरमु न दूसर सत्य समाना । आगम निगम पुरान बखाना ।
मैं सोइ धरमु सुलभ करि पावा । तजें तिहूं पुर अपजसु धावा ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४१

गोस्वामीजी सांसारिक जीवन के हर एक पहलू पर विशद अध्ययन करते है। झूठ की बराबरी करने में पातकों के समूह भी असमर्थ निकलते हैं। उदाहरणार्थ गोस्वामीजी कहते है कि अनेकों घुंघुची मिलकर भी पर्वत की बराबरी नहीं कर सकते। सारे पुण्य कर्म सत्य पर अधिष्ठित हैं। [१]

सत्यसंध केलिए शरीर, स्त्री, बेटे, धन, घर, ज़मीन आदि का कोई मूल्य नहीं होता। उसका एकमात्र विचार सत्य की रक्षा करना है। सत्य की रक्षा करने केलिए उसे शायद अपनी स्त्री या बेटे की उपेक्षा करनी पड़ती है। फिर भी वह अत्यधिक खुशी के साथ इन सब की उपेक्षा कर डालता है। [२]

विविध विषयक सूक्तियां

वैष्णव भक्त गोस्वामीजी की सूक्तियों के अनेक विषय होते हैं। उन्होंने राम-नाम-महिमा, राम-कथा की महिमा, सन्त-महिमा, सत्संगति की महिमा, नारी-धर्म, सेवक-स्वामी-संबन्ध आदि अनेक विषयों पर सूक्तियां लिखी हैं। ये सूक्तियां नित्य-प्रति के जीवन से संबन्ध रखने के कारण इनकी अत्यधिक पवित्रता मानी जाती है।

१- नहिं असत्य सम पातक पुंजा। गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा।
   सत्य मूल सब सुकृत सुहारा। वेद पुरान विदित मनु गाए।।
   मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४६

२- छाड़हु बचनु कि धीरजु धरहू। जनि अबला जिमि करुना करहू।
   तनु तिय तनय धामु धनु धरनी। सत्यसंध कहं तृन सम बरनी।।
   मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-५८

:१: स्वधर्म पर अटल विश्वास

अपने धर्म में अचल विश्वास का होना परम आवश्यक है। अगर अटल विश्वास न रखें तो उसकी श्रेष्ठता नष्ट हो जाती है। हमेशा अच्छे कर्म करते रहने पर ही दु:खों का नाश होता है। भगवान का निवास स्वधर्म में कहा गया है। [१]

सज्जन - दुर्जन भेद :-

एक साथ पैदा होने पर भी सज्जन और दुर्जन के स्वभाव अलग अलग होते हैं। इन दोनों की तुलना गोस्वामीजी कमल और जोंक से करते हैं। एक के स्वभाव से बिल्कुल भिन्न है दूसरे का, यद्यपि दोनों समुद्र में पैदा होते हैं। यही संसार का नियम है। [२]

उच्च को भलाई और नीच को नीचता अच्छी लगती है। भला आदमी नीचता की ओर तक नहीं देखता उसे उसकी ओर देखने की इच्छा नहीं। खल तो नीचता का साथी रहता है, वह उसी को पसन्द करता है। वह अपनी इच्छा के अनुसार सब कुछ करता है। [३]

१- बटु बिस्वासु अचल निज धरमा। तीरथ राज समाज सुकरमा।
सबहिं सुलभ सब दिन सब देसा। सेवत सादर समन कलेसा।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१२

२- उपजहिं एक संग जग माहीं। जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं।
सुधा सुरा सम साधु असाधू। जनक एक जग जलधि अगाधू।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६

३- भलो भलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६

करनी का महत्व

करनी पर ही प्रधानता देनी चाहिए । यश का आधार कर्म ही होता है । कर्म की अच्छाई या बुराई के अनुसार यश या अपयश की प्राप्ति होती है । कोई आदमी गुणों को लेकर जन्म नहीं लेता । उसके कर्म अच्छे लगें तो लोग उसे अच्छा आदमी कहेंगे । [१]

कर्म के अनुसार फल :

हम जिस प्रकार का कर्म करते हैं उसी प्रकार का फल मिलता है । अगर हमने पुण्य कर्म किया तो उसका फल अच्छा निकलता है, पाप कर्म किया है तो बुरा फल मिलता है । जो बोता है वही काटता है । [२]

कर्म पर महत्व देना है :

मनुष्य के स्वच्छ और पवित्र आचरण पर बल देना चाहिए । अपने को साधु -सन्यासी कहते फिरनेवालों पर गोस्वामीजी ने व्यंग्य किया है । अपने आप को सिर्फ साधु कह लेने से क्या फायदा है ? दूसरों की नजर में साधु दीखना है, केवल बाहरी वेश-विधान मात्र से नहीं, आचरण पर भी आधारित

१- भल अनभल निज निज करतूती । लहत सुजस अपलोक विभूती ।
 सुधा सुधाकर सुरसरि साधू । गरल अनल कलिमल सरि व्याधू ।।
 मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

२- सुभ अरु असुभ करम अनुहारी । ईसु देइ फलु हृदयं विचारी ।
 करै जो करमु पाव फलु सोई । निगम नीति असि कह सबु कोई ।।
 मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११६

होना चाहिए ।[१]

गुण - अवगुण का स्वीकार :

मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार गुण या अवगुण को ग्रहण करता है । सब जानते हैं कि झूठ बोलना बुरी आदत है, वैसे चोरी करना भी । लेकिन यह जानते हुए भी लोग झूठ बोलते हैं, चोरी करते हैं । यहां गुण या अवगुण की चिन्ता नहीं, अपनी इच्छा ही प्रमुख है । इसी को गोस्वामीजी भी प्रधानता देते है । [२]

विवेक की आवश्यकता :

विवेकी मनुष्य गुणों को ग्रहण करते हैं, दोषों को छोड़ देते है । अच्छे और बुरे पदार्थों में से अच्छे पदार्थों को ग्रहण करने की ताकत होनी चाहिए । यह संसार तो गुणों और दोषों से भरा पड़ा है । अपनी इच्छा के अनुसार हम उसमें से गुण या दोष को ग्रहण कर सकते हैं । जल-मिश्रित दूध से हंस केवल दूध को ग्रहण करता है और अवगुण रूपी जल को यों छोड देता है । [३]

१- यद्यपि सम नहिं राग न रोषू । गहहि न पाप पूंनु गुन दोषू ।
करम प्रधान विश्व करि राखा । जो जस करइ सो तस फल चाखा ।।

मानस- अयोध्याकांड , पृष्ठ-२१५

२- गुन अवगुन जानत सब कोई । जो जेहिं भाव नीक तेहि सोई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

३- जड़ चेतन गुन दोषमय विश्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१

वात्सल्य की भावना :

बच्चों के प्रति वात्सल्य की भावना प्राय: अधिकांश लोगों के मन में उमड़ती है । कवि भी मनुष्य है, वह विकारों से युक्त एक व्यक्ति है । बच्चे सभी को आनन्द प्रदान करने वाले हैं । बच्चे की तुतली वाणी सुनकर किसका मन वात्सल्य रस से नहीं भरता ? बच्चे की आर्त पुकार सुनकर किसका मन नहीं पिघलता । [१]

वात्सल्य :

नयी ब्याई हुई गाय के लिए बछड़ा सब कुछ है । अपनी सन्तान के प्रति वात्सल्य की भावना किस मां के हृदय में उत्पन्न नहीं होती । मां अपनी सन्तान के प्रति वात्सल्य की नदी बहाती है । वात्सल्य की अमृत वर्षिणी बूंदों की बूंदे पड़ने पर मां की सन्तान एकदम जाग उठती है और वह अपनी ममतामयी मां की गोद में आराम से सोने लगती है । गाय अपने बच्चे की पुकार सुनकर दौड़ आती है । मां और बच्चे के बीच का वह संबन्ध कितना पवित्र होता है । [२]

बालक पर दोषारोपण नहीं किया जा सकता । उसका मन अत्यन्त चंचल होता है । अगर वह कुछ न कुछ गलती करता है तो उसकी शिकायत करने की जरूरत

१- जो बालक कह तोतरि बाता । सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता ।
हंसिहहिं कूर कुटिल कुविचारी । जो पर दूषन भूषन धारी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

२- निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६

नहीं । क्योंकि अविवेक के कारण उससे गलती होती है । तब उसकी गलती को ठीक करके उसे समझाना चाहिए । इसलिए उससे की गयी गलतियों पर क्षमा कर देनी चाहिए । लौकिक जीवन से निकट संबन्ध रखनेवाली बातों को कवि ने सूक्ति के रूप में बांध दिया है । [१]

माता-पिता के आज्ञाकारी पुत्र संसार में विरले ही दीख पडते हैं । अपने मां-बाप के वचनों का पालन करना पुत्र का परम कर्तव्य है । यदि वह उनकी आज्ञाओं का पालन नहीं करता तो वह पुत्रत्व के पद को अलंकृत नहीं कर सकता । उनकी चरण-पूजा करने मात्र से उसकी उन्नति संभव हो सकती है । [२]

वात्सल्य की भावना :

व्यावहारिक जीवन के पहलुओं पर प्रकाश डालने में भी ये वैष्णव भक्त सिद्धहस्त हैं । मां अपनी सन्तानों के प्रति कितना प्रेम रखती है ? यह बताना मुश्किल है । मां के हृदय की वात्सल्य-नदी अपने बच्चों पर उमड पडती है । उनके बिछुडने पर उनके हृदय में कितना दु:ख होता है, यह अनुभव करने की बात है । वे बच्चे की भलाई में ही परम लक्ष्य की प्राप्ति मानती हैं । यहां लौकिक जीवन की साधारण बातों पर भी गोस्वामीजी ज़ोर देते हैं ।

१- कौसिक कहा छामिअ अपराधू ।
   बालक दोष गुन गनहिं न साधू ।।
   खर कुठार मैं अकरुन कोही ।
   आगें अपराधी गुरु द्रोही ।।
   मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६२

२- सुनु जननी सोइ सुत बड भागी । जो पितु मातु वचन अनुरागी ।
   तनय मातु पितु तोषन निहारा । दुर्लभ जननि सकल संसारा ।।
   मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६६

उनके मन की कोमल-भावना यहां स्पष्ट होती है । [१]

माता को दोष देना नहीं चाहिए । उपनिषदों से मिलनेवाले ' मातृदेवो भव ' नामक उक्ति को तुलसीदास जी दुहराते है । अत्यधिक वेदना सहकर माता बच्चे' का पालन पोषण करती है । वेदना की अग्नि में जलनेवाली उस ममतामयी मां पर मूर्ख व्यक्ति ही दोषारोपण करता है । [२]

पुत्र का चरित्र अच्छा होना चाहिए । इससे मां-बाप को अत्यधिक आनन्द की उपलब्धि होती है । व्यक्ति का चरित्र ही उसका आभूषण है । इसी कारण यदि वह सच्चिरित्र वाला नहीं होता तो उसका भविष्य ही अन्धकारमय बन जाएगा । एक व्यक्ति का चरित्र अगर बिगड जाय तो समझना चाहिए कि उसका सब कुछ नष्ट हो गया । सच्चरित्रवाले व्यक्ति का आदर सब लोग करते हैं, उससे सभी प्रेम का नाता जोडते हैं । मां - बाप की सेवा करके उन्हें सन्तुष्ट रखना हर एक पुत्र का कर्तव्य है ; उनके वचनों का पालन भी । ऐसे पुत्रों को मां-बाप अपने हृदय से प्रेम की धारा बहाकर भिगोते हैं । [३]

१- पहूंचावहि फिरि मिलहिं बहोरी । बढी परस पर प्रीति न थोरी ।
पुनि पुनि मिलत सखिन्ह बिलगाई । बाल बच्छ जिमि धेनु लवाई ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५६२

२- उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई । जाइ लोकु परलोकु नसाई ।
तात कुतरक करहु जनिजाएं । बैर प्रेम नहिं दुरइ दुराएं ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८३

३- धन्य जनमु जगतीतल तासू । पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासू ।
चारि पदारथ करतल ताकें । प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकें ।
मानस-अयोध्याकांड,पृष्ठ-७२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

पिता के वचन का महत्व :

पारिवारिक मर्यादा का ध्यान रखनेवाले गोस्वामीजी पिता के वचन पर अत्यधिक महत्व देते है। पिता के वचन का पालन करने से मंगल अवश्य होता है। उचित, अनुचित का विचार न करके पुत्र को पिता की आज्ञा को मानना है। पिता पुत्र की भलाई चाहनेवाले होने के कारण वे कभी अनुचित बात नहीं कहेंगे। उनके वचन का पालन करने से यश और सुख की प्राप्ति जरूर होती है।[१]

मां-बाप स्वार्थ के भागी होते है :

मां-बाप अपने बेटे पर अनेक प्रतीक्षायें रखकर उनका पालन-पोषण करते हैं, उन्हें सिखाते हैं, उच्च शिक्षा केलिए भेज देते है। इन सभी के पीछे उनका स्वार्थ छिपा रहता है।[२]

मनुष्य की स्वार्थता :

संसार में सभी मनुष्य स्वार्थी होते हैं। सभी अपनी ही कविता पसन्द करते हैं। चाहे वह कविता भद्दी होने पर भी अपनी कविता किसे नहीं भाती। दूसरों की कविता पर मुग्ध होनेवाले कम लोग है।[३]

१- अनुचित उचित बिचारु तजि जे पालहिं पितु बयन।
ते भाजन सुख सुजसु के बसहिं अमरपति अयन ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४५

२- तनु धनु धाम राम हितकारी। सब बिधि तुम्ह प्रनतारत हारी।
अस सिख तुम्ह बिनु देइ न कोउ। मातु पिता स्वारथ रत ओऊ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८६

३- निज कबित्त केहि लाग न नीका। सरस होउ अथवा अति फीका।
जे पर भनित सुनत हरषाहीं। ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

स्वार्थ दृष्टिकोण पर यहां फिर भी प्रकाश डाला गया है। अपनी हानि देखकर घबराने वाले स्वयं अपना नाश कर लेते है। हानि मैं से लाभ पाने का उपाय ढूंढनेवाला अन्त मैं लाभान्वित होता है। [१]

मनुष्य शरीर का महत्व :

गोस्वामीजी ने मनुष्य के शरीर की महत्ता पर बल दिया है। वे मानव शरीर को माया मानने केलिए तैयार नहीं। स्वास्थ्य लाभ उठाना उनका ध्येय था। वे तो अनेक वेदों, उपनिषदों का अध्ययन कर अपने को पवित्र बनाते हैं। उनके ज्ञान की वृद्धि होती रहती है। पशु-पक्षियों से फरक यही है कि पशु-पक्षियों मैं विवेक की कमी दीख पडती है लेकिन मनुष्य तो विवेकी प्राणी है, सोच-विचारकर काम करनेवाले है। [२]

शरीर ही सबका साधन है :

ऐसा कहा गया है कि यदि दीवार का अस्तित्व होता है तभी चित्र खींचा जा सकता है। इसलिए शरीर के स्वास्थ्य पर अत्यधिक ध्यान देना आवश्यक है। ` शरीर माधं खलु धर्म साधनम् ` धर्म साधन केलिए शरीर का प्रथम स्थान है। [३]

१-परम हानि सब कहं बड़ लाहू। अदिन मोर नहिं दूषन मोर नहिं दूषन काहू।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५७

२-मुनि गन निकट विहग मृग जाहीं।बाधक वधिक विलोकि पराहीं।
हित अनहित पशु पंक्षिउ जाना। मानुष तनु गुन ग्यान निधाना।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८३

३- तजै न तनु निज इच्छा मरना। तनु बिनु वेद भजन नहिं बरना।
प्रथम मोह मोहि बहुत बिगोवा।राम विमुख सुख कबहुं न सोवा।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२६४

कविता का लक्ष्य :लोक कल्याण :

कीर्ति, कविता और संपत्ति हित करनेवाली होती है । सत् कर्म से कीर्ति बढ़ती है । उससे सभी लोगों की भलाई होती है । अच्छी कविता की रचना करना अच्छे कवि का लक्ष्य है । यदि कविता में लोक-कल्याण की बात नहीं है तो वह अच्छी नहीं कहलाएगी । किसी को संपत्ति अत्यधिक मात्रा में होने पर यदि वह उसका दुरुपयोग करता है तो कोई फायदा नहीं होता । उससे दूसरों का भी काम चलना चाहिए । इसलिए सब की भलाई करने वाली बातें करना ही उचित है । [1]

कवि ही मर्त्य को अमर बनाता है :

कवि वह अपनी साहित्य सर्जना के द्वारा प्रकृति और मानव को साहित्य में लाता है । अपनी कृति में मनुष्य को स्थान देकर उसे अमर कर देता है । महान लोग हमारे बीच में न होने पर भी साहित्य जगत में युगों तक अमर रहेंगे । लोगों का यही विचार है कि कवि लोग गुणों में दोष देखनेवाले हैं । ऐसा कहना उचित नहीं मालूम पड़ता ।[2]

१- कीरति भनिति भूति भलि सोई ।)
सुरसरि सम सब कहं हित होई ।) मानस- बालकाण्ड
राम सुकीरति भनिति भदेसा ।) पृष्ठ-३६
असमंजस अस मोहि अंदेसा ।।)

२- कवि बृंद उदार दुनी न सुनी । गुन दूषक ब्रात न कोपी गुनी ।
कलि बारहि बार दुकाल परै । बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१८०

जीवात्मा - परमात्मा का अभेद :

यद्यपि जीवात्मा और परमात्मा अलग अलग कहे जाते है तो भी उनमें अभेदत्व स्थापित किया गया है । वाणी और अर्थ के अलग अलग कहे जाने पर भी उनमें नित्य संबन्ध है । उनमें भिन्नता नहीं । वैसे जल और लहर में निकट संबन्ध है । जल से भिन्न लहर का कोई अस्तित्व है ही नहीं । इसी प्रकार का संबन्ध है जीवात्मा और परमात्मा के बीच में । [१]

भगवान का स्वरूप :

ब्रह्म तो अखिल विश्व में व्याप्त है । उस पर माया का प्रभाव नहीं पड सकता । वह अजन्मा है, कला, इच्छा और भेद रहित है । वेद भी उसको जानने में असमर्थ निकले हैं । [२]

सगुण रूप की महत्ता :

गोस्वामीजी का मत है कि सगुण रूप भक्त का मन अधिक ठहरता है सगुण रूप की महिमा का गान करने से उसके सारे अमंगल दूर हो जाते हैं । [३]

१- गिरा अरथ जल बीचि सम कहिअत भिन्न न भिन्न ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४६

२- ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज सकल अनीह अभेद ।

सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१३३

३- लीला सगुन जो कहहिं बखानी । सोइ स्वच्छता करै मल हानी ।

प्रेम भगति जो बरनि न जाई । सोइ मधुरता सुसीतल ताई ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६३

सगुण-भक्ति की महत्ता :

सगुणोपासक मोक्ष चाहनेवाले नहीं । ब्रह्म के सगुण-निर्गुण दो रूपों में सगुण रूप के उपासक होने पर भी गोस्वामीजी निर्गुणोपासकों के प्रति ईर्ष्या नहीं रखते । [१]

उन्मत्त होने का कारण :

प्रभुता - प्रभुता पाने से आदमी मदोन्मत्त हो जाता है । जब आदमी उच्च पद ग्रहण करता है तब स्वयं उसमें एक प्रकार का नशीलापन छा जाता है । वह अपने आप को भूलकर विलासिता में डूब जाता है । सभी लोगों को भूल भी जाते हैं । बेचारे लोग उनसे दण्डित भी हो जाते है । [२]

मतवाले की दशा :

उन्मत्त व्यक्ति मद के उतरने पर सुखी होता है । होश आ जाने पर वह सारी घटनायें याद करने लगता है । उन्मत्तता की दशा से गुजरने पर वह पागल के समान व्यर्थ बातें बघारता है । [३]

१- सगुणोपासक मोक्ष न लेहीं । तिन्ह कहुं राम भगति निज देहीं ।
बार बार करि प्रभुहिं प्रनामा । दशरथ हरषि गए सुरधामा ।।
मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-४०४

२- प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१३७

३- भए तुरत जग जीव सुखारे ।
दुराधरष दुर्गम भगवाना ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१७३

मतवाले का स्वभाव :

मतवाला व्यक्ति सोच विचाकर बात नहीं करता । पागल व्यक्ति को किसी की याद नहीं रहती । वह जो कुछ कहता है उसका ज्ञान भी उसे नहीं होता । इसमें उसका कोई दोष नहीं है । नशे में पड़े व्यक्ति की भी यही हालत होती है । अपनी कही हुई बात का उसे कोई पता नहीं । [१]

जहां लोग हम से कुछ विरोध रखते हैं वहां जाना उचित नहीं । यदि बिना बुलाए ही हम मित्र के घर जायें तो भी उसे अत्यधिक खुशी होगी । बल्कि उसकी खुशी की मात्रा दुगुनी हो जाएगी । वह सोचता है कि मुझसे आमंत्रण न मिलने पर भी वह मेरे घर पर आ गया । पिता की बात तो कहना ही क्या है । अपनी सन्तान के आगमन पर पिता क्या असन्तुष्ट रहेंगे? कभी नहीं । स्वामी और गुरु के घर जाने से वे भी सन्तुष्ट होते हैं । इन पूज्य व्यक्तियों से आमंत्रण न मिलने पर भी कोई बात नहीं । लेकिन अगर इन व्यक्तियों में किसी एक से विरोध रखें तो वहां जाना उचित नहीं । उससे भलाई कभी नहीं होती । [२]

१- बातुल भूत बिबस मतवारे । ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे ।
जिन्ह कृत महामोह मद पाना । तिन्ह कर कहा करिअ नहिं काना ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२२६

२- जदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा ।
जाइअ बिनु बोलेहु न संदेहा ।
तदपि बिरोध मान जहं कोई ।
तहां गएं कल्यान न होई ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४०

अपमान सबसे दुःखदायक है :

अपमानित होने के समान दूसरा कठिन दुःख संसार में नहीं है। फिर जीना भी मुश्किल हो जाता है। [१]

अपमान की कठोरता :

सम्मान तो अच्छा है, लेकिन अपमान तो मृत्यु से भी बुरा है। अपयश का दुःख मरण से सौगुना अधिक कठिन है।[२] तब जीना भी मुश्किल हो जाता है। [२]

'भगवद् गीता' में कहा गया है :-

'सम्भावितस्य चाकीर्तिः मरणात् अतिरिच्यते'।

बड़ों को छोटों पर स्नेह होता है। उदाहरण स्वरूप कहा गया है कि पर्वत ने तो तृण धारण किया है, समुद्र का साथी फेन होता है, पृथ्वी के साथ धूल भी रहती है। पर्वत,समुद्र और पृथ्वी को यथाक्रम तृण,फेन और धूल से संबन्ध रहता है। [३]

१- जद्यपि जग दारुन दुःख नाना। सबतें कठिन जाति अपमाना।
समुझि सो सतिहि भयउ अति क्रोधा।बहु बिधि जननीं कीन्ह प्रबोधा।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४१

२- संभावित कहुं अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४१

३- बडे सनेह लघुन्ह पर करहीं। गिरि निज सिरनि सदा तृन धरहीं।
जलधि अगाध मौलि बह फेनू। संतत धरनि धरत सिर रेनू।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६०

स्वर्ण का स्थिर स्वभाव :

स्वर्ण का स्वभाव स्थिर होता है अर्थात् उसे जलाने पर भी कोई परिवर्तन नहीं होता । बार बार तपाने पर उसमें उसकी पवित्रता और तेजस्विता बढ़ जाती है । [१]

योग्य वस्तु का मूल्य :

उचित वस्तु से ही फायदा होता है । हमें जो पसन्द करते हैं उन्हीं लोगों से ही हम को लाभ होता है । दूसरों के कहने से वह अपने निश्चय में कोई परिवर्तन नहीं करेगा । [२]

अग्नि का स्वभाव :

अग्नि सभी वस्तुओं को जलाता है । पास आने वाली सभी वस्तुएं प्रचण्ड अग्नि के स्फुलिंग में पड़कर राख हो जाती हैं । पाला तो उसके निकट भी नहीं आ पाता । [३]

१- कनकौ पुनि पषान ते होई ।
   जारेहु सहजु न परिहर सोई ।
      मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६४

२- जेहि कर मनु राम जाहि सन, तोहि तोहि सन काम ।
      मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६५

३- तात अनल कर सहज सुभाऊ । हिम तेहि निकट जाय नहिं काऊ ।।
   गए समीप सो अवसि नसाई । अस मनमथ महेस की नाई ।।
      मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१७९
      टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

वन्ध्या स्त्री प्रसव की पीडा जानने में असमर्थ है :

वह कैसे उसका अनुभव कर सकती है ? कारण यह है कि वह बच्चे को जन्म नहीं देती। बच्चे को जन्म देने पर भी यह बताया जा सकता है कि वह पीडा कितनी खतरनाक है। उस पीडा की जानकारी न रखने के कारण वह उस पीडा से अनभिज्ञ रहती है। [१]

लोक व्यवहार में शत्रु के प्रति व्यवहार, रोग-ग्रस्त के प्रति कर्तव्य, पाप से बचने का उपाय, मालिक से सावधान रहने की आवश्यकता आदि बातों पर गोस्वामीजी ज़ोर देते है। हमें इसका पता नहीं कि दुश्मन कब हमारे ऊपर कूद पडता है, इसी कारण हमेशा जागरूक रहना चाहिए। नहीं तो कब हमारा सर्वनाश कर डालेगा ? रोग तो कब भूर्च्छित हो जाएगा, इसका भी पता न मिलने के कारण हमें अच्छी तरह रोगी का उपचार करना चाहिए। किसी भी समय रोग हमें ग्रस सकता है। अग्नि अपनी प्रचण्ड किरणों से सभी वस्तुओं को जला डालती है। पाप की शक्ति भी कठिन होती है। मालिक को सेवक के प्रति सुन्दर व्यवहार करना चाहिए। और सेवक को मालिक के प्रति भी। [२]

१- पर घर घालक लाज न भीर।
बांझ कि जान प्रसव कै पीरा।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८८

२- रिपु, रुज, पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि।
अस कहि बिबिध बिलाप करि लागी रोदनु करन।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५५३
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

शस्त्रधारी , भेद जाननेवाला, समर्थ स्वामी, हठी, धनवान, वैद्य , भाट, कवि , रसोइया इन से विरोध रखें तो कल्याण नहीं होता । यदि हम शस्त्रधारी से विरोध रखें तो वह शस्त्रों से हमारा सामना करेगा । धन के बल से धनवान अपने विरोधियों को सब कुछ कर सकता है । वैसे रसोइया से हम बिगड़ जायें तो हमें भूखों मरना पड़ता है । वहभी दु:ख का कारण होता है । उपर्युक्त सभी लोगों से मित्रता का व्यवहार करना ही अच्छा है । [१]

प्यासा अमृत की प्राप्ति से तृप्त होता है तो भी उसे पानी पिलाना हमारा कर्तव्य है । पानी पीने के स्थान पर भोजन मिल जाय तो कोई फायदा नहीं होता । [२]

गुलामी का दु:ख :

गुलाम को कभी सुख की प्राप्ति नहीं होती । उसे अपना विचार प्रकट करना भी मुश्किल हो जाता है । नारी को गोस्वामीजी ने ' पराधीन ' कहा है । वह हमेशा किसी न किसी की छाया में पलती है । पहले पिता के संरक्षण में, बाद में पति और पुत्र के संरक्षण में वह जीवन व्यापन करती है । हमेशा किसी न किसी की छाया में रहना कितने दु:ख की बात है । [३]

१- तब मारीच हृदय अनुमाना । नवहि विरोध नहिं कल्याना ।
सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी । बैद बंदि कवि भानस गुनी ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६१

२- तृषावंत जिमि पाइ पियूषा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६

३-कत विधि सृजी नारि जग माहीं । पराधीन सपनेहु सुख नाहीं ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६७

गोस्वामीजी पराधीनता से घृणा करने वाले है। परतंत्रता में रहना उन्हें प्रिय नहीं है। परतंत्रता ~~की अधीनता~~ पराधीनता में रहने से मरना ही अच्छा है। हमेशा दूसरों की छत्र-छाया में रहना ~~कितना~~ दु:खदायक होता है? सभी बातों केलिए उनका आश्रय खोजना पडता है। गोस्वामीजी स्वतंत्र विचारधारा रखनेवाले है।[१]

नीच का विनय दु:खदायी होता है। अगर नीच विनय से झुक जाता लेता है तो यह समझना चाहिए कि कुछ न कुछ अनर्थ अवश्य होनेवाला है। उसकी मधुर वाणी भी भय उत्पन्न करनेवाली है। अंकुश, धनुष, सांप और बिल्ली का झुकना और प्रतिकूल ऋतु में फूल खिलना इन बातों को उदाहरण स्वरूप ले सकते हैं।[२]

कुटिल व्यक्ति:

कुटिल व्यक्ति वेद विरुद्ध बातें करते हैं। अज्ञानी और मूर्ख व्यक्ति वेद के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं रखते। अगर उसे कुछ ज्ञान होता तो वह जरूर वेदों की निन्दा नहीं करता।[३]

१- नैहर जनमु भरब बरू जाई। जियत न करबि सवति सेवकाई।।
अरि बस दैउ जियावत जाही। मरनु नीक तेहि जीवन चाही।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३४

२- नवनि नीच का अति दुखदाई। जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई।
भय दायक खल के प्रिय बानी। जिमि अकाल के कुसुम भवानी।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५५८

३-अग्य अकोबिद अंध अभागी। काई बिषय मुकुर मन लागी।
लंपट कपटी कुटिल बिसेषी। सपनेहु संत सभा नहिं देखी।
मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना। रामरूप देखहिं किमि दीना।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१८ २२७-२२८

अच्छी वस्तु की कभी बुराई नहीं की जाती । यद्यपि गंगा में अशुद्ध जल का समावेश रहता है तो भी कोई उसे अपवित्र नहीं कहता । चाहे उसमें अन्य कई बुरी चीज़ें विद्यमान हों । अर्थात् अच्छी वस्तु हमेशा अच्छी ही कही जाती है । [१]

विवाह-प्रथा :

धर्मशास्त्र के इस विचार पर बहुत ध्यान देना आवश्यक है । उसमें कहा गया है कि गुणहीन वर से कन्या को ब्याहने से अच्छा यही है कि वह कन्या ही रह जाय । कन्या ही रह जाय तो उसे दुःख अवश्य होता है, लेकिन एक गुणहीन व्यक्ति को वर के रूप में मिलने पर उसका दुःख दुगुना हो जाता है । [२]

परद्रोही लोगों के सारे प्रयत्न असफल हो जाते हैं । वे हमेशा दूसरों का अपकार करने में निरत हैं । दूसरों को दुःख देने के कारण अपना सुख नष्ट हो जाता है । उन्हें कभी शान्ति का अनुभव नहीं होता । [३]

१- सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई । सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई ।।
समरथ कहुं नहिं दोषु गोसाईं । रवि पावक सुरसरि की नाईं ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४६

२- जौं घरु बरु कुलु होइ अनूपा । करिअ विवाह सुता अनुरूपा ।
नत कन्या बरु रहउ कुआंरी । कंत उमा मम प्रान पिआरी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२५२

३- विफल होहिं सब उद्यम ताके ।
जिमि पर द्रोह निरत मन साके ।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-१००

दूसरों को पीडा देनेवाले कष्ट के भागी होते हैं। अमूल्य मनुष्य-जन्म पाने पर उसका सदुपयोग होना चाहिए। दूसरों को वेदना नहीं पहुंचाना। अज्ञान के कारण मनुष्य अनेक पाप कर्म करते हैं। [१]

दंभी अनीति की ओर झुकता है। वह नीति के पक्ष में नहीं रहता। नीच प्रवृत्तियों में अपना समय काटता है। [२]

अपकार करनेवाला निंद्य है। दूसरों का अपकार करना कितनी दुःखद बात है। परोपकारी के समान अधम दूसरा कोई नहीं होता।

गोस्वामीजी ने और एक स्थान पर कहा है :-

`पर पीडा सम नहिं अधमाई` । हमें अपनी ताकत के अनुसार दूसरों की सहायता करनी चाहिए। फल की इच्छा किये बिना दूसरों की सहायता करनी चाहिए। फल की इच्छा न करते हुए की गई सहायता करने पर वे भी समय आने पर हमारी सहायता करेंगे। `परोपकारार्थमिदं शरीरं` कहा गया है है। हमारा शरीर परोपकार केलिए होता है। भगवान के प्रति छलरहित भक्ति होनी चाहिए। [३]

१- नर सरीर धरि जे परपीरा। करहिं ते सहहिं महा भव भीरा।
करहि मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत पर लोक नसाना।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७

२- दंभिहि नीति की भावई।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८२

३- सब विधि सोचिय पर अपकारी। निज तनु पोषक निर्दय भारी।
सोचनीय सबही विधि सोई। जो न छाडि छल हरि जन होई।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२१३
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

संसार का मिथ्यात्व :

संसार सत्य नहीं, वह तो मिथ्या है । इस असत्य संसार में अनेक प्रकार के दु:ख सहने पडते हैं । उदाहरणार्थ कहा गया है कि सपने में देखी हुई घटना की वास्तविकता जागने पर ही मालूम पडती है । तभी हमारे मन से दु:ख दूर हो जाता है, भ्रम मिट जाता है । इसी कारण संसार असत्य कहा गया है । [१]

संसार मायामय है । दार्शनिक दृष्टि से संसार की मायामयता का रहस्य खोला गया है । संसार असत्य होने के कारण उस पर भरोसा नहीं रखा जा सकता । सपने में दीखनेवाली सारी घटनायें मिथ्या हैं । सपने में राजा का भिखारी होना और दरिद्र का इन्द्र होना साधारण-सी बात है । सपने में वास्तविक बातें नहीं दीख पडती । [२]

१- एहि विधि जग हरि आश्रित रहई ।
जदपि असत्य देत दुख अहई ।।
जौं सपने सिर काटै कोई ।
बिनु जागें न दूरि दुख होई ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२३

२- सपने होइ भिखारी नृपु रंक नाकपति होइ ।
जागें लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जियँ जोइ ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१३७

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

संसार समय के अनुसार परिवर्तित होता है। संसार हमेशा एक समान नहीं रहता। वह परिवर्तित होता रहता है। इस परिवर्तन के साथ साथ लोगों के स्वभाव में भी परिवर्तन उपस्थित होता है। कभी कभी दोस्त हमसे अलग हो जाते हैं और वे हमारे विरुद्ध खडे भी हो जाते हैं। कभी कभी शत्रु हमारे प्रिय भी बन जाते हैं। परिवर्तन संसार का अनिवार्य तत्वहै। [१]

संसार अपने भावानुसार प्रतीत होता है। संसार को हमें शुभेच्छु दृष्टि से ही देखना चाहिए। भले लोगों को संसार की सभी वस्तुएं अच्छी मालूम पडती हैं। बुरे लोग तो संसार में बुराई ही बुराई देखते हैं। उनका मन कुटिलता से भरा रहता है। स्पष्ट है कि मनुष्य ही सांसरिक जीवन को सुखद या दु:खद बनाते हैं। [२]

संसार को जीतना कुछ कठिन कार्य है। सांसारिक मोह माया से बचकर रहना मुश्किल है। संयमी ही इससे दूर रह सकता है। सांसारिक बन्धन से मुक्ति पाना तो और भी कठिन है। संसार एक प्रकार का बन्धन है। जन्म-मरण के चक्कर में पडने के कारण मुक्ति की प्राप्ति असंभव हो जाती है। [३]

१- समउ फिरे रिपु होहिं पिरीती।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६

२- देखि प्रभाउ सुरेसहिं सोचू।
जगु भल भलेहि पोच कहुं पोचू।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३१३

३- महा अजय संसार रिपु, जीत सकै सो बीर।
जाके अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३३३

कामी की प्रकृति :

कामी व्यक्ति सबसे डरा करते हैं । वह तो कौवे के समान बुराइयों से प्रेम करने लगते हैं । सांसारिक विषय वासनाओं में लीन होकर वे अपना जन्म गंवा देते हैं । [१]

कामी को नारी और लोभी को धन प्रिय होता है । वह विषयवासनाओं में लिप्त रहता है । वह कभी नारी का संग नहीं छोड़ सकता ।[२]

हरिजन काम के प्रभाव से दूर रहता है । वह काम के जाल में नहीं पड़ता । उदाहरण स्वरूप कवि कहते हैं - वर्षा होते हुए भी ऊसर भूमि में घास का नाम-मात्र भी नहीं उगता । [३]

१- जे कामी लोलुप जग माहीं ।
कुटिल काक इव सबहिं डेराहिं ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३४

२- कामिहि नारि पियारी जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२५२

३- हरिजन हिय उपज न कामा ।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

माया सभी को मोह लेती है :

चाहे देवता हो, चाहे मुनि सभी माया के जाल में फंसते हैं । वे भी अपने आप का संभाल नहीं पाते । केवल ईश्वर ही माया के प्रभाव से दूर रहता है । उन पर माया अपना प्रभाव नहीं जमा सकती । माया के जाल में पड़नेवाला पागल के समान हो जाता है और उसका नाश भी होता है । [१]

दरिद्र का मन संकुचित होता है । कल्पवृक्ष की सिद्धि होने पर भी उससे अत्यधिक मांगने में वह संकोच का अनुभव करने लगता है । शायद वह कल्पवृक्ष के अनुपम प्रभाव से अनभिज्ञ रहता हो । उसी समय तक वह दरिद्रता के भारी संकट में पड़कर अपने को जलाता रहा । एकदम कल्पवृक्ष की प्राप्ति से इस दु:ख से मुक्ति मिलने पर उसका मन कुछ मांगने में संकोच का अनुभव करता है । स्पष्ट है कि संसार में दरिद्रता अत्यधिक दु:ख देनेवाली है ।[२]

दरिद्र चारों पदार्थों से प्रसन्न होते हैं । वह दरिद्रता के चक्कर में पड़कर चक्कर काटते रहते हैं । दरिद्रता की शान्ति केलिए कुछ पदार्थ मिल जाने पर उनकी खुशी की सीमा नहीं रहती । [३]

१- सुर नर मुनि कोउ नाहिं जेहि न मोह माया प्रबल ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२४५ २२४

२- जथा दरिद्र बिबुध तरु पाई ।

बहु संपति मांगत सकुचाई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६६

३- प्रमुदित परम दरिद्र जनु पाइ पदारथ चारि ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५७४

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

युवकों के मन हमेशा चंचल और कामी होते हैं। तुलसीदास की सरसता यहां स्पष्ट होती है। मन तो हमेशा चंचल रहता है। मन को वश में करना मुश्किल की बात है, वह हर कहीं घूमता फिरता रहता है। युवकों के मन की गति समझना कठिन है। उस विषय-लोलुप मन की उपमा के लिए कुत्ते को लिया गया है। [१]

मूढ़ सुन्दर आकृति पर मुग्ध होते हैं। चतुर आदमी तो एकदम मुग्ध नहीं होते। सुन्दर आकृतिवाली वस्तु को देखने पर मन में उसे पाने की लालसा पैदा हो जाती है। लेकिन बहुत सोच-विचार करने के बाद ही सुन्दर वस्तुओं के संपर्क में आना है। उदाहरण स्वरूप मोर को ले सकते हैं। वह देखने में कितना सुन्दर लगता है। उसकी वाणी भी सुन्दर है। लेकिन वह सांप को खाता है। इसलिए समझना है कि बाहरी आकृति पर प्रधानता नहीं देनी चाहिए। [२]

देखने योग्य वस्तु को जरूर देखना चाहिए। अनुपम छवि को देखने पर आफ़त की कभी संभावना नहीं होती। ज़रूर मंगल ही होता है। उस लोकोत्तर सुन्दरता के दर्शन अगर नहीं कर सकते तो भारी दु:ख अवश्य होती है। [३]

१- सुचित कतहुं परितोष न लहहीं। एक एक सन मरमु न कहहीं।
लखि हियं हंसि कह कृपानिधानू। सरिस स्वान मघवान जुबानू।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४३६

२-तुलसी देखि सुबेषु, भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुन्दर केकिहि पेखु बचन सुधा सम असन अहि।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२४२

३- अवसि देखि अहिं देखन जोगू।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३८६

तेजस्वी शत्रु अकेला होने पर भी तेजस्वी ही रहता है। उसमें तो अत्यधिक तेजस्विता भरी रहती है। इसलिए वह अकेले दूसरों का सामना कर सकता है। उदाहरण स्वरूप कहा गया है कि शिर मात्र बचने पर भी राहु अत्यन्त तेजस्वी होता है।[१]

लाभ के बढ़ने पर लोभ भी बढ़ता है। सुख,संपत्ति आदि बढ़ते रहने पर भी मनुष्य के मन में उसे और भी मिलने की लालसा पैदा होती है। मनुष्य जो कुछ मिलते हैं उससे सन्तुष्ट हो जानेवाले नहीं। उसकी लालच बढ़ती ही रहती है। मनुष्य सदा सुख भोगने की इच्छा रखने वाले हैं। हमेशा सुख भोगते रहने पर उसके लोभ की वृद्धि होती जाती है। ज्यों ज्यों संपत्ति बढ़ती जाती है त्यों त्यों वह उस संपत्ति को और अधिक बढ़ाने की कोशिश करता है।[२]

लोभ का बुरा परिणाम :- लोभी मनुष्य गुणी नहीं कहा जा सकता। अच्छे मनुष्य धन के लोभी नहीं होते, उससे दूर रहना ही मनुष्य केलिए उचित है। लोभी धन के पीछे पड़कर अपना जीवन नष्ट कर देता है।

१- रिपु तेजसी अकेला अपि। लघु करि गनिअ न ताहु।।
अजहुं देत दुख रवि ससिहिं,सिर अवसेषित राहु।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६५

२- प्रति लाभ लोभ अधिकाई।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०७

३- गुनसागर नागर नर जोऊ।
अल्प लोभ भल कहइ न कोऊ।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-२३८

लाभ केलिए ही लोभ होता है। संपत्ति जितनी बढ़ जाती है उतनी अधिक मात्रा में वह उसे पाने का श्रम करता है। जब तक लाभ के प्रति मोह बना रहता है तब तक लोभ भी बढ़ता रहता है। लाभ की इच्छा मन से हटाने पर ही लोभ मन से दूर होता है। १

गोस्वामीजी वैदिक-वृत्ति की नीचता पर प्रकाश डालते है। वेद,पुराण आदि में वैदिक वृत्ति की निन्दा की गयी है। पौरोहित्य कर्म उनकी दृष्टि में हेय है। २

वेद की निन्दा करनेवाले नरक के भागी होते हैं। वेद की निन्दा करना कितनी दु:खद बात है। इस दु:खद बात का भागी बनना अच्छा नहीं। वेद की निन्दा करें तो नरक-भोग का दण्ड मिल जाता है। तर्क से वेद का खण्डन करना उचित नहीं।३

धर्म-नीति का महत्व। धर्म-नीति को महत्व देना चाहिए। ऐश्वर्य, कीर्ति आदि से प्रेम रखने वाले ही धर्म पसन्द करेंगे। उन्हीं को इसका उपदेश देना उचित है। धर्म के रास्ते पर चलनेवाले मनुष्य ही भक्त बन सकते हैं।

१- प्रति लाभ लोभ अधिकाई ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३८०

२- उपरोहित्य कर्म अति मंदा ।
वेद पुरान सुमृति कर निंदा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८८

३- कल्प कल्प भर एक एक नरका ।
परहि जे दूषहिं श्रुति करि ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७२

नीति का पालन किए बिना रहना शोभा की बात नहीं । [१]

धर्म की सूक्ष्म गति जानने की इच्छा रखनेवाले है गोस्वामीजी । धर्म पर विचार करना कभी मुश्किल हो जाता है, लेकिन कभी सुगम भी हो जाता है । [२]

धर्मशील हमेशा सुखी होते है । वह सांसारिक बुराइयों से अछूता रहता है । सांसारिक मोह-माया में पडने से व्यक्ति को दु:ख का अनुभव होता है । हमेशा धर्म-साधना में मग्न रहने से वह जीवन में समरसता का अनुभव करता है । [३]

अपराध और फल भोग में वैषम्य होता है । मनुष्य को किसी अज्ञात कारण से कर्म-विरुद्ध फल भोगना पडता है । अपराध करनेवाले को ही उसका फल भोगना है । दूसरा कोई उसका फल भोगना उचित नहीं । अगर एक व्यक्ति ने अपराध किया तो उचित दण्ड भी उसे ही मिलना चाहिए । [४]

१- धरम नीति उपदेसिअ ताही । कीरति भूति सुगति प्रिय जाही ।
मन क्रम बचन चरन रत होई । कृपासिंधु परिहरिअ कि सोई ।।
मानस-अयोध्याकांड, पृष्ठ-२०८

२- सुगम अगम अति धरम बिचारू ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४४६

३- धर्मसीलन्ह के दिन सुख संजुत जांहि ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६३

४- औरु करै अपराधु कोउ, और पाप फल भोगु ।
अति बिचित्र भगवंत गति, को जग जानइ जोगु ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२२६

समरसता का भाव:

धीर विद्वान सुख-दुख में समान भाव धारण करता है। सुख के समय अत्यधिक हर्षित होना और दु:ख के समय खूब बिलखना मूर्खों का काम है। सुख, दु:ख तो जीवन के दो अनिवार्य तत्त्व है। इन दोनों का सन्तुलन जीवन में परम आवश्यक है। सुख के समय हमें याद रखना चाहिए कि दु:ख भी एक दिन आनेवाला है, इसी प्रकार उलटा भी। इसलिए सुख के समय अपने आप को भूलकर उसमें मस्त नहीं होना चाहिए। इन दोनों के सन्तुलन से जीवन में पूर्णता आ सकती है। नहीं तो जीवन अपूर्ण रह जाता है।[1]

सुकुमार कवि पन्तजी ने कहा है।

अविरल सुख ही उत्पीडन, अविरल दु:ख भी उत्पीडन।
सुख- दु:ख के मधुर मिलन से जीवन हो परिपूरन।।

गृहस्थ का धर्म :

गृहस्थ को वेदोक्त धर्म का आचरण करना चाहिए। कर्मपथ का अनुसरण करना उसका कर्तव्य है। उस पथ का अतिक्रमण करना अच्छा नहीं। कर्म का अनुष्ठान करके जीना उसे शोभा देता है। कभी उसे विषयरूपी जाल में नहीं फंसना चाहिए ~~सकता है~~। लेकिन उसका मन फंसना उचित नहीं। अगर वह विरागी नहीं है तो उसे काम-क्रोधादि विकार सताने लगते हैं। इन विकारों का गुलाम बनना अच्छा नहीं। गोस्वामीजी यहां पारिवारिक जीवन और पारलौकिक जीवन में ध्यान देने योग्य बातों पर प्रकाश डालते है।[2]

१- सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहिं। दोउ सम धीर धरहिं मनमाहीं।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२१३

२- सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंच रत बिगत बिवेक बिराग।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२४२

अतिथि -पूजा का महत्व:

भारत में अतिथि-पूजा की अत्यधिक महत्ता मानी गयी है। विशेषकर हिन्दू संस्कृति में अतिथि अत्यधिक पूज्य व्यक्ति है। वैश्य को अतिथि पूजा में कभी पीछे नहीं रहना चाहिए। ब्राह्मण तो ज्ञान से धनी होता है। क्षत्रियों को शक्तिशाली होना चाहिए। वही क्षत्रिय पूज्य होता है। गोस्वामीजी ने चातुर्वर्ण्य को तोडनेवाले लोगों को ध्यान में रखकर यों लिखा है।[१]

सन्यासी को विरागी होना चाहिए :

सन्यासी को सांसारिक सुख भोगों के प्रति मोह नहीं होना चाहिए। कुछ लोग वैराग्य धारण न कर केवल ब्रह्म विचार की बातें करते हैं। वेष-भूषा से सन्यासी दीख पडने पर भी शायद उसका मन सांसारिक विकारों के प्रति उन्मुख रहता है। बाहरी वेष-भूषा पर कोई महत्व नहीं देना। जैसे कई प्रकार के गहनों से सुसज्जित होने पर भी कपडे के बिना शरीर शोभित नहीं होता, वैसे ही ब्रह्म विचार रखनेवालों की शोभा विरागी होने पर ही बढ़ती है।[२]

१- सोचिअ बयसु कृपन धनवानू।
जो न अतिथि सिव भगति सुजानू।
सोचिअ सूद्र बिप्र अवमानी।
मुखरु मानप्रिय ग्यान गुमानी।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४१

२- सोकु समाजु राजु केहि लेखें। लखन राम सिय बिनु पद देखें।
बादि बसन बिनु भूषण भारू। बादि बिरत बिनु ब्रह्म बिचारू।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५२

बुरे उद्गम से सुन्दर वसाधु का निकलना असंभव है :

गोस्वामीजी कुलीनता पर विश्वास रखनेवाले है । न कोदी की बाली से धान फल सकता , न पुराने घोंघे से मोती निकल सकता है । [१]

विरागी व्यक्ति का मन सांसारिक सुख भोगों के मार्ग और नहीं घूमता । विषय-भोग के प्रति उसके मन में घृणा रहती है । उसका मन हमेशा पारलौकिक बातों में मग्न रहता है । अगर स्त्री का परित्याग करना पड़े तो वह कर सकता है । लेकिन सांसारिक बातों में मग्न रहनेवाले कामी मनुष्य को स्त्री का परित्याग करना मुश्किल पड जाता है । वह विषय-वासनाओं के पीछे पडता है । उसका मन राम से विमुख रहता है ।[२]

पण्डितों को लोक और वेद दोनों का अनुसरण करना है :

वैदिक संस्कृति के पोषक तुलसीदास वेदाचरण पर ज़ोर देते है । पण्डितों को लोकाचरण पर ध्यान देना है और उसके अनुसार वे चलते हैं । उन्हें प्राय: वेदों पर अधिकार रहता है । वेदों में कहीं हुई बातें ही उनका प्रमाण हैं । वैदिक बातें उन्हें अत्यधिक मान्य होती हैं ।[३]

१- मातु मंदि मैं साधु सुचाली । उर अस आनत कोटि कुचाली ।
फरइ कि कोदव बालि सुसाली ।मुकता प्रसव कि संबुक काली ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३७६

२- पुरुष त्याग सक नारिहि जो विरक्त मति धीर ।
न तु कामी विषयावस विमुख जो पद रघुवीर ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२११

३- यहउ कहत भल कहहि न कोऊ । लोकु वेदु बुध सम्मत दोऊ।
तात तुम्हार विमल जस गाई । पाइहि लोकउ वेदु बडाई ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६६

पण्डितों को अधर्म की उपेक्षा करके धर्म को स्वीकार करना है :

धर्म के रास्ते पर उन्हें चलना है। दूसरों को ठीक रास्ते पर ले चलना उनका काम है। अधर्म का नाश करके धर्म की स्थापना करना उनका कर्तव्य है। [१]

कार्य की कठिनता पर गोस्वामीजी ज़ोर देते हैं :

उदाहरण स्वरूप वज्र और पत्थर को लिया गया है। दधीचि महर्षि की हड्डी से बनाया हुआ वज्र कितना कठिन होता है। इसी कारण तुलसी ने कारण से अधिक कार्य की कठिनता पर बल दिया है। [२]

उचित, अनुचित का विवेकपूर्ण निर्णय करके कार्य शुरू करना चाहिए :

जल्दबाजी से पछतावा होता है। उचित, अनुचित का निर्णय करने केलिए विवेक की ज़रूरत होती है। विवेक के अभाव में इसका निर्णय करना मुश्किल हो जाता है। अच्छी तरह सोच विचार कर एक निर्णय पर पहुंचना चाहिए। अविवेक से काम चलाया जाय तो भारी आफत हो जाती है। [३]

१- तामस बहुत रजोगुन थोरा। कलि प्रभाव विरोध चहुं ओरा।
बुध जुग धरमु जानि मन माहीं। तजि अधरम रति धरम कराहीं।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१८०

२- कारन ते कारजु कठिन होइ दोषु नहिं मोर।
कुलिस अस्थि ते उपल ते लोह कराल कठोर ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२५४

३- अनुचित उचित काजु किछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सब कोऊ।
सहसा करि पाछें पछिताहीं। कहहिं वेद बुध ते बुध नाहीं।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३३४

वैर और प्रेम को कपट से छिपाने की आदत बतायी जाती है :

संत-प्रकृति के पक्ष में तुलसी का यह मत है ~~और वह कहते है~~ कि इन्हें छिपाना चाहने पर भी वेह नहीं छिपता । [१]

वास्तविक प्रेम की विजय हमेशा होती है :

सच्चे प्रेम के बिना चाहनेवाले की प्राप्ति नहीं होती । प्रेम का दिखावा करने से कोई फायदा नहीं होता । पवित्र प्रेम में त्याग की भावना निहित रहती है । हम अपने प्यारे केलिए मर मिटने केलिए भी तैयार हो जाते है । पतंग दीपक केलिए सारे कष्ट सहने करने केलिए भी तैयार है क्यों कि दीपक के प्रति पतंग में सच्चा प्रेम रहता है । [२]

आर्त की अविवेकिता :

दु:खी व्यक्ति के अविवेकी स्वभाव पर प्रकाश डाला गया है । आर्त विवेक अविवेक की चिन्ता नहीं रखता । उसके मन में जो कुछ विचार आ जाता है वही कर डालता है । उसके बारे में सोच-विचार नहीं करता । [३]

१- कहउं सुभाउ सत्य सिव साखी । भरत भूमि रह राउरि राखी ।
तात कुतरक करहु जनि जाएं । वैर प्रेम नहिं दुरइ दुराएं ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२८३

२- तो भगवान सकल उर बासी । करिहिं मोहिं रघुपति के दासी ।
जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू । सो तेहि मिलै न कछु संदेहू ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८२

३- दैव दीन्ह सबु मोहि अभारू । मोरे नीति न धरम विचारू ।
कहउं वचन सब स्वारथ हेतु । रहत न आरत के चित चेतू ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६०

आर्त की पुकार सुनकर निर्दय लोगों के हृदय नहीं पसीजते :

तथापि आर्त प्रेमी अपनी पुकार नहीं छोड़ता । भगवान लोगों की परीक्षा लेते है। लेकिन भक्त अपनी पुकार नहीं छोड़ते । पपीहा मेघ से जल मांगते हुए उसकी पुकार कर बैठता है । लेकिन मेघ उसकी रटन की ओर ध्यान न देकर पत्थर और वज्र गिराता है । मेघ कितना कष्ट दे, कोई बात नहीं । चातक जलद के प्रेमी है । चातक को उसी का जल पीना पसन्द है । कितना बड़ा अत्याचार करने पर भी जलद के प्रति चातक का प्रेम बढ़ता ही रहता है । [१]

आर्त सभी कुकर्म करते हैं :

दरिद्र क्या बुरा काम नहीं करता ? भूख की अग्नि में पड़कर वह तड़पने लगता है । वह नहीं जानता कि क्या करना है । गोस्वामीजी निर्धनता सहन नहीं कर पाते । आदमी गरीबी के चक्कर में पड़कर धर्म का भी परित्याग कर देते हैं । भूख लगने पर वह कहीं से किसी का भी भोजन खानेकेलिए तैयार रहता है । [२]

१- जलदु जनम भरि सुरति बिसारउ । जांचत जलु पवि पाहन डारउ ।
चातकु रटनि घटें घटि जाई । बढ़े प्रेम सब भांति भलाई ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२६३

२- मांगउं भीख त्यागि निज धरमू । आरत काह न करइ कुकरमू ।
अस जिय जानि सुजान सुदानी । सफल करहिं जग जाचक बानी ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२६२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गुणवान मनुष्य संपत्ति से घमण्डी नहीं होता :

प्राय: संसार में देखा जाता है कि निर्धन व्यक्ति के पास थोड़ा-सा धन आ जाय तो अपने को वह भूल जाता है और उन्मत्त हो जाता है, विलासी जीवन बिताने लगता है मलयालम में एक कहावत है -

' अल्पनर्थं किट्टियाल् अर्धरात्रि कुट पिटिक्कुं ' ।।

लेकिन सभी लोग ऐसे नहीं होते । गुणी पुरुष की संपत्ति जितनी बढ़ती है उतना ही वह विनयशील होता जाता है । [१]

संस्कृत की उक्ति है :-

नमन्ति फलिनो वृक्षा: । नमन्ति गुणिनो जना: ।
शुष्क काष्ठानि मूर्खाश्च न नमन्ति कदाचन ।।

वृक्ष फल रूपी संपत्ति पाकर नतोन्मुखी हो जाते हैं, वैसे सत्पुरुष भी ।

१- फल भारन नमि विटप सब रहे भूमि निअराइ ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइ ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६४
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

योग्य पुरुष से उचित बातें कहना चाहिए :

वार्तालाप में औचित्य का निर्वाह करना है। हृदय में अत्यधिक ममता रखनेवाला मनुष्य ज्ञान की बातें पसन्द नहीं करेगा। लोभी वैराग्य की बातें, क्रोधी शान्ति की बातें और कामी भगवान से संबन्धित कथाएं पसन्द नहीं करेंगे। ये बातें इनसे कहने से कोई फायदा नहीं होता। इन बातों पर ये लोग ध्यान नहीं देंगे। साधु-सन्त ज्ञान की बातों में, विरागी वैराग्य की बातों में और कामी काम-संबन्धी बातों में दिलचस्पी लेते हैं। १

सभी का कल्याण चाहनेवाला सदा सुखी होता है :

उसे कभी दु:ख का सामना नहीं करना पडता। उसका लक्ष्य तो दूसरों का कल्याण है। दूसरों की उन्नति देखकर वह क्रोध की अग्नि में जलता नहीं, उल्टा वह अत्यधिक सन्तुष्ट होता है। पारस मणि की उपस्थिति में दरिद्रता से डरने की ज़रूरत नहीं। दरिद्रता से हम सतायेंगे। दूसरों की उसे मार-पीटें सहनी पडती हैं। वह निडर नहीं रह सकता। कामी तो कलंकी होता है। वह कभी निष्कलंक नहीं रह सकता। २

मोह दु:ख की जड़ है :

हमें कुछ चीज़ें संसार में मिलने की आशा होती है या हम जीवन के मधुर सपनों का साक्षात्कार होते देखना चाहते हैं। हम उसके लिए प्रयत्न

१- ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन विरति बखानी।
क्रोधिहिं सम कामिहिं हरि कथा। ऊसर बीज बए फल जथा।।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-१७३

२- कबहुंक दुख सब कर हित ताके। तोहि कि दरिद्र परस मनि जाके।
परद्रोही कि होहिं नि:संका। कामी पुनि कि रहहिं अकलंका।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६६

भी करते है। यदि हम अपने प्रयत्न में असफल निकलते हैं तो अत्यधिक दु:खी हो जाते हैं। मोह के कारण दु:ख भोगना पड़ता है। अभिमान करना मूर्खता है। व्यक्ति ही अभिमान का पर्दा पहनकर चलता है। व्यर्थ अभिमान करना मूर्खता है।[१]

मन अच्छा होना है :

जहां सुमति है अर्थात् जहां मनुष्य का मन अच्छा होता है वहां संपत्ति दिखाई पड़ती है। मन अच्छा होता है भलाई अवश्य होती है। मन बुरा होता है भलाई कभी नहीं होती। सुन्दर मनवाले आदमी से भलाई की प्रतीक्षा की जाती है। गोस्वामीजी मन को सुन्दर अर्थात् अच्छा बनाने का उपदेश देते है।[२]

मन केलिए आत्म-सुख चाहिए :

तभी तब हम सुखी जीवन बिता सकते हैं। नहीं तो हमारा जीवन अस्वस्थ रहता है। स्पर्श जानने केलिए वायु की आवश्यकता है नहीं तो हम स्पर्श का अनुभव नहीं कर सकते। किसी भी कार्य करते समय विश्वास की आवश्यकता होती है। विश्वास के बिना कोई कार्य करने से सिद्धि नहीं हो सकती। भक्ति में विश्वास का प्रमुख स्थान है। भव-भय का नाश हरि के भजन से ही हो सकता है। हरि-भक्ति से सारे सांसारिक रोग दूर हो जाते हैं।[३]

१- मोहमूल बहु सूल प्रद, त्यागहु तुम अभिमान। भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-१११

२- सुमति कुमति सब के उर बसहीं। नाथ पुराण निगम अस कहहीं।
जहां सुमति तहं संपति नाना। जहां कुमति तहं विपति निदाना।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१५४

३-विनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति। } मानस-किष्किन्धाकाण्ड
बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति। } पृष्ठ-१७२

३. निज अनुभव बिनु मन होइ कि थीरा। परस कि होइ बिहीन समीरा।
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा। बिनु हरिभजन न भव भय नासा। मानस-उत्तरकाण्ड-पृष्ठ-२५

मधुर वचन कहना परम आवश्यक है :

कठोर परन्तु हितकारी वचन सुननेवाले और कहनेवाले लोग बहुत विरले हैं। कुछ लोग तो हमें मीठे वचन सुनाते है, लेकिन इन मीठे वचनों में भलाई की अपेक्षा बुराई की मात्रा अधिक होती है। बाह्य रूप से मीठा लगने पर भी आन्तरिक रूप से उनका कथन अनिष्टकारी होता है। लेकिन अच्छे लोगों का लक्ष्य हमेशा दूसरों की भलाई करना है। दूसरों के नाश की चिन्ता वे कभी नहीं करते। कभी कभी उनका वचन बाहर से कठोर-सा लगता है। लेकिन असल में हितकारी वचन होता है। ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम होती है।[१]

मृत्यु से अभिभूत लोगों पर दवा असर नहीं जमाती :

यदि किसी व्यक्ति की मृत्यु सुनिश्चित है तो उसके लिए दवा का प्रयोग करना व्यर्थ है। औषधि का असर उस पर नहीं पड़ता। वैसे किसी बुरे स्वभाव वाले व्यक्ति से भलाई की बातें कहना व्यर्थ है। वह हमेशा बुराई की ओर उन्मुख रहता है। इसलिए उस पर भलाई की बातें असर नहीं डालेंगी।[२]

मूर्ख को ज्ञान नहीं मिलता :

मूर्ख व्यक्ति को श्रेष्ठ गुरु की आवश्यकता नहीं। अगर उसे श्रेष्ठ गुरु मिल जाय, तो भी कोई फायदा नहीं होता। उसका हृदय तो अज्ञान रूपी तिमिर

१- वचन परम हित सुनत कठोरे। सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे।
प्रथम बसीठ पठउ सुनु नीती। सीता देइ करहु पुनि प्रीती।
मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-१६७

२- हित मत तोहि न लागत कैसें। काल बिबस कहुं भेषज जैसें।
संध्या समय जानि दससीसा। भवन चलेउ निरखत भुजबीसा।
मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-१६८

से आच्छन्न रहता है । उस तिमिर से उसे मुक्त करना आसान नहीं । जन्म से ही एक व्यक्ति में जिन जिन गुणों का अभाव होता है उन्हें पैदा करने केलिए करोड़ों प्रयत्न करने पर कोई फायदा नहीं होता । वह प्रयत्न व्यर्थ ही निकलता है । उस व्यक्ति से भलाई की प्रतीक्षा नहीं की जा सकती । १

जो भव सागर पार नहीं कर सकता, वह मूर्ख है :

संसार सागर पार करने का एकमात्र अवलंब भक्ति है । भक्ति रूपी नाव के सहारे यह सागर पार कर सकता है । मूर्ख तो भव-सागर पार करने में असमर्थ होता है । २

मूर्ख की प्रवृत्ति तो बड़ी विचित्र होती है :

कल्पवृक्ष हमारे सारे मनोरथों की पूर्ति करने वाला है । उस वृक्ष से हम जो कुछ प्रार्थना करते है वे सब यह वृक्ष दे देता है । लेकिन मूर्ख तो कल्पवृक्ष की उपेक्षा कर एरण्ड को स्वीकार करता है । अमृत और

१- फूलै फरै न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद ।
मूरुख हृदय न चेत जो गुरु मिलहिं बिरंचि शिव ।।
मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-३२६

२- जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्मा हन गति जाइ ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

विष इन दोनों में से मूर्ख प्राण हरनेवाले विष को स्वीकार करता है। उसे ग्राह्याग्राह्य का विचार नहीं रहता। [१]

साधना से विवेक की उत्पत्ति होती है :

विवेक के उदय से साधक का मन जागृत हो उठता है। इसकी उपमा नव पल्लवों से युक्त वृक्ष से की गयी है। [२]

साधन बिना साध्य की इच्छा करना मूर्खता है :

अगर हमें किसी लक्ष्य तक पहुंचना है तो हमें अच्छा परिश्रम करना करना पडता है। चुपचाप बैठने से साध्य की प्राप्ति नहीं होती। निर्वाण की इच्छा है तो रामचन्द्रजी का भजन जरूर करना चाहिए। कठिन साधना करके साध्य की प्राप्ति होने पर ही पूरा सन्तोष प्राप्त किया जा सकता है। [३]

१- सेवहिं अरंडु कलपतरु त्यागी। परिहरि अमृत लेहिं विषु मांगी।
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं। देखु विचारि मातु मन मांहीं।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६७

२- नव पल्लव भये विटप अनेका। साधक मन जस मिलें विवेका।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३७

३- रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निरवान।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूंछ विषान।।
राकापति षोडस उअहिं तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन्ह दव लाइये बिनु रात न जाइ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१३५

संसार में कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अत्यधिक ध्यान से दूसरों का उपदेश सुनते हैं। लेकिन उन उपदेशों के अनुसार जीवन बिताने वाले बहुत विरले ही होते हैं। उन उपदेशों का आचरण करने केलिए वे तैयार नहीं होते। अपनी इच्छा के अनुसार चलना ही उन्हें पसन्द है। यदि दूसरों का कहना ठीक मालूम पड़े तो उसे स्वीकार करने में संकोच का अनुभव नहीं करना चाहिए। उसे स्वीकार करें तो कुछ भी हानि नहीं होगी। [१]

गोस्वामीजी तीर्थों की पवित्रता पर ज़ोर देते हैं :

पापों से मुक्ति मिलने केलिए लोग तीर्थों में जाते हैं। तीर्थाटन पर गोस्वामीजी विश्वास रखते हैं। पुराने ज़माने से यह विश्वास चला आया है कि तीर्थों का दर्शन करना पुण्य कार्य है। पाप-कर्म करना सब कहीं खासकर तीर्थ स्थानों पर वर्जित है। [२]

कुछ न कुछ कामना मन में रखकर भगवान की स्तुति करने से या सुनने से सारे सुख स्वयं आ जाते हैं। वह अपार संपत्ति का अधिकारी बन जाता है। [३]

१- पर उपदेश कुसल बहु तेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८६

२- तब रघुपति रावन के सीस भुजा सर चाप। काटे बढ़े पुनि जिमि तीरथ कर पाप।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३६६

३- जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख संपति नाना विधि पावहिं।
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं। अंतकाल रघुपति पुर जाहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३७

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

श्रोता,वक्ता की भाषा एक होनी चाहिए :

तभी उनमें भाषा का व्यवहार संभव हो सकता है। नहीं तो उन व्यक्तियों के बीच निकट का संपर्क नहीं रहता। भाषा के माध्यम से व्यक्ति अपने भाव को दूसरे तक पहुंचाता है। भाषा के बिना भाव का प्रकाशन असंभव होता है। उनके बीच स्नेह का भाव नहीं रहता। इसलिए दोनों की भाषा एक होनी चाहिए। [१]

दूसरों के सुख-दु:ख के भागी बनना चाहिए :

कुछ लोग तो ऐसे हैं जो दूसरों के सुखी जीवन के भागी हो जाते हैं। पर जब वे दु:खी जीवन बिताते हैं तब तो वे उनकी ओर पीछे मुड़कर भी नहीं देखते। लेकिन वास्तविक प्रेम रखनेवाला सुख और दु:ख दोनों अवस्थाओं में उनका साथ देता है। प्राय: कहा गया है कि सुख भोगने केलिए तो कई लोग होते हैं,लेकिन दु:ख तो अकेले भोगना पड़ता है। दूसरों के दु:ख में हमें भी भागी बनना चाहिए। [२]

गोस्वामीजी सुख और दु:ख के अनुभव की बात कहते है। अत्यधिक दु:खी व्यक्ति को जीवन में कुछ सुख का अनुभव होने पर वह अत्यधिक सन्तुष्ट होता है। लेकिन विलासी जीवन बिताने वाले को सुख के अनुभव में नवीनता

१- कछु तेहि तें पुनि मैं नहिं० राखा।
समुझै खग खगही कै भाषा।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०६

२- विषय अलंपट सील गुनाकर। पर दु:ख दु:ख सुख देखे पर।
राम अभूत रिपु विमद विरागी। लोभामरष हरष भय त्यागी।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७२

नहीं होती । वह उतना सन्तुष्ट नहीं होता क्योंकि वह हमेशा सुख की गोद में ही सोता रहता है । जीवन में सुख का अभाव होते ही वह सुख केलिए तरसता रहता है । कठिन धूप में चलनेवाला व्यक्ति ही पेड़ की छाया का सुख समझ सकता है । [१]

पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा इन तीनों को दुःख कहा गया है । हर एक व्यक्ति के मन में पुत्र को पानेकी तीव्र अभिलाषा होती है, वैसे धन के प्रति मोह सभी के हृदय में होता है, लोक में प्रशस्ति पाना सभी चाहते हैं । इन सब के प्रति मोह उत्पन्न होने के कारण मनुष्य विकारों का गुलाम हो जाता है । कुछ संयम तो ज़रूर होना चाहिए । नहीं तो सांसारिक मोह-माया में पड़कर उसका जीवन बरबाद हो जाता है । [२]

अभिमान दुःख दायक है । अभिमान के कारण दुःख भोगना पड़ता है । भक्त का अभिमानी बनना भगवान केलिए पसन्द नहीं । वह उसके नाश का कारण होता है । वह बहुत अनिष्टों का कारण है । [३]

१- जो अति आतम व्याकुल होई । तरु छाया सुख जानै सोई ।
जौं नहि होत मोह अति मोही । मिलतेउं तात कवन विधि तोही ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२६

२- कीट मनोरथ दारु सरीरा । जेहि न लाग घुन को अस धीरा ।
सुत वित लोक ईषना । केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२३

३- सुनहु राम कर सहज सुभाऊ । जन न अभिमान न राखहिं काऊ ।
संसृति मूल सूल प्रद नाना । सकल सोकदायक अभिमाना ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२८
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

सभी काल का कलेवा बनते है :

काल उल्लंघन करने योग्य नहीं । नदी के समान काल भी बहता रहता है । उस काल रूपी नदी के प्रवाह में सब लोग बहते जाते हैं । वह नदी बहती ही रहती है, कहीं भी रूकती नहीं । वह किसी केलिए भी नहीं रूकता ।[१]

अपनी इच्छा के अनुसार सब कोई बात बनाता है :

कुछ तो मानते हैं कि लंबं लंबी बातें करनेवाले पंडित है । लेकिन ऐसा कहा गया है कि पंडित अधिक बातें नहीं करते । संत लोगों का स्वभाव अत्यधिक निर्मल होता है । परहित करना उनका लक्ष्य होता है । स्वार्थ की चिन्ता उन्हें नहीं होती । कुछ तो बात बना बनाकर कहनेवाले हैं । उनके मत में संत दंभी है । लेकिन यह ठीक नहीं है । २

अभागा ही गधी की सेवा करता है :

कामधेनु तो हमारी इच्छा के अनुसार सारी चीजें हमें देती है । तब तो उसकी उपेक्षा करना मूर्खता है । गधी की सेवा करने से क्या मिलता है?। बुद्धिमान आदमी ऐसा नहीं करता । वह अच्छी तरह सोच विचार करके सारे काम

१- अग जग जीवन नाग नर देवा । नाथ सकल जग काल कलेवा ।
अंड कटाह अमित लयकारी । काल सदा दुरित क्रम भारी ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२६२

२- मारग सोइ जाकहुं जोइ भावा । पंडित सोई जा गाल बजावा ।
मिथ्यारंभ दंभ रत जोई । ताकहुं संत कहइ सब कोई ।
मानस- उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६७
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

करते हैं। कामधेनु की प्राप्ति होने पर भी गधी की सेवा करनेवाला सचमुच अभागा ही होता है।[१]

<u>यश प्राप्त करने केलिए सत्कर्म करना चाहिए :</u>

उसके बिना यश की प्राप्ति असंभव होती है। दुष्कर्म करनेवाला व्यक्ति यश कैसे प्राप्त कर सकता है? पुण्य कर्म करके रामचन्द्र के भजन में मग्न रहनेवाले की सद्गति अवश्य होती है। वह यश-प्राप्ति के योग्य व्यक्ति है।[२]

<u>पुरुष प्रबल है, नारी निर्बल है :</u>

पुरुष शारीरिक और मानसिक रूप से नारी से प्रबल है, नारी 'अबला' के नाम से पुकारी जाती है। वह कुछ कुछ गौरवपूर्ण कार्य करने में असमर्थ निकलती है।[३]

अज्ञानी ही दूसरों की निन्दा करने में आनन्द प्राप्त करते हैं। निन्दा करने से वह नीच योनि में जन्म ग्रहण करता है। निन्दा करना महान पाप है, निन्दा

१- कहु खगेस अस कवन अभागी। खरी सेवा सुर धेनुहि त्यागी।
   प्रेम मगन मोहि कछु न सोहाई। हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई।।
   मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६४

२- पावन जस कि पुन्य बिनु होई। बिनु अघ अजस कि पावै कोई।
   लाभु कि कछु हरि भगति समाना। जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना।
   मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२००

३- ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना।
   पुरुष प्रताप प्रबल सब भांति। अबला अबल सहज जड़ जाती।
   मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२११

करने का अधिकार हमें नहीं होता । अवगुणों से हीन मनुष्य को संसार में देखना मुश्किल है । सभी मनुष्य किसी न किसी दोष से युक्त रहते है । इसी कारण एक मनुष्य दूसरे से भिन्न नहीं होता । [१]

अवसर के अनुकूल काम होना चाहिए । खास समय के बीत जाने पर वह घडी फिर वापस नहीं आ जाती । उस विशेष घडी में जो कुछ करना है, वह ज़रूर करना चाहिए । अगर उस अवसर पर वर्षा नहीं होती है जबकि खेती की भलाई के लिए वर्षा की अत्यन्त आवश्यकता होती है और बिना वर्षा के खेत सूख जाते है । खेतों के सूख जाने पर वर्षा होने से कोई फायदा नहीं । आवश्यक समय में वर्षा होनी ही चाहिए, नहीं तो उसका परिणाम बुरा होता है । [२]

क्रोध करना तो अच्छी बात नहीं । क्रोध पण्डितों को शोभा नहीं देता । संसार में भी कुछ लोग है जो छोटी छोटी बातों पर चिढ़ते हैं । लेकिन यह अच्छा नहीं । क्रोध की मूर्च्छित अवस्था में मनुष्य क्या क्या अनर्थ कर डालते हैं । अनुचित काम भी कर डालते है । क्रोध के वशीभूत होना कभी श्रेष्ठ नहीं ।[३]

१- सब कै निन्दा जे जड करहीं । ते चमगादुर होइ अवतरहीं ।
सुनहु तात अब मानस रोगा । जिन्ह तें दुख पावहिं सब लोगा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३९

२- का बरषा सब कृषी सुखाने । समय चुके पुनि का पछिताने ।
अस जिय जानि जानकी देखी । प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेषी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४३८

३- लखन कहेउ हंसि सुनहु मुनि क्रोधु पाप कर मूल ।
जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं बिस्व प्रतिकूल ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६४
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाटी

शूर करणी करते है, कायर सिर्फ बकते रहते है। शूर आदमी अधिक बातचीत नहीं करते, वह अपनी वीरता कर्म के द्वारा व्यक्त करता है, न बातचीत से। युद्ध -भूमि मैं तो वह सकोच के बिना कूद पड़ता है। वह युद्ध करके मरने मे भी सन्तोष का अनुभव करता है। कर्म के द्वारा उसकी वीरता स्पष्ट हो जाती है। लेकिन कायर सिर्फ बकता रहता है। उसकी वीरता केवल बोलने मैं सीमित रहता है। युद्ध-भूमि की बात सुनने पर वह कांपने लगता है। युद्ध करना उसके लिए मुश्किल की बात है। वह केवल बातचीत करना जानता है। [१]

क्षत्रिय को युद्ध से नहीं डरना चाहिए। यदि वह युद्ध मैं हारकर घर लौट आ जाय तो घरवाले उनका स्वागत-सत्कार नहीं करेंगे। युद्ध मैं मर जाना उनके लिए खुशी की बात है। कायर होकर रणक्षेत्र से भाग जाना क्षत्रियों केलिए शोभा की बात नहीं। ये कायर क्षत्रिय-कुल के कलंक-स्वरूप है। वे अभिमान की रक्षा पर बल देते हैं। युद्ध करना उनका परम धर्म है। युद्ध मैं जीतकर यश पाना उनका लक्ष्य होता है।

पक्ष ही पक्षी का सहारा होता है। सर्प केलिए मणि ही सर्वस्व है, हाथी शुण्ड के बिना असहाय है। पक्ष के बिना पक्षी यों पड़ा रहता है,

---

१ - सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु।
विद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४६

२- क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुल कलंकु तेहि पांवर जाना।
कहौं सुभाउ न कुलहिं प्रसंसी। कालहु डरहिं न रन रघुबंसी।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४७३

कुछ भी नहीं कर सकता । शुण्ड के विना हाथी स्वयं कुछ करने में असमर्थ रहता है । इसका अर्थ यह है कि पक्षी हो या जानवर, सब को अपना अपना सहारा चाहिए । १

शरणागत का परित्याग किसी भी अवस्था में नहीं करना चाहिए । वह कभी मंगल दायक नहीं । अपने कल्याण को लक्ष्य में रखकर जो शरणार्थी की रक्षा नहीं करता, वह पामर है, पापमय है । उसे देखने मात्र से अमंगल होता है । शरणागत की रक्षा करने केलिए हमेशा तैयार रहना चाहिए । २

गोधूलि की वेला मंगलों का मूल है । गोधूलिवेला में सभी मांगलिक कर्म कर सकते हैं । उसके लिए लग्न देखने की ज़रूरत नहीं । उस समय कोई मांगलिक कार्य करने से शुभ फल मिलता निकलता है । वह समय दिन और रात के बीच की एक कड़ी है । अर्थात् सन्ध्या समय होता है । गोधूलि-वेला की श्रेष्ठता के बारे में एक सुन्दर उक्ति है । ३

'नास्यामृक्षं न तिथि करणं नैव लग्नस्य चिन्ता ।
नो वा वारो न च लवविधिर्नो मुहूर्तस्य चर्चा ।।
नैवायोगो न मृति भवनं नैव जामित्र दोषाः ।
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता ।।

१- यथा पंख बिनु खग अति दीना । मनि बिनु फनि करिवर कर हीना ।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२६३

२- सरनागत कहुं जे तजहि निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पामर पापमय तिन्हहि विलोकत हानि ।।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१४८

३- धेनु धूरि वेला विमल सकल सुमंगल मूल ।विप्रन कहेउ विदेह सन,जानि सगुन अनुकूल।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५१७

चातक की प्रशंसा टेक केलिए होती है । चातक जलद के प्रति अनन्य भक्ति रखकर उसी की प्रतीक्षा में हमेशा रहतों हैं । हंस की विवेकशीलता का बखान सभी विद्वान करते हैं । हंस की जल-मिश्रित दूध से जल की उपेक्षा कर दूध को स्वीकार करता है । इसी कारण हंस विवेकी कहा गया है । हंस की विवेकशीलता का बखान सभी विद्वान करते हैं । कवि लोग चातक और हंस को अक्सर कविता में स्थान दे देते हैं । [१]

प्रिय वचन न बोलने से मंत्री, वैद्य और गुरु का नाश हो जाता है । राजा को सन्तुष्ट करने केलिए मंत्री को क्या क्या करना चाहिए ? क्या क्या दुःखसहना पडता है ? वैद्य लाभ की इच्छा मन में रखकर रोगी से प्रिय वचन कहते हैं, उसका मन पैसे के पीछे दौडता रहता है । वैसे गुरु भी धन कमाने की इच्छा मन में रखकर काम करते हैं । ये तीनों अगर बिगड जाय तो राज्य, शरीर और धर्म कीअवनति जरूर होती है ।[२]

देव-ऋषि का वचन कभी झूठा नहीं हो सकता । वे सदा सत्य ही बोलते हैं । सत्य पर उनका जीवन अधिष्ठित है । [३]

१- राम प्रेम भाजन भरतु बडे न येहि करतूति ।
   चातक हंस सराहिअत टेक विवेक विभूति ।।
   मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४६६

२- सचिव वैद गुर तीन जौं प्रिय बोलहिं भय आस ।
   राजधर्म तन तीनि कर, होइ बिगिही नास ।।
   मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३७

३- झूठि न होइ देवरिषि बानी ।
   सोचहिं दंपति सखी सयानी ।।
   मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२६३
   टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

योग,युक्ति,तप और मंत्र की गुप्तता में ही फायदा होता है। अर्थात् ये कार्य अत्यधिक गुप्त होकर करना है, किसी भी आदमी को उपर्युक्त कर्म करने का पता नहीं मिलना चाहिए। तभी उसकी श्रेष्ठता बढ़ जाती है।[१]

काल और कर्म की गति किसी की चिन्ता के बाहर की बात है। कोई भी उसके बारे में कुछ निर्णय नहीं कर सकता। [२]

जन्म- जन्मान्तर का फल हर किसी को भुगतना पडता है। इसमें सन्देह नहीं कि पूर्व जन्म की करनी का फल अवश्य सहना पडता है। ईश्वर के निश्चय के अनुसार हमें सब कुछ सहना ही है।[३]

गोस्वामीजी एक पत्नी-व्रत पर जीवन बिताने का आदर्श रखनेवाले है। परस्त्री को माता के समान मानना चाहिए और दूसरों की संपत्ति याने धन को विष से भी कठोर मानना चाहिए। [४]

'मातृवत् परदारेषु पर द्रव्येषु लोष्टवत्।
आत्मवत्सर्व भूतेषु या पश्यति स पश्यति ।।

१- जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ। फलै तबहिं जब करिअ दुराऊ ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६१

२- काल करम गति अघटित जानी।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२३१

३- तिन्ह सिय निरखि निपट दु:ख पावा।
सो सब सहिअ जो दैउ सहावा ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३५६

४- जननी सम्म जानहिं पर नारी। धनु पराव विष ते विष भारी।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१८८

नि ष क र्ष

निष्कर्ष यह है कि 'रामचरित मानस' में तुलसीदास ने अधिकांश सूक्तियां लिखी हैं। विभिन्न विषयों से संबन्धित अनेक सूक्तियों की रचना उन्होंने की है। प्रत्येक सूक्ति का अध्ययन करने पर ही उसका पूरा पूरा रस ले सकते हैं।

0000000000000000000

पां च वां अ ध्या य

000000000000000

दोहावली की प्रमुख सूक्तियों का अध्ययन

दोहावली गोस्वामी तुलसीदास जी से रचित एक उत्कृष्ट ग्रन्थ-सुमन है । ` मानस ` के बाद ` दोहावली ` , विनयपत्रिका, कवितावली आदि ग्रन्थों की प्रधानता है । दोहावली तो सूक्ति प्रधान ग्रन्थ है अर्थात् सूक्तियुक्त वचनों की पीयूष वर्षा ही इसमें है । जीवन के शाश्वत सत्यों पर प्रकाश डालने में गोस्वामीजी कितने सिद्धहस्त है । यह तत्व इस ग्रन्थ का अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है । जीवन के कटु अनुभवों ने शायद उन्हें इस प्रकार के उपदेश देने केलिए प्रेरित किया होगा । अनुभवी कवि ही इस प्रकार का चित्र खींच सकते हैं ।

दोहावली में विषय-वैविध्यपूर्ण सूक्तियां मिलती है । आगे प्रत्येक सूक्ति को लेकर उसका विशद अध्ययन प्रस्तुत है ।

राम-प्रेम का महत्व :

भगवान रामचन्द्रजी से प्रेम के सूत्र से हमेशा अन्वित रहना अत्यधिक आवश्यक है। उनकी कृपा दृष्टि पड़ने पर मनुष्य में जादू-सा चमत्कार आ जाता है। अखिल विश्व का संचालन करनेवाले रामजी से विमुख रहना कितनी मूर्खता है। उनकी भक्ति में तल्लीन होने पर हमें अपनी परिस्थिति तक का बोध नहीं रह जाता। जीवन की दुरन्त परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति प्रदान करने वाले अकेले रामचन्द्रजी है।

राम- से प्रेम रखे बिना सारे काम व्यर्थ होते हैं। राम के पवित्र नाम का जप न करने से जीभ सर्पिणी की जीभ के समान हो जाती है। जैसे सर्प के मुख से हमेशा विष उगलता रहता है वैसे ही विषय-चर्चा रूपी विष बाहर निकलता रहता है। इसी कारण विधाता उसके वश में नहीं रहता। वह अभागा ही रहता है। [१]

राम के प्रति प्रेम रखनेवाले का एकमात्र सहारा राम ही है, उसी सहारे पर वह जीता है। राम के चरणों में अत्यधिक प्रीति रखने पर उसका जन्म सफल होता है। वही जन्म की सफलता पाने का एकमात्र अधिकारी है। [२]

१- रसना सांपिनि बदन बिल जे न जपहिं हरिनाम।
तुलसी प्रेम न राम सों ताहि बिधाता नाम ।।
तुलसीकृत दोहावली - पृष्ठ-२५

२- राम सनेही राम गति राम चरन रति जाहि।
तुलसी फल जग जनम को दियो बिधाता ताहि।
तुलसीकृत दोहावली-पृष्ठ-३०

मन को संबोधित कर गोस्वामीजी कहते हैं कि सांसारिक पदार्थों से प्रीति जोड़ना उचित नहीं। वे सभी पदार्थ मायामोह में फंसाने वाले हैं। उनसे नाता जोड़ना अच्छा नहीं। उससे कितना श्रेष्ठ है राम से प्रेम रखना।[1]

राम-प्रेम की सर्वोत्कृष्टता के बारे में इसमें कहा गया है। सिर्फ कथन से कोई फायदा नहीं। कथनी के साथ साथ करनी भी होनी चाहिए। तभी कथन में सार्थकता आ सकती है। इस उदाहरण के ज़रिये गोस्वामीजी व्यक्त करते हैं कि राम के चरण कमलों में प्रेम रखे बिना कोई भी साधन सफल नहीं हो सकता।[2]

विषयवासना में लीन व्यक्ति राम के प्रेम में मग्न नहीं हो सकता। विषयों के प्रति वैराग्य की भावना रखने पर ही राम का भक्त बन सकते है। तभी हमारी आंखे खुल जाती है और वह प्रेम-पथ स्पष्ट दिखलायी पड़ता है। उदाहरणार्थ कहते हैं कि केंचुल के रहने से सांप स्पष्ट दिखलायी नहीं पड़ता। वह केंचुल को छोड़ देने पर स्पष्ट दिखायी पड़ता है।[3]

१- रे मन सब सों निरस ह्वै सरस राम सों होहि।
   भलो सिखावन देत है निसि दिन तुलसी तोहि।।
      दोहावली-पृष्ठ-२८

२-जाय कहब करतूति बिनु जाय जोग बिन षेम।
   तुलसी जाय उपाय सब बिना राम पद प्रेम।।
      दोहावली-पृष्ठ-४३

   (१)लोग मगन सब जोगहीं जोग जाय बिनु छेम।
      त्यों तुलसी के भावन राम प्रेम बिनु नेम।।
      दोहावली-पृष्ठ-४३

३- राम प्रेम पथ पेखिए दिएं विषय तन पीठि।
   तुलसी केंचुरि परिहरें होत सांपहू दीठि।
      दोहावली-पृष्ठ-३७

राम से प्रेम न रखने वाले का नाश अवश्य होता है , चाहे वह पिता हो, माता हो, भाई हो, मित्र हो, कोई भी सगे संबन्धी हों । उनकी सहायता करने से विमुख रहने वाले की संपत्ति का नाश हो जाता है, सुख का भी ।[१]

राम का प्रेम प्राप्त करने का सुगम उपाय गोस्वामीजी बताते हैं । जिस व्यक्ति का मन, वाणी और क्रियायें सरल हैं वह आसानी से राम का प्रेम प्राप्त कर सकता है । राम जल्दी उसे प्रेम के बन्धन में रखने लगते हैं । मनसा वाचा और कर्मणा कलंक रहित होने से भगवान राम आसानी से हमारी ओर आकृष्ट होते हैं ।[२]

राम की कृपा का महत्व :

रामचन्द्र जी की कृपादृष्टि पड़ने पर प्रत्येक व्यक्ति के सारे कर्म सफल होते हैं । उनका परिणाम मंगलमय होता है । वह रामचन्द्र जी के प्रेम में मग्न हो जाता है । अन्त में वह प्रभु का हो जाता है । [३]

१- जसु सो संपति सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाइ ।
सनमुख होत जो राम पद करइ न सहस सहाइ ।
दोहावली-पृष्ठ-५२

२- सूधे मन सूधे बचन सूधी सब करतूति ।
तुलसी सूधी सकल बिधि रघुबर प्रेम प्रसूति ।
दोहावली- पृष्ठ-५६

३- तुलसी उत्तम करम जुग जब जेहि राम सुडीठि ।
होइ सुफल सोइ ताहि सब सनमुख प्रभु तन पीठि।।
दोहावली-पृष्ठ-३५

राम की कृपा से संसार के सारे दु:ख दूर हो जाते हैं। राम इन दु:खों से हमें छुटकारा दिला सकते हैं। संत लोगों ने पुराणों का गहरा अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला है। [१]

नीच व्यक्ति पर राम की कृपा दृष्टि पड़ने पर मृत्यु एकदम आकर उस पर अनुग्रह करती है। अर्थात् मृत्यु उसे ले जाती है। नीच व्यक्ति के नीच कर्म करके हजारों वर्ष जीने से क्या फायदा ? उससे कितना अच्छा है मरना। उसे अवश्य सन्तुष्ट होना चाहिए, उसका कल्याण अवश्य होता है। बुरी रीति से जीने में अमंगल होता है। उससे बेहतर तो मरना है। [२]

उनकी कृपा का पात्र न बनने से क्या क्या अमंगल होता है ? सुन्दरी अहल्या शाप-वश पत्थर हो जाने पर राम ही उसे अपना पूर्व रूप दिला देते हैं। समुद्र में पहाड़ के तैरने का सौभाग्य भी राम-कृपा से होता है। और उसी से मृत वानर पुन: जीवित हो उठे। [३]

१- कहहिं बिमल मति संत वेद पुरान बिचारि अस।
   द्रवहिं जानकी कंत तब छूटै संसार दुख।
      दोहावली-पृष्ठ-५२

२- नीच मीचु लै जाइ जो राम रजायसु पाइ।
   तौ तुलसी तेरो भलो न तु अन भलो अघाइ।
      दोहावली-पृष्ठ-५७

३- सिला सुतिय भइ गिरि तरे मृतक जिए जग जान।
   राम अनुग्रह सगुन सुभ सुलभ सकल कल्यान ।।
      मानस-दोहावली-पृष्ठ-६२

(अ)केवट निसिचर बिहग मृग किए साधु सनमानि।
   तुलसी रघुबर की कृपा सकल सुमंगल खानि।
      दोहावली-पृष्ठ-७६

राम-भक्त की महिमा :

भक्ति की उन्मत्तता में तल्लीन होकर भक्त अपने आपको भूल जाते हैं। उसे परिस्थिति तक का बोध नष्ट हो जाता है। वह स्वयं भक्ति की वर्षा की धारा में भिगोते हुए आनन्द की अनुभूति में डूब जाता है। राम का स्मरण करते करते उसका हृदय पिघल जाता है, आंखों से प्रेमाश्रु की धारा प्रवहमान होती है, शरीर रोमांचित हो उठता है। लेकिन जो उपर्युक्त विकारों के अधीन नहीं आते उनका हृदय फट जाता है, आंखें फूट जाती हैं, शरीर जल जाते हैं। उनके सभी अंग निष्फल पड जाते हैं। [1]

सत्य का पालन करना भक्त का सबसे पहला कर्तव्य है। कल्मष से उसका मन अछूता रहना चाहिए। सारी मलिनताओं से मुक्त होकर मन को अत्यधिक पवित्र रखना है। कर्मों में कापट्य का लेशमात्र भी नहीं रहना चाहिए, निष्काम कर्म करना चाहिए। ऐसे भक्तों की रक्षा हमेशा प्रभु करते है। कलियुग के कपट रूपी जाल में वह कभी नहीं पडता और इसी कारण वह कलियुग में धोखा भी नहीं खाता। [2]

१- हिय फाटहुं फूटहु नयन जरउ सो तन केहि काम।
   द्रवहिं स्रवहिं पुलकइ नहीं तुलसी सुमिरत राम।।
   तुलसीकृत - दोहावली-पृष्ठ-२५

२- सत्य वचन मानस बिमल कपट रहित करतूति।
   तुलसी रघुबर सेवकहि सकै न कलिजुग धूति।
   दोहावली-पृष्ठ-३८

(अ) तुलसी सुखी जो राम सों दुखी सो निज करतूति।
   करम वचन मन ठीक जेहि तेहि न सकै कलि धूति।
   दोहावली-पृष्ठ-३६
   टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

राम - स्मरण की महिमा :

रामचन्द्रजी का स्मरण करना प्रत्येक मनुष्य के जीवन का परम कर्तव्य है। उनकी सेवा का अवसर प्राप्त करना सौभाग्य की बात है। यह अवसर सुलभ नहीं। स्वामी को अच्छी तरह पहचानना चाहिए, उसके बाद उनका सेवक बनना है। जिसके हृदय में उनका सेवक बनने की इच्छा नहीं होती वह मूर्ख है। उसकी इच्छाओं की हानि होती है।[१]

यदि किसी को जानने की इच्छा मन में होती है तभी उसे हम जान सकते हैं। उसका यथार्थ ज्ञान हम तब पा सकते हैं। अगर जानने की इच्छा ही नहीं है तो जानना असंभव हो जाता है। राम का स्मरण सभी कार्यों की पूर्ति के लिए बहुत श्रेष्ठ है।[२]

राम का स्मरण करके कोई भी कार्य शुरू की जाय तो उसका अन्तिम परिणाम शुभ ही होता है। गोस्वामीजी यहां कृपण की बात कहते हैं। वह धन इकट्ठा करके रखता है। यों पड़ा मिल जाता है, उसे विशेष प्रयत्न भी नहीं करना पड़ता। तब तो सिद्धि की प्राप्ति यहां साधन के बिना ही होती है।[३]

१- सुमिरन सेवा राम सों साहब सों पहिचानि। ऐसेहु लाभ न ललक जो
   तुलसी नित हित हानि।
   दोहावली-पृष्ठ-४१

२- जाने जानत जोइये बिनु जाने को जान।
   तुलसी यह सुनि समुझि हियं आनु धरें धनु बान।
   दोहावली-पृष्ठ-४१

३- कृपिन देइ पाइअ परो बिनु साधे सिधि होइ।
   सीतापति सनमुख समुझि जो कीजै सुभ होइ।
   दोहावली-पृष्ठ-७२ ६२

रामचन्द्रजी के स्मरण से कल्याण ही कल्याण होता है :

राम के साथ भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण का भी स्मरण करके कार्य करना है। शुभ साधनों का आश्रय भी ग्रहण करना है। इससे अवश्य कल्याण होता है। हमारी कामनाओं की पूर्ति भी हो जाती है। राम के पवित्र स्मरण से यही सुन्दर परिणाम निकलता है।[१]

गोस्वामीजी भगवान के सगुण रूप की उपासना करनेवाले है। इसी कारण उन्होंने सभी लोगों से हमेशा राम और सीता की युगल-मूर्तियों के सगुण स्वरूप का स्मरण प्रेमपूर्वक करने का उपदेश दिया है। इससे मंगल अवश्य होता है। राम हमारे सभी क्लेशों को मिटाकर और हमारे मार्ग पर फूल बिछाकर जीवन सुन्दर अवश्य बना देंगे।[२]

राम-स्मरण न करनेवाले का जीवन धन्य नहीं होता :

संसार में उन लोगों का जीना व्यर्थ है जो रामजी का स्मरण करते समय रोमांच का अनुभव नहीं करते। युद्ध क्षेत्र में शत्रु का सामना करते समय दान देते समय, गुरु-चरणों को प्रणाम करते समय भी इसी प्रकार की अनुभूति मन में पैदा होती है। ऐसी अनुभूति के वशीभूत न होने वाले का जन्म निष्फल है।[३]

१- भरत सत्रुसूदन लखन सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सब मिलिहि सुमंगल साथ।
दोहावली-पृष्ठ-१५८

२- तुलसी सहित सनेह नित सुमिरहु सीता राम।
सगुन सुमंगल सुभ सदा आदि मध्य परिनाम।
दोहावली-पृष्ठ-१६५

३-रामहि सुमिरत रत भिरत देत परत गुरु पांय।) दोहावली - पृष्ठ
तुलसी जिन्हहि न पुलक तनु ते जग जीवन जायं।।) २५

कलियुगीन कुचालों को नष्ट करने केलिए राम-गुण गाना है। केवल रामजी ही अनीतियों के इस युग से हमारी रक्षा कर सकते है। सब कहीं कुतर्क, कुचाल आदि का नाच है। सब कहीं कपटी लोगों की अधिकता दीख पडती है। कपटता पूर्ण व्यवहार चलता रहता है। दंभ, पाखण्ड आदि की भरमार होती है। इन अत्याचारों के नाश करने की शक्ति अकेले राम में रहती है। आग की प्रचण्ड चिनगारियां ईंधन को जला देती है। वैसे राम के गुण समूह अत्याचारों को जला देते हैं।[1]

राम - कथा की महिमा :

कवि ने राम की कथा को मन्दाकिनी नदी से उपमित किया है। वह नदी पावन और निर्मल मानी जाती है। वैसे ही राम की कथा भी हृदयहारी है, कथा-श्रवण से दूसरों की भलाई होती है।

राम चरित की महिमा :

राम चरित गाने या सुनने पर जल्दी भवसागर पार हो जाते हैं। उनका चरित तो त्रिगुणों से रहित है, माया के अतीत है। वे सूर्य-कुल के ध्वज-रूप हैं। उनका चरित संसार सागर तरने केलिए पुल के बराबर है।[2]

१- कुपथ कुतरक कलि कपट दंभ पाखंड ।
   दहन राम गुन ग्राम जिमि इंधन अनल प्रचंड ।
   दोहावली-पृष्ठ-१६३

२- रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु ।
   तुलसी सुभग बन सिय रघुबीर बिहारु ।।
   दोहावली-पृष्ठ-६८

३- सुद्ध सच्चिदानंदमय कंद भानुकुल केतु । चरित करत नर अनुहरत संसृति सागर सेतु ।
   दोहावली -पृष्ठ-४६

राम-चरित सुनने से सारे अनिष्ट नष्ट हो जाते हैं। राम तो भक्तों के हित केलिए नाना रूप धारण कर लेते हैं। मनुष्य के रूप में भी उन्होंने लीलायें की हैं। उस चरित का गान, श्रवण करने मात्र से संसार की सारी अनीतियों का नाश हो जाता है।[१]

राम-भजन का महत्व :

भवसागर पार करने केलिए राम का भजन अवश्य करना है। यह स्पष्ट करने केलिए तुलसी कई उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जल का मंथन कर उससे घी निकालना क्या संभव है? वैसे बालू से तेल कभी नहीं निकल सकता। ये असंभव बातें चाहे संभव भी हो जाएं तो भी संसार सागर पार करने केलिए राम भजन की नितान्त आवश्यकता है।[२]

राम का भजन करने केलिए कामनाओं को छोड़ देना चाहिए। माया के कारण उत्पन्न दोष और गुण को दूर करने केलिए भी हरि का भजन करना है। यह बात हमेशा मन में रखनी है। फिर राम-भजन में तल्लीन होना चाहिए। हरि - भजन में तल्लीन होने पर माया अपनी अनाविलता दूर कर देती है।[३]

१- भगत भूमि भूसुर सुर हित लागि कृपाल। करत चरित ~~धरि करत चरित~~ धरि मनुज तनु सुनत मिटहिं जगजाला।
 दोहावली-पृष्ठ-४८

२- बारि मथें घृत होइ बरु सिकता ते बरु तेल।
 बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धान्त अपेल।।
 दोहावली-पृष्ठ-४६

३- हरिमाया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं।
 भजिअ राम सब काम तजि अस बिचारि मन माहिं।।
 दोहावली-पृष्ठ-४६

राम को भजने वाले का जीवन धन्य होता है। उनमें चेतन को जड़ कर देने की शक्ति होती है। जड़ में चेतनता भरने की शक्ति भी है। रामजी में इतनी सामर्थ्य है। वे क्या करने में असमर्थ है? [१]

आसक्ति-रहित होकर जो राम-भजन नहीं करता, उसे कभी शान्ति नहीं मिलती। भगवान की भक्ति में तल्लीन होने केलिए विषयवासना के प्रति मोह छोड़ देना चाहिए। पूर्ण रूप से विरागी होकर भक्ति में खो जाना परम आवश्यक है। विषयवासना से प्रेम होने के कारण ही जीव को नाना प्रकार का दु:ख सहना पडता है। उसके जीवन में सुख नाम मात्र केलिए भी नहीं होता। वह सदा अशान्त रहता है, शान्ति का अनुभव नहीं कर सकता। [२]

सच्ची भक्ति केलिए भगवान के प्रति श्रद्धा और विश्वास की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है। राम के पिघलने केलिए भक्ति की ज़रूरत है। जीव तभी सुख का अनुभव क र सकता है जब रामचन्द्रजी की कृपा उस पर पडती है। [३]

१- जो चेतन कहं जड़ करइ जड़हि करइ चैतन्य।
अस समर्थ रघुनायकहि भजहिं जीव ते धन्य।
दोहावली-पृष्ठ-५०

२- तब लगि कुसल न जीव कहुं सपनेहुं मन बिश्राम।
जब लगि भजत न राम कहुं सोकधाम तजि काम।
दोहावली-पृष्ठ-५०

३- बिनु बिस्वास भगति नहीं तेहि बिनु द्रवहिं न रामु।
राम कृपा बिना सपनेहुं जीव न लह बिश्रामु ॥
दोहावली-पृष्ठ-५१
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

का अनुभव करते हैं और दुर्जन ताप का । [१]

राम माया को दूर हटा देते है :

उदाहरणार्थ कहा गया है कि जब सूर्य दूर रहता है तब छाया लंबी होती है और पास आने पर छोटी हो जाती है । वैसे राम से विमुख रहने पर माया बढ़ जाती है । राम के ध्यान में रहने से माया दूर हो जाती है । उनकी अपूर्व शक्ति का प्रकाशन यहां होता है । [२]

प्रबल माया को तरने का उपाय गोस्वामीजी बता देते है । चाहे मुनि हो चाहे देवता हो, चाहे मनुष्य हो , कोई भी हो, तो भी सब भगवान की माया के जाल में पड जाते है । उस माया जाल से मुक्त होना बहुत कठिन है । माया की अमोधिनी शक्ति सब कहीं फैलती है । माया जाल से मुक्त होने का एकमात्र मार्ग राम का भजन करना है, उसमें तल्लीन होना है । [३]

१- रघुबर कीरति सज्जननि सीतल खलनि सताति ।
ज्यों चकोर चय चक्कवनि तुलसी चांदनि राति ।।
दोहावली-पृष्ठ-७४ ८

२- राम दूरि माया बढ़ति घटति जानि मन मांह ।
भूरि होति रबि दूर लखि सिर पर पगतर छांह ।।
दोहावली-पृष्ठ-३३

३- सुर नर मुनि कोउ नाहिं जेहि न मोह माया प्रबल ।
अस बिचारि मन माहिं भजिअ महामाया पतिहि ।
दोहावली-पृष्ठ-६५

टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

राम के भजन के बिना मोक्ष पाना असंभव है। भजन के बिना निर्वाण पद की इच्छा भी नहीं है। भजन के बिना कुछ भी नहीं हो सकता। कवि की मान्यता है कि चाहे वह समझदार भी हो तो भी कोई बात नहीं। वह पशु है जिसकी सींग और पूंछ नहीं। सींग पूंछ के बिना जो पशु है उसका क्या महत्व है? वैसे वह आदमी भी उस पशु के समान है।[१]

राम को प्रेम, सेवा आदि से वश में करने का उपदेश कवि देते हैं। इसके लिए हमारे बंधुओं की उपेक्षा भी अगर करनी पड़े तो अवश्य करना है।उसे अनुचित कभी नहीं कहा जा सकता। भगवान के प्रेमी को संयोग, वियोग दोनों सुखद अनुभूत होते हैं। संयोग में विशेष सुख और वियोग में अत्यधिक दु:ख का अनुभव उन्हें होता। हमेशा वे एक ही प्रकार रहते हैं। माया-मोह के कारण प्रिय जनों के संयोग-वियोग से सुख, दु:ख का अनुभव होता है।[२]

राम की कीर्ति :

राम की कीर्ति सज्जनों केलिए सुखद है तो दुर्जनों केलिए दु:खद है। गोस्वामीजी सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। चांदनी रात चकोर केलिए अत्यन्त प्रिय है। उस रात में चकोर अत्यधिक शीतलता का अनुभव करता है। लेकिन चकवों केलिए वह तापदायक है। वैसे राम की कीर्ति से सज्जन शीतलता

१- रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निर्वान।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूंछ बिषान।
दोहावली-पृष्ठ-५२

२- सेवा सील सनेह बस करि परिहरि प्रिय लोग।
तुलसी ते सब राम सों सुखद संयोग बियोग।
दोहावली-पृष्ठ-५५

राम - भक्त के लक्षण :

राम भक्त को राम के प्रति अटल विश्वास और प्रेम होता है। मित्रों से बहुत प्रेम के साथ व्यवहार करना चाहिए। शत्रु हो तो भी उनसे वैर छोड़कर प्रेम पूर्ण व्यवहार करना है। सभी लोगों से समान रूप से व्यवहार करना, किसी से भी भेद भाव के बिना रहना चाहिए।[१]

जो राम का भक्त नहीं उसका अमंगल होता है। राम के गुणों का मूल्य समझना है, नहीं तो वह मूर्ख कहलाता है। भगवान के गुणों का वर्णन सुनने पर भी जिस व्यक्ति का हृदय आर्द्र नहीं होता उसके दिल की उपमा वज्र से की जा सकती है। राम के गुणगान में यदि जीभ भाग नहीं लेती तो वह जीभ मेंढक की जीभ के समान हो जाती है। मेंढक व्यर्थ हलचल मचाते रहते हैं, उसका कोई मूल्य नहीं।[२]

रामचन्द्रजी के भक्तों को विषयवासनाओं से दूर रहना और राम के प्रेम में उन्मत्त होना चाहिए। उन्हीं लोगों को रामचन्द्रजी पसन्द करते हैं।[३]

१- हित सों हित रति राम सों रिपु सों बैर बिहाउ।
उदासीन सब सों सरल तुलसी सहज सुभाउ ।।
दोहावली-पृष्ठ-४०

२- हृदय सो कुलिस समान जो न द्रवइ हरिगुन सुनत।
कर न राम गुन गान जीह सो दादुर जीह सम ।।
दोहावली-पृष्ठ-२६

३- जे जन रूखे विषय रस चिकने राम सनेहं।
तुलसी ते प्रिय राम को कानन बसहिं कि गेहं।
दोहावली-पृष्ठ-३१

राममक्तों को कहीं भी रहना पसन्द है । जो वस्तु मिल जाती है उस पर सन्तोष का अनुभव करना चाहिए । राम-चरणों में प्रेम है तो उन्हें कहीं भी रहना पसन्द आता है । राम-भक्त को वन या घर का भेद भाव नहीं सूझता । हमेशा भक्ति में तल्लीन रहना उन्हें पसन्द है ।[1]

राम-भक्त आसानी से भव सागर पार कर सकते हैं । वह राम के प्रति विशेष ममता रखनेवाला होता है । उसे सारे लोगों में समानता देखनी है । किसी प्रत्येक व्यक्ति से राग या द्वेष की भावना उसमें नहीं होनी चाहिए । वह संसार सागर पार करने में कठिनाई का अनुभव नहीं करता ।[2]

राम के इष्टजन बुरे होने पर भी भले होते हैं । राम को आदर की दृष्टि से देखनेवाले लोगों की भलाई होती है, इसमें सन्देह नहीं । वे चाहे बुरे हों, तो भी कोई बात नहीं । दीपक के जलते जलते उसके ऊपर काजल अत्यधिक मात्रा में इकट्ठा हो जाता है । फिर दीपक उसे धारण किए ही रहता है ।[3]

१- जथा लाभ सन्तोष सुख रघुबर चरन सनेह ।
तुलसी जो मन खूंद सम कानन बसहुं कि गेह ।
दोहावली-पृष्ठ-३१

२- तुलसी ममता राम सों समता सब संसार ।
राग न दोष दुख दास भए भव पार ।
दोहावली-पृष्ठ-४०

३- तुलसी राम जो आदर्यो खोटो खरो खरोइ ।
दीपक काजर सिर धर्यो धुधर्यो धरोइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१०७

राम से अधिक राम के भक्त का महत्व होता है। हनुमान तो रामचन्द्र जी के परम भक्त हैं। वे अपने हृदय में राम को रखकर पूजा करनेवाले है। ऐसे भक्त के राम कितने ऋणी है०, यह बताया नहीं जा सकता। [१]

राम भक्त ही सुखी जीवन व्यतीत कर सकता है। सभी सुखी जीवन व्यतीत करने की इच्छा रखते हैं। राम-भक्त सांसारिक माया-जाल में नहीं पडते। निरन्तर भगवद्भजन में लीन रहने से उनमें निराशा की कोई गुंजाइश नहीं होती। वह सदा परम आनन्द का अनुभव करता रहता है। गोस्वामीजी दाता और भिखारी दोनों को मूर्ख मानते हैं। दाता दान से तो भिखारी लोगों से भीख मांगने से अनाथ दिखायी पडते हैं। [२]

राम - नाम - जप की महिमा :

कवि श्रेष्ठ गोस्वामीजी अपने इष्टदेव रामचन्द्रजी के भक्ति-सागर में निमग्न रहना अत्यधिक पसन्द करते हैं। भक्ति की पीयूषवर्षिणी-धारा में सारे कल्मष नष्ट हो जाते हैं। भगवान का सारा नाम-जप भक्ति का श्रेष्ठ तत्व है। अनेक भक्तों के उद्धार के हेतु गोस्वामीजी ने नाम को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया है। राम से भी अधिक नाम की श्रेष्ठता वे स्वीकार करते हैं। भव सागर पार करने केलिए गोस्वामीजी के मत में नाम जलयान के

१- तुलसी रामहु तें अधिक राम भगत जियं जान।
रिनिया राजा राम भे धनिक भए हनुमान।
दोहावली-पृष्ठ -४५

२- सुख जीवन सब कोउ चहत सुख जीवन हरि नाथ।
तुलसी दाता माग नेउ देखिअत अबुध अनाथ।
दोहावली-पृष्ठ-६१

समान है। रूप से अधिक उन्होंने नाम पर महत्व दिया है। क्योंकि नाम से ही रूप की धारणा हो सकती है। ब्रह्म और नाम इन दोनों में नाम की श्रेष्ठता मानी गयी है।[१]

नाम का जप करनेवाले को रामचन्द्रजी मनोवांछित फल देते हैं। राम की श्रेष्ठता का यही स्पष्ट निदान है।[२]

गोस्वामीजी राम-नाम के जप करने का विधान बतलाते हैं। उसके लिए छः महीने तक आहार के रूप में सिर्फ दूध पीना या फल खाना चाहिए। इस प्रकार का उपवास करके राम-नाम लेना चाहिए। तब सारी सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं।[३]

सब कहीं बाहर और भीतर उजियाले की ज़रूरत है तो राम नाम रूपी दीप मुखरूपी दरवाज़े की देहली पर रखना। अर्थात् लौकिक और पारलौकिक ज्ञान पाने केलिए हमेशा राम-नाम को दोहराना पड़ता है। वह दीप किसी प्राकृतिक प्रकोप से कभी बुझ नहीं सकता। उस दीप की दीप्ति कभी मन्द नहीं

१- अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा।
मोरे मत बड़ नामु दुहूं ते। किय जेहि जुग निज बस निज बूते।।
दोहावली-पृष्ठ-६१

२- चित्रकूट सब दिन बसत प्रभु सिय लखन समेत।
राम नाम जप जापकहि तुलसी अभिमत देत।।
दोहावली-पृष्ठ-१४

३- पय अहार फल खाइ जपु राम नाम षट मास।
सकल सुमंगल सिद्धि सब करतल तुलसीदास।।
दोहावली-पृष्ठ-१४
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार।

पड़ती। अविरल गति से राम नाम का जप करना होता है।[१]

राम नाम को संजीवनी बूटी कहकर तुलसीदास जी हमेशा उसका सेवन करने का उपदेश देते है।[२]

रामचन्द्रजी के नाम को अंक और बाकी सभी साधनों को शून्य मा ना गया है। अंक के अभाव में शून्य का कुछ भी मूल्य नहीं रहता। लेकिन शून्य के पहले अंक के आने पर उसका मूल्य हो जाता है। भावार्थ यह है कि राम नाम जप के साथ होनेवाला साधन अत्यधिक मूल्य रखता है। लेकिन राम नाम से हीन साधन निष्फल होता है। यही इस नाम की श्रेष्ठता है।[३]

कलियुग में राम का नाम जपना अत्यधिक श्रेष्ठ है। कलियुगीन मलिनताओं से आदमी राम नाम के प्रभाव से मुक्त हो जाता है। राम नाम कलियुग में अपनी इच्छित पदार्थ देनेवाला कल्पवृक्ष है और मंगल का निधान है। सब कहीं कल्याण ही होता है।[४]

१- राम नाम मणि दीप धरु जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहुं जौं चाहसि उजियार।।
दोहावली-पृष्ठ-१५

२- तुलसी सुमिरहु राम को नाम सजीवन मूरि।
दोहावली-पृष्ठ-१५

३- नाम राम को अंक है सब साधन हैं सून।
अंक गएं कछु हाथ नहिं अंक रहें दस गून।।
दोहावली-पृष्ठ-१६

४- नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु।
जो सुमिरत भयो भांग तें तुलसी तुलसीदासु।।
दोहावली-१९,पृष्ठ-१६

राम-नाम अत्यधिक पवित्र और शुद्ध हृदय से लेना चाहिए । मन में किसी प्रकार का कलंक रखकर राम नाम लेना ठीक नहीं है । आलसी होकर नाम का जप करने से आदमी पवित्र नहीं होता । पवित्र ढंग से राम-नाम का जप करने से आदमी पुण्यात्मा हो जाता है । वह परम सुख का अनुभव कर सकता है । नहीं तो नाम-जप से उस की हानि होती है, दुख का अनुभव होता है । [१]

नाम का जप करनेवाले भक्तों को राम प्रसन्न होकर राज्य तक दे देते है । उनको अपना भक्त समझकर उनको सब कुछ देने में झिझकते नहीं । लेकिन गोस्वामीजी मानव मन पर यह आरोप लगाते हैं कि इस मन पर विश्वास नहीं किया जा सकता । क्योंकि मन हमेशा गंदे विषयों के चारों तरफ मण्डराता फिरता रहता है । मानव मन तो चंचल है । बुराई की ओर वह सदा उन्मुख रहता है । [२]

पुण्य तीर्थों से भी अधिक राम-नाम को महत्व दिया गया है । पुण्यतीर्थों में काशी का महत्वपूर्ण स्थान है । वहां बैठकर व्रतों का अनुष्ठान करते हुए मरना पुण्य माना गया है । वैसे तीर्थराज प्रयाग में भी शरीर छोडने पर मोक्ष मिल जाता है , ऐसा विश्वास है । लेकिन राम-नाम का अनुरागी

१- राम नाम जपि जीहं जन भए सुकृत सुखसालि ।
तुलसी इहां जो आलसी गयो आजु की कालि ।।
दोहावली-पृष्ठ-१७

२- नाम गरीबनिवाज को राज देत जन जानि ।
तुलसी मन परिहरत नहिं घुर बनिआ की बानि ।
दोहावली-पृष्ठ-१७

होने पर मोक्ष आसानी से मिल सकता है । [१]

राम नाम के प्रभाव से दुर्लभ बातें भी सुलभ हो जाती हैं । राम नाम के प्रेमी जन सारे दु:खों से रहित होकर पूर्ण रूप से सुखी हो जाते हैं । बरतन-भर मीठा पदार्थ मिलना, सुखी होकर राजशासन चलाना, स्वार्थ और परमार्थ दोनों में संपन्न होना, ये परस्पर विरोधी बातें नाम के प्रभाव से संभव हो जाती हैं । उस राज्य में विषय सुखों का अभाव होता है, अभिमान भी वर्जित है इसलिए अवनति का प्रश्न भी नहीं उठता । [२]

राम-नाम-स्मरण केलिए जाति का कोई प्रश्न नहीं है । स्वभाव का भी कोई प्रश्न नहीं है । चाहे जाति नीच हो, स्वभाव बुरा हो, तो भी कोई बात नहीं । अगर वह राम नाम का स्मरण आदरपूर्वक करता है तो वह अवश्य कीर्ति का पात्र बन जाता है । [३]

नाम-स्मरण से सारे क्लेश मिट जाते हैं । कुछ लोगों को सांसारिक सुख भोगों का अनुभव करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता । मोक्ष-प्राप्ति का सुख भी उन्हें वर्जित है । इन दु:खों से मुक्त होने का एकमात्र मार्ग नाम-जप ही है । [४]

१- कासीं विधि बसि तनु तजें हठि तनु तजें प्रयाग ।
तुलसी जो फल सो सुलभ राम नाम अनुराग ।।
दोहावली-पृष्ठ-१७

२- मीठो अरु कठवति भरो रौताई अरु छेम । छेम
स्वारथ परमारथ सुलभ राम नाम के प्रेम ।
दोहावली-पृष्ठ-१८

३- राम-नाम सुमिरत सुजस भाजन भए कुजाति ।कुतरूक सुरपुर राजमग लहत भुवन बिख्याति ।
दोहावली-पृष्ट-१८

४- स्वारथ सुख सपनेहुं अगम परमारथ न प्रवेश ।रामनाम सुमिरत मिटहिं तुलसी कठिन कलेस । दोहावली-पृष्ठ-१८

नाम-जप के बिना परमार्थ-प्राप्ति असंभव बात है। उसकी आशा करना ही व्यर्थ है। असंभव बात केलिए एक सुन्दर उदाहरण बताया गया है। भूमि की ओर गिरनेवाली वर्षा की बूंद को क्या कोई ऊपर की ओर लौटा सकता है, कभी संभव नहीं। [१]

' चित्त ' को संबोधित कर कवि कहते हैं नित्य नाम का स्मरण करने से भलाई होती है। नाम को भूलने पर सबसे बड़ी हानि होती है। [२]

बिगड़ी हुई हालत के सुधर जाने में नाम-स्मरण अत्यन्त उपयोगी है। मन के सारे कल्मर्षों को त्यागकर, कुसंगति से नाता तोड़कर राम का भक्त बनकर उनके नाम का जप करता रहना परम आवश्यक है। इससे पूर्व-जन्मों का अपराध ठीक हो जाता है और उसकी धार्मिक उन्नति संभव हो जाती है। [३]

तीनों कालों में इससे कल्याण होता है। अत्यधिक प्रेम और लगन से जप करना चाहिए। मन को इधर उधर न दौड़ाकर, अचंचल चित्त से नाम लेना

१- राम नाम अवलंब बिनु परमारथ की आस।
   बरषत बारिद बूंद गहि चाहत चढ़न अकास।
      दोहावली-पृष्ठ-१६

२- तुलसी हठि हठि कहत नित चित सुनि हित करि मानि।
   लाभ राम सुमिरन बडो बडी बिसारें हानि ।।
      दोहावली-पृष्ठ-२०

३- बिगरी जनम अनेक की सुधरै अबहीं आजु।
   होहि राम को नाम जपु तुलसी तजि कुसमाजु।
      दोहावली-पृष्ठ-२०
      टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

चाहिए । दृढ़ विश्वास भी इसके लिए आवश्यक है । सारी विधियों का पालन भी करना है । [१]

कलियुग में राम-नाम कल्पवृक्ष के समान इच्छित वस्तुओं को प्रदान करता है । कामधेनु मुंह-मांगी वस्तुओं को प्रदान करने में समर्थ है । राम-भक्ति-रूपी कामधेनु सारी इच्छायें सफल कर देती हैं । वैसे गुरु की चरण धूलि भी । [२]

यह नाम ब्रह्म और राम से भी बड़ा है । देवताओं को भी वर देनेवाला है । इसकी श्रेष्ठता नहीं बतायी जा सकती । [३]

इस पवित्र नाम पर भरोसा रखने वाला समस्त मंगलों का खजाना बन जाता है । इस नाम का पारायण करनेवाला, प्रेम और विश्वास से इसका स्मरण करने वाला सारे मंगलों का निवास हो जाता है । [४]

१- प्रीति प्रतीति सुरीति सों राम राम जपु राम । } दोहावली-पृष्ठ-२०
तुलसी तेरो है भलो आदि मध्य परिनाम ।।)

दोहावली-पृष्ठ-२०

२-राम नाम कलि कामतरु राम भगति सुरधेनु । } दोहावली-पृष्ठ-२१
सकल सुमंगल मूल जग गुरु पद पंकज रेनु ।। }

(अ)राम नाम कलि कामतरु सकल सुमंगल कंद । } दोहावली-पृष्ठ-२२
सुमिरत करतल सिद्धि सब पग पग परमानंद ।।)

३- ब्रह्म राम तें नामु बड़ बरदायक बर दानि । } दोहावली-पृष्ठ-२२
राम चरित सत कोटि मंह लिय महेस जियं जानि । }

४- राम नाम पर नाम तें प्रीति प्रतीति भरोस ।) दोहावली-पृष्ठ-२३
सो तुलसी सुमिरत सकल सगुन सुमंगल कोस ।। }

(आ)हरन अमंगल अघ अखिल करन सकल कल्यान । } दोहावली-पृष्ठ-२४
राम नाम नित कहत हर गावत बेद पुरान ।। }

विधाता को वश में करने के लिए इस नाम को प्रेम और विश्वास के साथ रटना चाहिए । मन को और कहीं लगाकर नाम का जप करना उचित नहीं, भगवान में एकाग्र होकर जप में लीन होना चाहिए । विधाता के अनुकूल हो जाने पर अभागा भी भाग्यवान हो जाता है।[१]

जो एकमात्र राम- नाम पर अटल विश्वास रखता है उसे दोनों लोकों में कल्याण होता है । नाम के प्रति अचंचल प्रेम होना आवश्यक है । एकमात्र राम ही उसका अवलंब रहता है तो राम के अलावा कौन उसकी रक्षा करता है ।[२]

राम-विमुखता का कुफल :

राम से विमुख रहना क्या अच्छी बात है ? राम की उपेक्षा कर दूसरों पर भरोसा रखना उचित नहीं । ऐसा करने से उसे जीवन में सुख का अनुभव कभी नहीं होता । उसे नरक में रिक्त स्थान मिलना भी कठिन है । ऐसा महापराध है उसका । [३]

१- तुलसी प्रीति प्रतीति सों रामनाम जप जाग ।
किएं होइ विधि दाहिनो देइ अभागेहि भाग ।।
दोहावली-पृष्ठ-२४

२- राम नाम रति नाम गति राम नाम विस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल दुहुं दिसि तुलसीदास ।
दोहावली-पृष्ठ-२५

३- तुलसी श्री रघुबीर तजि करै भरोसो और ।
सुख संपति की का चली नरकहुं नाहीं ठौर ।।
दोहावली-पृष्ठ-३२

हरि और हर को छोड़कर भूतों की पूजा करनेवाले की दुर्दशा होती है। वेश्या के पुत्रों की तरह उनकी बुरी दशा होती है। वेश्या तो कुटिल स्त्री है, बुरे मार्ग पर पैर रखनेवाली है। तब तो उसके पुत्रों की हालत के बारे में क्या कहना है।[१]

हरि का अपमान करने से हानि ही होती है। अपमान करना कितनी मूर्खता की बात है। उससे बड़ा दु:ख सहना पड़ता है।[२]

राम से विमुख रहने वाले जीव नरक गामी होते हैं। गंगा नदी का जल अत्यधिक पवित्र माना गया है। उसमें मदिरा भी मिली हो, तो भी कोई बात नहीं। लेकिन वह जल गंगा से अलग होने पर मदिरा तुल्य हो जाता है। यों राम से विमुख व्यक्ति विषय सुखों में मग्न रहता है तो उसके अन्दर परमात्मा का जो अंश रहता है उसकी पवित्रता ~~स्वच्छ~~ नहीं रहती।[३]

१- तुलसी परिहरि हरि हरहिं पांवर पूजहिं भूत।
अंत फजीहत होहिंगे। गनिका के से पूत ।।
दोहवली-पृष्ठ-३२

२- तुलसी हरि अपमान तें होइ अकाज समाज।
राज करत रज मिलि गए सदल सकुल कुरुराज ।।
दोहावली-पृष्ठ-३२

३- तुलसी रामहि परिहरें निपट हानि सुन ओझ।
सुरसरि गत सोई सलिल सुरा सरिस गंगाइत ।।
दोहावली-पृष्ठ-३३
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

राम से विमुख होने पर मनुष्य का सारा सुख नष्ट हो जाता है। राम से प्रेम रखें तो भाग्य-देवता उस पर प्रसन्न अवश्य होते हैं।[१]

राम-विमुख मनुष्य की हालत हम अनुभव से ही समझ सकते हैं। उसकी दीन अवस्था की तुलना बरसात के गोबर से की गयी है। बरसात के पानी में मिलकर गोबर उसमें विलीन हो जाता है और इस कारण उसका अलग अस्तित्व नहीं रह सकता। वह गोबर किसी काम में भी नहीं आता, बेकार हो जाता है। राम से विमुख व्यक्ति भी ऐसा ही निकम्मा होता है।[२]

परमार्थ से विमुख व्यक्ति अंधा होता है। स्वार्थ का प्रेमी होना किसी व्यक्ति के लिए अच्छा गुण नहीं है। यदि वह व्यक्ति परमार्थ से मुंह मोड़ कर चलता है तो उसे अन्धा कहने में संकोच नहीं करना चाहिए। बाहरी आंख के होते हुए भी उसे विवेक-चक्षु का अभाव होता है। उसे आंखवाला कैसे कहा जाय। विवेकरूपी आंखे होतीं तो वह अवश्य भगवान के सम्मुख होने में विमुखता प्रकट न करता, विषयों के प्रति आस्था छोड़ देता, कल्याणकारी मार्ग को अपनाता अर्थात् भगवान के वशीभूत हो जाता।[३]

१- साहिब सीतानाथ सों जब घटिहै अनुराग।
तुलसी तब ही भाल तें भभरि भागिहैं भाग।।
दोहावली-पृष्ठ-३३

२- करिहौं कोसलनाथ तजि जबहिं दूसरी आस।
जहां तहां दुख पाइहौ तबहीं तुलसीदास।
दोहावली-पृष्ठ-३४

२-बरषा को गोबर भयो को चहै को करै प्रीति।तुलसी तू अनुभवहि अब राम विमुख की रीति।। पृष्ठ-३४

३- तुलसी स्वारथ सामुहो परमारथ तन पीठि।
अंध कहें दुख पाइहैं डिठि आरो केहि डीठि।।
दोहावली-पृष्ठ-१६५

राम-सेवक की महिमा :-

गोस्वामीजी का कहना है कि साहूकार दिन को पसन्द करते हैं, लेकिन चोर रात को पसन्द करते हैं। राम की आज्ञा मानने वाले तो दिन व रात दोनों को पसन्द करते हैं। [१]

ईश्वर से विमुख व्यक्ति की अवश्य दुर्गति होती है :

ईश्वर से विमुख होकर चाहे वह कुछ वर्ष सुखी होकर जिये तो भी अधिक समय तक वह इस स्थिति में रह न सकता। उसकी अवनति होती है। विवेकी मनुष्य उसे कभी अच्छा आदमी नहीं कहता। ईश्वर से विमुख व्यक्ति क्या जीवन में कभी उन्नति प्राप्त कर सकता है। [२]

भगवान विपत्तिकाल का एकमात्र सहारा है। विपत्ति के समय धैर्य के साथ दु:ख का सामना करना है। तब धर्म भी हमारा साथ देता है। विवेक साहस, सत्य, और रामजी पर भरोसा रखकर आगे बढ़ना चाहिए। रामजी पर पूरा भरोसा रखने से सारे दु:ख मिट जाते हैं। सत्य के मार्ग से तनिक भी नहीं हिलना चाहिए। [३]

१- तुलसी दिन भल साहु कहं भली चोर कहं राति।
निसि बासर ता कहं भलो माने राम इताति।।
मानस-पृष्ठ-५५

२- निडर ईस तें बीस कै बीस बाहु सो होइ।
गयो गयो कहैं सुमति सब भयो कुमति कह कोइ।।
दोहावली-पृष्ठ-१६७

३- तुलसी असमय के सखा धीरज धरम बिबेक।
सहित साहस सत्यब्रत राम भरोसो एक।।
दोहावली-पृष्ठ-१५३

भक्ति की पवित्रता :

भक्ति की उन्मत्तता में तल्लीन होकर भक्त अपने आपको भूल जाते हैं। अपनी परिस्थिति को भी वे भूल जाते हैं। वे भक्ति- वर्षा की धारा में भिगोते हुए स्वयं आनन्द की अनुभूति में डूब जाते हैं। राम स्मरण करते करते भक्तों के हृदय पिघल जाते हैं, आंखों से प्रमाश्रु की धारा प्रवाहमान होती है, शरीर रोमांचित हो उठता है। लेकिन जो उपर्युक्त विकारों के अधीन नहीं होते उनका हृदय फट जाता है, आंखे फूट जाती हैं, शरीर जल जाता है। [१]

राम के प्रति अनन्य भक्ति का होना अनिवार्य है। उस भक्ति में फलप्राप्ति की इच्छा लेशमात्र भी नहीं होनी चाहिए। निष्काम भाव से भक्ति में लीन होना है। स्वार्थ और परमार्थ की इच्छा नहीं रखनी है। तभी चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति हो जाती है। [२]

राम-भक्त से गोस्वामीजी का यही कहना है, नीति के रास्ते पर चलना, उसका आश्रय कभी नहीं छोड़ना। रामचन्द्रजी के चरण कमलों के प्रति अपार श्रद्धा, भक्ति और प्रेम का होना परम आवश्यक है। गोस्वामीजी,

---

१- हिय फाटहुं फूटहुं नयन जरउ सो तन केहि काम।
   द्रवहिं प्रवहिं पुलकइ नहीं तुलसी सुमिरत राम।
      दोहावली-पृष्ठ-२५

२- स्वारथ परमारथ रहित सीता राम सनेहं।
   तुलसी सो फल चारि को फल हमार मत एहं।।
      दोहावली-पृष्ठ-३१

      टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

धोने पर भी फीका न पडनेवाला कपडा पहनने का उपदेश देते है । अर्थात् बार बार धोने पर भी भक्ति रूपी वस्त्र का रंग कभी फीका नहीं पडता । उसका रंग बढ़ता जाता है । भक्ति के तीव्र होने पर उसमें गहराई और दृढ़ता आ जाती है ।[१]

किसी भी परिस्थिति में भगवान से प्रेम रखना है । चाहे हमारी श्रवण शक्ति क्षीण पड जाय तो भी उससे हमें दु:खित होने की आवश्यकता नहीं है ,पर शर्त यह कि हम ईश्वर के प्रति प्रेम रखे । यदि हमारी आंखे क्षीण पड़े और देखने की शक्ति घट जाय, शारीरिक बल भी कम पड जाय तो भी चिन्तित होने की जरूरत नहीं । भगवान के प्रति प्रेम घट जाय तो हमारा कुछ भी घट नहीं जायगा ।[२]

गृहस्थाश्रम भगवद्भक्ति में बाधक नहीं । गृहस्थाश्रम का पालन करते हुए भी हम भगवान के प्रेम में मग्न हो सकते हैं । लेकिन आसक्ति के रहने से उसमें बाधा पड जाती है । गृहस्थाश्रम का पालन करने पर परलोक की प्राप्ति असंभव हो जाती है, यही कवि का मत है । इसी कारण वे उपदेश देते है कि घर में निवास करते हुए विरागी का सा जीवन बिता लें ।[३]

१- चलब नीति मग राम पग नेह निबाहब नीक ।
तुलसी पहिरिअ सो बसन जो न पखारें फीक ।
दोहावली-पृष्ठ-१६१

२- श्रवन घटहूं पुनि दृग घटहूं घटउ सकल बल देह ।
इते घटें घटिहै कहा जौं न घटै हरिनेह ।।
दोहावली-पृष्ठ-१६३

३- घर कीन्हें घर जात है घर छांडे घट जाइ ।
तुलसी घर बन बीचहीं राम प्रेम पुर छाइ ।।
दोहावली-पृष्ठ-८६

मक्ति की महिमा :

सुख की प्राप्ति केलिए हरि के प्रति सच्ची मक्ति होनी चाहिए। वास्तविक मक्ति के द्वारा किसी की प्राप्ति असंभव नहीं होती। वेदों और पुराणों का यही कहना है। ज्ञान प्राप्त करने केलिए गुरु का सहारा आवश्यक है।[१]

सत्य का पालन करना मक्त का सबसे पहला कर्तव्य है। कल्मष से उसका मन बचा रहना चाहिए। सारी मलिनताओं से मुक्त होकर मन को अत्यधिक पवित्र रहना चाहिए। कर्मों से कापट्य का लेशमात्र मी नहीं होना चाहिए। निष्काम कर्म है, ऐसे मक्तों की रक्षा हमेशा प्रभु करते है। कलियुग के कपट रूपी जाल में वह कभी नहीं पड़ता। वह कलियुग से धोखा मी नहीं खाता।[२]

प्रेम और विश्वास लेकर राम की मक्ति में मग्न होना आवश्यक है। मगवान के सेवक को अत्यधिक ईमानदार और कपट रहित होना चाहिए।

१- बिनु गुर होइ कि ग्यान ग्यान होइ बिराग बिनु।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिअ हरि मगति बिनु।
दोहावली-पृष्ठ-५२

२- सत्य बचन मानस बिमल कपट रहित करतूति।
तुलसी रघुबर सेवकहि सकै न कलिजुग धूति।
दोहावली-पृष्ठ-३८

(अ) तुलसी सुखी जो राम सों दुखी जो निज करतूति।
करम बचन मन ठीक जेहि तेहि न सकै कलि धूति।
दोहावली-पृष्ठ-३६

ऐसा सेवक चाहे हार जाय तो भी कोई बात नहीं है, वह विजयी के समान है[१]।

<u>असली भक्ति की रीति :</u>

राम के प्रति प्रेम में मग्न होना, अत्यधिक संयम के साथ विषय-वासनाओं को जीत लेना, नीति के रास्ते का अनुसरण करना आदि बातें भक्ति के परम आवश्यक तत्व हैं। असली भक्ति में उपर्युक्त तत्वों का पालन देखा जा सकता है।[२]

चातक के उदाहरण के ज़रिये गोस्वामीजी अपनी भक्ति की अनन्यता स्पष्ट कर देते हैं। चातक तो केवल स्वाति-नक्षत्र का जल पीता[४]। लेकिन गोस्वामीजी चातक को स्वाति नक्षत्र का जल भी न पीने का उपदेश देते हैं। उनके मन में प्रेम की प्यास हमेशा बढ़ती रहनी चाहिए। नहीं तो प्रेम की पवित्रता नष्ट हो जाती है।[३]

१- रामहि करु करु राम सों ममता प्रीति प्रतीति।
तुलसी निरुपाधि राम को भएं हारेहूं जीतिहि ।।
दोहावली-पृष्ठ-४०

२- प्रीति राम सों नीति पथ चलिय राग रिस जीति।
तुलसी संतन के मते इहै भगति की रीति ।।
दोहावली-पृष्ठ-३८

३- चातक तुलसी के मतें स्वातिहुं पिए न पानि।
प्रेम तृषा बाढ़ति भली घटें घटैगी आनि ।।
दोहावली-पृष्ठ-६६
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

सज्जन प्रशंसा :

गोस्वामीजी ने उत्तम पुरुषों की व्याख्या यों दी है। उसकी बुद्धि तो निर्मल होती है। वह ज्ञानी होता है। आसक्ति में उसका मन रमता नहीं। राग-द्वेष की भावना उसमें नहीं होती। वह सभी लोगों के कल्याण-हेतु प्रयत्न करता है। साधु लोगों की दृष्टि में वह सुहृद् है। गोस्वामीजी की दृष्टि में वह महाभाग्यशाली है।[१]

सज्जन जहां कहीं बैठे सुख ही देते रहते हैं। वे अगर मालिक के आश्रय में रहते हैं तो वहां भी वे सभी की सहायता में रत होकर आनन्द देते रहते हैं। उदाहरण है :- समुद्र का जल भाप होकर और आसमान में इकट्ठा होकर बादल बनता है। इसलिए बादल में समुद्र का जल भरा रहता है। समुद्र का जल खारा होता है। लेकिन वर्षा के रूप में बादल अमृत के समान पवित्र, निर्मल, जल बिन्दुओं से संसार को भिगो देते हैं। अतएव बादल की तुलना सज्जन से की गयी है।[२]

सराहने योग्य सज्जन को किस प्रकार का होना चाहिए, इसकी व्याख्या तुलसीदासजी देते हैं। माता, पिता, गुरु, सास, ससुर और मालिक

१- बुध सो बिबेकी बिमल मति जिन्ह के रोष न राग।
सुहृद सराहत साधु जेहि तुलसी ताको भाग।।
दोहावली-पृष्ठ-१२२

२- प्रभु समीप गत सुजन जन होत सुखद सुबिचार।
लवन जलधि जीवन जलद बरषत सुधा सुबारि।।
दोहावली-पृष्ठ-१२६
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

अत्यधिक पूज्य होते हैं। इनकी आज्ञाओं का पालन करना हमारा कर्तव्य है। नहीं तो हमारा कल्याण नहीं होता। शिष्य, पुत्र, बहू, सेवक आदि को आज्ञा का पालन करना पड़ता है। हमेशा सेवा करने केलिए उन्हें तैयार होकर रहना है। उन्हीं लोगों को सज्जन कहा जा सकता है। लेकिन ऊंचा पद मिलने की इच्छा तो सब लोग रखते है। गोस्वामीजी के मत में निचले पद पर रहना ही श्रेष्ठ है। [१]

प्राय: सज्जन पूज्य होते हैं। प्रतिष्ठा पाने केलिए उन्हें विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता। प्रतिष्ठा स्वयं आती है। इसके विपरीत दुष्टों को प्रतिष्ठा प्राप्त करने केलिए कष्ट उठाना पड़ता है। साधारण पत्थर की पूजा कोई नहीं करता, लेकिन जब वह मूर्ति का रूप धारण कर लेता है तभी पूजा जाता है। गण्डकी नदी के पत्थर प्राय: पूजे जाते हैं। उन्हें मूर्ति का रूप देने की ज़रूरत नहीं। अर्थात् सज्जन बिना प्रयत्न के आदर प्राप्त करते हैं। दुर्जनों का आदर तो कोई नहीं करता।

सज्जनों के स्वभाव की विशेषता का चित्रण किया गया है। उनका स्वभाव तो निर्मल होता है। साधारण कोटि के लोगों से धन मांगना तो

१- सास ससुर गुरु मातु पितु प्रभु भयो चहै सब कोइ।
   होनी दूजी और को सुजन सराहिअ सोइ ।।
      दोहावली-पृष्ठ-१३३

२- सठ सहि सांसति पतिलहत सुजन कलेस न कायं।
   गढ़ि गुढ़ि पाहन पूजिए गंडकि सिला सुभायं ।।
      दोहावली-पृष्ठ-१३४

      टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

वे पसन्द नहीं करते । वैसे उन्हें कष्ट पहुंचाना वे नहीं चाहते । उनसे मांगने पर वे क्रोध से जलने लगते हैं । बड़े पूंजीवाले नीच मनुष्यों से इसलिए वे नहीं मांगते कि मांगने से उन्हें जल में डूब जाने के समान कष्ट होता है । किसी भी आदमी के मन में दर्द पहुंचाकर काम चलाना वे पसन्द नहीं करते । अभाव की पीड़ा सह लेने पर भी इन लोगों से वे नहीं मांगते । उनकी दशा आग और पानी के बीच में रहने के समान है । [१]

सज्जनों केलिए दुष्टों का संग भी मंगलदायक होता है । सज्जन की संगति में दुष्ट आ जावे, कोई बात नहीं । दुष्टों से वे प्रभावित नहीं होते । सज्जन दुर्जन से मिल जाये तो भी घबराने की कोई ज़रूरत नहीं । [२]

सत्संग का महत्व :

भगवान के गुण गणों को समझ लेने केलिए सत्संग करना है । अच्छे लोगों की संगति में रहना राम पसन्द करते हैं । मोह को दूर करने केलिए उनकी कथाओं से परिचय प्राप्त करना है । मोह से मुक्त व्यक्ति के हृदय में ही हरि के चरणकमलों के प्रति प्रेम उत्पन्न हो जाता है । गोस्वामीजी

१- कृसधन सखहि न देव दुख मुअहुं न मागब नीच ।
तुलसी सज्जन की रहनि पावक पानी बीच ।।
दोहावली -पृष्ठ-११६

२- तुलसी संगति पोच की सुजनहि होति मदानि ।
ज्यों हरि रूप सुताहि तें कीनि गोहारी आनि ।
दोहावली- पृष्ठ-१८४
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

भक्ति के प्रसंग पर सत्संग की आवश्यकता पर ज़ोर देते है । [१]

सत्संगति से आदमी अच्छा हो जाता है । एक ही लोहा संगति के अनुसार भिन्न प्रकार का हो जाता है । मनुष्य कुसंगति में पड़ने पर बुरा हो जाता है । लोहा नाव में लगने पर सागर पार कराता है । वही सितार में सुन्दर संगीत की तरंगों में तरंगित होता है । लेकिन तीर में लगने से जीवों को मार डालता है । संगति का यही परिणाम है । एक ही वस्तु के विभिन्न परिस्थितियों में पड़ने पर स्वभाव में भिन्नता आ जाती है । [२]

बड़े लोगों की संगति में पड़ने पर आदमी बड़ा हो जाता है और छोटों के संसर्ग में पड़ने पर वह छोटा हो जाता है । अर्थ,धर्म और मोक्ष के साथ ही काम की भी गिनती होती है । काम तो नरक का द्वार माना गया है । उत्कृष्ट तत्वों की संगति से ` काम ` का महत्व बढ़ गया । [३]

१- बिनु सत्संग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गएं बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ।।
दोहावली-पृष्ठ-५१

२- तुलसी भलो सुसंग तें पोच कुसंगति सोइ ।
नाउ किंनरी तीर असि लोह बिलोकहु लोइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१२३

३- गुरु संगति गुरु होइ सो लघु संगति लघु नाम ।
चार पदारथ में गनै नरक द्वारहू काम ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२३

(ब) तुलसी गुरु लघुता लहत लघु संगति परिनाम ।
देवी देव पुकारिअत नीच नारि नर नाम ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२४

सत्संगति मे दुष्ट जनों के आ जाने से उनको कोई दोष नहीं लगता। कवि ने सत्संगति और गंगा नदी को समान वर्णन किया है। इसका कारण यह है कि अगर गंगा नदी मे मलिन जल भी पड़े तो भी कोई बात नहीं। उसका जल पवित्र ही मानाजाता है। कभी अपवित्र नहीं माना जाता। वैसे सन्तों की संगति मे एक दुर्जन आ जाय तो भी वह सज्जन ही माना जाता है। सभी पदार्थ अच्छी वस्तुओं के सम्मिलन से अच्छे और बुरी वस्तुओं के योग से बुरे हो जाते हैं। ग्रह, औषधि, जल, वायु, वस्त्र ये सभी संगति के भेद से अच्छे या बुरे हो जाते हैं। [१]

अच्छे या बुरे लोगों के संसर्ग से या तो अच्छा या बुरा हो जाता है। वायु के पवित्र होने पर भी दुर्गन्ध युक्त और सुगन्धयुक्त वस्तुओं के मेल से वह भी या तो दुर्गन्धित होता है या सुगन्धित। संत्सग ही अच्छाई या बुराई का कारण है। वैसे अच्छे या बुरे राजा के अनुसार काल मे भी परिवर्तन होता है। २

दुर्जनों पर सत्संगति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। नीच मनुष्यों के स्वभाव मे परिवर्तन लाना असंभव है। तुलसीदास जी का मत है - सज्जन लोगों की संगति मे पड़ने पर भी नीच मनुष्य अपनी नीचता की उपेक्षा नहीं करता।

१-राम कृपां तुलसी सुलभ गंग सुसंग समान।
जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान।
दोहावली-पृष्ठ-१२४

२- ज्या अमल पावन पवन पाइ कुसंग सुसंग।
कहिव कुवास सुबास तिमि काल महीस प्रसंग।।
दोहावली-पृष्ठ-१७३

टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

यह उसके स्वभाव की अनोखी विशेषता है। उसका स्वभाव परिस्थितिवश बदलने वाला नहीं। हमेशा एक ही प्रकार का होता है। विषैला सांप चाहे चन्दन के वृक्ष की संगति में अर्थात् उसमें निवास करे तो भी विष से वह कभी मुक्त नहीं हो सकता। संगति चाहे जो भी हो, कोई बात नहीं। नीच मनुष्य की तुलना सांप से और नीचता की विष से तुलना की गयी है।[१]

दुर्जन का स्वभाव (कुटिलता) नीच तो केवल रसवाले पौधों को सींचते हैं। उनकी अच्छी तरह देख-भाल करते हैं। लेकिन वे रसहीन पौधों को जड़ से उखाड़ फेंक देते हैं। उनका देखभाल नहीं करते। वे इन दोनों पौधों में अन्तर देखते हैं। लेकिन बादल इनमें अन्तर नहीं देखता। वह किसी प्रकार के भेदभाव के बिना पृथ्वी के सभी पौधों को वर्षा की जल बिन्दुओं से सींचता है और उन्हें आराम पहुंचाता है।[२]

उत्तम पुरुषों की निन्दा करने से उन्हें कुछ भी दोष नहीं लगता। नीच चाहे जो कुछ कहे कोई दोष नहीं है। वे दूसरों की भलाई देखकर वे ईर्ष्यालु हो उठते हैं। शिवजी के मस्तक पर शोभित हैं गंगाजी। कुत्ते, सारावगि आदि जानवर इस पुण्य और निर्मल नदी गंगाजी के बारे में क्या जानें। इनके

१- नीच निचाई नहिं तजइ सज्जनहू के संग।
तुलसी चंदन बिटप बसि बिनु बिष भए न भुअंग।।
दोहावली-पृष्ठ-११६

२- नीच निरावहिं निरस तरु तुलसी सींचहिं ऊख।
पोषत पयद समान सब बिष पियूष के रूख।।
दोहावली-पृष्ठ-१३१ २२९

टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

कहने से क्या गंगाजी की महिमा में कमी आ जाती है ? कमी नहीं । [१]

दुष्ट मनुष्य तो जिह्वा से सिर्फ बकते रहते हैं । एक मनुष्य अच्छा है या बुरा , यह बात समझे बिना वह उसे अच्छा आदमी कहकर उसकी स्तुति करते हैं । शायद वह अच्छा आदमी नहीं होता । उसी प्रकार अच्छे आदमी को कभी वह बुरा कहकर उसकी निन्दा करने लगता है । उसकी निन्दा करना कितनी हेय बात है । गदहे के समान उसे अच्छे-बुरे की पहचान नहीं रहती । उनकी बातें सुनकर हमें हर्षित नहीं होना चाहिए , वैसे दु:खी भी नहीं होना चाहिए । उनकी बातों का कोई मूल्य नहीं रहता । [२]

कुटिल व्यक्ति तो कुटिलता का साथ कभी नहीं छोड़ता । आदमी अपने अन्तिम समय तक जन्म के स्वभाव की उपेक्षा नहीं करता । यदि वह अपने स्वभाव के विरुद्ध कुछ करता है तो समझ लेना चाहिए कि कुछ न कुछ कारण तो अवश्य होता है । सांप तो बिल में प्रवेश करने केलिए टेढ़ी चाल छोड़कर सीधी

१- हंस सीस बिलसत बिमल तुलसी तरल तरंग ।
   स्वान सरावग के कहें लघुता लहै न गंग ।।
      दोहावली-पृष्ठ-१३१
अ- तुलसी देवल देव को लागे लाख करोरि ।
   काक अभागें हगि भर्यो महिमा भई कि थोरि ।।
      दोहावली-पृष्ठ-१३१
२- भलो कहहिं बिनु जानेहुं बिनु जानें अपबाद ।
   ते नर बादुर जानि जियं करिय न हरष बिषाद ।
      दोहावली-पृष्ठ-१३२

टीकाकार-हनुमानप्रसाद पोद्दार

चाल ढूंढता है । उसकी सहज चाल टेढ़ी है । केवल बिल में घुसने केलिए वह सीधे मार्ग की खोज करता है । सहज स्वभाव की उपेक्षा कोई नहीं करता । [१]

नीचों पर विश्वास नहीं किया जा सकता । मित्रों के बीच में विश्वास की अत्यधिक ज़रूरत है । मीठी वाणी बोलकर उन्हें मोह जाल में फंसाकर अन्त में उनकी हत्या करना दु:ख की बात है । मित्रों के बीच में विश्वास-घात नहीं होना चाहिए । कुछ लोगों को अपनी इस प्रकार की कुप्रवृत्ति पर शरम आ जाती है । लेकिन कुछ लोगों को लज्जा भी नहीं आ ती । उन पर भरोसा नहीं रखा जा सकता । [२]

सज्जन- दुर्जन में भेद :

अच्छे आदमी भलाई रूपी आभूषण से शोभित होते हैं । नीच का अभूषण नीचता है । उससे वह शोभित होता है । सज्जन की तुलना अमृत से और दुर्जन की तुलना विष से करके कवि कहते हैं कि अमरत्व प्रदान करने की शक्ति अमृत में रहती है । इसलिए सब लोग उसकी प्रशंसा करते रहते हैं । विष में सभी को मारने की शक्ति रहती है । मारने की शक्ति रहने के कारण विष का भी अपना महत्व है । [३]

१- मिलै जो सरलहि सरल ह्वै कुटिल न सहज बिहाय ।
सो सहेतु ज्यों बक्र गति ब्याल न बिलहिं समाइ ।।
दोहावली-पृष्ठ-११५

२- मार खोज लै सौंह करि करि मत लाज न त्रास ।
मुए नीच ते मीच बिनु जे इनमें बिस्वास ।।
दोहावली-पृष्ठ-१३६

३- भलो भलाइहि पै लहइ लहइ निचाइहि नीचु ।
सुधा सराहिअ अमरतां गरल सराहिअ मीचु ।।
दोहावली-पृष्ठ-११७

सज्जन और दुर्जन की स्वभावगत विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है । सज्जन तो सत्य के पक्षपाती हैं । वे सत्य को अत्यधिक गरिमामय दृष्टि से देखते हैं । लेकिन असत्य उन्हें विष के समान मालूम है । इसके विपरीत दुर्जन केलिए सत्य विष के समान है । [1]

संत लोगों की संगति में रहने से मनुष्य सांसारिक बन्धनों से एकदम मुक्त हो जाते हैं । वे मोक्ष पा सकते हैं । लेकिन कुसंग से मनुष्य सांसारिक बन्धनों में पड जाते हैं । उन्हें मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती । वे सांसारिक मोह जाल में फंसकर घूमते फिरते रहते हैं । उससे उनका उद्धार असंभव है । सारे सद्ग्रन्थों में सत्संग एवं असत्संग का उल्लेख मिलता है । [2]

सज्जनों और दुर्जनों की परीक्षा भिन्न भिन्न प्रकार से की जाती है । संतों को पहचानना आसान कार्य है । उनमें कुछ कपट तो नहीं होता । उनका स्वभाव सरल और सीधा होता है । जो बात मन में रहती है वही बाहर प्रकट होती है । लेकिन दुर्जनों में कापट्य रहता है । इसी कारण उनका परीक्षण निरीक्षण कुछ दिन करना पडता है । तभी उनका सच्चा स्वरूप व्यक्त हो जाता है । देखते ही उन्हें पहचानना असंभव है । उदाहरण-स्वरूप तुलसी कहते

१- मिथ्या माहुर सज्जनहि खलहि गरल सम सांच ।
तुलसी छुवन पारद ज्यों पारद पावक आंच ।
दोहावली-पृष्ठ-११७

२- संत संग अपबर्ग कर कामी भव कट पंथ ।
कहहिं संत कवि कोबिद श्रुति पुरान सद्ग्रन्थ ।
दोहावली-पृष्ठ-११७

टीकाकार- हनुमान प्रसाद पोद्दार

है कि वडवानल समुद्र में बहुत समय तक रहता है । फिर उसके जल को सोख लेता है । लेकिन चन्द्रमा आसमान पर प्रफुल्लित रहता है तो समुद्र के हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहता यही सज्जन और दुर्जन की परीक्षा करने के भिन्न भिन्न प्रकार है । [१]

नीच तो निरादर से सुखी होते हैं । दोनों में यही प्रमुख अन्तर है । केले और बेर काटे जाने पर भलाई होती है अर्थात् फल देते है । लेकिन कटहल और आम केवल सींचने से फल देते हैं । [२]

कुसंगति का बुरा परिणाम । कुसंगति का परिणाम तो बुरा होता है । दुर्जनों का प्रभाव यदि अच्छे लोगों पर पड़ता है तो वे भी उससे प्रभावित होकर बुरे हो जाते हैं । भगवान के कल्याणकारी नाम दुष्टों को रख दिये जाने पर उस नाम का महत्व घट जाता है । कुसंगति से नाम का महत्व कम हो जाता है । गोस्वामीजी का यही मत है । [३]

सज्जन बनने केलिए दुष्टों की संगति में रहना उचित नहीं । कुसंगति छोड़ देना है । उन्हीं लोगों की संगति में रहकर सज्जन बनना असंभव है । पवित्र विष्णु पद तीर्थ है ` गया ` । उसका नाम ` गया ` पड़ने का कारण मगध के पास बसने से है । [४]

१- बिकचि परखिए सुजन जन राखि परखिए मंद ।
बडवानल सोषत उदधि हरष बढ़ावत चंद ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२८

२- नीच निरादरहीं सुखद आदर सुखद बिसाल ।
कदरी बदरी बिटप गति पेखहु पनस रसाल ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२२

३- तुलसी किएं कुसंग थिति होहिं दाहिने बाम।
कहि सुनि सकुचिअ सूम खल गत हरि संकर नाम।। } दोहावली-पृष्ठ-१२४

४- बसि कुसंग चह सुजनता ताकी आस निरास ।
तीरथहु को नाम भो गया मगह के पास ।। } दोहावली-पृष्ठ-१२४

दुष्ट-निन्दा :

दुर्जनों का उपहार करने में प्राय: सभी लोग विमुख रहते हैं। चाहे उपकार करें तो भी उसका बुरा परिणाम निकलता है। इसी कारण कोई भी उसके लिए तैयार नहीं होते। उदाहरण-स्वरूप गोस्वामीजी सत्योपाख्यात ग्रन्थ में दी गयी मेंढ़क, बंदर, वणिक और बगुला की कथाओं पर नज़र डालते हैं। १

दुष्ट लोग कपटी होते हैं। ऊपर से वे बहुत अच्छे दिखायी देते हैं। लेकिन उनका असली रूप तो छिपा हुआ है। वह रूप बाहर व्यक्त नहीं होता। वह सुन्दर वाणी में बातचीत करता है। लेकिन वाणी की सुन्दरता केवल बाह्य रूप की होती है। आन्तरिक रूप से उसमें कापट्य भरा हुआ है। उनकी मीठी वाणी पर मोहित नहीं होना है। अच्छी तरह सोच - समझकर उसका मतलब निकालना चाहिए। उदाहरण स्वरूप मंथरा और कैकेयी को ले सकते हैं। मंथरा में छल भरा हुआ है। कपटी मंथरा की प्रेरणा से कैकेयी ने राजा से दो वर मांगे। फलस्वरूप राम के राज्याभिषेक में बाधा उपस्थित हुई। कपटी लोगों की बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता। २

१- सरल बक्र गति पंच ग्रह चपरि न चितवत काहु।
तुलसी सूधे सूर ससि समय बिडंबित राहु ।।
दोहावली-पृष्ठ-१३५

२- तुलसी खल बानी मधुर सुनि समुझिअ हियं हेरि।
राम राज बाधक भई मूढ़ मंथरा चेरि ।।
दोहावली-पृष्ठ-१३७
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

दुष्ट बाहर से अच्छे दीखते हैं। लेकिन उनमें सज्जनता का अंश तक नहीं रहता। गोस्वामीजी जोंक के बारे में कहते हैं जोंक टेढ़ी चाल चलनेवाला है तो भी वह नीच प्राणी नहीं है। कारण यह है - वह मनुष्य के शरीर से केवल हानिकारक रक्त को चूसता है। परन्तु दुष्ट तो दूसरों के हित की हानि कर डालते हैं। [१]

दुष्टों के वचन बाण के समान है। तीर के समान उनके वचन तो तीखे होते हैं। वे जिसके ऊपर पडते है उसे अत्यधिक आघात पहुंचता है। एक आदमी सौ कोस तक भयंकर वर्षा में स्थित रहने पर भी जल-बिन्दुओं से बिना भीगे बच सकता है लेकिन दुष्ट आदमी के वचन-बाण से घायल हुए बिना नहीं रह सकता। उससे मुक्त होना असंभव है। [२]

संपति की चाह नहीं करना :

जिस प्रकार छाया हमारे शरीर का अनुगमन करती है वैसे संपत्ति भी हमारा साथ देती है। लेकिन संपत्ति बटोरने के विचार में न पडकर उस पर ध्यान दिए बिना रहने से वह स्वयं आ जाती है। उसके लिए विशेष प्रयत्न नहीं करना पडता। लेकिन भारी संपत्ति पाने की इच्छा में पडे व्यक्ति केलिए सपने में भी पैसा मिलना असंभव हो जाता है। सन्तोषपूर्वक राम

१- जोंक सूधि मन कुटिल गति खल बिपरीत बिचारु।
अनहित सोनित सोष सो सो हित सोषन हारु।
दोहावली-पृष्ठ-१३७

२- बरदर बरसत कोस सत बचैं जो बूंद बराइ।
तुलसी तेउ खल बचन सर हए गए न पराइ।।
दोहावली-पृष्ठ-१३८
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

के भजन में मग्न होने से जीवन को सुखी बनाया जा सकता है।[१]

धन की बढ़ती के साथ साथ घमण्ड भी बढ़ जाता है। धन और ऐश्वर्य के बढ़ जाने पर आदमी मदोन्मत्त हो जाता है। अत्यधिक मात्रा में धन आ जाने पर वह उन्मत्त होकर अपने को और अपने संबन्धियों को भूल जाता है। वह वक्र स्वभाववाला होता है। प्रभुता से आदमी बहरा हो जाता है। वह नारी के काम-पाश में अपने को बंधवा देता है। भोग-लालसा की तृप्ति केलिए नारी का आश्रय ग्रहण करता है।[२]

स्वार्थ की हेयता :

अच्छाई बुराई का मानदण्ड स्वार्थ है। स्वार्थ के रहने पर ही वस्तुओं की पवित्रता एवं हितकारिता समझ में आ जाती है। यही कवि का मत है। लेकिन चाह के अभाव में वे ही चीज़ें अपवित्र दिखायी पड़ेंगी। मुंह में रहने पर दांत का अत्यधिक महत्व व मूल्य होता है। लेकिन उन दांतों के टूटकर गिर पड़ने पर उनका छूना भी बहुत दुःख की बात होती है। वह अस्पृश्य वस्तु हो जाती है।[३]

१- दिएं पीठि पाछें लगै सनमुख होत पराइ।
तुलसी संपति छांह ज्यों लखि दिन बैठि गंवाइ।।

दोहावली-पृष्ठ-८६

२- श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचन के नैन सर को अस लाग न जाहि।।

दोहावली-पृष्ठ-६१

३- हित पुनीत सब स्वारथहिं अरि असुद्ध बिनु चाड।
निज मुख मानिक सम दसन भूमि परे ते हाड।।

दोहावली-पृष्ठ-११३

गोस्वामीजी के मत में सभी लोग स्वार्थी हैं। अपने को कौन बुरा मानता है। सब लोग अपनी भलाई केलिए परिश्रम करना चाहते हैं। ऐसे लोग बहुत विरले होते हैं जो अपने सुहृदों की भलाई चाहते हैं। लेकिन उन लोगों को देखना भी मुश्किल होता है जो सभी लोगों की भलाई केलिए प्रयत्नशील हैं। वे ही सराहने योग्य हैं। साधु लोग भी उसे चाहते हैं, उसकी प्रशंसा करते हैं। [१]

अपना आचरण सभी पसन्द करते हैं। अपने आचरण पर सब लोग मुग्ध होते हैं। इसमें सन्देह नहीं। चाहे वह आचरण बुरा भी हो, तो भी कोई बात नहीं। वे उसकी प्रशंसा करते ही रहते हैं। लहसुन खानेवाला व्यक्ति क्या उसकी दुर्गन्ध महसूस करता है, कभी नहीं। कभी वह इसकी बदबू के बारे में सोचता तक नहीं। [२]

ठीक मार्ग से आचरण करना चाहिए। विपरीत गति से आचरण करने पर अमंगल ही होता है। उदाहरण स्वरूप कहते है कि अगर राम और राजा शब्द ध्यानपूर्वक न कहकर उल्टा कहें तो क्या हो जाता है, जारा-मरा हो जाता है। इससे अकल्याण ही होता है। लेकिन ध्यान पूर्वक जपने पर राजा राम हो जाता है, जो कल्याण कारी है। जपने की रीति में भिन्नता

१- आपु आपु कहं सब भलो अपने कहं कोइ कोइ।
तुलसी सब कहां जो भलो सुजन सराहिअ सोइ।
दोहावली-पृष्ठ-१२३

२- तुलसी अपनो आचरन भलो न लागत कासु।
तेहि न बसात जो खात नित लहसुनहू को बासु।।
दोहावली-पृष्ठ-१२२
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

आने पर फल में भी भिन्नता आ जाती है । [१]

अभिमान ही बन्धन का मूल है :- अपने को बडा और अपने आचारों को श्रेष्ठ माननेवाले लोग व्यर्थ ही अपने बडप्पन पर अभिमान करते हैं । ऐसे मूर्ख लोग तोते, रेशम के कीड़े ,बंदर के समान स्वयं अपना नाश कर लेते हैं। तोते,कीड़े, बंदर आदि स्वयं बन्धन में पड जाते हैं । कुछ भोज्य चीज़ों का लालच दिखाकर तोते को पकडा जाता है । रेशम के कीड़े भी वैसे स्वयं जाल बनाकर उसके अन्दर वन्धित होकर मर जाते हैं । बंदर की भी वैसी स्थिति है । [२]

अभिमान वर्ज्य है । अभिमान से आदमी अपने को मुक्त करना है अर्थात् मिथ्या अभिमान में पडना अच्छा नहीं । उसे मूल के अनुसार बढ़ना चाहिए । दूसरों को दु:ख न पहुंचाकर सुख पहुंचाना है । उपर्युक्त गुणोंवाला पुरुष ही श्रेष्ठ कहला सकता है । बड़ का वृक्ष तो मूल के अनुसार बढ़नेवाला है । फूलना यहां 'घमण्ड' कहा गया है । यह वृक्ष फूलता नहीं । इसी कारण अभिमान से रहित कहा गया है । वह वृक्ष सभी लोगों को सुख पहुंचाने में समर्थ होता है । मनुष्य को यों श्रेष्ठ बनना है । [३]

१- करु विचार चलु सुपथ भल आदि मध्य परिनाम ।
   उलटि जायें 'जारा मरा' सूधें राजा राम ।।
      दोहावली-पृष्ठ-१२२ २२५

२- हम हमार आचार बड़ भूरि भार धरि सीस ।
   हठि सठ परबस परत जिमि कीर कोस कृमि कीस ।
      दोहावली-पृष्ठ-८३

३- तुलसी भल बरतरु बढ़त निज मूलहि अनुकूल ।
   सबहि भांति सब कहं सुखद दलनि फलनि बिनु फूल ।।
      दोहावली-पृष्ठ-१८९

ऊंचे पद की प्राप्ति होने पर भी जो अभिमान से रहित जीता है वही श्रेष्ठ पुरुष है, वही पूजनीय है। धन से वह अनुगृहीत रहता है। सभी गुणों का खजाना होता है वह पुरुष। वह धार्मिक बातों पर आस्था रखनेवाला होता है। उसकी सेवा करने केलिए अनेक सेवक भी होते हैं। वह बलिष्ठ, सुयोग्य पुरुष चाहे राजा भी हो तो भी वह घमण्डी नहीं होता इस प्रकार का व्यक्ति तीनों लोकों को प्रकाशित करनेवाला होता है। वह त्रिभुवन का दीप है।[१]

कपटी लोगों की प्रकृति :

कपटी को पहचानना बड़ा कठिन है। बाहरी वेष-विधान और वचन उस व्यक्ति के मत को समझने का मापदण्ड नहीं है। कोई व्यक्ति सुन्दर ढंग से अपनी आकृति संवारता है या अत्यधिक सुन्दर वेष पहने हुए है और वह मीठी बोली भी बोलता है तो भी इसकी सुन्दर वेष-विधान देखकर यह नहीं समझना चाहिए कि उसका मन भी सुन्दर है। शायद उसका मन मलिन हो दुश्चिन्ताओं से भरा हुआ हो, शूर्पनखा, मारीच, पूतना आदि को उदाहरणार्थ ले सकते हैं। शूर्पनखा, अपनी मोहिनी रूप छटा पर सभी को लुभा देती थी। वह आन्तरिक रूप से मलिन नारी थी। मारीच ने इसी प्रकार रूप-वैभव से राम को मुग्ध किया। पूतना ने सुन्दरी होकर भगवान कृष्ण को लुभा दिया।

१- भवन सगुन सधरम सगन सबल सुसाईं महीप।
तुलसी जे अभिमान बिनु ते त्रिभुवन के दीप।
दोहावली-पृष्ठ-१८२
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

इससे स्पष्ट है वेष भूषा और मीठी वाणी से दंभियों को पहचाना नहीं जा सकता । [१]

कपटी लोगों से दूर रहने में ही बुद्धिमत्ता है । कोई व्यक्ति अत्यधिक प्रेम भाव से मिलता है, मीठी वाणी बोलता है, बाह्य रूप से वह अच्छा लगता है । यदि उसके मन में कपट भरा रहता है तो क्या कहना ? उससे दोस्ती जोडना अच्छा नहीं । गोस्वामीजी उन नीच व्यक्तियों की छाया तक छूना पसन्द नहीं करते । उससे निकट संबन्ध नहीं रखना । [२]

कपटी दानी की दुर्गति का चित्रण कवि ने किया है । लोग मछली को जाल में फंसाने केलिए पहले कुछ भोज्य पदार्थ जल में डालते हैं । मछली खाने केलिए ये लोग दान देते हैं । लेकिन इस दान का कोई महत्व नहीं होता । मछली खाने का पदार्थ पाकर अत्यधिक सन्तुष्ट होता है । वह यह नहीं जानता कि मेरी जान का अन्त होनेवाला है । अधिक समय तक वह जीवित नहीं रहता इस प्रकार का दान देनेवाला कपटी है, नरक का द्वार

१- बचन बेष क्यों जानिए मन मलीन नर नारि ।
सूपनखा मृग पूतना दस मुख प्रमुख विचारि ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४०

२- हंसनि मिलनि बोलनि मधुर कटु करतब मन मांह ।
छुअत जो सकुचइ सुमति सो तुलसी तिन्ह की छांह ।।
दोहावलीतपृष्ठ-१४०

(अ) बचन बिचार अचार तन मन करतब छल छूति ।
तुलसी क्यों सुख पाइये अंतरजामिहि धूति ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४१
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

उसके लिए खुला रहता है। बुरा कर्म करने पर उसका बुरा परिणाम निकलता है।[१]

विवेक की आवश्यकता :

विवेक की आवश्यकता पर गोस्वामीजी ज़ोर देते है। ब्रह्माजी ने संसार में केवल जड़ वस्तुओं की सृष्टि नहीं की है, उसके साथ-साथ चेतन वस्तुओं को भी रख दिया है। वैसे संसार में केवल गुण ही गुण सर्वत्र विद्यमान नहीं, दोष भी द्रष्टव्य है। वैसे गुण दोष मिश्रित संसार की रचना विधाता ने की है। संत रूपी हंस गुण रूपी दूध को स्वीकार कर दोष रूपी जल को छोड देते है। केवल गुणों को स्वीकार करने का विवेक होना आवश्यक है।[२]

कल्पवृक्ष का फल पाने केलिए उसी वृक्ष को सींचकर उसका पालन करना है। तभी उससे फल की प्राप्ति होती है। दूसरे वृक्षों को सींचने से क्या फायदा है। उससे अपनी इच्छा के अनुसार फल की प्राप्ति नहीं होती। इसी कारण अच्छी तरह सोच समझकर कार्य करना है। तब मनोरथ की पूर्ति हो जाती है। नहीं तो सुख दूर की वस्तु मात्र रह जाता है। विवेक से काम न लेने का यही दुष्परिणाम है।[३]

१- तुलसी दान जो देत हैं जल में हाथ उठाइ।
   प्रतिग्राही जीवै नहीं दाता नरकै जाइ ।।
   दोहावली-पृष्ठ-१८३

२- जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
   संत हंस गहहिं गुन पय परिहरि बारि बिकार।
   दोहावली-पृष्ठ-१२६

३- पात पात को सींचिबो न करु सरग तरु हेत।
   कुटिल कटुक फर फरैगो तुलसी करत अचेत ।।
   दोहावली-पृष्ठ-१५५

संसार में विवेकी पुरुष ही उत्तम हैं। वे ही समर्थ हैं, वे ही साधु हैं, वे ही चतुर हैं। उनकी चतुरता इसी बात में है कि वे आवश्यकता से अधिक खर्च नहीं करते। आय के अनुसार व्यय करते हैं। विवेकहीन व्यक्ति तो कुछ भी देखे बिना आँखें मूंदकर सब कुछ कर डालता है। विवेकवान मनुष्य कुछ कार्य करने के पहले अच्छी तरह सोचते हैं। [१]

अविवेक दु:ख का कारण है :

जिसमें विवेक शक्ति की कमी रहती है वह क्या सुखी रह सकता है? मनुष्य में अच्छे बुरे को पहचानने की बुद्धि रहती है। उसके अभाव में तो उसमें देश,काल ,कर्म,वचन आदि किसी बात का ज्ञान नहीं रहता। वह जानवर का सा जीवन व्यतीत करता है। मनुष्य के समान जानवर में विवेक शक्ति नहीं होती। कल्पवृक्ष के पास रहने पर भी वह दरिद्रता का जीवन बिताता है। वह यह नहीं जानता कि यह कल्पवृक्ष हमारे सारे अभीष्टों की पूर्ति करता है, इससे दरिद्रता दूर होती है। वह गंगा के तीर बसने पर भी पापी ही बना रहता है। समय, स्थान आदि का ध्यान रखकर किस प्रकार का कर्म करना है इन सभी का विचार न रखने के कारण उसे दु:ख भोगना पड़ता है। [२]

१- तुलसी सो समरथ सुमति सुकृति साधु सयान।
जो बिचारि व्यवहारइ जग खरच लाभ अनुमान।
दोहावली-पृष्ठ-१६१

२- देस काल करता करम बचन बिचार बिहीन।
ते सुरतरु तर दारिदी सुरसरि तीर मलीन।
दोहावली-पृष्ठ-१४२

राज शासन :

बुरी चाल चलनेवाले राजा का नाश होता है । राजशासन तो सुचारू ढंग से चलाना चाहिए । उसमें अनीति न आने दें । राजा को ठीक रास्ते पर चलकर दूसरों केलिए याने अपनी प्रजा केलिए एक नमूना बनना है । वह बुरा काम करनेवाला नहीं हो सकता । मन में अच्छे विचारों को रखकर अच्छा काम करना चाहिए । [१]

राजा -प्रजा का संबन्ध :

राजा को प्रजा का हितकारी होना चाहिए । उनके हित के विपरीत कुछ भी नहीं करना चाहिए । प्रजा केलिए राजा जीते हैं । उनका सुख ही राजा का सुख है । उनके दु:ख में राजा को भी शामिल होना चाहिए । सूर्य की प्रखर किरणों की तीक्ष्णता से जल सूख जाता है । वह यों जल के सूख जाने की बात कोई भी नहीं जानता । लेकिन जब बादल उमड घुमड़कर पीयूषवर्षिणी जल-धारा बहाता है तब सभी लोग आनन्द से पुलकति हो उठते हैं । वैसे राजा को भी प्रजा को किसी भी प्रकार की पीडा या दु:ख न पहुंचाकर उनसे कर ग्रहण करना है । फिर वह धन प्रजा के हित साधन में खर्च करना है । ऐसे राजा प्रजा की प्रशंसा का पात्र होते हैं । उत्तम राजा को ऐसा ही होना चाहिए ।[२]

१- राज करत बिनु काजहीं करहिं कुचालि कुसाज ।) दोहावली-पृष्ठ-१४३
तुलसी ते दसकंध ज्यों जइहैं सहित समाज ।।)

अ- राज करत बिनु काजहीं ठटहिं जे कूर कुठार ।) दोहावली-पृष्ठ-१४३
तुलसी ते कुरुराज ज्यों जइहैं बारह बाट ।।)

२-बरषत हरषत लोग सब करषत लखै न कोइ ।) दोहावली-पृष्ठ-१७४
तुलसी प्रजा सुभाग ते भूप भानु सो होइ ।)

राजाओं के स्वभाव का विश्लेषण किया गया है । उत्तम, मध्यम और अधम ऐसे मनुष्य तीन प्रकार के होते हैं । वृक्षों से पके हुए फलों को लेनेवाला व्यक्ति ही उत्तम है, अधपके फलों को लेनेवाला मध्यम है, वृक्ष के पत्तों तक का नाश करनेवाला नीच कहा गया है । राजाओं में भी इन तीन प्रकार के व्यक्तियों को देख सकते हैं । उत्तम राजा, प्रजा की हालत को अच्छी तरह समझकर अनुकूल समय में ही कर वसूल करते हैं । अधम तो प्रजा की अवस्था पर दृष्टि डालते नहीं । नीचे तो अकाल में भी प्रजा का शोषण करता है । वह अत्यधिक नीच होता है । [१]

बुरे राज्य में सत्कर्मों का कोई मूल्य नहीं होता । वैसे अच्छे अच्छे धर्मों का भी कोई स्थान नहीं रहता और सुख संपत्ति का भी । अगर बवंडर में एक पतंग गिर पड़ता है तो उसकी अवस्था के बारे में ज़रा सोचो । अत्यधिक कष्ट सहने के बाद उसकी मृत्यु हो जाती है । शोक के बीच विवेक पड़ जाता है तो उसका भी नाश हो जाता है । [२]

दुष्ट राजा संसार में बार बार जन्म लेते हैं । खजूर वृक्ष स्वयं डालियों पर कांटे बनाता है । फिर उन कांटों से उस वृक्ष का नाश हो

१- पाके पकए बिटप दल उत्तम मध्यम नीच ।
फल नर लहैं नरेस त्यों करि बिचार मन बीच ।।
दोहावली-पृष्ठ-१७५

२- चढ़े ब धूरें चंग ज्यों ग्यान ज्यों सोक समाज ।
करम धरम सुख संपदा त्यों जानिबे कुराज ।।
दोहावली-पृष्ठ-१७६
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

जाता है। अपना कर्म ही अपने नाश का कारण बन जाता है। यदि राजा दुष्ट हो तो उसकी प्रवृत्ति भी बुरी होती है। वह सभी प्रकार से प्रजा का नाश कर देता है। वह अनीति के रास्ते पर चलता है। उसके कुटिल कर्मों के फलस्वरूप उसे संसार में बार बार जन्म लेकर बार बार मरना पड़ता है।[१]

किस राजा का राज्य अचल रहता है। राम के प्रति उसे असीम प्रीति होनी चाहिए। उसे नीति के रास्ते पर चलना है। नीति के मार्ग से अणुमात्र भी चंचल न होना है। उसका धार्मिक होना भी आवश्यक है। उपर्युक्त गुणोंवाला राजा प्रभुता का साथी रहता है।[२]

गुणी राजा को ऐश्वर्य कभी नहीं छोड़ता। जो राजा अच्छी तरह प्रजा का पालन या रक्षण करता है, खूब मात्रा में दान देता है, अगर वह मानसिक गुणों से भी अनुगृहीत हो अर्थात् उसे प्रजा के प्रति अपार वात्सल्य और उदारता हो, उसकी वाणी भी बाह्य और आन्तरिक दोनों रूपों से मधुर हो, अर्थात् वाणी में मधुरता भरी हुई हो, सत्यवाची हो, सब लोगों की हितचिन्ता रखनेवाले हो, उपर्युक्त गुणोंवाला राजा ऐश्वर्य की ऊंची चोटी पर विराजमान होते है। विजय सदा उसके पक्ष में रहता है।[३]

१- कंटक करि करि परत गिरि साखा सहस खजूरि।
मरहिं कुनृप करि करि कुनय सों कुचालि भवभूरि।
दोहावली-पृष्ठ-१७६

२- प्रीति राम पद नीति रति धरम प्रतीति सुभायं।
प्रभु हि न प्रभुता परिहरै कबहुं बचन मन कायं।।
दोहावली-पृष्ठ-१७७

३- करके कर मन के मनहिं बचन बचन गुन जानि।
भूपहि भूलि न परिहरै बिजय बिभूति सयानि।।
दोहावली-पृष्ठ-१७७

सुयोग्य मंत्री की देख-रेख में राज्य छोड़ दिया जाय तो राजा विश्राम पा सकते हैं। मंत्री को प्रजा की रक्षा करने में समर्थ होना चाहिए। उनकी आवश्यकताओं के प्रति हमेशा जागरूक रहना है। धन, धार्मिकता, और सेना संबन्धी बातों पर भी उसे दृष्टि डालना है। उपर्युक्त कार्यों को संभालने में अगर वह समर्थ है तो उसके हाथों में राज्य सुरक्षित रहता है। मंत्री निष्क्रिय और अयोग्य हो तो राजा को सुख से वंचित रह जाना पड़ता है। [१]

गोस्वामीजी राजा को प्रजा का सर्वस्व मानते हैं। उन्होंने राजा की उपमा पेट से की है। दांत का काम भोजन को चूर करना है, मंत्री अन्य कर्मचारियों की सहायता से सभी कार्यों को संभालता है। जीभ तो स्वाद के लिए होती है। पेट का काम रस बनाना, फिर शरीर के सभी अंगों तक उसे पहुंचाकर उन्हें पुष्ट करना है। राजा का काम अपनी प्रजा की भलाई केलिए काम करना है। उनका संपूर्ण उत्तरदायित्व राजा पर निर्भर रहता है। राजा के हाथ-पांव की सेना सदा राजा की रक्षा करती रहती है। जिस प्रकार बालक का पालन-पोषण माता-पिता करते हैं वैसे अपनी जनता का पालन पोषण राजा करते हैं। [२]

१- रैयत राज समाज घर तन धन धरम सुबाहु।
  सांत सुसचिवन सौंपि सुख बिलसहि नित नरनाहु।।
    दोहावली-पृष्ठ-१७८

२- रसना मंत्री दसन जन तोष पोष निज काम।
  प्रभु कर सेन पदादि का बालक राज समाज।।
    दोहावली-पृष्ठ-१८०
    टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

कलह वर्ज्य है :

कलह का परिणाम अच्छा नहीं होता, बुरा है। छोटा कलह तो भयंकर झगडे के रूप में परिणत हो जाता है। इसी कारण कलह को खेल की बात मत समझो। झोंपडी में जो झगड़ा पैदा होता है वह बडा बनकर राजमहल तक पहुंचता है। [१]

लड़ना सर्वथा त्याज्य है। समझौता कर लेना लडने से कितना श्रेष्ठ है। गोस्वामीजी हार को जीत से अच्छा मानते हैं। समझौता कर लेना हारने के समान है। दूसरों को ठगना तो कितने दुःख की बात है। ठगा जाना उससे कहीं सुन्दर है। [२]

यदि कोई तुम पर चोट करे तो बदले में उस पर चोट करने का प्रयत्न न करो। हम साथ साथ न लड़ें ~~ऐसा करें~~ तो झगड़ा अत्यधिक बढ़ जाता है। कोई हम पर हमला करने आये तो उसे रोकने का प्रयत्न करना ही उचित है। भगावन राम हमारी रक्षा करने केलिए सदैव साथ रहते हैं। इसी कारण चोट करनेवालों से हमें बदला लेने की ज़रूरत नहीं। [३]

१- कलह न जानब छोट करि कलह कठिन परिनाम।
लगति अगिनि लघु नीच गृह जरत अधिक धन धाम।
दोहावली-पृष्ठ-१४६

२- जूझे ते भल बूझिबो भली जीति तें हार।
डहके तें डहकाइबो भलो जो करिअ बिचार।।
दोहावली-पृष्ठ-१४८

३- मार्ग भल बौडेहुं भलो भलो न घालें घाउ।
तुलसी सब के सीस पर रखवारो रघुराउ।
दोवली-पृष्ठ-१४५

क्रोध की अपेक्षा पवित्र और सुन्दर प्रेम भरी वाणी से दूसरों को वश में करना अधिक आसान है। वही अच्छा मार्ग है। हृदय को चोट पहुंचाने वाले वचन न कहना उचित है। सुननेवाले पर अत्यधिक मानसिक आघात पडता है। लेकिन उनका उचित पानोपचार करना है, उनकी सेवा करने में संकोच मत करो। ऐसे उनकी सहायत कर उन्हें वश में करना उचित मार्ग है। वश में करने केलिए यही मार्ग अधिक उचित है। क्रोध के माध्यम से कुछ भी नहीं चलता है। [१]

मीठी वाणी बोलने पर मन की अशान्ति नष्ट हो जाती है। सारा वैर एकदम मिट जाता है। मधुर वाणी सुनने पर मन की सारी चिन्तायें कुछ समय तक दूर हो जाती हैं। दूसरों से हित की बातें ही कहनी चाहिए। [२]

क्रोध के समय चुपचाप बैठना ही उचित है। क्यों कि उस अवस्था में हम जो कुछ कहते हैं उसका ज्ञान भी हमें नहीं रहता। ज़बान पर जो बात आती है वह कह डालते हैं। बाद में उसके बारे में सोचने लगते हैं। तलवार की चोट ज़बान की चोट के समान कठोर नहीं। तलवार खींचने से उत्पन्न होनेवाला घाव मिट जाता है। लेकिन मुंह से जो कटु वचन निकलते हैं उनका घाव कभी मिटनेवाला नहीं। बाहर कठोर वाणी निकल गयी तो फिर उसे वापस नहीं ले सकते। [३]

१- बोल न मोटे मारिए मोटी रोटी मारू।
जीति साहस सम हारिबो जीतें हारि निहारू।
दोहावली-पृष्ठ-१४७

२- बैर मूल हर हित प्रेम मूल उपकार।
दो हा सुभ संदोह सो तुलसी किएं बिचार।।
दोहावली-पृष्ठ-१४८

३- तीष्ण न रसना बोलिए अस खोलिअ तरवारि।
सुनत मधुर परिनाम हित बोलिअ बचन बिचारि।।
दोहावली-पृष्ठ-१४६

मधुर वचन बोलना, सुनना दोनों अच्छे हैं तो कठोर वचन बोलना सुनना दोनों बुरे हैं। मधुर वचन और कठोर वचन इन दोनों के कहने से भाग्य और दुर्भाग्य आ जाता है। उदाहरणार्थ कोयल और कौवे को ले सकते हैं। कोयल के मधुर कण्ठ से संगीत का निर्झर वह निकलता है। वह ध्वनि सुनने पर किसके मन में आनन्द नहीं होता। यह कोयल के भाग्य के कारण मालूम पड़ता है। लेकिन कौवे का 'कांव' शब्द कितना कठोर होता है। जब वह बार बार यह ध्वनि सुनाता है तो हम अवश्य से भगाते हैं। यह कौवे के दुर्भाग्य से होता है। [१]

गुरु से आदर का व्यवहार। गुरुजनों से सदा आदर का व्यवहार करना चाहिए। उनसे रूठना अच्छा नहीं। माता, पिता, आचार्य इन गुरुजनों की चरण पूजा करना हमारा कर्तव्य समझना चाहिए। अत्यधिक आदर से अच्छी तरह सोच विचार करके उनसे बर्ताव करना है। हमेशा उनके नीचे रहना ही अच्छा है। यदि जीतने में हार होती है तो जीतने से अच्छा हारना है। गुरु जनों की सेवा-शुश्रूषा करने पर ही सद्गति मिलती है। २

किसका जीवन सफल रहता है। इसका स्पष्ट विवेचन गोस्वामीजी करते है। गुरु जनों की आज्ञाओं का पालन करना हमारे जीवन का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए। उन आज्ञाओं पर कोई महत्त्व न देकर एकदम उनकी उपेक्षा करना महान पाप है। इन गुरुजनों की आज्ञाओं पर

१- मधुर बचन कटु बोलिबो बिनु श्रम भाग अभाग।
कुहू कुहू कलकंठ रव का का कररत काग ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४६

२- जो परि पायं मनाइए तासों रूठि बिचारि।
तुलसी तहां न जीतिए जहं, तीबेहुं हारि ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४७

कोई टीका-टिप्पणी न करके उनको यों ही ग्रहण करना है। [१]

विश्वास का महत्व :

विश्वास की अत्यधिक महिमा मानी गयी है। गठबन्धन से भी इसी प्रधानता दी गयी है। सभी कार्यों की पूर्ति इससे हो जाती है। छोटी बात भी खूब सोच विचार करने पर महत्वपूर्ण मालूम हो जाती है। अनाज अत्यधिक छोटा दीख पड़ता है। वही मिट्टी में गाड़ दिये जाने पर बाद में अत्यधिक बढ़ जाता है। [२]

विश्वास रखने से सभी बातें ठीक हो जाती हैं। अगर हम एक काम करते हैं तो हमें पूरा विश्वास रखना चाहिए कि अवश्य उस कार्य में सफलता मिलेगी है। बिना विश्वास के जो कार्य किया जाता है उसकी सफलता में भी अनिश्चितता आ जाती है। पूर्ण आत्मविश्वास के साथ सभी कार्य करना है। उत्तर भारत में होनेवाली एक प्रक्रिया के बारे में गोस्वामीजी कहते हैं। स्त्रियां चावल और हल्दी एक साथ पीसकर बनाए हुए मिश्रण से

१- मातु पिता गुरु स्वामि सिख सिर धरि करहिं सुभाय।
लहेउ लाभु तिन्ह जन्म कर नतरु जनमु जग जाय।
दोहावली-पृष्ठ-१८६

२- गठिबंध ते परतीति बडि जेहिं सब को सब काज।
कहत थोर समुझत बहुत गाडे बढ़त अनाज ।।
दोहावली-पृष्ठ-१५५

टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

दीवार पर अपने हाथ से अंकन करती है फिर उसकी पूजा करने लगती है। उनका विश्वास है कि इससे उनके मनोरथों की पूर्ति हो जाती है। [1]

विश्वास - घात करना घोर पाप है :

विश्वास-घात से भगवान ही रक्षा कर सकते हैं। यदि हम किसी व्यक्ति पर पूर्ण विश्वास रखते है तो उसकी गोद में सो जाने में भी उसे संकोच नहीं होता। अर्थात् उस व्यक्ति के प्रति उसे विश्वास होता है। लेकिन अगर वह व्यक्ति विश्वास-घात करे तो उसकी मानसिक हालत क्या हो। उस व्यक्ति पर पूर्ण भरोसा रखकर वह सब कुछ करता है। लेकिन ऐसी हालत से उस व्यक्ति की रक्षा का कार्य भगवान पर निर्भर रहता है। [2]

ज्योतिष :

ज्योतिष के संबन्ध में भी गोस्वामीजी ज्ञान रखते थे। व्यापार केलिए अच्छे बारह नक्षत्रों का उल्लेख वे करते हैं। श्रवण नक्षत्र से तीन नक्षत्र श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष - हस्त नक्षत्र से तीन नक्षत्र- हस्त, चित्रा, स्वाती - 'पु' से आरंभ होने वाले पुष्य, पुनर्वसु दो नक्षत्र,

---

१- आपनो ऐपन निज हथा तिय पूजहिं निज भीति।
   फरइ सकल मन कामना तुलसी प्रीति प्रतीति ॥
      दोहावली-पृष्ठ-१५५

२- जासु भरोसें सोइए राखि गोद में सीस।
   तुलसी तासु कुचाल तें रखवारो जगदीस।
      दोहावली-पृष्ठ-१३६
      टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

मृगशिरा , अश्विनी रेवती तथा अनुराधा इन नक्षत्रों में होनेवाला धन, ज़मीन, धरोहर आदि का व्यवहार बहुत अच्छा निकलता है। धन का नाश नहीं होता। [१]

दूसरे चौदह नक्षत्रों का उल्लेख कवि करते है - इन नक्षत्रों में हाथ से जो धन जाता है उसकी प्राप्ति फिर नहीं होती। उत्तरा, फाल्गुनी उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपाद, पू से आरंभ होनेवाले पूर्व फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्व भाद्रपद- विशाखा , अज, कृत्तिका, मघा, आर्द्रा , भरणी, आश्लेषा, मूल इन नक्षत्रों में धन की स्थिति क्या होती है, यह भी देखना है। अगर हमारा धन चोर ने चुराया है तो फिर उस धन की प्राप्ति नहीं हो सकती। वह सदा केलिए जाता रहता है। धरोहर के रूप में अगर किसी के पास कुछ रखा गया है तो फिर उस धन की प्राप्ति की आशा नहीं होनी चाहिए। गाड़ा हुआ तथा उधार दिया हुआ धन कभी नहीं मिलता। इन नक्षत्रों की यही विशेषता है। [२]

शकुन के बारे में गोस्वामीजी का कहना है :

शकुन कौन -कौन सी वस्तुएं हैं - नेवला, मछली, दर्पण, क्षेमकरी चिड़िया, चकवा ,नीलकण्ठ, इनको किसी भी तरफ़ से देखने पर अच्छा फल होता है। यह शुभ शकुन है। अच्छे शकुनों को देखकर कहीं बाहर निकलना है।

१- श्रुति गुन कर गुन पु जुग मृग हय रेवती सखाउ।
देहि लेहि धन धरनि धरू गएहुं न जाइहि काउ।

दोहावली-पृष्ठ-१५६

२- ऊगुन पूगुन बिसि गुन रस नयन मुनि प्रथमादिक बार।
तिथि सब काज नसावनी होइ कुजोग बिचार ।।

दोहावली-पृष्ठ-१५७ २५६

ज्योतिष में यह विचार रखा गया है। शुभ शकुनों के दर्शन करने से मनोकामनाओं की पूर्ति हो जाती है। १

किसी जगह यात्रा करते समय विश्वामित्र के साथ राम-लक्ष्मण के स्मरण करने का उपदेश गोस्वामीजी देते हैं। इस मंगल मय शकुन से अवश्य संसार में कीर्ति फैलती है। राम उस पर कृपादृष्टि डालकर उसका उद्धार करते हैं। २

<u>भले का भला ही होना अनिवार्य नहीं :</u>

अच्छी वस्तु से अच्छा पदार्थ निकलना संभव नहीं, कभी कभी बुरा पदार्थ भी निकलता है। आग तो अत्यधिक पवित्र मानी गयी है। क्योंकि अग्नि से विविध प्रकार के होम पूजादि कर्म किया जाता है। लेकिन

१- नकुल सुदरसन दरसनी क्षेमकरी चक चाष।
दस दिसि देखत सगुन सुभ पूजहिं मन अभिलाष॥
दोहावली-पृष्ठ-१५८

(१) सुधा साधु सुरतरु सुमन सुफल सुहावनि बात।
तुलसी सीतापति भगति सगुन सुमंगल सात॥
दोहावली-पृष्ठ-१५८

२- राम लखन कौसिक सहित सुमिरहु करहु पयान।
लच्छि लाभ लै जगत जसु मंगल सगुन प्रमान॥
दोहावली-पृष्ठ-१५६

टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

उससे निकलने वाला धुआं तो काला होता है । अच्छे आदमी को कभी बुरी सन्तान की प्राप्ति होती है । उसी प्रकार दानी के कंजूस पुत्र भी हो सकता है । [१]

भले आदमी को भी बुरे नाम की उपलब्धि हो जाती है । धर्मराज को ' यम ' नाम दिया गया है । वैसे वज्र नाम बिजली को भी । यही संसार का कटु नियम है । [२]

ठीक जांच करके किसी का भी परित्याग करना है । शिष्य आदि गुरु को छोड़कर दूसरे व्यक्ति को खुश करने में लगे रहते हैं तो ठीक ठीक उसकी परीक्षा करने के बाद उसकी उपेक्षा करना है । अपने दोस्त केलिए मर मिटने केलिए भी तैयार रहना चाहिए और वही वास्तव में सच्चा मित्र है । सुख,दुःख दोनों अवस्थाओं में वह उसका साथ देता है । यदि वह अपने प्रिय मित्र से अलग होकर दूसरे से मिलने लगता है तो उससे फिर दोस्ती नहीं जोड़नी चाहिए । नौकर का तो स्वामी का आज्ञानुवर्ती होना अत्यधिक आवश्यक है । उनकी इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नहीं करना चाहिए । वही यथार्थ नौकर है । यदि वह उनके विरुद्ध करता है तो उससे दूर रहना ही अच्छा है । वैसे मंत्री

१- होइ भले कै अनभलो होइ दानि कै सूम ।
 होइ कपूत सपूत कै ज्यौं पावक में धूम ।
 दोहावली-पृष्ठ-१२६

२- लोक बेदहू लौं दगो नाम भले को पोच ।
 धर्मराज जम गाज पवि कहत सकोच न सोच ।
 दोहावली-पृष्ठ-१२८
 टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

की भी यही दशा है । नारी के देवता तो पति है । पतिव्रता नारी तो पति की सेवा-शुश्रूषा में ही समय बिताती है । यदि वह नारी दूसरे पुरुष के प्रेम पाश से बन्धित हो जाती है तो उसे हृदय से निकाल देना चाहिए । १

सरसता नष्ट होने से पहले नगर, नारी, भोजन, मंत्री, सेवक, मित्र, घर आदि की उपेक्षा करनी है । एक नगर में बहुत समय रहने पर उस जगह से हम ऊब उठते हैं । उससे पहले उस नगर की उपेक्षा करनी चाहिए । नारी की सरसता नष्ट होने से पहले उसको छोड़ना चाहिए । वैसे भोजन, मंत्री, सेवक, मित्र घर आदि की भी । २

मूर्ख व्यक्ति :

मूढ़ उपदेश सुनने केलिए तैयार नहीं होते । उपदेश ग्रहण करने केलिए तैयार होने पर उनकी अवस्था सुधर जाती है । लेकिन वे उसके लिए विवश भी नहीं होते । वे ज्यों के त्यों मूर्ख बने रहते हैं । ३

१- सिष्य सखा सेवक सुतिय सिखावन सांच ।
सुनि समुझिअ पुनि परिहरिअ पर मन रंजन पांच।

दोहावली-पृष्ठ-१६३

२- नगर नारि भोजन सचिव सेवक सखा अगार ।
सरस परिहरें संग रस निरस विषाद बिकार ।।

दोहावली-पृष्ठ-१६३

३- जो पै मूढ़ उपदेस के होते जोग जहान । क्यों न सुजोधन बोध के आए स्याम सुजान

दोहावली-पृष्ठ-१६६

(१) रीझि आपनी बूझि पर खीझि बिचार बिहीन ।
ते उपदेस न मानहीं मोह महोदधि मीन ।।

दोहावली-पृष्ठ-१६६

मूर्ख अज्ञानी है :

ज्ञानी बनने का परिश्रम करने पर भी वे अज्ञानी ही बने रहते हैं। आसमान पर जलद अमृतवर्षिणी वर्षा से रूखी सूखी पृथ्वी को हरा-भरा कर देता है। पृथ्वी में हरियाली छा जाने पर नया जीवन सा प्रतीत होता है। वर्षा से चराचर जीव सन्तुष्ट हो उठते हैं, केवल बेत को छोड़कर। वह फूलता फलता नहीं। यों मूर्ख के हृदय में ज्ञानरूपी प्रकाश बिखेरने केलिए विधाता के समान ज्ञानी गुरु भी असमर्थ निकलते हैं। उसके हृदय में ज्ञान भरना कठिन काम है। वह अज्ञान का शिरोमणि है।[१]

मूर्ख तो प्रत्येक अवसर पर उचित कार्य नहीं करते। उनमें विवेक की कमी होती है। विवेकी तो घर जलते समय आग को बुझाने का परिश्रम करता है। मूर्ख तो उस समय उचित कार्य न करके कुआँ खोदता है। राज्य पर शत्रु लोग आक्रमण करने आयें तो उनका सामना करना है। उन्हें तुरन्त भगाने का परिश्रम करना चाहिए। तब चारों ओर बबूल के वृक्ष लगाना उचित नहीं, यह मूर्ख का काम है।[२]

१- फूलइ फरइ न बेत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरख हृदयं न चेत जौं गुर मिलहिं बिरंचि सम।।
दोहावली-१६६

२- कूप खनत मंदिर जरत आएं धारि बबूर।
बवहिं नवहिं निज काज सिर कुमति सिरोमनि कूर।
दोहावली-पृष्ठ-१६७

जान बूझकर अनीति में लगे रहने वाले व्यक्ति को उपदेश देना व्यर्थ है। वह जानता है कि यह अनीति है, यह न करना चाहिए। वह जागती अवस्था में होने पर भी सोई हुई अवस्था जैसी है।[१]

दुनिया के सभी लोगों को रिझाना बहुत मुश्किल है। जो ऐसा प्रयत्न करता है, वह महान मूर्ख होता है। अधिकांश लोग स्वार्थ को निभाने केलिए अर्थात् अपनी भलाई के वास्ते परमात्मा को भी भूलकर वह क्या न करता है। वह सब कुछ करने केलिए तैयार रहता है। वह सभी मनुष्यों को खुश करने का व्यर्थ परिश्रम करता है। ` आकाश को तकिया बनाना ` मूर्खों का काम है।[२]

समन्वय साधना - सगुण-निर्गुण में एक के बिना दूसरे का निरूपण करना असंभव है। अज्ञान के बिना ज्ञान का निरूपण करना मुश्किल है, अन्धकार के बिना प्रकाश का मूल्य नहीं जाना जा सकता। वैसे सगुण के बिना निर्गुण। एक के बिना दूसरे की सिद्धि नहीं होती। सगुण भक्ति

१- जो सुनि समुझि अनीति रत जागत रहै जु सोइ।
उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होइ।
दोहावली-पृष्ठ-१६८

२- लोगनि भलो मनाव जो भलो होन की आस।
करत गगन को गेंडुवा सो सठ तुलसीदास।।
दोहावली-पृष्ठ-१६८
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

को छोड़कर जो निर्गुण भक्ति का आश्रय लेना चाहते हैं वे यथार्थ निर्गुण भक्त नहीं बन सकते । [१]

शिव-भक्त को राम-भक्त भी होना चाहिए । शिवजी के विरोधी राम के भक्त नहीं हो सकते । वैसे उल्टा भी । शिवजी के विरोधी राम-भक्त बनना चाहें तो उसे एक कल्प तक नरकवास करना पड़ता है । एक को दूसरे से श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता । [२]

नारी-अनर्थ का कारण :-

गोस्वामीजी नारी को झगड़े और मृत्यु का कारण मानते हैं । जन्मकुण्डली की सहायता लेकर परीक्षण किया जाय तो समझ में आ जाता है कि नारी मृत्यु और बैरी के बीच के स्थान पर विद्यमान है । तुलसीदासजी के अनुसार लोगों में शत्रुता और मृत्यु का कारण नारी है । नारी की कुटिल रीतियों पर क्रुद्ध होकर वे यों कहते हैं । [३]

१- ग्यान कहै अग्यान बिनु तम बिनु कहै प्रकास ।
   निरगुन कहै जो सगुन बिनु सो गुरु तुलसीदास ।।
         दोहावली-पृष्ठ-८६

२- संकर प्रिय मम द्रोही सिव द्रोही मम दास ।
   ते नर करहिं कलप भरि घोर नरक महुं बास ।।
         दोहावली-पृष्ठावली-४२

३- जनम पत्रिका बरति कै देखहु मनहिं बिचारि ।
   दारून बैरी मीचु के बीच बिराजति नारि ।
         दोहावली-पृष्ठ-६२
         टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

प्रेम की चाह अनन्त है । अपने प्रिय जनों पर कौन दोषारोपण करेगा। चातक तो अपने प्रिय बादल पर कोई भी बुरी चिन्ता मन में नहीं रखता । बादल के प्रति उसे अत्यधिक प्रेम है। स्पष्ट है प्रेमरूपी अथाह समुद्र का थाह नहीं लगाया जा सकता । माप-तौल असंभव है । [१]

प्रेम में एकनिष्ठता होनी चाहिए । अनन्य प्रेम केलिए चातक अच्छा नमूना है । वही प्रेम के मान की रक्षा करता है । अन्त तक वह पवित्र प्रेम निभा सकता है । चातक तो हमेशा मेघ की ओर मुंह करके रहता है । यदि स्वाति-नक्षत्र का जल ठीक उसके मुंह पर नहीं पड़ा, टेढ़ा होकर पड़ा तो वह उस जल को स्वीकार नहीं करता । यहां वास्तविक प्रेम का दिग्दर्शन होता है । [२]

प्रेम की परीक्षा कठोरता में होनी चाहिए । प्रेमी चातक को पापी मानने वाले कुछ लोग हैं । क्योंकि उसका प्रियतम मेघ उस पर करुणा नहीं दिखाता । वर्षा की बूंदें उसके मुंह में नहीं पड़तीं ।लेकिन इससे यह समझना पड़ता है कि प्रेम की परीक्षा,कोमलता में नहीं, कठोरता में है । तभी प्रेम की पराकाष्ठा स्पष्ट हो जाती है । कठोरता से प्रेम बढ़ता है ।

१- चढ़त न चातक चित कबहुं प्रिय पयोद के दोष ।
तुलसी प्रेम पयोधि की ताते नाप न जोख ।।
दोहावली-पृष्ठ-६७

२- तुलसी चातक ही फबै मन राखिबो प्रेम ।
बक्र बुंद लखि स्वातिहू निदरि निबाहत नेम ।।
दोहावली-पृष्ठ-६८
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

चातक अपने प्रेमी केलिए जीवन तक बलिदान करने केलिए भी तैयार है । [१]

प्रेमी प्रेमास्पद के सताये जाने पर भी अपने प्रेम में अटल रहता है । उसके स्मरण में प्रेमी जीवन व्यतीत करता है । गोस्वामीजी यह स्पष्ट करने केलिए कमल का उदाहरण प्रस्तुत करते है । पाला गिरने से कमलों का नाश हो जाता है । कमल का प्रेमी सूर्य यह देखकर भी विचलित नहीं हो उठता । लेकिन कमल तो उषा-वेला में प्रभात-सूर्य की लाल किरणें पडने पर विस्फारित होता है और दु:ख के बिना अपनी सुन्दरता चारों ओर बिखेरता है । कमल का सूर्य के प्रति यह प्रेम अमर है । [२]

पवित्र प्रेम का नाश कभी नहीं होता । वह अमर रहता है । मोर तो मेघ का प्रेमी है । आकाश में उमड़ घुमडकर गरजनेवाले मेघों को देख सन्तुष्ट चित्त होकर मोर प्रेम के कारण पंख पसारकर नृत्य करने लगता है । बादलों के प्रति उसके मन में कितनी प्रेम-भावनायें हैं , यह इससे स्पष्ट है । [३]

१- एक अंग जो सनेहता निसि दिन चातक नेह ।
तुलसी जासों हित लगै वहि अहार वहि देह ।।
दोहावली-पृष्ठ-१०६

२- जरत तुहिन लखि बनज बन रबि दै पीठि पराउ ।
उदय बिकस अथवत सकुच मिटै न सहज सुभाउ ।।
दोहावली-पृष्ठ-१०८

३- तुलसी मिटै न मरि मिटेहुं सांचो सहज सनेह ।
मोरसिखा बिनु मूरिहुं पलुहत गरजत मेह ।।
दोहावली-पृष्ठ-१०६
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

जल के प्रति मछली का प्रेम अत्यधिक पवित्र है । प्रेमी और प्रियतम संसार में सुलभ हैं । मछली को छोड़कर वास्तविक प्रेम निभानेवाला दूसरा कोई नहीं है । प्रेम तो निष्काम होना है, उसमें कलंक न आने पावे । जल के प्रति प्रेम रखनेवाली मछली उसके अभाव में अपने प्राणों को भी छोड़ देती है । मर कर प्रेम निभानेवाला कोई नहीं ।[१]

प्रेम का लक्षण तो स्मरण और मधुर भाषण ही है । प्रेम के जंजीर से बन्धित व्यक्तियों के बीच में स्मरण की अत्यधिक प्रधानता है । अपने प्रिय व्यक्तियों को हमेशा याद करना है, भूलना उचित नहीं । आपस में मिलने पर उनमें कितना मधुर भाषण चलता है । वही तो प्रेम की निशानी है । लेकिन जो प्रिय व्यक्तियों का स्मरण नहीं करते, आपस में मीठे वचन भी नहीं बोलते, तो उनमें क्या प्रेम का संबन्ध हो सकता है ?[२]

विषय सुख की हेयता । विषय वासनाओं से प्रेम रखनेवाला व्यक्ति हमेशा उसमें लीन रहना चाहता है । वह सुख तो क्षणिक है, इसके बारे में वह सोचता नहीं । विषयों के पीछे पड़ना मूर्खता है । विषयी तो विषय-सुख पाने के लिए अत्यधिक लालायित हो उठते हैं ।[३]

१- सुलभ प्रीति प्रीतम सबै कहत करत सब कोइ ।
तुलसी मीन पुनीत ते त्रिभुवन बडो न कोइ ।।
दोहावली-पृष्ठ-१०६

२- सदा न जे सुमिरत रहहिं मिलि न कहहिं प्रिय बैन ।
ते पै तिन्ह के जाहिं घर जिन्ह के हिएं न नैन ।।
दोहावली-पृष्ठ-११३

३- दिए पीठि पाछें लगै सनमुख होत पराइ ।
तुलसी संपति छांह ज्यों लखि दिन बैठि गंवाइ ।
दोहावली-पृष्ठ-८६

काम,क्रोध, लोभ आदि की व्यापकता के बारे में कहना मुश्किल है । ये तीनों अपनी शक्ति से किस व्यक्ति का आक्रमण नहीं करते । मुनि लोग कठिन तपस्या करके अत्यधिक संयमशील हो जाते हैं । वे इन्द्रियों के दमन करने में समर्थ है । लेकिन ये मुनि लोग भी काम,क्रोधादि के सामने अपने को संभाल नहीं पाते । वे भी चंचल हो उठते हैं । [१]

मोह के सहायक हैं काम, क्रोध,लोभ, मद आदि । इनमें नारी भी विषयवासनाओं में एक मानी गयी है । वह काम भोग का उपकरण और माया की मूर्ति कही गयी है । गोस्वामीजी उसे दुःख प्रदान करनेवाली मानते है ।

आसक्ति रहित होकर जीना ही अच्छा है । उसी में सुख की खोज कर सकता है । आसक्ति के कारण दुःख भोगना पड़ता है । आसक्ति से मुक्त होकर राम की भक्ति में लीन होना चाहिए ।[३]

आसक्ति तो राम भक्ति में बाधक है । काम , क्रोधादि विकारों के गुलाम व्यक्ति उसी के पैरों तले हमेशा जीवन व्यतीत करना चाहते है । यदि वह घर-गृहस्थी की बातों में सदा लो बैठता है तो वह संसार रूपी अन्धकूप में

१- तात तीनि अति प्रबल खल काम,क्रोध,अरु लोभ ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुं छोभ ।
दोहावली-पृष्ठ-६१
(ब)लोभ के इच्छा दंभ बल काम के केवल नारि ।
क्रोध कें परुष बचन बल मुनि वर कहहिं बिचारि ।।
दोहावली-पृष्ठ-६२
२- काम,क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह के धारि ।
तिन्ह मंह अति दारुन दुखद मायारूपी नारि ।।
दोहावली-पृष्ठ-६२

पडा रहता है । उससे उसका उद्धार कैसे संभव हो सकता है । वह राम को समझने में असमर्थ रहता है । [१]

विषयी के मन को शान्ति नहीं मिलती । मोह से आकृष्ट होकर जो व्यक्ति चराचर जीवों के नाश में संलग्न रहता है तो क्या वह अच्छा आदमी है ? अगर वह राम से विमुख रहता है और भोग लालसा में मग्न रहता है तो वह सपने में भी संपत्ति की इच्छा नहीं कर सकता । मन की शान्ति प्राप्त करना भी असंभव हो जाता है । विषयी मनुष्य की यही दुर्गति होती है । [२]

विषयाशक्ति तो एक प्रकार का रोग है । इस रोग के लग जाने से बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो जाती है । पीड़ा का भी अनुभव होने लगता है । विषयाशक्ति को मन से एकदम हटा देना ही अच्छी वैद्यता है । इससे अच्छी वैद्यता दूसरी नहीं । [३]

१- काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुख रूप ।
ते किमि जानहिं रघुपतिहि मूढ़ परे भव कूप ।।
दोहावली-पृष्ठ-६३

२- ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुं मन बिश्राम ।
भूत द्रोह रत मोह बस राम बिमुख रति काम ।
दोहावली-पृष्ठ-६४

३- प्रेम सरीर प्रपंच रुज उपजी अधिक उपाधि ।
तुलसी भली सुबैदई बेगि बांधिए ब्याधि ।।
दोहावली-पृष्ठ-८३
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

विषयासक्ति का नाश हुए बिना ज्ञान अधूरा रहता है। विषयों के प्रति आसक्ति छोड़कर परमार्थ को पहचानने का परिश्रम करना चाहिए। यह बहुत मुश्किल की बात है। ज्ञानी अगर विषयवासनाओं के प्रेमी हों तो उससे कोई फायदा नहीं होता। उसकी उपमा अग्नि में आधी जलकर भाग आनेवाली सती युवती से की है। १

स्वामी-सेवक संबन्ध। नौकर कभी कभी स्वामी से अत्याचारी होते हैं। अवसर के अनुसार स्वामी अगर कुछ बुरा काम करते हैं तो सेवक उनसे भी अधिक बुराई करते हैं। सभी कार्यों को वे बिगाड़ देते हैं। सेवक के इन्हीं व्यवहारों पर असन्तुष्ट होकर गोस्वामीजी सेवक को अत्याचारी मानते हैं। २

स्वामी और सेवक किस प्रकार की प्रकृति का होना चाहिए ? गोस्वामीजी के अनुसार सेवक हाथ, पैर, नेत्र आदि के समान और स्वामी मुख के समान होना आवश्यक है। मुँह से खाना लिया जाता है। वह सभी अंगों का समान रूप से पालन करता है वैसे स्वामी भी सेवकों का समान रूप से पालन करें। सेवकों के पेट भराने का काम स्वामी पर निर्भर रहता है। हाथ, पैर, आँख आदि विपत्ति से बचाने केलिए काम आते हैं। वैसे स्वामी को विपत्ति पड़ने पर उससे उनकी रक्षा करना सेवक का कर्तव्य है। तब तो उनका संबंध अटूट

१- परमारथ पहिचानि मति लसति विषयं लपटानि।
निसि चिता तें अधजरति मानहुं सती परानि॥
दोहावली-पृष्ठ-८७

२- त्रिविध एक विधि प्रभु अनुग अवसर करहिं कुठाट।
सूधे टेढ़े सम विषम सब महं बारह वाट॥
दोहावली-पृष्ठ-१७२

रहता है, कभी मिटता नहीं । १

स्वामी के निकट छोटे बडे , निर्बल-बलवान एक समान नहीं होते । कुछ तो छोटे,कुछ बडे , कुछ बलवान और कुछ बलहीन होते हैं । स्वामी क्या इन सब को एक ही नज़र से देखते है ? बडों को छोटों से उच्च स्थान देते है, वैसे बलवानों को भी । इस बात को समझने केलिए गोस्वामीजी हाथ की अंगुलियों की बात कहते है । पांच अंगुलियां एक प्रकार की नहीं होती । एक अंगुली दूसरे से या तो बडा या छोटा होता है । २

आज्ञाकारी सेवक, स्वामी से बड़ा होता है । सेवक का कर्तव्य है- अपने धर्मों का ठीक तरह से पालन । इस में वह समर्थ होना है । हनुमान तो राम के आज्ञाकारी सेवक है । उनके सभी कार्यों का ठीक तरह से संचालन करनेवाले है हनुमान जी । गुणी सेवक से स्वामी का बड़ा लाभ होता है । ३

अवसर की प्रधानता :

प्रत्येक समय पर उचित कार्य करना चाहिए । उस अवसर के बीत जाने पर बाद में पछताने से कोई फायदा नहीं होता । इसलिए उस समय की

१- सेवक कर पद नयन से मुख सो साहिबु होइ ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि सुकबि सराहहिं सोइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१७६

२- प्रभु समीप छोटे बडे निबाल बलवान । तुलसी प्रगट बिलोकिए कर अंगुली हनुमान।
दोहावली-पृष्ठ-१८१

३- साहब तें सेवक बडो जो निज धरम सुजान ।
राम बांधि उतरे उदधि लांघि गए हनुमान ।
दोहावली-पृष्ठ-१८१

प्रधानता अच्छी तरह समझनी चाहिए । यदि उस अवसर पर पैसा देना पड़ता है तो संकोच करने की कोई बात नहीं । पैसा अवश्य देना चाहिए । बाद में अ अनेकों रूपये देने केलिए तैयार रहने पर भी कोई फायदा नहीं । द्वितीया के चन्द्रमा को देखना चाहिए । अगर न देख सका तो फिर क्या कहना है । चन्द्रमा का उदय पक्ष-भर होता है । लेकिन द्वितीया का चन्द्रमा सदा दिखायी नहीं पड़ता । [१]

प्रत्येक समय की प्रधानता। विवेकी मनुष्य तो सदा सजग रहते हैं । उचित समय पर सारा काम कर डालना चाहिए । समय के बीत जाने पर सोच में पड़ने की आवश्यकता नहीं । अमूल्य जीवन भगवद् भजन में बिताना चाहिए । जब हम मदोन्मत्त होकर यौवन की नदी में थिरकते रहते हैं, भगवद् भजन नहीं करते, तो बुढ़ापा आ जाने पर चिन्तित होने से क्या लाभ होता है ? बुढ़ापे में हम अपने को संभाल नहीं पाते । फिर भगवान का भजन कैसे कर सकते हैं । उसे मनुष्य जीवन की अच्छाइयों से वंचित रह जाना पड़ता है । २

गहरी मित्रता का महत्व :

गाढ़े दिन का मित्र ही वास्तव में सच्चा मित्र है । दुःख के समय मित्र की अत्यधिक आवश्यकता होती है । दुःख के समय ही वास्तविक मित्र की परख होती है । दुःखरूपी कसौटी पर मित्र को कसकर देखना है ।

१- अवसर कौडी जो चुके बहुरि दिएं का लाख ।
   दुइज न चंदा देखिए उदौ कहा भरि पाख ।
         दोहावली-पृष्ठ-११८

२- लाभ समय को पालिबो हानि समय की चूक ।
   सदा बिचारहिं चारु मति सुदिन कुदिन दिन टूक ।।
         दोहावली-पृष्ठ-१५२

तभी समझ में आ जाता है कि वह मित्र अच्छा है या बुरा । जो बुरी हालत में भी याने विपत्ति के समय भी मित्र के साथ रहकर उसकी सहायता करता है। वही यथार्थ मित्र कहलाने योग्य है । अमावस्या के दिन सूर्य चन्द्रमा की शोभा का नाश कर देता है फिर भी सूर्य मित्र कहलाता है । कारण यह है कि सूर्य उसे चमक देता है । [१]

गोस्वामीजी का मत है कि बराबरी का स्नेह दु:खदायक होता है । अर्थात् मित्रों को एक ही कोटि के व्यक्ति होना नहीं चाहिए । विभिन्न स्तर के व्यक्तियों में ही मित्रता संभव हो सकती है । तभी तो कल्याण की आशा हो सकती है । तुल्य परिमाण में घी और मधु के मिल जाने से कठोर विष पैदा हो जाता है । [२]

मित्रता में छल बाधा उपस्थित करता है । छल,कपट से मित्र को बचता रहना चाहिए । उसका स्पर्श भी न होना चाहिए । उसकी छाया भी उस पर न पड़नी चाहिए । उस निष्कलंक मित्र से सुखों की प्राप्ति हो सकती है, चन्द्रमा में कलंक होता , कैकेयी की कुटिलता बहुत अनर्थों का कारण बन गया । [३]

१- कुदिन हितू सो हित सुदिन हित अनहित किन होइ ।
सखि छबि हर रबि सदन तउ मित्र कहत सब कोइ ।
दोहावली-पृष्ठ-११०

(अ)कहिअ कठिन कृत कोमलहु हित हठि होइ सहाइ ।
पलक पानि पर ओडिअत समुझि कुघाइ सुघाइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१११

२- कै लघु कै बड़ मीत भल सम सनेह दुख सोइ ।
तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस मिलें महाविष होइ ।
दोहावली-पृष्ठ-११०

३- मान्य मीत सों सुख चहै सो न छुए छल छाहं
ससि त्रिसंकु कैकेइ गति लखि तुलसी मन मांह ।।
दोहावली-पृष्ठ-१११

सच्चा हितैषी हमेशा हितकारी होता है। वह तो कठिन काम होने पर भी किसी प्रकार के विक्षेप के बिना उसका निर्वाह करता है। वैसे आपत्ति के समय भी किसी का अनुरोध प्राप्त हुए बिना सहायता करने केलिए आगे बढ़ता है। उदाहरणार्थ गोस्वामीजी कहते है कि आंख,बाहरी आघात की सूचना मिलने के उसी निमिष पर बंद कर लेती है और पलक आंख की रक्षा करती है। वैसे शरीर पर भी चोट पड़ने की संभावना मिलकर हाथ से रोका जाता है। उसकेलिए विशेष अनुरोध की आवश्यकता नहीं। शरीर की रक्षा केलिए सभी अंग सजग रहते हैं। वैसे हितैषी सजग रहते हैं।[१]

मित्र के प्रति वैर-भाव और शत्रु के प्रति प्रेम-भाव रखने से राम अप्रसन्न रहते हैं। अपना हित करनेवालों के प्रति हमेशा प्रेमपूर्ण बर्ताव करना चाहिए। सदा उनकी विपत्तियों में साथ देना है। यों उनके दुःख को हल्का करने का प्रयत्न करना है। उल्टे उनसे शत्रुता रखना अच्छा नहीं। लेकिन शत्रु के प्रति प्रेम भाव अधिक मात्रा में होने पर राम हम से विमुख हो जाते हैं। विधाता उसके प्रतिकूल हो जाते है। सारी बातें बिगड़ भी जाती हैं।[२]

१- कहिब कठिन कृत कोमलहुं हित हठि होइ सहाइ।
पलक पानि पर ओड़ियत समुझि कुघाइ सुघाइ।।
दोहावली-पृष्ठ-१११

२- हित पर हित बढ़इ बिरोध जब अनहित पर अनुराग।
राम बिमुख बिधि बाम गति सगुन अघाइ अभाग।।
दोहावली-पृष्ठ-१४४
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

वैर और प्रेम :

वैर और प्रेम अंधे होते हैं। कारण यह है बैरी तो घृणा करने वाले व्यक्ति के गुणा की ओर नहीं देखते। उस ओर वह आंखे मूंद कर रहता है। प्रेमी तो प्रेम करने वाले व्यक्ति के दोषों को समझने में असमर्थ रहते हैं। उसके बारे में उसे कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। उचित अनुचित को पहचानने की विवेक-बुद्धि उसे नहीं होती। वाममार्गी तो पवित्र और स्वच्छ गंगा जल की उपेक्षा कर शराब का सेवा करते हैं।[१]

उत्तम व्यक्ति की प्रीति की परीक्षा की जाय तो स्पष्ट मालूम पड़ता है कि उसकी प्रीति हमेशा पत्थर के समान अटल रहती है। वह कभी हिलती डुलती नहीं, हमेशा एक समन रहता है। लेकिन मध्यम की तो बात ऐसी नहीं। उसकी प्रीति बालू में खिंची रेखा के समान कुछ समय तक टिकी रहती है, उसके बाद मिटती है। लेकिन नीच की प्रीति जल में खिंची रेखा के समान जल्दी नष्ट हो जाती है। लेकिन बैर तो इसके ठीक विपरीत है। उत्तम व्यक्ति का वैर जल की लकीर के समान जल्दी मिटनेवाला ,मध्यम का तो बालू की रेखा के समान कुछ समय बाद नष्ट होनेवाला है, नीच का तो पत्थर की लकीर के समान कभी न मिटनेवाला होता है। यही इन लोगों में भिन्नता है।[२]

१- तुलसी वैर सनेह दोउ रहित बिलोचन चारि।
सुरा सेवरा आदरहिं निंदहि सुरसरि बारि।।
दोहावली-पृष्ठ-११२

२- उत्तम मध्यम नीच गति पाहन सिकता पानि।
प्रीति परिच्छा तिहुन की बैर बितिक्रम जानि।।
दोहावली-पृष्ठ-१२१

दानी और याचक :

याचक को मांगने में किसी प्रकार का संकोच या चिन्ता नहीं होती । क्योंकि भीख मांगना तो उसके जीवन का अभिन्न अंग है । उसका अन्त नहीं होता । तब तो उसे लज्जित होने की बात ही क्या है । दानी तो दान देने में समर्थ है । याचक और दानी दोनों अपने अपने कार्य करने में कुशल हैं । अपने काम के प्रति उन्हें घृणा नहीं, विक्षेप नहीं । १

याचना तो अत्यधिक दु:ख की बात है । दानी सदा दान करते रहते है । तब उसका यशोगान ही होता रहता है । याचक तो जीवन भर दूसरों की कृपा पर जीता है, अर्थात् जीवन-भर वह भीख मांगता रहता है । इसलिए वह बार बार मरता है, फिर जन्म लेता है । लेकिन याचक दानी के प्रति कृतज्ञ नहीं है, वह सदा उसे कोसता रहता है । २

बाहरी वेष-भूषा की कोई महत्ता नहीं । बाहरी वेष-भूषा से साधु सा लगे, सुन्दर बोली भी हो , तो भी कोई बात नहीं । मात्र वेष-भूषा पर कोई प्रधानता नहीं देनी चाहिए । उसके साथ साथ मन भी सुन्दर होना चाहिए । कर्म भी पवित्र होना चाहिए । कठोर मन रखकर जो कुछ

१- रुचै मागनेहि मागिबो तुलसी दानिहि दानु ।
आलस अनख न आचरज प्रेम पिहानी जानु ।।
दोहावली-पृष्ठ-११२

२- अमर दानि जाचक मरहिं मरि मरि फिरि फिरि लेहिं ।
तुलसी जाचक पातकी दातहि दूषन देहिं ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२६
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

UNIVERSITY

कर्म किया जाय वह बुरा ही कहा जाएगा ।[१]

वचन में और बाहरी वेश-भूषा में अगर दंभ भरा हुआ है तो वह शोभा की बात नहीं है । अन्त में उसका पूरा परिणाम भोगना पड़ता है।। लेकिन मन तो सरल होना है । मन की सरलता से ही राम की कृपा की प्राप्ति हो सकती है ।[२]

कलियुग में सब कहीं कपट की प्रधानता है । गोस्वामीजी मोर का उदाहरण देते है । मोर का बाहरी वेश-विधान तो ऊपर से बहुत सुन्दर होता है । उसका व्यवहार भी सुन्दर होता है । लेकिन बाहरी व्यवहार भी सुन्दर होता है । लेकिन बाहरी व्यवहार तो केवल दिखावा है । आन्तरिक रूप से वे कपटी निकलते हैं । सच्चे दिल से उनसे मिलना असंभव होता है । उसका हृदय कपट से भरा रहता है । मयूर की वाणी भी मीठी होती है । लेकिन वे विषैले सांपों को खाते हैं । इस कारण मोर को कठोर हृदय वाला कहते हैं ।[३]

१- वेष बिसद बोलनि मधुर मन कटु करम मलीन ।
तुलसी राम न पाइऐ भएं बिषय जल मीन ।
दोहावली-पृष्ठ-५६

२- बचन बेष तें जो बनइ सो बिगरइ परिनाम ।
तुलसी मन तें जो बनइ बनी बनाईं राम ।।
दोहावली-पृष्ठ-५७

३- हृदय कपट बर बेष धरि बचन कहहिं गढ़ि छोलि ।
अब के लोग मयूर ज्यों क्यों मिलिए मन खोलि ।।
दोहावली-पृष्ठ-११४
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

विविध विषयक

कर्म के अनुसार फल । कर्म करने की रीति के अनुसार फल होता है । बहुत शान्त होकर, चिन्ता रहित होकर कर्म में लीन होने से उसका परिणाम अच्छा होता है । क्रोध या दु:साहस की हालत में रहकर कर्म करने से फल कठोर होता है, बुरा होता है। उदाहरणस्वरूप बालि और जयन्त को ले सकते हैं । हठपूर्वक कर्म करने से बालि का अन्त राम से होता है, वैसे जयन्त शाप के पात्र हुए । कर्म करने की रीति में सुधार आने से उसका परिणाम भी अच्छा निकलता है । [१]

भाग्यवाद :

गोस्वामीजी होनहार पर बहुत आस्था रखने वाले है । उनके अनुसार होनहार के अनुसार सारी बाते होती हैं । उसके विपरीत कुछ भी नहीं होता । जैसा होना है वैसा ही होता है । [२]

परलोक-प्राप्ति के चार मार्ग :

परलोक प्राप्ति के चार मार्गों के बारे में गोस्वामीजी कहते है । वेदों का अध्ययन करने का अधिकार पहले ब्राह्मणों को मिलता था । उसके द्वारा वह ज्ञान प्राप्त करता था । क्षत्रिय तो युद्ध-क्षेत्र में युद्ध किया करते थे । वैश्य तो व्यापार आदि कार्यों में कुशल होते हैं । वह धन कमाकर दान देते थे । शूद्र का कर्तव्य तो सेवा करना है । वे दूसरों की सेवा-शुश्रूषा में समय काटते

१- साहसहीं के कोप बस किए कठिन परिपाक ।
सठ संकट भाजन भए हठि कुजाति कपि काक ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४२
२- तुलसी जसि भवतब्यता तैसी मिलइ सहाइ ।
आपुनु आवइ ताहि पै ताहि तहां लै जाइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१५४

थे । ज्ञानार्जन , युद्ध, दान , शारीरिक सेवा इन चारों मार्गों से परलोक की प्राप्ति होती है । [१]

धर्म के परित्याग का बुरा परिणाम । किसी भी परिस्थिति में धर्म का परत्याग करना उचित नहीं । अगर कोई हम से बुरे वचन कहें तो उसे क्षमापूर्वक सहने की शक्ति होनी चाहिए । उससे बुरे वचन कहना अच्छा नहीं । वैसे सभी प्रकार की कठिनाइयों का सामना करने की क्षमता होनी चाहिए । धर्म का पालन करना चाहिए और उसका साथ कभी नहीं छोड़ना चाहिए । उससे हाथ नहीं छुड़ाना । विवेकी और बुद्धिमान लोग इस आचरण से कभी विचलित नहीं होते । धर्म की सुरक्षा केलिए जो कुछ करना पड़ता है । वह अवश्य करना है । [२]

दूसरों की भलाई करना हमारा लक्ष्य है । दूसरे का अहित कभी नहीं करना चाहिए । हित करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए । दूसरों का हित करते समय यह भय हमारे मन में होता है कि कहीं हमारा अहित तो नहीं होगा । दूसरों की भलाई केलिए जो कुछ सहना पड़ता है उसे खुशी के साथ सहना है । हमारे अहित की चिन्ता छोड़ देनी चाहिए । अगर हम दूसरों का अहित करते है , तो अवश्य हमारी हितकामनाओं पर आग लग जाती है, उनका नाश हो जाता है, दूसरों की भलाई करने पर हमारी अवनति कभी नहीं होती ।

१- के बूझिबो के बूझिबो दान कि काय कलेस ।
   चारि चारु परलोक पथ जथा जोग उपदेस ।
      दोहावली-पृष्ठ-१५४

२- सहि कुबोल सांसति सकल अंगइ अनट अपमान ।
   तुलसी धरम न परिहरिअ कहि करि गए सुजान ।
      दोहावली-पृष्ठ-१५६

दूसरों का हित करना ही मंगलकारी है, अहित करना अमंगल है। [1]

नीति:

गोस्वामीजी उपदेश देते है कि नीति का अवलंब करो, राम चरणों में प्रेम मत छोड़ो, यह तत्व कभी नहीं भूलना चाहिए। किसी से वाद विवाद में नहीं लगना चाहिए। सभी से शान्तिपूर्ण व्यवहार करना है। दूसरे लोग चाहे जो कुछ कहें, उनके कथन को जरा भी प्रधानता न देना। पुण्य की सीमा, स्वार्थ की अवधि, भगवत्प्राप्ति की मर्यादा यही है। [2]

रोगी, दरिद्र, कटु वचन बोलनेवाला, लालची ये चारों निरादर के पात्र है। रोग से पीडित व्यक्ति की सेवा करने केलिए पहले कोई न कोई होता है। लेकिन अगर वह बहुत दिनों केलिए शय्या का अवलंबी हो जाता है तब वह सभी के निरादर का पात्र बन जाता है। कुछ दिन सभी बडे प्रेम से सेवा करते है। बाद में उससे घृणा करने लगते हैं। पीडित व्यक्ति की भी यही हालत है। कुछ दिन सब लोग उसकी सहायता करते रहते है, बाद में वह भी सभी के निरादर का पात्र बन जाता है। दरिद्रता के चक्कर में पड़कर वह अपने आप को संभाल नहीं कर सकता। कटु वचन बोलने वाले व्यक्ति को कौन प्यार करता है। उसके वचन सुनने मात्र से मन में उसके प्रति विद्वेष पैदा होता है। लालची को कितना भी मिल जाय, वह कभी तृप्त नहीं होता। उसे और भी अधिक मिलने की आकांक्षा होती रहती है। कोई उसे आदर की दृष्टि से नहीं देखता। [3]

१- अनहित भय परहित किए पर अनहित हित हानि।
तुलसी चारु बिचारु भल करिअ काज सुनि जानि।।
दोहावली-पृष्ठ-१६०

२- दोहा चारु बिचारु चलु परिहरि बाद बिबाद।
सुकृत सीवं स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद।।
दोहावली-पृष्ठ-१६१

३- दीरघ रोगी दारिदी कटु बच लोलुप लोग।
तुलसी प्रान समान तउ होहिं निरादर जोग।
दोहावली-पृष्ठ-१६४

वैर त्याज्य है :

समर्थ पापी से वैर रखना उचित नहीं है । उदाहरणार्थ गोस्वामीजी कहते है - चुंबक में लोहे को आकर्षित करने की शक्ति रहती है । लोहा तीव्र गति से चुंबक पर अटक जाता है, फिर उससे हटाना कुछ मुश्किल है । यों नीच मनुष्य पर भरोसा नहीं रखा जा सकता । विनय के व्याज से वह दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करता है । लेकिन उसके अन्दर कपट भरा हुआ रहता है । उससे वैर रखने से वह सदा हम से छल करने की ताक में रहता है । वह मारने तक का परिश्रम करता है । उससे प्रेम पूर्ण व्यवहार ही करना है । [१]

क्षमा का महत्व :

क्षमा का अत्यधिक महत्व होता है । कुपित होना अच्छी बात नहीं । अत्यधिक क्षमा के साथ सभी कठिनाइयों को सह लेना है । क्षमा की पराकाष्ठा तक पहुंचना है । लेकिन अधिकांश लोग क्षमा की चरमसीमा तक पहुंचते नहीं । क्रोध के मारे अनर्थ भी होता है । भृगुमुनियों ने कोप से जलकर विष्णु की छाती पर पैर से मारा । लेकिन विष्णु तो क्षमा के मूर्तिरूप हैं । गोस्वामीजी का कहना है- भृगुमुनि के क्रोध के परिणाम स्वरूप ब्राह्मण वर्ग को भीख मांगने पर भी नहीं मिलती ।[२]

१- धाइ लगै लोहा ललकि खैंचि लेइ नइ नीचु ।
समरथ पापी सों बयर जानि बिसाही मीचु ।
दोहावली-पृष्ठ-१६४

२- छमा रोष के दोष गुन सुनि मनु मानहि सीख ।
अबिचल श्रीपति हरि भए भूसुर लहै न भीख ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४६

वैराग्य की श्रेष्ठता :

विरागी पुरुषों का आश्रय ही संसारके सभी फंफटों से बचने का उपाय है। वे नारी के कटाक्ष बाणों के शिकार नहीं होते। वे सर्वदा उससे मुक्त रहते हैं। विषयवासनाओं के प्रति मन में आसक्ति बिल्कुल नहीं होती। संसार में रक्षा के हेतु इनके शरीर को कवच के रूप में स्वीकार करना चाहिए। कवच बाहरी आक्रमणों से शरीर की रक्षा करता है। वैसे इन विरागियों के चरणों तले बैठने वाले भी विषयवासनाओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। [१]

वीर और कायर की तुलना :

वीर तो करनी करते हैं, कहते नहीं। कायर तो सिर्फ बकते रहते हैं। कुछ करनी नहीं करते, इसलिए उनका कथन व्यर्थ पड़ जाता है। लेकिन वीर तो कायर के समान बकते नहीं। वे युद्ध क्षेत्र में वीरता का कार्य करते हैं। वे अपने को बड़ा बनाकर दिखाने की चेष्टा नहीं करते। कायर तो युद्धक्षेत्र में दुश्मनों की उपस्थिति से अपने प्रताप की डींग मारते हैं। लेकिन वीरता का कार्य कुछ भी नहीं करते। [२]

तुच्छ वस्तु का भी सम्मान होता है। वस्तु तुच्छ होने पर भी उसका सम्मान अवश्य होना चाहिए। प्रत्येक प्रकार के कीड़ों से रेशम बनता है। फिर इससे सुन्दर रेशमी कपड़ा बना जाता है। कीड़ा तो तुच्छ है। लेकिन

१- छिद्यो न तरुनि कटाच्छ सर करेउ न कठिन सनेहु।
तुलसी तिन की देह को जगत कवच करि लेहु ।।
दोहावली-पृष्ठ-१४६

२- सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु।
विद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ।।
दोहावली-पृष्ठ-१५०

रेशम तो कितना मूल्यवान होता है । इसी कारण वह कीडा सम्मान प्राप्त करने होने योग्य है । वस्तु चाहे कितनी भी तुच्छ हो, कोई बात नहीं । १

ऐश्वर्य,शक्ति , अधिकार आदि का दुरूपयोग नहीं करना चाहिए । योग का दुरूपयोग नहीं करना चाहिए । उसका सदुपयोग होना है । प्राप्त धन की रक्षा करने का उत्तरदायित्व हमारे ऊपर है । वैसे ऐश्वर्य सदा केलिए बनाए रखना है । उसमें कलंक न लगने पावें । वैसे शक्ति और अधिकार की भी रक्षा होनी चाहिए । सभी का सदुपयोग होना चाहिए । २

सभी अपने अपने क्षेत्र में प्रवीण है । रसिक ही उस रस के गुण-दोष पर विचार कर सकता है । अपनी पसन्द के रस में लीन होने पर वह आनन्दानुभूति में मग्न हो जाता है । अपनी इच्छा के अनुसार रस में आनन्द ले सकते है । गुण-दोष विवेचन की शक्ति तो रसिकजनों में ही होती है, दूसरों में नहीं होती । वे ही इस पर ज्ञान रखनेवाले होते हैं । ३

१- पाट कीट तें होइ तेहि तें पाटंबर रुचिर ।
   कृमि पालइ सबु कोइ परम अपावन प्रान सम ।
         दोहावली-पृष्ठ-१२७

२- जाय जोग जग छेम बिनु तुलसी कैहित राखि ।
   बिनु पराध भृगुपति नहुष बिनु बृकासुर राखि ।
         दोहावली-पृष्ठ-१६२

३- जो जो जेहि जेहिं रस मगन तहं सो मुदित मन मानि ।
   रसगुन दोष बिचारिबो रसिक रीति पहिचानि ।।
         दोहावली-पृष्ठ-१२७

सच्ची गुणग्राहकता :

वस्तुओं के गुणों का मूल्य समझना चाहिए । दूसरे लोगों के आदर- अनादर का प्रश्न नहीं उठता । जंगली लोग गजमुक्ता पर कोई मूल्य नहीं देते । उनकी नज़र में इसकी कुछ भी प्रधानता नहीं । मगर इससे गजमुक्ता का मूल्य नष्ट नहीं होता । लेकिन भगवान श्रीकृष्ण घुंघची के आभूषण को अत्यधिक प्रिय मानकर उसे पहनते थे । फिर भी घुंघुची का महत्व नहीं बढ़ गया । कोई इसे पहनता भी नहीं । [१]

महान लोगों की महिमा :

चन्द्रमा में सूरज के समान संसार भर को प्रकाशमान करने की शक्ति नहीं रहती । चाहे सोलह कलाओं वाले चन्द्रमा के साथ सभी तारागण भी उदित हो जाए , तो भी कोई फायदा नहीं । यदि इसके साथ साथ पहाड़ों में आग लगा दी जाय और उसका प्रकाश भी मिल जाए तो भी सूर्य के प्रकाश के पास तक न आ जाएगा । सूर्य की किरणें अत्यन्त तेजस्वी है । एक मात्र जिसमें रात के अन्धकार को मिटाने की शक्ति रहती है । स्पष्ट है कि महान लोगों की महिमा कोई नहीं पा सकता । [२]

१- निज गुन घटत न नाग नग परखि परिहरत कोल ।
तुलसी प्रभु भूषन किए गुंजा बढ़े न मोल ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२७ १३२

२- राकापति षोडस उवहिं तारा गन समुदाइ ।
सकल गिरिन्ह दव लाइअ बिनु रबि राति न जाइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१३२
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

ईर्ष्या का दोष :

दूसरों की भलाई देखकर जलने वाले लोगों का कल्याण कभी नहीं होता । उन्हें दूसरों की सुख-संपत्ति पर अत्यधिक अशान्ति पैदा होती है । ईर्ष्या की आग में वे हमेशा जलते रहते हैं । भाग्य देवता कभी उनका साथ नहीं देती । उनकी भलाई होना असंभव है । उन्हें अकल्याण ही होता रहता है । [१]

निन्दा करना बुरी आदत है । किसी की निन्दा करने का अधिकारी हमें नहीं क्यों कि संसार भर के सभी लोग, किसी न किसी दोष से युक्त हैं । स्वार्थता-वश अपनी कीर्ति चाहकर दूसरों की कीर्ति मिटाना कितनी बुरी बात है । ऐसे लोगों के मुंह कालिमा छा जाती है जो करोड़ों प्रयत्न करने पर भी कभी मिटती नहीं । मरते दम तक वह कालिमा बनी रहती है । [२]

कीर्ति कर्म के अनुसार होती है । जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चार पुरुषार्थों से युक्त होता है वही श्रेष्ठ पुरुष है । लेकिन इन पुरुषार्थों से हीन व्यक्ति मुक्त हो जाने पर अर्थात् इस लौकिक जीवन लीला समाप्त हो जाने पर उसकी कीर्ति नहीं होती । अजामिल किसी भी प्रकार का सत्कर्म नहीं करता था । लेकिन मरते वक्त उसने 'नारायण' नाम का उच्चारण किया जो विष्णु के नामों में एक है । इसी कारण वह स्वर्ग पहुंच गया । भगवन्नाम का उच्चारण अगर उसने नहीं किया तो वह अवश्य नरक में

१- पर सुख संपति देखि सुनि जरहिं जे जड़ बिनु आगि ।
तुलसी तिन के भागते चले भलाई भागि ।।
दोहावली-पृष्ठ-१३२

२- तुलसी जे कीरति चहहिं पर की कीरति खोइ ।
तिनके मुंह मसि लागि हैं मिटिहि न मरिहै धोइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१३३

पड सकता था । कर्म की श्रेष्ठता से कीर्ति स्वयं आ जाती है । १

समर्थ और असमर्थ पुरुष की तुलना । संसार का साधारण नियम यह है कि समर्थ या अच्छे पुरुष सभी भलाई चाहते है और भलाई करनेवाले लोगों को प्यार भी करते हैं । लेकिन असमर्थ व्यक्ति तो केवल अपनी भलाई चाहता है । वह स्वार्थी होता है । २

साधना का महत्व । साधना से मनुष्य ऊपर उठ जाता है । साधन बिना उसका पतन हो जाता है । मोर का पंख अत्यधिक कलापूर्ण ढंग से सजाया गया है । पंख नीची पडने पर उसमें आकर्षकता नहीं रहती । इसमें मेघ को प्रधान साधक के रूप में माना गया है । ३

एकता का महत्व :

आपस में मेल रखना बहुत उत्तम है । पृथ्वी, आकाश, जल इन तीनों स्थलों पर रहनेवाले पक्षी अत्यधिक एकता से जीनेवाले हैं । वे आपस में झगडते नहीं । वे मिल जुलकर खाते-पीते हैं । साथ साथ चलते फिरते हैं ।

१- तुलसी निज करतूति बिनु मुकुत जात सब कोइ ।
गयो अजामिल लोक हरि नाम सक्यो नहिं धोइ ।
दोहावली-पृष्ठ-१८२

२- सबहि समरथहि सुखद प्रिय अच्छम प्रिय हितकारी ।
कबहुं न काहुहि राम प्रिय तुलसी कहा बिचारि ।
दोहावली-पृष्ठ-३४

३- उरबी परि कलहीन होइ ऊपर कला प्रधान ।
तुलसी देखु कलाप गति साधन घन पहिचान ।।
दोहावली-पृष्ठ-१८४

यह देखकर मनुष्य को लज्जित होना पड़ता है । गोस्वामीजी का कथन है कि उनके जीवन से मनुष्य को यह सीखना है कि एकता से जीना अत्यधिक सुन्दर होता है । १

एकरसता जीने वाला ही उत्तम पुरुष है । समता में स्थिर रहनेवाले पुरुष ही श्रेष्ठ हैं । प्रशंसा के पात्र रहनेवाले पुरुष जो हैं, उसका ठीक जांच करना है । अपनी कामनाओं की पूर्ति केलिए वे ठीक रास्ते पर साधन किया करते हैं । उचित समय ही वे यह कार्य करने केलिए चुन लेते हैं । इस प्रकार साधन करने से अवश्य सिद्धि की प्राप्ति होती है । लेकिन सिद्धि की प्राप्ति होने पर भी हमेशा एक रस रहनेवाले पुरुष ही संसार में यश के पात्र होंगे । उन्हें सभी लोग आदर दृष्टि से देखते हैं ।

काल कभी रुकता नहीं । गोस्वामीजी अग्नि,समुद्र, स्त्री, काल आदि की समानता पर प्रकाश डालते है । प्रचण्ड अग्नि के सामने हम कुछ भी नहीं कर सकते । सभी वस्तुओं को जलाकर भस्म कर डालने की क्षमता उसमें होती है । समुद्र अपने कुक्ष में पड़ी वस्तुओं को निगल डालता है । प्रबल स्त्री कटाक्ष विक्षेपों से सभी लोगों को अपने इशारे पर नचाती हैं । वे इन्हें अपने पैरों के नीचे लाती है । काल के अजस्र प्रवाह में पड़कर मनुष्य स्वयं नष्ट होता है । काल अपनी राह पर सभी को लेकर चलता है । [३]

१- गो खग खे खग बारि खग तीनों माहिं बिसेक ।
तुलसी पीबैं फिरि चलैं रहैं फिरैं संग एक ।।
दोहावली-पृष्ठ-१८५

२- साधन समय सुसिद्धि लहि उभय मूल अनुकूल ।
तुलसी तीनिउ समय सम ते महि मंगल मूल ।।
दोहावली-पृष्ठ-१८५

३- काह न पावक जारि सक का न समुद्र समाइ ।
का न करै अबला प्रबल केहि जग कालु न खाइ ।
दोहावली-पृष्ठ-६२

साधन और फल प्राप्ति का सबन्ध । इन दोनों का अखण्ड संबन्ध है । बहुत कष्ट भोगकर साधना की जाती है । तभी फल की प्राप्ति होती है और अखण्ड आनन्द का अनुभव होता है । कवि का मत है चातक का प्रेम और मेघ की बुद्धि अनुकरणीय है । वैसा प्रेम और वैसी बुद्धिवाले बहुत विरले हैं । अनेक कष्टों का सामना करने पडे तो भी बादल के प्रति उसके प्रेम में कमी कभी नहीं होती, प्रेम बढ़ता ही रहता है । मेघ तो उसका ऋणी बना रहता है । [१]

मिथ्याभिमान करना तो बुरा है । कुछ लोग तो अपने शरीर की सुन्दरता पर अभिमान करते हैं और कुछ तो अपने अच्छे गुणों पर और कुछ लोग अपनी धन-संपधि पर बडप्पन पर, या धार्मिक निष्ठा पर अभिमान करते हैं । इससे उन व्यक्तियों के नाम पर कलंक लग जाता है । उनकी दुर्गति ही होती है । उसका परिणाम भी अच्छा नहीं और मरण के उपरान्त भी उसे शान्ति या अच्छी गति नहीं मिलती । [२]

नैतिक उक्ति :

सांप से अधिक अफीम से डरना चाहिए । अफीम सांप से भी भयंकर होती है । कारण यह है कि सांप के काटने से शरीर में विष फैल

१- साधन सांसति सब सहत सबहि सुखद फल लाहु ।
तुलसी चातक जलद की रीझि बूझि बुध काहु ।
दोहावली-पृष्ठ-१००

२- तनु गुन धन महिमा धरम तेहि बिनु जेहि अभिमान ।
तुलसी जिअत बिडंबना परिनामहु गत जान ।।
दोहावली-पृष्ठ-१३३
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

जाता है और वह मर जाता है। अफीम एक प्रकार का मादक पदार्थ है जिसके खाने से प्राण नहीं निकल जाते। लेकिन अफीम खानेवाला जीवित रहकर भी प्राणहीन के समन हो जाता है। अर्थात् उसमें परिस्थिति विशेष का बोध नहीं रहता। वह सारी बातें भूल जाता है। इसी कारण अफीम को तीक्ष्ण कहा। [१]

विरागी का जीवन धन्य है। कामना रहित व्यक्ति का कल्याण सुनिश्चित है। इच्छाएं रखना महान मूर्खता है। कामना दुःख का मूल कारण है। बहुत कामनायें रखने पर उसका अकल्याण ही होता है। वह बातें बनाने में समर्थ होता है। वह किसी निश्चित आचरण या व्यवहार पर अटल नहीं रहता। उसमें परिवर्तन होता रहता है। उसका कल्याण चाहने में कोई सार्थकता नहीं। [२]

सीधों को सभी कष्ट पहुंचाते हैं। सारे लोग इन्हीं को विषमता में डालते हैं। वक्र गति वालों पर यह आपत्ति नहीं होती। उन्हें तंग करनेवाले नहीं होंगे। सीधी और वक्र-चाल चलने वाले दोनों प्रकार के ग्रह होते हैं। वक्र गति से चलनेवाले - मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि - इन ग्रहों को राहु से कोई हानि

१- ब्यालहु तें बिकराल बड़ ब्याल फेन जियं जान।
वहि के खाएं मरत है वहि खाएं बिनु प्रानु।
दोहावली-पृष्ठ-१७२

२- बहु सुत बहु रुचि बहु बचन बहु अचार ब्यवहार।
इनको भलो मनाइबो यह अग्यान अपार।।
पृष्ठ-१६८

नहीं होती। लेकिन सीधे मार्ग पर चलनेवाले सूर्य, चन्द्रमा इन ग्रहों को राहु भय उत्पन्न करता है। यह सुना है कि बढ़ई सीधे वृक्षों को ही काटते हैं, टेढ़े-मेढ़े तरुवों को काटता नहीं।[१]

सांसारिकता से वैराग्य। मन को संबोधित कर गोस्वामीजी कहते है कि सांसारिक पदार्थों से प्रीति जोड़ना उचित नहीं। वे सभी पदार्थ मायामोह में फंसानेवाले हैं। उनसे नाता तोड़ना अच्छा है। राम से प्रेम रखना ही श्रेष्ठ है। २

प्रसन्नचित से भीख देना। गोस्वामीजी उस भीख को श्रेष्ठ मानते है जो बिना छल-कपट के मिलती है। कुछ लोग प्रसन्न-चित से भीख नहीं देते। उनकी शिकायत करके देते है। इस प्रकार देने से कोई फायदा नहीं। दूसरों को कष्ट पहुंचाकर भीख लेना भी अच्छा नहीं।[३]

भलाई करनेवाले बहुत विरले ही होते हैं। बुराई करने में कौन असमर्थ है? कोई भी नहीं। हाथी, सिंह, चंवरी गाय, बंदर आदि जानवर तो

१- सरल बक्र गति पंच ग्रह चपरि न चितवन काहु।
तुलसी सूधे सूर ससि समय बिडंबित राहु॥
दोहावली-पृष्ठ-१३५

२- रे मन सब सों निरस ह्वै सरस राम सों होहि।
भलो सिखावन देत है निसि दिन तुलसी तोहि॥
दोहावली-पृष्ठ-२८

३- बिनु प्रपंच छल भीख भलि लहिअ न दिए कलेस।
बावन बलि सों छल कियो दियो उचित उपदेस॥
दोहावली-पृष्ठ-१३४
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

सूंड, दांत, सींग और पूंछ से दूसरों पर आक्रमण करते हैं। वे भलाई करने में पीछे ही रहते हैं। भलाई करने में कुछ लोग ही समर्थ होते हैं।[१]

अच्छे मनुष्यों और पदार्थों की कमी :

सभी को जीवन प्रदान करनेवाला अमृत देखने को नहीं मिलता। उल्टे विष तो दुर्लभ नहीं है। वह सुलभ है। उल्लू, कौए, बगुले जैसे पक्षी सब कहीं विद्यमान हैं। ये पक्षी तो उतने पवित्र नहीं जितने हंस होते हैं। मानसरोवर के पावन सलिल में सदा विहार करनेवाले हंस तो देखने में कितना पवित्र होता है। पराये हित केलिए अपने शरीर को भी समर्पित करनेवाले संत लोग सब कहीं दीख नहीं पडते। अहित करनेवाले सब कहीं दीख पडते हैं।[२]

सत्य का महत्व :

गोस्वामीजी सत्य के महान समर्थक है। महाराज दशरथ ने तो सत्य का पालन करने केलिए अपने आप को बलिदान कर दिया। उन्हीं के शब्दों में गोस्वामीजी का कथन है कि सत्य के समान दूसरा कोई धर्म नहीं है।[३]

१- ग्यान अनभलो को सबहि भले भलेहू काउ।
सींग सूंड रद लूम नख करत जीव जड़ घाउ।
दोहावली-पृष्ठ-११६

२- सुनिअ सुधा देखिअहिं गरल सब करतूति कराल।
जहं तहं काक उलूक बक मानस सकृत मराल।
दोहावली-पृष्ठ-११६

३- तुलसी जान्यो दसरथहिं धरमु न सत्य समान।
रामु तजे जेहि लागि बिनु राम परिहरे प्रान।।
दोहावली-पृष्ठ-७६

वस्तु पर प्रधानता देना :

आधार को प्रधानता न देकर वस्तु को प्रधानता देनी चाहिए । आधार जो भी हो, कोई बात नहीं । शराब अगर मणिमय बर्तन में रख दिया जाय, तो भी उसका मूल्य बढ़ता नहीं । चाहे वह मिट्टी के बरतन पर रख दिया जाय, तो भी उसका मूल्य कभी कम नहीं होता । मिट्टी का बर्तन होने पर भी उसके अन्दर की वस्तु पर अधिक ध्यान देना है । अच्छी वस्तु के रहने का स्थान जहां भी हो, कोई बात नहीं, उसे ग्रहण करना है । बुरी वस्तु अच्छे स्थान में रहने पर भी उसकी उपेक्षा करनी ही चाहिए । [1]

शान्ति और सन्तोष का अभेद्य संबन्ध है :

शान्ति की प्राप्ति केलिए सन्तोष की ज़रूरत है । सन्तोष के बिना कभी शान्ति का अनुभव नहीं कर सकता । नाव चलाने केलिए जल की अत्यधिक ज़रूरत है । जल के बिना नाव चलाने का आग्रह भी नहीं कर सकता ।[2]

जन्म का स्वभाव आदमी कभी नहीं छोड़ता । गुणी मनुष्य मरते दम तक गुण का साथ नहीं छोड़ता । चाहे किसी भी प्रकार की विषम-परिस्थिति आवे । कुटिल और कपटी व्यक्ति अन्तिम समय तक कपटता का

१- मनि भाजन मधु पारई पूरन अमी निहारि ।
   का छांड़िअ का संग्रहिअ कहहु बिबेक बिचारि ।
   दोहावली-पृष्ठ-१२१

२- कोउ बिश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु ।
   चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिअ ।।
   दोहावली-पृष्ट-६५

साथ नहीं छोड़ता । वह कपट से मैत्री जोड़ता रहता है । उदाहरणार्थ जटायु और मारीच को ले सकते है । जीवन के अन्तिम निमिष तक जटायु परिहित केलिए काम करता रहा । मारीच तो कुटिल प्रवृत्तियों में मग्न रहा यही इन दोनों में अन्तर है ।[१]

इस प्रकार हम देखते हैं कि दोहावली में बहुत सुक्तियों की प्राप्ति होती है । प्रत्येक सुक्ति का अध्ययन किया गया है ।

१- सुकृत न सुकृती परिहरइ कपट न कपटी नीच ।
मरत सिखावन देइ चले गीधराज मारीच ।।
दोहावली-पृष्ठ-११७
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

oooooooooooooooooo

छ ठा अ ध्या य

oooooooooooooooooo

दूसरे काव्यों की सूक्तियों का विशद अध्ययन

विनयपत्रिका,

बरवै रामायण,

कृष्णगीतावली,

कवितावली,

जानकीमंगल,

रामाज्ञाप्रश्न,

गीतावली,

पार्वतीमंगल,

वैराग्य सन्दीपनी,

ह नु मा न बा हु क

विनयपत्रिका

विनयपत्रिका गोस्वामीजी की एक उत्कृष्ट रचना है। इस ग्रन्थ में गोस्वामीजी का समन्वयात्मक दृष्टिकोण झलकता है। उनके इष्टदेव राम होने पर भी वे शिवजी के भी परम भक्त थे। उनके मत में वही भक्ति सराहनीय है, जिसमें राम और शिव दोनों के प्रति प्रीति समाहित हो। गोस्वामीजी के इस समन्वयात्मक दृष्टिकोण ने भक्तिकाल के धार्मिक क्षेत्र के विद्रोहों को समाप्त कर दिया। इस ग्रन्थ में गोस्वामीजी ने अपने वैयक्तिक जीवन पर भी प्रकाश डाला है।

भगवान शिव के प्रति गोस्वामीजी की भक्ति-भावना उनकी विनयपत्रिका, पार्वतीमंगल इन दोनों रचनाओं से स्पष्ट मालूम पड़ती है। 'मानस' में भी शिव और पार्वती से सम्बन्धित कुछ प्रसंगों का उल्लेख मिलता है। 'मानस' के दो तीन प्रसंगों पर उन्होंने कहा है कि शिवजी के चरण-कमलों के प्रति जिस रामभक्त के हृदय में पूज्य-भावना नहीं, वह कभी सराहने योग्य नहीं बनता। 'विनयपत्रिका' की आरंभिक कई पंक्तियों में उन्होंने विविध रूप से शिवजी की महिमा का गान किया है।

शिव की महिमा

शिवजी का भजन करने से मंगल अवश्य होता है। वे जल्दी प्रसन्न होने वाले हैं। उनकी सेवा में तल्लीन रहने से वे सन्तुष्ट होकर हमारे सारे अभीष्टों की पूर्ति कर डालते हैं। कल्पवृक्ष जैसे सभी कामनाओं की पूर्ति कर डालता है, वैसे ही शिवजी को प्रसन्न कर देने से वे भी इष्ट वरदान दे देते हैं।

उनको प्रसन्न रखना भंभटों को दूर करने केलिए बहुत आवश्यक है। [१]

शिवजी से विमुख रहना अच्छा नहीं। शिवजी से विमुख रहनेवाले का कल्याण कभी नहीं होता। शिवजी की उपेक्षा कर अन्य देवतावों की आराधना करना या उनसे वर मांगना कितना निंद्य बात है। वे लोग मूर्ख अवश्य हैं। गोस्वामीजी के मत में उन्हें हमेशा भूखा रहना पड़ता है। यह उनकी करनी का फल होता है। मुक्ति प्राप्त करना उनकेलिए असंभव बात है। मुक्ति की इच्छा भी वे नहीं कर सकते। क्योंकि सिर्फ इच्छा करने से कोई फायदा नहीं होता। [२]

शिवजी की सेवा का महत्व

शिव-भक्त को सारे मंगल स्वयं आ जाते है। शिवजी की कृपा-दृष्टि का पात्र बननेवाला व्यक्तिज्ञान से अभिमण्डित होता है। वह विरागी बन जाता है। काफी मात्रा में उसे धन की प्राप्ति होती है, धर्म की दृष्टि से भी वह सफल रहता है। सारा सौभाग्य उसके पास स्वयं आ जाता है।[३]

१- सेवक कल्पतरु उदार कल्पतरु पारवती पति परम सुजान।
देहु काम रिपु राम चरन रति, तुलसीदास कहं कृपानिधान।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-६३

२- ईस उदार उमापति परिहरि अनत जो जाचन जाहीं।
तुलसीदास ते मूढ़ मांगने कबहुं न पेट अघाहीं।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-६६

३-बिनु तव कृपा राम पद पंकज सपनेहुं भगति न होई।
कृणय सिद्ध मुनि मनुज दनुज सुर अपर जीव जगमाहीं।
तुव पद विमुख न पार पाव कोउ, कलप कोटि चलि जाहीं।
मोह निहार दिवाकर संकर सरन सोक भयहारी ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-७२

शिवजी की सेवा करने से सुख संपत्ति स्वयं आ जाती है, सुबुद्धि का उदय भी होता है। मुक्ति उसे दूर की बात नहीं रह जाती। उसे कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता। शिवजी अपने शरणार्थी को कभी दु:खी नहीं बनने देते। वे उसकी उपेक्षा कभी नहीं करते। दु:ख दूर करने में शिवजी कभी पीछे नहीं रहते। शरणार्थियों की सभी इच्छायें वे पूरी कर देते हैं। [१]

शिव की आराधना का महत्व:

गोस्वामीजी शिव की चरणधूलि को अत्यधिक पवित्र मानते है, क्योंकि उसका सेवन करने से कल्याण होता है। शिव मुक्ति चाहनेवाले को अवश्य मुक्ति दे देते हैं। चाहे विधाता मुक्ति दिला सकने की इच्छा न रखते हों तो भी शिव मुक्ति दिला सकते है। सांसारिक ज्ञान प्राप्त करने केलिए मनुष्य को शिव की कृपा की आवश्यकता है। उसके बिना घोर प्रयत्न करने पर भी वे सारे प्रयत्न धूल में मिल जाते है। केवल शिवजी हमें विवेकी बना देते है। [२]

काशी स्तुति :

काशी की सेवा करने से कल्याण होता है, सारी मनोकामनायें पूर्ण हो जाती है। जीवन-भर पुण्य स्थली काशी का प्रेमपूर्वक सेवन करना कितना

१- सुख संपति सुगति सुहाई। सकल सुलभ संकर सेवकाई।
गये सरन आस कै लीन्हें। निरखि निहाल निमिष महं कीन्हें
विनयपत्रिका-पृष्ठ-६६

२- सेवहु सिव चरन सरोज रेनु। कल्यान अखिल प्रद कामधेनु।
जिन्ह कहँ विधि सुगति न लिखी भाल तिन्ह की गति कासीपति कृपाल
बहु कल्प उपायन करि अनके। बिनु संभु कृपा नहीं भव विवेक।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-८५

कितना श्रेष्ठ है। हमारे सारे दु:खों का अन्त हो जाता है, पाप नष्ट होकर आदमी नीरोग बन जाते हैं। सभी प्रकार से हम सुखी जीवन बिता सकते हैं।[१]

राम-नाम -स्मरण महिमा :

राम-नाम पर गोस्वामीजी की आस्था कई प्रसंगों से स्पष्ट हो गयी है। इस पवित्र नाम का स्मरण करने से कामनायें पूरी हो जाती हैं। नाम-स्मरण से भव-दु:ख दूर हो जाते हैं। [२]

राम-नाम जप से सारा सौभाग्य स्वयं आ जाता है। गोस्वामीजी मूर्ख लोगों को सदा राम-नाम जपने का उपदेश देते हैं। यह नाम सुखों की खान और वेदों का सार है। अत्यधिक आत्मविश्वास के साथ नाम का जप करना है।[३]

कलियुग में राम-नाम का जप अत्यन्त श्रेष्ठ है :

नाम-जप करनेवाले को कर्मकाण्ड पर अधिक ध्यान देने की जरूरत नहीं। राम -नाम में अमृत के समान अद्भुत शक्ति रहती है। राम-नाम रूपी

१- सेइय सहित सनेह देह भरि कामधेनु कलि कासी।
समनि सोक संताप पाप रुज सकल सुमंगल रासी।
पंचाच्छरी प्रान मुद माधव गव्य सुपंचनदा सी।
दोहावली-पृष्ठ-६६

२- राम नाम जप जाग करत नित मज्जन पय पावन पीयत जलु।
करिहैं राम भावतो मन को सुख साधन अनायास महाफलु।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१०४

३- सदा राम जपु राम जपु राम जपु राम जपु, राम जपु मूढ़ मन।
सकल सौभाग्य सुख खानि जिय जानि सठ मानि बिस्वास बद बेदसार।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१४८

अमृत का पान करनेवाले तप, होम, यज्ञ आदि कर्म न करे तो भी कोई बात नहीं। केवल नाम-जप से उसे उपर्युक्त कर्मों का पुण्य फल प्राप्त होता है। लेकिन नाम का जप न करके उपर्युक्त कर्म करने से कोई फायदा नहीं होता। तब इन कर्मों का कोई महत्व नहीं रह जाता। नाम-जप से आदमी की मलिन-बुद्धि पवित्र हो जाती है। राम-नाम का जादू का सा प्रभाव सभी पर पड़ता है।[1]

इस नाम के लेने से उसका उद्धार अवश्य होता है। राम-नाम ही उसे गति देता है। उसी में चित को छूत करके, उस नाम से प्रेम का संबन्ध होकर राम-नाम जप में मग्न होना है।[2]

राम-नाम ही संसार सागर को पार करने का माध्यम है। गोस्वामीजी कहते - अगाध भवसागर पार करने का एकमात्र नौका राम-नाम है। उसी के प्रभाव से सारी सिद्धियों को प्राप्त किया जा सकता है। राम ही

१- तेन तप्तं हुतं दत्त मेवाखिलं तेन सर्वं कृतं कर्मजालं।
येन श्रीराम नामामृतं पानकृतमनिसमनवद्यमवलोक्यकालं।
सुपच खल मिल्लू जमनादि हरि लोक गत नाम बल विपुल मति मलिनपरसी।
त्यागि सब आस संत्रास भव पास असि निसित हरि नाम जपु दास तुलसी।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१४८

२- राम नाम गति, राम नाम-मति राम नाम अनुरागी।
ह्वै गये हैं जे हो हिंगे, त्रिभुवन तेइ गनियत बड़ भागी।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि निरूपधि नेम निबाहै।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१६६

एकमात्र हमारा रक्षक है, मरते वक्त उनके नाम का स्मरण करना कितना श्रेष्ठ होता है। सभी सांसारिक सुख मिथ्या है। वास्तविक सुख कुछ भी नहीं है। माया इसके अन्दर काम करती है। राम नाम की उपेक्षा कर दूसरों पर भरोसा रखना कितनी हेय बात है। [१]

कुटिलताओं से भरे कलियुग में पवित्र मन से राम की भक्ति करनी चाहिए। प्रेम से नाम जपकर उसी में मग्न होना है। दूसरे साधनों से मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती। कलियुगीन बाधाओं को राम-नाम पार कर सकता है। कल्पवृक्ष रूपी राम-नाम सारे अभीष्टों की पूर्ति और पुरुषार्थों

(अ) आगम विधि जप-जाग करत नर सरत न काज खरो सो।
सुख सपनेहु न जोग सिधि साधन रोग बियोग धरो सो।
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरै मरो सो।
राम नाम बोहित भव सागर चाहै तरन तरो सो।
विजयपत्रिका-पृष्ठ-३७५
राजनाथ शर्मा- संपादक

१- राम जपु राम जपु राम जपु बावरे। घोर भव नीर निधि नाम निज नाव रे।
एक ही साधन सब सिद्धि सिद्धि साधि रे। ग्रसे कलि रोग जोग संजम समाधि रे।
भलो जो है पोच जो है, दाहिनो जो नाम रे।
राम नाम ही सों अन्त सब ही को काम रे।
जग नभ वाटिका रही है फलि फूलि रे।
धुवां कैसे धौरहर देखि तू न भूलि रे।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२०९

की सिद्धि करा देते है । [१]

राम नाम का जप न करने पर तीनों तापों से उसे दग्ध रहना पडता है । दैहिक,दैविक,भौतिक- ये तीनों दुःख पहुंचाते रहते हैं । और कहीं भी जाने पर भी यह मन शान्त नहीं होता । शान्त होने केलिए राम-नाम का सहारा चाहिए| गोस्वामीजी कहते है कि राम नाम का स्मरण नहीं करने से गंगा के तीर पर बसनेवाला होने पर भी पानी नहीं मिल सकता, उसकी प्यास कभी बुझती भी नहीं । वैसे कल्पवृक्ष के पास रहने पर भी उसे दरिद्रता भोगनी पडती है । केवल राम ही उसके कष्ट को दूर कर सकते है । चिन्ताओं से मुक्त होकर सुख से वह सो भी नहीं सकता । उसका सपना भी बुरा होता है । युग तक रोता कलपता हुआ जीवन बिताना पडता है । आवागमन के बन्धन से वह कभी मुक्त नहीं हो सकता । [२]

१- ~~राम नाम छांडि जो भरोसो करे ।~~

२- राम नाम जपु जिय सदा सानुराग रे । कलि न बिराग जोग जाग तप त्याग रे ।
राम सुमिरन सब बिधि ही को राज रे । राम को बिसारिबो निषेध सिरताज रे
राम नाम कामतरु देत फल चारि रे । कहत पुरान वेद पंडित पुरारि रे ।
राम नाम प्रेम परमारथ को सार रे । राम नाम तुलसी को जीवन अधार रे ।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२०२

२- राम राम राम जीह जौ लौं तू न जपिहै । तौ लौं तू कहूंही जाय तिहूं ताप तपिहै ।
सुरसरि तीर बिनु नीर दुख पाइहै । सुरतरु तरे तोहि दारिद सताइहै ।
जागत बागत सपने न सुख सोइहै । जनम जनम जुग जुग जग रोइहै ।
छूटिबे के जतन बिसेष बांधो जायगो । ह्वै है विष भोजन भोजन जो सुधा सानि खायगा ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२०५
संपादक-राजनाथ शर्मा

असहाय व्यक्ति का एकमात्र सहारा राम नाम है। अत्यधिक प्रेम और लगन से राम-नाम जपना चाहिए। दु:ख की अवस्था में सच्चा मित्र दिल खोलकर उसकी सहायता करता है, उसे धैर्य दिलाता है। वैसे राम दु:ख की हालत में अपने भक्त के दु:खों को दूर कर देते हैं। अभागे व्यक्तियों को राम सुधार लेते हैं। उसे भाग्यवान बना देते हैं, मूर्ख को विद्वान ,नीच कुलवाले को ऊँचे कुलवाले बना देते हैं। वे लंगड़ों के हाथ,पैर ,अन्धों की आंख के समान है। पतित लोगों का उद्धार करनेवाला एकमात्र व्यक्ति राम है। [1]

राम-नाम का स्मरण करने से चारों पुरुषार्थों को प्राप्त कर सकते हैं। कल्पतरु जैसे सभी कामनाओं की पूर्ति कर डालता है वैसे राम नाम भी। स्वार्थ, परमार्थ दोनों की सिद्धि हो जाती है। इस लोक और परलोक में वह सन्तुष्ट जीवन बिता सकता है। [2]

भगवान का नाम लेने से वह सांसारिक आवागमन से मुक्त हो जाता है। बारंबार जन्म लेना और मरना कितनी शोचनीय बात है। उससे मुक्ति दिलाने की सामर्थ्य केवल रामजी में रहती है। केवल भगवान के भक्त को ही इस भाग्य की सिद्धि हो सकती है। भगवान भक्त के हित केलिए कितनी ही बार जन्म ग्रहण करते हैं। [3]

१- ~~तुलसी तिलोक तिहूं काल~~ तोसे दीन को।

२- सुमिर सनेह सों तू नाम राम राय को।
संबल निसंबल को सखा असहाय को भग है।
विनयपत्रिका,-पृष्ठ-२०५

२- राम नाम कामतरु जोइ जोइ मांगि। तुलसीदास स्वारथ परमारथ न खांगि।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२०६

३- जाको नाम लिये छूटत भव-जन्म मरु दुख भार।
अंबरीष हित लागि कृपानिधि सोइ जनमे दस बार।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२८६

नाम-जप करते रहने से मंगल का विधान होता है। वैसे कलि-युगीन मलिनतायें तुरन्त नष्ट हो जाती हैं। हम जिस प्रकार का कर्म करते है उसी के अनुसार फल मिल जाता है। बुरे कर्म करने से सुख नहीं मिलता। बबूल वृक्ष के बीज से उत्पन्न पौधा उसी का फल देता है, दूसरे का नहीं देता। गोस्वामीजी काल,कर्म,गुण,स्वभाव इनको दु:ख के कारण मानते हैं। लेकिन राम नाम के प्रभाव से उपर्युक्त चारों दब जाते है। काल किसी की प्रतीक्षा न करके बीतता जाता है। मनुष्य कर्म जाल में स्वयं बंधित होता है। पापों का नाश करके राम-नाम अमूल्य-मणि के समान प्रकाशमान होता है। नाम पर अत्यधिक विश्वास रखना बहुत आवश्यक है। [१]

राम-नाम विघ्न-बाधाओं को दूर कर देता है। शरण की भीख मांगकर आनेवालों का राम निराश नहीं लौटाते। उन्हें कुछ न कुछ अवश्य दे देते है। वज्र का पिंजड़ा तो कभी मिटनेवाला नहीं। नाम को भी गोस्वामीजी ने यों माना है। शरणागत जब नाम के इस पिंजड़े में सुरक्षित रहता है। बाहरी आघातों से वह एकदम मुक्त रहता है। राम-नाम केप्रेमी विघ्नों से दूर रहते हैं। [२]

१- राम,राम,राम,राम,राम,राम जपत, मंगल मुद उदित होत कलिमल छल छपत।
कहु के लहे फल रसाल, बबुर बीज बपत। हरहि जनि जनम जाय गाल गूल गपत।
काम करम गुन सुभाउ सबकै सीस तपत। राम नाम महिमा की चरचा चलो चपत।
साधन बिनु सिद्ध सकल विकल लोग लपत। कलिजुग बर बनिज बिपुर नाम नगर खपत
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२६४

२- प्रनतारति भंजन जन रंजन सरनागत पबि पंजर नाउं।
कीजै दास दास तुलसी अब कृपासिंधु बिनु मोल बिकाऊं।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-३४६
संपादक-राजनाथ शर्मा

कलियुग में कर्मकाण्ड कठिन होता है। धन का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है। धन ही सबका मूल होने के कारण उसी से सारा काम किया जाता था। काम,क्रोधादि विकार अपना अधिकार जमा चुके थे। इसी कारण जप,तप,योग आदि कर्म करना दुष्कर हो गया था। सिद्धि प्राप्त करने में कठिनाइयां सह लेनी पड़ी थीं। अनीतियों का राज होता था। राम-नाम ही इस हालत से जनता की रक्षा कर सकता है।[१]

कलियुग में राम-नाम के प्रभाव से दरिद्रता का नाश होता है। विपत्तियों का नाश तो ज़रूर होता है। विधाता भी हमारे वश में हो जाते हैं। राम-नाम के प्रभाव से भाग्य-लिपि में सुन्दर कार्यों का विधान होता है। अत्यधिक श्रद्धा और भक्ति के साथ नाम लेना चाहिए। तभी सिद्धि प्राप्त हो सकती है। नाम पर भरोसा रखें तो दोनों लोकों में भलाई हो।[२]

१- करम जाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित राम को।
ध्यान बिराग जोग जप मय लोम मोह कोह काम को।
सब दिन सब लायक भव गायक रघुनायक गुनग्राम को।
बैठे नाम काम तरु तर डर कौन घोर घन घाम को।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३४८

२- कलि नाम कामतरु राम को दलनिहार दारिद दुकाल दुख दोष।
नाम लेत दाहिनो होत मन बाम ब्रोर घन धाम को।
विधाता बाम को। कहत मुनीस महेस महातम
उलटे सूधे नाम को।
भलो लोक परलोक तासु जाके बल ललित ललाम को।तुलसी जग जानियत
नाम ते सोच न कूच मुकाम को।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३४६

संपादक-राजनाथ शर्मा

मन में अगर जलन होती है तो राम-नाम-जप से वह जलन मिट जाती है। तप,यज्ञ आदि साधनों से कोई फायदा नहीं। चित्रांकित सूर्य जिस प्रकार अन्धकार को दूर करने में असमर्थ होता है। उसी प्रकार कलियुग में इन साधनों का कोई महत्व नहीं होता। निष्ठा से इस नाम पर मन को स्थिर करें तो सारी विपत्तियां दूर होंगी। मुक्ति की प्राप्ति ज़रूर होगी। विश्वास और प्रीति से इस नाम का स्मरण करने पर राम की कृपादृष्टि के पात्र बनने का सौभाग्य प्राप्त होता है।[1]

जो व्यक्ति राम से अधिक राम नाम से प्रेम रखता है। उसकी भलाई होती है। कलियुग में आदि,मध्य और अन्तिम दशाओं में राम नाम से प्रेम रखना है। उसे दुःख का सामना नहीं करना पड़ता। काम,क्रोधादि विकार राम नाम के प्रभाव से दमित हो जाते हैं, विषयवासनाओं का कोई

१- राम नाम के जपे जाइ जिय की जरनि।
कलि काल अपार उपाय ते उपाय भये।।
जैसे तम नासिबे को चित्र के तरनि।
मति राम नाम ही सों रति राम नाम ही सों।
गति राम नाम ही की बिपति हरनि।
राम नाम सों प्रतीति प्रीति राखे कबहुंक।
तुलसी ढरेंगे राम आपनी ढरनि।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३६०
संपादक-राजनाथ शर्मा

अस्तित्व ही नहीं । बुरे विचारों को यह नाम मनुष्य के मन से दूर हटा देता है । सदा नाम रटन में लगे रहनेवाले मनुष्य कभी दुःखों से पीड़ित नहीं होते ।[१]

राम नाम के स्मरण के समान श्रेष्ठ साधन दूसरा कहीं भी नहीं है । इस ' नाम ' को धन मानकर गोस्वामीजी कहते हैं कि यह धन कभी समाप्त नहीं होनेवाला है । नाम पर भरोसा रखने से पुरुषार्थों की प्राप्ति हो जाती है । कपट की उपेक्षा कर पवित्र मन से नाम-स्मरण करना यज्ञ करने के ही समान श्रेष्ठ है । इससे मोक्ष सुख की प्राप्ति हो जाती है । लौकिक और पारलौकिक सुख भोगों की प्राप्ति उसे होती है । इसे छोड़कर अन्य कल्याणकारी साधन नहीं है ।[२]

१- प्रिय राम नाम तें जाहि न रामो । ताको भलो कठिन कलिकालहुं आदि मध्य परिनामो ।

सकुचत समुझि नाम महिमा मद लोभ मोह कोह कामो ।
राम नाम जप निरत सुजन पर करत छांह घोर घामो ।
राम तें अधिक नाम करतब जेहि किये नगर गत गामो ।
भये बजाइ दाहिने जो जपि तुलसीदास सो बामो ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६०

(१)राम जपु जीह जानि प्रीति सों प्रतीति मानि
राम नाम जपे जैहै जिय की जरनि ।।
राम नाम सों रहनि राम नाम की कहनि ।
कुटिल कलिमल सोक संकट हरनि ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४८५

२-राम रावरो नाम मेरो मातु पितु है । सुजन सनेही गुरु साहिब सखा सुहृद ।
राम नाम प्रेम पन अबिचल बितु है । सत कोटि चरित अपार दधि निधि मथि ।
लियो काढ़ि बामदेव नाम घृतु है । नाम को भरोसो बल चारिहूं फल हो फल ।।
सुमिरिय छांडि छल भलो कृतु है ।स्वारथ साधक परमारथ दायक नाम ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ -४८७

नाम जप से तीनों प्रकार के ताप दैहिक,दैविक और भौतिक मिट जाते है। इससे पतित लोगों का उद्धार भी हो सकता है। आदमी निडर होकर सब कुछ कर सकता है। जो प्रेम और विश्वास रखकर इस नाम का जप नहीं करता, वह अवश्य मूर्ख है। इस पवित्र नाम का स्मरण करने से शान्ति की उपलब्धि भी हो सकती है। [१]

राम नाम के अनन्य प्रेमी-भक्त केलिए पुण्य तीर्थों में जाने की जरूरत नहीं। तीर्थों पर जाने से जो फल मिलता है वह नाम-स्मरण से अवश्य मिलता है। राम-भजन न करने से विधाता उसके विरुद्ध हो जाते हैं। [२]

विषयवासना रूपी सर्पिणी को मारने के लिए राम-नाम एकमात्र साधन है। यहां गोस्वामीजी ने मन की तुलना खरगोश से और विषय-वासनाओं की तुलना गीदड़ से की है। विषयवासनाओं में उलझे मन को उससे निवृत्त करना है। उसी में रहने पर फिर उससे मन को नहीं हिला सकते। केवल

१- राम नाम सारिखो न और दूजो हितु है। तुलसी सुभाव कहीं सांचिये परेगी सही।
सीतानाथ सुभाव कही सांचिये परेगी सही। सीतानाथ नाम नित चितहू को चितु ही।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६७

२- गमन बिदेस न लेस कलेस को, सकुलत सकृत प्रनाम सो।
साखी ताको बिदित विभीषन बैठो है अबिचल धाम सो।
जाके भजे तिलोक तिलक भये, त्रिजग जोनि तनु नाम से।
तुलसी ऐसे प्रभुहिं भजे जो न ताहि बिधाता बाम सो।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-३५०

टीकाकार-राजनाथ शर्मा।

राम नाम ही मन को ठीक मार्ग पर ला सकता है। [१]

राम सभी लोगों की सहायता करनेवाले हैं। राम-नाम मुक्ति का मूल कारण है, सभी वेद और पुराण इस बात के साक्षी हैं। ध्रुव, प्रह्लाद, विभीषण, वानरराज सुग्रीव, अहल्या आदि इन सभी को भगवान ने मुक्ति दे दी है। अपनी शरण में आये हुए सभी लोगों का उद्धार वे करते हैं। [२]

राम-नाम का प्रभाव अमोघ है। राम नाम के सहारे व्यक्ति सांसारिक जाल से एकदम मुक्त हो जाता है, नहीं तो उस जाल में जकड़कर अनेक

१- राग रोग कुसंग ही सों साधु संगति रोसु।
चहत केहरि जसहिं सेइ सृगाल ज्यों खरगोसु।
संभु सिखवन रसन हूं नित राम नामहिं घोसु।
दंभहु कलि नाम कुंभज सोच सागर सोसु।
मोद मंगल मूल अति अनुकूल निज निरजोसु।
राम नाम प्रभाव सुनि तुलसिहुं परम सतोषु।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३५३

२- विरद गरीब निवाज राम को। गावत वेद पुरान संभु सुक प्रगट प्रभाव नाम को।
ध्रुव प्रह्लाद विभीषन कपिपति जड़ पतंग पांडव सुदाम को राम काम को।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२५१
टीकाकार-राजनाथ शर्मा

वर्षों तक वहां रहना पड़ता है। राम-नाम से प्रभावित होने पर आदमी पापों से छूटकर बच जाता है।[१]

राम-नाम की शक्ति। कलियुग में पाप कर्म की वृद्धि होती रहती है। गोस्वामीजी को इस बात का डर है कि शायद मैं भी इन मलिन कर्मों के प्रभाव में पड़ जाऊं। उदाहरणार्थ गोस्वामीजी कहते है- भौंतुवा नामक कीड़ा हमेशा जल के ऊपर तैरता रहता है, उसमें भंवर को जीतने की भी शक्ति होती है। वैसे सांसारिकता में डूबने पर भी गोस्वामीजी राम-नाम के प्रभाव से सांसारिक बातों में पूर्णरूप से लीन नहीं होते। यही राम-नाम की अनुपम शक्ति होती है।[२]

राम-महिमा :

राम सेवकों पर दयादृष्टि रखनेवाले होते है। कुछ लोग तो सेवकों पर अपना अधिकार जमानेवाले हैं। लेकिन राम तो सेवक के हित के विपरीत कभी कुछ नहीं करेंगे। अहित तो कभी नहीं करते। उनके समान सेवकों की भलाई करनेवाला दूसरा कौन है।[३]

१- आपु देखि मोहि देखिये, जन मानिय सांचो।
बडी ओर राम-नाम कीपेहि लई सो बचो।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३३८

२- कहा भयो जो मन मिलि कलिकालहि कियो भौंतुवा भौंर को हौं।
तुलसीदास सीतल नित यहि बल बडे ठेकाना ठौर को हौं।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६२

३- ऐसी तोहि न बूझिये हनुमान हठीले।
साहब कहूं न राम सो तो से न उसीले।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२२
संपादक-राजनाथशर्मा।

एकमात्र राम ही अच्छे बुरे सभी समय भक्त का साथ देते है। अच्छे समय पर हमारी सहायता केलिए बहुत लोग होंगे, बुरे समय पर कोई भी नहीं रहता। लेकिन राम तो बुरे समय में भी दान भे देते है। वे हमेशा दूसरों की सहायता करने में लगे रहते हैं। वनवासी राम ने केवट, गिद्ध, शबरी जटायु, विभीषण आदि कितनों का उद्धार कर दिया। राम की सेवा न करने वाले लोग रक्षा केलिए राम के पास आते हैं तो वे उनका तिरस्कार कभी नहीं करते। उनका उद्धार भी करते हैं।[१]

राम के समान शीलवान दूसरा कोई नहीं है। राम के आदर का पात्र बनने का सौभाग्य जिसे मिलता है वह महाभाग्यवान है। उनसे सदा सम्मान पाना है। राम तो सर्वज्ञ हैं, उनके समान पुण्यात्मा दूसरा कोई नहीं है।[२]

राम कल्पवृक्ष के समान सारी मनोकामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं। हमारे कर्म के अनुसार ही शुभ या अशुभ फल होता है। पुण्य कर्म करने पर उसका फल शुभ निकलता है, पाप कर्म करने पर अशुभ फल निकलता है।[३]

१---

१- सुसमय दिन द्वै निसान सबके द्वार बजै। कुसमय दसरथ के दानि तैं गरीब निवाजै।
सेवा बिनु गुनबिहीन दीनता सुनाये, जे जे तैं निहाल किये फूले फिरत पाये।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२२३

२- महाराज रामादर्यो धन्य सोई। गरुव गुनरासि सर्वग्य सुकृती।
सूर सील निधि साधु तेहि सम न कोई।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२६०

३- मनोरथ मन को एकै भाँति। चाहत मुनि मन अगम सुकृत फल मनसा अघ न अघाति।
कै रम भूमि कलि जनम कुसंगति मति बिमोह मद माति। करत कुजोग कोटि
क्यों पैयत परमारथ पर सांति।
तेह साधु गुरु सुनि पुरान श्रुति बूझ्यो राग बाजी तांति। तुलसी प्रभु
सुभाउ सुरतरु सो ज्यों दरपन मुख कांति।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६६

दु:खियों की भलाई करनेवाले राम हैं। प्रेम के द्वारा राम को वश में किया जा सकता है। वे सभी पर दया की अमृत वर्षा करनेवाले है। स्वार्थ के वशीभूत होकर कुछ तो हमसे संबन्ध जोड़कर बैठते हैं। दूसरे देवता पूजा करने पर प्रसन्न होनेवाले है। लेकिन राम जी तो नीच व्यक्ति की भलाई करने में भी नहीं चूकते। उन्हें दु:खियों और अनाथों की सहायता करना भी बहुत पसन्द है। [१]

राम-भजन का महत्व :

राम भक्त का सदा कल्याण होता रहता है। उनके भूतकाल भी अच्छे बीत चुके होंगे। वर्तमान भी सुन्दर रहता है, भविष्य भी प्रकाशमान रहेगा। भक्त की रक्षा का उत्तरदायित्व हमेशा रामजी पर है। राम, भक्त की देखभाल स्वयं करते हैं। [२]

राम प्रेमकी महिमा :

राम से प्रेम करने पर सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। अज्ञान पापों का मूल है, अज्ञान वश आदमी अनेक पाप कर्म कर बैठते हैं। पापकर्मों में लीन रहने से जीव को हमेशा दुखी रहना पडता है। प्रयत्न करने पर भी जीव को हमेशा दुखी रहना पडता है और उसे इस दु:ख से बचा लेना मुश्किल होता है। कारण यह है कि जीव पाप करते करते उसमें आनन्द की अनुभूति प्राप्त

१- एक सनेही सांचिलो केवल कोसल पालु। प्रेम कनौडो राम सों नहि दूसरो दयालु।
तन साथी सब स्वारथी सूर व्यवहार सुजान। आरत अधम अनाथ हित को रघुबीर समान।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४०४

२-सांसति तुलसीदास की सुनि सुजस तुही ले।
तिहुं काल तिनको भलो जे राम रंगीले।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२३

करने लगते हैं और इसी कारण जीव और पाप के बीच में अभिन्न संबन्ध स्थापित हो जाता है। तब पापों से अलग जीव का अस्तित्व नहीं होता। विषयवासनाओं में मन डूबा रहता है, वे उसी में सुख की खोज करते हैं। जीव स्वयं दु:ख को निमंत्रण देता है। राम से दूर रहने से ये पाप कर्म चारों ओर से व्यक्ति को घेरे रहते हैं। पापों से निवृत्त होने के लिए उसे राम के प्रति प्रेम रखना है। ऐसे भगवान रामजी ही पाप सागर में पड़कर डूबने वाले व्यक्ति की रक्षा कर सकते हैं। [१]

राम से प्रेम का संबन्ध न जोड़ा जाय तो हमारे सारे परिश्रम व्यर्थ निकले। मनुष्य शरीर को पाने पर उसका सदुपयोग करना चाहिए। नहीं तो इस अमूल्य शरीर की प्राप्ति से क्या लाभ। लेकिन विवेकी मनुष्य तो राम के प्रेम में तल्लीन हो जाते हैं। इसके बिना जप,तप,योग आदि की कोई

१- मोह जनित मल लाग विविध विधि कोटिहु जतन न जाइं।
जनम जनम अभ्यास निरत चित अधिक अधिक लपटाईं।
नैन मलिन परनारि निरखि मन मलिन विषय संग।
हृदय मलिन वासना मन मद जीव सहज सुख त्यागे।
परनिंदा सुनि श्रवन मलिन भे बचन दोष पर गाये।
सब प्रकार मल भार लाग निज नाथ चरन बिसराये।
तुलसीदास व्रत दान ग्यान तप, सुद्धि हेतु श्रुति गावै।
रामचरन अनुराग नीर बिनु मल अति नास न पावै ।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२२५
संपादक-राजनाथ शर्मा

प्रधानता नहीं। राम से प्रेम करने पर ही मंगल का विधान होता है। [१]

रामचन्द्रजी से प्रेम जोडने पर आदमी सांसारिक आकर्षणों के जाल में नहीं फंस जाता। उन्हीं के प्रेम में मस्त होकर वह असली अनुपम आनन्द की अनुभूति करता है। सांसारिक विषयों का आकर्षण भ्रम में डालनेवाला है। उसमें नहीं पडना चाहिए। अगर पड जाता है तो नाश अवश्य हो जाता है। हरिण मृगतृष्णा के पीछे पड़कर मर जाता है। मृगतृष्णा तो केवल भ्रम है। उसके पीछे पडना मूर्खता है। केवल पुराणों का अध्ययन करने से ज्ञान की वृद्धि नहीं होती। उसका सार भी ग्रहण करना चाहिए। तभी ज्ञान की वृद्धि होती है। ~~तावे~~ के सिर्फ राम नाम रटने से कोई फायदा नहीं। अज्ञानवश ही जीव को कठिनाइयों का सामना करना पडता है। [२]

१- जो अनुराग न राम सनेही सों। तो लह्यो लाहु कहा नर देही सों।
जो तनु धरी परिहरि सब सुख भये सुमति राम अनुरागी।
सो तनु पाइ अघाइ किये अघ, अवगुन उदधि अभागी।
ग्यान बिराग जोग जप तप मख जग मुद मग नाहिं थोरे।
राम प्रेम बिनु नेम जाय जैसे मृग जाल जलधि हिलोरे।
लोक बिलोकि पुरान वेदन सुनि समुझि -बूझि गुरु ग्यानी।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१०

२- नाहिंन चरन रति ताहि तें सहौं बिपति। कहत श्रुति सकल मुनि मतिधीर।
बसै जो ससि उछंग सुधा स्वादित कुरंग,
ताहि क्यों भ्रम निरखि रविकर नीर।।
सुनिय नाना पुरान मिटत नाहिं अग्यान।
पढ़िय न समुझिय जिमि खग कीर।
बझत बिनहिं पास सेमर सुमन आस।
करत चरत तेइ फल बिनु हीर। विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१३

राम से प्रेम का संबन्ध न जोडकर जो कर्म और धर्म का सबन्ध जोडकर ही उसमें लीन होता है उसका वह कर्म व्यर्थ निकलता है। अर्थात् कर्म करने से उसे फल प्राप्ति नहीं होती।[२] ~~ज्ञान भी इस मत से सहमत है।~~ [१]

राम से पवित्र प्रेम करनेवाले सुख दु:खों के द्वन्द्व से दूर हो जाते हैं। अपने शरीर घर, पुत्र, पत्नी इन के प्रति राम-भक्त के हृदय में आसक्ति नहीं होती। वह सदा राम से पवित्र प्रेम निभाता है। वह सुख दु:ख के द्वन्द्वों से दूर रहता है। वह भगवान की सृष्टि के सभी जीवों से प्रेम रखता है। तभी राम उस पर सदा प्रसन्न रहते हैं। [२]

राम से गहरे प्रेम का भाव। गोस्वामीजी को यही सन्देह होता है कि क्या रामजी को मुझसे इतना प्रेम है जितना मछली जल को प्यार करती है, एक क्षण जल से अलग होने पर मछली तडप तडप कर मर जाती है, जल के अभाव में वह जी नहीं सकती। जल से उसका इतना लगाव होता है। सारे जीव सुखमय जीवन चाहते हैं, जैसे तरूण पुरूष नवोढ़ा नारी को अत्यधिक प्यार करता है। उनकेलिए एक दूसरे से बिछुडकर जीना मुश्किल होता है। सर्प केलिए मणि उसका सर्वस्व है। उससे बिछुडकर जीना उसे असह्य प्रतीत होता है। यों लोभी अपने जीवन से

१- जो पै जिय जानकी नाथ न जाने तो सब करम धरम
श्रमदायक ए`सेइ कहत सयाने
जो सुर सिद्धि मुनीस जोगविद वेद पुरान बखाने।
पूजा लेत देत पलटे सुख हानि लाभ अनुमाने।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६६

२- जो मन लागै रामचरन अस देह गेह सुत बित कल।
कला प्रम हं मगन होत बिनु जतन किये जस।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२६
संपादक-राजनाथ शर्मा

भी अधिक धन को प्यार करता है। वैसे राम से गहरे प्रेम-संबन्ध में वन्धित हो जाएं तो उनसे अलग होकर जीना मुश्किल पड़ जाता है। [१]

राम से प्रेम न करने का बुरा परिणाम। राम से विद्वेष रखने वाले की उपेक्षा ज़रूर करना है। चाहे वह मित्र हो, तो भी कोई बात नहीं। उस मित्र से दोस्ती जोड़ना उचित नहीं, दुश्मन के समान उसे छोड़ देना चाहिए। भगवान को प्राप्त करने के मार्ग में जो जो बाधा के रूप में उपस्थित होते हैं उन्हें भी त्याग देना है। इसे स्पष्ट करने केलिए प्रह्लाद, विभीषण आदि का उदाहरण बताते हैं। रामचन्द्रजी के प्रति प्रेम और श्रद्धा का भाव रखनेवाला ही अच्छा है। [२]

१- राम कबहुं प्रिय लागि हो जैसे नीर मीनि को।
सुख जीवन ज्यों जीवको, मनि ज्यों फनि को,
हित ज्यों धन लोम लीन को।
ज्यों सुभाव प्रिय लगति नागरी नागर नवीन को।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-५२२

२- जाके प्रिय न राम बैदेही सो छांड़िये कोटि बैरी सम्य जद्यपि परम सनेही।
तज्यो पिता प्रह्लाद विभीषन बंधु भरत महतारी। बलि गुरु तज्यो कंत
ब्रज बनितनि भये मुद मंगलकारी।
नाते नेह राम के मनियत सुहृद सुसेव्य जहां लों।
अंजन कहा आंखि जेहि फूटे बहुतक कहों कहां लों।
तुलसी सो सब भांति परम हित पूज्य प्रान ते प्यारो।
जासों होय सनेह राम पद एतो मतो हमारो।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३७७
संपादक-राजनाथ शर्मा

राम-स्मरण का महत्व :

राम-स्मरण ही प्राणी का एकमात्र सहारा है। राम के चरणों तले प्राणी का सुन्दर सुरक्षित आवास स्थान है। उनके स्मरण के बिना वह इधर उधर भटकता फिरता रहता है। करुणामय भगवान भक्तों के दु:खों को दूर करने में वे सदा जागृत रहते हैं। उनके सभी अभीष्टों को वे पूर्ण कर देते हैं। भगवान की सेवा करना भक्त का कर्तव्य है, इससे उसकी शोभा अत्यधिक बढ़ जाती है। [1]

राम स्मरण ही जीव केलिए संसार सागर पार करने का एक मात्र साधन है।संसार में जीवों का एकमात्र सहारा वे ही है। अनन्त भव सागर में डूबने उतरने वालों की सहायता वे ही करते हैं। कलियुग में बुरे कर्मों का सम्मान किया जाता है। वस्तुओं की ठीक ठीक जांच नहीं की जा सकती। केवल राम-स्मरण ही श्रेष्ठ है। राम के प्रभाव से पाप कर्मों का नाश होता है। [2]

१- इहै कह्यौ सुत बेद नित चहूं। श्री रघुबीर चरन चिंतन तजि नाहिंन ठौर कहूं।
करुना सिंधु भगत चिन्तामनि सोभा सेवत हूं।
और सकल सुर असुर ईस सब खाये उरग छहूं।
सुरुचि कह्यौ सोइ सत्य तात। अति परुष बचन जबहूं।
तुलसीदास रघु विमुख नहिं मिटै बिपति कबहूं।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२३१

२- सुमिरु सनेह सहित सीतापति। रामचरन तजि नहिंन आन गति।
जप तप तीरथ जोग समाधी। कलि मति बिकल न कछु निरुपाधि।
करहुं सुकृत न पाप सिराहीं। रक्त बीज जिमि बाढ़त जाहीं।
हरति एक अघ असुर जालिका। तुलसीदास प्रभु कृपा कालिका।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२६२
संपादक-राजनाथ शर्मा

राम का स्मरण करने से सुख , पुण्य आदि की वृद्धि होती है । पाप कम होते जाते हैं । पापों से एकदम छुटकारा मिल जाता है । रविकुल मणि रामचन्द्रजी सूर्य के समान कलियुग के पापरूपी अन्धकारों का हरण करते हैं । जप,तप,यज्ञ आदि साधनों के द्वारा संसार को वश में नहीं किया जा सकता । विषयों के प्रति मोह छोड़कर अभीष्टों की पूर्ति करने वाले चिन्तामणि स्वरूप राम का स्मरण करना है । १

राम की कृपा का महत्व :

भगवान राम की कृपा से संसार का मिथ्यात्व स्पष्ट मालूम होता है । अहंभाव से मुक्त होने पर ही संसार के बन्धन से मुक्त हो सकता है । राम की कृपा न पाने पर व्यक्ति को संसार सत्य प्रतीत होता है । संसार में कुछ भी अनश्वर नहीं है । ज्ञान प्राप्त होने पर ही सांसारिक माया का अन्त होता है । २

१- रुचिर रसना तू राम राम क्यों न रटत । सुमिरत सुख सुकृति बढ़त
अघ अमंगल घटत ।
बिनु श्रम कलि कलुष जाल कटु कराल । दिनकर के उदय जैसे तिमिर तोम
फटत ।
जोग जाग जप बिराग तप सुतीर्थ अटत । बांधिबे को भव गयन्द रेनुकि बटत
परिहरि सुर मुनि सुनाम गुंजा लखि लटत । लालच लघु तेरो लखि तुलसी
तोहिं हटत ।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२६३

२- है हरि कस न हरहु भ्रम भारी । जधपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहीं कृपा
तुम्हारी ।
अर्थ अविद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गुसाईं।
बिन बांध निज हठ सठ परबस परचे कीर नी नाईं । { विनयपत्रिका-पृष्ठ-२८
सपने व्याधि बिविध बाधा जनु मृत्यु उपस्थित आई ।
बैद अनेक उपाय करै जागै बिनु पीर न जाइ ।।

रामकी कृपा से मोह-माया दूर हो जाती है। संसार से मुक्ति प्राप्त करने केलिए केवल शास्त्रीय ज्ञान पर्याप्त नहीं है। आत्मज्ञान की भी आवश्यकता है। उदाहरण स्वरूप गोस्वामीजी कहते हैं- दीपक जलाये बिना अन्धकार दूर नहीं होता। केवल 'दीपक' शब्द का उच्चारण करने से कोई फायदा नहीं। अकिंचन व्यक्ति का दुःख कल्पवृक्ष और कामधेनु के चित्र देखने से दूर नहीं होता। ये दोनों प्रत्यक्ष रूप में उसके सामने होने पर ये उसकी दरिद्रता दूर करते हैं। व्यर्थ बातें करने से कोई लाभ नहीं है। भोजन की बात करते रहने से भूख कभी नहीं मिटती। भगवान के भजन से अवाच्य आनन्द मन में पैदा होता है। विषयों में लीन व्यक्ति ज्ञान के प्रकाश से वंचित रहता है, आवागमन के चक्कर में पड़ने के कारण उसे सुख शान्ति का पता भी नहीं मिलता। कथनी और करनी एक समान होनी चाहिए।[१]

राम-भक्ति की महिमा :

भक्ति सारे सुखों की जड़ है। भक्त की सारी कामनायें पूर्ण हो जाती है।

१- अस कछु समुझि परत रघुराया। बिनु तव कृपा दयालु दास हित मोह न छूटै माया।

वाक्य ग्यान अत्यन्त निपुन भव पार न पावै कोई। निसि गृह मध्य दीप की बातन, तम निवृत नहिं होई।

जैसे कोइ इक दीन दुखित अति असन हीन दुःख पावै।

चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह लिखे न बिपति नसावै।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२५६

संपादक-राजनाथ शर्मा

भक्ति रूपी नदी में प्रवेश करने केलिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडता है। उस नदी में निमग्न व्यक्ति ही उसकी गहराई का पता लगा सकता है। वही सारी यातनायें जान सकता है। उदाहरणार्थ गोस्वामीजी कहते है कि एक कला में निपुण व्यक्ति केलिए वह कला अत्यधिक सुखद लगती है। मछली जल की ऊंची तरंगमालाओं को काटकर तैरती है, उसकेलिए यह आसान कार्य है। लेकिन इससे अनभिज्ञ होने के कारण हाथी की मृत्यु हो जाती है। बालू में पडे शक्कर के छोटे टुकडों को चींटी बालू से अलग कर रसास्वादन कर लेती है। लेकिन शक्कर को बालू से अलग करने में हम असमर्थ हैं। इन उदाहरणों से स्पष्ट है 'भक्ति' कहने में सुगम है। लेकिन उसका व्यावहारिक क्षेत्र तो बडा कठिन है। [१]

राम को प्राप्त करने केलिए संयम की आवश्यकता है। इन्द्रियों का संयम करनेवाले व्यक्ति को राम की प्राप्ति होती है। पांच कर्मेन्द्रियों और पांच ज्ञानेन्द्रियों को वश में करना चाहिए। लेकिन इनको दमन करने की ताकत जिसमें नहीं उसके सारे परिश्रम असफल निकलती है। [२]

१- रघुपति भगति करत कठिनाई। कहत सुगम करनी अपार जानै सोइ जेहि बनि आई।

जो जेहि कला कुसल ताकहं सोइ सुलभ सदा सुखकारी ।
सफरी सनमुख जल प्रवाह सुरसरी बहै गज भारी ।।
ज्यों सर्करा मिलै सिकता महं बल तें न कोउ बिलगावै ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-३६६

२- कहुँ कहहु कर संजम जो न करिय जि जानि ।
साधन वृथा होइं सब मिलहि न सारंगपानि ।
एकादसी एक मन बस कै सेवहु जाइ ।
सोइ व्रत कर फल पावै आवागमन नसाइ ।

विनयपत्रिका- पृष्ठ-४२१
संपादक-राजनाथ शर्मा

राम विमुख की दुर्गति :

राम से विमुख होने पर दु:ख दूर नहीं होता । राम की भक्ति न करने पर जीवन-भर हमें दु:खी रहना पडता है । तीन प्रकार के ताप का नाश भी नहीं होता । राम से विमुख होकर सुख की कामना नहीं कर सकते । जैसे पानी के मथने से घी की प्राप्ति नहीं होती । दु:ख को दूर करने के मार्ग को जीव स्वीकार नहीं करता । इसी कारण मुक्ति भी प्राप्त नहीं हो सकती । दु:ख ज्वाला में जल जलकर जीव का अन्त भी हो जाता है ।[1]

ज्ञानी एवं अनुभवी तुलसी लोगों की मानसिक प्रवृत्तियों का परिचय देते हैं । इसी सिलसिले में वे दु:खी मानव की व्यथित चित्तवृत्ति का उल्लेख करते हैं ।

१- काहे को फिरत मन करत बहु जतना ।
मिटे न दुख विमुख रघुकुल बीर ।
कीजे जो कोटि उपाइ त्रिविध ताप न जाइ ।
कह्यो जो भुज उठाय मुनिवर कीर ।
सहज टेव बिसारि तुही धौं देखु बिचारि ।
मिले न मथत बारि घृतबिनु छीर ।।
समुझि तजहि भ्रम भजहि पद जुगम ।
सेवत सुगम गुन गहन गभीर ।
आगम निगम ग्रन्थ रिषि मुनि सुर संत
सबही को एक सुनु मति धीर ।
तुलसी प्रभु बिनु पियास मरै पसु जद्यपि है निकट सुरसरि तीर ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१२
संपादक-राजनाथ शर्मा

दुखी व्यर्थ बाते किया करते हैं। दीन दुःखी लोगों की बात को बुरा मानना उचित नहीं, क्यों कि वे तो दुःख सागर में तडपते रहते हैं। तब दुख के कारण वे कुछ न कुछ कहते होंगे। वे स्वार्थी और अकिंचन भी होते हैं। उनकी वाणी सुनकर कुपित नहीं होना चाहिए। वे सूब सोच विचारकर-कर बातचीत नहीं करते। कारण यह है कि दुःखी जीवन बिताकर वे ऊबते होंगे। इसलिए उन्हें किसी बात पर ध्यान नहीं रहता। बुद्धि भी ठीक नहीं होती।[१]

मनुष्य दुःख के समय ईश्वर को गालियां दिया करते हैं। गरमी के समय लोग उसकी तीव्रता पर बोलते हैं और वर्षा आने की प्रार्थना करते हैं। लेकिन वर्षा के तीव्र होने पर वे उसकी शिकायत करते हैं, वर्षा अधिक होने पर और बिल्कुल न होने पर भी लोग गालियां दिया करते हैं। कोई भी परिस्थिति उन्हें अच्छी नहीं लगती। पर भगवान पर इसका कोई असर नहीं पडता। दुनिया भर के लोगों का यही स्वभाव होता है।[२]

दुःख की अवस्था में हितकारी का स्मरण किया जाता है क्योंकि इस हालत में हमारे इष्ट जन ही सहायता केलिए आगे बढ़ते हैं। दूसरे लोग अनसुनी कर रहते हैं। हितकारी मनुष्य तो दुःखी व्यक्ति के अपराधों पर

१- अति आरत अति स्वारथी, अति दीन दुखारी।
इनको बिलगु न मानिये बोलहिं न बिचारी।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२६

२- लोक रीति देखी सुनी, व्याकुल नर नारी।
अति बरषे अनबरषे हूं देहिं दैवहिं गारी।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२६
संपादक-राजनाथ शर्मा

दृष्टि न डालकर उसके दु:खों को दूर करने का प्रयत्न करता है। अहित करनेवाला तो दु:खी का साथ नहीं देता। सुख की अवस्था में वह उससे मैत्री स्थापित करता है, दु:ख के समय उसे छोड देता है। १

स्वामी-सेवक संबन्ध :

तुलसी ने भगवान और भक्त के संबन्ध की तुलना स्वामी-सेवक संबन्ध से की है। आदर्श स्वामी और सेवक का संबन्ध अत्यधिक पुनीत होता है। दु:ख की हालत में आदमी कटु वचन कहने लगते हैं। अगर स्वामी विषम दशा में हो तो वह शायद कटु वचन कहने लगता है। लेकिन अगर स्वामी भला आदमी हो तो वह कभी बुरा वचन नहीं कहता। सेवक के बुरा व्यक्ति होने पर भी स्वामी उसकी सहायता करता रहता है। और इसी प्रकार सेवक सारे कष्टों से निवृत होता है। दूसरों की पीडा को वह अपनी पीडा मानकर स्वामी उसे मिटाने का प्रयत्न करता रहता है। अच्छे स्वामी की यही परख होती है। सेवक की पीडाओं को दूर करना उसका कर्तव्य है। २

१- समै सांकरे सुमिरिये समरथ हितकारी।
सो सब बिधि ऊबर करै अपराध बिसारी।
बिगरी सेवक की सदा साहबहिं सुधारी।
तुलसी पर तेरी कृपा निरूपाधि निरारी।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२६

२- कटु कहिये गाढ़े परे, सुन समुझि सुसाईं।
करहिं अनभले को भलो आपनी भलाईं।
समरथ सुभ जो पाइये बीर पीर पराईं।
ताहि सकै सब ज्यों नदी बारिधि न बुलाईं।
अपने अपने को भलो, चहै लोग लुगाईं।।
भावै जो जिहिं तिहिं भजै सुभ असुभ सगाईं।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२८
संपादक-राजनाथ शर्मा

मन का दमन करना कठिन कार्य है :

भक्ति का मर्म जाननेवाले तुलसी समय पर ज़ोर देते हैं। गोस्वामीजी की यह सूक्ति मानव जीवन की वास्तविकता के अत्यधिक निकट आती है। अत्यधिक संयम से काम लेनेवाले व्यक्ति का भी मन कुछ परिस्थितियों में चंचल हो उठता है। उदाहरण के ज़रिये कवि यह बात स्पष्ट करते हैं। नारी बच्चे को जन्म देते समय दुस्सह पीड़ा का अनुभव करती है। वेदना की अग्नि में पड़कर वह तड़पती रहती है। तब वह निश्चय करती है कि आगे कभी पति से मिलने नहीं जाएगी। लेकिन बाद में सारी पीडाओं से मुक्त होने पर वह फिर भी पति से मिलने लगती है। मन के विकारों को जीत लेना कभी आसान बात नहीं।[1]

सारे संत एवं भक्त मन को स्वच्छ रखना चाहते हैं। वे जानते हैं कि मन कच्चा हो तो बाह्य साधनायें व्यर्थ है। अन्त:करण का शुद्ध होना अत्यधिक आवश्यक है। भगवान और गुरु के बिना निर्मल विवेक उत्पन्न नहीं होता। बाह्याचारों की कोई महत्ता नहीं होती। अन्त:करण का जो कल्मष जो अविद्या से उत्पन्न है उसे बाह्याचार एकदम नहीं निकाल सकते। अन्त:करण को शुद्ध किये बिना कर्मकाण्ड का कोई महत्व नहीं होता।

१- मेरो मन हरिजू हठ न तजै।
निसिदिन नाथ देउं सिख बहु बिधि करत सुभाउ निजै।
ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खल पतिहिं भजै।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२३५
संपादक-राजनाथ शर्मा

मन को पवित्र कर साधना पर बल देना है । उदाहरणस्वरूप कहते है कि घी से भरे बरतन में चन्द्रमा का प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है । उस दूध को सौ कल्पों तक औटाया जाय तो भी वह प्रतिबिंब मिटता नहीं । वैसे वृक्ष के खोखले में रहनेवाला पक्षी उस वृक्ष को काट देने पर भी नहीं मरता । यों मन के अविवेकी रहने पर योग मार्ग की साधना करना व्यर्थ है, उससे मन शुद्ध नहीं हो जाता । शरीर रूपी घोंसले में मन रूपी पक्षी निवास करता है, वह शरीर का नाश होने पर भी मरता नहीं, न वश में आता है । यहां आन्तरिक शुद्धि पर बल दिया गया है ।[१]

मन के भ्रम की हानि :

मन की मूर्खता की बात पर गोस्वामीजी प्रकाश डालते है । राम की भक्ति तो श्रेष्ठ होती है । रामभक्ति को गोस्वामीजी गंगा मानते है, नदियों में गंगा नदी का महत्त्वपूर्ण स्थान है । इसीकारण उन्होंने राम-भक्ति की तुलना गंगा से की है । उस गंगा की उपेक्षा कर ओस की बूंदों को स्वीकार करना बड़ी मूर्खता का काम है । चातक तो स्वाति नक्षत्र का जल ही पीता है, इसी कारण वह जल पीने केलिए ऊपर की ओर मुंह खोले बैठता है ।

१- माधव मोह पास क्यों टूटै ।
 बाहर कोटि उपाय करिय अभ्यंतर ग्रन्थि न छूटै ।
 घृत पूरन कराह अंतर गत ससि प्रतिबिंब दिखावै ।
 इंधन अनल लगाय कल्प सत औटत नास न पावै ।
 तरु कोटर महं बस बिहंग तरु काटे मरै न जैसे ।।
 साधन करि बिचार हीन मन सुद्ध होइ नहिं तैसे ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२०३
संपादक-राजनाथ शर्मा

पर वह मूर्खता से धुँए के समूह को बादल समझकर उसकी ओर टकटकी बांधकर देखता रहता है। उसे कुछ भी नहीं मिलता, उसकी आंखे खराब पड जाती है। वैसे बाज कांच में अपने शरीर की परछाई देखकर भोजन समझकर उस पर टूट पडता है लेकिन ऐसा करने से उसकी चोंच टूट जाती है। भ्रम में पडने पर मन की अनोखी करतूतें हमें अचरज में डालती हैं। मन को ठीक रास्ते पर चलाना है। १

मन की प्रकृति :

मन की अनुपम दशा का वर्णन यहां कवि करते है। मन का झुकाव अनीति की ओर रहता है, मन पाप कर्म करने में मस्त रहता है। वह विषयवासनाओं का साथ देता है। यह सत्संगति में रहने की इच्छा नहीं रखता। मन को बुरी वासनाओं से बचाने वाला तो एकमात्र रामचन्द्रजी

१- ऐसी मूढ़ता या मन की।
परिहरि राम भक्ति सुरसरिता आस करत औसकन की।
धूम समूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की।
नहिं तहां सीतलता न बारि पुनि हानि होत लोचन की।
ज्यों गज कांच बिलोकि सैन जड़ छांह आपने तन की।
टूटत अति आतु अहार बस छति बिसारि आनन की।
कहां लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हो गति जन की।
तुलसीदास प्रभु हरहु दुसह करहु लाज निज पन की।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-२३६

संपादक-राजनाथ शर्मा

है ।[१]

मन की गति हमेशा बुरी वासनाओं की ओर होती है । और विषयों के प्रति अनुरक्ति होना मन का निजी स्वभाव है । अच्छे रास्ते पर मन को आगे ले चलना मुश्किल की बात है । इन्द्रियों को अपने अधीन रखना भी कठिन है । जैसे नाक सुगन्धित वस्तुओं से सुवासित रहना चाहती है, बदबूदार वस्तुओं के संग में रहना पसन्द नहीं करती । जीभ स्वादिष्ट चीजों से प्रेम करती है, उन्हें खा लेना पसन्द करती है । लेकिन जैसे विषयी की नाक राम के गले में पहनायी हुई माला की सुगन्धि लेना नहीं चाहती, वैसे जीभ राम की जूठन से प्रेम नहीं रखता । इसी प्रकार शरीर तो चन्दन,नवयौवना नारी और गहनों का स्पर्श सुख चाहता है, वह राम के पुनीत चरण युगों का स्पर्श नहीं चाहता । लंपट मन अनीति की ओर झुकना चाहता है ।[२]

१- सुनहु राम रघुबीर गुसाईं । मन अनीति रत मेरो ।
चरन सरोज बिसारि तिहारे, निसिदिन फिरत अनेरो ।।
मानत नाहिं निगम अनुसासन त्रास न काहू केरो ।
भूल्यो सूल करम कोलुन्ह तिल ज्यों बहुबारनि पेरो ।।
जहं सतसंग कथा माधव की सपनेहुं करत न फेरो ।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३२७

२- यों मन कबहुं तुमहिं न लाग्यो ।
ज्यों छल छांडि सुभाव निरन्तर रहत विषय अनुराग्यो ।
ज्यों चितई परनारि, सुनै पातक-प्रपंच घर घर के ।।
त्यों न साधु सुरसरि,तरंग निर्मल गुनगन गुनबर के ।।
ज्यों नासा सुगंधरस बस , रसना षटरस-रति मानी ।
राम प्रसाद माल जूंठनि लगि त्यों न ललकि ललचानी ।
चंदन चंद्रबदनि भूषन पट ज्यों चह पांवर परस्यो ।
त्यों रघुपति पद -पदुम परस को तनु पातकी न तरस्यो ।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३७०

मनुष्य जन्म का महत्व :

अमूल्य मनुष्य-जन्म पाकर उससे लाभ उठाना चाहिए । उसे राम-चरणों से प्रेम रखना है । नाम-स्मरण से धर्म की सहज प्राप्ति हो जाती है । उसका फल भी सुन्दर होता है । वेदोक्त कर्म जैसे योग,यज्ञ,वैराग्य आदि के सरल प्रतीत होने पर भी उसे व्यावहारिक रूप में लाना मुश्किल होता है । राम की शरण में रहने से तो सारी विपत्तियां मिट जाती हैं । १

मानव-शरीर का मूल्य :

मानव शरीर की प्राप्ति होने पर अगर उसका ठीक ठीक उपयोग न करें तो बाद में पछताना पड़ता है । राम का भजन करने में पीछे नहीं हटना है । मरते समय हमारा साथ देने केलिए राम को छोड़कर और कोई भी नहीं रहता । हम संपत्ति को साथ नहीं ले सकते । कामाग्नि विषयवासनाओं की सहायता पाकर अत्यधिक जल उठती है । रामभक्ति से तो वह शान्त होती है ।

१- पावन प्रेम राम चरन कमल जनम लाहु परम ।
राम नाम लेत होत सुलभ सकल धरम ।
जोग बिबेक बिरति बेद बिदित करम ।
करिबे कहं कटु कठोर सुनत मधुर नरम ।
तुलसी सुनि जानि बूझि भूलहि जनि मरम ।
तेहि प्रभु को तू सरन होहि जेहि सबकी सरम ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२९६
संपादक-राजनाथ शर्मा

राम का भजन कर हमें अपने जन्म को सफल बनाना है । [१]

शरीर नश्वर है :

सुन्दर शरीर पाने पर भी कभी गर्व नहीं करना चाहिए । कारण यह है कि वह भी कुछ समय के बाद मिट्टी में मिलेगा । मरते समय आदमी सब कुछ यहीं छोड़कर चले जाते हैं । सच्चा सार केवल ईश्वर में है, इस बात को समझ लें । [२]

१- मन पछितैहै अवसर बीते । दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु करम बचन अरु हीते ।
सहस बाहु दसबदन आदि नृप, बचे न काल बली ते ।
हम हम करि धन- धाम संवारे, अंत चले उठि रीते ।
सुत बनितादि जानि स्वारथ रत, न करु नेह सबही ते ।
अंतहुं तोहि तजैंगे पामर तू न तजै अबही ते ।
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जी ते ।
बुझै न काम अगिनि तुलसी कहुं बिषय भोग बहु घी ते ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२४

२- तांबे सो पीठि मनहुं तनु पायो ।
नीच मीचु जानत न सीस पर ईस निपट बिसरायो ।
अवनि रवनि धन धाम सुहृद सुत को न इन्हहिं अपनायो ।
काके भये गये संग काके, सब सनेह छल छायो ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१७

संपादक-राजनाथशर्मा

विषय-वासना के सुख को वे कोढ़ में खाज मानते है। `कोढ़ में खुजली होना` यह एक प्रचलित कहावत है अर्थात् असमंजस की स्थिति में हो जाना। कोढ़ में खुजली भी हो जाय तो कितनी खतरनाक होती है। तब वहां अच्छी तरह खुजला जाता है। उससे एक प्रकार का सुख प्राप्त होता है। इस खुजली को गोस्वामीजी विषयवासना सदृश मानते हैं। जैसे खुजलाने से क्षणिक सुख प्राप्त होता है वैसे विषयवासनाओं से भी क्षणिक आनन्द प्राप्त होता है। लेकिन बाद में अत्यधिक पीड़ा से आदमी छटपटाने लगता है। इसी कारण गोस्वामीजी विषयवासनाओं के जाल से मुक्त होने का उपदेश देते हैं।[१]

विषयवासनायें क्षणिक होती है, उसके पीछे पड़ना कितनी मूर्खता है। राम से प्रेम रखने पर विपत्ति का सामना करना नहीं पड़ता। उनसे प्रीति जोड़ने पर सदा सुख का सपना देख सकते हैं। संसार तो मिथ्या है। सब कुछ भूलकर मृगतृष्णा के समान उसके पीछे भागना मूर्खता है, अमूल्य जीवन को नष्ट करना है। गोस्वामीजी ने सन्तोष को सत्य माना है। उनका मत है कि इच्छा करना तो मनुष्य कमजोरी है। इच्छा के गुलाम व्यक्ति सभी के दास हैं। आशा पर विजय प्राप्त किये हुए व्यक्ति भगवान का सच्चा भक्त मान सकते हैं।[२]

१- कलि कराल दुकाल दारुन सब कुभांति कुसाज।
नीच जन,मन ऊंच ,जैसी कोढ़ में खाज।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४४७

२- जो पै राम चरन रति होती। तो कत त्रिविध सूल निसि बासर सहते बिपति निसोती।
जो संतोष सुधा निसि बासर सपनेहुं कबहुंक पावै।
तोकत विषय बिलोकि झूठ जल मन कुरंग ज्यों धावै।
जो श्रीपति महिमा बिचारि उर भज ते भाव बढ़ाए।
तो कत द्वार द्वार कूकर ज्यों फिरते पेट खलाए।
जो लोलुप भये दास आस के तो सबही के चेरे। प्रभु बिस्वास आस जीति जिन्ह ते सेवक हरि केरे।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१६८

यही बात वे इस ढंग से कहते हैं कि विषयवासनाओं की उपेक्षा करनी चाहिए। कामाग्नि को बुझाने के लिए विषयरूपी घी उसमें कभी नहीं डालना चाहिए। सांसारिक जीवों से गोस्वामीजी का यही कहना है कि विषय-वासनाओं के प्रति अनुराग न रखकर राम के भजन में समय बिताना चाहिए। १

विषयासक्ति को मन से हटाना है। मनुष्य शरीर पाने पर उसका ठीक ठीक उपयोग होना चाहिए। इससे दूसरों को कुछ फायदा भी होना है। मानव मन प्राय: नश्वर सांसारिक सुख भोग की लालसा में पड़कर उसकी प्राप्ति के लिए इधर उधर घूमता फिरता रहता है। अन्त:करण को निर्मल रखकर बुरे विचारों से एकदम मुक्त होना चाहिए। मनुष्य शरीर द्वारा ही पुण्य कर्म संभव हो सकता है। क वह ईश्वर में अधिष्ठित मन का अधिकारी होता है। इस सुअवसर को व्यर्थ खो देना नहीं चाहिए। २

१- अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़ त्यागु दुरासा जीते।
बुझै न काम अगिनि तुलसी कहुं विषय भोग बहु घीते।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२४

२- लाभ कहा मानुष तनु पाये, काय बचन मन सपनेहुं कबहुंक घटत न काज पराये।
जो सुख सुर पुर नरक गेह बन, आवत बिनहिं बुलाये।
तेहि सुख कहं बहु जतन करत मन समुझत नहिं समुझाये।
भय निद्रा मथुन, अहार सबके समान जग जाये।
सुर दुरलभ तनु धरि न भजे हरि मद अभिमान गंवाये।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१८
संपादक-राजनाथ शर्मा

विषय सुख की हेयता :

वैराग्य के धनी तुलसीदास विषय वासना से बचे रहने पर जोर देते है ।

विषय-सुख दु:ख देता है, वह क्षणिक भी है । भगवान रामचन्द्रजी से प्रेम का नाता न जोड़कर जो पशु के समान विषयी जीवन व्यतीत करता है । उसका जन्म कभी सफल नहीं होता । वह अपने अमूल्य जीवन को बरबाद कर डालता है । विषयों से मिलनेवाले सुख को वह यथार्थ सुख मानता है । लेकिन वह सुख आफ़त की ओर ले जानेवाला भी है । आवागमन से वह बचता नहीं । उसमें सदा विषय सुख की आकांक्षा बनी रहती है । उसे दूर करना है । राम की यश-गाथा सुनने पर तो भक्त के मन में अमृत पीने के समान आनन्द पैदा होता है । अमृत के समान अमरत्व भी प्राप्त होता है । गोस्वामीजी विषय-सुखों से मन को हटाकर उसे राम की भक्ति में लगाने का उपदेश देते है ।[१]

विषय-वासना ईश्वर -भजन में बाधा उपस्थित करती है । विषय-वासना से बचने का व्यावहारिक उपाय बताते हुए वे यों लिखे है। इससे मन को

१- राम से प्रीतम की प्रीति - रहित जीव जाय जियत ।
जेहि सुख सुख मानि लेत, सुख सो समुझ कियत ।।
जहं तहं जेहि जोनि जनम महि पताल वियत ।
तहं तहं तू विषय-सुखहिं , चहत तहत नियत ।।
कत विमोह लट्यो फट्यो ,गगन मगन सियत ।
तुलसी प्रभु सुजस गाइ, क्यों न सुधा पियत ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२६६
संपादक-राजनाथ शर्मा

पूर्ण रूप से मुक्त करने का उपदेश गोस्वामीजी देते है । काम,क्रोधादि विकारों को मन से हटा देना चाहिए । साथ ही हमारी सारी इन्द्रियों को भगवद्भजन में लीन होना अनिवार्य है । कानों से राम कथा अच्छी तरह सुनना,मुंह से राम -नाम का जप करना और नेत्रों से राम की सुन्दर रूप -छवि को निहारना चाहिए । बुरे विचारों को छोड़कर राम की भक्ति में तन्मय होना है । [१]

सन्तों का स्वभाव :

गोस्वामीजी की दृष्टि में सन्त लोग संसार सागर पार कराने वाले हैं । वे सारे सन्देहों को दूर करनेवाले हैं, दूसरों के दुःखों को दूर करने का परिश्रम भी करते हैं । उनकी कृपा के बिना राम के दर्शन नहीं कर सकते । [२]

१- जो मन भज्यो चहै हरि सुरतरू ।
तौ तजि विषय-विकार,सार भजु अजहुं जो मैं कहौं सोइ करू ।
सम संतोष, विचार विमल अति,सतसंगति ये चारि दृढ़ करि धरू ।
काम क्रोध अरु लोभ मोह मद राग द्वेष निसेष करि परिहरू ।
श्रवन कथा मुख नाम हृदय हरि,सिर प्रनाम ,सेवा कर अनुसरू ।
नयनन निरखि कृपा समुद्र हरि अगजगरूप भूप सीतावरू ।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२७

२- संसय समन,दमन-दुख सुख निधान हरि एक ।
साधु कृपा बिनु मिलहिं न करिय उपाय अनेक ।
भव सागर कहं नाव सुद्ध संतन के चरन ।
तुलसिदास प्रयास बिनु मिलहिं राम दुःखहरन ।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२२
संपादक-राजनाथ शर्मा

विरागी के हृदय में ही राम का निवास है। काम, क्रोधादि विकारों से रहित मनुष्य में ही राम का निवास हो सकता है। उसे द्वैतबुद्धि को त्यागकर विशाल दृष्टिकोण रखनेवाला होना चाहिए। यों उसे सत,रज,तम आदि गुणों से रहित होना है। तभी राम प्रसन्न होते है।[1]

विरागी विषयों से दूर रहता है। वैराग्य के उत्पन्न होने से मनुष्य को विषयों से विरक्ति पैदा होती है। वह पाप कर्म करने में विमुख रहता है। पाप कर्म करने से वह तीनों तापों से मुक्त होकर आसानी से संसार सागर पार भी कर सकता है।[2]

विरागी की प्रकृति स्पष्ट करते हुए तुलसी चाहते हैं कि सुख-दुःख में समरसता का भाव हो। भगवान के प्रति प्रीति केलिए यही करना है। उनके किये हुए उपकारों की याद हमेशा मन में रखना, सदा उनका स्मरण करना, कभी भूलना नहीं, अंहकार की उपेक्षा करना, भगवान की चरण-सेवा में मग्न होना, सुख के समय उन्मत होकर गर्विष्ट न होना, प्रशंसा पाने पर भी अत्यधिक

१- हृदय द्वैत मति छांडि चरहि महि मंडल धीर।
 बिगत मोह माया मद हृदय बसत रघुबीर।
 विनयपत्रिका-पृष्ठ-४७२

२- त्रिविध सूल होलिय जरै खोलिय अघ फागु।
 जो जिय चहसि परम सुख तहि मारग लागु।।
 स्रुति पुरान बुध सम्मत चांचरि चरित मुरारि।
 करि बिचार भव तरिय परिय न कबहूं जम धारि।।
 विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१२
 संपादक-राजनाथ शर्मा

दुःखी न होना । सुख और दुःख के समय एक समान रहना है । राम की प्राप्ति केलिए कपट से काम नहीं चलता । सच्चे प्रेम के द्वारा तो राम अनायास ही हमारे वश में हो जाते हैं । [१]

संसार के सभी लोग स्वार्थी है :

लोगों की प्रकृति के विषय में तुलसी का कथन है कि संसार में सभी लोग अपनी ही भलाई चाहते हैं । सभी जीव दुःख के समय अत्यधिक दुःखी होते हैं, सुख के समय अत्यधिक सुखी भी । समरसता का जीवन वे बिता सकते नहीं । गोस्वामीजी ने विषय सुख की उपमा उस व्यक्ति से दी है जो सिर पर रखे बोझ को उतारना चाहता है और आराम पाने पर फिर भी उसे वहन करता है । अर्थात् जीव एक विषय से ऊबने पर दूसरे विषयों में लग जाता है । लेकिन शाश्वत सुख इसमें नहीं मिलता । मृगतृष्णा तो भ्रम में डालनेवाली है , पानी का आभास मात्र देता है, लेकिन पानी नहीं मिलता । विषयों में भी वैसे सुख का आभास मात्र है, उसकी ओर दृष्टि

१- मन मेरो, मानहि सिख मेरी । जो निज भक्ति चहै हरि केरी ।
उर आनहिं प्रभु कृत हित जेते । सेवहि तजे अपनपौ चेते ।
दुख सुख अरु अपमान बड़ाई । सब सम लेखहिं बिपति बिहाई ।
सुनु सठ काल-ग्रसित यह देही । जनि तेहि लागि बिदूषहि केही ।
तुलसिदास बिनु असि मति आये । मिलहिं न राम कपट लौ लाये ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२६१

संपादक-राजनाथ शर्मा

नहीं डालना है । [१]

सांसारिक नाते सारहीन होते हैं । गोस्वामीजी सारे सांसारिक संबन्धों को नश्वर मानते हैं । यह संबन्ध मरने तक ही चलता है । उसके बाद इन संबन्धों का कोई मूल्य नहीं रहता । ये संबन्ध झूठे हैं । दुःख देनेवाले हैं । उदाहरण स्वरूप गोस्वामीजी कहते है कि केले के सार की खोज करने पर भी गूदा हाथ नहीं लगता, वैसे ये सांसारिक संबन्ध ऊपर से मोहक लगने पर भी आन्तरिक रूप से दुखद हैं । सांसारिक संबन्ध वैसे मोहक लगते हैं जैसे मणि और स्वर्ण के आभूषण के बीच पड़ा कांच शोभा पाता है ।[२]

१- तोसे हैं फिरि फिरि हिम प्रिय पुनीत सत्य बचन कहत ।
सुनि मन गुनि समुझि क्यों न सुगम सुमग गहत ।
छोटो बडो खोटो खरो जग जो जहं रहत ।
अपने अपने को भलो कहु को न चहत ।
बिधि लगि लघु कीट अवधि सुख सुखी दुख दहत ।
पसु लौं पसुपाल ईस बांधत छोरत नहत ।
विषय मुद निहार भार सिर को कांधे ज्यों बहत । यों ही जिय जानि मानि सठ तू सांसति सहत ।
पायो केहि धृत बिचार हरि न बारि महत ।
तुलसी तकु ताहि सरन जाते सब लहत ।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३०१

२- राम राय बिनु रावरे मेरे को हितु सांचो । स्वामि सहित सब सों कहौं सुनि गुनि बिसेषि कोउ दूसरो सांचो ।।
देह जीव जोग के सखा मृषा टांचन टांचो
किये बिचार सार कदली ज्यों मनि कनक संग लघु लसत ।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-५३२

यह संसार स्वार्थ के बल पर चलता है। सभी स्वार्थ साधने का प्रयत्न करते हैं। कोई किसी की भलाई करता है तो उसके पीछे अवश्य स्वार्थ काम करता है। कौन स्वार्थ का साथी नहीं रहता ? नीच जाति के लोग बन्दर और रीछ का पालन करने के लिए कभी तैयार नहीं ~~जा जाते~~। भगवान राम ही यह कर सकते हैं।[१]

हनुमान की कृपा :

तुलसी रामकथा के पात्रों में हनुमान के प्रति विशेष आकृष्ट है। हनुमान राम के आत्मीय हैं। आत्मीय जन की मित्रता से ही भगवान के दर्शन मिल सकते हैं। अतः वे हनुमान के गुण तरह तरह से गाते हैं।

हनुमान की कृपादृष्टि पड़ने से आदमी की प्रतिज्ञाओं की पूर्ति हो जाती है। कार्यों का ठीक तरह संचालन करने की ताकत उनमें होती है। इससे असंभव बातों की सिद्धि तक हो जाती है। उनके स्मरण मात्र से आदमी संकटों से ~~हारकर~~ सुखी बन जाता है। उस व्यक्ति पर दूसरे देवता भी कृपादृष्टि

१- अकारन को हितू और को है।
बिरद गरीब निवाज कौन को, भौंह जासु जन जोहै।
छोटो बड़ो चहत सब स्वारथ जो बिरंचि बिरचो है।
कोल कुटिल कपि भालु पालिबो कौन कृपालुहिं सोहै।
काको नाम अनख आलस कहै अघ अवगुननि ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६२
संपादक-राजनाथशर्मा

रखते हैं ।[१]

हनुमान की कृपा से सारी मनोकामनायें पूर्ण हो जाती हैं । उनका यशोगान करने से पुरुषार्थ प्राप्त हो जाता है । चकोर चन्द्रमा का प्रेमी है, इसी कारण वह चन्द्रमा की ओर एकटक देखता रहता है । वैसे हनुमान भी अपने इष्टदेव रामचन्द्रजी की ओर लगातार देखते रहते हैं ।

हनुमान में यह विशेष शक्ति है कि वे सारे अनिष्टों को नष्ट देते हैं । अमंगल का नाश कर मंगल ला देते हैं । वे सदा सन्त लोगों के पक्ष में रहते हैं और उनकी सहायता करने में कटिबद्ध रहते हैं ।[३]

१- जाके गति है हनुमान की । ताकी पैज पूजि आई,
यह रेखा कुलिस पाषान की ।
अघटि घटन सुघट बिघटन ऐसी बिरुदावलि नहिं आन की ।
सुमिरत संकट सोच बिमोचन मूरति मोद निधान की ।
तापर सानुकूल गिरिजा ,हर लखन राम अरु जानकी ।
तुलसी कपि की कृपा बिलोकनि खानि सकल कल्यान की ।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२०

२- भक्त कामतरु नाम राम परिपूरन चन्द चकोर को ।
तुलसी फल चारों करतल जस गावत गई बहोर को ।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२१

३- मंगल मूरति मारुत नन्दन । सकल अमंगल मूल निकंदन ।
पवन तनय संतन हितकारी । हृदय बिराजत अवध बिहारी ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२६
संपादक-राजनाथ शर्मा

दया का महत्व :

गोस्वामीजी ने दया को सारे धर्मों का मूल कहा है। दया मनुष्य के मन में उठने वाला एक प्रकार का मानसिक विकार है। सभी धर्म दया में ही स्थित है। राम अपनी दयादृष्टि से सभी की रक्षा करते हैं।[१]

परोपकार की महत्ता पेर गोस्वामीजी ज़ोर देते है। वे परोपकार को मानव का परम धर्म मानते हैं। दूसरों का उपकार कर संसार में जीना कितना सुन्दर होता है।[२]

भले आदमी का महत्व :

राम श्रेष्ठ है, भले हैं। इसलिए वे सभी लोगों की भलाई करते हैं। गोस्वामीजी आगे एक सामान्य तथ्य पर बल देते हैं। भला आदमी दूसरों के कहे बिना स्वयं औरों की भलाई करने में लीन रहता है, यह उसके स्वभाव की श्रेष्ठता है।[३]

१- तोसो नतपाल न कृपाल न कंगाला मो सो।
दया में बसत देव सकल धरम।
राम कामतरु छांह चाहे रुचि मन मांह।
तुलसी बिकल बलि कलि कुधरम।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४८६

२- काज कहा नरतनु धरि सारयो। पर उपकार सार श्रुति को जो सो धोखेहु न बिचारयो।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१६

३- मेरो भलो कियो राम आपनी भलाई।
हौं तो साईं - द्रोही पै सेवक हित साईं।।
विनयपत्रिका- पृष्ठ-२०६
संपादक-राजनाथ शर्मा

मूर्ख व्यक्ति :

गोस्वामीजी मूर्ख व्यक्तियों के कुटिल स्वभाव के बारे में कहते है संपूर्ण विश्व में रामचन्द्र जी विराजमान है,लेकिन मूर्ख और पापी तो यह सत्य नहीं जानते । चन्दन की सुगन्धि आसपास के सभी वृक्षों में फैलती है । लेकिन बांस वृक्ष में नहीं फैलती । कारण यह है कि बांस खोखला होता है । यह बात मूर्ख नहीं जानते । [१]

मित्र:

तुलसी को कपटी मित्रों का कटु अनुभव शायद हुआ होगा। था । तभी तो वे कहते है कि मित्र दगाबाज़ होते है । सारे मित्र ऐसे नहीं होते । सच्चे प्रेम में कपट का लेशमात्र भी न होना चाहिए । सच्चा प्रेम निभानेवाला कोई भी नहीं । सभी स्वार्थ के वशीभूत होकर ढोंग रचते हैं । वास्तविक प्रेम तो किसी में भी नहीं होता । मित्र जब दु:ख की हालत में पड़ता है तब उसकी ओर मुड़कर दु:ख की नज़र भी नहीं डालते , प्रेम भरे वचनों से उनके मन को शीतलता नहीं पहुंचाते । उनके बीच में दगाबाज़ी का व्यापार ही चलता रहता है, प्रेम का नहीं । सच्चा मित्र मिलना मुश्किल है । [२]

१- वेद पुरान सुनत समुझत रघुनाथ सकल जग व्यापी ।
बेधत नहिं श्रीखंड बेनु इव, सारहीन मन पापी ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-२७७

२- नये नये नेह अनुभये देह गेह बसि ।
परखे प्रपंची प्रेम परत उघरि सो ।
सुहृद समाज दगाबाजि को सौदा सूत ।
जब जाको काज तब मिले पांच परि सो ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-५१४

स्वार्थी मनुष्य सबसे मूढ़ता का व्यवहार करते है । यदि उसमें अपनी भलाई का ज्ञान है तो वह उन्मत्त होकर सब लोगों से लड़ता फिरता रहता है । वह यह नहीं पहचानता कि भलाई किसमें है , किसमें नहीं है । यह समझने की शक्ति उसमें नहीं है तो कितना दुःखद है । वह अपनी सुधबुध खोकर सबसे जूझता रहता है । बुद्धि रखते हुए भी वह मूर्ख का सा जीवन बिताता है । [१]

मुक्ति की अपेक्षा भक्ति की प्रधानता है । गोस्वामीजी निर्गुणोपासना से ब्रह्मज्ञान तथा ब्रह्मज्ञान के द्वारा मुक्ति की कामना नहीं करते, क्योंकि वासना से भरा हृदय भक्ति की इच्छा करने पर भी मुक्ति नहीं मिलती। वासना से मुक्त होने पर ही मोक्ष की सिद्धि होती है । भक्ति की इच्छा वे करते हैं, पर उन्हें मालूम है कि भक्ति की प्राप्ति अत्यधिक दुर्लभ है । [२]

नीच का आदर कभी नहीं करना । उसका आदर करें तो वह अत्यधिक उन्मत्त बन जाता है। उन्मत्त होने पर वह किसी को नहीं मानता । उसका आदर करने की कोई आवश्यकता नहीं ।[३]

१- आपनो हित रावरो सों जा पै सूझै ।
तो जनु तनु पर अछत सीस सुधि क्यों कबंध ज्यों जूझै ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४७९

२- काम संकल्प उर निरखि बहु बासनिहिं ।आस नहिं एकहू आंक निरबान की ।
भगति दुरलभ परम संभु सुक मुनी मधप । प्यास पदपंकज मकरंद मधुपान की ।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-४३२

३- चूक चपलता मोरियै तू बडो बडाई ।
होत आदरे ढीठ है, अति नीच निचाई ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-१२८
संपादक-राजनाथ शर्मा

अत्याचारी की दुर्गति :

पातकी पर कोई कृपा नहीं करता । इस बात को उदाहरण सहित गोस्वामीजी व्यक्त करते हैं । चन्दन की सुगन्धि बांस में नहीं फैलती । यों करील वृक्ष पर वसन्त का कोई प्रभाव नहीं पड़ता , क्योंकि उसमें पत्ते नहीं होते । बांस के खोखली होने के कारण सुगन्धि उसमें व्याप्त नहीं होती । वसन्त कैसे ठूंठ करील को प्रभावित कर सकता है ? यह असंभव है । महान पातकी व्यक्ति पर ईश्वर भी कृपादृष्टि नहीं डालते हैं । [१]

मानव-जन्म को व्यर्थ नष्ट किये बिना उसे ठीक ठीक उपयोग में लाना है । विवेक-बुद्धि पशु-पक्षियों में नहीं होती । विवेकी मनुष्य को अपने जीवन का मूल्य समझना होगा । नश्वर समझनेवाला आदमी विवेक से काम ले तो अच्छा होगा । ईश्वर के भजन में समय बितानेवाला , शुद्ध अन्त:करण वाला व्यक्ति सब कहीं आदरणीय होता है । मनुष्य जन्म में ही पुण्य -कार्यों की पूर्ति संभव होती है, अन्य योनियों में नहीं । मनुष्य जन्म के मूल्य का बोध

१- बेनु करील , श्रीखण्ड बसन्तहि दूषन मृषा लगावै ।
   सार रहित भाग्य सुरभि, पल्लव सो कहु किमि पावै ।

विनयपत्रिका-२७२

संपादक-राजनाथ शर्मा

कराना गोस्वामीजी का लक्ष्य है। [१]

धन का होना और न होना दोनों दु:खदायक है। वेदों ने धन को दु:ख देनेवाली वस्तु बताया है। अत्यधिक मात्रा में धन के बढ़ने से आदमी स्वयं अपने को भूलकर मदोन्मत्त हो जाता है। चारों ओर की परिस्थितियों को वह भूल जाता है। अनेक पाप कर्म करके अन्त में वह नरक-वास करने लगता है। लेकिन धन के अभाव में आदमी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। दरिद्रता के चक्कर में पड़कर वह दिन रात दु:ख झेलता रहता है। उसे कभी शान्ति की प्राप्ति नहीं होती। दूसरों से भीख तक मांगनी पड़ती है। इसलिए धन होने पर भी मनुष्य शान्ति का अनुभव नहीं करता, वैसे धन के अभाव में भी। इसी प्रकार विषयवासना की होने पर भी विषयी को दु:ख होता है, विषयवासना की पूर्ति न होने पर भी। दोनों दशाओं में दु:ख सह लेना पड़ता है। [२]

१- लाभ कहा मानुष तनु पाये।
काय-बचन-मन सपनेहुं कबहुंक घटत न काज पराये।
जो सुख सुरपुर नरक गेह बन, आवत बिनहिं बुलाये।
तेहि सुख कहं बहु जतन करत मन, समुझत नहिं समुझाये।।
परदारा पर द्रोह, मोहबस किये मूढ़ मन भाये।
गरभ बास दुख रासि जातना तीव्र बिपति बिसराये।।
भय, निद्रा, मैथुन, अहार सबके समान जग जाये।
सुर दुरलभ तनु धरि न भजे हरि मद अभिमान गंवाये।।
गई न निज-पर-बुद्धि सुद्ध ह्वै रहे न राम-लय लाये।
तुलसीदास यह अवसर बीते का पुनि के पछिताये।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४१८

२- विषयहीन दुख मिले बिपति अति, सुख सपनेहुं नहिं पायो।
उभय प्रकार प्रेत-पवाक ज्यों धन दु:खप्रद स्रुति गायो।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२५

प्रेम तत्व की महिमा बताते हुए तुलसी कहते है कि प्रेमास्पद ही प्रेमी को सुख देता है। जिससे प्रेम का संबन्ध स्थापित हो जाता है वही उसे सुख पहुंचा सकता है। राम तो सभी को सुख प्रदान करते हैं।[१]

प्रेम के द्वारा राम को प्राप्त कर सकते है। राम को प्राप्त करने का उपाय यही प्रेम है। गुरु भगवान का स्वरूप माना गया है। अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर करनेवाले गुरु की चरण-पूजा से राम जल्दी प्राप्त हो जाते है। वे सभी को सुखी रखना भी चाहते हैं।[२]

वास्तविकता से प्रेम का संबन्ध जोड़ना चाहिए। दर्पण में पड़ने वाले हमारे रूप की परछाई मिथ्या होती है, वास्तविक नहीं होती। यों दर्पण सामने से हट जाने पर वह परछाई मिट भी जाती है। इसलिए उसे सत्य नहीं समझना चाहिए। गोस्वामीजी माता, पिता, पत्नी पुत्र आदि के संबन्ध को मिथ्या या नश्वर मानते है। स्वार्थ-साधना की सिद्धि के लिए में ये संबन्ध जुड़ते रहते हैं।[३]

१- जाको मन जासों बंध्यो, ताको सुखदायक सोइ।
   सरल सील साहब सदा सीतापति सरिस न कोइ।
      विनयपत्रिका-पृष्ठ-४०४

२- श्री हरि गुरु पद कमल भजहु मन तजि अभिमान।
   जेहि सेवत पाइय हरि सुख निधान भगवान ।।
   परिवा प्रथम प्रेम बिनु राम मिलन अति दूरि ।
   यद्यपि निकट हृदय निज रहे सकल भरि पूरि ।।
      विनयपत्रिका-पृष्ठ-४२२

३- सहज सनेही राम सों तैं कियो न सहज सनेह।
   तातें भव-भाजन भयो सुनु अजहुं सिखावन एह।
   ज्यों मुख मुकुर बिलोकिये अरु चित न रहै अनुहारि।
   त्यों सेवतहुं न आपने ये मातु पिता सुत नारि ।।
      विनयपत्रिका-पृष्ठ-४०९

अपराध एक करता है , उसका दुष्परिणाम दूसरों पर पड़ता है। लोक व्यवहार की अनेक बातों पर प्रकाश डालते हुए तुलसी यह कहते हैं कि अगर नौकर बुरा बिगड़ जाता है तो उसका दोष मालिक पर पड़ता है। उसे ठीक रास्ते पर चलाने का उत्तरदायित्व स्वामी पर रहता है। अगर वह आंखें मूंदे रहता है तो उसका बुरा प्रभाव उसे सहना पड़ता है। जैसे, कुत्ता अगर कहीं जाकर किसी को चोट पहुंचाता है तो सभी यही कहते हैं, यह कुत्ता अमुक व्यक्ति का है। अपराधी दुष्परिणाम का शिकार नहीं बनता, दूसरा ही शिकार बनता है। यही विचित्र सांसारिक रीति है। [१]

क वि ता व ली

गोस्वामीजी की रचना 'कवितावली' अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी गयी है। इस ग्रन्थ में कविकी वेदना भरी जीवन गाथा की भी एक झांकी मिल जाती है। उसके अलावा तत्कालीन सामाजिक स्थिति का चित्रण भी मिल जाता है। कवि की विद्वत्ता इसमें स्पष्ट है। काव्य-कला की दृष्टि से भी कवितावली अत्यधिक सफल निकली है। कवितावली की सूक्तियों में चर्चित विषयों में भी प्रमुख नाम स्मरण है।

नाम-स्मरण :

कलियुग में एकमात्र राम नाम ही व्यक्ति का सहारा है। इस युग

१- भलो भाँति राम को कहैं मोहि सब नर नारी।
बिगरे सेवक स्वान ज्यों साहिब सिर गारी ।।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-३३६

मे अनीतियों का राज होता है। सब कहीं अनीति ही दीख पड़ती है। धर्म की हालत तो अत्यधिक शोचनीय है। लेकिन लौकिक और पारलौकिक सुख भोगों की प्राप्ति केलिए राम-नाम ही व्यक्ति की सहायता करता है। [१]

आवागमन रूपी बन्धन से मुक्त होने केलिए तपस्या करने से कोई फायदा नहीं होता, तीर्थों के दर्शन करने से भी। नाम व्यक्ति को इस दुःख से विमुक्त कर देता है। कलियुग मे वैराग्य,ज्ञान आदि का कोई मूल्य नहीं रहता। झूठ,दंभ आदि की प्रधानता है। सुख की प्राप्ति केलिए राम नाम-जप मे मग्न होना चाहिए। [२]

राम-नाम से प्रीति रखनेवाले की भलाई होती है। नाम-जप से कितने लोग सुधर गये। नाम के प्रभाव से गज, गणिका,अजमिल आदि को सद्-गति मिली। भारी सभा मे द्रौपदी का अपमान होनेवाला था, लेकिन

१- बेद पुरान बिहाइ सुपंथ कुमारग कोटि कुचाल चली है।
काल कराल नृपाल कृपालन राज समाज बड़ोई छली है।
बर्न-बिभाग न आश्रम-धर्म, दुनी दुख दोष-दरिद्र दली है।
स्वारथ को परमारथ को कलि राम को नाम प्रताप बली है।
कवितावली-पृष्ठ-४११

२- न मिटै भव संकट दुर्घट है तप तीरथ जन्म अनेक अटो।
कलि मे न बिराग न ज्ञान कहूं, सब लागत फोकट झूंठ जटो।
नट ज्यों जनि पेट - कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाट ठटो।
तुलसी जो सदा सुख चाहिय तो रसना निसि बासर राम रटो।
कवितावल-पृष्ठ-४१२ -उत्तरकाण्ड
संपादक-श्रीकान्त शरण

भगवान ने ही इस विपत्ति से उसकी रक्षा की । राम - नाम पर अवश्य प्रेम रखना है । [१]

राम - नाम का स्मरण करने से ऊसर भूमि उपजाऊ हो जाती है, उल्लू हंस हो जाता है , उसकी सद्गति होती है । भलाई ही भलाई होती है । [२]

भाव यह है कि नाम - स्मरण से पापी पापों से मुक्त होकर पुण्यवान बन जाता है । दुष्ट व्यक्ति दुष्कर्मों से निवृत्त हो जाता है । नाम सारी मलिनताओं से आदमी को मुक्त कर देता है । उसकी अपार महिमा का वर्णन करने में हम असमर्थ होते हैं । [३]

१- राम बिहाय मरा जप ते बिगरी सुधरी कवि कोकिल हू की ।)
नामहि तें गज की, गनिका की अजामिल की चलि गै चल-चूकी ।) कवितावली
नाम प्रताप बड़े कुसमाज बजाइ रही पति पांडुबधू की ।)
ताको भलो अजहूं तुलसी जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की ।) पृष्ठ-४२४
नाम अजामिल से खल तारन, तारन बारन बारबधू को ।)
नाम हरे प्रह्लाद बिषाद,पिता भय साँसति सागर सू को ।)

२-सूर सिरताज महाराजनि के महाराज,जाको नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो ।
साहब कहां जहान जानकीस सो सुजान ,सुमिरे कृपालु के मराल होत खूसरो ।
केवट पषान जातुधान कपि भालु तारे,अपनायो तुलसी सो धींग धम धूसरो ।
बोल को अटल ,बाँह को पगार दीनबंधु,दूबरे को दानी को दयानिधान दूसरो।

कवितावली-उत्तरकाण्ड-पृष्ठ-२८३

३- कीबे को बिसोक लोक लोकपाल हू तें सब ,
कहूं कोऊ भो न चरवाहो कपि भालु को ।
पवि को पहार कियो ख्याल ही कृपालु राम ।
बापुरो बिभीषन घरौंधा हुतो बाल को ।।
नाम ओट लेत ही निखोट होत खोटे खल ,
चोट बिनु मोट पाइ भयो न निहाल को ?

कवितावली-पृष्ठ-२८३

नाम - स्मरण से बुरे आदमी भी भले बन जाते हैं। नाम की शरण लेने से उसमें कपटता नहीं रह जाती। कस्तूरी का साथ देनेवाली वस्तुयें भी कस्तूरी के संग से मूल्यवान हो जाती हैं। कस्तूरी के मार्ग की मिट्टी भी अमूल्य बन जाती है, उसी प्रकार नाम-स्मरण करनेवाले का भी मूल्य बढ़ जाता है।[१]

आदमी चाहे क्रूर हो, कुमार्ग से चलनेवाला हो तो भी अगर वह नाम जप निष्ठा से करता है तो उसका उद्धार अवश्य होता है। वह रत्न के समान मूल्यवान बन जाता है।[२]

१- आगे परे पाहन कृपा, किरात, कोलनी ,
कपीस, निसिचर अपनाए नाए माथ जू।
सांची सेवकाई हनुमान की सुजानराय ,
ऋनियां कहाये हौ बिकानौ ताके हाथ जू।।
तुलसी से खोटे खरे होत ओट नाम ही की ,
तेजी माटी मगहू की मृगमद साथ जू ?
बात चले बात को न मानिबो बिलग बलि ,
काकी सेवा रीझि कै नेवाजो रघुनाथ जू ?
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२८६

२- अपत,उतार, अपकार को अगार जग,
जाकी छांह छुए सहमत ब्याध बाध को
पातक पहुमि पालिबे को सहस्रानन सो,
कानन कपट को पयोधि अपराध को।
तुलसी से नाम को भी दाहिनो दयानिधान,सुनत सिहात सब सिद्ध साधु साध को।
राम नाम ललित ललाम कियो लाखनि को, बड़ा कूर कायर कपूर कौड़ी आध को।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३७५

राम भजन का महत्व :

पूर्णतया राम-भक्त तुलसी राम-नाम की श्रेष्ठता के सम्बन्ध में कहने के बाद राम भजन की महिमा समझाते हैं। राम की पूजा करने से भलाई अवश्य होती है। वे सभी लोगों से मित्रता का व्यवहार करते हैं। अपनी शरण में आये हुए लोगों की उपेक्षा वे कभी नहीं करते। उनकी रक्षा करने में वे सदा सावधान रहते हैं। राम के अलावा दूसरा कौन उनकी भलाई करने में समर्थ है? राम की चरण-पूजा में लगे रहनेवाले व्यक्ति चाहे निम्नजाति में जन्म-लिये हुए व्यक्ति हों, तो भी कोई बात नहीं। वे सब के आदर का पात्र बन जाते हैं। [1]

राम-भजन से सारे संकट दूर हो जाते हैं। दरिद्रता से व्यक्ति को एकदम मुक्ति मिल जाती है। अगर हमें मांगने की ज़रूरत पड़ती है तो और किसी से न मांगकर अकेले रामचन्द्रजी से मांगना है, वही उत्तम है। इससे उसके सारे क्लेश मिट जाते हैं। [2]

१- मीत पुनीत कियो कपि भालु को, पाल्यो ज्यों काहु न बाल तनूजो।
सज्जन सींव विभीषन भो, अजहू बिलसै बर बंधु बधू जो।
कोसल पाल बिना तुलसी सरनागत पाल कृपालु न दूजो।
कूर कुजाति कुपूत अघी सब की सुधरै जो करै नर पूजो।
कवितावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२५३

२- जग जांचिये कोऊ न जांचिये जो जिय जांचिये जानकी जानहि रे।
जेहि जांचक जाचकता हरि जाइ जो जारति जोर जहाननि रे।
गति देखु बिचारि विभीषन की, अरु आनु हिये हनुमानहि रे।
तुलसी भजु दारिद दोष - दवानल, संकट कोटि कृपानहि रे।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३०८
संपादक-श्रीकान्त शरण

चातक के समान जो भगवान के भजन में लीन होता है वही यथार्थ भक्त है। उसे अत्यधिक मत होना है, कठोर वचन कहना भी अच्छा नहीं। सभी अवस्थाओं में चातक अपने प्रेमी चन्द्रमा पर अनन्य प्रेम रखकर उसमें तल्लीन रहता है, उसी प्रकार प्रकृति की प्रतिकूल परिस्थितियों में ध्यान न देकर जो भगवान के प्रति अनन्यभक्ति रखता है वही भगवान का सच्चा सेवक है। [1]

नाम स्मरण से सबकी भलाई होती है। नाम - भजन की महिमा दुहराते तुलसी कभी नहीं अघाते। वेद,पुराण आदि भी इसके प्रमाण हैं, अर्थात् इनमें भी नाम की महिमा का बखान किया गया है। नाम रूपी समुद्र में मन को पूर्ण रूप से निमग्न करना है। नाम -स्मरण में तल्लीन रहने पर सभी प्रकार की भलाई आ जाती है, इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं उठती। राम-नाम के प्रभाव से अधम लोग भी उत्तम बन जाते हैं। [2]

१- भलि भारत भूमि भली कुल जन्म समाज सरीर भलो लहि कै।
करुना तजि कै परुना हिम मारुत धाम सदा सहि कै।
जो भजै भगवान सयान सोई तुलसी हठ चातक ज्यों गहि कै।
नतु और सबै विष बीज भये हर हाटक कामदुहा नहि कै।

कवितावली-पृष्ठ-३१६

२- वेद हू पुरान कही, लोकहू बिलोकियत।
राम नाम ही सों रीझें सकल भलाई है।
कासी हू मरत उपदेसत महेस सोई।
साधना अनेक चितई न चित लाई है।
छाछी को ललात जे ते राम नाम के प्रसाद।
खात खुनसात सोंधे दूध की मलाई है।
राम राज सुनियत राजनीति की अवधि, नाम राम रावरो तो चाम की भलाई है।

कवितावली-पृष्ठ-३८८

राम नाम रत्न के समान सुशोभित होनेवाला है। रत्न की आभा जैसे चारों ओर विकीर्ण पड़ती है वैसे नाम रूपी रत्न का आलोक भी सब कहीं फैल जाता है। नाम जप से सारे संकटों से आदमी निवृत्त हो जाता है। कोई बात अगर बिगड़ जाती है तो वह राम नाम के प्रभाव से सीधी हो जाती है। विधाता नाम-स्मरण करनेवाले व्यक्ति के प्रतिकूल काम नहीं करते। विधाता भी उसके अनुकूल हो जाते है। मौत भी नाम के प्रभाव से दूर हो जाती है, अमंगलकारिणी सारी बातें मंगलमय हो जाती है।[१]

राम - भक्त का महत्व :

जीवित रहते हुए रामचन्द्रजी से प्रेम रखनेवाले व्यक्ति मरने के बाद उन्हीं में मिल जाता है। राम पर विश्वास रखनेवाला व्यक्ति कोई भी हो, उसका इस संसार में जन्मग्रहण करना बहुत अच्छा है। दूसरे लोग जीते हुए भी मरे हुए व्यक्ति के समान जीवन बिताते हैं।[२]

१- सोच संकटनि सोच संकट परत जर ,
जरत प्रभाव नाम ललित ललाम को।
बूड़ियो तरति बिगरीयो सुधरति बात।
होत देखि दाहिनो सुभाव बिधि बाम को।।
मागत अभाग अनुरागत विराग भाग।
जागत, आलसि तुलसी हू से निकाम को।
धाई धारि फिरि के गोहारि हितकारी होति।
आई मीचु मिटति जपत राम नाम को।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८८

२- राम हैं मातु पिता गुरु बंधु औ संगी सखा सुत स्वामी सनेही।
राम की सौंह भरोसो है राम को, राम रंग्यो रुचि राच्यो न केही।
जीयत राम, मुये पुनि राम,सदा रघुनाथहि की गति जेहि।
सोइ जिये जग मैं तुलसी, नतु डोलत और मुये धरि देही।।
कवितावली-पृष्ठ-३२५

राम का भक्त विषय-वासना से बच सकता है। क्रोध के वशीभूत होकर मनुष्य क्रोधाग्नि में जलने लगता है। काम विकार सभी को अपने फन्दे में डालता है। लोभ से आकृष्ट न होनेवाला व्यक्ति कोई भी नहीं होता। धन के लोभ में आदमी भ्रम करता रहता है। स्त्रियों के कटाक्ष बाण से आहत होकर पुरुष गिर पड़ते हैं। अपार धनराशि पाकर मनुष्य अन्धा हो जाता है। मोह से कौन आकृष्ट नहीं होता। उपर्युक्त विकारों से बचनेवाला केवल राम-भक्त होता है। [१]

राम-भक्त की महिमा। राम - भक्त की भलाई अवश्य होती है। प्रह्लाद को मारने केलिए किये गये सारे प्रयत्न मिट्टी में मिल जाते हैं। उसको पीने केलिए दिया गया विष भी राम की कृपा से अमृत के रूप में परिणत हो जाता है। राम - भक्त की सारी शूल विघ्न-बाधायें जल्दी ही फूल के रूप में बदल जाती हैं। राम - भक्त की यही उल्लेखनीय विशेषता है। [२]

१- को न क्रोध निरदह्यौ, काम बस केहि नहिं कीन्हें।
को न लोभ दृढ फंद बांधि त्रासन करि दीन्हों ?
कौन हृदय नहिं लाग कठिन अति नारिन यन सर ?
लोचन जुत नहिं अंध भयो श्री पाइ कौन नर ?
सुर - नाग लोक महिमंडलहु को जु मोह कीन्हों।
कह तुलसिदास सो ऊबरै जेहि राख राम राजिवनयन।
कवितावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-४७६

२- बालहु बोलि दियो बलि काल को, कायर कोटि कुचालि चलाई।
पापी है बाप, बडे परितापतें आपनि ओरतें खोरि न लाई।
भूरि दई बिषमूरि, भई प्रह्लाद सुधाई सुधा की भलाई।
रामकृपां तुलसी जन को जग होत भले को भलाई भलाई।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-४६७

जो राम का भक्त नहीं वह विषयवासनाओं के पीछे पड़कर अपना जीवन बरबाद कर डालता है। वह प्रतिष्ठा पाने केलिए लालायित रहता है, धन, घर आदि के प्रति मोह रखता है। विरह, रोग, शोक आदि से वह पीड़ित रहता है। उसको दुःख से जीवन गुजाराना पड़ता है, काम, क्रोधादि विकार उस पर रा[illegible] करने लगते हैं। इसी कारण उसे सुख के बदले हमेशा दुःख का साथी बनकर रहना पड़ता है। राम - भक्त न होने के कारण उसे कितना दुःख उठाना पड़ता है। [१]

राम से प्रेम न करने का बुरा परिणाम। राम से प्रेम न जोड़नेवाला व्यक्ति निरा पशु ही होता है। पशु के समान उसका जीवन योंही बीतता जाता है, उसके जीवन का कोई महत्व नहीं होता। इन मनुष्यों से जानवरों को गोस्वामीजी श्रेष्ठ मानते हैं। उपर्युक्त स्वभाव वाले व्यक्ति का जीना और मरना एक ही समान होता है। तब उसके जीवन का अन्त होना ही बेहतर है। [२]

१- तो लों लोभ लोलुप ललात लालची लबार,
बार बार, लालच धरनि धन धाम को।
तब लों बियोग रोग सोग भोग जातना को।
जुग सम लगत जीवन जाम जाय को।
तौलों दुख दारिद दहत अति नित तनु।
तुलसी है किंकर बिमोह कोह काम को।
सब दुख आपने, निरापने सकल सुख।
जो लों जन भयो न बजाइ राजा राम को।
विनयपत्रिका-पृष्ठ-४६०

२-तिन्ह ते खर सूकर स्वान भले, जड़ता बस ते न कहैं।
तुलसी जेही राम सों नेह नहीं सो सही पसु पूंछ बिखान है।
जननी कत भार मुई दस मास, भई किन बांझ गई किन च्वै।
जरि जाउ सो जीवन जानकी नाथ। जियै जग मैं तुम्हरो बिनु ह्वै।
कवितावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३३३

राम से प्रेम न करनेवाला कभी सराहनीय व्यक्ति नहीं हो सकता। उसकी तुलना अनेक व्यक्तियों से की गयी है। वीर तो युद्ध क्षेत्र से भयचकित होकर वापस नहीं नहीं लौटता। कायर युद्ध भूमि का आभूषण नहीं हो सकता। विषयवासनाओं के प्रति आसक्ति रखनेवाले यति का जीवन सफल नहीं हो सकता। दान न देनेवाले धनी का सम्मान कहीं भी नहीं होता। धर्माचरण की उपेक्षा करनेवाला निर्धन कभी पूज्य नहीं हो सकता। अच्छे कर्म न करनेवाले पण्डित का जीवन व्यर्थ है। मां-बाप के प्रति आदर न रखनेवाले पुत्र का जन्म क्या सफल है? कभी नहीं। पति की सेवा प्यार से करना ही पत्नी का कर्तव्य है, ऐसा न करनेवाली पत्नी व्यर्थ ही जीती है। ऐसे ही राम चरणों की पूजा भक्ति और स्नेह से जो नहीं करता, उसका जीवन व्यर्थ है। [१]

राम से विमुख व्यक्ति :

भगवान रामचन्द्रजी से विमुख रहना क्या अच्छी बात है? कभी नहीं। उनसे विमुख रहनेवाला व्यक्ति कुटिल होता है। वह सुख से वंचित

१- जाय सो सुभट समर्थ पाइ रन रारि न मंडै।
जाय सो जती कहाय विषय बासना न छंडै?
जाय धनिक बिनु दान, जाय निर्धन बिनु धर्महिं।
जाय सो पंडित पढ़ि पुरान जो रत न सुकर्महिं।
सुत जाय मातु पितु भक्ति बिनु, तिय सो जाइ जेहि पति न हित।
सब जाय दास तुलसी कहै जो न रामपद नेह नित।

कवितावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-४७४
संपादक-श्रीकान्त शरण

रहता है। उसकी संपत्ति नष्ट हो जाती है। सभी प्रकार से उसकी अवनति होती है। [१]

उस व्यक्ति का इस संसार में जीना ही व्यर्थ है जो रामचन्द्रजी से विमुख रहता है। धन से संपन्न व्यक्ति पृथ्वी , घर और सुन्दर शरीर से भी अनुगृहीत हो, स्वर्ग - तुल्य जीवन बिताता भी हो तो भी उसकी यह सारी संपत्ति जल्दी नष्ट होनेवाली है। ये नश्वर होते हैं। क्षण में ही इनका नाश हो जाता है। उसका जीवन असफल कहानी निकलता है। [२]

राम की कृपा का महत्व :

राम अपनी कृपादृष्टि जिस पर रखते हैं वह समस्त सिद्धियां आसानी से हस्तगत कर सकता है। राम तो कृपा का सागर हैं। वे अपने भक्तों पर कृपा

१- वेद पढ़ैं बिधि संभु सभीत, पुजावन रावन सों नित आवैं।
दानव देव दयावने दीन दुखी दिन दूरिहि तें सिर नावैं।
ऐसेउ भाग भगे दस भाल तें जो प्रभुता कवि कोविद गावैं।
राम से बाम भए तेहि बामहि बाम सबै सुख संपति लावैं।

कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२५०

२- गज बाजि-घटा भले भूरि भटा, बनिता सुत भौंह तकै सब वै।
धरनि धन धाम सरीर भलो, सुरलोकहु चाहि इहै सुख स्वै।
सब फोकट साटक है तुलसी, अपनो न कछू सपनो दिन द्वै।
जरि जाउ सो जीवन जानकीनाथ, जिये जग में तुम्हरो बिनु ह्वै।

कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३३४
संपादक- श्रीकान्त शरण

की वर्षा करते है । वे जिसके अनुकूल पड़ते हैं उसकी सारी कामनाओं की पूर्ति जल्दी होती है । [१]

राम की कृपा से व्यक्ति की अवनति नहीं होती । वेद भी इसका साक्षी है । अपने भक्त का उद्धार राम स्वयं करते है । राम जिसे तारते हैं उसकी उन्नति होती है, अवनति नहीं । [२]

शिव की महिमा:

राम की स्तुति जिस तीव्रता से तुलसी करते हैं उसी तीव्रता से वे शिव की भी वन्दना करते है । शिव -भक्त सांसारिक तापों से अछूता रहता

१- आयो हनुमान प्रानहेतु, अंकमाल देत ,
लेत पगधुरि एक चूमत लंगूल हैं ।
एक बूझे बार बार सीउ समाचार कहे ।
पवनकुमार भे बिगत श्रमसूल हैं ।
एक भूखे जानि आगे आने कंद मूल फल,
एक पूजे बाहुबल तोरि मूल फूल हैं ।।
एक कहैं तुलसी ` सकल सिधि ताके जाके
कृपापाथनाथ सीतानाथ सानुकूल हैं ।
कवितावली-पृष्ठ-१४०

२- आपु हों आपु को नेके के जानत, रावरो राम भरायो गढ़ायो ।
कीर ज्यों नाम रटै तुलसी सो कहै जग जानकी नाथ पढ़ायो ।।
सोई है खेद जो बेद कहै न घटै जन जो रघुबीर बढ़ायो ।
हों तो सदा खर को असवार तिहारोहिं नाम गयंद चढ़ायो ।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३६२

है । ताप में उसे जलना नहीं पडता । शिव का स्मरण करने से वे सन्तुष्ट होकर उसके दु:ख दूर करते हैं, वे दरिद्रता को पास तक आने नहीं देते । शिव की सेवा करने का यही पुण्य फल मिलता है । [१]

शिव की कृपा :

शिव की कृपा से सारे मनोरथों की पूर्ति हो जाती है । उन्हें सन्तुष्ट न करने से सारी बातें असम्भव हो जाती हैं । भक्तों के दु:खों और तापों को जला डालने के विषय में शिवजी दवानल रूपी हैं । विषय सुख के पीछे भटकना कभी अच्छा नहीं होता । शंकर की आराधना न करने पर अन्य साधन करने से क्या फायदा होता है । उनके समान दयालु दूसरा कोई नहीं है । [२]

१- विष पावक, व्याल कराल गरे, सरनागत तौ तिहुं ताप न डाढ़े ।
भूत बेताल सखा, भव नाम, दलै पल मे भव के भय गाढे ।।
तुलसीस दरिद्र - सिरोमनि सो सुमिरे दुखदारिद होहिं न ठाढ़े
भौन में भांग, धतूरोई आंगन , नांगे के आगे हैं मांगने बाढ़े ।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-५३२

२- चाहै न अनंग - अरि एको अंग मंगन को,
देबोई पै जानिए सुभाव सिद्ध बानि सो ।
बारिबुंद चारि त्रिपुरारि पर डारिए तौ ,
देत फल चारि लेत सेवा सांची मानि सो ।
तुलसी भरोसो न भवेस भोलानाथ को तौ ,
कोटिक कलेस करौ मरौ छार छानि सो ।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-५३६
संपादक-श्रीकान्तशरण

अन्नपूर्णा का महत्व :

तुलसीदास ने अन्य देवी-देवताओं की भी प्रार्थना की है । देवी अन्नपूर्णा की महत्ता को भी उन्होंने स्वीकार किया है । देवी अन्नपूर्णा की कृपा न पाने पर मनुष्य को दुःख झेलना पडता है । उसे कुछ न कुछ पाने केलिए विवश होकर मांगना पडता है । उसे प्यास बुझाने केलिए कुछ भी नहीं मिलता, भूख मिटाने केलिए भी । भोजन की इच्छा होने पर भी भोजन नहीं मिलता । वह मनुष्य के दुःखों के निवारण का स्थान है । [१]

सीतावट की महिमा :

सीतावट का सेवन करने से धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि चारों पुरुषार्थ प्राप्त हो जाते हैं । जहां सीता ने पुत्रों को जन्म दिया वहां गंगा के तट पर स्थित वृक्ष सीतावट कहलाता है । उस वृक्ष की छाया सभी को शीतलता प्रदान करती है , पापी पापों से विमुक्त हो जाता है । [२]

१- लालची ललात बिललात द्वार द्वार दीन,बदन मलीन मन मिटै ना बिसूरना ।
ताकत सरधा,कै बिबाह कै उछाह कछू । डोलै लोल बूझत सबद ढोल-तूरना ।।
प्यासेहुं न पावै बारि, भूखें न चनक चारि,चाहत अहारन पहार,दारि घूर ना ।
सोक को अगार,दुखभार भरो तौलों जन, जौलों देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना
कवितावली-पृष्ठ-५२४

२- जोग जप जाग को बिराग को पुनीत पीठ ,
रागिन्ह पै सीठि, डीठि बाहरी निहारि हैं ।।
राम भगतन को तौ कामतरु तैं अधिक ,
सियवट सेये करतल फल चारि हैं ।।
कवितावली-पृष्ठ-५१२
संपादक-श्रीकान्त शरण

गंगा की महिमा :

गंगा नदी में स्नान करने का विचार मन में आते ही उसका उद्धार हो जाता है। वह नदी तो उतना पवित्र है। इसमें स्नान करने से मनुष्य के मन का सारा कालुष्य नष्ट हो जाता है और वह कल्मषों से मुक्त होकर पवित्र बन जाता है।[१]

स्फुट विषयों की चर्चा भी कवितावली में मिलती है।

संसार में भले आदमी की हमेशा भलाई ही होती है। गोस्वामीजी इस तथ्य को सोदाहरण स्पष्ट करते हैं। कंस ने ब्रज भूमि के निवासियों से बुरा व्यवहार किया, उसका परिणाम भी उसे भोगना पड़ा। दुर्योधन की भी यही हालत थी। नीच कर्म करने के कारण उसकी अवनति होती है। अगर वह पुण्य कर्म करता तो उसकी उन्नति अवश्यक होती। वे दृढ़ता से कहते हैं कि संसार में अच्छे लोगों की बुराई कभी नहीं होती।[२]

१- देवनदी कहं जो न जान किये मनसा कुल कोटि उधारे।
देखि चले झगरें सुरनारि, सुरेस बनाइ बिमान संवारे।।
पूजा को साज बिरंचि रचैं, तुलसी जे महातम जानन हारे।
ओक की नीच परी हरिलोक बिलोकत गंग तरंग तिहारे।

कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-५१६

२- कंस करी ब्रज बासिन सों कुभांति चली न चलाई।
पांडु के पूत सपूत, कपूत सुजोधन भो कलि छोटो छलाई।।
कान्ह कृपालु बड़े नतपालु, गए खल खेचर खीस खलाई।
ठीक प्रतीति कहै तुलसी जग होइ भले को भलोई भलाई।।

कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४६६
संपादक-श्रीकान्तशरण

कर्म के अनुसार फल :

अपने किये हुए कर्मों का फल स्वयं अपने आप को सहना पड़ता है। सांसारिक जीव तीनों तापों से हमेशा सताया जाता है। इस पीड़ा का कारण अपने किये हुए बुरे कर्म ही हैं। बुरे कर्मों का बुरा परिणाम भोगना पड़ता है।[१]

सेवक का महत्व :

सच्चा सेवक तो वही है जो स्वामी की सेवा में हमेशा तल्लीन रहता है। स्वामी के सुख को वह अपना सुख मानता है। सेवा करने में उसे कुशल होना चाहिए। वही यथार्थ सेवक है। कायर व्यक्ति का आदर कोई भी नहीं करता। वीर का सम्मान सब कहीं होता है। रीछ, वानर आदि को किसने सेवक बनाया है। अर्थात् समर्थ व्यक्ति ही सेवक के रूप में नियुक्त किया जाता है।[२]

१- जीव जहान में जायो जहां सो तहां तुलसी तिहुं दाह दहो है।
दोष न काहू, कियो अपनो, सपनेहु नहीं सुख लेस लहो है।
राम को नाम ते होउ सो होउ, न सोऊ हिये, रसना ही कहो है।
कियो न कछू करिबो न कछू कहिबो न कछू मरिबोइ रहो है।
कवितावली-पृष्ठ-४२५

२- भूमिपाल,व्यालपाल,नाकपाल,लोकपाल,कारन कृपाल,मैं सबै के जी की थाह ली।
कादर को आदर काहू के नाहिं देखियत, सबनि सोहात है सेवा-सुजान टाहली।।
तुलसी सुभाय कहै नाहीं किए पच्छपात, कौन ईस किये कीस-भालु खास माहली।
राम ही के द्वारे पै बोलाय सनमानियत,मोसे दीन दूबरे कपूत कूर काहली।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२६७

संपादक-श्रीकान्त शरण

राजनैतिक बात :

गोस्वामीजी ने राजा की तुलना कूप से की है। रस्सी के अभाव में पथिक कुएं से पानी नहीं निकाल सकता, इसी कारण वह प्यासा होकर चला जाता है। राजा अच्छा नहीं है तो उससे प्रजा का कुछ भी लाभ नहीं होता। गुणवान राजा की आंख हमेशा प्रजा की भलाई पर केन्द्रित रहती है।[१]

व्यावहारिक बात :-

पेट केलिए मनुष्य सभी प्रकार के कर्म संकोच के बिना करते हैं। संसार के सभी लोग पेट केलिए रात-दिन मेहनत करते हैं। नीच कर्म करने केलिए भी वे तैयार रहते हैं। बड़वानल से भी पेट की अग्नि भयंकर होती है। भूख के आने पर व्यक्ति अंधा हो जाता है। भूख की अग्नि को बुझाने की शक्ति अकेले राम में रहती है।[२]

१- सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों, बिहूनेगुन पथिक पियासे जात पथ के।
जैसे जौसे चौसे चित तुलसी स्वारथ हित, नीके देखे देवता देवैया घने गथ के।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२६६

२-किसबी किसान कुल बनिक भिखारी भाट
चाकर चपल नट चोर चार चेटकी ।।
पेट को पढ़त गुन गढ़त चढ़त गिरि ।
ऊंचे नीचे करम धरम अधरम करि,
पेट ही को पचत बेचत बेटा बेटकी ।।
तुलसी बुझाइ एक राम घनश्याम ही तें ।
आगि बड़वागि तें बड़ी है आगि पेट की ।।
कवितावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४३२
संपादक-श्रीकान्त शरण

गीतावली :

गोस्वामीजी की यह रचना भी उत्कृष्ट है। राम की जीवन कथा का सुन्दर चित्रण गोस्वामीजी ने किया है।

राम भक्त का महत्व :

सच्चा राम भक्त मने, वचन और कर्म से राम की भक्ति में लीन रहता है, अर्थात् वह केवल वचन मात्र को रामजी में केन्द्रित नहीं करता, अपने चित्त और कर्म तक उसी में लीन रखता है। मनसा-वाचा-कर्मणा राम को जो प्यार करते हैं उनका जीवन धन्य होता है, सफल होता है। [1]

राम-भजन किये बिना मनुष्य का जीवन सफल नहीं होता। ईश्वर-भजन करने से हमारे जीवन की शुभ गति होती है, उसी से इस शरीर का मूल्य बढ़ता है। भजन बिना इस शरीर का क्या महत्व होता है, गधे के समान इस शरीर की कोई प्रधानता नहीं रहती। [2]

राम- नाम - जप का महत्व :

कलियुग में राम-नाम का जप करने से पाप नष्ट हो जाता है। कलियुग में सब और कुटिलता छायी रहती है। इस कुटिलता से बचने का

१- बिरचत इन्हहिं बिरंचि भुवन सब सुंदरता खोजत री।
तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम बच जिन्ह के हित री।
गीतावली-पृष्ठ-१२८

२- ताते नाथ कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं।
भजनहीन नरदेह वृथा, खर- स्वान-फेरु की नाईं।।
गीतावली-पृष्ठ-२५४
नवम संस्करण, गीताप्रेस, गोरखपुर

उपाय राम-नाम का जप है । [१]

राम की शरण में आये हुए सभी लोगों की रक्षा वे करते हैं, उनका कल्याण अवश्य होता है । वह धनी हो या निर्धन, कोई बात नहीं । छोटे होने पर भी राम अपने आश्रितों की रक्षा करने में झिझकते नहीं । मूर्ख और बुद्धिमान दोनों प्रकार के लोगों को भी वे नहीं छोड़ते, वैसे दुर्बल और बलवान को भी । जिन अंधे दरिद्र लोगों का एकमात्र सहारा राम है, उनका साथ वे कभी नहीं छोड़ते । सारे कल्मषों से वे एकदम मुक्त हो जाते हैं । [२]

राम - नाम - जप का महत्त्व :

कलियुगीनमलिनता, राम-नाम-रूपी सूर्य की किरणें पड़कर बोस बिन्दु की भांति गल जाती है, अर्थात् नाम के प्रभाव से सारी कुरीतियों का अन्त हो जाता है । नाम-स्मरण करने से कितने लोगों का उद्धार हो गया, पुराण ग्रन्थ यह तत्व साबित करते हैं । मरते वक्त नारायण नामक अपने पुत्र का नाम लेने के कारण अजामिल की सद्गति हुई । वह जल्दी भव-

---

१- घर घर मंगलचार एकरस हरषित रंक गनी ।
तुलसिदास कल कीरति गावहिं जो कलिमल समनी ।।
गीतावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४२०

२- गये राम सरन सबको भलो ।
गनी - गरीब बड़ो - छोटो , बुध-मूढ़ , हीनबल अतिबलो ।
पंगु-अंध निरगुनी- निसंबल, जो न लहै जाचे जलो ।
सो निबह्यो नीके, जो जनमि जग राम - राजमारग चलो ।
गीतावली-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-३४०-३४१
प्रकाशक-हनुमान प्रसाद पोद्दार

सागर पार कर सका । दुष्ट रावण का भाई होने पर भी विभीषण अपने को प्रभु के चरणों तले अर्पित करने के कारण उसकी भलाई हुई । प्रभु के नाम-स्मरण से सब लोगों का कल्याण होता है । [१]

राम से प्रेम करने का महत्व :

राम से प्रेम करने पर सुख मिल सकता है । गोस्वामीजी राम के चरणों को प्रयाग मानते हैं । राम से प्रेम जोड़ने पर वैराग्य जप, तप, योग, यज्ञ आदि साधनायें करने का फल मरने के पहले ही मिल जाता है । [२]

भगवान के सगुण रूप का महत्व :

भगवान के सगुण रूप के उपासक हैं गोस्वामीजी । सगुण भक्ति में मग्न व्यक्ति के सामने मुक्ति की कोई प्रधानता नहीं । इसे मुक्ति सारहीन चीज़ है । मुक्ति से बढ़कर भक्ति की प्रधानता होती है । [३]

१- नाम-प्रताप दिवाकर-कर-खर गरत तुहिन ज्यों कलिमलो ।
सतहित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल सो खलो ।
प्रभु पद प्रेम प्रनाम -कामतरु सद्य विभीषन को फलो ।
तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगल मय नभ - जल-थलो ।
गीतावली-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-३४१

२- बिनु बिराग-जप-जाग-जोग व्रत, बिनु तप, बिनु तनु त्यागे ।
सब सुख सुलभ सद्य तुलसी प्रभु पद प्रयाग अनुरागे ।
गीतावली-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-४०५

३- जिन्ह के मन मगन भए हैं रस सगुन, तिन्ह के लेखे अगुन मुकुति कवनि ।
श्रवन-सुख करनि, भवसरिता-तरनि, गावत तुलसीदास कीरतिपावन ।
गीतावली-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-२७२

गुरु का महत्व :

गुरु के प्रति अत्यधिक आदर रखनेवाले गोस्वामीजी गुरु और दशरथ के चारों पुत्रों के चरणकमलों की वन्दना करते हैं। इससे भव-सागर पार करना आसान हो जाता है। गुरु के प्रति छल-रहित पूज्य-भाव रखना चाहिए। उन्हें संसार-सागर में इधर उधर भटकना नहीं पड़ता। [१]

भाग्यवाद :

विधाता टेढ़े स्वभाव वाले है। राम की आज्ञा से लक्ष्मण में सीता को वाल्मीकि आश्रम में पहुंचा देता है। सीता को वाल्मीकि आश्रम में पहुंचा देता है। सीता की विधि के बारे में सोचकर वाल्मीकि कुण्ठित हो जाते है। हमारी इच्छा के अनुसार विधाता काम नहीं करते। अपनी इच्छा के अनुसार वे सब कुछ करते हैं। [२]

१- याके चरन - सरोज कपट तजि जे भजिहैं मन लाई।
ते कुल जुगल सहित तरिहैं भव, यह न कछू अधिकाई।।
सुनि गुरुबचन पुलक तन दंपति हरष न हृदय समाई।
तुलसिदास अवलोकि मातु-मुख प्रभु मन में मुसुकाई।।
गीतावली-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६

२- पुत्रि न सोचिए आई हों जनक गृह जिय जानि।
कालिही कल्यान कौतुक कुसल तव कल्यानि।।
राजरिषि पितु - ससुर, प्रभु पति, तू सुमंगल खानि।
ऐसेहू थल बामता, बड़ि बाम बिधि की बानि।
गीतावली-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४३६

नाता धोने से कभी नहीं मिटता । हमारे रिश्तेदार व्यक्ति कुटिल और बुरे स्वभाव वाले होने पर भी हमारे बन्धु ही होते हैं । राम को वन भिजवाने के कारण भरत क्रुद्ध हो जाता है । उनका कहना है कठोर हृदय वाली होने पर भी कैकेयी उनकी माता है । सभी को सुख प्रदान करने वाला चन्द्रमा विष और वारुणी का बन्धु कहा गया है, यद्यपि वह अमृत का खजाना है । नाता किसी भी कारण वश टूट नहीं जाता, चाहे वे कितने दुराचारी क्यों न हो । [1]

पति ही पत्नी का सब कुछ है । पति से बिछुड़कर रहना तो स्नेह को लूटने के समान है, विरह से उत्पन्न विरह वेदना सहना तो कुछ कठिन बात है । पत्नी तब मरणतुल्य जीवन बिताती है, पति ही आकर उसकी रक्षा कर सकते हैं । [2]

१- ताते हौं देत न दूषन तोहू ।
राम बिरोधी उर कठोर तें प्रगट कियो है बिधि मोहू ।
सुंदर सुखद सुसील सुधानिधि, जरनि जाइ जिहि जोए ।
बिष-बारुनी-बंधु कहियत बिधु नातो मिटत न धोए ।
गीतावली-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४२

२- तात तोहू सों कहत होति हिये गलानि ।
मन को प्रथम पन समुझि अछत तनु ।।
लखि नइ गति भइ मति मलानि ।
पिय को बचन परिहर्यो जिय के भरोसे ।
संग चली बन बडो लाभ जानि ।
प्रीतम-बिरह तौ सनेह सरबसु सुत ।।
गीतावली-सुन्दर काण्ड,पृष्ठ-२६६

प्रत्येक अवसर पर जो काम करना है , वह काम कर डालना है , बाद में उसके बारे में सोचकर चिन्ता करने की कोई ज़रूरत नहीं । फिर पछताने से कोई फायदा नहीं । तब तो उस प्रत्येक अवसर की अत्यधिक प्रधानता होती है ।[१]

पाप-कर्म नाश का कारण है । पापी के नाश का कारण पाप ही होता है । हनुमान के लंका में आग लगा देने पर सब कहीं रोने की आवाज़ सुनायी देती थी । रावण तो अनेक पाप-कर्म करनेवाले हैं , उन्हीं पापों का बुरा परिणाम किसी न किसी तरह से भोगना पड़ता है ।[२]

वात्सल्य-भावना:

बाल केलियां देखकर सभी के मन उछल उठते हैं । माता के मन में विशेष आनन्द पैदा होता है । बच्चा मुनियों के मन में भी आनन्द की लहरें उठा देता है । वह सभी को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है । जो इन बाललीलाओं से सुख नहीं पाते, उनका इस संसार में जीना निष्फल होता है । उनके मन की अनोखी हालत है । बच्चों की क्रीड़ाओं में लोग अपने को भूलकर मग्न होते हैं । गोस्वामीजी सामाजिक जीवन के कितने निकट आये हैं ।[३]

१- औसर को चूकिबो सरिस न हानि ।
गीतावली-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-२६६

२- आसव आहुति किये जातुधान । लखि लपट भभरि भागे बिमान ।
नभतल कौतुक,लंका बिलाप । परिनाम पचहिं पातकी पाप ।।
गीतावली-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-३१०

३- गिरि घुटुरुवनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप दिखाये ।
बाल केलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनंद न अमाये ।।
देखत नभ घन-ओट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराये ।
तुलसिदास जे रसिक न यहि रस ते नर जड़ जीवत जग जाये ।
गीतावली-बालकाण्ड,पृष्ठ-७२-७३

कर्चा के बारे में आगे भी कहा गया है। बालक राम की लीलाओं का वर्णन कर गोस्वामीजी कहते हैं कि राम के इस नित्य नूतन चरित्र का गान या श्रवण प्रेमपूर्वक करनेवाले बड़भागी हैं। प्रभु तो शीलवान और स्वभाव में पवित्रता रखनेवाले होते हैं। उनके स्मरण में मग्न होकर उसी रंग में रंगे हुए लोग बडे पुण्यवान बनते हैं। उनका जन्म धन्य होता है।[1]

कपटी व्यक्ति भगवान के सम्मुख नहीं आसकता। रावण का भाई होने के कारण विभीषण के स्वभाव के संबन्ध में सन्देह पैदा हो जाता है। हनुमान इसके बारे में राम से पूछते हैं। सुमति, साधु और सुहृद व्यक्ति है। विभीषण राम के मन में। भगवान राम विभीषण पर अत्यधिक भरोसा रखते हैं। सूर्य का उदय होते ही अन्धकार का नाश हो जाता है, फिर एक क्षण भी अन्धकार नहीं ठहर पायेगा। वैसे छली मनुष्य ईश्वर का सामीप्य लाभ नहीं पा सकता ।[2]

१- नभ पुर परति निछावरि जहं तहं, सुर सिद्धनि वरदान दये।
मूरि भाग अनुराग उमगि जे गावत सुनत चरित नित ये।
हारे हरष होत हिय भरतहि, जिते सकुच सिर नयन नये।
तुलसी सुमिरि सुभाव-सील सुकृती तेइ जे एहि रंग रए।
गीतावली-बालकाण्ड, पृष्ठ-८६

२- हिय बिहसि कहत हनुमान सों।
सुमति साधु सुचि सुहृद विभीषन बूझि परत अनुमान सों।
हों बलि जाउं और को जाने? कही कपि कृपानिधान सों।
छली न होइ स्वामी सनमुख ज्यों तिमिर सातहयजान सों।
गीतावली-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-३३१

सेवक का महत्व :

सेवक को पवित्र प्रेम करनेवाला व्यक्ति होना चाहिए । राम शरणागतों की रक्षा करने में कभी पीछे नहीं । राम शरणागतों की रक्षा करनेवाले है । स्वामी की भलाई ही उसका लक्ष्य है । उसके विपरीत कभी नहीं काम करना चाहिए । मालिक के प्रति निष्कपट प्रेम रखना सेवक का कर्तव्य है । उसमें छल-कपट का नाम-मात्र भी नहीं होना चाहिए । [१]

बरवै रामायण

यह एक संग्रह ग्रन्थ है । इसमें राम -कथा के संबद्ध रूप का अभाव है । तथापि राम कथा के कुछ प्रसंग इसमें आलंकारिक रूप से वर्णित है । इस काव्य में अलंकारों की भरमार है । राम-नाम के महत्व का प्रतिपादन बहुत हुआ है । अत: बरवै रामायण को गोस्वामीजी की उत्कृष्ट कृति समझने में कोई बाधा नहीं ।

लौकिक और पारलौकिक सुख भोगों केलिए राम और सीता दोनों के प्रति प्रीति रखना आवश्यक है । लौकिक सुख में इस संसार के सुख भोग होते है । लौकि सुख में इस संसार के सुख भोग होते हैं । और पारलौकिक सुख-भोग रहते है । इन दोनों से प्रेम रखने पर सारे सुख अनायास ही प्राप्त हो जाते हैं । [२]

१- पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं, सकल सभा पति आउ ।
नहि कोऊ प्रिय मोहि दास सम, कपट-प्रीति बहि जाउ ।
सुनि रघुपति के वचन बिभीषन प्रेम-मगन मन चाउ ।
तलसिदास तजि आस- त्रास सब ऐसे प्रभु कहं गाउ ।
गीतावली-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-३४५

२- स्वारथ परमारथ हित एक उपाय ।
सीय- राम - पद ` तुलसी ` प्रेम बढ़ाय ।।
बरवै रामायण-पृष्ठ-६३

राम - नाम - महिमा :

राम - नाम से प्यार रखने का उपदेश गोस्वामीजी देते है । यह नाम तो सारी विपत्तियों से आदमी को मुक्त कर देता है, सारे दुःखों का हनन कर डालता है, चिन्ता को दूर कर देता है । अतः यह राम-नाम कल्याण करनेवाला साधन है । इस मंत्र का जप नित्य करना बड़ा श्रेष्ठ होता है ।[१]

' राम ' इस पवित्र नाम के दोनों अक्षरों में एक अक्षर को रामजी मानना है, दूसरे अक्षर को लक्ष्मण मानना है । ये दोनों हमें अत्यधिक प्रिय है वैसे इस नाम से भी प्रेम रखना है । इस शिक्षा को हृदय में रखकर प्रनाम की आराधना करनी चाहिए ।[२]

इस नाम को माता का रूप माना गया है, पिता का रूप माना गया है, गुरु और स्वा मी का रूप भी माना गया है । सभी को यह नाम अच्छा लगना है । अच्छा नहीं लगता तो विधाता भी टेढ़े हो जाते हैं । विधाता उसके प्रतिकूल हो जाते है । गोस्वामीजी ने इस नाम पर मातृत्व पितृत्व, गुरुत्व और स्वामित्व का आरोप लगाया है जो बहुत सुन्दर हो उठा है ।[३]

१- संकट सोच विमोचन मंगल गेह । तुलसी राम नाम पर करिय सनेह ।

बरवै रामायण, पृष्ठ-६५

२- राम नाम दुइ आखर हिय हितु जानु ।
राम लखन सम्य ' तुलसी ' सिखवन आनु ।

बरवै रामायण, पृष्ठ-६७

३- माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम ।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि बाम ।।

बरवै रामायण-पृष्ठ-६८

अत्यधिक विश्वास रखकर सारी चिन्ताओं से मुक्त होकर इस नाम का जप करने से इस लोक और परलोक में कल्याण होता है। सुख और शान्ति की प्राप्ति होती है। दुःख का नाम रंच-मर मी नहीं होता।[१]

नाम का जप तपस्या से मी अधिक महत्त्व रखता है। तीर्थाटन करने के बदले इस पुण्य नाम का स्मरण करना काफी है। नाम का स्मरण करनेवाले को यज्ञ, दान आदि करने की कोई ज़रूरत नहीं। पूजा-पाठ और उपवास मी क्यों करें? इन समी आचरणों से नाम-स्मरण श्रेष्ठ है।[२]

नाम-स्मरण से चारों पुरुषार्थ-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सिद्ध हो जाते हैं। नाम-स्मरण से सारी सिद्धियाँ जल्दी प्राप्त कर सकते हैं।[३]

१- राम-नाम जपु तुलसी होइ बिसोक।
लोक सकल कल्यान नीक परलोक।

बरवै रामायण, पृष्ठ-७३

२- तप तीरथ मख दान नैम उपवास।
सब ते अधिक राम जपु तुलसीदास।

बरवै रामायण, पृष्ठ-७४

३- तुलसी सुमिरत राम सुलम फल चारि।
बेद पुरान पुकारत कहत पुरारि।

बरवै रामायण, पृष्ठ-८३

(अ) काम धेनु हरिनाम कामतरु राम। तुलसी सुलम चारि फल सुमिरन नाम।

बरवै रामायण, पृष्ठ-६१
श्रीकान्त शरण

यह नाम दोष को दूर कर देता है , पापों का हनन कर डालता है, दु:खों से निवृत्त कर देता है , दरिद्रता रूपी अग्नि में जलनेवाले लोगों को राम-नाम शीतलता प्रदान करता है । राम अमंगलों का नाश कर मंगल ला देते हैं । [१]

नाम-स्मरण से हम संसार सागर को जल्दी पार कर सकते हैं । साधु सन्तों की सेवा में समय बिताना चाहिए । साधु सन्तों की सेवा में जी जान से लीन हो जानो पर तथा जी जान से नाम-स्मरण में लीन होना परम आवश्यक है । कर्म करके सन्तों की सेवा में तल्लीन होना बड़ा उत्तम होता है ।[२]

गोस्वामीजी कहते हैं कुछ लोग ऐसे हैं जो राम-नाम जपने का उपदेश दूसरों को देने पर भी स्वयं उसका आचरण नहीं करते । तात्पर्य यह है - रामचन्द्र जी के प्रति उनके हृदय में प्रेम नहीं रहता । अगर वे राम से प्रीति रखते तो अवश्य उनके प्रेम में मग्न होते । राम और उनके बीच में पाप बाधा के रूप में उपस्थित होता है । पाप कर्म करने के कारण वे राम से प्रेम नहीं जोड सकते । पुण्य कर्म करने पर ही हम नाम-जप में मन लगा सकते हैं । [३]

१- दोष दुरित दुख दारिद दाहक नाम । सकल सुमंगल दायक तुलसी राम ।
बरवै रामायण,पृष्ठ-८५

२- सुमिरहु नाम राम कर सेवहु साधु । तुलसी उतरि जाहु भव उदधि अगाधु ।
बरवै रामायण,पृष्ठ-८६

३- एकहि एक सिखावत जपत न आप
तुलसी राम प्रेम कर बाधक पा ।
बरवै रामायण,पृष्ठ-६३

(ब) मरत कहत सब सब कहं सुमिरहु राम ।
तुलसी अब नहिं जपत समुझि परिनाम ।
बरवै रामायण,पृष्ठ-६४

कलियुग में राम नाम का स्मरण बहुत उत्तम है। ध्यानपूर्वक राम-नाम जप करने का उपदेश गोस्वामीजी देते हैं। राम से विमुख रहने से उसकी दुर्गति अवश्य होती है। कलियुग की ज्वालाओं से बचने का एकमात्र औषधि राम नाम है। इस पवित्र नाम पर कलियुग का कोई वश नहीं चलता।[1]

राम-नाम ही व्यक्ति का सच्चा मित्र है। मित्र हित करनेवाले हैं। वैसे राम - नाम भी हमारी भलाई करता है। मरने पर प्राणी शरीर छोड़ देता है, तब नाम इस शरीर को श्रीराम-धाम पहुंचा देता है। मित्र तो हमेशा अपने दोस्त का साथ देते हैं। लेकिन मरने के बाद वे उनका साथ नहीं देते। केवल राम- नाम ही मरने के बाद उस आत्मा को उच्च बना देता है। इसी कारण आवागमन के बन्धन से आत्मा मुक्त हो जाती है।[2]

पयस्विनी नदी के तीर पर रहना अत्यधिक मंगलकारी है। वैसे कल्पवृक्ष के पास रहना भी सुखद प्रतीत होता है। क्योंकि कल्पवृक्ष सारी मनोकामनाओं की पूर्ति कर डालता है। वहां रहकर राम,सीता और लक्ष्मण के ध्यान में रहना अत्यधिक श्रेष्ठ होता है। इनका स्मरण करने से सारे दु:ख दूर हो जाते हैं। गोस्वामीजी अपने इष्ट देव के ध्यान में मग्न रहने का उपदेश देते हैं।[3]

१- तुलसी राम नाम जपु आलस छांड
राम विमुख कलिकाल को भयो न मांडु ।।
वरवै रामायण,पृष्ठ-६६

२- तुलसी राम नाम सम मित्र न आन।
जो पहुंचाव राम पुर तनु अवसान।
वरवै रामायण-पृष्ठ-६७

३- चित्रकूट पय तीर सो सुरतरु वास। लखन राम सिय सुमिरहु तुलसीदास।
वरवै रामायण,पृष्ठ-५८

पयस्विनी नदी में स्नान करना श्रेष्ठ होता है, वैसे फलाहार करना भी। सांसारिक मोह मायाओं में मन को न डुबाकर उनसे हटा लेना परम आवश्यक है। राम और सीता की चरण सेवा में अपने को न्योछावर कर देना चाहिए। अगर हमारा मन पापों में लीन रहता है तो हरि भजन में मन नहीं लगता। पापों से रक्षा पाने केलिए राम का स्मरण करना है। [१]

जा न की मं ग ल :

जानकीमंगल गोस्वामीजी की एक छोटी रचना है। छोटी होने पर भी यह रचना बहुत सुन्दर है। इस काव्य में राम और जानकी दोनों के विवाह का सरस वर्णन किया गया है। वह अत्यधिक हृदयहारी बन गया है।

राम - स्मरण महिमा :

रामचन्द्रजी के स्मरण से अज्ञानरूपी अन्धकार दूर हो जाता है। एक बार स्मरण करने मात्र से हमारा अज्ञान मिट जाता है, और हमें ज्ञानरूपी प्रकाश मिल जाता है। अन्धकार से हमें मुक्ति मिल जाती है। राम हमारी रक्षा करने केलिए सदा सजग रहते हैं। [२]

१- पय नहाइ फल खाहु, परिहरिअ आस ।
सीय राम पद सुमिरहु तुलसीदास ।।
बरवै रामायण, पृष्ठ-६१

२- मुनि हंसि कहेउ जनक यह मूरति सोहइ ।
सुमिरत सुकृत मोह मल सकल बिछोहइ ।।
~~बरवै रामायण~~ जानकीमंगल, पृष्ठ-२८
[तुलसी ग्रंथ]

जहां तेज होता है वहां बल भी होता है । सीता जी को ब्याहने केलिए कई राजा लोग इकट्ठे हो गये । रामचन्द्रजी की अपार कान्ति देखकर राजा लोग समझ गये कि रामजी में बाण-संधान की शक्ति भी रहती है । रामजी तेजवान हैं, प्रतापी हैं, सुन्दर भी हैं । जहां इनका मेल रहता है वहां बल भी साथ देता है । [१]

राजा केलिए वचन अत्यधिक महत्व का है । वचन ही राजा का भूषण है । यदि वह वचन देता है और उसका निर्वाह नहीं करता तो वह निरादर का पात्र अवश्य बन जाता है । वचन-पालन करनेवाले का आदर सभी करते हैं । जिस प्रकार नाक गहने से चमकती है उसी प्रकार राजा वचन से शोभित होते हैं । [२]

सत्पुरुषों का वचन कभी विचलित नहीं होता, अटल रहता है । राजा लोग धनुष को अणुमात्र भी विचलित नहीं होने देते है और धनुष भंग करने का परिश्रम करते हैं, इसकी तुलना गोस्वामीजी ने सत्पुरुषों के वचन से की है । उनका वचन जैसे स्थिर रहता है वैसे यह धनुष भी स्थिर रहता है चाहे कितनी बाधायें पैदा हो तो भी उनका वचन ज्यों का त्यों रहता है । [३]

१- सुचि सुजान नृप कहहिं हमहि अस सूझई ।
तेज प्रताप रूप जहं तहं बल बूझई ।।

जानकीमंगल, पृष्ठ-१६

२- एक कहहिं भल भूप देहु जनि भूषन ।
नृप न सोह बिनु बचन नाक बिनु भूषन ।।

जानकीमंगल, पृष्ठ-२१

३- एक करहिं दाप न चाप सजन बचन जिमि टारें टारे ।

जानकीमंगल, पृष्ठ-२६

विधाता की गति बडी विचित्र होती है । रामचन्द्र जी की अपार रूप-छवि देखकर सीता जी की माता अत्यधिक क्षुब्ध होकर कहती है - कहां धनुष, कहां यह कुमार । अर्थात् धनुष तो कठोर है उस का टूटना कठिनाई की बात है । यह कोमल कुमार धनुष कैसे तोड सकते हैं । यह सोचकर वह अचरज में पड जाती है । विधाता विपरीत गति से चलने वाले हैं । उनकी गति नहीं पहचान सकते । वे किस और काम रखेंगे , यह किसी को मालूम नहीं ।[1]

गूंगा अपने आप में रस अनुभव करता है, लेकिन वह बोल नहीं पाता, इसी कारण किसी से कह भी नहीं सकता । राम और सीता की कान्ति का वर्णन किसी की पकड में न आनेवाला है । वे उतने रूपवान हैं । उनकी छवि देखने पर मन में अवाच्य आनन्द बाहर प्रकट नहीं हो पाता । लेकिन गूंगे के समान वह आनन्द बाहर प्रकट करना मुश्किल की बात है । गूंगा चाहे अमृत पान भी करे तो भी वह उसके स्वाद का बखान नहीं कर सक ता ।[2]

पा र्व ती मं ग ल :

पार्वतीमंगल भी गोस्वामीजी की एक छोटी रचना है । इसमें शिव और पार्वती दोनों के विवाह का मनोरम वर्णन मिलता है । ' मानस ' के ' बालकाण्ड ' में इनके विवाह का एक छोटा - सा चित्र मिल जाता है । लेकिन पार्वतीमंगल में उसका कुछ विस्तृत वर्णन मिलता है ।

१- सिय मातु हरषी निरखि सुषमा अति अलौकिक राम की ।
   हिय कहति कहं धनु कुंवर कहं बिपरीत गति बिधि बाम की ।।
   जानकीमंगल,पृष्ठ-२३

२- सो छवि जाइ न बरनि देखि मनु मानै ।
   सुधा पान करि मूक कि स्वाद बखानै ।
   जानकीमंगल,पृष्ठ-२६

शिव का स्मरण :

शिव का स्मरण करने से मनुष्य पुण्यात्मा हो जाते हैं। एक बार स्मरण करने मात्र से शिवजी सन्तुष्ट हो जाते हैं। पुण्यात्माओं में उसका श्रेष्ठ स्थान होता है।[१]

शिवजी की निन्दा कभी नहीं करनी है, वैसे साधुओं की भी। निन्दा करने वाले तो मूर्ख हैं, दुष्ट हैं। निन्दा सुनना भी हेय बात है, वे भी पापी होते हैं। अज्ञानी निन्दा करने का बुरा परिणाम नहीं जानता।[२]

दृढ़ निश्चय से श्रेष्ठ साधन भी सफल होता है। यहां रामभक्त गोस्वामीजी शिवजी के परम भक्त के रूप में हमारे सामने आते हैं। शिवजी की कृपा दृष्टि पड़ने पर सारी बातें मंगलमय हो जाती हैं। साहस या दृढ़ निश्चय से सभी साधनायें साध्य हो जाती हैं। सिद्धि प्राप्त करने में किसी भी प्रकार की विषमता उत्पन्न नहीं होती। शिवजी की पूजा करने से कल्पवृक्ष के समान सारी सिद्धियां प्राप्त हो सकती हैं।

१- सुमिरिहिं सकृत तुम्हहिं जन तेइ सुकृती बर।
   नाथ जिन्हहि सु धि करिअ तिनहिं सम तेइ हर।
      पार्वतीमंगल, पृष्ठ-२१

२- सिव साधु निंदक मंद अति जो।
   सुनै सोउ बड़ पातकी।
      पार्वतीमंगल, पृष्ठ-२२

३- अवसि होइ सिधि साहस फलइ सुसाधन।
   कोटि कल्प तरु सरिस संभु अवराधन।।
      पार्वतीमंगल, पृष्ठ-६

नारी पराधीन है, उसे स्वतंत्रता नहीं मिलती। नारी की विवशतायें पहचान कर तुलसी बताते हैं कि ईश्वर स्त्रियों की सृष्टि न करें, वही अच्छा है। कारण यह है कि नारी को हमेशा दूसरों का गुलाम होकर रहना पड़ता है। गुलामी में ही उनका जीवन कटता है।[१]

संसार में नारी वृथा ही जन्म लेती है। शादी के बाद वधू को वर के साथ जाना है। फिर वह अपने घर में नहीं रह सकती। यही लौकिक नियम है। यदि वह घर में रह जाय तो लोग टीका - टिप्पणी करने लगेंगे, उस पर दोषारोपण करेंगे। यह कथन सांसारिक जीवन से कितना मेल खाता है।[२]

तपस्या निष्काम होनी चाहिए :

तपस्या निष्काम होती तो उसमें क्लेश महसूस नहीं होता। कितना भी कष्ट उठाना पड़े तो भी उन्हें तकलीफ़ मालूम नहीं पड़ती। निष्काम होने पर तपस्या में पवित्रता आ सकती है।[३]

अमृत रोगी को नहीं चाहता, पर रोगी अमृत को चाहता है। अर्थात् रूपवती नारी को वर की प्राप्ति के लिए परिश्रम नहीं करना पड़ता।

१- बदति जननि जगदीस जुवति जनि सिरजहिं। पार्वती मंगल, पृष्ठ-१०

२- उमा मातु मुख निरखि नैन जल मोचहिं।
नारि जनमु जग जाय सखी कहि सोचहिं।।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-३६

३- बिनु कामना कलेस कलेस न बूझइ।।
पार्वतीमंगल, पृष्ठ-१६
गीताप्रेस, गोरखपुर

पर स्वयं उसके पास आ जाता है। वैसे रत्न राजा की खोज नहीं करता, राजा रत्न की खोज करते हैं, उसे पाने की इच्छा प्रकट करते हैं।[१]

हम अपने प्यारे के गुण - दोषों का विचार कभी नहीं करते। सर्प के लिए मणि अत्यधिक श्रेष्ठ वस्तु है, वह उसका साथ कभी नहीं छोड़ता, उसका साथ नष्ट होने पर वह मर जाता है। मछली की भी यही हालत होती है। जल से अलग होकर मछली जी नहीं सकती। जल और मछली के बीच में अखण्ड संबन्ध होता है। जल से अलग करने पर मछली के जीवन का अन्त हो जाता है। अपने प्यारे के दोष-गुणों का विवेचन कोई नहीं करता।[२]

विधि टालने पर भी टलती नहीं। गोस्वामीजी ने सब कहीं विधि की अलंघनीयता पर जोर दिया है। विधाता ने जो कुछ निश्चित करके रखा है उसमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकता। उसके लिखे अंक को मिटा देना असंभव बात है।[३]

१- मोरें जान कलेस करिय बिनु काजहि।
सुधा कि रोगिहि चाहइ रतन कि राजहि।।
पार्वतीमंगल, पृष्ठ-१६

२- सांच सनेह सांच रुचि जो हठि फेरइ।
सावन सरित सिंधु रुख सूप सो घेरइ।।
मनि बिनु फनि जल हीन मीन तनु त्यागइ।
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ।।
पार्वतीमंगल, पृष्ठ-१६

३- मेटि को सकइ सो आंकु जो बिधि लिखि राखेउ।
पार्वतीमंगल, पृष्ठ-२०
गीताप्रेस, गोरखपुर

कृष्ण गीतावली :

रामचन्द्र के अनन्य भक्त गोस्वामीजी कृष्ण के प्रति भी भक्ति रखते थे । समन्वय भाव की भक्ति के पोषक होने के नाते वे किसी के प्रति वैर भाव नहीं रखते । कृष्ण की केलियों में उनका मन खूब रम गया है । सबसे पहले कवि कृष्ण की महिमा सुनाते हैं ।

श्री कृष्ण का महत्व :

दैहिक,दैविक और भौतिक ऐसे तीनों तापों को हरनेवाले है भगवान श्री कृष्ण । वे तीनों तापों से मुक्त कर भगवान हमारी रक्षा कर डालते हैं ।[1]

भगवान का महत्व यह है कि वे दु:ख दूर करनेवाले है । उनकी कीर्ति सुनने पर सारे क्लेश दूर हो जाते हैं , अमंगल बातें मंगलमय हो जाती हैं । भगवान का यशोगान सुनने पर कौन प्रसन्न नहीं होता ।[2]

१- बरन बनज - लोचन, कपोल सुभ, श्रुति मंडित कुंडल अति सुंदर ।
मनहुं सिंधु निज सुतहिं मनावत पठए जुगल बसीठ बारिचर ।।
नंदनंदन मुख की सुंदरता कहि न सकत श्रुति सेष उमाबर ।
तुलसिदास त्रैलोक्य - बिमोहन रूप कपट नर त्रिविध सूलहर ।।
कृष्णगीतावली- पृष्ठ-३८
श्रीकान्त शरण

२- जुग जुग जग साके केशव के समन कलेस कुसाज ।
तुलसी को न होइ सुनि कीरति कृष्ण कृपालु भगतिपथ राजी
कृष्णगीतावली-पृष्ठ-१६७
श्रीकान्त शरण

भक्ति की अनन्यता :

अनन्यता में ही भक्ति की श्रेष्ठता मानी गयी है । गोस्वामीजी ने कृष्ण के प्रति अपनी भक्ति गोपियों के मुंह से निकले वचनों से व्यक्त की है । कृष्ण को छोड़कर दूसरे से प्रीति जोड़ना गोपियों को अच्छा नहीं लगता । उनके अनुसार एकमात्र व्यक्ति पर मन को केन्द्रित कर उनकी भक्ति में लीन होना ठीक है । अनन्यता के बिना भक्ति का कोई मूल्य नहीं होता । [१]

भक्ति सुख का मूल है :

भक्ति में लीन होने पर दु:ख का नाम मात्र भी नहीं होता । परमात्मा की चिन्ता में मग्न होने पर हम अपनी परिस्थिति तक भूल जाते हैं और उस परम चैतन्य में विलीन हो जाते हैं । वेद-पुराण भी भक्ति से मिलने वाले शाश्वत सुख का गान करते हैं । [२]

१- वह अति ललित मनोहर आनन कैसे जतन बिसारौं ।
जोग जुगुति अरु मुकुति बिबिध बिधि वा मुरली पर वारौं ।
जेहि उर बसत स्याम सुंदर घन तेहि निर्गुन कस आवै ।
तुलसिदास सो भजन बहावो जाहि दूसरो भावै ।
कृष्णगीतावली, पृष्ठ-७२

२- कौन सुनै अलि की चतुराई ।
अपनिहि मतिबिलास अकास महं चहत सियनि चलाई ।।
सरल सुलभ हरि भगति - सुधाकर निगम पुराननि गाई ।
तजि सोइ सुधा मनोरथ करि करि को मरिहै री माई ।।
जद्यपि ताको सोइ मारग प्रिय जाहि जहां बनि आई ।
मैन के बसन कुलिस के मोदक कहत सुनत बौराई ।।
श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-१२८
संपादक-श्रीकान्त शरण

प्रेम दु:ख का कारण है :

कृष्ण से बिछुड़कर रहने से गोपियां विरहाग्नि में तड़पती हैं । संयोग के समय वे आनन्द सागर में थिरकती है , अब वियोग की व्यथा उठाती हैं । कृष्ण से प्रेम जोड़ने के कारण उन्हें विरहाग्नि में पड़कर जलना पड़ा । अगर वे किसी से प्रेम का नाता न जोड़ती तो उन्हें इस प्रकार का दु:ख नहीं उठाना पड़ता । इससे स्पष्ट है कि प्रेम वेदना का मूल है । [१]

प्रेम में दोष का विचार करना उचित नहीं । क्रोध की अवस्था में भी अपने प्यारे व्यक्ति के गुण- दोषों पर विचार करना उचित नहीं । उससे प्रेम की दृढ़ता नष्ट हो जाती है, और प्रेम की श्रृंखला टूट जाती है , उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती है । अपने प्यारे व्यक्ति के दोषों को सावधानी

१- ऊधो जू कह्यो तिहारोइ कीबो ।
   नीके जिय की जानि अपनपो समुझि सिखावन दीबो ।
   स्याम बियोगी ब्रज के लोगनि जोग जोग जो जानो ।
   तो सकोच परिहरि पा लागों परमारथहि बखानो ।
   गोपी गाय ग्वाल गोसुत सब रहत रूप - अनुरागे ।
   दीन मलीन छीन गोसुत सब रहत रूप - अनुरागे ।
   तुलसी है सनेह दुखदायक, नहिं जानत ऐसे को है ?
   तऊ न होत कान्ह को सो मन, सबै सास्तिहि सोहै ।

कृष्ण गीतावली,पृष्ठ-८५

संपादक- श्रीकान्त शरण

से उसे समझना चाहिए । [१]

प्रेम संबन्धी विचारों से मन भारी होता है । विरह में ही प्रेम की ठीक परीक्षा होती है । विरह रूपी अग्नि में जल - जलकर प्रेमरूपी सोना अत्यधिक खरा निकलता है । प्रेम -समुद्र में निमज्जन करने पर अनेक व्यथायें होती हैं । उन व्यथाओं से मन को दृढ़ता आ जाती है । [२]

एकांगी प्रेम से किसी को भी सुख नहीं मिलता । चातक और मेघ की बात कहकर गोस्वामीजी इस सत्य को स्पष्ट करते हैं । मेघ के प्रति चातक के हृदय में अटूट प्रेम रहता है । चातक प्रेम - विवश होकर रात - दिन उस प्रेमाग्नि में जलता रहता है, लेकिन मेघ इस बात पर ध्यान नहीं देता । मछली की भी यही हालत होती है । जल के अभाव में मछली की मृत्यु हो जाती है । जल के प्रति मछली के प्रेम की यह चरमसीमा है , प्रेमी केलिए मरने तक तैयार रहता है, लेकिन जल इस बात की चिन्ता नहीं करता । वैसे मणि से बिछुडने पर सर्प अत्यधिक व्याकुल होता है । लेकिन मणि इस बात पर चिन्तित नहीं । उसी प्रका र संगीत से आकृष्ट होकर हरिण बधिक के बाण की चिन्ता न कर उस संगीत के

१- अति अति अनुचित उतरु न दीजे ।
सेवक सखा सनेही हरि के जो कछु कहै सो कीजे ।
देसकाल उपदेस संदेसो सादर सब सुनि लीजे ।
कै समुझिबो , कै ये समुझै है हारेहु मानि सहीजे ।
सखि सरोष प्रियदोष बिचारत प्रेम पीन पन छीजे ।
कृष्णगीतावली,पृष्ठ-११०

२- ऊधौ है बड़े कहै सोइ कीजे ।
अलि पहिचानि प्रेम की परमिति उतरु फेरि नहिं दीजे ।
कृष्णगीतावली-पृष्ठ-११४
संपादक-श्रीकान्त शरण

पीछे दौड़ पड़ता है। एकांगी प्रेम का यही परिणाम निकलता है।[1]

प्रेम की गति दुर्गम है। अच्छे लोगों से प्रेम का संबन्ध जोड़ने पर कभी दु:खित होने का अवसर नहीं मिलता। लेकिन नीच और निर्मोही व्यक्ति से प्रेम - संबन्ध जोड़ने पर अवश्य दु:ख सागर में डूब जाता है। प्रेमास्पद की निष्ठुरता कठिन होती है। वैसे प्रेमी के लिए प्रेम का रास्ता भी कंटकाकीर्ण होता है। प्रेम की सफलता के लिए अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कंटकाकीर्ण पथ पर कदम रखने से ही प्रेम की सफलता होती है।[2]

१- ऐसे हौं हूं जानति भृंग।
नाहिंने काहू लह्यो सुख प्रीति करि इक अंग।
कौन भीर जो नीरदहि जेहि लागि रटत बिहंग।
मीन जल बिनु तलफि तनु तजै सलिल सहज असंग।
पीर कछु न मनिहि जाके बिरह बिकल भुअंग।
व्याध- बिसिख बिलोकि नहिं कलगान लुबुध कुरंग।
स्यामघन गुनवारि छबिमनि मुरलि तान तरंग।
लग्यो मन बहु भांति तुलसी होइ क्यों रसभंग।।

कृष्णगीतावली- पृष्ठ-१३६

२- ऊधौ प्रीति करि निरमोहियन सों को न भयो दुखदीन ?
सुनत समुझत कहत हम सब भई अति अप्रबीन।
अहि कुरंग पतंग कंज चारु चातक मीन।
बैठि इनकी पांति अब सुख चहत मन मतिहीन।
निठुरता अरु नेह की गति कठिन परति कही न।
दास तुलसी सोच नित निज प्रेम जानि मलीन।।
कृष्णगीतावली-पृष्ठ-१४२
संपादक-श्रीकान्तशरण

विधाता के सामने कुछ बश नहीं चलता । कृष्ण को देखने की लालसा गोपियों के हृदय में पैदा होती है। लेकिन उनकी इच्छा पूरी होने में सन्देह होता है । लेकिन विधाता से अनुनय विनय करने की कोई आवश्यकता नहीं । जो कुछ होना है, वह होकर ही रहेगा । [१]

अपना हित करना ही भला है । श्रेष्ठ मुनियों का यही उपदेश होता है । दूसरों की हितसाधना करना बहुत मुश्किल है । इसके बदले अपनी भलाई केलिए प्रयत्न करना चाहिए । [२]

अत्यधिक अनीति अच्छी नहीं है, वह किसी को भी पसन्द नहीं आती । कृष्ण तो नटखट बालक है । वह सभी गोपियों के घर में जाकर मक्खन

१- कोउ सखि नई चाह सुनि आई ।
यह ब्रज भूमि सकल सुरपति सों मदन मिलिक करि पाई ।
धन-धावन ,बगपांति पटो सिर, बैरख -तड़ित सोहाई ।
बोलत पिक नकीब गरजनि मिस मानहुं फिरति दोहाई ।
चातक मोर चकोर मधुप सुक सुमन समीर सहाई ।
चाहत कियो बास बृंदावन बिधि सों कछु न बसाई ।
कृष्णगीतावली-पृष्ठ-७०

२- सब मिलि साहस करिय सयानी ।
ब्रज आनियहि मनाइ पांय परि कान्ह कूबरी रानी ।
बसै सुबास, सुपास होहि सब फिरि गोकुल रजधानी ।
महरि महर जीवहिं सुख जीवन खुलहि मोद मनि खानी ।।
तजि अभिमान अनख अपनो हित कीजिय मुनिबर बानी ।

कृष्णगीतावली-पृष्ठ-११८

संपादक-श्रीकान्तशरण

चुराकर खा लेता है । इस पर गोपियां अत्यधिक कुपित हो जाती हैं और कृष्ण की माता यशोदा से गपशप करती है । पुत्र को यही शिक्षा देनी चाहिए कि अनीति करना कभी अच्छा नहीं । [१]

शत्रु की वाणी मीठी होने पर भी विषैली होती है और मित्र की गाली भी अमृतमय होती है । कृष्ण के विरह में तड़पती गोपियां कुब्जा का व्यंग्य करती है । दूसरों के दोषों पर टीका-टिप्पणी करना नारी का अपना स्वभाव है । उनका कहना है - शत्रु की वाणी चाहे मीठी हो, तो भी उसमें विष भरा हुआ होता है । सुन्दर वाणी कहकर वे हमें कपटरूपी फन्दे में डाल देते है । मित्र चाहे गाली के शब्द कहे तो भी उसमें अमृत भरा हुआ होता है । मित्र सदा हित की बातें करते हैं । इसलिए उनकी गाली भी हमारे

१- महरि तिहारे पांय परौं अपनो ब्रज लीजै ।
सहि देख्यौ, तुम्ह सों कह्यौ, अब नाकहि आई,
कौन दिनहु दिन छीजै ।
ग्वालिनि तौ गोरस सुखी ता बिनु क्यों जीजै ।
सुत समेत पाउं धारिये, आपहि भवन मेरे देखिये जौ न पतीजै ।
अति अनीति नीकी नहीं अजहूं सिख दीजै ।
तुलसिदास प्रभु सों कहै उर लाइ जसोमति ऐसी बलि कबहूं नहिं कीजै ।

कृष्णगीतावली-पृष्ठ-१४

संपादक-श्रीकान्त शरण

अनुकूल पड़ती है । [१]

रा मा ज्ञा प्र श्न :

गोस्वामीजी इस रचना में ज्योतिर्विषा संबन्धी बातों का पता मिलता है । ' रामाज्ञा प्रश्न ' से जो जो सूक्तियां मिलती है उन सूक्तियों का अध्ययन आगे करना है ।

राम - नाम - का महत्व :

राम - नाम में अखण्ड विश्वास रखना चाहिए । तभी मंगल की उपलब्धि हो सकती है । नाम पर परम आस्था रखना हमारा कर्तव्य है । तभी शुभ शकुन होता है । राम के मंगलमय नाम और रूप के स्मरण से आनन्द की उपलब्धि होती है । [२]

१- आली अब कही निज नेह निहारि ।
समुझि सहै हमारो है हित विधि ।
सत्य सनेह सील सोभा सुख सब गुन उदधि अपारि ।
देख्यो सुन्यो न कबहुं काहु कहुं मीन-बियोगी वारि ।
कहियत काहु कुबरी हूं को, सो कुबानि - बस नारि ।
बिष तें बिषम बिषय अनहित की सुधा सनेही गारि ।
मन फेरियत कुतर्क कोटि करि कुबल भरोसे मारि ।
तुलसी जग दूजो न देखियत कान्ह कुंवर अनुहारि ।
श्री कृष्णगीतावली-पृष्ठ-५५

२- हानि मीचु दारिद दुरित , आदि - अंत - गत बीच ।
राम - बिमुख अघ आपने , भए निसाचर नीच ।।
रामाज्ञाप्रश्न- प्रथम सर्ग,पृष्ठ-११

राम- नाम के जप से मनोरथ अवश्य पूर्ण होता है। नाम जप एक प्रकार का यज्ञ है। [१]

राम - नाम कल्पवृक्ष है। कल्पवृक्ष सारी कामनाओं की पूर्ति कर डालता है, वैसे यह राम नाम भी। नाम - स्मरण से सिद्धियों की प्राप्ति होती है। वह आनन्द सागर में मग्न होता है। [२]

नाम-स्मरण से मंगल और कुशल होता है। नाम पर अत्यधिक प्रीति और अनन्य विश्वास रखना है। इसी नाम को एकमात्र सहारा मानना चाहिए। अपवित्र आदमी भी नाम-स्मरण से पवित्र हो जाता है। [३]

१- चित्रकूट सब दिन बसत प्रभु सिय लखन समेत।
राम-नाम - जप जापकहि तुलसी अभिमत देत।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-४२

२- राम नाम कलि कामतरु सकल सुमंगल कंद।
सुमिरत करतल सिद्धि जग पग पग परमानंद।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-६०

(अ)राम नाम कलि कामतरु राम भगति सुर धेनु।
सगुन सुमंगल मूल जग गुरु पद पंकज रेनु।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-५,पृष्ठ-६५

३- कोसल पाल कृपाल चित, बालक दीन्ह जिआइ।
सगुन कुसल कल्यान सुभ, रोवी उठै नहाइ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-६,पृष्ठ-१३४

(अ) पय नहाइ फल खाइ जपु राम नाम षट मास।
सगुन सुमंगल सिद्धि सब करतल तुलसीदास ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-७,पृष्ठ-१५७

राम महिमा :

राम के चरणस्पर्श से दण्डकवन पवित्र हो जाता है। उसी प्रभाव से ऊसर भूमि भी उपजाऊ बन जा ती है। राम दुष्टों को भी भवसागर पार कराने में समर्थ बनाते हैं, अकिंचनता से पीड़ित व्यक्ति को इससे मुक्तकर वे धनवान बना देते हैं। [१]

राम- विमुख की दुर्गति :

राम से विमुख रहने पर हानि अवश्य होती है। इससे आदि,मध्य और अन्त में अशुभ होता है, मृत्यु और दरिद्रता भी होती है। किसी भी प्रकार राम विमुख का कल्याण कभी नहीं होता। [२]

राम जैसे हितैषी अर्थात् हित करने वाले व्यक्ति का विरोध कभी नहीं करना है। उनसे स्नेह का संबन्ध जोड़ना चाहिए। हमारा अहित क रनेवाले व्यक्ति से मित्रता जोड़ना उचित नहीं, हमारे हितैषी राम से विमुख रहना मूर्खता है, उनसे विमुख रहने पर ब्रह्मा प्रतिकूल हो जाते हैं। [३]

१- दंडकवन पावन करन चरन सरोज प्रभाउ।
ऊसर जामहिं खल तरहिं होइ रंक ते राउ।

रामाज्ञाप्रश्न -सर्ग-३,पृष्ठ-४६

२- हानि मीचु दारिद दुरित,आदि अंत-गत बीच।
राम-बिमुख अघ आपने, गए निसाचर नीच।

रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-११

३- हित पर बढ़ इ बिरोध जब अनहित पर अनुराग।
राम बिमुख बिधि बाम गत सगुन अघाइ अभाग।

रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-७,पृष्ठ-१५५

(४- प्रीति प्रतीति राम पद बड़ी आस बड़ लोभ
नहिं सपनेहु संतोष सुख जहां तहां मन छोभ।।

रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-७,पृष्ठ-१५७

तुलसी (पौधा) राम, सीता, लक्ष्मण , और हनुमान का स्मरण कल्याणकारी है। इन्हीं का स्मरण कर जो कार्य की सिद्धि का प्रयत्न करता है उसे अवश्य सिद्धि मिलती है, मंगल ही मंगल होता है । [१]

सीताराम का स्मरण करने से सारे अनिष्ट दूर होकर मंगल स्वयं आ जाता है । प्रेम पूर्वक उनके स्मरण में लीन होना चाहिए । [२]

१- तुलसी राम सिय सुमिरि लखन हनुमान ।
काज बिचारेहु सो करि रहु दिन दिन बड़ कल्यान ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-४

२- तुलसी सहित सनेह नित सुमिरहु सीताराम ।
सगुन सुमंगल सुभ सदा आदि मध्य परिनाम ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-५८

(अ)तुलसी करतल सिद्धि सब, सगुन सुमंगल साज ।
करि प्रनाम रामहिं चलहु , सादर सिद्ध सुकाज ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-६८

(आ) गौतम तिय तारन चरन, कमल आनि उर देखु ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल सगुन बिसेखु ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-४,पृष्ठ-८१

(इ) सेवक पाल कृपाल चित, रबिकुल कैरवचंद ।
सुमिरि करहु सब काज सुभ पग पग परमानंद ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-५,पृष्ठ-१०८

सीता का स्मरण करनेवाली स्त्रियां पतिव्रता बन जाती है। उनके नाम - स्मरण में लीन होना आवश्यक है। पतिव्रत नियम का पालन करनेवाली श्रेष्ठ स्त्रियां सीता के समान पति की प्यारी हो जाती हैं।[१]

लक्ष्मण के चरणों के प्रेमी होने पर सेवक , मित्र और अच्छे भाई की प्राप्ति होती है। उनकी चरण-पूजा भी अत्यधिक श्रेष्ठ होती है।[२]

भरत का स्मरण करने से सारे दु:ख मिट जाते हैं। छल और कुचालों का अन्त हो जाता है, यह शकुन मंगलदायक है।[३]

१- सीता चरन प्रनाम करि सुमिरि सुनाम सुनेम ।
सुतिय होहिं पति देवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-६१

(अ)सिय पद सुमिरि सुतीयहित, सगुन सुमंगल जान ।
स्वामि सोहागिल,भाग बड़ पुत्र काज कल्यान ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-५,पृष्ठ-१०८

२- सेवक सखा सुबंधु हित, नाई लखन पद माथ ।
कीजिय प्रीति प्रतीति सुभ, सगुन सुमंगल साथ ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-६ ,पृष्ठ-१३०

३-भरत नाम सुमिरत मिटहिं कपट कलेस कुचालि ।
नीति प्रीति परनीति हित सगुन सुमंगल सालि ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-६०

(आ) भरत स्याम तन राम सम, सब गुन रूप निधान ।
सेवक सुख दायक सुलभ , सुमिरत सब कल्यान ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-४,पृष्ठ-८३

(इ) भरत भलाई की अवधि, सील सनेह निधान ।
धरम भगति भायप सम्य, सगुन कहब कल्यान ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-५ ,पृष्ठ-१०७

शत्रुघ्न का स्मरण करने से भी मंगल अवश्य होता है। उनके चरण-कमलों का स्मरण कर कार्य करने से शत्रु हार जाते हैं, हमारी विजय भी होती है। यह शकुन मंगलदायक है। शत्रुघ्न सारे तापों को एकदम मिटानेवाले है।[१]

हनुमत्स्मरण महिमा :

हनुमान का स्मरण करने से मंगल होता है। सभी कार्य विघ्न के बिना होते हैं। उसका परिणाम तो शुभ निकलता है। तब सुयश की प्राप्ति भी होती है।[२]

१-सुमिरि सत्रुसूदन चरन चलहु करहु सब काज।) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३
सत्रु- पराजय निज बिजय, सगुन सुमंगल साज ।।) पृष्ठ-५६

(अ)नाम सत्रुसूदन सुभग,सुखमा-सील -निकेत ।) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-४
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमंगल देत ।।) पृष्ठ-८५

(आ)सत्रुसमन पद - पंकरुह ,सुमिरि करहु सब काज ।) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-५
कुसल-छेम कल्यान सुभ, सगुन सुमंगल साज ।।) पृष्ठ-१०७

(इ) ललित लखन - लघु -बंधु पद, सुखद सगुन सब काहु।) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-६
सुमिरत सुभ कीरति बिजय,भूमि ग्राम गृह लाहु ।।) पृष्ठ-१२६

२- सकल काज सुभ समउ भल सगुन सुमंगल जानु ।) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३
कीरति बिजय बिभूति भलि हिय हनुमानहिं आनु ।।) पृष्ठ-५६

(अ) मंजुल मंगल मोद मय, मूरति मारुत पूत ।) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-६
सकल सिद्धि कर- कमल तल, सुमिरत रघुबर दूत ।।) पृष्ठ-१२८

(आ) सुख- मुद-मंगल - कुमुद बिधु सगुन सरोरुह -भानु) रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-७
करहु काज सब सिद्धि सुभ, आनि हिये हनुमान ।।) पृष्ठ-१४५

संपादक- श्रीकान्त शरण

कर्म-वश सुख - दु:ख भोगना पड़ता है। राम, लक्ष्मण और सीता को वनवास भोगना पड़ा। कर्मवश ही विरह, संयोग आदि सहना पड़ता है। जो बोता है वही काटता है, कर्म करनेवाला ही उसका फल भोगता है।[१]

कर्म-फल किसी न किसी प्रकार भोगना पड़ता है। राम से बिछुड़ने पर दु:खी दशरथ को कैकेयी बुरे वचन सुनाती है। समय बुरा होना पर सभी उपाय व्यर्थ हो जाते हैं। अपने किये हुए कर्म का फल अवश्य भोगना है।[२]

ज्योतिर्विद्या :

ज्योतिर्विद्या में गोस्वामीजी भी कुछ ज्ञान रखते थे उसका प्रमाण है ` रामाज्ञाप्रश्न ` नामक यह ग्रन्थ। चन्द्रवार में गुरुजी का स्मरण करना अत्यधिक श्रेष्ठ है। इससे विद्या - संबन्धी बातों में उन्नति होती है। सरस्वाती, गणेश, चन्द्रमा, गंगा, कामधेनु इन सभी का स्मरण कर यात्रा करने से शुभ फल होता है। इसमें सन्देह केलिए स्थान नहीं, यात्रा में कोई बाधा नहीं होती।[३]

१- लखन राम सिय बसत बन बिरह बिकल पुर लोग।
सगुन कह करम बस दुख सुख जोग बियोग।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-७,पृष्ठ-१६३

२- राम बिरह दसरथ दुखित कहति कैकयी काकु।
कुसमय जाय उपाय सब केवल करम बिपाकु।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-७,पृष्ठ-१६३

३- गुरु सरसइ सिंधुरबदन ससि सुरसरि सुरगाइ।
सुमिरि चलहु मग मुदित मन होइहि सुकृत सहाइ।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-२

संपादक-श्रीकान्तशरण

मंगलवार में सरस्वती का स्मरण करना शुभ फल दायक है। सरस्वती के साथ साथ पार्वती, गुरु, गणेश, शिव इनका स्मरण करना भी मंगलदायक है। इससे सारी सिद्धियों की प्राप्ति अवश्य होती है। [१]

बुधवार में भरत, सरस्वती, शत्रुघ्न, गुरु, गणेश, बुध आदि का स्मरण करने से मंगल होता है। इससे धर्मों का फल प्राप्त हो जाता है। विद्या केलिए बुधवार अत्यधिक श्रेष्ठ है, इसका फल भी अच्छा निकलता है। [२]

राम के चरणकमलों के प्रति भरत के हृदय में अत्यधिक अनुराग की भावना है। वे नियमों का पालन करनेवाले हैं, व्रतों का अनुष्ठान करनेवाले हैं, धर्म के रास्ते पर चलनेवाले हैं। इन कोशुभ शकुन समझना है, फिर पराक्रम करने से जप, यज्ञादि की सिद्धि अवश्य होती है, यह शुभ शकुन है। [३]

चित्रकूट राम और सीता का विहार-क्षेत्र है। इसी कारण राम के भक्तों के लिए चित्रकूट का विशेष महत्व होता है। उसका शकुन उन्हें शुभ होता है। वह स्थान राम-भक्ति का केन्द्र होता है। [४]

१- गिरा गौरि गुरु गनप मंगल मंगलमूल।
सुमिरत करतल सिद्धि सब होइ ईस अनुकूल।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२, पृष्ठ-३

२- भरत भारती रिपु दवन गनेस बुधवार।
सुमिरत सुलभ सुधरम फल विद्या विनय विचार।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२, पृष्ठ-

३- भरत नेम व्रत धरम सुभ राम चरन अनुराग।
सगुन समुझि साहस करिय सिद्धि होइ जप जाग।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२, पृष्ठ-४१

४-फटिक सिला मंदाकिनी, सिय रघुबीर बिहार।
राम भगत हित सगुन सुभ भूतल भगति मंडार।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२, पृष्ठ-४३

ब्राह्मण का महत्व :

ब्राह्मण का आशीर्वाद पाना भाग्य की बात है । आशीर्वाद मिलने पर सभी अमंगल नष्ट हो जाता है , वह मंगल का मूल है ।[१]

वीर युद्ध-भूमि में सुयश प्राप्त करता है । गृध्रराज जटायु को वीर होने के नाते रावण से युद्ध करने में तनिक भी संकोच नहीं था । उसका सामने करने पर जटायु घायल होकर गिर पड़ता है । कायर हो तो वह रावण का सामना नहीं कर सकता । वीर मृत्यु से डरता नहीं, मृत्यु आगमी सहर्ष स्वागत करता है । शत्रु से भिड़कर विजय प्राप्त होने पर सुयश प्राप्त होता है ।[२]

भाई से विरोध रखना अच्छा नहीं, विरोध रखने पर कुल का नाश अवश्य होता है । यह शकुन बुराई का सूचक है, उससे कुल की अवनति होती है ।[३]

मूर्ख प्रार्थना नहीं मानते, यही उसकी प्रकृति है । राम सागर से मार्ग मांगने पर वह नहीं देता, इस बात पर गोस्वामीजी का कथन है, मूर्ख तो डांटने मात्र से ठीक रास्ते पर आते हैं ।

१- सुत जाग करवाह रिषि , राजहि दीन्ह प्रसाद ।
सकल सुमंगल मूल जग भूसुर आसिरबाद ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-८

२- गीधराज रावन समर घायर बीर बिराज ।
सूर सुजस संग्राम महि मरन सुसाहिब काज ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-५६

३- बंधु बिरोध न कुसल कुल, सुकगुन कोटि कुचालि ।
रावन रबि को राहु सो, भयो कालबस बालि ।।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-३,पृष्ठ-६६
संपादक- श्रीकान्त शरण

कुटिल नारी अमंगल का कारण है। कैकेयी की कुटिल बुद्धि ने क्या क्या अनर्थ कर डाला। कुटिलता -पूर्ण व्यवहार से फल होता है, उससे अवश्य बुराई होती है।[१]

वैराग्य सन्दीपिनी :

गोस्वामीजी की छोटी रचनाओं में वैराग्य सन्दीपनी ग्रन्थ का भी अपना महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें कवि का वैराग्य-भाव स्पष्ट लक्षित होता है। सांसारिकता के रंग में न रंगकर उससे कोसों दूर रहना उन्हें पसन्द है। शान्ति की दशा को पार करना उनके लिए आनन्द की बात है।

राम और सीता दोनों का स्मरण कल्याणकारी है। इससे लोक और परलोक में कल्याण का विधान होता है। जानकी और लक्ष्मण राम से अभिन्न कहे गये है।[२]

१- सुर - माया - बस कैकयी, कुसमय कीन्हि कुचालि।
कुटिल नारि मिस होइ फल, अनभल आजु कि कालि।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-२७

(अ) सोचत पुर - परि - जन सकल बिकल राउ रनिवास।
फल मलीन - मन - तीय मिस, बिपति बिषाद बिनास।
रामाज्ञाप्रश्न-सर्ग-२,पृष्ठ-२८

२- राम बाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यान मय सुरतरु तुलसी तोर।

वैराग्य सन्दीपनी,पृष्ठ-१
तुलसीकृत वैराग्य संन्दीपनी(सिद्धान्त तिलक)
संपादक-श्रीकान्त शरण

राम की भक्ति का महत्व । राम की भक्ति किये बिना मोहान्धकार का नाश नहीं होता । मोहरूपी अन्धकार मिटाने के लिए विवेक, विराग आदि कुछ भी नहीं कर सकते । हृदय को कमल और रामचन्द्रजी को सूर्य मानकर गोस्वामीजी कहते हैं - रविकुल रवि के उदय के बिना हृदय - कमल विस्फारित नहीं होता , वह संकुचित ही रहता है । रामचन्द्रजी में ही उसे विकसित करने की शक्ति रहती है । वे ही मोहान्धकार का नाश कर सकते हैं । [1]

भक्ति की अनन्यता , भगवान के प्रति एकनिष्ठ भक्ति रखनेवाले भक्त सांसारिक तापों से दूर रहते हैं । भक्त लौकिक सुख भोगों का अनुभव करना नहीं चाहते , उनसे उनका मन कोसों दूर रहता है । इसी कारण भक्त को सांसारिक तापों का अनुभव नहीं होता । [2]

राम महिमा :

शरीर दैहिक, दैविक और भौतिक ऐसे तीनों प्रकार के तापों से तप्त रहता है । उसे शान्ति प्रदान करनेवाले एकमात्र व्यक्ति राम जी हैं । मोक्ष प्राप्त होने पर इन तापों से आदमी मुक्त हो जाता है । [3]

१- तुलसी मिटै न मोह तम किये कोटि गुनग्राम ।
हृदय कमल फूलै नहीं बिनु रविकुल रवि राम ।।
वैराग्य सन्दीपनी-पृष्ठ-३

२- दास रता एक नाम सों उभय लोक सुख त्यागि ।
तुलसी न्यारे ह्वै रहै दहै न दुख की आगि ।
वैराग्य सन्दीपनी -पृष्ठ-४४

३- तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रयताप ।
सांति होइ जब सांति पद, पावै राम प्रताप ।।
वैराग्य सन्दीपनी-पृष्ठ-१०

राम - भजन - महिमा :

जाति चाहे कोई भी हो, राम - भजन करनेवाली होने पर वह धन्य होती है। जाति-विशेष की कोई प्रधानता नहीं दी जाती। उच्च कुल में जन्मे व्यक्ति अगर राम से विमुख होकर उनका भजन नहीं करते तो इस हालत में उच्च जाति में जन्म लेने से क्या फायदा है। जाति को प्रधानता देने की कोई बात नहीं।[१]

सन्त तो मोहान्धकार को दूर कर देते हैं। वे तापों और पापों को दूर करने में समर्थ हैं। उनके पास ज्ञान का अखण्ड खजाना है। वे अत्यधिक शीलवान व्यक्ति हैं। इनमें विवेक बुद्धि तीव्र रहती है। वे सभी गुणों से अलंकृत सद्गुरु होते हैं। मोह जाल में वे फंसते नहीं, दूसरों को फंसाते भी नहीं। [२]

सन्त की समानता उच्चकुलीन भी नहीं कर सकते। सब कहीं सन्त का सम्मान किया जाता है। साधु-हमेशा नाम स्मरण में मग्न रहता है। लेकिन उच्चकुल के अभिमानी पुरुष तो अभिमान की आग में जलते हैं, नाम-स्मरण नहीं करते। सन्तों की जाति चाहे निम्न भी हो तो भी कोई बात नहीं। वह धन से अनुगृहीत न हो, विद्या से भी निम्नकोटि का हो, तो भी इन्हीं बातों पर प्रधानता नहीं दी जाती है।[३]

१- तुलसी भगत सुपच भलो, भजे रहनि दिन राम।
ऊंचो कुल केहि काम को जहां न हरि को नाम।।
वैराग्य सन्दीपनी-पृष्ठ-४१

२- पाप ताप सब सूल नसावै मोह अंध रवि बचन बहावै।
तुलसी ऐसे सद्गुरु साधू। वेदन मध्य गुन विदित अगाधू।।
वैराग्यसन्दीपनी-पृष्ठ-२६

३- जदपि साधु सबही विधि हीना। तदपि समता के न कुलीन।
यह दिन रैनि नाम उच्चरै। वह नित मान अगिनि में जरै।।
वैराग्यसंदीपनी-पृष्ठ-४४

सन्त - महिमा :

सन्त लोग बुरे लोगों का संग कभी नहीं चाहते । उनका स्वभाव तो विशेष अनुकरणीय है । उनके समान खूब सोच विचारकर बातें करना है । बुरे वचन कभी नहीं कहना चाहिए । सन्त लोग कभी बुरे वचन नहीं कहते । सत्य वचन ही हमेशा बोलना चाहिए । इससे कल्याण अवश्य होता है । किसी को दु:ख पहुंचाने वाला वचन कभी नहीं कहना चाहिए । सन्त आदर्श-मय जीवन बिताते है ।[१]

सन्त संसार सागर पार करानेवाले हैं । संसार सागर पार करने केलिए तृष्णा की उपेक्षा करनी है । शील और सन्तोष उनमें होना है । राग-द्वेषादि भावनायें उनमें नहीं होनी चाहिए । तृष्णा रखनेवाला, शील और सन्तोष न धारण करनेवाला , राग-द्वेषादि भावनायें रखनेवाला व्यक्ति भव सागर पार नहीं कर सकता है ।[२]

संत जन सभी लोगों के दु:खों को दूर करते हैं । ~~वे सभी लोगों के दु:खों को दूर करते हैं~~ । वे सभी लोगों में समानता पाते हैं । दूसरों के दु:खों को दूर करने में भी वे सदा जागृत रहते हैं । संत जनों की तुलना गोस्वामीजी ने मलयाचल से की है । उनमें द्वेष की भावना नहीं होती । इन की संगति में श्रेष्ठ होता है । अपनी संगति में रहनेवाले लोगों को वे उपदेश देते हैं । उनका

१- बोले वचन बिचारि कै, लीन्हें संत सुभाव ।
तुलसी दुख दुर्बचन के पंथ देत नहिं पाव ।।
वैराग्य सन्दीपनी, पृष्ठ-१७

२- सो जन जगत जहाज है, जाके राग न दोष ।
तुलसी तृष्णा त्यागि कै, गहै सील सन्तोष ।।
वैराग्य सन्दीपनी-पृष्ठ-२१
संपादक-श्रीकान्त शरण

हर एक आचरण सभी को सुखद लगता है । [१]

सन्तों का वचन तो अत्यधिक मधुर होता है । मधुर वाणी सुनने पर मन में बड़े आनन्द की अनुभूति पैदा होती है । इस वाणी में आकर्षक शक्ति रहती है । कोमल-वाणी में आकर्षक शक्ति रहती है । यह सुनने पर अमृत पान का सा आनन्द उत्पन्न होता है ।[२]

सन्तों के वचन सुनकर सारे भ्रम नष्ट हो जाते है । उनके वचन हृदय पर अत्यधिक प्रभाव डालते हैं । तब मन के सारे भ्रम नष्ट हो जाते है । ज्ञान का उदय होने पर ब्रह्मानन्द का सुख प्राप्त होता है । [३]

सन्तों की कोमल वाणी सुनने पर सारे दु:ख दूर हो जाते हैं । उनकी वाणी में चन्द्रमा के समान शीतलता रहती है । इसी कारण तीनों तापों का नाश होता है । काम,क्रोधादि षड्रस भी उनको प्रभावित नहीं कर सकते । [४]

१- अनुभव सुख उतपति करत भव भ्रम धरै उठाय ।
ऐसी बानी संत की जोउर भेदी आय ।
वैराग्य सन्दीपनी,पृष्ठ-२५

२- कोमल बानी संत की, स्रवै अमृतमय आय ।
तुलसी ताहि कठोर मन सुनत मयन होइ जाय ।
वैराग्य सन्दीपनी-पृष्ठ-२४

३- अनुभव सुख उतपति करत भव भ्रम धरै उठाय ।
ऐसी बानी संत की जो उर भेदी आय ।।
वैराग्य संदीपनी,पृष्ठ-२५

४- सीतल बानी संत की , ससिहू ते अनुमान ।
तुलसी कोटि तपनि हरै जो कोउ धारै कान ।।
वैराग्य सन्दीपनि,पृष्ठ-२५
संपादक-श्रीकान्त शरण

शान्ति महिमा :

शान्ति ही सबका मूल है । चन्द्रमा रात को प्रकाशमान करनेवाला ज्योतिर्गोल है । सूर्य दिन में प्रकाश फैलाता है । यों भगवान की भक्ति के लीन व्यक्ति का आभूषण भक्ति है । लेकिन ज्ञान के बिना जो भक्ति होती है उसका कोई मूल्य नहीं । ज्ञान-सहित भक्ति शोभित होती है । लेकिन ध्यान से ज्ञान का महत्व बढ़ता है । उसके साथ त्याग भी होना चाहिए । त्याग को शान्ति शोभित करती है । शान्ति पद का वश महत्व होता है ।[1]

परम शान्ति की अवस्था में सारे दुःख मिट जाते हैं । पाप तीन प्रकार के होते हैं - कायिक, वाचिक और मानसिक । इन पापों से दैहिक, भौतिक,दैविक आदि तीनों ताप होते हैं । शान्ति की हालत में दुःख का नाम-मात्र नहीं होता । दुःखों से निवृत्त संसार में उसका वास होता है ।[2]

शान्त स्वभाव वाले मनुष्य के बारे में गोस्वामीजी कहते हैं - कुछ लोग तो ऐसे हैं जो क्रोध की अग्नि में पड़कर जलते रहते हैं । क्रोध वश वे तलवार के समान तीखे वचन बाणों को छोड़ते हैं । लेकिन इन बाणों से आहत होकर भी जो चुपचाप बैठता रहता है वह व्यक्ति सराहने योग्य है । वही शान्त व्यक्ति कहला सकता है । तीखे वचन की चोट तलवार की चोट से भी

१- रयनि को भूषन इंदु है, दिवस को भूषन भान ।
दास को भूषन भक्ति है , भक्ति को भूषन ज्ञान ।
वैराग्य सन्दीपनी,पृष्ठ-४५

२- त्रिविध पाप संभव जो तापा । मिटहिं दोष दुख दुसह कलापा ।
परम सांति सुख रहै समाई । तहं उतपात भेदी आई ।।
वैराग्यसन्दीपनी,पृष्ठ- ४६
श्री कान्त शरण

अधिक आघात पहुंचाती है। व्यक्ति को तो शान्त होकर काम संभालना चाहिए।[१]

शान्ति की अवस्था से हो लेना तो कितना सुखद है। दूसरा कोई सुख सारे जगत में नहीं मिलता। सात द्वीपों और नौ खण्डों में भी नहीं मिलता। विषय-सुख तो वास्तविक सुख नहीं, वह सुख मिथ्या है। वास्तविक सुख शान्ति की अवस्था में होता है।[२]

इसमें शान्ति दिलाने में सद्गुरु का योग रहता है। उसमें सन्देह केलिए स्थान नहीं। सद्गुरु कामवासनाओं को दूर करने में समर्थ होते हैं। वे अज्ञान रूपी अन्धकार को एकदम दूर कर ज्ञान का प्रकाश सभी लोगों के हृदय में फैलाते हैं। शान्ति की प्राप्ति भगवान की प्राप्ति के समान है। यही गोस्वामीजी का मत है। भगवान की भक्ति में तल्लीन रहने पर जिस अनुपम शान्ति का अनुभव होता है वही यथार्थ शान्ति है।[३]

शान्ति की अवस्था को सन्तों ने सागर माना है, जैसे अनन्त सागर में अतिशय शान्ति होती है और उससे अत्यधिक सुख का अनुभव होता है,

---

१- जो कोइ कोप भरे मुख बैना। सनमुख हने गिरा सर पैना।
तुलसी तऊ लेस रिस नाहीं। सो सीतल कहिए जग मांही।।
वैराग्य सन्दीपनी, पृष्ठ-५१

२- सात दीप नव खंड लों तीनि लोक जग मांहि।
तुलसी सांति समान सुख अपर दूसरो नाहिं।।
वैराग्य सन्दीपनी, पृष्ठ-५१

३- जहां सांति सद्गुरु की दई। तहां क्रोध की जर जरि गई।
सकल काम - वासना बिलानी तुलसी यहै सांति सहि दानी।।
वैराग्य सन्दीपनी, पृष्ठ-५३
श्रीकान्तशरण

वैसे शान्ति सागर में भी शीतलता महसूस होती है, ताप का नाश होता है। शरीर और मन को इस सागर में निमग्न करने से बड़ा चैन मिल जाता है। उसे अहंकार की भावना नहीं होती। अहं की भावना सर्वथा त्याज्य है। [१]

अहंकारी को स्वप्न में भी शान्ति नहीं मिलती। दूसरों को दुखी देखकर वे स्वयं सन्तुष्ट होते हैं। दुःख का स्वांग भी रचते हैं। लेकिन सुख होने पर वे दूसरों पर क्रुद्ध होते हैं। यही उनके स्वभाव की विशेषता है। दूसरों को दुःख पहुंचाने में वे कभी पीछे नहीं रहते। पवित्र मानव जीवन का मूल्य न समझकर वे व्यर्थ ही नष्ट कर देते हैं। उन्हें सपने में भी शान्तिमय वातावरण नहीं मिलता। गोस्वामीजी की कामना यही होती है कि मानव को आपस में प्यार कर जीना है, वैसे शान्ति की स्थापना करनी है।[२]

करनी के अनुसार फल :

आदमी जो बोता है वही पाता है। गोस्वामीजी शरीर को खेत मानते हैं, मन, वचन और कर्म को किसान मानते हैं, पाप और पुण्य को बीज। जो कुछ बोया जाता है वही अन्त में काटा जाता है अर्थात् हमारी जिस प्रकार की करनी होती है उसी प्रकार का फल मिल जाता है। जोतने पर खेत अधिक खाद्य पदार्थ दे देता है। विद्या, गुण आदि खाद पड़ने से शरीर रूपी खेत उपजाऊ होता है। अगर हम पाप कर्मों में लीन हो जाते हैं

१- तुलसी सुखद सांति के सागर। संतन गायो करन उजागर।
तामें तन मन रहे समोई। अहं अगिनि नहिं दाहै कोई।
वैराग्य सन्दीपनी, पृष्ट-५४

२- जौं भरे अरु सीमि खिझावै। राग द्वेष महं जनम गंवावै।
सपनेहुं सांति नहीं उन देही। तुलसी जहां जहां व्रत एही।
वैराग्य सन्दीपनी, पृष्ठ-५८

उसका परिणाम बुरा निकलता है ।[१]
रामलला नहछू में कोई महत्वपूर्ण स्फालित दिखायी नहीं पड़ती।

हनुमान बाहुक :

यह गोस्वामीजी की अत्यन्त छोटी रचना है । हनुमान जी के प्रति गोस्वामीजी के हृदय में प्रेम और भक्ति का सागर उमड पड़ा था । राम के प्रति उनमें आदर का भाव रहता है । राम के सच्चे भक्त हनुमान का भी सम्मान वे करते है ।

हनुमान की स्तुति :

हनुमान की स्तुति करते कवि पहले उनकी महिमा बताते हैं । पवनकुमार हनुमान सारे संकटों का नाश करनेवाले हैं । उनकी सेवा करनेवाले जल्दी उनको प्राप्त करते हैं । और उनकी भलाई करना वे अपना कर्तव्य मानते हैं । उनके नाम का स्मरण करने पर वे उसके सारे दु:खों को दूर कर देते हैं । उनके भक्तों पर वे कृपा की वर्षा करते हैं ।[२]

१- तुलसी यह तनु तवा है , तपत सदा त्रयताप ।
सांति होइ जब सांति पद, पावै राम प्रताप ।
वैराग्यसन्दीपनी, पृष्ठ-१०

२-सिंधु तरन सिय सोच हरन रबि बाल बरन तनु ।
भुज बिसाल ,मूरति कराल, कालहु को काल जनु ।।
गहन दहन निरदहन लंक, नि:संक बंक भुव ।
जातु धन बलवान मान मद दवन पवन सुव ,
कह तुलसीदास सेवत सुलभ सेवक हित संतत निकट ।
गुन गनत, नमत सुमिरत जपत समन सकल संकट बिकट ।।
हनुमानबाहुक-पृष्ठ-५
टीकाकार-महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य वीर

हनुमान की पावन - मूर्ति हृदय में बसने पर कल्याण ही कल्याण होता है । हनुमान के भक्त कभी दु:खों से पीड़ित नहीं होते । हनुमान उसके पास पाप को आने तक नहीं देते ।[1]

विधाता से कोई वश नहीं चलता :

विधाता ने सारी दुनिया को गुन - दोषमय रचा है । संसार में केवल हर्ष ही हर्ष नहीं है । हर्ष के साथ साथ दु:ख भी है । उसी प्रकार राग के साथ रोष, गुण के साथ दोष भी । केवल गुणों से संसार की रचना नहीं की जाती , सुख, दु:ख मिश्रित होने पर ही जीवन सुखद लगता है ।[2]

१-स्वर्ण-सैल संकास कोटि - रवि -तरुन-तेज घन ।
उर बिसाल,भुजदंड चंड नख बज्र बज्रतन ।
पिंग नयन, भृकुटी कराल रसना दसनानन ।
कपिस केस, करकस लंगूर ,खल-दल-बल-भानन ।।
कह तुलसिदास बस जासु उर मारुत सुत मूरति बिकट ।
संताप पाप तेहि पुरुष पहिं सपनेहुं नहिं आवत निकट ।।

हनुमानबाहुक,पृष्ठ-६

२- कहों हनुमानसों सुजान राम राय सों कृपानिधान संकरसों सावधान सुनिये ।
हरष विषाद राग रोष गुन दोष मई ।
विरची विरंचि सब देखियत दुनिए ।
माया जीव काल के करम के सुभाय के, करैया राम बेद कहैं सांची ।
तुम्ह तें कहा न होय हाहा सों बुझैये मोहि ।
हैं हूं रहों मौन ही बयो सो जानि लुनिये ।

हनुमानबाहुक ,पृष्ठ-३६
टीकाकार-महावीर प्रसाद मालवीय वैद्यवीर

०००००००००००००००००००००

सां त वां   अ ध्या य

०००००००००

तुलसीदास के काव्यों की सूक्तियों में

अभिव्यक्त उनका व्यक्तित्व

और

विचार

गोस्वामीजी का व्यक्तित्व

तीन स्रोतों से गोस्वामीजी के व्यक्तित्व का पता मिलता है ।

(अ) अन्त:साक्ष्य

(आ) बहि:साक्ष्य

(इ) जनश्रुति

अन्तसाक्ष्य :

कवि तुलसीदास जी स्वयं अपने जीवन के संबन्ध में प्रामाणिक बातें उपस्थित करते हैं । अन्त:साक्ष्य से उनके जीवन के संबन्धित अधिकांश बातें मिलती हैं । कवि का स्वगत कथन होने के कारण इसमें वास्तविकता अधिक होती है ।

बहि:साक्ष्य :

इस स्रोत से भी प्रामाणिक बातों का ज्ञान प्राप्त होता है । कवि के समकालीन और परवर्ती लेखक उनकी जीवनी के बारे में खोज करके निष्कर्ष पर पहुंच जाते हैं ।

जनश्रुति :

इस स्रोत से बहुत कम बातें उपलब्ध होती हैं । लोगों की सुनी सुनाई बातों को पूर्णत: सत्य मानना मुश्किल की बात है । उन पर एक हद तक ही भरोसा रखा जा सकता है ।

अन्त:साक्ष्य के आधार पर गोस्वामीजी का व्यक्तित्व

' विनयपत्रिका ' और ' कवितावली ' - इन दोनों ग्रन्थों में

तुलसीदास जी ने स्वयं अपने जीवन से संबन्धित बातों का जिक्र किया है ।

जाति-पांति के संबन्ध में उन्होंने कवितावली में कहा है :-

मेरे जाति पांति न चहाँ काहू की जाति पांति ।
मेरे कोऊ काम को न हों काहू के काम कों ।।[१]

कुल के संबन्ध में कहा गया है :

जायो कुल मंगन बधावनो सुनि ,
भयो परिताप पाप जननी जनक को ।।[२]

उनका शरीर सुन्दर था, इसका प्रमाण देखिए :

(अ) दियो सुकुल जनम सरीर सुन्दर हेतु जो फल चारि को ।[३]

(आ) धूत कहौ अवधूत कहौ जुलहा कहौ कोऊ ।[४]

(इ) लरिकाई बीती अचेत चित चंचलता चौगुनी चाय ।[५]

१- कवितावली (तुलसीकृत) प्रकाशक -श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-४५६

२- कवितावली ,, ,, पृष्ठ-३८६

३- विनयपत्रिका - राजनाथ शर्मा (संपादक) पृष्ठ-३०४

४- कवितावली (तुलसीकृत) प्रकाशक- श्रीकान्त शरण -पृष्ठ-४५५

५- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) राजनाथ शर्मा (संपादक) पृष्ठ-२२७

माता का उल्लेख 'रामचरितमानस' की निम्न पंक्तियों से मिलता है ।

'रामहिं प्रिय पावनि तुलसी सी ।
तुलसीदास हित हिय हुलसी सी ।।[१]

'विनयपत्रिका' में उन्होंने 'नाम' के बारे में कहा है ।

'राम को गुलाम नाम राम बोला राख्यौ राम,
काम यहै नाम द्वै हौं कबहुं कहत हौं ।। [२]

अपने बचपन के कष्टों का चित्रण उन्होंने 'कवितावली' और 'विनयपत्रिका' में किया है । बाल्यावस्था के कष्टों ने उन्हें स्वतंत्र विचार रखनेवाले व्यक्ति बना दिया । माता-पिता का देह-त्याग भी एक और उनके वैयक्तिक जीवन को मोड़ देने में सहायक सिद्ध हुआ ।

'मातु पिता जग जाय तज्यौ विधिहू न लिखी कछु भाल भलाई ।।[३]

'जाति के सुजाति के कुजाति के पेटागि बस ।
खाए टूक सबके विदित बात दुनी सो ।।[४]

'तनु तज्यौ कुटिल कीट ज्यौं तज्यो मातु पिता हूं ।[५]

१- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी-बालकाण्ड,पृष्ठ-८०
२- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) संपादक-राजनाथ शर्मा-पृष्ठ-२१७
३- कवितावली (तुलसीकृत)प्रकाशक - श्रीकान्त शरण-पृष्ठ-३५८
४- कवितावली (तुलसीकृत) प्रकाशक-श्रीकान्त शरण-पृष्ठ-३८४
५- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) संपादक-राजनाथ शर्मा-पृष्ठ-५२६

' द्वार - द्वार दीनता कही काढ़ि रद परि पाहूं ' ।[1]

' स्वारथ के साथिन तज्यो तिजरा को सो टोटक,
औचक उलटि न हेरो । ' [2]

इस प्रकार उनके बचपन से संबन्धित अनेक वास्तविक बातें उपलब्ध होती हैं ।

उनके विध्याध्ययन और गुरु से संबन्धित बातों पर विचार करना है । उनके गुरु नरहरि थे ।

' बन्दौ गुर पद कंज कृपा सिंधु नर रूप हरि ।'[3]

' मैं पुनि निज गुरु सन सुनी कथा सो सूकर खेत ' । [4]

मालूम पड़ता है कि ' सूकर खेत ' में उनका विध्याध्ययन चलता रहा । गुरु के प्रति उनके मन में अत्यधिक सम्मान की भावना है ।

१- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) राजनाथ शर्मा (संपादक) पृष्ठ-५२६

२- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) राजनाथ शर्मा (संपादक) पृष्ठ-५२५

३- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी - बालकाण्ड, पृष्ठ-७

४- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-७८

गृहस्थ - जीवन :

उनका ब्याह दीनबन्धु पाठक की कन्या रत्नावली से संपन्न हुआ था । पहले सांसारिक मोह - माया में फंसे तुलसीदास बाद में पत्नी की फटकार सुनकर विरागी हो गये और वे साधु का सा जीवन बिताने लगे ।

' काहू की बेटी सों बेटा न ब्याहब ।
काहू की जाति बिगार न सोऊ ।।[१]

लरिकाई बीती अचेत चित चंचलता चौगुनी चाय ।
जोबन-जुर जुवती कुपथ्यकरि भयो त्रिदोष भरि मदन बाय ।।[२]

तुलसीदास जी ने अपनी कविताओं में आत्म-ग्लानि प्रकट की है ।

(अ) नाम तुलसी पै भोंडे भाग, सो कहायो दास ।
किए अंगीकार ऐसे बड़े दगाबाज को ।।[३]

(आ) रामही के द्वारे पै बोलाइ सनमानियत ,
मोसे दीन दूबरे कपूत कूर काहली ।।[४]

(इ) स्वारथ को साज न समाज परमारथ को ।
मोसों दगाबाज दूसरो न जग जाल है ।[५]

(ई) राम सों बड़ो है कौन, मोसों कौन छोटो ।
राम सों खरो है कौन, मोसों कौन खोटो ।[६]

१- कवितावली (तुलसीकृत) लेखक और प्रकाशक-श्रीकान्तशरण, पृष्ठ-४५५
२- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) संपादक- राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-२२७
३- कवितावली (तुलसीकृत) श्रीकान्त शरण , पृष्ठ-२७८
४- कवितावली (तुलसीकृत) ,, पृष्ठ-२६७
५- कवितावली (तुलसीकृत) ,, पृष्ठ-३६६
६- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) संपादक-राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-२०६

आत्म - विश्वास को व्यक्त करनेवाली अनेक पंक्तियां ' कवितावली ' और ' विनयपत्रिका ' में मिलती हैं ।

(अ) राम ही के नाम तें जो होइ सोई नीको लागै ।
ऐसोई सुभाउ कछु तुलसी के मन को ।। १

(आ) एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास ।
एक राम घनस्याम हित चातक तुलसीदास ।।२

तुलसीदास जी अपने को बड़ा व्यक्ति सिद्ध करने का प्रयत्न नहीं करते , बल्कि अपने को दूसरों से अत्यधिक छोटा सिद्ध करने का प्रयत्न करनेवाले है । उनके स्वभाव की एक उल्लेखनीय विशेषता यही है । तुलसीदास जी के ऐसे स्वभाव की झांकी उनकी रचनाओं में मिलती है ।

(अ) भाषा भनिति भोरि मति मोरी
हंसिबे जोग हंसे नहिं खोरी ।।[3]

(आ) कवि न होउं नहिं बचन प्रवीनू ।
सकल कला सब विद्या हीनू ।।[4]

(इ) कवित विवेक एक नहिं मोरे ।
सत्य कहउं लिखि कागद कोरे ।।[5]

(ई) कवि कोविद रघुबर चरित, मानस मंजु मराल ।
बाल विनय सुनि सुरुचि लखि, मोपर होहु कृपाल ।।[6]

१- कवितावली-(तुलसीकृत) श्रीकान्त शरण-पृष्ठ-३६६
२- दोहावली (तुलसीकृत) अनुवादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-६६
३- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी-बालकाण्ड, पृष्ठ-२७
४- ,, ,, पृष्ठ-२८
५- ,, ,, पृष्ठ-२६
६- ,, ,, पृष्ठ-४०

(उ) माधवजू मो सम मन्द न कोऊ ।
    यद्यपि मीन पतंग हीनमति मोहि नहिं पूजै ओऊ ।
    रूचिर रूप आहार बस्य उन्ह पावक लोह न जान्यो ।।[१]

उपर्युक्त पंक्तियों से हम समझ सकते हैं कि तुलसीदास जी सौम्य प्रकृति के व्यक्ति थे । वे दूसरों के दुःखों से अनभिज्ञ नहीं थे, क्योंकि वे जीवन में अनेक प्रकार के कष्ट स्वयं झेल लेते थे । बचपन में प्रतिकूल परिस्थितियों से टकराकर जीने से वे जीवन की अनन्त यात्रा में होनेवाले दुःखों का सामना कर सके । वे दंभी न होकर विनीत प्रकृति के व्यक्ति थे ।

दांपत्य जीवन में उन्हें पूर्ण रूप से विजय नहीं मिली । पत्नी रत्नावली के प्रति अत्यधिक आसक्ति होने के कारण उन्हें पत्नी की फटकार सुननी पड़ी । तभी से अस्थि-चर्ममय स्त्री-शरीर के प्रति उनके मन की आसक्ति एकदम लुप्त हो गयी और वे विरागी होकर जीवन बिताने लगे । उनका मन हृदय राम की भक्ति पर केन्द्रित हो गया । ऐसे वे राम के अनन्य उपासक बन गये । हनुमान के प्रति भी उनके मन में भक्ति थी । अन्य देवी - देवताओं की पूजा भी वे करते थे ।

तुलसीदासजी का कोमल हृदय किसी का दुःख देखकर पिघलता था । वे किसी की सहायता करने में पीछे नहीं थे । गोस्वामीजी की कृतज्ञता का परिचय उनकी रचनाओं से स्पष्ट मिलता है । वाल्मीकि रामायण ,अध्यात्म

१- विनयपत्रिका -संपादक -राजनाथ शर्मा-पृष्ठ-२३६

रामायण आदि ग्रन्थों में जो जो कटु प्रसंग आये हैं उन प्रसंगों को गोस्वामीजी ने कोमलता से आवृत किया है ।

उनके मन में माता- पिता के प्रति सम्मान की भावना रहती थी । निश्चित है कि गोस्वामीजी ` आचार्य देवो भव, पितृ देवो भव ` वाले औपनिषद वाक्य का पालन करते थे ।

तुलसी राग द्वेष के बिना जीवन बिताना चाहते थे । सभी लोगों से वे समान व्यवहार करते थे ।

` तुलसी ममता राम सों समता सब संसार ।
राग न रोष न दोष दुख दास भये भव पार ।। [१]

जीवन की विकट परिस्थितियों का सामना कर वे निडर जीवन बिताते थे । भगवान राम पर अटल विश्वास रखने पर आदमी निर्भय होकर जीवन बिता सकते हैं, यही उनका मत है ।

` तुलसी दास रघुबीर - बाहुबल सदा अभय,काहू न डरै ।` [२]

` लोक को न डर परलोक को न सोचु ` ।। [३]

बहुश्रुत व्यक्ति :

तुलसी ने अपने जीवन में कई देशों का पर्यटन किया । अनेक सज्जनों की संगति में रहे । ये सभी बातें उन्हें एक बहुश्रुत व्यक्ति बनाने में सहायक

१- दोहावली (तुलसीकृत)अनुवादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-४०

२- विनयपत्रिका (तुलसीकृत) संपादक- राजनाथ शर्मा ,पृष्ठ-३१६

३- कवितावली (तुलसीकृत) लेखक और संपादक - श्रीकान्त शरण
पृष्ठ-३६६

सिद्ध हुई। जीवन के अनुभव भी उन्हें एक अगाध पण्डित बनाने का कारण बन गये। इस प्रतिभाशाली व्यक्ति ने अपनी प्रतिभा का परिचय साहित्य के विविध क्षेत्रों में दिया है।

बहिसाक्ष्य के आधार पर गोस्वामीजी का व्यक्तित्व

गोस्वामीजी के जीवन पर प्रकाश डालने वाले कुछ संकेत कुछ ग्रन्थों से मिलते है। गोस्वामीजी के आत्मोल्लेखों से उनके व्यक्तित्व का एक सामान्य परिचय ही हमें मिलता है। इसमें प्रामणिकता का अंश अधिक है। उनकी जीवनी का उल्लेख करनेवाले कुछ ग्रन्थ ये हैं :-

:१: नाभादास का भक्तमाल
:२: प्रियदास की टीका
:३: दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता
:४: वेणीमाधवदास कृत गोसाईं चरित और मूल गोसाईं चरित
:५: बाबा रघुबरदास कृत तुलसी-चरित
:६: तुलसी साहब हाथरस वाले का अत्मचरित और घट-रामायण

~~भक्तमाल के बारे में विचार करना~~ है :

उपर्युक्त ग्रन्थों में नाभादास की ` भक्तमाल ` को सबसे प्रामाणिक ग्रन्थ माना गया है। इस ग्रन्थ में तुलसीदास से संबन्धित एक छप्पय ही मिलता है जिस में उनके जीवन से संबन्धित कुछ बातें नहीं मिलती।

दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता :

इस ग्रन्थ से निम्नलिखित बातों पर कुछ संकेत मिलते है। राम के अनन्य भक्त तुलसीदासजी नन्ददास के बडे भाई थे। काशी उनका निवास-स्थान था। `रामचरितमानस ` जैसे विश्व-विख्यात ग्रन्थ की रचना उन्होंने भाषा में

की थी । इन वार्ता का ज़िक्र ' वार्ता ' में मिलता है ।

वेणी माधवदास कृत ' गोसाई चरित ' और ' मूल गोसाई चरित ' इन दोनों ग्रन्थों को प्रामाणिक मानने कोई विद्वान तैयार नहीं । ये दोनों ग्रन्थ एक ही शैली में लिखे गए हैं । ' मूल गोसाई चरित ' में दी हुई तुलसी की जीवनी से संबन्धित घटनाओं को सही मान लेने में कोई आपत्ति नहीं, लेकिन तिथि संबन्धी अशुद्धि तो है ही ।

<u>तुलसी - चरित :</u>

यह एक अप्रकाशित ग्रन्थ है, साथ ही साथ विद्वान लोग इसे मानने के लिए तैयार भी नहीं होते । अत: इस ग्रन्थ पर विचार करने की ज़रूरत नहीं ।

<u>घट रामायण :</u>

इसमें प्राप्त सामग्री को अधिक महत्व नहीं देना है, क्यों कि यह सामग्री जनश्रुति का रूप रखती है । इसमें जन्म संबन्धी जो तिथि दी गयी है केवल उसी को ठीक मानने में कोई आपत्ति नहीं । इस ग्रन्थ से भी गोस्वामीजी के जीवन-वृत्त का ठीक ठीक विवरण हमें नहीं मिलता ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बहि:साक्ष्य के आधार पर तुलसी के व्यक्तित्व का पूरा पूरा पता हमें नहीं मिलता । केवल इधर उधर व्यक्तित्व की कुछ झांकी ही मिलती है ।

बहिस्साक्ष्य के अन्तर्गत कुछ स्थानीय सामग्री भी मिलती है ।

(अ) काशी की सामग्री
(आ) अयोध्या की सामग्री
(इ) राजापुर की सामग्री

(ई) घरों की सामग्री

लेकिन उपर्युक्त सामग्री से गोस्वामीजी के व्यक्तित्व की जानकारी नहीं मिलती।

जनश्रुति के आधार पर उनका व्यक्तित्व :

गोस्वामीजी जैसे महापुरुषों की जीवनी के संबन्ध में कुछ जनश्रुति मिलती है। इनके आधार पर हमें उनके व्यक्तित्व की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करना है। लोगों के बीच में उनसे संबन्धित कुछ कथाएं चल पड़ी हैं।

'रामाज्ञाप्रश्न' नामक ग्रन्थ लिखने का कारण जनश्रुति के आधार पर कहा गया है। उपर्युक्त ग्रन्थ से तुलसीदास की ज्योतिष-संबन्धी ज्ञान का पता मिलता है। उन्होंने अपने मित्र गंगाराम ज्योतिषी के सहायार्थ यह ग्रन्थ लिखा, ऐसा कहा गया है।[१]

अपने इष्टदेव राम के प्रति गोस्वामीजी की भक्ति व्यक्त करने-वाली एक दन्त-कथा सुनना है।

गोस्वामीजी प्रह्लाद-घाट पर रहते वक्त एक दिन एक चोर चोरी करने केलिए आ पहुंचा। लेकिन भगवान राम अपने अनन्य भक्त का पहरा दे रहा था, यह बात जानकर अत्यधिक आनन्द के कारण उनकी आंखों में आंसू भर आये। इससे स्पष्ट है, भगवान राम के प्रति उनके हृदय में भक्ति का एक सागर ही उमड पडा है।[२]

१- तुलसीदास और उनका काव्य- पं० रामनरेश त्रिपाठी-पृष्ठ-२१०

२- तुलसी काव्य मीमांसा - उदयभानु सिंह,पृष्ठ-५८

दूसरों की करुण दशा देखकर उनका मन आर्द्र हो`ता था , उनका हृदय पानी पिघलने वाला था । निम्नलिखित उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी ।

मृत-पति का अनुगमन करनेवाली एक ब्राह्मणी ने रास्ते में गोस्वामीजी से मिलने पर उनका प्रणाम किया । गोस्वामीजी ने सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद दिया । लेकिन ब्राह्मणी के विधवा होने की बात समझकर उन्होंने बताया कि राम - नाम- जप से आपका मंगल ज़रूर होगा । उसी नाम- जप से उसका पति जी उठा । गोस्वामीजी की राम-भक्ति यहां स्पष्ट हो` उठी है । १

गोस्वामीजी अपने को दूसरों से कितने निम्न स्तर का व्यक्ति मानते थे। उनकी विनयशीलता यहां प्रकट हो गयी है ।

तुलसीदासजी पर अत्यधिक श्रद्धा रखनेवाले नाभादास जब तुलसी से मिलने गये तब वे इस कारण तुलसी से मिल नहीं सके, क्योंकि वे विनय में मग्न थे । नाभादास निराश होकर लौट पडे । पता चलने पर दु:खी तुलसीदास नाभादास जी से मिलने गये,वहां साधुओं का भंडारा होने के कारण तुलसीदास जी संतों के जूतों` और खड़ाउंओं के निकट बैठ गये । गोस्वामीजी ने किसी एक साधु के जूते को प्रसाद मांगने केलिए आगे बढ़ाकर कहा- ` मुझे` इससे बढ़कर दूसरा पवित्र पात्र नहीं है । नाभादास जी उनकी विनयशीलता पर नतमस्तक हो उठे । सत्पुरुषों में विनय की अधिकता देखी जा सकती है । २

१- तुलसीदास और उनका काव्य - पं० रामनरेश त्रिपाठी -पृष्ठ-६८

२- तुलसीदास और उनका काव्य- पं० रामनरेश त्रिपाठी-पृष्ठ-१०७

गोस्वामीजी किसी भी व्यक्ति की सहायता करने में हिचकने वाले व्यक्ति नहीं थे । एक गरीब ब्राह्मण की कन्या की शादी करा देने केलिए आर्थिक सहायता की आवश्यकता थी । गोस्वामीजी की मांग के अनुसार अब्दुर्रहीम खानखाना ने उसे खूब धन दे दिया । जीवों के प्रति गोस्वामीजी के हृदय में कितनी सहानुभूति रहती है ।

उपर्युक्त जनश्रुतियों में सत्य का अंश कहां तक है, यह बताना कुछ मुश्किल है । इन दन्तकथाओं में से गोस्वामीजी के व्यक्तित्व-संबधी कुछ ज्ञान प्राप्त होता है । उपर्युक्त जनश्रुतियों के अलावा, और भी कुछ जन-श्रुतियां मिलती हैं । पं०रामनरेश त्रिपाठी ने तुलसीदास जी के व्यक्तित्व के संबन्ध में जो कुछ कहा है , वह अत्यधिक स्मरणीय है ।

" तुलसीदास तो स्वयं अपने मानवीय गुणों से देदीप्यमान हैं, झूठे आश्चर्यजनक चमत्कारों से उनकी महिमा को बढ़ाना उनके व्यक्तित्व का उपहास करना है । श्रद्धालुओं ने भावुकता वश उनकी जीवनी में चमत्कारों का जितना अधिक सौन्दर्य भरा है, वह यदि सत्य नहीं है, तो वह जीवनी को सुन्दर बनाने की अपेक्षा उसे नीरस बनाने की में अधिक सहायक होगा । " [1]

नाम- महिमा - संबन्धी गोस्वामीजी के विचार

भगवान रामचन्द्र के पवित्र नाम का स्मरण जो मनुष्य करता है उसके पास मंगल स्वयं आ जाता है । [2]

१- तुलसीदास और उनका काव्य , पं० रामनरेश त्रिपाठी,पृष्ठ-१११

२- एहि महं रघुपति नाम उदारा । अति पावन पुरान श्रुति सारा ।
मंगल भवन अमंगल हारी । उमा सहित जेहि जपत पुरारी ।

मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

जिस कविता में राम - नाम का ज़िक्र नहीं आता है वह कविता गोस्वामीजी की दृष्टि में उत्कृष्ट नहीं । उत्तम कवि की कृति होने पर भी कोई फायदा नहीं ।[१]

नाम-स्मरण से हमेशा आनन्द की अनुभूति कर सकते है । दोनों लोकों में उसे शुभ गति मिलती है । कवि नाम और नामी में कुछ अन्तर न मानने वाले है । [२]

उनका विचार है कि नाम रूप से अधिक महत्त्व रखता है क्योंकि रूप ही नाम का बोध करा देता है । [३]

नाम और रूप की गति का ज्ञान पाना असंभव है । [४]

नाम-स्मरण से अजामिल,गज,गणिका आदि कितने लोगों का उद्धार हो गया ।[५]

१- भनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ । राम नाम बिनु सोह न सोऊ ।
विधुबदनी सब भांति संवारी । सोह न बसन बिना बर नारी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०

२- समुझत सरिस नाम अरु नामी । प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी ।
नाम रूप दुइ ईस उपाधि । अकथ अनादि सुसामुझि साधी ।
मानस -बालकाण्ड - पृष्ठ ५८

३- रूप विशेष नाम बिनु जाने । करतल गत न परहिं पहिचाने ।
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखें । आवत हृदयं सनेह बिसेषें ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५८

४- नाम रूप गति अकथ कहानी । समुझत सुखद न परति बखानी ।
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी । उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५८

५- अपतु अजामिलु गजु गनिकाऊ । भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ।
कहउं कहां लगि नाम बड़ाई । रामु न सकहिं नाम गुन गाई ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६८

कल्पवृक्ष के समान यह राम - नाम सारी कामनाओं की पूर्ति कर डालता है । इससे सारे अमंगल नष्ट हो जाते है ।[1] कलियुग में कर्म, ज्ञान आदि से अधिक नाम - स्मरण का महत्व होता है । नाम - स्मरण से कलियुग से रक्षा प्राप्त कर सकता है ।[2]

राम - नाम का जप किसी भी भाव से करने पर भी राम उस पर प्रसन्न होते है और उसका कल्याण कर डालते है ।[3]

इसी नाम के प्रभाव से संसार सागर बिना प्रयास के पार कर सकते है ।[4]

१- नाम राम को कल्पतरु कलि कल्यान निवासु ।
जो सुमिरत भयो भांगते तुलसी तुलसीदासु ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६८

(अ)चहुं जुग तीनि काल तिहुं लोका । भये नाम जपि जीव विसोका ।
वेद पुरान संत मत एहू । सकल सुकृत फल राम सनेहू ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

(आ)नाम कामतरु काल कराला । सुमिरत समन सकल जगजाला ।
राम नाम कलि अभिमत दाता । हित परलोक लोक पितु माता ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७०

२-नहिं कलि करम भगति विवेकू । राम नाम अवलंबन एकू ।
काल नैमि कलि कपट निधानू । नाम सुमति समरथ हनुमानू ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७०

३- भाय कुभाग अनख आलसहूं । नाम जपत मंगल दिसि दसहूं ।
सुमिरि सो नाम राम गुन गाथा । करों नाइ रघुनाथहिं माथा ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७९

४- राम नाम कर अमित प्रभावा । संत पुरान उपनिषत गावा ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११५

गोस्वामीजी के मत में नाम - स्मरण से राम के सेवकों के दु:ख भी दूर हो जाते हैं ।[१] वे मानते हैं कि नाम का जप अत्यधिक ध्यान से करना चाहिए । तभी यथार्थ फल मिल सकता है ।[२] गोस्वामीजी का विचार है कि मोह को दूर करनेवाला राम - नाम शान्ति प्रदान करने में समर्थ है । इससे चिन्ता भी मिट जाती है ।[३] ब्रह्म और राम से भी नाम का महत्व माना गया है ।[४] वाणी की शोभा बढ़ानेवाला एक मात्र साधन राम-नाम है ।[५]

१- अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा । अकथ अगाध अनादि अनूपा ।
मोरे मत बड़ नाम दुहूं ते । किय जेहिं जुग निज बस निज बूते ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६१

२- राम भगत हित नरतनु धारी । सह संकट किय साधु सुखारी ।
नामु सप्रेम जपत अनयास । भगत होहिं मुद मंगल वासा ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

३- सेवक सुमिरत नामु सप्रीति । बिनु श्रम प्रबल मोह दल जीती ।
फिरत सनेह मगन सुख अपने । नाम प्रताप सोच नहीं सपने ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६५

४- ब्रह्म राम ते नामु बड़ वरदायक वरदानि ।
राम चरित सत कोटि महं लिए महेस जिय जानि ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६

५- राम नाम बिनु गिरा न सोहा ।
देखु बिचारि त्यागि मद मोहा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११०

नाम-स्मरण करने से राम जाति की भी चिन्ता किए बिना ही उसकी भलाई कर डालते है । नीच जाति का मनुष्य होने पर भी राम - नाम स्मरण से वह पवित्र हो जाता है । यही उनका विचार है । [१]

नाम - स्मरण करनेवाले का स्वयं उद्धार होता है, उसके साथ साथ दूसरों का भी उद्धार होता है । भव -सागर तरना भी आसान हो जाता है । [२]

राम - नाम अत्यधिक सुन्दर है वैसे उनके गुण और चरित भी । [३]

गोस्वामीजी ने राम - नाम का महत्व अनेक दोहों मे व्यक्त किया है । विविध रूपों में राम- नाम के महत्व का अंकन उन्होंने किया है ।

१- आमीर जवन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे ।
कहि नाम वारक तेपि पावन होहि राम नमामि ते ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२५०

२- बारक नाम कहत जग जेऊ ।
होत तरन तारन नर तेऊ ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३१२

३- राम नाम गुन चरित सुहाए । जनम करम अगनित श्रुति गाए ।
जथा अनंत राम भगवाना । तथा कथा कीरति गुन नाना ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१५

(अ) राम नाम कर अमित प्रभावा ।
संत पुरान उपनिषद गावा ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११५

गोस्वामीजी इसी बात पर ज़ोर देते है कि कलियुग का एकमात्र सहारा राम - नाम है । इस युग के सभी कर्म मलिन होते हैं । राम - नाम के संबल पर व्यक्ति पापों को जीत सकता है ।[१]

गोस्वामीजी मन को पवित्र करनेवाले साधन के रूप में इस नाम को मानते है । नाम - जप से मन की अपवित्रता नष्ट होकर मन पवित्र हो जाता है । २

राम - नाम - स्मरण से व्यक्ति को सारे पुरुषार्थों की उपलब्धि हो जाती हैं । अर्थ , धर्म, काम, मोक्ष ऐसे पुरुषार्थ चार हैं । गोस्वामीजी राम- नाम को कामधेनु और राम को कल्पवृक्ष मानते है । [३]

गोस्वामीजी मानते है कि भगवान के पवित्र नाम का स्मरण करने पर मनुष्य आवागमन के बन्धन से मुक्त हो जाते हैं । कवि नाम को बहुत महत्व देते है ।[४]

१- नहिं कलि करम भगति बिबेकू । राम नाम अवलंबन एकू ।
कालनेमि कलि कपट निधानू । नाम सुमति समरथ हनुमानू ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७०

२- दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन । जनमत अमित नाम किये पावन ।
निसिचर निकर दले रघुनंदन । नामु सकल कलि कलुष निकंदन ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६४

३- तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि ।
वेद - पुरान पुकारत कहत पुरारि ।।
तुलसीदास कृत-बरवै रामायण,पृष्ठ-८३,श्रीकान्त शरण

४- जाको नाम लिये छूटत भव जन्म-मरन दुख भार ।
अंबरीष हित लागि कृपानिधि, सोइ जनमे दस बार ।।

विनयपत्रिका- राजनाथ शर्मा,पृष्ठ-२८६

विघ्न - बाधाओं से मुक्ति मिलकर आराम से जीवन बिताने केलिए नाम-स्मरण करना परम श्रेष्ठ है। गोस्वामीजी उसके जीवन को धन्य मानते है।[१]

राम - नाम पर विश्वास रखनेवाले का दोनों लोकों में मंगल होता है। गोस्वामीजी राम - नाम से प्रेम रखने का उपदेश देते है। [२]

राम - कथा की महिमा :

राम की पवित्र कथा चिन्तामणि है। उनके गुण संसार केलिए मंगल रूप है। [३]

राम की कथा मन के काम क्रोधादि बुरे विकारों का नाश करने वाली है। [४]

१- प्रनतारति भंजन जन रंजन, सरनागत पबि पंजर नाउं।
कीजै दास दास तुलसी अब, कृपासिंधु बिनु मोल बिकाउं।।
विनयपत्रिका-राजनाथशर्मा,पृष्ठ-३४६

२- राम नाम रति नाम गति राम नाम बिस्वास।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल दुहुं दिसि तुलसीदास।।
दोहावली-पृष्ठ-२५

३- राम चरित चिन्तामणि चारु। संत सुमति तिय सुभग सिंगारु।
जग मंगल गुन ग्राम राम के दानि मुकुति धन धरम धाम के।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८२

४- काम कोह कलिमल करिगन के। के हरि सावक जन मन बन के।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८३

(ब) मंत्र महा मनि बिषय ब्याल के। मेटत कठिन कुअंक भाल के।
हरन मोह तम दिनकर कर से। सेवक सालिपाल जलधर से।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८४

गोस्वामीजी मानते है कि यह कल्पवृक्ष के समान इच्छा की पूर्ति कर डालती है।[१] इस कथा की कोई सीमा नहीं, अनन्त है।[२] गोस्वामीजी के अनुसार इस कथा का गान आदरपूर्वक करनेवाले श्रेष्ठ है।[३]

गोस्वामीजी का विचार अत्यधिक ठीक निकला है कि केवल सज्जनों को यह कथा अच्छी लगती है, दुर्जनों को बुरी।[४] और राम की इस विचित्र कथा का ज्ञान केवल सुजान ही रखते हैं।[५]

१- अभिमत दानि देव तरु बर से। सेवत सुलभ सुखद हरिहर से।
सुकवि सरद नभ मन उडगन से। राम भगत जग जीवन धन से।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-८४

(ब) सकल सुकृत फल भूरि भोग से। जगहित निरुपधि साधु लोग से।
सेवक मानस मराल से। पावन गंग तरंग माल से।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-८४

२- राम कथा कै मिति जग नाहीं। असि प्रतीति तिन्ह के मन मांही।
नाना भांति राम अवतारा। रामायन सत कोटि अपारा।।
मानस-बालकाण्ड, पपृष्ठ-८८

३- जे गावहिं यह चरित संभारे। तेइ एहि ताल चतुर रखवारे।
सदा सुनहि सादर नर नारी। तेइ सुर वर मानस अधिकारी।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६६

४- राम कथा ससि किरन समाना। संत चकोर करहिं जेहि पाना।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-११८

५- अति विचित्र रघुपति चरित जानहिं परम सुजान।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१२१

गोस्वामीजी की राय है कि जो हरि भक्त नहीं उनका जीवन किसी काम का नहीं। राम की कथा आदर और श्रद्धा से कहनेवाला और सुनने वाला मूर्ख है।[१]

सारे लोगों का कल्याण करने वाली रामकथा सुनकर प्रसन्न न होनेवाला सचमुच निर्दयी है।[२]

इस कथा का गान करनेवाला संसार सागर से जल्दी मुक्त हो जाता है।[३] और अपने को पवित्र करनेवाली है। तीनों तापों को हरती है, भव-भय को दूर करती है।[४]

राम चरित की महिमा सभी लोगों से भी प्रशंसित है।[५]

१- जिन्ह हरि भगति हृदय नहिं आनी। जीवन सव समान तेइ प्रानी।
जो नहिं करै राम गुन गाना। जीह सो दादुर जीह समाना।।
मानस -बालकाण्ड,पृष्ठ-२१४

२- कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती। सुनि हरि चरित न जो हरखाती।
गिरिजा सुनहु राम कै लीला। सुरहित दनुज विमोहन सीला।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१५

३- सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना। होइ बालक सुर भूप।
महाराज कर सुभ अभिषेका। सुनत लहहिं नर बिरति बिवेका।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३३२

४- सुनु खगपति यह कथा पावनी। त्रिविध ताप भव भय दावनी।
महाराज कर सुभ अभिषेका। सुनत लहहिं नर बिरति बिवेका।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३७

५- रामचरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं।
जीवन मुक्त महा मुनि जेऊ। हरिगुन सुनहिं निरंतर तेऊ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६५

यह कथा कपटी से मत कहना, लोभी क्रोधी और कामी से भी कहने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वे उसमें आनन्द नहीं लेते । [१]

राम कथा में भरोसा रखकर इसे सुननेवाला जल्दी ही उनकी भक्ति का पात्र हो जाता है, वह सर्वज्ञ कहलाता है । [२] यह कथा ध्यान से सुनने पर सांसारिक पापों से आदमी मुक्त हो जाता है ।[३]

राम की कृपा की महिमा :-

गोस्वामीजी का यही विश्वास है कि राम की कृपा- दृष्टि पड़ने पर उस व्यक्ति का कल्याण हमेशा होता रहता है । अपने इष्टदेव की कृपा-वर्षा में अपने को भिगोने में वे सदा सन्तुष्ट रहते है ।

१- यह न कहिय सठही हठ सीलहि । जो मन लाइ न सुनहरि ।
कहिव न लोभिहिं क्रोधिहिं कामिहिं । जो न भजै सचराचरस्वामिहिं ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४६

२- मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पावहि विनहि प्रयास ।
जे येह कथा निरन्तर सुनहि मानि विश्वास ।।

मानस- उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४४

३- मन क्रम वचन जनित अघ जाई । सुनहि जे कथा श्रवन मनु लाई ।
तीर्थाटन साधन समुदाइ । जोग विराग ज्ञान निपुनाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४४

उनके मत में राम की कृपा -प्राप्त व्यक्ति सारी विघ्न- बाधाओं से मुक्त हो जाता है । [1]

विषयवासनायें उस पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकता । वह सारे सांसारिक रोगों से मुक्त होकर सुखी रहता है । [2] मोह- माया के जाल में न फंसकर उसका मन रामकी ओर उन्मुख होता है । [3]

राम की कृपादृष्टि पड़े बिना राम -भक्ति-मणि किसी को नहीं मिलती । उनकी कृपा पाने का सौभाग्य हमें होना चाहिए । [4]

१- सकल विघ्न व्यापहिं नहिं तेही । राम सुकृपा बिलोकहिं ।
सोइ सादर सर मज्जनु करई । महा घोर त्रयताप न जरई ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१०२

(अ) परमानन्द प्रेम सुख फूले । वीथिन्ह मगन मन फूले ।
यह शुभ चरित जान पै सोई । कृपा राम के जापर होई ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३८

(आ)संत बिशुद्ध मिलहिं पर तेही । चितवहिं रामकृपा करि जेही ।
राम कृपा तव दरसन मराका । तव प्रसाद सब संसय गएऊ ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२०

२- राम कृपा नासहिं सब रोगा । जौ इहि भांति बनै संजोगा ।
सद्गुरु वैद वचन विश्वासा । संजम यह न विषय कै आसा ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६२

३- क्रोध मनोज लोभ मद माया । छूटहिं सकल राम की छाया ।
सो नर इन्द्रजाल नहिं भूला । जा पर होइ सो नट अनुकूला ।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६२

४- सो मनि जदपि प्रगट जहई । राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई ।
सुगम उपाय पाइबे केरे । नर हत भाग्य देहिं भट भेरे ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२५

गोस्वामीजी मानते है कि हरि की कृपा जिस पर पड़ती है वही रामकथा का सार ग्रहण कर सकता है ।[1]

राम की कृपा की वर्षा होने पर कितने मंगल कार्य उपस्थित होते हैं । गोस्वामीजी इन्हीं कारणों से राम की कृपा पाने केलिए राम की भक्ति में तल्लीन होने का उपदेश देते है ।[2]

संसार के मिथ्यात्व का बोध केवल रामचन्द्र की कृपा के सहारे ही होता है । उनकी कृपा पाये बिना हम नश्वर संसार के माया-मोह में पड़कर अपने जीवन को बरबाद कर डालते हैं ।[3]

उन्हीं रामचन्द्र की कृपा के बल पर मोह के छूटने पर हमारा मन राम की ओर केन्द्रित हो जाता है ।[4]

१- एहि महं रुचिर सप्त सोपाना । रघुपति भगति केर पंथाना ।
अति हरि कृपा जाहि पर होई । पांव देइ एहि मारग सोई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४७

२- सिला सुतिय भइ गिरि तरै, मृतक जिये जग जान ।
राम अनुग्रह सगुन सुभ सुलभ सकल कल्यान ।।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१३[illegible]

३- हे हरि, कस न हरहु भ्रम भारी ।
जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिं कृपा तुम्हारी ।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-२८१ ,राजनाथ शर्मा

४- अस कछु समुझि, परत रघुराया ।
बिनु तव कृपा दयालु दास हित मोह न छूटै माया ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-२८६

प्रभु की कृपा के सहारे मनुष्य की सारी प्रवृत्तियां सफल हो जाती हैं। गोस्वामीजी उस प्रभु की कृपा की मांग सदा करते है।[१]

गोस्वामीजी का यही मत है कि व्यक्ति की अवनति राम की कृपा - दृष्टि पडने पर नहीं होती। ऐसे व्यक्ति की उन्नति पद पद पर होती है।[२]

राम - भजन - महिमा :

गोस्वामीजी अपने इष्टदेव की महिमा के गायन में हमेशा लगे रहते है। राम - भजन करने से मनुष्य सारे सांसारिक मलिनताओं से मुक्त होकर पवित्र हो जाते हैं। इसी कारण कहा गया है कि राम - भजन के समान कोई पवित्र धर्म नहीं है।

गोस्वामीजी का विचार है कि हरि का भजन करने से सारे कष्ट मिट जाते हैं। उनकी कृपा के सहारे राम की प्रभुता जानी जा

१- तुलसी उधम करम जुग जब जेहि राम सुडीठि।
   होइ सुफल सोइ ताहि सब सनमुख प्रभु तन पीठि॥

दोहावली-पृष्ठ-३५

२- सोई है खेद जो बेद कहै, न।
   घटै न जन जो रघुबीर बढ़ायो॥
   कवितावली-पृष्ठ-३६२
   श्रीकान्त शरण

(ब) एक कहै तुलसी सकल सिद्धि ताके जाके।
   कृपा पाथ नाथ सीतानाथ सानुकूल हैं॥
   कवितावली, पृष्ठ-१४०

सकती है।[१]

हरि-भजन अच्छा न लगनेवाला कौन मूर्ख होता है ? अर्थात् उसे सब प्रसन्न करते हैं।[२] राम का भजन करने से और कुछ प्रयत्न के बिना अविद्या मिट जाती है।[३] अत्यधिक दुर्लभ कैवल्य पद की प्राप्ति हो जाती है।[४]

गोस्वामीजी का विचार है कि अत्यधिक दुर्लभ मानव शरीर की प्राप्ति होने पर राम-भजन करके उस जन्म को सफल बनाना हमारा कर्तव्य है। जो ऐसा नहीं करता उसकी अवश्य हानि होती है।[५]

१- निज अनुभव अब कहउँ खगेसा। बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा।
राम कृपा बिनु सुनु खगराई। जानि न जाइ राम प्रभुताई।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५२

२- भोजन करिअ तृप्ति हित लागी। जिमि सो असन पचव जठरागी।
असि हरि भगति सुगम सुखदाई। को अस मूढ़ न जाहि सुहाई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२२

३- असि बिचारि हरि भगत सयाने। मुकुति निरादर भगति लुभाने।
भगति करत बिनु जतन प्रयासा। संसृति मूल अविद्या नासा।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२२

४- अति दुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद।
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अनइच्छित आवै बरि आई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२१

५- हानि कि जग एहि सम कछु भाई। भजिय न रामहि नर तन पाई।
अघ कि पिसुनता सम कछु आना। धर्म कि दया सरिस हरिजाना।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२०९

राम का भजन करने मात्र से जीव दु:ख से एकदम मुक्त हो जाते है। भजन के अभाव में जीव दु:ख के सागर में मग्न होने लगता है, उससे उसे मुक्ति भी नहीं मिलती।[१]

गोस्वामीजी यही विचार रखनेवाले है कि भक्ति में मग्न होनेवाला व्यक्ति जीवन में पूर्णता का अनुभव करता है। [२]

जन्म को सफल बनाने केलिए राम का भजन करना है। नहीं तो जन्म व्यर्थ ही बीत जाता है।[३]

तुलसीदास संसार सागर पार करने केलिए हरि-भजन अत्यधिक आवश्यक है। हरि-भजन रूपी नाव के सहारे यह भव-सागर आसानी से पार किया जा सकता है।[४]

१- ऐसहि हरि बिनु भजन खगेसा। मिटइ न जीवन कैर कलेसा।

हरि सेवकहि न व्याप अविद्या। प्रभु प्रेरित व्यापै तेहि विद्या।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१३६

२- भगतिहीन गुन सब सुख ऐसे। लवन हीन सुख कवने काजा।

भजनहीन सुख कवने काजा। अस बिचारि बोलेउं खगराजा।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१४४

(१)बिनु सन्तोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहु नाहीं।

राम भजन बिनु मिटहिं न कामा। थल बिहीन तरु क बहुकि जामा।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३

३-हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहि।

भजिय राम तजि काम सब अस बिचारि मन माहि।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८१

४- वारि मथे घृत होइ बरु, सिकतातें बरु तेल।

बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धान्त अपेल।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३७

प्रेम की उपेक्षा कर मनुष्य को राम का भजन करना चाहिए । ऐसा न करनेवाला अभागा है ।[१]

भगवान रामचन्द्र का आदरपूर्वक भजने से परमपद की प्राप्ति हो जाती है । गोस्वामीजी राम के भजन में तल्लीन होना अत्यधिक पसन्द करते है ।[२]

मनुष्य - जीवन को मूल्यवान बना देने केलिए राम का भजन पवित्र मन से करना अत्यधिक आवश्यक है । नहीं तो हमारे जीवन का मूल्य अत्यधिक घट जाता है ।[३]

गोस्वामीजी केवल राम-भजन करनेवाले का जीवन धन्य मानते है बल्कि उसके मां - बाप के जीवन भी धन्य होता है । गया-गीता होने पर भी उसकी सद्‌गति होती है ।[४]

१- जे न भजहि अस प्रभु भ्रम त्यागी । ग्यान रंक नर मंद अभागी ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-६०१

२- कर पंकज सिर परसि अभय कियो जन पर हेतु दिखायो ।

तुलसिदास रघुवीर भजन करि को न परमपद पायो ।

गीतावली,पृष्ठ-३४३

प्रकाशक-हनुमान प्रसाद पोद्दार,गीताप्रेस,गोरखपुर

३- तातें नाथ कहौं मैं पुनि पुनि, प्रभु पितु मातु गोसाईं ।

भजनहीन नरदेह वृथा,खर स्वान फेरुकी नाईं ।।

गीतावली-पृष्ठ-२५३

४- धन्य धन्य माता पिता, धन्य पुत्रवर सोइ ।

तुलसी जो रामहि भजे , जैसेहु कैसेहु होइ ।

वैराग्य सन्दीपनी,पृष्ठ-४०

श्रीकान्त शरण

राम की महिमा :

गोस्वामीजी ने अपने इष्टदेव रामचन्द्र की महिमा का बखान अपने समस्त ग्रन्थों में किया है ।

गोस्वामीजी मानते है कि भगवान रामचन्द्र सागर तुल्य है अर्थात् उनमें उतनी अनन्यता का दर्शन कर सकते है ।[1] उन्हीं के प्रभाव से सारे पाप मिट जाते हैं ।[2] उनके मत में रामचन्द्र कल्पवृक्ष है क्यों कि वे अपने भक्त के संपूर्ण मनोरथों की पूर्ति करने में समर्थ है । हिमालय के समान वे उतने गंभीर है ।[3]

अशरणों की रक्षा करना उनका ध्येय है । सृष्टि ,पालन और संहार का विचार उनके मन में रहता है ।[4] प्रभु भक्त केलिए क्या न करता है ? प्रभु का सब कुछ भक्त केलिए होता है । भक्ति की मात्रा के अनुसार भगवान हम पर प्रसन्न होते है ।[5]

१- तुम्हहिं आदि खग मसक प्रजंता । नभ उडहिं पावहि अंता ।
तिमि रघुपति महिमा अवगाहा । तात कबहुं कोउ पाव कि थाहा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५६

२- प्रभु अगाध सत कोटि पताला । समन कोटि सत सरिस कराला ।
तीरथ अमित कोटि सत पावन । नाम अखिल अघपुंज नसावन ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५७

३- हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा । सिंधु कोटि सत सम गंभीरा ।
कामधेनु सत कोटि समाना । सकल काम दायक भगवाना ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५७

४- सारद कोटि अमित चतुराई । विधि सत कोटि सृष्टि निपुनाई ।
विष्णु कोटि त पालन करता । रुद्र कोटि सत सम संघरता ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५८

५- जाके हृदय भगति जसि प्रीति । प्रभु तहं प्रगट सदा तेहि रीति ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११७

गोस्वामीजी अपने इष्टदेव की भक्ति में इतने तल्लीन हो गये हैं कि वे उसी में मग्न रहकर अपने को भूल बैठे हैं। राम का स्मरण करने मात्र से उसका सारा अज्ञान भाग जाता है।

रामचन्द्रजी को कपटता छोड़कर स्मरण करना है, तभी मंगल होता है। उनका यशोगान करना और सुनना दोनों श्रेष्ठ होता है। गोस्वामीजी ने इसी में अपने को तल्लीन कर रखा है।[१]

प्रभु सर्व शक्तिमान हैं, इसलिए उनमें सब कुछ कर डालने की ताकत होती है।[२]

गोस्वामीजी का विचार है कि रामचन्द्रजी ही मनुष्य को इस अनन्त संसार सागर पार करने की शक्ति दिला देते हैं, चाहे वह कितना ही बड़ा आदमी हो।[३]

रामचन्द्रजी के प्रभाव से अविद्या अपना जाल नहीं फैला सकती। राम उसे दूर हटा देते हैं।[४]

१- एहि बिधि निज गुन दोष कहि। सबहि बहुरि सिरनाइ।
बरनउं रघुबर बिसद जसु सुनि कलि कलुष सिरनाइ॥
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७१

२- मसकहिं करौ बिरंचि प्रभु अजहिं मसक ते हीन।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३७

३- साधक सिद्ध बिमुक्त उदासी। कवि कोविद कृतग्य सन्यासी।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४०-२४१

४- सतपंच चौपाईं मनोहर जानि। जो नर उर धरैं।
दारुन अविद्या पंचजनित बिकार श्री रघुबर हरैं।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२५७

प्रकाशक-हनुमानप्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस,गोरखपुर

राम की अनुपम महत्ता के कारण उनकी शरण में आये हुए व्यक्ति की उन्नति होती है। गोस्वामीजी ऐसे लोगों को अत्यधिक आदर से देखते है।[१]

राम - विमुख की दुर्गति :

राम से विमुख रहना गोस्वामीजी पसन्द नहीं करते। हमेशा वे उनकी भक्ति में तल्लीन रहना पसन्द करते है। उनसे विमुख होकर रहने-वालों से उनका यही कहना है कि उनका कल्याण कभी नहीं होता। उन्हें जीवन में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सुख का अनुभव नहीं होता।

गोस्वामीजी का विचार है कि राम से विमुख रहनेवाले की संपत्ति, प्रभुता आदि सभी नष्ट हो जाती है। सुख-सामग्रियों से अनुगृहीत होने पर भी उसका मंगल कभी नहीं होता।[२]

१- गयो राम सरन सब को भलो। गनी गरीब बडो छोटो,
   बुध मूढ़ हीनबल अतिबलो। पंगु अंध निरगुनी निसंबल जो न लहै जाचे जलो।

   गीतावली-पृष्ठ-३४०

२- राम-विमुख संपति प्रभुताई। जाइ रही पाई बिन पाई।
   सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं। बरषि गए पुनि तबहिं सुखाहीं।

   मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१११

(१) मित्र करै सत रिपु कै करनी। ताकहुं विबुध नदी बैतरनी।
   सब जगु ताहि अनलहु ते ताता। जो रघुबीर विमुख सुनु भ्राता।।

   मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४७६

(२) उमा राम गुन गूढ़, पंडित मुनि पावहिं बिरति।
   पावहिं मोह विमूढ़ जो हरि विमुख न धर्म रति।।

   मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४७६

राम से प्रेम का नाता जोड़कर जीवन बिताना चाहिए। सांसारिक मोह-माया में फंसकर जीना उचित नहीं। भव-सागर में डूबते उतरते रहनेवाला कैसे सागर पार कर सकता है।[१]

भगवान से विमुख होने पर उसकी अवस्था अत्यधिक खराब हो जाती है। उसकी अवस्था में कभी सुधार नहीं होता।

सारे गुणों से विभूषित व्यक्ति राम - विमुख हो तो उसका आदर कौन करता ? उसकी अवश्य हानि होती है।[२]

गोस्वामीजी का विचार है कि असंभव बातें, जैसे मृगजल पीकर प्यास बुझाना, खरगोश के सिर पर सींग उगना, अन्धकार सूर्य का नाश करना आदि वास्तविकता का रूप धारण कर हमारे सामने आ जाय तो भी राम -विमुख का मंगल नहीं होता।[३]

राम से विमुख व्यक्ति गोस्वामीजी की दृष्टि में अत्यधिक निंद्य है। उसे नरक-भोग की सजा मिलती है।[४]

१- भवसिन्धु अगाध परे नर ते पद पंकज प्रेमु न जे करते।
अति दीन मलीन दुखी नितही जिन्ह के पद पंकज प्रीति नहीं।
अवलंब भंवत कथा जिन्ह के प्रिय संत अनंत।
मानस,उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३५

२- रघुपति विमुख जतन कर जोरी। कवन सकै भव बन्धन छोरी।
जीव चराचर बस कै राखे। सो माया प्रभु सों भय भाखे।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३४५

३- तृषा जाइ बरु मृगजल पाना। बरु जामहिं सससीस विषाना।
अंधकार बरु रविहि नसावै। राम विमुख न जीव सुख पावै।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६

(अ)कमठ पीठि जामहिं बरु बारा। बन्ध्यासुत बरु काहुहि मारा।
फूलहिं नभ बरु बहु विधि फूला। जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६

४- तुलसी रामहि परिहरें निपट हानि सुन ओझ।
सुरसरि गत सोइ सलिल सुरा सरिस गंगोझ।।
मानस-दोहावली-पृष्ठ-३३

राम से विमुख रहनेवाला व्यक्ति अगर हमारा मित्र हो तो भी शत्रु के समान उसकी उपेक्षा करनी चाहिए। गोस्वामीजी मानते है कि इस प्रकार का मित्र होना या न होना दोनों बराबर है।[१]

अगर हम सच्चिदानन्द राम से विमुख रहें तो विधाता हमारे प्रतिकूल हो जाते हैं। विधाता प्रतिकूल हो जाने पर सारी बातें बिगड़ जाती है।[२]

उस व्यक्ति का जीवन व्यर्थ है जो राम से रुष्ट होकर बैठता है। उसके जीने से किसी को फायदा नहीं होता, बल्कि अनिष्ट ही होता रहता है।[३]

भक्ति की महिमा :

भक्ति की अमोघिनी शक्ति से भगवान हमारे वश में हो जाते है। भक्ति सारे कल्मषों को धो देती है और मनुष्य को पवित्र कर देती है। भक्त, भक्ति का सहारा पाकर, सारे विकारों से उन्मुक्त होकर ईश्वर की ओर उन्मुख हो जाता है।

१- जाके प्रिय न राम बैदेही।
सो छांडिये कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-३७७, राजनाथ शर्मा

२- हित पर बढ़इ बिरोध जब, अनहित पर अनुराग।
राम बिमुख बिधि बाम गत सगुन अघाइ अभाग।
तुलसीदासकृत- रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-२५५

३- सब फोकट साटक है तुलसी, अपनो न कछू सपनो दिन द्वै।
जरि जाउ सो जीवन जानकीनाथ जियै जग में तुम्हारो बिनु ह्वै।
कवितावली, पृष्ठ-३३४

भक्त विषयवासना से अछूता रहता है । उसका कोई असर उस पर नहीं पड़ता । वह काम,क्रोधादि विकारों का गुलाम नहीं बनता ।[१]

भक्ति में कपटता का लेशमात्र भी न रहना है । तभी भक्ति की उत्कृष्टता और पवित्रता बढ़ती है । सुख मिलने के लिए दूसरा कोई उपाय नहीं है ।[२]

गोस्वामीजी यही विचार रखनेवाले है कि योग की सफलता के लिए भक्ति की अत्यधिक आवश्यकता है । भक्ति के बिना जप का कोई महत्व नहीं है ।[३]

वे मानते है कि केवल राम - भक्ति से सारी सिद्धियां प्राप्त कर सकते है ।[४]

वे मानते है कि कवि भक्ति को चारों आश्रमों से ऊंचा पद देने के लिए तैयार है । भक्ति को सर्वोत्कृष्ट साधन बताया गया है ।[५]

१- रामचरन पंकज प्रिय जिन्हहीं । विषय भोग बस करहिं कि तिन्हहीं ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१२६

२- करम बचन मन छाड़ि छलु जब लगि जनु न तुम्हारा ।

तब लगि सुख सपनेहुं नहिं किये किये कोटि उपचार ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१५८

३- सरुज सरीर बादि बहु भोगा । बिनु हरि भगति जायं जप जोगा ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५२

४- सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहु , राम कहत जमुहात ।

राम प्रानप्रिय भरत कहुं यह न होइ बड़ि बात ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४५१

५- चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारी ।

जिमि हरि भगति पाइ श्रम तजहि आश्रमी चारी ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४२

गोस्वामीजी भक्ति की श्रेष्ठता को माननेवाले है। राम की भक्ति में मग्न न होनेवाला मन्दमति है। [१]

सारे गुणों के होते हुए भी जिसमें भक्ति की तीव्रता नहीं, वह क्या पूजनीय है ? कभी नहीं।[२] राम के प्रति उनके हृदय में भक्ति की धारा किसकी तीव्र गति से प्रवहमान है, यह बात अत्यधिक स्पष्ट हो उठी है।

सारे सुखों का मूल भक्ति ही है। भक्ति के बिना सुख दूर की चीज़ है।[३]

सच्चे भक्त को अवश्य मुक्ति की प्राप्ति होती है। उसका जीवन सफल हो उठता है।[४]

१- निसिचर अधम मलाकर, ताहि दीन्ह निज धाम।
गिरिजा ते नर मंदमति जे न भजहिं श्रीराम।।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-३१२

२- जाति पाति कुल धर्म बड़ाई। धन बल परिजन गुन चतुराई।
भगति हीन नर सोहै कैसा। बिनु जल बारिद देखिअ जैसा।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८३ ५८८

३- जाने बिनु न होइ परतीती। बिनु परतीती होइ नहिं प्रीती।
प्रीति बिना नहि भगति दिढाई। जिमि खगपति जल कै चिकनाई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३

(अ)भगति हीन गुन सब सुख ऐसे। लवन बिना बहु बिंजन जैसे।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-[illegible] १७२

४- बिरति ज्ञान बिज्ञान दृढ़ रामचरित अति नेह।
वायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६७

गोस्वामीजी के विचार में राममक्त सारे लक्षणों से युक्त पंडित है, सर्वज्ञ है ।[1]

अन्त:करण का मल दूर करने केलिए भक्ति की अत्यधिक आवश्यकता है । उसके बिना अन्त:करण पवित्र नहीं बनता ।[2] केवल राम भक्त ही परमानन्द सुख के अधिकारी है । वह भगवान के नाम और गुण-गान में लीन रहता है ।[3]

भक्त हमेशा भगवान की छत्र-छाया में रहता है । भगवान उसकी भलाई करने केलिए सदा तैयार रहते है । गोस्वामीजी रामचन्द्र का परम भक्त है । दु:ख की हालत में भगवान हमेशा उनका साथ दे रहे है ।[4]

पवित्र भक्ति में मग्न रहने वाले भक्त पुण्यात्मा हैं । वह सारे गुणों से विभूषित एक व्यक्ति होता है । गोस्वामीजी उसे अत्यधिक श्रेष्ठ

१- विरति ज्ञान विज्ञान दृढ़ रामचरित अति नेह ।
   वायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह ।।
१- सोइ सर्वज्ञ तज्ञ सोइ पंडित सोइ गुन गृह विज्ञान अखण्डित ।
   दच्छ सकल लच्छन जुत सोईं । जाके पद सरोज रति होईं ।।
      मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६०
२- प्रेम भगति जल बिनु रघुराई । अभि अंतर मल कबहुँ कि जाइ ।
      मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८६
३- मम गुन ग्राम रत, गत ममता मद मोह ।
   ताकर सुख सोइ जानै परानंद संदोह ।।
      मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८५
४- जो कहावत दीनदयालु सही, तेहि भीर सदा अपने पन की ।
   तुलसी तजि आन भरोस भजे भगवान भलो करिहैं जन को ।
      तुलसीकृत, कवितावली,पृष्ठ-२७१
      संपादक श्रीकान्त शरण

स्थान देते है । १

राम - भक्त की दुर्दशा कभी नहीं होती । तीनों कालों में उसकी भलाई अवश्य होगी ।२

कोई भी भक्त की हानि नहीं कर सकता । उसकी हानि करने के लिए करोड़ों उपाय करने पर भी कोई फायदा नहीं होता । गोस्वामीजी हमेशा भक्त के साथी रहते है ।३

रामचन्द्र के प्रति निष्काम भक्ति रखने पर पुरुषार्थों की प्राप्ति अनायास ही हो जाती है । गोस्वामीजी रामचन्द्र के भक्त बनने का उपदेश देते है ।४

भक्ति हमारे मन को सरस बना देती है । इसी कारण भक्त का मन सदा सरस और कोमल रहता है ।५

१- सो सुकृती सुचिमंत सुसंत ,सुसील सयान सिरोमनि स्वै ।
सुर तीरथ तासु मनावत आवन पावन होत हैं ता तन छ्वै ।
तुलसीकृत-कवितावली,पृष्ठ-३२१

२- सांसति तुलसीदास की सुनि सुजस तुही लै ।
तिहुंकाल तिनको भलो जे राम रंगीले ।
तुलसीदास कृत-विनयपत्रिका,पृष्ठ-१२३

३- जो पै कृपा रघुपति कृपालु की । बैर और के कहा सरै ।
होइ न बांको बार भक्त को, जो कोउ कोटि उपाय करै ।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-३२५

४- स्वारथ परमारथ रहित सीता राम सनेहं ।
तुलसी सो फल चारि को फल हमार मत एंह ।।
दोहावली-पृष्ठ-३१

५- भैवहि भगति मन, बचन करम अनन्य गति हरिचरन की ।
पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१०

गोस्वामीजी का विचार यह है कि सारे सुखों का मूल भक्ति है। भक्त जल्दी सुख पा सकते हैं।[१]

गुरु - महिमा : गोस्वामीजी के विचार

वैष्णव भक्त गोस्वामीजी ने अपने हृदय में उमडे हुए भावों को काव्य बद्ध करने का जो कार्य किया है वह अत्यधिक सराहनीय है। गोस्वामीजी के विचार अत्यधिक गंभीर होते हैं। सूक्तियों का अध्ययन करने से उनके अनेकों विचार स्पष्ट होते हैं। उनके विचारों में अत्यधिक गंभीरता दीख पडती है।

सूर, कबीर, रहीम जैसे सन्त कवियों में गुरु के प्रति अत्यधिक आस्था रहती है।

आध्यात्मिक साधनों में गुरु का अत्यधिक महत्व बताया गया है। निर्गुण और सगुण दोनों संप्रदाय वालों ने गुरु की महिमा का उद्घोष किया है। अविद्याजन्य बन्धन का मोचन गुरु के द्वारा ही होता है।

' अविद्या हृदय ग्रंथि: । बंध मोक्षो भवेत्त : ।
तमेव गुरुरित्याहु । गुरुशब्दार्थ वेदिन : ।।[२]

भगवान की प्राप्ति कराने में गुरु का बहुत महत्व होता है। श्रुति ,पुराण,संस्कृत,साहित्य,लोक साहित्य आदि में गुरु के महत्व का गान मिलता है।

१- सरल सुलभ हरि भगति सुधाकर निगम पुराननि गाई।
कृष्णगीतावली-पृष्ठ-१२८
व्याख्याकार- श्रीकान्तशरण

२- शुक्ल वैदान्त तमो भास्करम् ,पृष्ठ-२७
हिन्दी और तेलुगु वैष्णव भक्ति साहित्य से उद्धृत
तुलनात्मक अध्ययन,डा० के रामनाथन,पृष्ठ-११७

ज्ञान रूपी दिया लेकर चलनेवाले गुरु का महत्व सब जानते है। उस दीपक से प्रकाश न मिल जाय तो हमें अंधकार में भटकना पडे। गुरु की महिमा का उद्घोष विद्वानों ने किया है :-

' गुरुब्रह्मा ' गुरुर्विष्णो , गुरुर्देवो महेश्वर : ।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्री गुरवे नम : ।।

गुरु शब्द का अर्थ समझना है ।

' गुकारस्त्वन्धकारस्तु - रुकारस्तु निरोधक : ।

' गु ' शब्द का अर्थ है अन्धकार और ' रु ' शब्द का अर्थ है रोकनेवाला है । [१]

' मानस ' में तुलसीदास जी ने पहले पहल गुरु का महत्व घोषित किया है ।

वंदे बोधमयं गुरुं शंकर रूपिणं ।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्र: सर्वत्र वंद्यते ।। [२]

गोस्वामीजी के हृदय में गुरु के प्रति श्रद्धा और आदर का भाव रहता है । यह बात उनकी रचनाओं का अध्ययन करने से स्पष्ट मालूम पडता है । भारतीय संस्कृति में गुरु बडे पूज्य व्यक्ति है ।

ऐसे गुरु के आगे गोस्वामीजी नतमस्तक हो जाते है । ' मानस ' में गोस्वामीजी का ,गुरु के प्रति आदर भाव व्यक्त होता है ।

१- रामचरित मानस- डा० विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-७

२- रामचरित मानस- डा० विजयानन्द त्रिपाठी- बालकाण्ड,पृष्ठ-२

सूर्य जिस प्रकार अन्धकार का नाश कर प्रकाश की किरणें फैला देता है। वैसे गुरु हमारे अज्ञान रूपी अन्धकार का विनाश कर हमें ज्ञान रूपी प्रकाश देते है। गोस्वामीजी गुरु को ज्ञानरूपी सूर्य मानते है।[१]

गुरु के चरण -नखों को गोस्वामीजी कितना श्रेष्ठ मानते है। बंद रहनेवाले हृदय के नेत्र खुल जाते हैं।[२]

गुरु के प्रति पवित्र प्रेम होना है - यही गोस्वामीजी चाहते है। उनसे छिपाव रखना तो बुरी बात है। अगर रखें तो मन में विवेक का उदय नहीं होत। प्रेम में छिपाव रखने पर उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती है। गोस्वामी का यह कथन कितना सत्य निकला है।[३]

१- बंदौ गुरु पद कंज कृपासिन्धु नर रूप हरि।
महामोह तमपुंज जासु बचन रवि कर निकर ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६

(अ) बंदउं गुरुपद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।
अमिय मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भव रुज परिवारू।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७

२- गुरु पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हियं होती।
उघरहिं बिमल बिलोचन ही के, मिटहिं दोष दुख भव रजनी के।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६

(आ) गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन नयन अमिअ दृग दोष विभंजन।
तेहि करि विमल विवेक विलोचन। बरनउं राम चरित भव मोचन।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१०
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

३- संत कहहिं अस नीति प्रभु। श्रुति पुरान मुनि गाव।
होइ न विमल विवेक उर। गुर सन किये दुराव ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११५

गुरु पर वे पूर्ण भरोसा रखते है। गुरु पर भरोसा न रखने पर सुख का सपना भी नहीं देखा जा सकता।[१]

कवि कुलगुरू को मां-बाप से श्रेष्ठ मानते है। गुरु अच्छे मार्ग की ओर जानेका संकेत देते है। तुलसीदास का मत है कि कुलगुरू के समान हित करनेवाला दूसरा कोई नहीं है।[२]

भव सागर पार करने केलिए गोस्वामीजी गुरु की सहायता को अत्यधिक आवश्यक मानते है। कितने ही महान व्यक्ति हों तो भी गुरु का सहारा परम आवश्यक है।[३]

गोस्वाभीजी इस बात पर ज़ोर देते है कि गुरु की आज्ञा का पालन करना हमारा परम कर्तव्य है। पिता और माता के आज्ञापालन में भी पीछे हटना तुलसी पसन्द नहीं करते। उनको भी गुरु की श्रेणी में बिठाया है। उनकी आज्ञा पर टीकाटिप्पणी न करके उसके महत्व को स्वीकार करना चाहिए।[४]

कवि पूछते है - गुरु के बिना ज्ञान प्रदान करनेवाला कौन है? वैसे ज्ञान के बिना कैसे वैराग्य उत्पन्न होगा? स्पष्ट है कि ज्ञान की उपलब्धि

१- गुरु के बचन प्रतीति न जेही। सपनेहु सुगम न सुख सिधि तेही।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६०

२- प्रभु प्रिय पूज्य पिता सम आपू। कुलगुरु सम हित माय न बापू।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४२५

३- गुरु बिनु भव निधि तरै न कोई। जौ बिरंचि संकर सम होई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६०

४- गुरु पितु मातु स्वामि सिख पालें। चलेहुं कुमग पग परहिं न खालें।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४५६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गुरु के द्वारा ही होती है ।[१]

गोस्वामीजी का यही विचार है कि गुरु का भक्त ही सारे संसार में बड़ा भाग्यशाली माना जाता है ।[२]

सद्गुरु सन्देह और भ्रम के अलावा अज्ञान का भी नाश कर देते हैं । उस सद्गुरु के कथनों पर गोस्वामीजी अत्यधिक महत्व देते हैं ।[३]

शिष्य के सारे दु:खों को दूर कर उसका कल्याण करना गोस्वामीजी के मत में गुरु का सबसे प्रमुख कर्तव्य है । गुरु अपने कर्तव्यों की ओर आंखें मूंदकर रहना उचित नहीं ।[४]

गोस्वामीजी गुरु से ईर्ष्या रखना पसन्द नहीं करते । वैसे गुरु की निन्दा करना भी । इससे नरक-वास जैसे कठिन दण्ड भोगना पड़ता है । आवागमन के चक्र में हमें घूमना भी पड़ता है ।[५]

१- बिनु गुरु होइ कि ज्ञान कि होइ बिराग बिनु ।
गावहिं बेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३

२- जो गुर पद अंबुज अनुरागी ।
ते लोकहुं बेदहुं बड़भागी ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३७६

३- सद्गुरु मिले जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ ।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४३

४- हरी शिष्य धन सोक न हरई । सो गुर घोर नरक महु परई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७०

५- जे सठ गुरसन इरषा करहीं । रौरव नरक कोटि जुग परहीं ।
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा । अयुत जनम भरि पावहिं पीरा ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८९

कवि हमें उपदेश देते है - हमें गुरु के कोप का पात्र कभी नहीं बनना है, उनको कुपित करनेवाली कोई कार्य नहीं करना । उनसे प्रेम का बर्ताव करना उचित है ।[१]

गोस्वामीजी गुरुजनों को कल्पवृक्ष मानते है । कल्पवृक्ष जैसे सारी इच्छाओं की पूर्ति कर डालता है वैसे गुरु भी । गुरुजनों को किसी भी प्रकार का आघात पहुंचाना गोस्वामीजी ठीक नहीं मानते । उनसे कुछ छीन लेना भी उचित नहीं , गुरु के प्रति गोस्वामीजी के हृदय की आदर भावना यहां स्पष्ट हो उठी है ।[२] अभिमान की उपेक्षा कर गुरु की सेवा करें तो अवश्य सुख की प्राप्ति होगी । उसके साथ साथ राम की भक्ति भी पा सकते हैं । गोस्वामीजी बिना अभिमान के, गुरु की सेवा करनेवाले है ।[३]

सन्त - महिमा- गोस्वामी के विचार

सन्त लोग सांसारिक सुख भोगों में मस्त न रहकर ईश्वर-भजन में समय काटनेवाले है । विषयवासनाओं की ओर वे मुड़कर भी नहीं देखते । गोस्वामीजी ने उनके उत्कृष्ट जीवन की ओर प्रकाश डाला है । ' वैराग्य सन्दीपनी ' में सन्तों की महिमा का बखान अधिक मात्रा में मिलता है ।

१- सत्य नाथ पद गहि नृप भाखा । द्विज गुर कोप कहहु को राखा ।
राखै गुर जौं कोप बिधाता । गुर बिरोध नहिं कोउ जग त्राता ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८८

२- गुण ज्ञान गुमान भभेरि बड़ी, कल्पद्रुम काटत मूसर की ।।
कवितावली-पृष्ठ-४४७ , संपादक- श्रीकान्तशरण

३- श्री हरि गुरु पद कमल भजहु मन तजि अभिमान ।
जेहि सेवत पाइय हरि सुख निधान भगवान ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-४२१
राजनाथशर्मा

गोस्वामीजी के मन में उनके प्रति कितनी ममता की भावना है, यह बात अत्यधिक हो गयी है ।

कपास से सन्तों के चरित्र की तुलना कितनी सुन्दर हो उठी है, यहां गोस्वामीजी वास्तविकता के अत्यधिक निकट आये हैं । सन्त स्वयं वेदना का विषपान कर अमृतरूपी सुख दूसरों को पहुंचाने वाले हैं । कपास भी इसी तरह का होता है । दूसरों की सहायता करने के लक्ष्य को सामने रखकर जीवन-यात्रा करनेवाले सन्तों के आदर्श को गोस्वामीजी अत्यधिक महत्व देते हैं, अत्यधिक पसन्द करते हैं[1]। गोस्वामीजी का भी यही आदर्श है, दूसरों को वेदना पहुंचाना उनकी खुशी का विषय नहीं है । दूसरों को सुख पहुंचाते रहना उन्हें पसन्द है ।

सन्तों की संगति में रहना उन्हें बहुत पसन्द है । उनकी संगति में बैठने पर आनन्द की कोमल तरंगें मन में उठने लगती है ।[2] गोस्वामीजी की दृष्टि में सन्त गुणों के मूर्तिमान स्वरूप हैं, सन्तों की वन्दना करना उनकी रुचि का विषय है । [3]

१- साधु चरित सुभ चरित कपासू । निरस बिसद गुनमय फल जासू ।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा । वंदनीय जेहिं जग जस पाव ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११

२- मुद मंगलमय संत समाजू । जो जग जंगम तीरथ राजू ।
राम भगति जहं सुरसरि धारा । सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११

३- मुद मंगलमय संत समाजू । जो जग जंगम तीरथ राजू ।
राम भगति जहं सुरसरि धारा । सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-११
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

सन्तों की विवेकशीलता पर गोस्वामीजी को अत्यधिक गर्व है। उन्होंने सन्तों की जो तुलना नीर-क्षीर विवेचन शक्ति रखनेवाले हंस से की है, वह अत्यधिक सार्थक हो उठी है। दोषों की उपेक्षा कर केवल गुणों को ग्रहण करने की उनकी ताकत सराहनीय है। गोस्वामीजी यही निष्कर्ष निकालते हैं कि विवेक के अभाव में व्यक्ति पाप कर्म करने की ओर उन्मुख होता है, नहीं तो वह पुण्यकर्म में प्रवृत्त होता है।[१]

गोस्वामीजी पोशाक पर तनिक भी महत्व नहीं देते। ~~तो कोई बात~~ नहीं। करतूतों को देखकर व्यक्ति का विवेचन करना है, अच्छा है या बुरा। सत्कर्म करनेवाले होने के कारण सन्त बुरे वेष-वाले होने पर भी ~~सबकी~~ कहीं पूज्य होते हैं। उनका यह उद्घोष कितना सच्चा निकला है।[२]

दूसरों के दुःख देखकर सन्तों के मोम-सा हृदय आर्द्र होने लगता है और उस दुःख से उनकी रक्षा करने तक का परिश्रम करते हैं। उनके इस स्वभाव को गोस्वामीजी अनुकरणीय मानते हैं। दूसरों के दुःख देखकर सन्तुष्ट मत होना, उस दुःख में भाग लेना, उसे दूर करना, यही गोस्वामीजी पसन्द करते हैं।[३]

सन्त तो दूसरों की भलाई केलिए हमेशा काम करते हैं, अपनी भलाई केलिए कभी नहीं। परहित में लगे रहनेवाले वृक्ष, सरिता, पृथ्वी आदि की

१- जड़ चेतन गुन दोष मय विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२१

२- कियेहु कुवेष साधु सनमानू। जिमि जग जामवंत हनुमानू।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२२

३- संत हृदय संतत सुखकारी। विश्व सुखद जिमि इंदु तमारी।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३०
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

की पंक्ति में सन्तों को भी रखकर गोस्वामीजी इस पवित्र आदर्श को ऊंचा उठाते है।[१]

संतों के नवनीत - समान हृदय पर दु:ख देखकर द्रवीभूत होने लगता है। नवनीत अपने ताप से पिघलता है, लेकिन संत दूसरों के दु:ख से। सन्तों की यह पर दुख-कातरता अत्यधिक सराहने योग्य है। हमें भी दूसरों के दु:ख से आद्र होना है, यही कवि की सीख है।[२]

सन्तों की संगति में रहना गोस्वामीजी अत्यधिक प्रिय मानते है। मन,वचन और कर्म से सन्त दूसरों का उपकार करनेवाला होता है, यह उनका जन्म-सिद्ध स्वभाव है।[३]

सभी लोगों के हितचिन्तक है सन्त लोग। दूसरों की बुराई वे कभी नहीं चाहते। गोस्वामीजी भी यही आदर्श रखनेवाले होते है।[४]

१- संत सहहिं दुख परहित लागी। पर दु:ख हेतु असंत अभागी।
भूर्ज तरू सम संत कृपाला। परहित नित सह विपति बिसाला।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२६

(१) संत विटप सरिता गिरि धरनी। परहित हेतु सबन्ह कै करनी।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३०

२- संत हृदय नवनीत समाना। कहा कविन्ह परि कहै न जाना।
निज परिताप द्रवै नवनीता। पर दु:ख द्रवहिं संत सुपुनीता।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४२

३- नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं। संत मिलन सम सुख जग नाहीं।
पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२८

४- संत उदय संतत सुखकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदुतमारी।
परम धरम श्रुति विदित अहिंसा। पर निंदा सम अघ न गिरीसा।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३०

सन्त- समागम के समान दूसरा लाभ कुछ भी नहीं है । लेकिन भगवान की कृपा के बिना वह पाना संभव नहीं ।[1]

गोस्वामीजी यही विचार रखनेवाले हैं कि उच्चकुल के व्यक्ति भी सन्त लोगों की समानता रखने में असमर्थ निकलते हैं । भगवद्भजन में मग्न रहनेवाले हैं सन्त लोग ।[2] ~~कवि सन्तों के प्रति श्रद्धा रखनेवाले हैं~~ ।[2]

सन्त लोगों से मिलना बहुत मुश्किल की बात है । अर्थात् ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम होती है । उन्हें देखने मात्र से सारे दुःख मिट जाते है सन्तों से गोस्वामीजी की मुलाकात अवश्य हुई है ।[3]

गोस्वामीजी संत लोगों को भव-सागर पार करने का नौका जाने ~~नौका याने~~ साधन मानते है । इसी नौका का सहारा पाकर मानव चिन्ता रहित हो जाते हैं ।[4]

१- गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन ।
बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं वेद पुरान ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४३

२- जदपि साधु सबही विधि हीना । तदपि समता के न कुलीना ।
यह दिन रैनि नाम उच्चरै । वह नित मान अगिनि में जरै ।।
वैराग्य सन्दीपनी-श्रीकान्तशरण,पृष्ठ-४४

३- मुख देखत पातक हरै , परसत कर्म बिलाहिं ।
बचन सुनत मन मोह गत, पूरब भाग मिलाहिं ।।
वैराग्य सन्दीपनी-श्रीकान्त शरण,पृष्ठ-२७

४- संसय समन -दमन दुख सुख निधान हरि एक ।
साधु कृपा बिनु मिलहिं न करिय उपाय अनेक ।
भवसागर कहं नाव सुद्ध संतन के चरन ।।
विनयपत्रिका-राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-४१२

सत्संग - महिमा :

सत्संगति भक्ति-भाव के जागरण केलिए अत्यधिक आवश्यक है। सत्संगति की महिमा का गान सभी भक्त कवियों ने किया है। बड़े भाग्यवान ही सज्जनों की संगति में बैठ सकते हैं। उसे आवागमन रूपी बन्धन से हमेशा केलिए मुक्ति मिलती है। भगवान की कृपा पड़ने पर ही सत्संगति की प्राप्ति होती है।

गोस्वामीजी को इस बात का निश्चय है कि सब लोग सज्जनों की महिमा का ज्ञान रखते हैं।[१]

विवेकी बनने केलिए सत्संगति की आवश्यकता है। सज्जनों की संगति में रहने पर कल्याण अवश्य होता है।[२]

नीच लोग भी सज्जनों की संगति पाकर सुधर जाते हैं। नीचों की संगति में अगर सज्जन पड़ जाय, तो भी उनका स्वभाव पहले के समान रहता है। कोई परिवर्तन नहीं होता।[३]

गोस्वामीजी का कहना है कि संत लोग मदिरा को नहीं पीते, यद्यपि वह गंगाजल से बनाई हुई है। लेकिन मदिरा गंगाजल में मिलकर पवित्र हो जाती है। संगति का यही फल है।[४]

१- सुनि आचरज करै जनि कोई। सतसंगति महिमा नहिं गोई।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३

२- बिनु सत्संग विवेक न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।
सत संगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४

३- सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधातु सोहाई।
बिधि बस सुजन कुसंगति परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४

४- सुरसरि जल कृत बारुनि जाना। कबहुं न संत करहिं तेहि पाना।
सुरसिरि मिले सो पावन जैसे। ईस अनी सहि अंतरु तैसे।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५०

गोस्वामीजी का विचार है कि सत्संगति ही हरिकथा का मूल आधार है, अर्थात् जहां सज्जनों की संगति होती है वहां हरिकथा होती है।[१]

सज्जन तो गोस्वामीजी के मत में सभी लोगों से प्रेम का व्यवहार करते हैं, वे किसी से झगड़ा नहीं करते, शान्त जीवन बिताने वाले हैं।[२]

उनकी संगति में रहने का सौभाग्य मिलना बहुत कठिन है।[३]

गोस्वामीजी मानते हैं कि सत्संगति को अत्यधिक प्यार करनेवाले ही राम कथा सुनने के अधिकारी हैं।[४]

सज्जनों की संगति मिलना दुर्लभ है।[५] गोस्वामीजी का कथन है कि दु:खी लोगों में उचित अनुचित को पहचाने की शक्ति नहीं होती। सज्जन तो यह ~~बात समझ~~ जान कर उनसे अच्छा व्यवहार करते हैं।[६]

१- बिनु सत संग न हरिकथा, तेहि बिनु मोह न भाग।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०८

२- बैर न विग्रह आस न त्रासा। सुखमय ताहि सदा सब आसा।
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ विज्ञानी।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८५

३- बड़े भाग पाइअ सत संगा। विनहि प्रयास होइ भव भंगा।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६६

४- राम कथा के तेइ अधिकारी। जिन्ह के मत संगति अति प्यारी।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४६

५- सतसंगति दुर्लभ संसारा। निमिष दंड भरि एको बारा।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३६

६- उतरु देउं छमब अपराधू। दु:खित दोष गुन गनहिं न साधु।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५०

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

सज्जनों की संगति में रहने पर सुख की प्राप्ति होती है। गोस्वामीजी अन्य सुखों को इस सुख के तुल्य मानने केलिए तैयार नहीं। [१]

सत्संगति ही गोस्वामीजी के मत में बड़ाई का मूल है। [२]

कुछ वस्तुओं का मूल्य सत्संगति से बढ़ जाता है। उदाहरण के ज़रिये गोस्वामीजी यह बात व्यक्त करते है :- अगर की संगति से धुआं सुवासित हो उठता है। [३]

आवागमन से मुक्ति प्राप्त करने केलिए सज्जनों की संगति में बैठना है। सज्जनों की संगति से प्रभावित होकर लोगों का मन भी परिवर्तित होने लगता है। गोस्वामीजी सज्जनों की संगति में बैठे है और उनके गुणों से प्रभावित भी है। [४]

सत्संगति में पड़ने पर आदमी अत्यधिक श्रेष्ठ बन जाते हैं। गोस्वामीजी की समझ में इस प्रकार के लोग भी होंगे। सज्जनों के महत्व के कारण ही बुरे लोग भी भले बन जाते हैं। [५]

१- तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिअ तुला एक अंग।
तुल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत संग।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-७६

२- सोइ मरोस मोरे मन आवा। केहि न सुसंग बड़प्पनु पावा।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०

३- धूमौ तजै सहज करुआई। अगर प्रसंग सुगंध बसाई।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३१

४- देहि सतसंग निज अंग श्रीरंग। भवभंग कारन सरन सोकहारी।
येतु भवदंघ्रिपल्लव समाश्रित सदा भक्तिरत विगत संसय मुरारी।।
विनयपत्रिका-राजनाथ शर्मा,पृष्ठ-१७८

५- सांत, निरपेच्छ, निर्मम, निरामय, अगुन सब्दब्रह्म कपर ब्रह्मग्यानी।
दच्छ, समदक विगत अति स्वपरमति परमरति विरति तव चक्रपानी।
विनयपत्रिका-राजनाथशर्मा,पृष्ठ-१७८

खल-निन्दा : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी ने सज्जनों की स्तुति के साथ साथ दुर्जनों की निन्दा भी की है। इससे स्पष्ट है कि गोस्वामीजी दुर्जनों का भी आदर करते है। लोगों में वे भेदभाव नहीं रखते। मर्यादा - पाश से बन्धित व्यक्ति होने के कारण वे सभी प्रकार के लोगों से विनय करने में नहीं हिचकते।

खल तो बिना कारण के, अनुकूल रहनेवालों के भी प्रतिकूल हो जाते हैं। सभी को हानि पहुंचाना उनका लक्ष्य है, वे भलाई करने वालों का भी अपकार कर डालते हैं। दूसरों की अवनति पर वे आनन्दित होते हैं। खलों के ऐसे बुरे स्वभाव पर गोस्वामीजी ईर्ष्या प्रकट करते है। बिना कारण के, दूसरों को वेदना पहुंचाना उन्हें पसन्द नहीं है। उनका मत है कि हमेशा दूसरों की सहायता करता रहना है।[१]

दूसरों का अमंगल करना दुर्जनों को अत्यधिक पसन्द है। वैसे दूसरों के दोषों को वे सहस्रों आंखों से देखते हैं। उनका लक्ष्य ही दूसरों का नाश करना है।[२]

नीच व्यक्ति का आदर करने केलिए गोस्वामीजी तैयार नहीं होते। उसका आदर करने से वह और अधिक उन्मत्त हो जाता है।[३]

१- बहुरि बंदि खल गन सतिभायें। जे बिनु काज दाहिने बायें।
परहित हानि लाभ जिन केरें। उजरें हरष बिषाद बसेरें।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५

२- हरिहर जस राकेस राहु से। पर अकाज भट सहस बाहु से।
जे पर दोष लखहिं सहसाखी। पर हित घृत जिनके मनमाखी।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

३- चूक चपलता मेरियै तू बडो बडाई।
होत आदरे ढीठ है, अति नीच निचाई।
विनयपत्रिका-राजनाथ शर्मा,पृष्ठ-१२८

दूसरों के कामों को बिगाडनेवाले खलों पर गोस्वामीजी सन्तुष्ट नहीं रहते । आले से खलों की जो उपमा की है, वह बहुत ठीक है । खल के स्वभाव की ऐसी तुलना बहुत सुन्दर हुआ है । [1]

सांसारिक विषयवासनाओं के पीछे पडनेवाले दुर्जन कपट की साक्षात् मूर्ति होती है ।गोस्वामीजी ने अपनी रचनाओं में घोषित किया है कि विषयवासनायें दु:ख देनेवाली हैं, उसके जाल में न फंसना है । किसी से मित्रता न जोडने वाले दुर्जन सभी से घृणा का व्यवहार करते हैं, उनके इस व्यवहार से गोस्वामीजी दु:खी रहते हैं । सभी से प्यार का व्यवहार करना है ।

खलों की वाणी बाह्य रूप से मीठी होने पर भी आन्तरिक रूप से उन वचनों में विष भरा हुआ है । आन्तरिक रूप से भी वाणी मीठी रहनी चाहिए ।

खल तो दूसरो का उपद्रव मचानेवाले हैं, दूसरों के धन को चुराने-वाले हैं, नररूप धारी पामर है, उनका कोई महत्व नहीं माना गया है।[2]

अवगुणों के साथी दुर्जन लोभ का साथ कभी नहीं छोड़ते । स्वार्थी होने के कारण उन्हें अपने सुख की सदा चिन्ता रहती है । गोस्वामीजी की

१- काम क्रोध मद लोभ परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ।
बयरु अकारन सब काहू सों । जो कर हित अनहित ताहू सों ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

२- परद्रोही परदार रत परधन पर अपवाद ।
ते नर पावर पापमय देह धरे मनुजाद ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५
टीकाकार- विज्ञानन्द त्रिपाठी

राय है - अपने सुख को प्रधानता न देकर दूसरों के सुख केलिए अतत प्रयत्न करना चाहिए ।[१]

दुर्जन अपनी दुष्टता का संग कभी नहीं छोड़ता । जन्म से मरण तक उनकी दुष्टता बनी रहती है । दुष्टता का साथी रहना किसी को भी अच्छा नहीं ।[२]

गोस्वामीजी इसी विश्वास पर रहते हैं कि दुर्जन सुधारने पर भी सुधरते नहीं । वे अपने सहज स्वभाव का पोषण ही करते रहते हैं । इसीकारण उनको सुधारने का व्यर्थ प्रयत्न कभी नहीं करना है ।[३]

दूसरों की संपत्ति की बढ़ती पर जलनेवाले कई लोग ~~कई~~ हैं । इस प्रकार की जलन गोस्वामीजी पसन्द नहीं करते । उनकी संपत्ति देखकर खुश होना चाहिए । वैसे दूसरों की उन्नति पर गर्व करना अनिवार्य है । ~~कुमति नहीं होना है~~ । दुर्जन निन्दा करने में भी पटु है, पर निन्दा करना तुलसी के मत में अत्यधिक हेयतम है ।[४]

१- लोभइ ओढ़न लोभइ डासन । सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न ।
काहू कै जौ सुनहिं बड़ाई । स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

२- भलो भलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु ।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

३- ग्रह ग्रहीत पुनि बस, तेहि पुनि बीछी मार ।
ताहि पिआइअ बारुनी , कहहु काह उपचार ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५३

४- खलन्ह हृदय अति ताप बिसेषी । जरहिं सदा पर संपति देखी ।
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई । हरषहिं मनहु परी निधि पाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७४

गोस्वामीजी सभी को यही शिक्षा देते है कि खलों की संगति में कभी नहीं बैठना है। बुरे मार्ग की ओर चलनेवाले इन लोगों का पीछा नहीं करना। उनसे दूर रहना चाहिए।[१]

खलों के एक विशेष स्वभाव पर गोस्वामीजी प्रकाश डालते है। उच्च पद मिलने पर उसकेलिए सहायता पहुंचाये हुए लोगों की निन्दा वे करते हैं।[२]

वे दूसरों की उन्नति के बदले अवनति को चाहनेवाले हैं, अमंगल की इच्छा करनेवाले हैं।[३]

गोस्वामीजी के मत में दुष्ट पाप करने में दक्ष हैं, इसमें वे कभी भी पीछे नहीं रहते।[४]

१- कठिन कुसंग कुपंथ कराला। तिन्ह के वचन बाघ हरि ब्याला।
गृह कारज नाना जंजाला। तेइ अति दुर्गम सैल बिसाला।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१००

२- जेहि ते नीच बडाई पावा। सो प्रथमहिं हठि ताहि नसावा।
धूम अनल संभव सुनु भाई। तेहि बुझाव घन पदवी पाई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८४

३- उदासीन अरि मीत हित, सुनत जरहिं खल रीति।
जानु पानि जुग जोरि जन बिनती करइ सप्रीति।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८

४- खल अघ अगुन साधु गुन गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा।
तेहि ते कछु गुन दोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०

टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

झूठ के साथी दुर्जन हमेशा कुटिल कार्यों में लगे रहते हैं । उनके मुंह से मधुर वचन कभी नहीं निकलता ।[१]

गोस्वामीजी मानते है कि उनकी संगति में रहने पर दु:ख ही मोल लेना पड़ता है ।[२]

वे दूसरों की हानि करने में भी पटु हैं, उसके साथ साथ अपना भी नाश करते हैं ।[३]

नारी : गोस्वामीजी के विचार

नारी के संबंध में गोस्वामीजी के विचार उनकी सूक्तियों से स्पष्ट मालूम हो जाता है । उनकी कुछ सूक्तियां पढ़ने पर ऐसा लगता है कि वे नारी के निन्दक हैं । असल में वे नारी की निन्दा करनेवाले नहीं है । कुछ कुछ विशेष परिस्थितियों में उन्हें इस प्रकार कहना पड़ा था । सामाजिक उन्नति के लक्ष्य को सामने रखकर ही वे सभी बातें करते थे । तत्कालीन समाज में नारी, अपनी विलासिता से वे पतन के गर्त में पड़ी थी, उस अवस्था से उन्हें ऊपर उठाने के लिए उन्होंने अपनी लेखनी का सहारा पाया । उनकी नारी-संबंधी सूक्तियों में अपने युग का अच्छा प्रतिबिंब पड़ा है ।

१- झूठइ लेना झूठइ देना । झूठइ भोजन झूठ चबेना ।
बोलहिं मधुर वचन जिमि मोरा । खाहिं महा अहि हृदय कठोरा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

२- सुनहु असंतन केर सुभाऊ । भलेहु संगति करिअ न काऊ ।
तिन्हकर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालै हरहाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७४

३- पर संपदा विनासि नसांहि । जिमि ससि हति हिमि उपल बिलांही ।
दुष्ट उदय जग अनरथ हेतू । जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२६

'मानस' में उन्होंने नारी को जड़ और अज्ञ कहा है। यों कहने केलिए वे क्यों तैयार हो गये ? ऐसा लगता है कि उस ज़माने की सामाजिक व्यवस्था के आधार पर उन्हें यों कहना पड़ा।[१] असल में वे नारी को पूज्य-भाव से देखनेवाले हैं। उन्होंने सीता को जगन्माता माना है।

नारी-हृदय के गूढ़ रहस्यों को जानना मुश्किल है। उसका स्वभाग किसी की पकड़ में न आनेवाला है। बातों को छिपाने की कला में उनको जीतना कठिन कार्य है। वे नारी को निगूढ़ता की राणी मानते हैं।[२]

नारी के स्वभाव के कई पहलुओं पर गोस्वामीजी विचार करने का प्रयत्न करते हैं। उनका मत है कि सुन्दर रूपवाले व्यक्ति पर नारी जल्दी आकृष्ट होती है। चाहे वह उसका भाई हो, पुत्र हो कोई भी हो। इससे हमें समझना पड़ता है कि नारी, सौन्दर्य से जल्दी आकृष्ट होनेवाली है।[३]

नारी को अधम से अधम तक कहा गया है। नारी को अधम मानने का कारण तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था हो सकती है। कुटिल नारी को 'अधम' के अलावा किस नाम से पुकारना चाहिए।[४]

१- कीन्ह कपट मैं संभु सन, नारि सहज जड़ अज्ञ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३३

२- सत्य कहहिं कवि नारि सुभाऊ। सब विधि अगहु अगाध दुराऊ।

निज प्रतिबिंबु बरुक गहि जाई। जानि न जाइ नारि गति भाई।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-७४

३- भ्राता पिता पुत्र उरगारी। पुरुष मनोहर निरखत नारी।

होइ विकल सक मनहिं न रोकी। जिमि रवि मनि द्रव रविहि बिलोकी।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५३६

४- अधम ते अधम अधम अति नारी

तिन्ह मंहु मैं अतिमन्द अघारी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८३

युवती नारी किसी के अधीन में रहनेवाली नहीं। अगर उसकी रक्षा अत्यधिक ध्यान से करें तो भी वह उस फन्दे से बाहर निकल जाती है। अपने अनुभवों के आधार पर गोस्वामीजी शायद इस निष्कर्ष पर पहुंचे होंगे।[१]

ब्रह्मा भी नारी हृदय की गति जानने में असमर्थ है। गोस्वामीजी उसके हृदय को सारे अवगुणों की खान मानते हैं।[२]

विषय-भोग के साधनों में नारी की अत्यधिक प्रधानता मानी गयी है। उनके युग में नारी केवल काम-वासना की तृप्ति का उपकरण मानी जाती थी। इसी कारण उन्हें नारी के संबन्ध में यों कहना पड़ा। विषयासक्ति के जाल में न पड़नेवाला सचमुच उत्तम आदमी है। विषयवासना में मग्न नारी को उससे बाहर निकालना उन्होंने अपना कर्तव्य समझा और इसकेलिए उन्होंने लेखनी चलायी।[३]

गोस्वामीजी काम,क्रोधादि विकारों में नारी को माया मानकर उसे दु:ख प्रदान करनेवाली मानते हैं।[४]

१- राखिअ नारि जदपि उर मांही। जुवती शास्त्र नृपति बस नांही।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८६

२- विधिहुं न नारि हृदय गति जानी।

सकल कपट अघ अवगुन खानी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-२२७

३- एहि के परम बल नारी। तेहि ते उतर सुभट सोइ भारी।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६१

४- काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह के धारि।

तिन्ह मंह अति दारुन दु:खद मायारूपी नारि।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-१२२८

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

नारी के कटाक्ष -विक्षेपों के जाल में बड़े बड़े ज्ञानी और मुनि भी फंस जाते हैं। उस जाल में फंसनेवाले आदमी का पतन सुनिश्चित है। पुरुष उसके जाल में प्रेम के नशे के कारण उन्मत्त होकर सब कुछ खो देते हैं।[१]

गोस्वामीजी का मत है कि नारी के हृदय में हमेशा आठ अवगुण रहते हैं।[२]

नारी को तुलसीदास कर्तव्य-मार्ग की बाधा इसलिए मानते हैं कि उस पर नज़र डालनेवाले आदमी अपने कर्तव्यों को भूलकर उसके पीछे घूमने फिरने लगते हैं।[३]

स्त्री-मनोविज्ञान पर उन्हें ज़रूर कुछ ज्ञान रहा होगा। उनके मत में नारी का स्वभाव डरपोक होता है, उनका मन कच्चा होने के कारण वे नारी नारी को डरपोक स्वभाव वाली मानते हैं।[४]

नारी को संसार में जन्म लेना वृथा ही है, ऐसा गोस्वामीजी का मत है। शादी के बाद नारी अपने घर रह नहीं सकती, उसे पति के घर जाना है। तब उसे दु:ख सहना पड़ता है। शायद इसी कारण गोस्वामीजी

१- ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार।
कैहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न येहि संसार।
श्रीमद बक्र न कीन्ह कैहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नयन सर को अस लाग न जाहि।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२२

२- नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२०६

३- सुत मानहि मातु पिता तब लौं अबलानन दीख नहीं जब लौं।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७४

४- सपन सुनी सठ ता करि बानी। बिहंसा जगत बिदित अभिमानी।
सभय सुभाव नारि कर सांचा। मंगल महु भय मन अति कांचा ।।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१३६

ने ऐसा कहा होगा ।[१]

गोस्वामीजी नारी को पराधीन मानते है, नारी बचपन में अपने पिता की देख रेख में पलती है । तरुणी होने पर उसे पति की चरण-सेवा में जीवन बिताना है । इन्हीं कारणों से कवि नारी को पराधीन मानते है ।[२]

नारी - धर्म

तुलसीदास नारी के कर्तव्यों की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट किया है । पारिवारिक जीवन में नारी की अत्यधिक प्रधानता मानी गयी है । उसे पारिवारिक जीवन में अनेक कठिनाइयों को सामना करना पड़ता है । उसे अपने कर्तव्यों के प्रति हमेशा जागरूक रहना परम आवश्यक है । नहीं तो परिवार में कभी शान्ति नहीं होती । गोस्वामीजी उपर्युक्त विचार रखनेवाले है ।

नारी पति से किस प्रकार का व्यवहार करना है , इसका पूर्ण ज्ञान गोस्वामीजी रखते है ।

गोस्वामीजी पतिव्रता नारी के कर्तव्यों के प्रति हमेशा सावधान है । उनका मत है कि पति को देवता के समान मानना, उनके चरणों की पूजा करना आदि बातों में नारी तनिक भी पीछे न हटकर उसे अपने कर्तव्यों को समझकर

१- उमा मातु मुख निरखि नैन जल मोचहिं ।
नारि जनमु जग जाय सखी कहि सोचहिं ।
पार्वतीमंगल,हनुमान प्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-३६

२- बदति जननि जगदी जुबति जानि सिरजाहिं ।
पार्वतीमंगल,पृष्ठ-३०
अनुवादक- हनुमान प्रसाद पोद्दार

ठीक तरह निभाना है ।१

सास-ससुर की चरण पूजा करना भी पत्नी का धर्म है ।[२] यह उसका और एक प्रमुख कर्तव्य है ।

प्रभूत मात्रा में सब कुछ देनेवाले पति को पत्नी के देवता कहने में क्या अनर्थ हो सकता है ? पिता,माता, और भाई भी पति के समान नहीं देते । गोस्वामीजी की राय में पति की संपत्ति पर पत्नी का पूरा अधिकार है । ~~गोस्वामीजी पत्नी को~~ जो पति की अच्छी सेवा नहीं करती वह क्या पत्नी कहलाने योग्य है । वह अधम है ।[३]

पति किसी भी प्रकार का व्यक्ति हो, पत्नी को उस पर ध्यान न देकर पति- सेवा में मग्न होना चाहिए । किसी भी हालत में पड़ने पर भी पति की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए । चाहे पति रोग से पीड़ित हो, वृद्धावस्था में पड़ा हो, मूर्ख हो तो कोई बात नहीं, दोषों के होते हुए भी पति का आदर हमेशा पत्नी को करना है, यही गोस्वामीजी का मत है । यदि पति का अपमान करे तो पत्नी को नरक वास करना पड़ता है ।[४]

१- करेहु सदा संकर पद पूजा । नारि धरम पति देव न दूजा ।
  वचन कहत भरे लोचन वारी । बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी ।
  मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६७

२- एहि ते अधिकु धरमु नहिं दूजा । सादर सास ससुर पद पूजा ।
  मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६३

३- माता पिता भ्राता हितकारी । मितप्रद सब सुनु राजकुमारी ।
  अमित दानि भर्ता बैदेही । अधम सो नारि जो सेव न तेही ।
  मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८८

४- धीरजु धर्म मित्र अरु नारी । आपद काल परिखि अहि चारी ।
  वृद्ध रोगबस जड़ धन हीना । अंध बधिर क्रोधी अति दीना ।।
  ऐसेहु पति कर किए अपमाना । नारि पाव जमपुर दुःख नाना ।
  एकै धर्म एक ब्रत नेमा । काय वचन मन पति पद प्रेमा ।।
  मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८८

पति को धोखा देने की चिन्ता तक पत्नी को नहीं करनी चाहिए। उसे दूसरे पति के प्रेम में नहीं पड़ना चाहिए। पति के प्रति अनुराग रखने से उसे और कुछ व्रत करने की ज़रूरत नहीं।[१]

गोस्वामीजी मानते है कि पातिव्रत्य धर्म का पालन जो नारी करती है उसे अवश्य परम-गति मिलती है। पति-सेवा ही उसके जीवन का लक्ष्य होना चाहिए।[२]

गोस्वामीजी नारी को स्वाभाविक रूप से अपवित्र मानते हैं, पति-सेवा से वह पवित्र हो जाती है। पतिव्रता नारी को गोस्वामीजी कन्या से अधिक मूल्य देते है।[३]

पतिव्रता नारी तो पति के इच्छानुसार चलनेवाली तथा अपने कर्तव्यों का पालन करनेवाली होनी चाहिए। गोस्वामीजी यही चाहनेवाले है। उसे पति की आज्ञाओं का अक्षरशः पालन करनेवाली होनी चाहिए। पति,सास और ससुर की इच्छा के अनुसार जीवन बितानेवाली नारी पतिव्रता कहलाने योग्य है।[४]

१- पति वंचक पर पति रति करई। रौरव नरक कल्पसत परई।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८६

२- बिनु श्रम नारि परम गति लहई। पतिव्रत धर्म छांडि छल गहई।
   पति प्रतिकूल जनम जहं जाई। विधवा होइ पाइ तरुनाई।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६०

३- सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ।
   जसु गावत श्रुति चारि अजहुं तुलसि का हरिहि प्रिय।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६०

४-सासु ससुर गुर सेवा करहू। पति रूख लखि आयसु अनुसरेहू।
 अति सनेह बस सखी सयानी। नारि धरमु सिखवहिं मृदु बानी।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५५७

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

स्वामी- सेवक - संबन्ध : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी स्वामी और सेवक के बीच के संबन्ध को पवित्र माननेवाले है । वे सेव्य- सेवक भाव की भक्ति करनेवाले है ।

स्वामी की भलाई करना सेवक के जीवन का परम लक्ष्य होना चाहिए । यही गोस्वामीजी का विचार है । अपने कर्तव्यों के प्रति हमेशा उसे बोधवान रहना चाहिए ।[१]

सेवक का काम तो कुछ बिगड़ा हुआ है । स्वामी की इच्छा समझकर उसके अनुसार काम करना क्या छोटी बात है ।[२]

अपने स्वामी को दु:ख पहुंचाने वाला कोई भी काम सेवक को नहीं करना है । पहले उनकी भलाई देखकर उसकेलिए प्रयत्न करना ठीक है । स्वामी को हानि पहुंचानेवाला सेवक गोस्वामीजी की दृष्टि में अधम है ।[३]

१- करइ स्वामि हित सेवकु सोई । दूषन कोटि देइ किन कोई ।
अस बिचारि सुचि सेवकु बोले । जो सपने निज धरमु न डोले ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६५

२- सिर भर जाउं उचित अस मोरा । सब तें सेवकु धरमु कठोरा ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६१

(३)-जों हठ करउंत निपट कुकरमू । हरगिरि ते गुरु सेवक धरमू ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६७

३- जो सेवकु साहिबहि संकोची । निज हित चहइ तासु मति पोची ।
सेवक हित साहिब सेवकाई । करइ सकल सुख लोभ बिहाइ ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८८
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

स्वामी की सेवा जी - जान से करनेवाला सेवक ही सराहनीय व्यक्ति है। गोस्वामीजी की दृष्टि में वही सच्चा सेवक है।

सेवक को सुख का सपना देखना भी मुश्किल है। उसे सुख पाने की आशा करना भी व्यर्थ है।[१]

आपत्ति के समय सेवक की रक्षा का भार प्रभु पर निर्भर है। सेवक की रक्षा अगर प्रभु न करें तो उसका कुछ भी महत्व नहीं रहता है।[२]

गोस्वामीजी ऐसे स्वामी को अधिक चाहते है, जो अपने सेवक पर प्रेम की वर्षा करते हैं। मालिक की प्रीति पाना उसे पसन्द है।[३]

सेवक को स्वामी की आज्ञाओं का अक्षरशः पालन करनेवाला होना चाहिए। स्वामी के दुश्मनों को भगाकर उनकी रक्षा करनी है।[४]

१- सेवक सुख, चह मान भिखारी। व्यसनी धनु सुभ गति बिभिचारी।
लोभी जसु चह चार गुमानी नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५४१

२- तापर मैं रघुवीर दोहाई। जानहुं नहिं कछु भजन उपाई।
सेवक सुत पति मातु भरोसे। रहइ असोच बनै प्रभु पोसें।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-६

३- जौ रघुवीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा।
सुनहु बिभीषन प्रभु कै रीती। करहिं सदा सेवक पर प्रीति।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-८३

४- सेवकु सो जो करै सेवकाई। अरि करनी करि करिअ लराई।
सुनहु राम जेहिं धनु तोरा। सहस बाहु सम सो रिपु मोरा।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४५५
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

सेवक और स्वामी आपस में प्रेम के सूत्र में बन्धित होना चाहिए । स्वामी सेवक के घर में पधारें तो यह उसकेलिए परम सौभाग्य की बात होती है । गोस्वामीजी मानते है कि उस सेवक का मंगल अवश्य होता है ।[1]

गोस्वामीजी का यही विचार है सच्चा सेवक छल,कपट की उपेक्षा करके अपने स्वामी की सेवकाई में मग्न होता है । [2]

भाग्यवाद गोस्वामीजी के विचार

तुलसीदासजी ' भाग्य ' पर भरोसा रखनेवाले है । उनकी रचनाओं में विधि की विपरीतता की बातें मिलती हैं । हम जो कुछ विचार करते हैं उसके अनुसार सभी बातें नहीं होती । विधाता ने जो कुछ निश्चित करके रखा है उसी के अनुसार सब कुछ होता है ।

बडे मुनि भी यही विचार रखनेवाले होते हैं कि विधि में जो बातें लिखी गयी हैं उसी के अनुसार सारी बातें होती हैं । उसमें परिवर्तन नहीं

१- सेवक सदन स्वामि आगमनू । मंगलमूल अमंगल दमनू ।

तदपि उचित जन बोलि सप्रीति । पठइव काज नाथ अस नीती ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१६

२- सहज सनेह स्वामि सेवकाई । स्वारथ छल फल चारि बिहाई ।

अग्या सम सुसाहिब सेवा । सो प्रसादु जन पावै देवा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४३६

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

होता । विधाता अपने निश्चयों पर अटल रहते हैं ।[१]

वे होनहार के भरोसे पर सब कुछ छोड़ देते है ।[२]

गोस्वामीजी यही मानते है कि कर्म के अनुसार सुख या दु:ख हमें भोगना पड़ता है ।, वैसे हानि या लाभ भी होता है ।[३]

१-कह मुनीस हिमवंत सुनु जो विधि लिखा लिलार ।
देव दनुज नर नाग मुनि, कोउ न मेट निहार ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४८

(अ)अस विचारि सोचहि मति माता । सो न टरै रचै विधाता ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८८

(आ)मिटि जाइ नहिं राम रजाई । कठिन करम गति कछु न बसाई ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४७

(इ) जनि मनहु हानि गलानी । काल करम गति अघटित जानी ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२१

२- तुलसी जसि भवितव्यता तैसइ मिलै सहाइ ।
आपुन आवइ ताहि पहिं ताहि तहां लै जाइ ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२७६

(ई) भूपति भावी मिटै नहि, जदपि न दूषन तोर ।
किए अन्यथा होइ नहि विप्र साप अति घोर ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३००

३- कौसल्या कह दोसु न काहू । करम विवस दुख सुख छति लाहू ।
कठिन करम गति जान विधाता । जो सुभ असुभ सकल फल दाता ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४१०

टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

भाग्य का चक्र चलते रहने पर सारी बातें ठीक प्रकार चलती है। लेकिन भाग्य पलट जाय तो सारे काम बिगड़ जाते है।[१]

कर्म की भलाई, बुराई के अनुसार जीव को सुख या दु:ख भोगना पड़ता है।[२]

विधाता अगर वक्र पड़ जाय तो सारी बातें बिगड़ जाती है।[३]

भगवान जो कुछ मन में सोचते है उसी के अनुसार सारी बातें चलती है। भवितव्यता बलवती है।[४]

गोस्वामीजी के अनुसार विधाता के हाथ में हानि,लाभ,जन्म-मरण यश - अपयश, आदि सब कुछ रहता है।[५]

१- रघुपति सर सिर करहु न भरई। विधि विपरीत चरित सब करई।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३७२

२- जीव करम बस सुख दुख भागी। जाइअ बध दैव हित लागी।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२०

(अ) करि कुरूप विधि परबस कीन्हा। बवा सो लुनिअ लहिअ जो दीन्हा।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२७

३- भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ विधाता वाम। धूरि मेरुसम जनक सम, ताहि ब्याल सम दाम।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०९

४- हरिइच्छा भावी बलवाना। हृदय बिचारत संभु सुजाना।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३१

५- हानि लाभु जीवन मरनु जसु अपजसु विधि हाथ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४०

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

ब्रह्मा की इच्छा के अनुसार जो जो बातें होती हैं उन सभी का परिणाम हमें भोगना पडता है । उससे बचना असंभव है ।[१]

विधाता के लिखे अंकों को कोई नहीं मिटा सकता ।[२] ~~गोस्वामीजी भाग्यवाद पर विश्वास रखनेवाले हैं~~ ।

कवि विधाता को टेढ़ा स्वभाववाला मानते हैं ।[३] भाग्य के आगे हम निस्सहाय होकर पडे रहते हैं ।[४]

स्पष्ट है, गोस्वामीजी भाग्यवादी हैं ।

<u>समन्वयवादी गोस्वामीजी</u>

गोस्वामीजी समन्वय - भावना रखनेवाले व्यक्ति हैं । ' मानस ' से यह तत्व अत्यधिक स्पष्ट निकलता है । उनके युग में शैव, वैष्णव, शाक्त आदि विभिन्न धार्मिक विचार रखनेवाले लोग थे । शिव को पूज्य माननेवाले शैव लोग विष्णु का आदर नहीं करते थे , वैसे उल्टे भी । इस सामाजिक असमानता को मिटाने केलिए गोस्वामीजी ने प्रयत्न किया ।

१- तुलसी सहावे बिधि सोई सहियतु है ।

कवितावली-व्याख्याकार-श्रीकान्तशरण, पृष्ठ-४४

२- मेटि को सकइ सो आंकु जो बिधि लिखि राखेउ ।।

पार्वतीमंगल-हनुमानप्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-२०

३- ऐसेहु थल बामता , बड़ि बाम बिधि की बानि ।।

गीतावली, पृष्ठ-४३६

प्रकाशक- हनुमान प्रसाद पोद्दार

४- तो सुनियो देखियो बहुत अब कहा करम सों चारो ।

कृष्णगीतावली, पृष्ठ-८१

श्रीकान्त शरण

गोस्वामीजी शिव और विष्णु में कोई भेद नहीं मानते थे। उन्होंने सभी धार्मिक संप्रदायों में समन्वय की स्थापना की। उनकी इस समन्वय - भावना विरले ही कवियों में देखी जा सकती है।

रामभक्त गोस्वामीजी शिवजी का स्मरण मनोरथों की पूर्ति केलिए आवश्यक मानते है। शिवजी के प्रति उनके मन में बड़ी पूज्य भावना है।[१]

शिवजी की भक्ति में लीन न होनेवाले व्यक्ति को सारे सुखों से वंचित ~~और दुःखी~~ होकर जीवन व्यतीत करना पड़ता है। गोस्वामीजी दोनों की भक्ति में तल्लीन होना चाहते है।[२]

राम और शिव से विमुख रहना गोस्वामीजी पसन्द नहीं करते। उनसे विमुख होकर रहनेवाले का पंथ अमंगल ही होता है।[३]

गोस्वामीजी भगवान के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों में भरोसा रखनेवाले है। वे उन दोनों में कुछ भी अन्तर नहीं मानते।[४] इन दोनों में उन्होंने समन्वय की स्थापना की है।

१- बरदायक प्रनतारति भंजन। कृपासिंधु सेवक मन रंजन।
इच्छित फल बिनु सिव अवराधे। लहिअ न कोटि जोग जप साधे।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५१

२- न यावद् उमानाथ पादारविन्दं। भजन्तीह लोके परे वा नराणां।
न तावत्सुखं शांति संताप नाशं। प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवास ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८६

३- हरिहर विमुख धर्मरत नाहीं। ते नर तहं सपनेहु नहिं जाहीं।
तेहि गिरि पर वट विसाला। नित नूतन सुन्दर सब काला।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०३

४- सगुनहिं अगुनहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२१०

वे इसी प्रकार ज्ञान और भक्ति में भी कोई भेद न माननेवाले है। दोनों दु:ख का नाश करते है।[1]

विनयपत्रिका के कितने स्थानों पर महादेवादिदेव शंकर की वन्दना की गयी है।

शिवजी की कृपा प्राप्त किए बिना रामचन्द्रजी का भक्त बनना असंभव है। गोस्वामीजी के विचार में शिवजी से विरोध रखनेवाला रामभक्त और रामजी से विरोध रखनेवाला शिवभक्त पूज्य नहीं है।[2]

शिव के प्रति अगर भक्ति न रखें तो उसकी मनोकामनायें असफल ही रह जाती हैं। रामोपासक होने पर भी गोस्वामीजी शिवभक्त भी है।[3]

शिव से विमुख होकर रखनेवाला व्यक्ति सचमुच अमंगल का साथी होता है। उन्हें सपने में भी मुक्ति नहीं मिल सकती। शिव -भक्त बनने का उपदेश गोस्वामीजी देते है।[4]

१- भगतिहि ग्यानहिं नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२१०

२- बिनु तव कृपा रामपद पंकज सपनेहुं भगति न होई।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२१०

३- ता बिन आस को दास भयो,

कबहुं न मिट्यो लघु लालच जी को ।।

कवितावली-पृष्ठ-५३४

श्रीकान्त शरण

४- ईस उदार उमापति परिहरि, अनत जे जाचन जाहीं।

तुलसीदास ते मूढ़ मांगने कबहुं न पेट अघाहीं ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-६५

संपादक -राजनाथ शर्मा

शंकर और विष्णु की उपासना न कर उनसे विमुख होकर जो जीवन बिताते हैं। उनकी हालत अत्यधिक बिगड़ जाती है। उन्हें सद्गति मिलना कठिन है।[१]

मित्र : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी ने मित्रता के संबन्ध में जो कुछ कहा है वह अत्यधिक सराहने योग्य है। ऐसा लगता है मानों उनके जीवन में मित्रता निभानेवाला कोई आत्ममित्र रहा हो।

गोस्वामीजी की राय में वही सच्चा मित्र है जो मित्र के दु:ख से दु:खी होता है। अपने दुस्सह दु:ख को गौण समझकर मित्र के छोटे दु:ख को कठिन समझना है। उसे ठीक ठीक रास्ते पर चलाना मित्र का कर्तव्य है। मित्र के अवगुणों को प्रधानता न देकर गुणों पर दृष्टिपात करना है। आपस में सहायता करने में विमुख नहीं होना है। उनमें लेन-देन भी ~~चलती रहनी~~ चाहिए। केवल वाणी की मधुरता को मूल्य न देना है, उसके साथ साथ आन्तरिक मधुरता भी होनी चाहिए। मन में कुटिलता रखकर मित्र से सुन्दर बोली बोलना श्रेयस्कर नहीं।

गोस्वामीजी ने 'हितोपदेश' की इन पंक्तियों को अपनाया है।

स्वारथ मीत सकल जग माहीं। सपनेहु प्रभु परमारथ नाहीं।।[२]

१- तुलसी परिहरि हरि हरहि पांवर पूजहिं भूत।
अंत फजीहत होहिंगे गनिका के से पूत।।
दोहावली-पृष्ठ-३२
संपादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस, गोरखपुर

२- तुलसी हितोपदेश, पृष्ठ-६४
हिन्दी नीतिकाव्य से उद्धृत, डा० भोलानाथ तिवारी, पृष्ठ-१८०

यथार्थ मित्र संसार में नहीं है। सच्चाई यह है कि बिना स्वार्थ के मैत्री का विकसित होना बिल्कुल असंभव है।

गोस्वामीजी का विचार है कि सुख और दु:ख की अवस्था में सच्ची मित्रता जोड़नेवाला आदमी हमेशा अपने दोस्त की सहायता करता रहता है। किसी प्रकार का वैर-भाव उनमें नहीं होता है।[1]

आपस में सहायता करने का विचार मित्रों में होना चाहिए। मित्र को सुखी बनाने केलिए सच्चा मित्र परिश्रम में लग जाता है।[2]

बुरे लोगों से मित्रता जोड़ना गोस्वामीजी पसन्द नहीं करते। ऐसे प्रसंग पर केवल वाणी की मधुरता पर मित्रता का अस्तित्व होता है, ~~पर आधारित होता है~~। मित्र के संबन्ध में मन में बुरा विचार नहीं रखना है, हमेशा उनकी भलाई की बात सोचनी है।[3]

शठ सेवक का परित्याग करना है। वैसे कपटी मित्र का संग भी छोड़ना है। वह दूसरों को दु:ख देनेवाला होता है।[4]

१- लेतदेत मन संक न धरई। बल अनुमान सदा हित करई।
   बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा।
   मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१८

२- जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी।
   निज दु:ख गिरि सम रज करि जाना। मित्र का दुख रज मेरु समाना।।
   मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१७

३- आगे कह मृदु बचन बनाई। पाछे अनहित मन कुटिलाई।
   जाकर चित अहि गति सम भाई। अस कुमित्र परिहरेहिं भलाई।।
   मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१८

४- सेवक सठ नृप कृपिन कुनारी। कपटी मित्र सूल समचारी।
   सखा सोच त्यागहु बल मोरे। सब बिधि घटब काज मैं तोरे।।
   मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१८
   टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी का यही विचार है कि बुरे लोगों को मित्र बनाना अच्छा नहीं । उससे कितना अच्छा होता है मित्र का न होना । किरात लोगों को मित्र बनाना वे नहीं चाहते ।[१]

' विनयपत्रिका ' में गोस्वामीजी ने स्पष्टत: कहा है कि मित्र दगाबाज़ होते हैं । वास्तविक प्रेम करनेवाले व्यक्ति संसार ही में बहुत कम दीख पड़ते हैं । सभी अपनी भलाई चाहनेवाले हैं । वे आपत्ति के समय किसी की सहायता करने केलिए तैयार नहीं होते । उपर्युक्त विचार रखनेवाले हैं गोस्वामीजी । शायद गोस्वामीजी को अपने जीवन में अपने मित्रों से इस प्रकार का व्यवहार मिला होगा ।[२]

तपस्या की महिमा :

गोस्वामीजी ' तपस्या ' पर विशेष महत्व रखनेवाले हैं, विशेषकर ' मानस ' में उन्होंने तपस्या से संबन्धित कुछ बातें कही हैं ।

यद्यपि तपस्या करना अत्यधिक दुष्कर कार्य है तो भी उससे हमारी इच्छा की पूर्ति हो जाती है ।[३]

१- तुम्ह प्रिय पाहुने बन पगु धारे । सेवा जोगु न भाग हमारे ।
देब काह हम तुमहिं गोसाईं । ईंधनु पात किरात मिताईं ।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६३

२- नये नये नेह अनुभये देह गेह बसि । परखे प्रपंची प्रेम परत उघरि सो ।
सुहृद समाज दगाबाजि ही को सौदा सूत । जब जाको काज तब मिलै पांय परि सो ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-४९४ ४२४

३- मातु पितहिं पुनि यह मत भावा । तपु सुखप्रद दुख दोष नसावा ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

ब्राह्मणों का स्वभाव किस प्रकार का होना चाहिए, इसके संबन्ध में गोस्वामीजी कहते हैं । ब्राह्मण को सभी लोगों पर कृपादृष्टि फेंकनी चाहिए, दूसरों की करुण-कथा सुनकर उनका हृदय पिघलना चाहिए ।[१]

ब्राह्मणों के कोप से बचना मुश्किल होने के कारण उनको कुपित करनेवाला कोई भी कार्य नहीं करना है । गोस्वामीजी उनसे अच्छा व्यवहार करने का उपदेश देते हैं ।[२]

गोस्वामीजी यही चाहते हैं कि ब्राह्मण को कभी हानि न पहुंचाना । उनको हानि पहुंचाने का विचार भी मन में नहीं करना चाहिए । इससे घोर अनर्थ पैदा हो जाता है ।[३]

अपने धर्मों का ठीक ठीक आचरण करनेवाला ब्राह्मण गोस्वामीजी की दृष्टि में पूजनीय है, नहीं तो वह अधर्मी कहा जाएगा ।[४]

ब्राह्मणों के प्रति श्रद्धा रखनेवाले का जीवन सफल हो जाता है । गोस्वामीजी उसके जीवन को धन्य समझते हैं ।[५]

१- जो तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं । पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं ।
छमहु चूक अनजानत केरी । चहिअ विप्र उर कृपा घनेरी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४७०

२- सत्य नाथ पद गहि नृप भाखा । द्विज गुर कोप कहहु को राखा ।
राखै गुर जो कोप विधाता । गुर विरोध नहिं कोउ जग त्राता ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८८

३- देखि इंदु चकोर समुदाइ । चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाईं ।
मसक दंस बीते हिम त्रासा । जिमि द्विज द्रोह किये कुल नासा ।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-४३

४- धन्य सो भूप नीति जो करई । धन्य सो द्विज धरम न टरई ।
५- धन्य घरी सोइ जब सत संगा । धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५

असत्य के समान दूसरा कठिन पाप कर्म नहीं। झूठ बोलना क्या व्यक्ति केलिए श्रेष्ठकर है ? कभी नहीं। गोस्वामीजी सत्य को ही सारे पुण्य कर्मों का मूल मानते हैं।[१]

सत्य का पालन करनेवाले व्यक्ति केलिए सारे सांसारिक रिश्ते छोटी बात सी लगता है। सत्य के अनुष्ठान की बात पर वह अत्यधिक ज़ोर देता है। सत्य केलिए जो कुछ छोड़ देना पड़े, वह सहर्ष छोड देता है। गोस्वामीजी के जीवन का भी यही आदर्श रहा होगा, ऐसा अनुमान करना पडता है।[२]

ब्राह्मण : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी चार वर्णों में ब्राह्मणों को अधिक श्रेष्ठ मानते हैं, उनको पूज्य-भाव की दृष्टि से देखते हैं। 'मानस' में कुछ कुछ स्थलों पर ब्राह्मणों की कीर्ति गायी गयी है। इससे स्पष्ट है, गोस्वामीजी ब्राह्मणों के प्रति श्रद्धा रखनेवाले हैं।

ब्राह्मण का शाप कठोर होने के कारण वे सभी लोगों से सावधान रहने का और अच्छा व्यवहार करने का उपदेश देते हैं।[३] उसके शाप का असर जल्दी पडता है।

१- नहिं असत्य सम पातक पुंजा। गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा।
सत्य मूल सब सुकृत सुहाए। बेद पुरान बिदित मनु गाए॥
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४६

२- छाडहु बचनु कि धीरजु धरहू।जनि अबला जिमि करुना करहू।
तनु तिय तनय धामु धनु धरनी। सत्यसंध कहं तृन सम बरनी।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-५८

३- जौं न चलब हम कहे तुम्हारें। होउ नास नहिं सोच हमारें।
एकहि डर डरपत मन मेरा। प्रभु महिदेव श्राप अति घोरा॥
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८६

सृष्टि ,स्थिति और संहार का निर्वाह करने केलिए ब्रह्मा, विष्णु और शिव को तपस्या का सहारा लेना पडता है ।[१]

गोस्वामीजी का विचार है कि तपस्या से सिद्धि प्राप्त कर सकते है ।[२]

तपस्या तो निष्काम होनी चाहिए । तब तपस्या करने में किसी प्रकार के क्लेश का अनुभव नहीं होता, तपस्या में पवित्रता भी आ जाती है ।[३]

राजनीति : गोस्वामीजी के विचार
-------- ----------------

गोस्वामीजी ने राजनैतिक बातों के संबन्ध में खूब विचार किया है । राजा को किस प्रकार का व्यक्ति है, उनका क्या क्या कर्तव्य है, प्रजा के प्रति उनका व्यवहार कैसा होना चाहिए, राजा के प्रति प्रजा का क्या कर्तव्य है आदि बातों पर गोस्वामीजी ने ठीक ठीक कहा है ।`मानस` में उनके राजनैतिक विचार भली-भांति व्यक्त हुए हैं ।

१- तप अधार सब सृष्टि भवानी । करहि जाइ तपु अस जिय जानी ।
सुनत बचन बिसमित महतारी । सपन सुनायउ गिरिहि हंकारी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४

(ब)तपबल रचै प्रपंचु बिधाता । तपबल बिष्नु सकल जग त्राता ।
तपबल संभु करहिं संघारा । तपबल सेषु धरै महि भारा ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४

२- जनि अचरजु करहु मन माहीं । तप तें अगम न कछु नाहीं ।
तपबल तें जग सृजै बिधाता । तपबल बिष्नु भए परित्राता ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८४

३- बिनु कामना कलेस कलेस न बूझइ ।।
पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१६
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

गोस्वामीजी राजा का सबसे प्रमुख कर्त्तव्य प्रजा की देखमाल मानते है । अगर राजा प्रजा की सुख-शान्ति की खोज नहीं करते , तो उन्हें घोर दुष्परिणाम भोगना पड़ेगा । कवि राजा की उद्यमता पर बल देते है ।[१]

तुलसीदास जी कुटिल राजा की चाह नहीं करते , गुणों से विभूषित राजा ही प्रजा की श्रद्धा का पात्र बन जाता है ।[२]

राजा के पद की प्राप्ति होने पर व्यक्ति उन्मद होकर विलासी हो जाता है । गोस्वामीजी का यह विचार अत्यधिक सही निकला है ।[३]

अच्छे राजा की अधीनता में पलनेवाली प्रजा को दुःख कभी झेलना नहीं पड़ता । अच्छे राजा अपनी प्रजा की रक्षा करने केलिए सदा जागरूक रहते हैं ।[३]

गोस्वामीजी राजा को धार्मिक व्यक्ति होना अच्छा मानते है । राज-पद पाने केलिए नैतिक मार्ग को स्वीकार करना है, वही अच्छा है ।[५]

१- जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृपु अवसि नरक अधिकारी ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२०६

२- कहाँ सांचु सब सुनि पतियाहू । चहिअ धरमसील नरनाहू ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५३

३- भरतहिं दोसु देइ को जाएं । जग बौराइ राजपद पाएं ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३३०

४- राम वास बन संपति भ्राजा । सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३४२

५- राजनीति बिनु धन बिनु धर्मा । हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-५५३

टीकाकार-विश्वानन्द त्रिपाठी

प्रजा को अपने राजा के हित के अनुसार काम करने केलिए सदा तैयार रहना है। गोस्वामीजी ऐसी प्रजा को अधिक पसन्द करते है। राजा और प्रजा दोनों एकता से काम करने पर ही सुव्यवस्थित शासन से राज्य ठीक तरह चलाया जा सकता है।[१]

समदर्शी राजा की प्राप्ति से प्रजा अत्यधिक सन्तुष्ट हो जाती है। गोस्वामीजी ने राजा को मुख के समान बताया है। राजा को मुंह इसलिए कहा गया है कि मुंह से खाये जानेवाले पदार्थ से शरीर के सारे अंग पाले पोसे जाते हैं, वैसे राजा भी प्रजा का पालन करते है।[२]

गोस्वामीजी दृढ़ विश्वास रखते है कि कुशल राजा के हाथों राज-शासन ठीक तरह चलता है। तभी प्रजा सारी व्यथाओं से मुक्त होकर सुखी रह सकती है।[३]

राजा को वचन का पालन करनेवाला व्यक्ति होना चाहिए, नहीं तो उनका कोई मूल्य नहीं रहता। राजा को शोभित करनेवाला आभूषण वचन का पालन ही है।[४]

१- राम कृपाल निषाद नेवाज़ा। परिजन प्रजउ चहिअ जस राजा।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६२

२- मुखिआ मुखु सो चाहिए, खान पान कहुं एक।
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४५६

३- पंक न रेनु सोह अस धरनी। नीति निपुन नृप कै जसि करनी।
मानस-किष्किन्धाकांड,पृष्ठ-४२

४- एक कहहिं भल भूप देहु जनि भूषन।
नृप न सोह बिनु बचन नाक बिनु भूषन।।
जानकीमंगल,पृष्ठ-२१। व्याख्याकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

गोस्वामीजी राजा को, जो सेवा के अनुकूल फल देता है, कुएं के समान मानते है । रस्सी के बिना पथिक कैसे पानी खींचकर प्यास बुझा सकता ? तब रास्ते में कुंआ होने पर कोई फायदा नहीं ।[1]

परहित का महत्व : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी ने ' मानस ' में परहित के महत्व के संबन्ध में अपना विचार व्यक्त किया है । उन्होंने अपने विचारों को सूक्तियों के रूप में व्यक्त करने का प्रयत्न किया है । दूसरों के हित करने की बात पर उन्होंने अत्यधिक महत्व दिया है ।

गोस्वामीजी ऐसे लोगों की प्रशंसा की है जिन्होंने अपने अमूल्य जीवन को दूसरों की भलाई केलिए छोड़कर रखा है । इस प्रकार अपने शरीर तक का त्याग करनेवाले लोगों का जीवन कितना धन्य है ? स्पष्ट है, गोस्वामीजी परोपकार केलिए कुछ करने में झिझकने वाले व्यक्ति नहीं है, यहां उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश पड़ता है ।[2]

यह बात ठीक है कि परहित करनेवाले लोगों की संख्या बहुत कम है । उनका जीवन - व्रत है परहित करना । ऐसे लोगों की मुक्तकंठ से प्रशंसा कवि ने की है ।[3]

१- सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों ।
   बिहूने गुन पथिक पियासे जात पथ के ।।
      कवितावली, पृष्ठ-२६६

२- परहित लागि तजै जो देही संतत संत प्रसंसहि तेही ।
      मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६६

३- परहित बस जिन्ह के मन मांही ।
   तिन्ह कहुं जग दुर्लभ कछु नांहीं ।।
      मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ- ५७६

परहित को अपना लक्ष्य माननेवाले संत लोगोंकी खूब सराहना उन्होंने की है। परहित करने केलिए उनका जन्म हुआ है।[१]

गोस्वामीजी परहित को संसार का सबसे पवित्र धर्म और पर पीडा को सबसे महान अधर्म मानते है। पूरे 'मानस' में गोस्वामीजी की यह सूक्ति बहुत श्रेष्ठता रखती है। पूरे जन-समाज में उनकायह विचार फैल गया है। गोस्वामीजी जीवन की अधिकांश समय सारी जनता की भलाई केलिए कविता की रचना करते रहे। उन्होंने परहित केलिए बहुत समय सर्व किया।[२]

सत्य- महिमा : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी ने 'मानस' में सत्य के महत्व का बखान किया है। वे सत्य के पुजारी हैं, झूठ पर अधिष्ठित जीवन बिताना वे नहीं चाहते। सत्य के राज-पथ पर अपनी जीवन-नौका आगे ले चलने का उनका विचार अत्यधिक सराहनीय है। सत्य से अणु-मात्र भी विचलित होकर जीना उनके मत में मरण-तुल्य है।

वे परहित के समान सत्य को भी पवित्र धर्म मानते है। गोस्वामीजी जीवन में सत्य का अनुसरण करना चाहते हैं, सत्य से रती भर विचलित होना उन्हे पसन्द नहीं।[३]

१- बिसरे गृह सपनेहुं सुधि नांहीं। जिमि पर द्रोह संत मन नांही ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३८

२- परहित सरिस धरम नहिं भाई। परपीडा सम नहिं अधमाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७

३- धरमु न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना।
में सोइ धरमु सुलभ करि पावा। तजें तिहुं पुर अपजसु छावा ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४२

ब्राह्मणों के प्रति गोस्वामीजी की आस्था यहां स्पष्ट झलक पड़ती है। कवि का कहना है, गुणों से हीन अर्थात् गुणहीन होते हुए भी ब्राह्मण पूज्य हैं। लेकिन शूद्र इस प्रकार नहीं पूजे जाते।[१]

चातुर्वर्ण्य के प्रति श्रद्धा रखनेवाले गोस्वामीजी ब्राह्मण की सेवा करना पुण्य कार्य मानते हैं। कपटता छोड देनी चाहिए।[२] तुलसीदास द्विज-सेवा को संसार का सबसे बड़ा पुण्य कार्य मानते हैं।

सपने में भी ब्राह्मण के अपकार करने की बात नहीं सोचनी चाहिए। गोस्वामीजी किसी भी तरह ब्राह्मण को कष्ट पहुंचाना नहीं चाहते। कवि के निर्मल हृदय की झांकी यहां मिलती है।[३]

गोस्वामीजी ब्राह्मणों की निन्दा करना पसन्द नहीं करते हैं, उनकी निन्दा करने पर कठोर दण्ड हमें भोगना पड़ता है।[४]

१- सापत ताड़त परुष कहंता। विप्र पूज्य अस गावहिं संता।
पूजिय विप्र सील गुन हीना। सूद्र न गुन गन ग्यान प्रवीना।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५८२

२- पुन्य एक जगमहु नहिं दूजा। मन क्रम वचन विप्रपद पूजा।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा। जो तजि कपटु करै द्विज सेवा।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८४

३- बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हें कर्म की होहि स्वरूपहिं चीन्हें।
काहू सुमति कि खल संग जामी। सुभगति पाव कि परत्रियगामी।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६६

४- हरिगुर निंदक दादुर होई। जन्म सहस्र पाव तनु सोई।
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमै वायस सरीर धरि।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३०
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

ब्राह्मणों का स्वभाव किस प्रकार का होना चाहिए, इसके संबन्ध में गोस्वामीजी कहते हैं। ब्राह्मण को सभी लोगों पर कृपादृष्टि फेंकनी चाहिए, दूसरों की करुण-कथा सुनकर उनका हृदय पिघलना चाहिए।[1]

ब्राह्मणों के कोप से बचना मुश्किल होने के कारण उनको कुपित करनेवाला कोई भी कार्य नहीं करना है। गोस्वामीजी उनसे अच्छा व्यवहार करने का उपदेश देते हैं।[2]

गोस्वामीजी यही चाहते हैं कि ब्राह्मण को कभी हानि न पहुंचाना। उनको हानि पहुंचाने का विचार भी मन में नहीं करना चाहिए। इससे घोर अनर्थ पैदा हो जाता है।[3]

अपने धर्मों का ठीक ठीक आचरण करनेवाला ब्राह्मण गोस्वामीजी की दृष्टि में पूजनीय है, नहीं तो वह अधर्मी कहा जाएगा।[4]

ब्राह्मणों के प्रति श्रद्धा रखनेवाले का जीवन सफल हो जाता है। गोस्वामीजी उसके जीवन को धन्य समझते हैं।[5]

१- जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाईं। पद रज सिर सिसु धरत गोसाईं।
छमहु चूक अनजानत केरी। चहिअ बिप्र उर कृपा घनेरी ॥
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४७०

२- सत्य नाथ पद गहि नृप भाषा। द्विज गुर कोप कहहु को राखा।
राखै गुर जौं कोप बिधाता। गुर बिरोध नहिं कोउ जग त्राता।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८८

३- देखि इंदु चकोर समुदाई। चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई।
मसक दंस बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किये कुल नासा ॥
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-४३

४- धन्य सो भूप नीति जो करई। धन्य सो द्विज धरम न टरई।

५- धन्य घरी सोइ जब सत संगा। धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा ॥
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५

मोह से उत्पन्न सन्देहों को दूर करने की सामर्थ्य ब्राह्मण में रहता है। सारे गुणों से अलंकृत विप्र के चरणों की वन्दना करने में भी गोस्वामीजी नहीं झिझकते।[१]

इन सूक्तियों से गोस्वामीजी के हृदय में ब्राह्मणों के प्रति जो श्रद्धा और भक्ति का भाव रहता है, वह स्पष्टतः मालूम पड़ता है।

गोस्वामीजी ब्राह्मणों के आशीर्वाद पर अत्यधिक महत्व देते हैं। उनका आशीर्वाद कल्पवृक्ष जैसा है। अर्थात् उनका आशीर्वाद पाने पर सारे मनोरथों की पूर्ति अवश्य हो जाती है।[२]

विषयवासना : गोस्वामीजी के विचार

गोस्वामीजी विषयवासनाओं को अत्यधिक हेय मानते हैं। काम,क्रोधादि विकारों से ग्रस्त होने पर मनुष्य के जीवन का महत्व ही नष्ट हो जाता है।

कामवासना को त्यागने पर ही मनुष्य वास्तविक सुख का अनुभव करने लगता है। राम - भजन में समय बिताना चाहिए।[३]

१- बंदौ प्रथम महीसुर चरना। मोह जनित संसय सब हरना।
सुजन समाज सकल गुनखानी। करौं प्रनाम सप्रेम सुबानी।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१०

२- गुण ज्ञान गुमान भमेरि बड़ी। कल्पद्रुम काटत मूसर की।
कलि काल बिचार अचार हरो। नहिं सूझै कछू धमधूसर की।।
कवितावली,पृष्ठ-४४७

३- तब लगि कुसल न जीव कहुं सपनेहु मन बिश्राम।
जब लगि भजन न राम कहुं सोक धाम तजि काम।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१५३

कामी व्यक्ति निर्भय नहीं रह सकता । वह सब लोगों से डरता रहता है ।[१]

मनुष्य शरीर की उपलब्धि होने पर जो विषयासक्ति में मन लगा देते हैं वे शठ हैं ।[२]

गोस्वामीजी मानते हैं कि विराग के अभाव में मोह पैदा होता है ।[३]

विषयवासनाओं के जाल में पड़ने पर व्यक्ति की अवनति अवश्य होती है । उसके घेरे से बचना मुश्किल है, यही गोस्वामीजी का मत है ।[४]

काम,क्रोध, लोभ,मोहादि विकारों में नारी का प्रमुख स्थान है । मायारूपी नारी का सहारा मिलने पर उपर्युक्त विकार अत्यधिक प्रबल हो उठते हैं ।[५]

१- जे कामी लोलुप जग माहीं । कुटिल काक इव सबहिं डेराहीं ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३४

२- एहि तन कर फल विषय न भाई । स्वर्गौ स्वल्प अंत दुखदाई ।
नरतनु पाइ विषय मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८२

३- सुनु मुनि मोह होइ मन ताकें । ग्यान बिराग हृदय नहिं जाकें ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३८

४- मोह न अंध कीन्ह केहि केही । को जग काम न चाव न जेही ।
तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा । केहि कर हृदय क्रोध नहि दाहा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२२

५- काम,क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि ।
तिन्ह मंह अति दारुन दु:खद मायारूपी नारि ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६६

विषयी को कभी विषयवासना की तृप्ति नहीं होती। गोस्वामीजी आगे भी कहते है - ज्यों ज्यों विषय का उपभोग करता रहता है त्यों त्यों उसे भोगने की लालसा बढ़ती रहती है। [1]

नारी के कटाक्ष -विक्षेपों की मार अत्यधिक कठिन है, उसके नयन शरों से सभी आहत हो जाते हैं। अर्थात् सभी उसके प्रेम के जाल में पड जाते हैं। बडे बडे मुनि, तापस आदि भी नारी के जाल में पड जाते हैं। ~~बडे बड़े मनि, तापस आदि भी नारी के आगे नतमस्तक हो गये हैं।~~ गोस्वामीजी इसे नाश का कारण मानकर उससे दूर रहने का उपदेश देते है। [2]

काम क्रोधादि विषयवासनाओं को मन से एकदम दूर हटाने पर ही भगवान के प्रति भक्ति उत्पन्न होती है। नहीं तो उसका मन विषयों में ही मग्न रहता है। गोस्वामीजी भगवद्भक्त को विरागी होना पसन्द करते है। [3]

१- जिमि जिमि प्रभु हर तासु सिर। तिमि होहिं अपार।
सेवत विषय विवध जिमि, नित नित नूतन मार ।।
मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-४६६ ३०

२- ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार।
केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न ऐहिं संसार।
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगलोचनि के नयन सर को अस लाग न जाहि ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२२

३- सुक सनकादि प्रह्लाद नारदादि कहैं। राम की भगति बडी बिरति नित। जाने बिनु भगति न, जानिबो तिहारे हाथ। समुझि सयाने नाथ, पगनि परात ।।

विनयपत्रिका-राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-४६३

विषयों में लीन होने से हमारे जीवन का कुछ भी महत्व नहीं होता । विषयों में मग्न होकर अमूल्य जीवन बरबाद मत करना, गोस्वामीजी का यही उपदेश है ।[१]

गोस्वामीजी विषयवासनाओं को दु:ख देनेवाला साधन मानते है । विषयी जीवन में कभी सुखी नहीं रह सकता । [२]

दरिद्रता - संबन्धी - गोस्वामीजी के विचार

दरिद्रता के संबन्ध में गोस्वामीजी ने अपना विचार तीन चार सूक्तियों में व्यक्त करने का प्रयत्न किया है । ' कवितावली ' में एक स्थान पर उन्होंने कहा है - पेट का पालन करने केलिए आदमी नाना प्रकार के कष्ट भोगते है । गोस्वामीजी के बचपन का जीवन अत्यधिक करुणाजनक है । बचपन के अपने अनुभवों के आधार पर उन्हें दरिद्रता के संबन्ध में कुछ लिखने की प्रेरणा मिली हो, ऐसा लगता है । विनयपत्रिका में भी उन्होंने अपने दु:खमय बचपन का चित्रण किया है । पेट पालने केलिए उन्हें घर-घर भीख मांगनी पड़ी । उनका लड़कपन दरिद्रता में ही बीता ।

गरीब व्यक्ति अत्यधिक वेदना सहकर अपनी जीवन - नौका को आगे बढ़ाता है । सारी कामनाओं की पूर्ति करनेवाले कल्पवृक्ष की उपलब्धि होने पर भी वह उससे कुछ मांगने में सकुचाता है । गोस्वामीजी गरीब व्यक्ति

१- लाभ कहा मानुष तनु पाये, काय - वचन मन सपनेहुं कबहुंक घटत न काज पराये ।

जो सुख सुरपुर नरक गेह बन आवत बिनहिं बुलाये ।।

विनयपत्रिका-राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-४१८

२- दोष निलय यह विषय सोकप्रद कहत संत श्रुति टेरे ।।

विनयपत्रिका-राजनाथ शर्मा, पृष्ठ-३६५

की मानसिक हालत खूब जानते है ।[१]

गरीब व्यक्ति को अगर बहुत कम पदार्थों की प्राप्ति होने पर भी वह उससे अत्यधिक सन्तुष्ट होता है । उसे अधिक मिलने की इच्छा नहीं । जो कुछ मिल जाय, उससे उसकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता । गोस्वामीजी के व्यक्तित्व की एक झांकी यहां मिलती है । बचपन के समय जब वे घोर अकिंचनता में पड़े थे तब वे थोड़े पदार्थों से ही तृप्त हो जाते थे ।[२]

गोस्वामीजी गरीबी को सबसे बड़ा दु:ख मानते है । जिस व्यक्ति ने इस दु:ख का अनुभव किया वही अकिंचनता-रूपी दु:ख की गहराई जान सकता है । उसे सुख मिलने की आशा करना व्यर्थ है । गोस्वामीजी का यही विचार है ।[३]

दरिद्र धन की लालसा से न जाने कहां कहां भटकता फिरता है । धन के अभाव में वह दु:खी होकर दिन काटता है, इसी कारण वह धन पाने केलिए अत्यधिक उत्सुक रहता है ।[४]

१- जथा दरिद्र बिबुध तरु पाई । बहु संपति मांगत सकुचाई ।
तासु प्रभाउ जान नहिं सोई । तथा हृदय मम संसय होई ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८२

२- दिए दान बिप्रन्ह बिपुल पूजि गनेस पुरारि ।
प्रमुदित परम दरिद्र जनु पाइ पदारथ चारि ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५७४

३- नहिं दरिद्र सम दुख जग मांही ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२८

४- सोचत घर घर जनु दरिद्र मनु फिरत लागि धन धायो ।
तुलसीसिय बिलोकि पुलक्यो तनु भूरिभाग भयो भायो ।।
गीतावली,पृष्ठ-२६१

प्रेम - संबन्धी :

गोस्वामीजी प्रेम को दु:ख का कारण मानते है। कारण यह है - संयोग के समय हम सुख की पराकाष्ठा तक पहुंच जाते हैं। लेकिन विरह की अवस्था में वेदना की अग्नि में हम जलने लगते हैं। इन्हीं कारणों से गोस्वामीजी को यों कहना पडा।[१]

अपने प्यारे के दोषों की टीका- टिप्पणी करना कभी शोभनीय बात नहीं। तब प्रेम की पवित्रता नष्ट हो जाती है।[२]

दोनों ओर से प्रेम का व्यापार चलता रहता है, तभी तो उसमें सफलता आ सकती है, एकांकी प्रेम से सुख की प्राप्ति नहीं होती। गोस्वामीजी प्रेम के संबन्ध में ठीक ठीक ज्ञान रखते है।[३]

लेकिन गोस्वामीजी यह भी मान लेते है कि अन्त तक प्रेम निभाने केलिए कुछ कठिनाइयां सहनी पडती है। अर्थात् प्रेम का पथ अत्यधिक दुर्गम है। यह बात कितनी वास्तविक है।[४]

१- तुलसी है सनेह दुख दायक नहिं जानत ऐसो को है।
कृष्णगीतावली-श्रीकान्तशरण, पृष्ठ-८५

२- सखि सरोष प्रियदोष बिचारत प्रेम पीनपन छीजे।
खग मृग मीन सलभ सरसिज गति सुनि पाहनौ पसीजै।
ऊधो परम हितू हित सिखवत परिमिति पहुंचि पतीजै।
कृष्णगीतावली-श्रीकान्तशरण, पृष्ठ-११०

३- ऐसे हौहु जानति भृंग। नाहिने काहू लह्यो सुख प्रीति करि इक अंग
कृष्णगीतावली-श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-१३६

४- ऊधो, प्रीति करि निरमोहियन सों को न भयो दुख दीन।
कृष्णगीतावली-श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-१४२

गोस्वामीजी राम से प्रेम का नाता जोड़ना चाहते है । अन्य सारे सांसारिक नाते सारहीन है । [१]

जीव का सबसे प्रमुख कर्तव्य भगवान रामचन्द्र से पवित्र प्रेम करना है । उससे बढ़कर दूसरा श्रेष्ठ कोई कर्तव्य नहीं, यही गोस्वामीजी का विचार है । राम के प्रति गोस्वामीजी के मन में प्रेम की पवित्र नदी ही बहती है । [२]

राम के चरण - कमलों से प्रेम रखे बिना तप,जप,यज्ञ,व्रत, दान आदि करने से कोई फायदा नहीं होता । केवल भगवान से प्रेम रखकर उपर्युक्त सभी पुण्य कर्मों का फल प्राप्त होता है । तभी मंगल या कल्याण का विधान होता है ।[३]

विविध विषयक-सूक्तियां - गोस्वामी जी के विचार

तुलसीदासजी ने राम-नाम के महत्व के संबन्ध में, गुरु - महिमा के संबन्ध में नारी - धर्म के संबन्ध में, सत्संगति के महत्व के संबन्ध में - कई भिन्न भिन्न विषयों पर सूक्तियां लिखी हैं । लेकिन कुछ सूक्तियां इनके अन्तर्गत नहीं आती । इन विविध विषयक सूक्तियों का अध्ययन

१- रे मन सब सों निरस ह्वै सरस राम सों होहि ।
भलो सिखावन देत है निसि दिन तुलसी तोहि ।।
दोहावली-हनुमाप्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-२८

२- स्वारथ सांच जीव कह एहा । मन क्रम वचन रामपद नेहा ।
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा । जो तनु पाइ भजि रघुबीर ।
रामचरित मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६४

३- जप तप मख समदम व्रत दाना । विरति विवेक जोग विज्ञाना ।
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा । तेहि बिनु कोउ न पावै छेमा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६३

करने से उनके और कुछ विचार समझ में आते हैं ।

गुण-दोष मिश्रित संसार में विवेकी मनुष्य केवल गुणों को खोजकर उन्हें अपनाते हैं और दोषों को छोड़ देते हैं - गोस्वामीजी का यही मत है कि विवेक से काम लेना ।[१]

उनका यह अनुमान ठीक है कि भले आदमी भलाई की ओर और नीच आदमी नीचता की ओर आकृष्ट होते हैं । यह कोई अनोखी बात नहीं । [२]

गोस्वामीजी कर्म को महत्व देते हैं । अगर करनी अच्छी हो तो फल भी शुभ निकले बुरे कर्मों का परिणाम बुरा निकलता है । [३]

गोस्वामीजी का कहना कितना वास्तविक है ? एक साथ पैदा होने पर भी स्वभाव में एकता दीख पड़ना मुश्किल है । साथियों में कोई सज्जन होता है। कोई दुर्जन है ।[४]

१- जड़ चेतन गुनदोषमय विश्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि विकार ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

२-भलो भलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु ।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

३- भल अनभल निज निज करतूती । लहत सुजस अपलोक बिभूती ।
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू । गरल अनल कलिमल सरि ब्याधू ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

४- उपजहिं एक संग जग माहीं । जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं ।
सुधा सुरासम साधु असाधू । जनक एक जग जलधि अगाधू ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

बच्चों के प्रति गोस्वामीजी के हृदय में वात्सल्य की भावना भरी रहती है। बच्चों की तोतली वाणी सुनकर माता-पिता, सब लोग आनन्द से पुलकित हो उठते हैं।[१]

वाणी और अर्थ में भिन्नता प्रतीत होने पर भी वास्तव में कोई भिन्नता नहीं रहती। वैसे जीवात्मा और परमात्मा के बीच भिन्नता भासित होने पर भी इनमें अभेद का भाव रहता है।[२]

गोस्वामीजी एक सामान्य सत्य का स्पष्टीकरण करते हैं कि प्रभुता पाने पर आदमी उन्मत्त हो जाता है और उस उन्मत्तता में पड़कर वह सब कुछ भूल जाता है।[३]

विरोध रखने पर पिता, मित्र, गुरु और स्वामी के यहां जाना गोस्वामीजी पसन्द नहीं करते। नहीं तो इनके पास किसी भी समय जाने से कोई दोष नहीं है।[४]

१- जो बालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२७

२- गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न।
वंदौ सीताराम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४६

३- बड़ अधिकार दच्छ जब पावा। अति अभिमानु हृदय तब आवा।
नहिं कोउ अस जन्मा जग माहीं। प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१३७

४- जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा। जाइअ बिनु बोलेहु न संदेहा।
तदपि विरोध मान जहं कोई। तहां गएं कल्यान न होई।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४०

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी के मत में अपमानित होना अत्यधिक कठिन दु:ख है। यह दु:ख सहने योग्य नहीं, मरना उससे अच्छा है।[१]

वे सामाजिक व्यवस्था के बारे में अत्यधिक ध्यान लगाते हैं। कन्या को अनुरूप वर से विवाह-सूत्र में बांधना चाहिए। नहीं तो उसे जीवन भर दु:ख झेलना पड़ता है। [२]

गोस्वामीजी का लोक-परिज्ञान अत्यधिक गहरा है। तभी वे कहते हैं कि वन्ध्या स्त्री, बच्चे को जन्म देते समय होनेवाली अनुपम वेदना से अनभिज्ञ रहती है। वन्ध्या बच्चे को जन्म देती नहीं। [३]

पराधीन व्यक्ति को उन्होंने दु:ख का साथी बताया है। सपने में भी उसे सुख की प्राप्ति होना असंभव है। वे नारी को पराधीन कहने का कारण यह मानते है कि वह हमेशा किसी न किसी की छत्र-छाया में जीती है। [४]

१- जद्यपि जग दारुन दु:ख नाना। सब तें कठिन जाति अपमाना।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४२

२- जौं घरु बरु कुलु होइ अनूपा। करिअ बिबाहु सुता अनुरूपा।
न त कन्या बरु रहउ कुआंरी। कंत उमा मम प्रान पिआरी।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१५२

३- सांचेहु उनके मोह न माया। उदासीन धनु धामु न जाया।
पर घर घालक लाज न भीरा। बांझ कि जान प्रसव कै पीरा।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१८६

४- कत बिधि सृजीं नारि जग माहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६७

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

विरागी काम,क्रोधादि विकारों से आकृष्ट न होकर संयमित जीवन बिताता है। बाहरी आकर्षण उस पर अपना अधिकार स्थापित नहीं कर सकते। विरागपूर्ण जीवन बिताना गोस्वामीजी पसन्द करते है।[१]

गोस्वामीजी मानते है कि ईश्वर भक्त ही माया के जाल में न पड़कर मुक्त रहता है। सभी को नचानेवाली माया सब का सर्वनाश करा डालती है।[२]

सुन्दर आकृति पर मोहित होना मूर्खों का काम है। अच्छी तरह विचार करने के बाद उनसे मिलना है। नहीं तो अनर्थ होगा।[३]

मनुष्य हमेशा सुख की खोज में इधर उधर भटकनेवाले हैं। यों संपत्ति के बढ़ने पर लोभ भी बढ़ता जाता है। मनुष्य के इस स्वभाव में परिवर्तन लाना गोस्वामीजी चाहते हैं।[४]

१- सुनु मुनि मोह होइ मन ताकें। ग्यान बिराग हृदय नहिं जाके।
 ब्रह्म चरज ब्रत रत मति धीरा। तुम्हहि कि करइ मनोभव पीरा।
  मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३८

२- सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल।
 अस विचारि मन माहिं, भजिअ महामाया पतिहिं।।
  मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-२५४

३- तुलसी देखि सुबेषु भूलहि मूढ़ न चतुर नर।
 सुन्दर केकिहि पेखु बचन सुधा सम असन अहि।।
  मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८२

४- सुख संपति सुत सेन सहाई। जय प्रताप बल बुद्धि बड़ाई।
 नित नूतन सब बाढ़त जाई। जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई।
  मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०७
  टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

सुख और दु:ख की हालत में एक समान रहनेवाले व्यक्ति को गोस्वामीजी धीर मानते हैं। सभी अवस्थाओं में एक समान रहना है। केवल मूर्ख ही सुख के समय अत्यधिक सन्तुष्ट होते हैं और दु:ख के समय दु:खी भी होते हैं। [१]

उनके मतानुसार गृहस्थ को कर्म-पथ का अनुगामी होना चाहिए। उस पथ से विचलित होकर चलने पर वह अच्छा गृहस्थ कहलाने योग्य नहीं रहता। [२]

गोस्वामीजी का विचार है कि अगर हम दूसरों का उपकार नहीं कर सकते तो कम से कम उनका अपकार कभी नहीं करना चाहिए। पर-पीड़ा गोस्वामीजी सह नहीं सकते। [३]

पारिवारिक जीवन की सफलता चाहनेवाले हैं गोस्वामीजी। पिता के वचन का पालन करना हर एक व्यक्ति का प्रमुख कर्तव्य है। उसकी उपेक्षा करें तो पारिवारिक जीवन की दृढ़ता नष्ट हो जाती है। [४]

१- सुख हरषहिं जड़ दुख बिलखाहीं। दोउ सम धीर धरहिं मनमाहीं।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२१३

२- सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।

सोचिअ जती प्रपंच रत बिगत बिबेक बिराग ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४२

३- सब बिधि सोचिय पर अपकारी। निज तनु पोषक निर्दय भारी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४३

४- अनुचित उचित बिचारु तजि जे पालहिं पितु बचन।

ते भाजन सुख सुजसु के बसहि अमर पति अयन ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४५

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

आर्त कुकर्म करने में किसी के पीछे नहीं रहते । भूख से व्याकुल होने पर किसी से मांगने में लज्जा नहीं आती । यह तो वास्तविक ही है । [१]

गोस्वामीजी यह विचार रखते है - वेदों का ठीक ठीक पालन करना है । वेद - विरुद्ध मार्ग पर चलना अच्छा नहीं । [२]

संसार को हम जिस प्रकार की दृष्टि से देखते है उसी प्रकार हमें अनुभूत होता है । गोस्वामीजी हम से कहते है - अच्छे विचार मन में रखकर संसार की परीक्षा कर लो । [३]

गोस्वामीजी कार्य को कारण से भी कठिन मानते हैं । [४]

कबीर के समान गोस्वामीजी भी बाहरी वेष-विधान को महत्व नहीं देते । आचरण पर ही वे महत्व देते हैं । [५]

१- मांगउं भीख त्यागि निज धरमू । आरत काह न करइ ।
   अस जिय जानि सुजान सुदानी । सफल करहिं जग जाचक बानी ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६२

२- यहउ कहत भल कहहि न कोऊ । लोकु वेदु बुध सम्मत दोऊ ।
   तात तुम्हार विमल जस गाई । पाइहि लोकउ वेदु बड़ाई ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६६

३- देखि प्रभाउ सुरेसहिं सोचू । जुग भल भलेहि पोच कहुं पोचू ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३१३

४- कारन तें कारजु कठिन होइ दोषु नहिं मोर । कुलिस अस्थि तें उपल तें लोह कराल कठोर ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४५ २२४

५- यद्यपि सम नहिं राग न रोषू । गहहि न पापु पूंनु गुनदोषू ।
   करम प्रधान विस्व करि राखा । जो अस करइ सो तस फल चाखा ।
      मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३२५

सभी लोगों से गोस्वामीजी का कहना यही है- सारी बातें सावधानी से करना है, नहीं तो बाद में पछताने का अवसर आता है।[1]

माता के ममतामयी प्यार में पलना अत्यन्त सुखद होता है। इस विचार को मन में रखकर गोस्वामीजी कहते है कि माता पर दोषारोपण करना उचित नहीं है।[2]

गोस्वामीजी युवकों के मन को चंचलता का प्रतीक मानते है। मन पर नियंत्रण रखना कठिन काम है। शायद गोस्वामीजी ने अपने यौवनकाल का स्मरण कर, अपने अनुभव के आधार पर यह दोहा लिखा होगा।[3]

धर्म-शील व्यक्ति को दु:ख का सामना नहीं करना पड़ता। वह सांसारिक मलिनताओं में न पड़ने के कारण सुखी रह सकता है।[4]

१- अनुचित उचित काजु किछु होऊ। समुझि करिय भल कह सबु कोऊ।
सहसा करि पाछे पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३३४

२- उर आनत तुम्ह पर कुटिलाई। जाइ लोकु परलोकु नसाई।
दोसु देहि जननिहि जड़ तेई। जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सेई।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८३

३- दुखित कतहुं परितोष न लहहीं। एक एक सन मरमु न कहहीं।
लखि हियं हंसि कह कृपानिधानू। सरिस स्वान मघवान जुबानू।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४३६

४- सुखी मीन सब एक रस अति अगाध जल मांहि।
जथा धर्मसीलन्ह के दिन सुख संजुत जांहि।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६३

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी का विचार है - अधिक मात्रा में संपत्ति मिल जाने से आदमी घमण्डी हो जाता है। लेकिन अच्छे आदमी संपत्ति से झुकते हैं।[१]

किसी वस्तु की इच्छा करना मूर्खता है। अगर उसकी प्राप्ति न होती तो भारी दु:ख भोगना पड़ता। उस दु:ख से मुक्ति पाने का एकमात्र मार्ग उसकी चाह न करना है।[२]

गोस्वामीजी का मत है - लोभ से अछूते रहना भले मनुष्य के लिए भूषण है। लोभ से ग्रस्त होने पर उसका पतन अवश्य होता है।[३]

मनुष्य का मन अच्छा होना है, तब तो सारी बातें मंगलमयी हो जाती हैं। नहीं तो विपत्ति का सामना करना पड़ता है।[४]

१- फल भारन नमि विटप सब, रहे भूमि निअराइ ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइ ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६४

२- मोह मूल बहु सूल प्रद, त्यागहु तुम अभिमान ।
भजहु राम रघुनायक कृपासिंधु भगवान ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-१११

३- चौदह भुवन एक पति होई । भूत द्रोह तिष्ठै नहिं सोई ।
गुन सागर नागर नर जोऊ । अल्प लोभ भल कहइ न कोऊ ।।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३८

४- सुमति कुमति सब कें उर रहहीं । नाथ पुरान निगम अस कहहीं ।
जहाँ सुमति तहँ संपति नाना । जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना ।।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१४२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी उचित व्यक्ति से उचित बातें कहना चाहते हैं। कामी भक्ति- संबन्धी कथा सुनने की इच्छा नहीं रखता, काम-संबन्धी कथा सुनने केलिए वह अत्यधिक उत्सुक रहता है। [१]

उनका विचार है - सुनने में कठोर, परन्तु हितकारी वचन बोलने वाले लोगों की संख्या बहुत कम है। मधुर परन्तु अहित बात सुनाना ठीक नहीं। दूसरों की हानि पहुंचानेवाली वाणी नहीं बोलनी चाहिए।[२]

गोस्वामीजी मूर्ख की प्रकृति के संबन्ध में अच्छी जानकारी रखते हैं। श्रेष्ठ गुरु के मिल जाने पर भी मूर्ख को अन्धकार से मुक्ति नहीं मिलती। वह अज्ञान - सागर में डूबता उतरता रहता है। [३]

अगर दूसरों का कहना अच्छा मालूम पड़े तो उसे स्वीकार करने में गोस्वामीजी तैयार हैं। उससे कोई आपत्ति नहीं होती। अगर ठीक नहीं है तो उसकी उपेक्षा करनी चाहिए। [४]

१- ममता रत सन ग्यान कहानी। अति लोभी सन बिरति बखानी।
क्रोधिहिं सम कामिहि हरिकथा। ऊसर बीज बए फल जथा।।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-२७३

२- वचन परम हित सुनत कठोरे। सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे।।
प्रथम बसीठ पठउ सुनु नीती। सीता देइ करहु पुनि प्रीति।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-१६७

३- फूलै फरै न बेंत जदपि सुधा बरषहिं जलद।
मूरुख हृदय न चेत जौ गुरु मिलहिं बिरंचि शिव।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२२१

४- तिनहि ज्ञान उपदेसा रावन। आपुन मंद कथा सुभ पावन।
पर उपदेस कुसल बहु तेरे। जे आचरहिं ते नर न घनेरे।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३२६

दूसरों को दु:ख पहुंचाने वाले व्यक्ति शान्ति का अनुभव नहीं कर सकते । गोस्वामीजी इसी मत वाले है । वह सदा दूसरों की हानि पहुंचाने के विचार में मग्न रहता है । [१]

गोस्वामीजी पुण्य - तीर्थों में जाने और दर्शन करने में भरोसा रखते है । इससे पाप कर्मों से मुक्ति मिल जाती है । [२]

गोस्वामीजी मानते है मातृत्व पद से अलंकृत नारी सौभाग्यवती है । अपने बच्चे के प्रति वात्सल्य से मां का हृदय भर जाता है । [३]

सुख दु:ख सभी अवस्थाओं में दूसरों का चिर साथी रहना ही उत्तम है । केवल सुख के समय साथी रहना ठीक नहीं । [४]

दूसरों को पीडा पहुंचाना अच्छा नहीं । गोस्वामीजी इसे कठोर पाप मानते है । दूसरों की सहायता अगर न कर सकें तो दूसरों को पीडा मत करना । [५]

१- तुरत आन उथ चढ़ि सिसिवाना । बस्त्र सप्र छाडेसि विधि ना ना ।
विकल होइ सब उधम ताके । जिमि पर द्रोह निरत मन साके ।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३५७

२- तब रघुपति रावन के सीस भुजा सर चाप ।
काटे बहुत बढ़े पुनि जिमि तीरथ कर पाप ।।
मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३६६

३- धनमहिं सबहिं मिले भगवाना । उमा मरमु येह काहुं न जाना ।
एहि विधि सबहिं सुखी करि रामा । आगे चले सीलगुन धामा ।
कौसल्यादि मातु सब धाई । निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६

४- विषय अलंपट सील गुनाकर । पर दु:ख दु:ख देखे पर ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७२

५- परद्रोही परदार रत परधन पर अपवाद ।ते नर पावर पापमय देह धरे मनुजाद
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५

गोस्वामीजी केवल भक्ति से भवसागर पार करना संभव मानते है । उसके बिना यह सागर पा र नहीं कर सकता ।[१]

सदा सुख-भोगों में मस्त रहनेवाले व्यक्ति केलिए सुख का अनुभव नयी चीज़ नहीं है । वह सुख का अनुभव करते करते थक गया है, दूसरों केलिए सुख अमूल्य चीज़ है ।[२]

गोस्वामीजी साध्य की प्राप्ति केलिए साधना पर बल देना चाहते है । चुपचाप बैठने पर कार्य की सिद्धि नहीं होती । मोक्ष-पद पाने केलिए राम का भजन करना श्रेष्ठ होता है ।[३]

वे मानसिक आनन्द को प्रधानता देकर कहते है कि केवल इसी आनन्द से मनुष्य शान्तिपूर्ण और सुखी जीवन बिता सकते हैं ।[४]

१- जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्मा हन गति जाइ ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८२

२- जो अति आतप व्याकुल होई । तरु छाया सुख जानै सोई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-११६

३- रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निरवान ।
ग्यानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूंछ बिसान ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१३५

४- निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा । परस कि होइ बिहीन समीरा ।
कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा । बिनु हरि भजन न भवभय नासा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५४

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

शरीर को गोस्वामीजी सभी साधनाओं का मूल कहते है। शरीर का अस्तित्व होने पर ही साधना कर सकता है।[१]

गोस्वामीजी की दृष्टि में कवि अमर है, क्योंकि कवि की मृत्यु कभी नहीं होती। वह साहित्य लोक में अनेकों युगों तक जीता रहता है।[२]

वे दंभियों के अनीतिपूर्ण व्यवहार पर झुंझलाहट प्रकट करते हैं दंभी अनीति के रास्ते का पथिक है।[३]

गोस्वामीजी एक तथ्य बताते है कि विरले ही लोग दूसरों का कल्याण चाहते हैं। उन्हें कभी दुःख भोगना नहीं पड़ता। उनका कल्याण अवश्य होता है। परद्रोही हमेशा डरते डरते रहते हैं, कामी कलंकी रहता हैं।[४]

यश की प्राप्ति केलिए गोस्वामीजी लोगों से पुण्य कर्मों में लग जाने का उपदेश देते है। पुण्य कर्म करते रहने पर सद्गति भी मिलती है।[५]

१- तजे न तनु निज इच्छा मरना। तनु बिनु वेद भजन नहिं करना।
प्रथम मोह मोहि बहुत बिगोवा। राम बिमुख सुख कबहुं न सोवा।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६४

२- कवि बृंद उदार दुनी न सुनी। गुन दूषक ब्रात न कोपी गुनी।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७५

३- गुरु मोहि नित्य प्रबोध दुखित देखि आचरण मम।
मोहि उपजइ अति क्रोध दंभिहि नीति की भावई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८२

४- काहुंक दुख सब कर हित ताके। तेहि कि दरिद्र परस मनि जाके।।
परद्रोही कि होहिं निःसंका। कामी पुनि कि रहहिं अकलंका।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६६

५- पावन जस कि पुन्य बिनु होई। बिनु अघ अजस कि पावै कोई।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२००
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

विरागी अपनी नारी की उपेक्षा कर रामचन्द्र की ओर उन्मुख रहता है। वह राम के भजन में मग्न रहना पसन्द करता है। कामी राम से विमुख होकर स्त्री के प्रति आसक्ति रखता है।[१]

दूसरों की निन्दा करके उससे आनन्द उठानेवाले लोगों को गोस्वामीजी मूर्ख समझते है। वे तो महान पाप करनेवाले है। अपने अवगुणों को छिपाकर दूसरों पर दोषारोपण करना श्रेष्ठ बात नहीं हो सकती।[२]

गोस्वामीजी का यह विचार समझना है। कामवासना से पीड़ित व्यक्ति नारी के पीछे और लोभी-व्यक्ति धन के पीछे पड़नेवाले हैं। लोभी धन की खोज में इधर उधर घूमता फिरता रहता है।[३]

कवि वास्तविक प्रेम की सराहना कर उस प्रेम के विजय की घोषणा कर डालते है। लेकिन वह प्रेम झूठा नहीं होना चाहिए। प्रेम का ढोंग रचना अच्छा नहीं।[४]

१- पुरुष त्याग सक नारिहि, जो विरक्त मति धीर।
नतु कामी विषयावस, विमुख जो पद रघुवीर ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२११

२- सबके निन्दा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरहीं।
सुनहु तात अब मानस रोगा। जिन्ह तें दुख पावहिं सब लोगा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३२

३- कामिहि नारि पियारि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम ।।
मानस, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२५१

४- तो भगवान सकल उरवासी। करिहिं मोहिं रघुपति के दासी।
जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलै न कछु संदेहू ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४३५

उचित समय पर उचित काम करना चाहिए । उस अवसर के छूट जाने पर फिर कहने से कोई फायदा नहीं होता ।[१]

गोस्वामीजी यह बात व्यक्त करते हैं कि शूर आदमी करनी के द्वारा अपनी वीरता व्यक्त करते हैं । लेकिन कायर कर्म करने में पीछे रहते हैं, केवल बातें बना बनाकर कहते हैं ।[२]

गोस्वामीजी क्रोध को व्यक्ति का आभूषण नहीं मानते उससे व्यक्ति की प्रतिष्ठा नष्ट हो जाती है । जल्दी कुपित होने का स्वभाव छोड़ देना अच्छा है ।[३]

क्षत्रियों को युद्ध से दूर रहना गोस्वामीजी के मत में ठीक नहीं । युद्ध-क्षेत्र से पराजित होकर लौटने से कितना श्रेष्ठ होता है युद्ध क्षेत्र में मर जाना । नहीं तो उनके कुल में कलंक लग जाएगा ।[४]

१- का बरषा सब कृषी सुखाने । समय चुके पुनि का पछिताने ।
अस जिय जानि जानकी देखी । प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेषी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४३८

२- सूर समय करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ।
विद्यमान पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६०

३- लखन कहेउ हंसि सुनहु मुनि क्रोधु पाप कर मूल ।
जेहि बस जन अनुचित करहिं चरहिं विस्व प्रतिकूल ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६४

४- क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना । कुल कलंकु तेहि पांवर जाना ।
कहौं सुभाउ न कुलहिं प्रसंसी । कालहु डरहिं न रन रघुबंसी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४७२

ज्योतिर्विद्या का ज्ञान गोस्वामीजी रखते है, इसका स्पष्ट प्रमाण है गोस्वामीजी का ' रामाज्ञाप्रश्न ' नामक ग्रन्थ । ' मानस ' में ज्योतिर्विद्या विषयक कुछ पंक्तियां ही मिलती हैं । मांगलिक कर्म गोधूली वेल मे करना बहुत श्रेष्ठ होता है । शुभ कर्म करने केलिए यह समय बहुत अच्छा है ।[1]

पृथ्वी पुण्यात्माओं को सुखी बनाने के कार्य मे सदा संलग्न रहती है । पुण्यात्मा को यह पृथ्वी सुखमय दीख पडती है, पापी को दु:खमय । [2]

गोस्वामीजी का विचार है कि संसार की परिवर्तनशीलता के साथ साथ लोगों के मन का भी परिवर्तन होता रहता है । समय के पलट जाने से शत्रु हमारा मित्र हो जाता है और उल्टा भी । संपत्ति के बढ़ने पर मित्रों की संख्या भी बढ़ती है, संपत्ति के घटने से मित्र उसकी ओर मुड़कर भी नहीं देखते । [3]

१- धेनु धूरि वेला विमल सकल सुमंगल मूल ।
बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५२७

२- सुनि बोले गुर अति सुखु पाई । पुन्य पुरुष कहुं महि सुख छाई ।
जिमि सरिता सागर महुं जाहीं । जद्यपि ताहि कामना नाहीं ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४८८

३- प्रिय सिय रामु कहा तुम रानी । रामहि तुम प्रिय सो फुरि बानी ।
रहा प्रथम अब ते दिन बीते । समउ फिरे रिपु होहिं पिरीते ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

तुलसीदास स्वतंत्र विचार रखनेवाले एक महान व्यक्ति है। वे किसी की गुलामी स्वीकार करने केलिए तैयार नहीं। पराधीनता में पलना वे पसन्द नहीं करते। इसी कारण वे भी दरबारी कवि नहीं रहे। यहां उनके व्यक्तित्व की विशेषता पर प्रकाश पड गया है।[1]

मां- बाप के आज्ञाकारी पुत्रों को गोस्वामीजी अत्यधिक महत्व की दृष्टि से देखते हैं। लेकिन ऐसे पुत्रों को देखना कठिन है।[2]

मूर्खता का काम करनेवाले लोगों की ओर उन्होंने व्यंग छोड़ा है। कल्पवृक्ष जैसे श्रेष्ठ वृक्ष की प्राप्ति होने पर भी मूर्ख उसकी उपेक्षा करके एरण्ड की सेवा करने में हिचकते नहीं। वैसे अमृत जैसे अमूल्य वस्तु की उपेक्षा कर वे विष को ग्रहण करते हैं। उन्हें मूर्खों की कोटि में गोस्वामीजी रखते हैं।[3]

सिर्फ अभिमान के बन्धन में पड़ना गोस्वामीजी पसन्द नहीं करते। अपने को बड़ा मानकर उस अभिमान में पड़कर सब कुछ भुला देना ठीक नहीं। स्पष्ट है, गोस्वामीजी मिथ्याभिमानी नहीं है।[4]

१- नैहर जनमु भरब बरु जाई। जियत न करबि सवति सेवकाई।
अरि बस दैउ जियावत जाही। मरनु नीक तेहि जीवन चाही।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३४

२- सुनु जननी सोइ सुत बड़ भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी।
तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६६

३- सेवहिं अरंडु कलप तरु त्यागी। परिहरि अमृत लेहिं बिषु मांगी।
तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं। देखु बिचारि मातु मन मांही।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६७

४- हम हमार आचार बड़ भूरि भार धरि सीस।
हठि सठ परबस परत जिमि कीर कोस कृमि कीस।
मानस- दोहावली, पृष्ठ-७३

वे नीचों पर भरोसा नहीं रखते । विश्वास- घात करने के समान नीच कर्म कोई भी नहीं । उनका यही मत है ।[१]

सुन्दर आकृतिवालों पर मोहित होना मूर्खता है । शायद उनका मन विषैला होगा, आन्तरिक रूप से वह असुन्दर होगा ।[२]

गोस्वामीजी अविवेक को दु:ख का कारण मानते हैं । विवेक के अभाव में मनुष्य अवसर के अनुसार कर्म नहीं करता, इसी कारण दु:ख भोगना पड़ता है ।[३]

अत्यधिक सावधानी से कर्म करने पर उसका परिणाम अच्छा निकलता है । चिन्ता के चक्कर में पड़कर जो व्यक्ति काम करता है, उसका वह काम सराहने योग्य नहीं होता ।[४]

१- मार खोज लै सौंह कै सौंह करि करि मत लाज न त्रास ।
  मुए नीच ते मीच बिनु जे इन में निश्वास ।।
    दोहावली - पृष्ठ-१३६

२- बचन बेष क्यों जानिए मन मलीन नर नारि ।
  सूपनखा मृग पूतना दसमुख प्रमुख बिचारि ।।
    दोहावली-पृष्ठ-१४०

३- देस काल करता करम बचन बिचार बिहीन ।
  ते सुरतरु तर दारिदी सुरसरि तीर मलीन ।।
    दोहावली,पृष्ठ-१४२

४- साहसहीं कै कोप बस किएं कठिन परिपाक ।
  सठ संकट भाजन भए हठि कुजाति कपि काक ।।
    दोहावली-पृष्ठ-१४२
    अनुवादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार

गोस्वामीजी परलोक प्राप्ति के चार उपाय बताते है। ज्ञान का अर्जन करने से , युद्ध में भाग लेने से, दान देने से और सेवा करने से परलोक प्राप्ति होती है। [१]

किसी भी कार्य करने के पहले उसकी सफलता पर पूरा विश्वास रखना परम आवश्यक है। गोस्वामीजी का मत है - इस प्रकार विश्वास रखने से मंगल अवश्य होता है। [२]

रोगी, दरिद्रता की आग में जलनेवाला, कटु वचन बोलनेवाला और लालची ये चारों गोस्वामीजी की दृष्टि में निरादर के पात्र हैं। इनकी सेवा करते करते आदमी थक जाता है। [३]

पापी से बैर रखना अच्छी बात नहीं। अगर उससे बैर रखें तो वह हमेशा धोखा देने का मौका देखता रहेगा। उससे अच्छा व्यवहार करना हमारा कर्तव्य है। [४]

१- कै जूझिबो कै बूझिबो, दान कि काय कलेस।
चारि चारु परलोक पथ जथाजोग उपदेस।
दोहावली,पृष्ठ-१५४

२- आपनो ऐपन निजहथा तिय पूजहिं निज भीति।
फलै सकल मन कामना तुलसी प्रीति प्रतीति।।
दोहावली,पृष्ठ-१५५

३- दीरघ रोगी दारिदी कटुबच लोलुप लोग।
तुलसी प्रान समान तउ होहिं निरादर जोग।
दोहावली-पृष्ठ-१६४

४- धाइ लगै लोहा ललकि खैंचि लेइ नइ नीचु।
समरथ पापी सों बयर जानि बिसाही मीचु।।
दोहावली-पृष्ठ-१६४

मूर्खों को उपदेश सुनाने से कोई फायदा नहीं । वह श्रम गोस्वामीजी व्यर्थ मानते है । मूर्ख दूसरों की आज्ञा मानना नहीं चाहते ।[१]

हम जितने भी उच्च पद तक पहुंचे, उतने विनय से झुकना है । उच्च पद की प्राप्ति होने पर घमण्डी होकर अपने को और अपने प्रिय जनों को भूलना उचित नहीं , यहां गोस्वामीजी के व्यक्तित्व के एक पहलू पर प्रकाश पड़ता है । वे अत्यधिक विनय शील प्रकृति का एक व्यक्ति है । कितने बड़े महान कवि होने पर भी उन्हें घमण्ड छू तक नहीं गया है । उन्होंने हमेशा अपने को छोटा सिद्ध करने का प्रयत्न किया है ।[२]

कुछ लोगों का विचार है कि केवल स्वर्ग - प्राप्ति से सुख भोगा जा सकता है । यह विचार ठीक नहीं । ऐश्वर्य से मनुष्य भय रहित होकर सुखी जीवन बिता सकते है । वह पृथ्वी में ही रहकर स्वर्ग - सुख का अनुभव कर सकता है ।[३]

१- जो पै मूढ़ उपदेस के होते जोग जहान ।
क्यों न सुजोधन बोध के आए स्याम सुजान ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६६

२- तुलसी भेड़ी की धंसनि जड़ जनता सनमान ।
उपजत ही अभिमान भो खोवत मूढ़ अपान ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६६

३- तुलसी निरभय होत नर सुनिअत सुरपुर जाइ ।
सो गति लखियत अछत तनु सुख संपति गति पाइ ।।
दोहावली, पृष्ठ-१७०

टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

अफीम का मादक प्रभाव सांप के काटने से भयंकर होता है। अफीम आदमी को चैतन्य हीन बना देता है, वह मृत-जीवन बिताता है। इसी कारण गोस्वामीजी ने यों कहा है।[१]

मंत्री, वैद्य और गुरु इन तीनों को गोस्वामीजी यथाक्रम राज्य, शरीर और धर्म का आधार-स्तंभ मानते है। ये तीनों ठीक तरह से कार्यों का संचालन न करें तो सारी बातें बिगड़ जाती हैं।[२]

हम पर कोई हमला करने पर उसका बदला लेना ठीक नहीं, उसकी चिन्ता तक नहीं करनी है। झगडा पैदा करने का प्रयत्न न करना। यहां गांधीजी के अहिंसा-सिद्धान्त का प्रभाव गोस्वामीजी पर पड़ा है। किसी को दुःख पहुंचाना उन्हें पसन्द नहीं।[३]

गोस्वामीजी मानते है - कामना की उपेक्षा कर जो व्यक्ति जीता है उसी का कल्याण सुनिश्चित है। कामना करने पर उसकी पूर्ति

१- ब्यालहु ते बिकराल बड़ ब्याल फेन जियं जानु।
   वहि के खाएं मरत है वाहि खाएं बिनु प्रानु ।।
   दोहावली, पृष्ठ-१७२

२- सचिव बैद गुर तीनि जौं प्रिय बोलहिं भय आस।
   राज धर्म तन तीनि कर होइ बेगहिं नास ।।
   दोहावली, पृष्ठ-१८०

३- मार्ग मल ओढ़िहुं भलो भलो न घालें घाउ ।
   तुलसी सब के सीस पर रखवारो रघुराउ ।।
   दोहावली, पृष्ठ-१४५

   टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार

गोस्वामीजी मानते है - कामना की उपेक्षा कर जो व्यक्ति जीता है उसी का कल्याण सुनिश्चित है । कामना करने पर उसकी पूर्ति न होने पर दु:ख अवश्य होता है । [१]

सभी लोगों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न कभी नहीं करना है, उसमें हमें कभी सफलता नहीं मिलती । [२]

मिथ्याभिमान की उन्मत्तता में न पड़ने का उपदेश गोस्वामीजी देते है । अभिमानी की उन्नति होती नहीं । पदोन्नति पर गर्व करना अच्छा नहीं । नहीं तो वह सभी से पूज्य होता है । कवि मिथ्याभिमानी नहीं है, यह बात स्पष्ट होती है । [३]

सत्कर्म करने पर कीर्ति बढ़ती है । पुरुषार्थों का अनुसरण करना श्रेष्ठ पुरुष केलिए परम आवश्यक है । नहीं तो सद्गति मिलना कठिन है । [४]

१- बहु सुत बहु रुचि बहु बचन बहु अचार व्यवहार ।
इनको भलो मनाइबो यह अग्यान अपार ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६८

२- लोगनि भलो मनाव जो भलो होन की आस ।
करत गगन को गेंडुवा सो सठ तुलसीदास ।
दोहावली, पृष्ठ-१६८

३- तुलसी भल बलतरु बढ़त निज मूलहि अनुकूल ।
सबहि भांति सब कहं सुखद दलनि बिनु फूल ।।
दोहावली, पृष्ठ-१८२

४- तुलसी निज करतूति बिनु मुकुत जात जब कोइ ।
गयो अजामिल लोक हरि नाम सक्यो नहिं धोइ ।।
दोहावली-पृष्ठ-१८२

गोस्वामीजी चाहते है - दान तो ऐसा देना है जिससे दान लेनेवाले का दु:ख दूर हो जाय । दान काफी मात्रा मे देकर उसे सन्तुष्ट करना चाहिए । शायद गोस्वामीजी काफी मात्रा मे दान देनेवाले व्यक्ति होंगे ।[१]

गोस्वामीजी सब लोगों से मिल जुलकर प्रेमपूर्ण जीवन बिताना पसन्द करते है । एक दूसरे मे भिन्नता रखना कभी अच्छा नहीं ।[२]

नश्वर सांसारिक सुखों के पीछे पडना मूर्खता है । मूर्ख व्यक्ति मोह-जाल मे फंसकर जीवन बरबाद कर डालता है । उसमे पडने पर उससे मुक्ति कभी नहीं मिलती । गोस्वामीजी के मन मे सांसारिक सुख-भोगों के प्रति तनिक भी कामना नहीं ।[३]

मन को दमित करना आसान कार्य नहीं । कभी हम मन के पीछे पीछे दौडने लगते है । मन को वश मे रखना है ।[४]

१- तुलसी दान जो देत है जल मे हाथ उठाइ ।
प्रतिग्राही जीवै नहीं दाता नरकै जाइ ।।
दोहावली, पृष्ठ-१८३

२- गो खग खे खग बारिखग तीनों माहि बिसेक ।
तुलसी पीवै, फिरि चलै, रहै फिरै संग एक ।।
दोहावली, पृष्ठ-१८५

३- जाग जागु जीव जड जोहै जग जामिनी ।
देह गेह नेह जानि जैसे घन दामिनी ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२११

४- ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुण दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खल पतिहिं भजै ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२३५

अत्याचारी व्यक्ति के ऊपर कोई सहानुभूति की वर्षा नहीं करता । अत्याचार करते रहने से ईश्वर भी उसकी सहायता करने केलिए नहीं रहते ।[१]

शरणार्थी की उपेक्षा करना गोस्वामीजी महान पाप मानते है । हमारे अहित की चिन्ता किये बिना उनकी सेवा करनी चाहिए । अहित की चिन्ता किये बिना उनकी सेवा करनी चाहिए । तुलसीदासजी हृदय से कोमल व्यक्ति है, उनका करुणा से भरा रहता है ।[२]

गोस्वामीजी मानते है - भगवान के प्रेम से कभी पीछे नहीं मुड़ना है । परिस्थिति चाहे जो भी हो, उसकी परवाह किये बिना भगवान से प्रेम का नाता जोड़ना चाहिए । शारीरिक अवस्था दुर्बल पड़े तो भी कोई बात नहीं । भगवान की भक्ति की तरंगों में तरंगायित होना गोस्वामीजी केलिए अत्यधिक सुखद है ।[३]

समरसता का जीवन बिताना परम श्रेष्ठ है । ऐसे जीवन बिताने वाला व्यक्ति अवश्य सिद्धि प्राप्त कर सकता है । [४]

१- बेनु करील श्रीखण्ड बसन्तहि दूषन मृषा लगावै ।
सार रहित हतभाग्य सुरभि, पल्लव सो कहु किमि पावै ।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२७२

२- सरनागत कहुं जे तजहिं निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पांवर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि ।।
दोहावली, पृष्ठ-२८७

३- श्रवन घटहुं पुनि दृग घटहुं घटउ सकल बल देह ।
इते घटें घटिहै कहा जौं न घटै हरिनेह ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६३

४- साधन समय सुसिद्धि लहि उभय मूल अनुकूल ।
तुलसी तीनिउ समय सम ते महि मंगल मूल ।।
दोहावली, पृष्ठ-१८५

धन के अभाव में आदमी को अनेक कष्ट झेलना पड़ता है । वह दरिद्रता में पड़कर अत्यधिक वेदना का अनुभव करता है । लेकिन धन की बढ़ती से भी दु:ख होता है, आदमी उन्मत्त होकर पाप कर्म करने में लग जाता है । स्पष्ट है, गोस्वामीजी धन के लोभी व्यक्ति नहीं है ।[१]

उचित समय पर उचित आचरण करने की बात पर ज़ोर देनेवाले है गोस्वामीजी । सब लोग यही पसन्द करते हैं । [२]

गोस्वामीजी मूर्ख लोगों को स्वेच्छाचारी मानते है । दूसरों की प्रार्थना मानने केलिए कभी तैयार नहीं होता । ठीक मार्ग पर लाने केलिए उसे डांटना है । [३]

अहंकार के स्पर्श से आदमी को अछूता रहना चाहिए, यही गोस्वामीजी का विचार है । अहंकार आदमी की अवनति का मुख्य कारण है । वह आदमी शान्ति का अनुभव कभी नहीं कर सकता ।[४]

१- विषयहीन दुख मिले बिपति अति सुख सपनेहुं नहिं पायो ।
उभय प्रकार प्रेत पावक ज्यों दुख प्रद श्रुति गायो ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-४१५

२- मुनिवर तुम्हारे वचन मेरु महि डोलहिं ।
तदपि उचित आचरत पांच भल बोलहिं ।
जानकीमंगल,पृष्ठ-२७

३- कृपासिंधु प्रभु सन, मांगेउ पंथ न देत ।
विनय न मानहिं जीव जड़ डाटे नवहिं अचेत ।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१११

४- जरें - बरें अरु खीझि खिझावैं । राग द्वेष महं जनम गंवावैं ।
सपनेहुं सांति नहीं उन देही । तुलसी जहां - जहां व्रत एही ।।
वैराग्य सन्दीपनी,पृष्ठ-५८

गोस्वामीजी कायर को निरादर का पात्र मानते है । उसका सम्मान कोई नहीं करेगा । कर्म - कुशल व्यक्ति की प्रशंसा सब लोग करते है ।[१]

गोस्वामीजी दयाशील प्रकृति के एक व्यक्ति है । दया को उन्होंने सारे धर्मो का मूल मानते हैं । दूसरों की करुण दशा देखकर उनका हृदय दया से आर्द्र हो जाता है ।[२]

गोस्वा मीजी संसार के सभी लोगों को स्वार्थी मानते है । हर एक व्यक्ति अपनी भलाई केलिए काम करनेवाला है ।[३]

ज्ञान का सहारा मिल जाय तो कर्मजाल से मुक्ति मिल सकती है । नहीं तो कर्म-जाल में पड़कर नाना प्रकार के कष्ट भोगना पड़ता है । गोस्वामीजी मुक्ति की चेष्टा करनेवाले है ।[४]

१- कादर को आदर काहू के नाहिं देखियत ।

कावितावली, पृष्ठ-२६७

श्रीकान्त शरण

२- तोसो नतपाल न कृपाल, न कंगाल मो सो ।

दया में बसत देव सकल धरम ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४८६

राजना थशर्मा

३- छोटो बडो चहत सब स्वारथ जो बिरंचि बिरचो है ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४६२

संपादक-राजनाथ शर्मा

४- जन्म अनेक किये नाना बिधि कर्म कीचचित सान्यो ।

होइ न बिमल बिबेक -नीर-बिनु बेद पुरान बखान्यो ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२३४

गोस्वामीजी लोगों की मानसिक अवस्था का अच्छा ज्ञान रखते है । दु:ख की दशा में प्राय: यह देखा जाता है कि लोग भगवान को गालियां दिया करते है । गोस्वामीजी हमेशा ईश्वर के भजन में मग्न रहनेवाले है ।[1]

गोस्वामीजी अत्यधिक अनीति से घृणा करनेवाले है । अनीति की एक सीमा होती है , उससे बाहर निकलना अच्छा नहीं ।[2]

शत्रु की वाणी में विष भरा रहता है, उस पर कभी विश्वास नहीं रखा जा सकता, उसकी वाणी मधुर हों तो भी । मित्र की गाली अत्यधिक मधुर होती है । गोस्वामीजी वही पसन्द करते है ।[3]

गोस्वामीजी वीर पुरुषों की माता के जीवन को दु:खद मानते है । क्योंकि उन्हें सदा युद्ध में जाना है, और इसी कारण दु:ख सहना पड़ता है ।[4]

पाप कर्म करनेवाले व्यक्ति को अन्त में अपने किये हुए कर्मों का बुरा परिणाम भोगना पड़ता है । वह भोगे बिना नहीं रह सकता ।

१- लोक रीति देखी सुनी, व्याकुल नर नारी ।
   अति बरषे अनबरषे हूं देहिं देवहिं गारी ।
      विनयपत्रिका,पृष्ठ-१२६

२- अति अनीति नीकी नहीं अजहूं सिख दीजे ।
      कृष्णगीतावली,पृष्ठ-१४
      श्रीकान्त शरण

३- विष तें विषम बिनय अनहित की सुधा सनेही गारि ।
      कृष्णगीतावली,पृष्ठ-५५
      श्रीकान्त शरण

४- धादि बीर जननी - जीवन जग छत्रि जाति - गति भारी ।
      गीतावली,पृष्ठ-१६०,प्रकाशक- हनुमान प्रसाद पोद्दार

गोस्वामीजी यही विचार रखता है - अपनी करतूत का फल स्वयं भोगना है।[1]

दृढ़ता से सारी बातें सफल हो जाती हैं। गोस्वामीजी अपने जीवन में इसी तथ्य के आधार पर सारी बातें कहते हैं।[2]

गोस्वामीजी विरह-वेदना को अत्यधिक दु:खद मानते हैं। शायद उन्होंने अपने यौवनकाल की स्मृति में डूबकर यों कहा होगा।[3]

इन्द्रियों का निग्रह करना आसान कार्य नहीं है। खासकर यौवन की दशा में इन्द्रिय न जाने कहां कहां दौड़ते फिरते हैं। इसे वश में करना कठिन कार्य है।[4]

उपर्युक्त अनेक सूक्तियों का अध्ययन करके उसमें से प्रत्येक सूक्ति में अभिव्यक्त गोस्वामीजी के व्यक्तित्व और विचार की एक रूप-रेखा हमने यहाँ तैयार की है। स्पष्ट है, सूक्तियों के द्वारा उनके अधिकांश विचार व्यक्त हो उठे हैं।

१- नभतल कौतुक लंका बिलाप, परिनाम पचहिं पातकी पाप।

गीतावली, पृष्ठ-३१०

संपादक-मुनिलाल

२- अवसि होइ सिधि साहस फलइ सुसाधन।

कोटि कलप तरु सरिस संभु अवराधन।।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-६

संपादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार

३- ऊधो जू ज्यों न कहै कुबरी जो बरी नट नागर हेरि हलाकी।

जाहि लगै परि जानै सोई तुलसी सो सोहागिनि नंदलला की।।

कवितावली, पृष्ठ-५०२

टीकाकार-श्रीकान्तशरण

४- दम दुर्गम, दान दया, मख कर्म, सुधर्म अधीन सबै धन को।।

कवितावली, पृष्ठ-४१४

00000000000000

आ ठ वां अ ध्या य

00000000000000

तुलसीदास की सूक्तियों का मूल स्रोत

और

सूक्तियों का साहित्यिक सौष्ठव

तुलसीदास की सूक्तियों का स्रोत जानने केलिए प्रधानतया संस्कृत ग्रन्थों का सहारा लेना पड़ता है। गोस्वामीजी ने संस्कृत ग्रन्थों की कुछ सूक्तियों शुद्ध अनुवाद किया है। लेकिन कुछ सूक्तियों में केवल भाव ही स्वीकार किया है।

सूक्ति केवल उपदेश निहित कथन ही नहीं, उसमें हमारी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं का समाधान भी मिलता है। वैदिक साहित्य में तो सूक्ति सामान्य मात्रा में देखने को मिलती है।

गोस्वामीजी ने अपने पूर्व के रामकाव्यों के अलावा और भी अनेक ग्रन्थों से सूक्ति का आश्रय ले लिया है। उनके पूर्व के रामकाव्य थे- वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, उत्तररामचरित, वहुमुतोत्तर खंड, अनर्घराघव, कपिल रामायण आदि। तुलसी ने मानस के आरंभिक पृष्ठों में पर संकेत किया है कि अनेक पौराणिक ग्रन्थों की सहायता लेकर ही 'मानस' महाकाव्य का निर्माण किया है।

' नाना पुराण निगमागम सम्मंत यत् रामायणे
निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।।[१]

इस पर श्री रामनरेश त्रिपाठी ने लिखा है :-

संस्कृत नन्दन - कानन में विचरण करके तुलसीदास रूपी मधुप ने समस्त फूलों का रस लेकर जो मधु तैयार करके हिन्दू जाति को दान

१- रामचरित मानस- (तुलसीदास कृत)
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड, पृष्ठ-४

किया है, उसकी तुलना संसार के किसी दान से नहीं की जा सकती है ।[१]

स्पष्ट है, उन्होंने अधिकांश सामग्री संस्कृत से ले ली है । वाल्मीकि रामायण, अध्यात्म रामायण आदि ग्रन्थों के अलावा उन्होंने भगवद्गीता हनुमन्नाटक, प्रसन्नराघव, चंपूरामायण, पराशर संहिता, गर्ग संहिता, गालव संहिता, आनन्द रामायण, प्रस्ताव रत्नाकर, वशिष्ठ रामायण, विष्णु पुराण, शिवपुराण, भोज प्रबन्ध, मातृका विलास, शुक्रनीति, सुभाषित रत्न भांडागारम् , पद्मपुराण, रामायण मंजरी, कुमारसंभव आदि कितने ही ग्रन्थों को आधार बनाया है ।

डा० विद्यामिश्र ने तुलसीदास की इस तत्व ग्राहिका शक्ति का परिचय इस प्रकार दिया है :- ` आपने अपने ` मानस ` में विविध रामकाव्यों से ही नहीं, अपितु अन्यान्य काव्य-ग्रन्थों की सूक्तियों एवं मनोरम वाक्यावलियों को अपने ` मानस ` में आत्मसात् कर सम प्रभा प्रदान की है ।' [२]

वाल्मीकि रामायण की कथा को आधार बनाकर तुलसीदास ने मानस मन्दाकिनी का निर्माण किया है ।

१- तुलसीदास और उनका काव्य
लेखक - पं० रामनरेश त्रिपाठी,
पृष्ठ,१३४ तृतीय संस्करण,१६५८

२- वाल्मीकि रामायण एवं रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन :
डा० विद्यामिश्र
पृष्ठ-४३

श्रीमद्भागवत :

इस भक्ति प्रधान ग्रन्थ की छाया ` मानस ` महाकाव्य पर ज़रूर पड़ी है । इस ग्रन्थ के आधार पर गोस्वामीजी ने चार युगों के प्रमुख साधनों का वर्णन किया है ।

` मानस ` में श्रीमद्भागवत की कुछ घटनाओं का भी उसी रूप में वर्णन मिलता है । ` भागवत् ` में दक्ष - यज्ञ का उल्लेख हुआ है जिसमें अपने पति को स्थान न देने के कारण पार्वती ने अपमानित होकर अपने जीवन का अन्त कर डाला, इस घटना का ज्यों का त्यों वर्णन ` मानस ` में मिलता है ।

` मानस ` के बालकाण्ड में तुलसीदास ने लिखा है :-

जद्यपि जग दारुन दुख नाना ।
सबते कठिन जाति अपमाना [१]

भागवत् में लिखा गया है ।

` संभावितस्य स्वजनात् पराभवो यदासस्वो
मरणाय कल्पते । [२]

१- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी
बालकाण्ड,पृष्ठ-१४२

२- श्रीमद्भागवत महापुराणम् - महर्षि वेदव्यास प्रणीत
(सरल हिन्दी व्याख्या सहित)
प्रकाशक- गीताप्रेस, गोरखपुर
प्रथमखण्ड,पंचम संस्करण,पृष्ठ-३५२ संवत् २०२१
चतुर्थ स्कन्ध

भागवत् में इस प्रसंग से संबन्धित अन्य सूक्ति है -

त्वयोदितं शोभनमेव शोभते अनाहूता अप्यभियान्ति बांधवाः ।
ते यद्यनुत्पादितदोषदृष्ट्यो बलीयसा नात्म्यमदेन मन्युना ।
यदि व्रजिष्यस्यतिहाय मद्वचो भद्रं न ततो भविष्यति । [1]

इन पंक्तियों से समानता रखनेवाली मानस में पंक्तियां देखना है :-

जदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा ।
जाइअ बिनु बोलेहुं न संदेहा ।।
तदपि बिरोध मान जहं कोई ।
तहां गए कल्यानु न होई ।।[2]

दूसरों की भलाई केलिए अपने आपको न्योछावर कर देनेवाले कामदेव की उक्ति दोनों ग्रन्थों में समानता रखती है ।

भागवत्

प्राणैः स्वप्राणिनः पान्ति साधवः क्षणभंगुरैः ।
बद्धः कृपयतो भद्रे सर्वात्मा प्रीयते हरिः ।।[3]

१- श्रीमद्भागवत महापुराणम् - सरल हिन्दी व्याख्या सहितम्
पृष्ठ-३८२, अध्याय -३ प्रथम खण्ड, श्लोक-१६

२- रामचरितमानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४०
विजयानन्द त्रिपाठी

३- भागवत् - श्रीमद्भागवत महापुराणम्- हिन्दी व्याख्या सहितम्
पृष्ठ

मनुष्य शरीर को संसार सागर पार करने का साधन बताया गया है ।

भागवत् :

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्प गुरु कर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नमस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ।।[१]

मानस :

करन धार सद्गुर दृढ़ नावा । दुर्लभ साज सुलभ करिपावा ।।
जो न तर भव सागर नर समाज अस पाय ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाय ।।[२]

कलियुग से मुक्ति मिलने का एकमात्र मार्ग राम-नाम कीर्तन है । इससे संबन्धित उक्तियां दोनों ग्रन्थों में समान रूप से मिलती हैं ।

भागवत्:

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखै :
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात ।। [३]

मानस:

कृत युग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग ।।[४]

१- श्रीमद्भागवत महापुराणम- महर्षिवेदव्यास प्रणीतं (गोरखपुर) सरल हिन्दी व्याख्या सहितम्-गीताप्रेस-पृष्ठ-८३०,द्वितीय खंड,श्लोक-१७

२- रामचरितमानस- उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८२,विजयानन्द त्रिपाठी

३- श्रीमद्भागवत महापुराणम् - महर्षि वेदव्यास प्रणीत सरल हिन्दी व्याख्या सहितम् -द्वितीयखंड-पृष्ठ-६२० श्लोक-५२,अध्याय-४

४- रामचरित मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२७७,विजयानन्द त्रिपाठी

यों स्पष्ट है कि रामचरित मानस की अनेक सूक्तियों का स्रोत श्रीमद्भागवत् है । डा० विद्यामिश्र ने इस संबंध में लिखा है :-

तुलसीदास बहुश्रुत भावग्राहक थे, जिन्होंने अपनी प्रतिभा एवं शब्द कौशल के सुवर्ण सुगंधि -संयोग द्वारा गीर्वाण वाणी के विश्व विश्रुत ग्रन्थ श्री श्रीमद्भागवत् के अनेक स्थलों से सार संचय कर मानस को मधुवेष्टित कर दिया है । [1]

<u>अध्यात्म- रामायण - ' मानस ' :</u>

अध्यात्म रामायण से ' मानस ' विशेष प्रभावित है । अध्यात्म रामायण में उमा-महेश्वर संवाद के रूप में रामचन्द्रजी का जीवन चरित चित्रित किया गया है, इसी प्रकार ' मानस ' में भी उमा-महेश्वर संवाद मिलता है। रामकथा का संक्षिप्त वर्णन इन दोनों ग्रन्थों में मिलता है । दोनों ग्रन्थों के नाम- महिमा-प्रसंग,मानस-सर प्रसंग, और काक-भुशुण्डि-गरुड-संवाद में संक्षेप शैली का प्रयोग मिलता है ।' अध्यात्म रामायण और मानस इन दोनों ग्रन्थों के कुछ प्रसंग आपस में मेल खाते हैं ।

' मानस की रामकथा ' नामक ग्रन्थ के लेखक परशुराम चतुर्वेदीजी के मत में ' मानस ' में ' अध्यात्म रामायण ' की वर्णन-शैली का ही अनुकरण हुआ है । आध्यात्म रामायण से मेल खाने वाले कुछ प्रसंग ये हैं - रामेश्वर- महात्म्य, रावण-मंदोदरी -संवाद, लक्ष्मण-मेघनाद-युद्ध वर्णन, मेघनाद -वध,कुंभकर्ण का युद्ध-वर्णन आदि ।

१- वाल्मीकि रामायण एवं रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन
डा० विद्यामिश्र,पृष्ठ-२०

भगवद्गीता :

हिन्दू-धर्म की एक लोकोत्तर कृति ' भगवद्गीता ' में रत्नों के समान जो जो सूक्तियां शोभित हैं, उनका खूब प्रभाव ' मानसकार ' पर पड़ा है और उन्होंने उन रत्न-सदृश सूक्तियों को ' मानस ' रूपी माला में गूंथ दिया है ।

' गीता ' में भगवान कृष्ण के मुंह से यह बात कहलवायी है कि धर्म की अवनति होने पर भगवान स्वयं अवतरित होते हैं और भक्तों के सारे दु:खों को दूर कर देते हैं ।

' यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थान मधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ।।[१]

मानस

जब जब होइ धरम कै हानी । बाढहिं असुर अधम अभिमानी ।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी । सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा । हरहिं कृपानिधि सज्जन
पीरा ।।[२]

१- श्रीमद्भागवतगीता और विष्णु सहस्रनाम-गीताप्रेस-गोरखपुर
छप्पनवां संस्करण - संवत -२०२७ ,पृष्ठ-३२,अध्याय-४,श्लोक-७

२- रामचरित मानस-पं० विजयानन्द त्रिपाठी-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२८

फिर ' गीता ' में ' अपयश ' से संबन्धित एक सूक्ति मिलती है । अपयश की प्राप्ति मृत्यु से भी बढ़कर है ।

संभावितस्य चाकीर्ति मरिणादतिरिच्यते ।[१]

मानस में उपर्युक्त पंक्ति से साम्य रखनेवाली पंक्ति देख सकते है ।

' संभावित कहुं अपजस लाहू । मरन कोटि सम दारुन दाहू ।।[२]

भगवान के समदर्शित्व से संबन्धित उक्तियां दोनों ग्रन्थों में समान रूप से मिलती हैं ।

गीता

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभु : [३]

गोस्वामीजी ने भक्त की महिमा के उल्लेख के साथ साथ भगवान के अनुग्रह प्राप्ति की महत्ता की भी घोषणा की है ।

' यद्यपि सम नहिं राग न रोषू । गहहिं न पाप पुन्य गुन दोषू ।
करम प्रधान बिस्व करि राखा । जो जस करइ सो तस फलु चाखा ।।
तदपि करहिं सम बिषम बिहारा । भगत अभगत हृदय अनुसारा ।।[४]

१- श्रीमद्भागवतगीता और विष्णु सहस्रनाम- मोतीलाल जालान, गीताप्रेस गोरखपुर, अध्याय-२, श्लोक-३४ , पृष्ठ-२०

२- रामचरित मानस -विजयानन्द त्रिपाठी, अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१४२

३- मद्भागवतगीता और विष्णु सहस्रनाम-मोतीलाल जालान, गीताप्रेस गोरखपुर, श्लोक-१४ अध्याय-५ पृष्ठ-३६

४- रामचरित मानस-विजयानन्द त्रिपाठी-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३१५-३१६

हनुमन्नाटक - मानस

गोस्वामी तुलसीदास ' हनुमन्नाटक ' से भी प्रभावित है। ' मानस ' के कुछ प्रसंगों पर हनुमन्नाटक की झांकी मिलती है। रामचन्द्रजी के प्रताप का वर्णन इन दोनों ग्रन्थों में साम्य रखता है।

हनुमन्नाटक

नैते ग्रावगुणा न वारिधिगुणा नो वानराणां गुण : ।
श्रीमद्दाशरथे : प्रतापमहिमारम्भ: समुज्जृम्भते ।। [१]

मानस

श्री रघुबीर प्रताप तें सिन्धु तरे पाषान ।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाइ प्रभु आन ।। [२]

हनुमन्नाटक ,प्रसन्न राघव इन दोनों ग्रन्थों के अतिरिक्त और भी अनेक संस्कृत ग्रन्थों से सूक्ति का स्रोत मिल जाता है।

जिन सूक्तियों का स्रोत हमें मिल गया है उन सूक्तियों को अकाराधि क्रम से आगे रखा गया है।

१- हनुमन्नाटक - हनुमान , पृष्ठ-
प्रकाशक- चौखम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस
प्रथम संस्करण, वि०संवत्-२०२४
२- रामचरित मानस ,पृष्ठ-
विजयानन्द त्रिपाठी

मा न स

(१) पृष्ठ-२८, किष्किन्धाकांड रामचरितमानस (विजयानन्द त्रिपाठी)
(टीकाकार)

आगे कह मृदु बचन बनाई
पाछे अनहित मन कुटिलाई ।।
जाकर चित अहि गति सम भाई ।
अस कुमित्र परिहरे भलाई ।।

चाणक्यनीति

परोक्षे कार्यं हन्तारं ।
प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।।
वर्जयेत् तादृशं मित्रं
विष कुम्भं पयोमुखम् ।।

कुसमित्र

मन में कुटिलता रखकर बाहर उसे न दिखाकर मीठी मीठी बातें करनेवाला मित्र कभी विश्वास रखने योग्य नहीं है । उस पर कभी भरोसा नहीं रखा जा सकता ।

(२) रामचरित मानस - किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३० (विजयानन्द त्रिपाठी)
(टीकाकार)

उमा दारु जोषित की नांई ।
सबहिं नचावत रामु गोसाईं ।।

भगवद्गीता

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशे र्जुन तिष्ठति
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया ।।

राम की महिमा

भगवान राम सभी लोगों को अपनी इच्छा के अनुसार नचानेवाले है।

(३) रामचरित मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१३८,विजयानन्द त्रिपाठी,टीकाकार

एहि जग जामिनि जागहिं जोगी।
परमारथी प्रपंच वियोगी।।

गीता

या निशा सर्वभूतानां
तस्यां जागर्ति संयमी।

योगी का महत्व :

इस संसाररूपी रात में केवल योगी ही जागते रहते हैं।

(४) रामचरित मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६३, टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

कलिमल शमन दमन मन राम सुजस सुखमूला।
सादर सुनहिं जे तिन्ह पर राम रहहिं अनुकूला।।

भागवत्

अतो नृलोके ननुनास्ति किंचिच्चित्तस्य शौचाय कलौ पवित्रम्।
अघौघ विध्वंसकरं तथैव कथा समानं भुविनास्ति चान्यत्।।

रामयश का महत्व

राम का यश सुनने पर सारे कलिमल नष्ट हो जाते हैं, मन का दमन भी होता है। राम का चरित आदर से सुनने पर वे हमारे हितानुवर्ती हो जाते है।

(५) कलियुग सम युग आन नहिं
जो नर कर बिस्वास ।
गाइ राम गुन गुन बिमल
भव तरु बिनहिं प्रयास ।।

रामचरित मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०७६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

श्रीमद्भागवत्

कलेर्दोष निधे राजन्नस्तिह्यये को महान् गुण:
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंग: परं ब्रजेत् ।।

राम - नाम जप का महत्व

कलियुग में राम के पवित्र नाम का भजन करने पर मनुष्य भव सागर आसानी से तर सकते हैं ।

(६) काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के साथ ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३६

गीता

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मन :
काम क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ।।

राम-भजन महिमा

विषय वासनाओं के जाल में न पडकर भगवान् राम के भजन में लीन हो जाना चाहिए ।

(७) कादर मन कहुं एकु अधारा ।
दैव दैव आलसी पुकारा ।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१६२
विजयानन्द त्रिपाठी

पंचतंत्र

उद्यमेन विना राजन्
न सिद्ध्यान्ति मनोरथा :
कातरा इति जल्पन्ति
यम्दाव्यं तद्भविष्यति

कायरों का स्वभाव

कायर तो कुछ कर्म नहीं करता, वह केवल ईश्वर का नाम पुकारता रहता है ।

(८) कृत युग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७७
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

भागवत्

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायं यजतो मखै : ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरि कीर्तनात् ।।

राम नाम महिमा:

कलियुग की कुटिलताओं से बचने का एकमात्र मार्ग राम नाम का जप करना है । सत्य, त्रेता ,द्वापर इन तीनों युगों में सत्कर्म करने पर जो सद्गति मिलती है वह केवल नाम स्मरण से प्राप्त होती है ।

(६) गिरिजा जासु नाम जपि मुनि काटहिं भव पास ।
सो कि बंध तर आवइ व्यापक बिस्व निवास ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३२७

विजयानन्द त्रिपाठी

भागवत्

यत् पाद पंकज परागनिषेवतृप्ता
योग प्रभाव विधुता खिल कर्मबंधा :
स्वैरं चरन्ति मुनयो पि ननह्यमाना -
स्तस्यैच्छयात्तवपुष: कुत एव बन्ध: ।।

राम नाम का महत्व

भगवान के पवित्र नाम का जप करने से मनुष्य सारे सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं ।

(१०) गूढ़ौ तत्व न साधु दुरावहिं ।
आरत अधिकारी जहं पावहिं ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०६

अध्यात्म रामायण

गोप्यं यदत्यन्त मनन्य वाच्यं,
वदन्ति भक्तेषु महानुभावा : ।।

साधु लोगों का स्वभाव

आर्त अधिकारी हो जाने पर साधु लोग गुप्त बात को छिपाने में असमर्थ हो जाते हैं ।

(११) चले हर्ष तजि नगर नृप
तापस बनिक भिखारी ।

जिमि हरि भक्ती पाइ जन
तजहिं आश्रमी चारि ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-४२

श्रीमद्भागवत्

वणिङ्मुनिनृपस्नाता
निर्गम्यार्थान् प्रपेदिरे
वर्षरुद्धायथा सिद्धा
स्वपिण्डान् काल आगते ।।

भक्ति की महिमा :

भक्ति की प्राप्ति से सभी थकावट की उपेक्षा करके काम में लग जाते हैं ।

(१२) क्षुद्र नदी भरि चली तोराई ।
जस थोरेहु धन खल इतराई ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-३५

विष्णुपुराण

उन्मार्गगामीनि
निम्नगाम्भांसि सर्वत :
मनांसि दुर्विनीतानां
प्राप्य लक्ष्मी नवामिव ।।

दुष्टों का स्वभाव

थोड़े धन की प्राप्ति से खल अत्यधिक घमण्डी होकर चलते हैं । और सब कुछ भूल बैठते हैं ।

UNIVERSITY

(१३) जड चेतन गुनदोषमय विश्व कीन्ह करतार

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१

प्रसन्न राघव

मधुरा विधुरमिश्रा सृष्टयो हा विधातुः ।

विधाता का स्वभाव

विधाता ने तो संसार में गुण और दोषयुक्त वस्तुओं की रचना की है ।

(१४) जदपि मित्र प्रभु पितु गुर गेहा ।
जाइअ बिनु बोलेहुं न संदेहा ।।
तदपि बिरोध मान जहं कोई ।
तहां गएं कल्यानु न होई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४०

भागवत्

त्वयोदितं शोभनमेव शोभते
अनाहुता अप्यभियान्ति बांधवा ।
ते यद्यनुत्पादित दोष दृष्टयो
मद्‌क्षो मद्रं भवत्या न ततो भविष्यति ।।

विरोध की बात

मित्र,प्रभु,पिता और गुरु के घर बिना बुलाए जाने पर भी कोई आपत्ति नहीं, वह उचित भी है । लेकिन जहां विरोध रहता है वहां जाना उचित नहीं ।

(१५) जद्यपि जग दारुन दुख नाना ।
सबते कठिन जाति अपमाना ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४१

भागवत्

संभावितस्य स्वजनात् परामवो
यदासद्यो मरणाय कल्पते ।।

अपमान का दु:ख

स्वजाति से अपमानित होने के समान इतना दु:सह दु:ख दूसरा कोई नहीं जगत में अनेक दु:खों के होते हुए भी यह दु:ख ही कठिन दु:ख है ।

(१६) जब जब होइ धर्म कै हानी ।
बाढहिं असुर अधम अभिमानी ।।
तब तब हरि धरि विविध सरीरा ।
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२८

भगवद्गीता

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानि र्भवति भारत
अभ्युत्थान मधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ।।

भगवान के अवतार का महत्व

जब दुनिया में सब कहीं अधर्म फैल जाता है तब भगवान भक्तों की रक्षा केलिए, अधर्म का विनाश कर धर्म की स्थापना केलिए नाना रूप धारण कर अवतरित हो जाते हैं ।

(१७) जापर नाथ करहु तुम दाया ।
ताहि सदा शुभ कुशल निरंतर ।।
मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१२२

भागवत्

यस्य प्रसन्नो भगवान् गुणमैत्र्यादिभिर्हरि :
तस्मै नमन्ति भूतानि निम्नपाम इव स्वयम् ।।

राम की महिमा

राम जिस पर दया की वर्षा करते है वे हमेशा सुखी और सन्तुष्ट रहते है ।

(१८) जीवनमुक्त महामुनि जेऊ । हरि गुन सुनहिं निरंतर तेऊ ।
भवसागर चह पार जो पावा । विषइन्ह कह पुनि हरि गुनग्रामा।।
श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा ।
ते जड़ जीवनिजात्मक घाती ।
जिन्हहि न रघुपति कथा सोहाती ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६५-६६

भागवत्

निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद् भवौषधाच्छ्रोत्र मनोभिरामात् ।
क उत्तमश्लोक गुणानुवादात्पुमान्
विरज्येत बिना पशुघ्नात् ।।

रामकथा का महत्व

रामकथा रूपी नाव के सहारे ही मनुष्य संसार सागर आसानी से पार किया जा सकता है । दूसरा कोई उपाय नहीं है । विषयवासना में लिप्त मनुष्य भी हरि के गुणगान सुनने पर अत्यधिक सन्तुष्ट हो जाता है ।

(१६) जे असि भगति जानि परिहरहीं ।
केवल ज्ञान हेतु श्रम करहीं ।
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी ।
खोजत आकु फिरहिं पय लागी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२०६

प्राचीन श्लोक

ये राम भक्ति ममलां सुविहाय रम्यां
ज्ञाने रता: प्रतिदिन परिक्लिष्ट मार्गे ।
आरान्महेन्द्र सुरभीं परिहृत्य मुर्खा:
अर्कं भजन्ति सुमगा सुख दुग्ध हेतुम् ।।

ज्ञान से अधिक भक्ति का महत्व

भक्ति की उपेक्षा कर ज्ञान को बढ़ाने का परिश्रम जो आदमी करता है वह मूर्ख होता है ।

(२०) जो गुरु चरन रेनु सिर धरहीं ।
ते जनु सकल विभव बस करहीं ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-७

वसिष्ठ रामायण

ये धारयन्ति गुरुपाद रज: स्वशीर्षे
ते कौ विभूतिमखिलां वशयन्ति नूनम् ।।

गुरु की महिमा

जो गुरु को अत्यधिक आदर की दृष्टि से देखते है, और उनकी वन्दना करते हैं वे सारे ऐश्वर्य के अधिकारी हो जाते है ।

(२१) जे न मित्र दुख होहिं दुखारी ।
तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१७

गालव-संहिता

मित्रस्य दुःखेन जना दुःखिता नो भवन्ति ये ।
तेषां दर्शन मात्रेण पातकं बहुलं भवेत् ।।

बुरा मित्र

मित्र के दुःख से दुःखी होनेवाला ही सच्चा मित्र है । मित्र के दुःख से दुःखी न होनेवाले मनुष्यों को देखना भी महान पाप है ।

(२२) जो आपन चाहइ कल्याना । सुजस सुमति सुभगति सुख नाना ।
सो परनारि लिलार गोसाईं । तजउ चउथि के चन्द की नाईं ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३८

प्रसन्न राघव

उदर्क भूति मिच्छद्भिः सद्भिः खलु न दृश्यते ।
चतुर्थी चन्द्रलेखेव परस्त्री भालपट्टिका ।।

स्वार्थ की हेयता

स्वार्थी मनुष्य कलंकी होता है ।

(२३) जेहि तनु धरी तजौं मुनि अनायास हरिजान ।
जिमि नूतन पट पहिरै , नर परिहरै पुरान ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६२

गीता

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरो पराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा
न्यन्यानि संयाति नवानि देही ।।

आत्मा अमर है

मनुष्य की मृत्यु के बाद उसकी आत्मा दूसरे शरीर को ग्रहण करती है ।

(२४) जो नहिं करै राम गुन गाना ।
जीह सो दादुर जीह समाना ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१४

भागवत्

जिह्वासती दादुरिकेव सूत न
चोपगायत्युरु गायगाथा:

राम-गुण गान न करनेवाला मूर्ख है

राम के गुणों का गान न करनेवाले आदमी की जीभ दादुर के समान हो जाती है ।

(२५) ढोल गंवार सूद्र पसु नारी ।
सकल ताड़ना के अधिकारी ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१७४

गर्गसंहिता

दुर्जना: शिल्पिनो दासा ।

दुष्टश्च पटहा: स्त्रिय : ।
ताडिता मार्दवं यान्ति ।
न ते सत्कार भाजनम् ।।

कौन दण्डनीय है

ढोल, गंवार ,पशु और नारी ये चारों दण्ड के अधिकारी हैं ।

(२६) तप बल रचै प्रपंचु विधाता ।
तप बल विस्नु सकल जग त्राता ।
तप बल सेंभु करहिं संघारा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४

श्री मद्भागवत्

सृजामि तपसैवेदं ग्रसामि तपसा पुन:
बिभर्मि तपसा विश्वं वीर्यं मे दुश्चरन्तप: ।।

तपस्या की महिमा

तप की शक्ति अमोघ है । तपस्या से ही सृष्टि ,स्थिति और संहार का क्रम चलता रहता है ।

(२७) दादुर धुनि चहुं ओर सुहाई ।
बेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३७

श्रीमद्भागवत्

श्रुत्वा पर्जन्यनिनदं
मण्डूका व्यसृजन् गिरा : ।

तूष्णीं शयाना: प्राग्यद्वद्
ब्राह्मण नियमात्यते ।।

ब्राह्मणों के बारे में

ब्राह्मण लोग वेद और मंत्र का जप किया करते हैं ।

(२८) दामिनि दमक रही घन माहीं ।
खल की प्रीति जथा थिर नाहीं ।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३४

श्रीमद्भागवत्

लोक बन्धुषु मेघेषु
विद्युतश्चलसौहृदा :
स्थैर्यं न चक्रु : कामिन्य :
पुरुषेषु गुणिष्विव ।

दुष्टों का स्वभाव

दुष्ट लोगों की प्रीति अडिग नहीं रहती । घन में बिजली की चमक स्थिर नहीं रहती । उसी प्रकार उनकी प्रीति भी अस्थिर है ।

(२९) धीरज धरम मित्र अरु नारी ।
आपतकाल परखिअहि चारी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८८

मातृका विलास

जानीयात्संगरे भृत्यान् ।
बांधवान् व्यसनागमे ।
मायां दारिद्रेषु विवेका ।
युद्धे शूरं धने शुचिम् ।।

विपधिकाल में किन किन वस्तुओं की परीक्षा करनी है :

धैर्य, धर्म, मित्र और स्त्री इन चारों की परीक्षा आपधि के सम्य की जा सकती है।

(३०) नरतनु भव वारिधि कहुं बेरो।
सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो।
करन धार सद्गुरु दृढ़ नावा।
दुर्लभ साजु सुलभ करि पावा।।
जो न तरै भव सागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृतनिंदक मंदमति आत्मा हन गति जाय।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८२

श्रीमद्भागवत्

नृदेहमाद्यं सुदुर्लभं प्लवं
सुकल्पं गुरुकर्णधारम्।
मयानुकूलेन नमस्वतेरितं।
पुमान्भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा।।

मूर्खव्यक्ति

संसार सागर पार करने का एकमात्र साधन मनुष्य शरीर है। मनुष्य शरीर पाने पर भी जो भव-सागर के तरने में असमर्थ होता है वही सच्चा मूर्ख है।

(३१) निज कवित्त केहि लाग न नीका।
सरस होउ अथवा अति फीका।
जे पर भनित सुनत हरखाहीं।
ते वर पुरुष बहुत जग नाहीं।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

प्रसन्नराघव

अपि मुदमुपयान्ती वाग्विलासै : स्वकीयै :
परिभणितिषु तोषं यान्ति सन्त: कियन्त:

अपनी कविता का महत्व

अपनी कविता बुरी होने पर भी कौन उसे पसन्द नहीं करेगा ।

(३२) निसि तम घन खद्योत बिराजा ।
जिमि दंभिन कर मिला समाजा ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३७

श्रीमदभागवत्

निशामुखेषु खद्योता
स्तमसा भान्ति न ग्रहा :
यथा पापेन पाखण्डा
नहि वेदा: कलौ युगे ।।

दंभियों का स्वभाव

दंभियों से लोग धोखे में पड़ जाते हैं|वे दूसरों को धोखे के जाल में फंसाते हैं ।

(३३) नीति बिरोध न मारिय दूता ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-११३

चंपूरामायण

दूतो न वध्य इति शास्त्र गिरा स्मरोध ।
दूत को मारना नीति के विरुद्ध की बात है ।

(३४) नैहर जनमु भरब बरु जाई ।
जियत न करबि सवति सेवकाई ।
अरि बस दैउ जियावत जाही ।
मरनु नीक तेहि जीवन चाही ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३४

अध्यात्म रामायण

ततोऽपि मरणं श्रेयो
सत्सपत्न्याः पराभव :

गुलामी दु:ख देनेवाली है

स्वाधीनता के पक्षपाती गोस्वामीजी गुलामी बिलकुल पसन्द नहीं करते । दूसरों की अधीनता में जीने से भला मरना है ।

(३५) पंडित सोइ जो गाल बजावा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६७

श्रीमद्भागवत्

पाण्डित्ये चापलं वच:

कलयुगीन रीति:

कलियुग में वही व्यक्ति पण्डित है जो लंबी लंबी बातें करता है ।

(३६) परहित लागि तजै जो देही । संतत संत प्रसंसहिं तेही ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६६

श्रीमद्भागवत्

प्राणै: स्वप्राणिन: पान्ति साधव: दाण भंगुरै :
पुंस: कृप्यतो मह्रु सर्वत्मा प्रीयते हरि :

परहित का महत्व

परोपकार को ` परमधर्म ` बतलाया गया है। दूसरों के हित केलिए जो देह की भी उपेक्षा कर डालता है वही आदर पाने योग्य व्यक्ति है।

(३६) बिनु घन निर्मल सोह अकासा ।
हरिजन इव परिहरि सब आसा ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४२

श्रीमद्भागवत्

अमशोमित निर्मेघ शरद्विमलतरकम्
सत्वयुक्तं यथा चित्तं शब्द ब्रह्मार्थ दर्शनम् ।।

हरिजन का महत्व

हरिजन अर्थात् भक्त के मन में किसी के प्रति मोह नहीं रहता, वे विरागी होते है।

(४०) बिनु पद चलै सुनै बिनु काना ।
कर बिनु करम करै विधि नाना
आनन रहित सकल रस भोगी ।
बिनु बानी वक्ता बड़ जोगी ।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा ।
ग्रहइ घ्रान बिनु बास असेषा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२३

कठवल्ली :

अपाणि पादो अवनो ग्रहीता ।
पश्यत्यचक्षु:स श्रृणोत्यकर्ण :
यो वेत्ति सर्वं न हि तस्य वेत्ता ।
तमाहुराग्र्यं पुरुषं पुराणाम् ।।

भगवान की महिमा

भगवान की महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता

(४१) बिनु श्रम नारि परम गति लहई ।
पतिव्रत धर्म छांडि छल गहई ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६०

पराशर संहिता

न व्रतेनोपवासैश्च धर्मेण विधिधैन च ।
नारी स्वर्गमवाप्नोति केवलं पति पूजनात् ।।

नारी का धर्म

कपटता छोडकर अत्यन्त पूज्य भाव से पति की सेवा करनेवाली नारी अनायास ही सद्गति प्राप्त करती है ।

(४२) बुन्द अघात सहहिं गिरि कैसे ।
खल के वचन संत सह जैसे ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३५

श्रीमद्भागवत

गिरयो वर्ष धाराभि:
हन्यमाना न विव्यथु :

अभिभूयमाना व्यसने
यथा धौताश चेलस :

खल और सन्त की तुलना

खलों के बुरे वचनों को सहने की शक्ति सन्तों में होती है। और किसी में इसकी सामर्थ्य नहीं है। सन्त इन वचनों को खुशी से सहते है।

(४३) ब्रह्म ज्ञान बिनु नारि नर, करहि न दूसरि बात।
कौड़ी लागि मोह बस, करहिं विप्र गुरु घात।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७०

श्रीमदभागवत्

कली काकिणिके प्यर्थ
विगृह्य त्यक्त सौहृदा:
त्यक्ष्यन्ति च प्रियाने प्राणान्।
हनिष्यन्ति स्वकानपि

कलियुगीन बुराई

कलियुग के स्त्री-और पुरुष एक विचित्र प्रकार के ब्रह्मज्ञानी हैं। वे पैसे के मोह में पड़कर ब्राह्मण और गुरु की हत्या करते है।

(४४) भूप सहस्र दस एकहि वारा। लगे उठावन टरै न टारा।
डगै न संभु सरासन कैसे। कामी वचन सती मन जैसे।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४२१

प्रसन्न राघव

बाणस्य बाहुशिखरै : परिपीड्यमानं
नैवं कनुस्खलति किंचिदपीन्दु मौले :
कामातुरस्य वचसामिव संविधानै
रभ्यर्थितं प्रकृति चारु मन: सतीनाम् ।।

सती नारी का महत्व

कामियों के वचन पर कभी विश्वास नहीं रखा जा सकता । कामी पुरुष के वचन से पतिव्रता नारी का मन विचलित नहीं होता ।

(४५) भ्राता पिता पुत्र उरगारी
पुरुष मनोहर निरखत नारी ।।
होइ विकल सक मनहिं न रोकी ।
जिमि रविमनि द्रव रविहि बिलोकी ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५३६

हितोपदेश

सुवेषं पुरुषं दृष्ट्वा
भ्रातरं यदि वा सुतम्
योनि: क्लिद्यति नारीणां
सत्यं सत्यं हि नारद ।।

कुटिल नारी

सुन्दर पुरुष को देखने पर नारी का मन उस ओर जल्दी आकृष्ट हो जाता है चाहे वह भाई हो, पिता हो, पुत्र हो, कोई भी हो ।

(४६) मातु पिता भ्राता हितकारी ।
मित प्रद सब सुनु राजकुमारी ।
अमितदानि भर्ता बैदेही
अधम सो नारि जो सेव न तेही ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८८

शिवपुराण

मितं ददाति हि पिता
मितं भ्राता मितं सुत:
अमितस्य तु दातारं
भर्तारं या न सेवते ।।

अधम नारी

माता,पिता,भाई आदि सभी हमारा हित करनेवाले होने पर भी पति के समान असीम देनेवाला कोई भी नहीं । ऐसे पति की सेवा न करनेवाली नारी अधम से अधम है ।

(४७) मिथ्यारंभ दंभ रत जोई । ताकहुं संत कहइ सबकोई ।
सोइ सयान जो परधन हारी । कलियुग सोइ गुनवंत बखाना ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६७-१६८

श्रीमद्भागवत्

अनाढ्यतैवा साधुत्वे
साधुत्वे दंभ इव ।
वित्तमेव कलौ नृणां ।।
जन्माचार गुणोदय:

कलियुग की बुरी रीति

कलियुग की रीति अनोखी है । जो व्यक्ति आरंभ से ही झूठ को अपना लक्ष्य मानता है, जो व्यक्ति दंभ में लीन रहता है, जो धन का अपहरण करता है, कलियुग में वही व्यक्ति पूज्य होता है ।

(४८) मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर ।
जहं बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न ।।

मानस- किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-२

ब्रह्म रामायण

काशी मुक्ति की भूमि है, ज्ञान की खानि है, और पाप का नाश करनेवाली पवित्र भूमि है । उस काशी की सेवा करना पुण्य है ।

(४९) यद्यपि सम नहिं राग न रोषू ।
गहहिं न पाप पूंनु गुन दोषू ।।
करम प्रधान विस्व करि राखा ।
जो जस करइ सो तस फल चाखा ।।
तदपि करहिं सम बिषम विहारा ।
भगत अभगत हृदय अनुसारा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३१५-३१६
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

भगवदगीता

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभु :

भगवान का समदर्शित्व

भगवान को न राग है, न क्रोध है, लेकिन भक्त और अभक्त के हृदय के अनुसार वे सम और विषम विहार करते हैं ।

(५०) रस रस सोख सरिता सर पानी ।
ममता त्याग करहिं जिमि ज्ञानी ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४२

श्रीमद्भागवत्

शनैः शनैर्जहुः पंक
स्थलान्यामं च विरुध : ।
यथाहं ममता धीराः
शरीरादिष्वनात्मसु ।।

ज्ञानी

ज्ञानी धीरे ममता की उपेक्षा करते हैं । नदी या तालाब में जल का सर्वथा अभाव नहीं होता, इसी प्रकार ज्ञानी में भी सर्वथा ममता का अभाव नहीं रहता ।

(५१) रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअ न छोट करि ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५५३

श्री मद्भागवत्

यथा मयो ऽहमुपेक्षिता
नृभिर्निशक्यते रूढपदश्चिकित्सतम् ।।
यथेन्द्रियग्राम उपेक्षितस्तथा
रिपुर्महान बद्धबलो न चाल्यते ।।

किन किन वस्तुओं को बड़ा मानना चाहिए

शत्रु, रोग, अग्नि, पाप, मालिक और सर्प को छोटा नहीं समझना है।

(५२) लछिमन देखु मोर गन, नाचत वारिद पेखि।
गृही विरति रत हरष जस विष्णु भगत कहुं देखि।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३४

श्रीमद्भागवत्

मेघा गमोत्सवा हृष्टा : प्रत्यनन्दन् शिखंडिन :
गृहेषु तप्ता निर्विण्णा यथा च्युत जनागम् ।।

विरागी

विरागी गृहस्थ विष्णु भक्त के दर्शन मात्र से अत्यधिक आनन्दित हो उठता है।

(५३) विनय न मानत खगेस सुनु।
डाटहिं पइ नवैनीच ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१७४
विज्ञानन्द त्रिपाठी

कुमारसंभव

शाम्येत्प्रत्युपकारेण नोपकारेण दुर्जन :

दुर्जनों का स्वभाव

दुर्जनों का स्वभाव-नीच आदमी विनय से नहीं झुकता ,डांटने से ही झुकता है।

(५४) वृद्ध रोग बस जड़ धनहीना ।
अंध बधिर क्रोधी अति दीना ।
ऐसेहु पति कर किए अपमाना ।
नारि पाव जमपुर दुख नाना ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८८

श्रीमद्भागवत

दु:शीलो दुर्भगो वृद्धो जड़ो
रोग्य धनो पि वा ।
पति स्त्रीभिर्न हातव्यो ।
लोकेप्सुभिरपातकी ।।

पतिव्रता नारी का धर्म

पति चाहे बूढ़ा हो, रोगी हो, मूर्ख हो, दरिद्र हो, जो कुछ भी हो, तो भी पत्नी को उनका अपमान कभी नहीं करना चाहिए । पति के चरणों के प्रति प्रेम रखना पतिव्रता पत्नी का कर्तव्य है । जो ऐसा नहीं रकती, उसे अवश्य दु:ख सहना पड़ता है ।

(५५) शास्त्र सुचिन्तित पुनि पुनि देखिय ।
भूप सुसेवित पुनि पुनि लेखिय ।।
राखिय नारि जदपि उर मांहीं ।
जुबती शास्त्र नृपति बस नांही ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८८

शुक्रनीति

शास्त्रं सुचिन्तितमथोपरिचिन्तनीय
माराधितो पि नृपति: परिशंकनीय : ।

कोऽहं कृतापि युवती परिरक्षणीया
शास्त्रे नृपे च युवती न कृती वशित्वम् ।।

युवती ,शास्त्र और राजा को वश में नहीं रख सकते

युवती स्त्री, शास्त्र और राजा किसी के वश में करने का परिश्रम करने पर भी ये वश में नहीं आते ।

(५६) संग ते जती कुमन्त्र ते राजा ।
मान ते ग्यान पान ते लाजा ।।
प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी ।
नासहिं वेगि नीति अस सुनी ।।

मानस-विजयानन्द त्रिपाठी ,पृष्ठ-५५३,अरण्यकाण्ड

सुभाषित त्रिशती

दौर्मन्त्र्यान्नृपति र्विनश्यति मति :
संगात्यती लालनात् ।
पुत्रो नध्ययनात्कुलं कुतनया -
च्छीलं खलोपासनात् ।।

नीति की बात

संगति से सन्यासी,कुमंत्र से राजा, मान से ज्ञान, शराब पीने से लज्जा , बिना ईमानदारी के प्रीति और मद से गुणी आदमी का नाश हो जाता है ।

(५७) संत संग अपवर्ग कर कामी भव कर पंथ ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६६

(५६) संभावित कहुं अपजस लाहू ।
मरन कोटि सम दारुन दाहू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४२

भगवद्गीता

संभावितस्य चाकीर्तिर्मरिणादतिरिच्यते

अपयश का दु:ख

आदर्शवान् पुरुष को अपयश मृत्यु से भी दारुण दु:ख पैदा करता है ।

(६०) सचिव वैद गुर तीन जौं, प्रिय बोलहिं भय आस ।
राज धर्म तन तीनि कर, होइ बेगिही ना स ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३६ ११७

हितोपदेश

वैद्यो गुरुश्च मंत्री च यस्य
राज्ञ: प्रिय: सदा ।
शरीर धर्म कोशेभ्यः क्षिप्रं स परिहीयते ।।

अनर्थ कब होता है

मंत्री वैद्य और गुरु किसी को सन्तुष्ट करने केलिए प्रिय बाते अगर करते हैं तो समझ लेना चाहिए कि कुछ न कुछ अनर्थ अवश्य जरूर होने-वाला है ।

(६१) सम अभूत रिपु बिमद बिरागी ।
लोभामरष हरष भय त्यागी ।।
कोमल चित दीनन्ह पर दाया ।
मन बच क्रम मम भगति अमाया ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७२-७३

श्री मद्भागवत्

संयोग: संसृतेर्हेतुरसात्सु विहितोधिया
स एव साधुषु कृतो नि:संगत्वाय कल्पते ।।

संत और कामी में भेद

विरागी संत लोग मोक्ष का मार्ग दिखा देनेवाले हैं । कामी सांसारिकता में निमग्न व्यक्ति हैं ।

(५८) संत हृदय नवनीत समाना ।
कहा कविन्ह परि कहै न जाना ।।
निज परिताप द्रवै नवनीता ।
पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४२

सुभाषित रत्न भाण्डागारम्

सज्जनस्य हृदयं नवनीतं ।
यद्वदन्ति कवयस्त दलीकम् ।
अन्य देह विलसत्परितापात् ।
सज्जनो द्रवति नो नवनीतम् ।।

संत महिमा

मक्खन अपने ताप से आर्द्र हो जाता है । लेकिन संत दूसरों के दु:ख से द्रवीभूत हो जाते हैं । सन्तों का मन विशाल है ।

श्रीमद्भागवत

तितिक्षव: कारूणिका: सुहृद: सर्वदेहिनाम् ।
अजात शत्रव श्शान्ता: साधव: साधु भूषणा :

सज्जन - महिमा

सज्जन समान भाव रखनेवाले होते हैं, वे मद से रहित होते हैं, बुरे विकारों की उपेक्षा करते हैं, उनका चित्त कोमल है, वे दीनों पर दया करनेवाले हैं ।

(६२) सरिता सर निर्मल जल सोहा ।
संत हृदय जस गत मद मोहा ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४१

श्रीमद्भागवत

शारदानीरजोत्पत्त्या
नीराणि प्रकृतिं ययु ?
भ्रष्टानामिव चेतांसि ।
पुनर्योगनिषेवया ।।

संत महिमा

सन्तों का हृदय मलिनता से रहित होकर सरिता के पवित्र जल के समान शोभित होता है ।

(६३) सरिता जल जलनिधि महुं जाई ।
होहि अचल जिमि जिव हरि पाई ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ट-३५

श्रीमद्भागवत

निश्चलाम्बुर भूत्तूष्णीं समुद्र: शरदागमे ।।

सज्जनों का स्वभाव

जीव ईश्वर को पाकर अचल हो जाता है । सज्जनों में गुण स्वयं आ जाते हैं, वे गंभीर होते हैं ।

(६४) ससि संपन्न सोह महि कैसी ।
उपकारी कइ संपति जैसी ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३७

श्रीमद्भागवत

क्षेत्राणि सस्य संपद्भि: कर्षकाणां मुदं ददु: ।
धनिनामुपतापं च दैवाधीनमजानताम् ।।

परोपकारी

उपकारी की शोभा उसके पास संपत्ति आने से होती है ।

(६५) तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिअ तुला एक अंग ।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत संग ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-७६

श्रीमद्भागवत

तुल्याम लवेनापि न स्वर्गं नापुनर्भवम् ।
भगवत्सङ्गिसङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिष: ।

सत्संगति का महत्व

सत्संगति से मिलनेवाले सुख के समान दूसरा कोई सुख नहीं है। दूसरा कोई सुख इसकी समानता नहीं करता।

(६६) साधु अवज्ञा तुरत भवानी।
कर कल्याण अखिल कै हानी।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-२४५
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

श्रीमद्भागवत्

आयु श्रियं यशो धर्मं लोकानाशिषश्च च,
हन्ति श्रेयांसि सर्वाणि पुंसो महदतिक्रम:।।

साधुमहिमा

श्रेष्ठ पुरुष का तिरस्कार करना अच्छा नहीं। उसका तिरस्कार करने से हानि जरूर होती है।

(६७) सापत ताडत परुष कहंता।
विप्र पूज्य अस गावहिं संता।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८२

श्रीमद्भागवत्

विप्रं कृतागसमपि नैव दुह्यत मामका:
घ्नन्तं बहु शपन्तं वा नमस्कुरुत नित्यश:

ब्राह्मण की महिमा

गुणों से हीन होने पर भी ब्राह्मण आदर पाने के अधिकारी है।

(६८) सुत वित नारि भवन परिवारा ।
होहिं जांहि जग बारहिं बारा ।।
अस विचारि जिय जागहु ताता ।
मिलइ न जगत सहोदर भ्राता ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२६२

रामायणमंजरी

सर्वत्र सुहृद: सन्ति सन्ति संबन्धबान्धवा :
अभिन्नजन्मदेहस्य दुर्लभ: स सहोदर :

भाई का महत्व

पुत्र, धन, स्त्री परिवार आदि संसार में बार बार पैदा होते रहते हैं लेकिन जगत् में सहोदर भाई नहीं मिलता ।

(६६) सुमति कुमति सब के उर रहहीं ।
नाथ पुरान निगम अस कहहीं ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१४२

भोज प्रबन्ध

सर्वस्य हे सुमति कुमती संपादापति हेतू ।

सुमति कुमति में तुलना

सब के हृदय में सुमति और कुमति होता है । सात्विक बुद्धि के उदय से सद्परिणाम होताहै, तामसी बुद्धि का दुष्परिणाम भी निकलता है ।

(७०) सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६०

श्रीमद्भागवत्

न वै शूरा विकात्थन्ते
दर्शयन्त्येव पौरुषम् ।।

वीर का लक्षण

वीर आदमी सिर्फ बातें बकता नहीं, वह कर्म के द्वारा अपनी वीरता अभिव्यक्त कर देता है ।

(७१) सेवक सठ नृप कृपिन कुनारी ।
कपटी मित्र सूल सम चारी ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१८

प्रस्ताव रत्नाकर

अभिधेया भृत्यजना: शठानि
मित्राण्यदायक: स्वामी ।
अविनयवती भार्या
मस्तक शूलानि चत्वारि ।।

जिन लोगों को छोड देना है

राजा ,सेवक,स्त्रीऔर मित्र ये चारों अगर कपटता का साथी रहें तो इन्हें छोड देना ही अच्छा है ।

(७२) सैलकुल धन्य उमा सुनु,
जगत् पूज्य सुपुनीत ।

श्रीरघुबीर परायन,
जेहि नर उपज बिनीत ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४६

पद्म पुराण

कुलं पवित्रं जननी कृतार्थं
वसुन्धरा भागवती चधन्या ।
स्वर्गे स्थितायै पितरो पि धन्या ।
येषां कुले वैष्णवनाम धेयम् ।।

राम के कुल की महिमा

राम के कुल में जो पैदा होता है,उसका जीवन धन्य होता है ।

(७३) स्वारथ सांच जीव कहुं एहा ।
मन क्रम बचन राम पद नेहा ।
सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा ।
जो तनु पाइ भजै रघुबीरा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६४

श्रीमद्भागवत

तदैव सत्यं तदुहैव मंगलं तदुव
पुण्यं भगवद् गुणोदयम् ।
तदैव रम्यं रूचिरम् नवं नवं
तदैव शश्वन्मनसो महोत्सवम् ।।

राम चरणों के प्रति प्रेम

मन,वचन और कर्म से अत्यधिक पवित्र होकर भगवान राम के चरणों से प्रेम रखना चाहिए ।

(७४) हरित भूमि तृन संकुल,
समुझि परहि नहि पंथ,
जिमि पाखंड वाद ते गुप्त होहिं सद्गन्थ ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३६

श्रीमद्भागवत्

जलौधै: निरभिधन्त
सेतवो वर्षतीश्वरे ।
पाखण्डिनामसद् वादै ।
वेदमार्गा: कलौ यथा ।।

पाखण्डियों की निन्दा

यहां पाखंडियों के शास्त्रार्थ की निन्दा की गई है ।

(७५) हरि हर निन्दा सुनै जो काना ।
होइ पाप गोघात समाना ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२४२

श्रीमद्भागवत्

निन्दाम्भगवत: श्रृवंत स्तत्परस्य जनस्यवा
ततो नापैति य: सो ष्यिात्यध: सुकृताच्युत :

भगवान की निन्दा नहीं करना ।

भगवान की निन्दा जो सुनाता है वह महान पापी होता है ।

तुलसी की सूक्तियाँ का साहित्यिक सौष्ठव

सूक्ति में तथ्य - कथन की प्रधानता होती है । किसी एक बात के बारे में बारंबार कहकर प्रभावित करने के बदले, लोगों के मन में जल्दी प्रभाव डालने केलिए विशेष तथ्य सूक्ति के रूप में लिखा जाता है । तथ्य-कथन की प्रधानता होने के कारण सूक्ति में काव्य के अन्य सभी अंग अप्रधान रह जाते हैं । इसी कारण सूक्ति में सरसता की अधिक गुंजाइश नहीं होती ।

कुछ तो काव्य मे अलंकारों की प्रधानता देखकर उसी दृष्टि से काव्य की श्रेष्ठता आंकी जाती है । बिहारी ,मतिराम, घनानन्द आदि कवि तो विविध अलंकारों से काव्य को भर देते थे । उनकी दृष्टि अधिकांश रूप से अलंकारों की ओर जाती थी । वे अलंकारों को काव्य का शोभादायक तत्व मानते हैं ।

लेकिन कबीर, रहीम जैसे कवि काव्य में तथ्य पर बल देते हैं ।

लेकिन तुलसी इन कवियों के बीच खड़े होनेवाले होते है । उनकी सूक्तियों में तथ्य की प्रधानता के साथ साथ काव्य की मनोहारिता भी दृष्टव्य है । कुछ सूक्तियों में एक मामूली सत्य पर बल देकर उसे स्पष्ट करने केलिए एक सुन्दर उदाहरण दिया जाता है ।

मल अनमल निज निज करतूती ।
लहत सुजस अपलोक विभूती ।।
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू ।
गरल अनिल कलिमल सरि व्याधू ।।[१]

१- रामचरित मानस- विजयानन्द त्रिपाठी, बालकाण्ड,पृष्ठ-१६

वे कभी कभी एक विशेष तथ्य पर बल देकर उसकी तुलना सामान्य उदाहरणों के ज़रिये समझा देते है । ~~के करते हैं।~~

आगे हमें तुलसी की समस्त कृतियों पर कुछ विचार करना है । उनकी समस्त कृतियाँ काव्यांगों से सुसज्जित होने के कारण अत्यधिक सुन्दर बन पडी है ।` रामचरित मानस ` , ` कवितावली ` आदि काव्यों में काव्य की हृदयहारिता स्पष्टत: निखर उठी है । विनयपत्रिका की यह पंक्ति देखिए :-

जाके प्रिय न राम वैदेही ।
तजिए कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही ।।[१]

इस उक्ति में कितनी मधुरता दिखायी पडती है । कवि को जो कुछ कहना है उसे सुन्दर रूप में तैयार करके पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हैं । ~~यह उक्ति किसी में क्षोभ न पैदा कर कही जाती है~~ । यहीं पर किसी कवि की लेखनी की कुशलता दृष्टिगोचर होती है ।

सरसता के अभाव में काव्य क्या काव्य कहलाने योग्य है । सरसता से अलंकृत होने पर काव्य के शरीर की शोभा दुगुनी पड जाती है ।

गोस्वामीजी काव्य के इस गुण के धनी है । अर्थात् उनकी कृतियां सरस घटनाओं की योजना से मधुर बन पडी हैं ।

` वाक्य रसात्मकं काव्यं ` यह उक्ति तो अत्यधिक प्रसिद्ध है । रस के मतलब शृंगार ,वीर करुण आदि रसों से नहीं, बल्कि काव्य के आस्वादन से । गोस्वामीजी काव्य के इस गुण के धनी है अर्थात् उनकी सूक्तियां सरस घटनाओं की योजना से मधुर बन पडी है ।

१- विनयपत्रिका- तुलसीकृत,पृष्ठ-३७७
राजनाथशर्मा

सफल कवि होने के नाते उनके काव्यों के कुछ कुछ प्रसंगों में हृदय को स्पर्श करनेवाली मार्मिक उक्तियां मिलती है। उनका सहृदयता-पूर्वक वर्णन कौन नहीं करता उसके काव्य में रसिकता नहीं आ जाती। भावकत्व और रस मर्मज्ञत्व ये तो कवि केलिए अनिवार्य तत्व है।

यह चित्रण देखिए :

'लखि सनेह कातर महतारी।
बचन न आव बिकल भइ भारी।।
राम प्रबोध कीन्ह बिधि नाना।
समउ सनेह न जाइ बखाना।।[१]

रामजी के वन जाने का समाचार सुनकर सीता को उनका साथ देने की बडी अभिलाषा होती है। कौसल्या के पास जाकर सीता उनके साथ जाने केलिए अनुमति मांगने लगी। तब तो कौशल्या का कहना है :-

पलंग पीठ तजि गोद हिंडोरा। सिय न दीन्ह पगु अवनि कठोरा।
जिअन मूरि जिमि जोगवत रहऊं। दीप बाति नहिं टारन कहऊं।।
सिय बन बसिहि तात केहि भांति। चित्र लिखित कपि देखि डेराती।
सुरसर सुभग बनज बन चारी। डाबर जोगु कि हंस कुमारी।[२]

यह वर्णन तो कितना सुन्दर हो उठा है।

१- रामचरितमानस, अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६०
२- रामचरितमानस, अयोध्यकाण्ड, पृष्ठ-१०३
संपादक-विजयानन्द त्रिपाठी

वन की बीभत्सता का जो वर्णन राम करते है वह भी सरस हो उठा है ।

हंस गवनि तुम नहिं बन जोगू ।
सुनि अपजस मोहिं देइहिं लोगू ।
मानस सलिल सुधा प्रतिपाली ।
जिअइ कि लवन पयोधि मराली
नव रसाल बन बिहरन सीला ।
सोह कि कोकिल बिपिन करीला ।[१]

उनकी सरसता हर प्रसंगों में दृष्टिगोचर होती है ।

किष्किन्धाकाण्ड में वर्षा -शरद् ऋतु का जो वर्णन मिलता है उसमें प्रत्येक व्यक्ति की मानसिक अवस्था का प्रकृति के साथ सुन्दर समन्वय स्थापित किया गया है ।

(१) लछिमन देखु मोरगन, नाचत बारिद पेखि ।
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहुं देखि ।।[२]

(२) घन घमंड नभ गर्जत घोरा । प्रियाहीन डरपत मन मोरा ।
दामिनि दमक रह न घन मांही । खल कै प्रीति यथा थिर नांही ।।[३]

(३) बरषहिं जलद भूमि नियराये । जथा नवहिं बुध बिद्या पाये ।
बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे । खल के बचन संत सह जैसे ।।[४]

१- रामचरित मानस,अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६६
२- ,, किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३४
३- ,, ,, पृष्ठ-३४
४- ,, ,, पृष्ठ-३५
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

काव्य में प्रभावशीलता के होने से उसकी सुन्दरता दस गुना बढ़ जाती है। यदि काव्य में किसी पर प्रभाव डालने की क्षमता नहीं है तो वह काव्य कभी सुन्दर नहीं कहलाया जा सकता।

गोस्वामीजी के काव्य में एकदम लोगों को प्रभावित करने की शक्ति रहती है। कुछ कवि तो साहित्यिक सौन्दर्य पर अधिक ध्यान देने से काव्य का वह पक्ष प्रबल होता है। गोस्वामीजी केवल तथ्य कथन पर ध्यान देते नहीं। उनकी सूक्तियां मनोरम मोतियों के समान चमकनेवाली हैं। गालियों की वर्षा कर एक व्यक्ति पर कुछ भी असर नहीं डाल सकता, मधुर सूक्तियों के ज़रिये उसके हृदय पर अधिकार स्थापित करना है। मधुर वचन सुनने पर किस व्यक्ति का मन आकृष्ट नहीं होगा ?

अन्य सूक्तिकारों की अपेक्षा तुलसीदास एक श्रेष्ठ ~~व्यक्ति~~ सूक्तिकार हैं जिनकी काव्य कुशलता सूक्तियों में भी स्पष्टत: झलकती है।

संत हृदय नवनीत समाना। कहा कविन्ह परि कहै न जाना।
निज परिताप द्रवै नवनीता। पर दुख द्रवहि संत सुपुनीता।।[१]

उचित शब्द योजना

शब्दों की उचित योजना भी काव्य को सुन्दर बना देती है। कोमल और मधुसिंचित शब्द, काव्य में रत्न सदृश शोभित हो जाते हैं। रीतिकाल के कवि तो शब्दों से कसरत करनेवाले हैं। वे शब्दों को तोड़ मरोड़कर उनके रूप में भी परिवर्तन कर डालते हैं। शब्दों को तोड़ मरोड़ने के कारण उनका सहज सौन्दर्य नष्ट हो जाता है।

१- रामचरित मानस, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४२
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

गोस्वामीजी शब्दों को लेकर क्या करते है ?

कंकण किंकिणि नूपुर धुनि सुनि
कहत लखन सन राम हृदय गुनि ।
मानहु मदन दुन्दुभि दीन्हीं ।
मनसा बिस्व बिजय कहां कीन्हीं ।[१]

यहां गोस्वामीजी की शब्द-योजना अनोखी सिद्ध हुई है ।

गोस्वामीजी जो कुछ लिखते है उनमें व्याकरणिक त्रुटियां कहीं भी नहीं दीख पडती । व्याकरणिक शुद्धता और शब्दों की मधुरता की दृष्टि से उनकी रचनायें श्रेष्ठतम निकली हैं । शब्द -माधुर्य उनकी हर कृति में आद्यन्त विद्यमान है ।

उन जैसे उच्चकोटि के महाकवि की कृतियों में शब्द-योजना की बात पर विचार करना युक्तिसंगत नहीं लगता । लौकिक ज्ञान के धनी व्यक्ति होने के कारण विविध विषयों का ज्ञान भी वे रखते हैं । सर्व-साधारण के जीवन से अत्यधिक घुल-मिलकर रहने के कारण, रस,भाव,घटना आदि के अनुकूल शब्दों की योजना करने के कारण, इस अमित प्रतिभा संपन्न शब्द-शिल्पी ने अपने सिद्धान्तों को व्यक्त करने में अद्भुत सिद्धहस्तता प्राप्त की है।

लोक प्रचलित या जन- साधारण की बोली में लिखे जाने के कारण वे एक ही समय किसान एवं राजा के हृदय पर अधिकार प्राप्तकर सके । उनकी अनुपम कृति ' रामचरितमानस ' इसी कारण झोंपडी से लेकर

१- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३६०
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

राजमहल तक पूजे जाते है ।

श्री एस०पि०बहादुर ने अपने ग्रन्थ में गोस्वामीजी के भाषा-सौष्ठव पर लिखते है :-

> " Tulsi made a bold departure from established traditions of poetry of the mediaeval period in the choice of language of his works. Sanskrit was the acknowledged medium of expression of Hindu philosophy. When Tulsi chose Avadhi, a language familiar to a large majority of people in Northern India, for composing Ramayana, he was drided by learned Scholars.[1]

उस समय पंडितों की लेखनी से केवल संस्कृत भाषा फूट निकली थी , संस्कृत केवल उन्हीं की भाषा थी । लेकिन गोस्वामीजी संस्कृत में काव्य-रचना कर अपनी विद्वता प्रकट किये बिना जन - साधारण की बोली अवधी और ब्रज को काव्य-भाषा के रूप मे स्वीकार कर उन्हीं भाषाओं में काव्य लिखा करते थे । उनकी लोकप्रिय कृति ' मानस ' अवधी में रची गयी है । पण्डित एवं पामर एक ही समय उनकी कृति से आनन्द उठा सके ।

लेकिन कहीं कहीं उन्होंने संस्कृत शब्द को अपनाया है, इसी कारण भाषा में अनुपम सुन्दरता आ गयी है । संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों की योजना करके काव्य के शरीर को उन्होंने सजाया है ।

---

1. The Ramayana of Tulsidas. S.P.Bhadur, Page 359

मंगलाचरण ही उन्होंने संस्कृत में लिखा है :-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि ।
मंगलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ ।।
भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धा:स्वान्त:स्थमीश्वरम् ।।[१]

संस्कृत की समास बहुला शब्दावली का प्रयोग तुलसीदास जी ने किया है ।

(१) बुध विश्राम सकल जन रंजनि ।
रामकथा कलि कलुष विभंजनि ।।
रामकथा कलि पन्नग भरनी ।।
पुनि विवेक पावक कहुं अरनी ।।[२]

(२) अकल अनीह अनाम अरूपा ।
अनुभवगम्य अखंड अनूपा ।
भव गोतीत अमल अविनासी ।
निर्विकार निरवधि सुख रासी ।।[३]

उनके वर्णनों और संवादों में उनकी शब्दयोजना एक ही ढंग पर चलने के कारण भाषा में चमत्कार नहीं आ गया है । वास्तविक रचना वही है जिसमें शब्दों का प्रयोग ऐसा हो कि पाठक एकदम मुग्ध हो जाय ।

१- रामचरितमानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१-२

२- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७६

३- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६६-उत्तरकाण्ड २६७

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

एक रचना तमी सफल कही जा सकती है जब कवि शब्दों के इन्द्रजाल से कवि वर्ण्य-विषय का पूरा चित्र खड़ा करता है । उसकी शब्द-योजना सरल और सजीव पाई जाती है ।

सरल कवित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान ।
सहज बैर बिसराइ रिपु जो सुनि करहिं बखान ।।[१]

यही है उत्तम कविता का लक्षण । उनकी शब्द योजना पर मुग्ध होकर आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ने यों कहा है :-

' गोस्वामीजी जैसे उच्च-कोटि के महाकवि की काव्य-रचना में भावानुकूल शब्द-योजना पर विचार करने की बात ही नहीं उठनी चाहिए । वे शास्त्र-पारंगत विद्वान्, अत्यन्त निपुण कवि, सरस-हृदय गुणी, पतनोन्मुख हिन्दू-समाज के उद्धार - कार्य में प्रवृत्त महात्मा थे' ।[२]

इतिवृत्तात्मक वर्णनों में साधारण बोलचाल के शब्दों का प्रयोग हुआ है :-

(१) मैया कहहु कुसल दुइ बारे ।
तुम नीके निज नयन निहारे ।
जा दिन तें मुनि गए लिवाई ।
तब ते आजु सांच सुधि पाई ।[३]

(२) आगे चले बहुरि रघुराई ।
ऋष्यमूक परबत नियराई ।।[४]

१- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४०

२- गोस्वामी तुलसीदास -आचार्य सीताराम चतुर्वेदी -पृष्ठ-६२

३- रामचरित मानस-बालकाण्ड पृष्ठ-४६४ टीकाकार [illegible]

४- रामचरित मानस [illegible] पृष्ठ-४ टीकाकार [illegible]

व्यंग्य पूर्ण शब्दावली का प्रयोग भी उन्होंने किया है :

अपने मुंह तुम आपनि करनी ।
बार अनेक भांति बहु बरनी ।।
नहिं संतोष त पुनि कछु कहहू ।
जानि रिसि रोकि दुसह दुख सहहू ।।[१]

तुलसीदास जी ने ` नम्रता - भरी शब्दावली का प्रयोग किया है ।

मही सकल अनरथ कर मूला ।
सो सुनि समुझि सहिउं सब सूला ।।[२]

तुलसीदासजी ने श्रृंगारिक वर्णनों में मधुर तर शब्दों की योजना की है ।

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि
कहत लखन सन राम हृदय गुनि ।।[३]

इसके अलावा बीभत्स, भयानक, अद्भुत भावों के वर्णन में उसके अनुकूल शब्द-प्रयोग मिलता है ।

तन खीन कोउ अति पीन पावन कोउ अपावन गति धरे ।
भूषन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरे ।।[४]

१- राम चरित मानस - बालकाण्ड- पृष्ठ- १७३.
२- रामचरित मानस - अयोध्याकाण्ड- पृष्ठ- २५०
३- रामचरित मानस- बालकाण्ड, पृष्ठ-३६०
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी
४- रामचरितमानस बालकाण्ड- पृष्ठ- २५३ टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी

फिर युद्ध के वर्णनों में वीर रस का प्रयोग हुआ है ।

कटहिं चरन उर सिर भुजदंडा ।
बहुतक बीर होहिं सत खंडा ।।
घुर्मि घुर्मि घायल महि परहीं ।।
उठि संभारि सुभट पुनि लरहीं ।।[1]

आगे गोस्वामीजी के ' अलंकार विधान ' का अध्ययन करना है ।

सूक्ति में उपदेश या नीति-कथन की प्रधानता होने के कारण उसमें अलंकारों के लिए गौण स्थान है । इसीकारण सूक्ति में आलंकारिक सौन्दर्य की अधिकता नहीं देखी जा सकती । सूक्ति में तथ्यों को सीधे ढंग से कहा जाता है । आलंकारिक सौन्दर्य भर देने से सूक्ति का सहज सौन्दर्य नष्ट हो जाता है ।

कुछ सूक्तिकार तो सूक्ति में केवल तथ्यों को रख देते हैं , उन सूक्तियों को अलंकार रूपी परिधान नहीं पहनाते । लेकिन तुलसीदासजी की सूक्तियां जगह जगह पर अलंकारों से भी सुसज्जित हैं । लोगों को प्रभावित करने की शक्ति इन सूक्तियों में विद्यमान रहती है । कवि होने के नाते वे काव्य के विविध पक्षों की विशेष जानकारी रखते हैं ।

कला पक्ष की सशक्त अभिव्यक्ति उनके काव्यों में हुई है । अर्थात् उनकी सूक्तियों में आलंकारिक सौन्दर्य अनायास ही आ गया है ।

अलंकारों से सुसज्जित काव्य में चमत्कार आ ही जाता है । इसके साथ साथ रसोत्कर्ष भी होता है । अलंकार भावों का तीव्र अनुभव कराने में सहायक होते हैं ।

१- रामचरित मानस-

गोस्वामीजी की उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के चयन में विशेष दक्षता मिली है ।

डा० वचनदेव कुमार ने तुलसीदास जी के आलंकारिक सौन्दर्य पर मुग्ध होकर कहा है -

" अलंकारों की जादूगरी या अतिशयवादी उनके ' मानस ' में कहीं नहीं है । वैसे कुछ स्थल अवश्य मिलते हैं जहां अलंकारों की कारीगरी पर मुग्ध हो जाना पड़ता है ।" [1]

शब्द- वैचित्र्य और अर्थ वैचित्र्य इन दोनों भेदों पर अलंकारों की सुन्दरता निर्भर है ।

शब्दालंकारों में अनुप्रास के प्रति उनका झुकाव पर्याप्त है ।

(१) बंदौ गुरु पद पदुम परागा ।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ।।[2]

(२) सठ सुधरहिं सत संगति अनुरागा ।
पारस परस कुधातु सुहाई ।।[3]

(३) हरिहर जस राकेस राहु से ।
पर अकाज भट सहस बाहु से ।।[4]

(४) मल अनमल निज निज करतूती ।
लहत सुजस अपलोक बिभूती ।।[5]

१- रामचरित मानस में अलंकार योजना-डा० वचनदेव कुमार,पृष्ठ-२४२

२- रामचरित मानस-विश्वानन्द त्रिपाठी,बालकाण्ड,पृष्ठ-७

३- ,, ,, ,, पृष्ठ-१४

४- ,, ,, ,, पृष्ठ-१६

५- ,, ,, ,, पृष्ठ-१६

अर्थालंकारों पर विचार करना है ।

गोस्वामीजी ने अपने काव्यों में अर्थालंकारों का भी प्रयोग किया है । उन्होंने अर्थालंकारों का प्रयोग विशेषकर उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि के साथ किया है ।

गोस्वामीजी ने परंपरागत उपमानों को स्वीकार करते हुए भी लोक जीवन से चुने हुए ठेठ उपमान भी स्वीकार किये हैं । उनसे भाव की तीव्रता भी सहज रूप से बढ़ जाती है ।

मानसिक द्वन्द्व से उलझे हुए मन में कभी शान्ति नहीं होती। वह हमेशा चंचल रहता है, गोस्वामीजी इसके लिए एक सुन्दर उपमा का प्रयोग करते हैं :-

अस मन गुनइ राउ नहिं बोला ।
पीपर - पात सरिस मन डोला ।।[1]

'श्लेषोपमा ' का एक सुन्दर उदाहरण देखिए

साधु चरित सुभ सरिस कपासू ।
निरस बिसद गुनमय फल जासू ।।[2]

उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत ओढ़ाए ।
नील जलद पर उडुगण निरखत तजि सुभाव मनों तड़ित छपाए ।।[3]

उपर्युक्त पंक्तियों में साधुओं के सुन्दर चरित्र की तुलना कपास से की गयी है जो कितनी सुन्दर हो उठी है ।

विन्सेन्ट स्मिथ ने गोस्वामीजी की उपमाओं को संस्कृत के महान कवि ' कालिदास ' की उपमाओं से भी श्रेष्ठ मानकर उसकी महिमा की घोषणा की है ।

१- रामचरितमानस-पृष्ठ -७२, अयोध्याकांड - टीकाकार - वि. त्रिपाठी
२- ,, बालकाण्ड,पृष्ठ-११
३- गीतावली(तुलसीकृत) हनुमान प्रसाद पोद्दार,पृष्ठ-६४

गोस्वामीजी ने रूपकों के सुन्दर उदाहरण भी अपने ग्रन्थों में प्रस्तुत किए हैं। ` भगवान दीन ` गोस्वामीजी को ` रूपकों के बादशाह मानते हैं। समर्थ कवि रूपक के द्वारा दृश्य को खड़ा करने में सफल होते हैं।

रूपक के कुछ उदाहरण

बन्दौं गुरु पद पदुम परागा। सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।
अमिय मूरिमय चूरन चारू। समन सकल भवरुज परिवारू ।।[१]

सुकृत संभु तन बिमल बिभूती। मंजुल मंगल मोद प्रसूती।
जनमन मंजु मुकुर मल हरनी। किएं तिलक गुनगन बस करनी ।।[२]

श्री गुरु पद नख मनि गन जोती। सुमिरत दिव्य दृष्टि हियं होती।
दलन मोह तम सो सुप्रकासू। बड़े भाग उर आवइ जासू ।।[३]

उपर्युक्त पंक्तियों में उपमान और उपमेय में अभिन्नता स्थापित की गयी है, अर्थात् रूपक का प्रयोग किया गया है।

परंपरित रूपक के सुन्दर उदाहरण भी देखने को मिलते हैं।

रामकथा सुन्दर करतारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी। [४]

रामचरित चिन्तामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू।[५]

१- रामचरित मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-७
२- ,, ,, पृष्ठ-८
३- ,, ,, पृष्ठ-८
४- ,, ,, पृष्ठ-२१५
५- ,, ,, पृष्ठ-८२

सांगरूपक बांधने में भी वे पटु है ।

' कवितावली ' में रूपक का एक सुन्दर उदाहरण द्रष्टव्य है ।

' हाट बाट हाटक पिघिलि चल्यो घी-सो- घनो,
कनक - कराही लंक तलफति ताप सों ।
नाना पकवान जातुधान बलवान सब,
पागि - पागि ढेरी कीन्हीं भली भांति - भाय सों ।।
पाहुने कृसानु पवमान सो परोसो ,हनुमा न
सनमानि कै जेवायो चित चाय सों । [१]

उत्प्रेक्षाओं के मोहक उदाहरणों से ' मानस ' भरे पड़े है ।

राम और लक्ष्मण की रूप सुन्दरता की तुलना कवि ने यों दी है ।

' मंडप - भवन तें प्रगट भे, तेहि अवसर दोउ भाइ ।
निकसे जनु जुग बिमल बिधु जलद पटल बिलगाइ ।। [२]

' गीतावली ' में गोस्वामीजी ने रामचन्द्रजी के सुन्दर श्यामल शरीर पर पड़े पसीने के कणों की मरक त शैल के शिखर पर पड़े खद्योतों से तुलना की गयी है ।

स्याम सरीर रुचिर श्रम सीकर सोनित कन बिच मनोहर ।
जनु खद्योत निकर हरिहित गन भ्राजत मरकत सैल सिखर पर । [३]

१- कवितावली- श्रीकान्त शरण,पृष्ठ-१२७-१२८

२- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३६४

३- गीतावली (तुलसीकृत) गीताप्रेस,गोरखपुर- हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृष्ठ-३७०

' कवितावली ' में भी कवि ने एक सुन्दर उत्प्रेक्षा को बांधा है । राम के बाणों से आहत रावण के शरीर से जो रक्त की धारा बही, उसकी कुछ छींटें राम के शरीर पर यों शोभित रही मानों मरकत मणि के पर्वत पर बीर बहूटियां फैल गई हो ।

' राम सरासन ते चले तीर, रहे न सरीर, हड़ावरि फूटी ।
राबन धीरन पीर गनी, लखि लै कर खप्पर जोगिनी जूटी ।।
सोनित छीट छटानि-छूटी, तुलसी प्रभु सोहै महा छबि छूटी ।
मानो मरक्कत सैल बिसाल में फैलि चली बरबीर बहूटी ।।[1]

जब हनुमान रावण के महल पर आग लगाने लगे तब उनका मुख क्रोध से इतना लाल रंग का हो गया मानों करोड़ों अग्नि और सूर्य एक साथ उत्पन्न हो गये हो ।

तुलसी बिराज्यो व्योम बाल धी पसारि भारी ,
देखे ह हरात भट, काल ते कराल भो ।
तेज को निधान मानो कोटिक कृसानु भानु ।
नख बिकराल, मुख तैसो रिस लाल भो ।।[2]

तुलसी की रचनाओं में उत्प्रेक्षा की सुन्दर छटा दर्शनीय है ।

गीतावली में बालक रामचन्द्र की बालक्रीडाओं का मनोहारी वर्णन ' उत्प्रेक्षा ' अलंकार में किया है ।

१- कवितावली- श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-२३६

२- कवितावली- श्री श्रीकान्त शरण, पृष्ठ-६६

आंगन फिरत घुटरुवनि धाए ।
नील जलद तनु स्याम राम सिसु जननि निरख मुख निकट बोलाए ।
बंधूक सुमन अरुन पद पंकज अंकुस प्रमुख चिन्ह बनि आए ।
नूपुर जनु मुनिबर कलहंसनि रचे नीड़ दै बांह बसाए ।[१]

बा लक रामके चरणों में जो नूपुर हैं वे ऐसे जान पड़ते हैं मानों ईश्वर ने घोंसले बनाकर उनमें मुनिजनरूपी कलहंसोंको शरण देकर बसाया है ।

कहीं कहीं गोस्वामीजी ने उत्प्रेक्षा और रूपक दोनों को मिलाकर वर्णन किया है ।

निम्नलिखित पंक्तियों में उत्प्रेक्षा के अन्तर्गत रूपक का प्रयोग हुआ है ।

सुनि सुंदर बैन सुधारसमाने सयानी हैं जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन, दै सैन तिन्हें समझाइ कछू मुसुकाई चली ।।[२]

सुन्दरी सीता राम की कोमल मूर्ति की ओर देखती हुई वे गांव की स्त्रियां की स्त्रियां ऐसी चमक रही थी मानों सूर्य का उदय होने पर अनुराग रूपी सरोवर में सुन्दर नलिन या सरसिजों की कलियां खिल गयी हों ।

गोस्वामीजी को उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा आदि अलंकार ही अधिक प्रिय रहे हैं । इन तीनों अलंकारों का खूब वर्णन उन्होंने अपनी कृतियों में किया है । इसके अतिरिक्त उन्होंने अतिशयोक्ति, सन्देह ,अपन्हुति,प्रतीक, व्यतिरेक आदि अलंकारों का भी प्रयोग किया है । इसी कारण उनकी रचनाओं में आलंकारिक सुन्दरता भी भरी रहती है ।

१- गीतावली-(तुलसीकृत) गीताप्रेस,गोरखपुर,पृष्ठ-६४

२- कवितावली- श्री श्रीकान्त शरण-संवत्-२०२५-प्रथम आवृत्ति
पृष्ठ-७७-७८

भाषा :

गोस्वामीजी ने अवधी और ब्रज भाषा में अपनी रचनाएं लिखी हैं जो तत्कालीन लोगों के बीच में प्रचलित भाषायें थीं। लोकप्रिय ग्रन्थ 'रामचरित मानस' अवधी भाषा में लिखी गयी है। उन्होंने कुछ कृतियां अवधी में लिखी हैं और कुछ ब्रजभाषा में लिखी हैं। 'मानस' के बाद 'विनयपत्रिका' उनकी सर्वश्रेष्ठ कृति है, वह ब्रजभाषा में लिखी गयी है।

उन्होंने कुछ विदेशी शब्दों को अपनी भाषा में अपनाया है। उन्होंने भाषा की शुद्धता की ओर अत्यधिक ध्यान लगाया है। गोस्वामीजी की भाषा-प्रयोग पर मुग्ध होकर आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ने कहा है।

'गोस्वामीजी ने भाषा की शुद्धता और प्रौढ़ता का जो मार्ग निकाला था उस पर यदि हिन्दी के कवि आगे चलते तो 'भूषण' आदि कवियों को शब्दों का रूप विकृत करने का साहस न होता।'[१]

उनकी भाषा की सरलता से बहुत अधिक लोग उनकी रचनाओं से आकृष्ट हो गये।

डा० रामकुमार वर्मा ने उनकी सरल भाषा की ओर संकेत किया है:-

'वे अपनी रचना को जनता की वस्तु बनाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने ग्रन्थों की रचना सरल से सरल भाषा में की।'[२]

१- गोस्वामी तुलसीदास - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, पृष्ठ-१३५

२- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा पांचवा संस्करण-१९६४, पृष्ठ-४५७

भाषा की सरलता के कारण उनके सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ ` रामचरित मानस ` का उत्तर भारत के घर घर में प्रचार हो गया, वे इसका पाठ भी करने लगे ।

रस :-

रामभक्ति की पुनीत धारा में नाना रसों की भी सुन्दर योजना हुई है । रसों की योजना करने में भी उन्हें अद्वितीय सफलता मिली है । उचित स्थान पर उन्होंने उचित रस को प्रवाहित किया है ।

श्रृंगार रस के वर्णन में उन्होंने शील और मर्यादा का अतिक्रमण नहीं किया । अर्थात् उन्होंने मर्यादित श्रृंगार -चित्रण किया है । इससे सारे लोग मुग्ध हो उठे हैं । श्रृंगार के दोनों पक्षों का चित्रण उन्होंने किया है ।

जब हमारा हृदय दु:ख से ओतप्रोत हो जाता है तब करुण रस की उत्पत्ति होती है । करुण रस के अलावा वीर, हास्य, रौद्र , भयानक अद्भुत, वीभत्स और शान्त रस का सुन्दर वर्णन उन्होंने किया है ।
डा० रामकुमार वर्मा ने कहा है :-

> ` मनोवैज्ञानिकता के साथ रस की पूर्णता तुलसीदास की काव्य कला की सबसे बड़ी सफलता है ।` १

छन्द :-

गोस्वामीजी ने चन्दवरदाई की छप्पय- पद्धति में, कबीर की दोहा पद्धति में, जायसी की दोहा-चौपाई पद्धति में, रहीम के बरवै छन्द में, गांव-

---

१- हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास- डा० रामकुमार वर्मा पृष्ठ-४६०

वालों के सोहर - छन्द में आदि सभी छन्द पद्धतियों में काव्य लिखकर अपनी अद्भुत काव्य-प्रतिमा का परिचय दिया है। अपनी रचनाओं में उन्होंने सभी प्रचलित छन्दों का प्रयोग किया है। मात्रिक और वर्णिक छन्दों में उन्होंने काव्य लिखा है।

चौपाई का एक उदाहरण देखिए :-

सुकृति संभु तन बिमल बिभूती ।
मंजुल मंगल मोद प्रसूती ।।
जनमन मंजु मुकुर मल हरनी ।
किए तिलक गुनगन बस करनी ।।[1]

दोहा का एक उदाहरण

जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार ।।[2]

सोरठा

जेहि सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन ।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन ।।[3]

१- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८
२- रामचरित मानस- बालकाण्ड,पृष्ठ-२१
३- रामचरित मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

'कवित्त' का एक उदाहरण देखिए :-

जलज नयन, जलजानन, जटा हैं सिर ,
जौवन आगम अंग उदित उदार हैं ।
सांवरे - गोरे के बीच भामिनि सुदामिनि- सी,
मुनि पट धरे, उर फूलनि के हार हैं ।
करनि सरासन सिलीमुख, निषंग कटि ,
अतिही अनूप काहू भूप के कुमार हैं ।
तुलसी बिलोकि के तिलोक के तिलक तीनि ,
रहे नर नारि ज्यों चितेरे चित्रसार हैं ।।[१]

बरवै छन्द का उदाहरण बरवै रामायण में मिलता है :-

बडे नयन कुटि भृकुटी भाल बिसाल ।
तुलसी मोहत मनहिं मनोहर बाल ।।[२]

तुलसीदास ने अनेक छन्दों में कविता लिखी है ? यह उनकी विदग्धता का एक सुन्दर उदाहरण है ।

मामूली बात का साहित्यिक उदाहरण से समर्थन

गोस्वामीजी की काव्य-कुशलता का एक उत्तम उदाहरण यह है कि वे किसी मामूली बात का उल्लेख कर उसकी तुलना किसी उत्कृष्ट

१- कवितावली-(सिद्धान्त-तिलक) श्री श्रीकान्त शरण,पृष्ठ-६५

२- बरवै रामायण (सिद्धान्त तिलक) श्री श्रीकान्त शरण,पृष्ठ-५

साहित्यिक बात से करते है । वैसे गौरवपूर्ण बात कहते वक्त उसकी तुलना साधारण बात से करते है ।

' मनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ ।
राम नाम बिनु सोह न सोऊ ।
विधुवदनी सब भांति संवारी ।
सोह न बसन बिना बर नारी ।।[१]

राम नाम के बिना किसी भी कविता शोभा पाने योग्य नहीं चाहे वह कृति अनोखी हो और सुकवि की कलम से फूटी हुई हो । और एक उदाहरण यह है :-

जेहि मारुत गिरि मेरु उडाहीं । कहहु तूल केहि लेखे माहीं ।
समुझत अमित राम प्रभुताई । करत कथा मन अति कदराई ।।[२]

मेरु पर्वत को उडानेवाली हवा के सामने रुई क्या चीज़ है ? अर्थात् रुई नगण्य वस्तु है । रुई से क्या तुलसी की हालत उन्नत है ?

सूक्तियों के साहित्यिक सौष्ठव पर ऊपर विचार किया गया है । सूक्तियों का स्रोत समझने का प्रयास भी हमने किया है ।

गोस्वामीजी ने शब्दालंकार और अर्थालंकार इन दोनों का प्रयोग अत्यधिक सफलता से किया है । उनकी सभी रचनाएं साहित्यिक सौष्ठव से ओतप्रोत रहती है ।

१- रामचरित मानस(तुलसीकृत) ,पृष्ठ-३० बालकाण्ड
२- रामचरित मानस (,,) , पृष्ठ-३६ बालकाण्ड

टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी

उ प सं हा र

पिछले आठ अध्यायों में तुलसीदास की सूक्तियों की विस्तृत विवेचना की गयी है ।

इस शोध - प्रबन्ध मे प्रस्तुत कर्ता ने एक विशेष कार्य यह किया है कि इसमें तुलसी-सूक्ति - रत्नों का विशद संग्रह अकारादिक्रम से किया गया है । वह परिशिष्ट में दिया गया है । ये सूक्तियां ही इस शोध - प्रबन्ध की धुरी हैं । इनके आधार पर ही पूरे ग्रन्थ - भवन का निर्माण किया गया है ।

इस शोध - प्रबन्ध के पिछले अध्यायों के विवेचन का यही संक्षिप्त निष्कर्ष है कि सूक्ति का साहित्य के क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है । सूक्ति मानव जीवन को ठीक रास्ते से चलाने में अत्यधिक सहायता पहुंचाती है ।

प्रत्येक सूक्तिकार का कथन महत्वपूर्ण है । किन्तु महान कवि तुलसीदास का दृष्टिकोण तो अत्यधिक व्यापक है । इसी व्यापक दृष्टिकोण का परिचय उनकी रचनाओं से मिलता है । इससे यह भी सिद्ध होता है कि उनके समान समन्वयात्मक मनोवृत्ति रखनेवाले दूसरे कवि संसार में मुश्किल से मिलेंगे ।

हिन्दी साहित्य में सूक्ति का क्षेत्र तो अत्यधिक व्यापक नहीं । इसका कारण यह है कि हिन्दी मे सूक्ति से संबन्धित अनेक ग्रन्थों की रचना नहीं हुई है । फिर भी सूक्ति के विशद अध्ययन को मुख्य विषय के रूप में लिया गया है । इस बात में सन्देह नहीं कि सूक्ति प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में गहरा असर डालता है । अपभ्रंश, पालि, प्राकृत और हिन्दी भाषा से संस्कृत भाषा में सूक्ति की अधिकता दीख पड़ती है । प्रत्येक साहित्य में सूक्ति केलिए कुछ प्रमुख स्थान रह गया है ।

तुलसी की संपूर्ण रचनाओं में सूक्ति केलिए महत्वपूर्ण स्थान है। ' मानस ' के प्रत्येक प्रसंग में श्रेष्ठ सूक्ति-वचन मिलते हैं। राम - नाम - स्मरण की महत्ता पर सब से अधिक सूक्तियां मिली है। इसके अलावा लौकिक जीवन से संबन्धित सूक्तियां जीवन की गंध से महक उठी हैं। कवि ने जनता को जिन जिन उपदेशों को देना चाहा था वे सभी उपदेश उन्होंने सूक्तियों के द्वारा दे दिया है। अपने समय में जो दूषित सामाजिक और राजनैतिक अवस्थायें थीं उन सभी अवस्थाओं में उन्होंने अपनी साहित्यिक सेवा के द्वारा परिवर्तन ला दिया। यह उनकी महत्ता का और एक कारण है। उन्होंने अपने समय की विलासी नारी को ऊपर उठाने का तीव्र यत्न किया है। इस प्रयत्न में उन्हें कुछ कुछ सफलता मिली है। उन्होंने न केवल सामाजिक उन्नति केलिए प्रयत्न किया बल्कि आर्थिक और राजनैतिक उन्नति केलिए भी प्रयत्न किया।

मानस में आदर्श राजा केलिए आवश्यक गुणों के संबन्ध में बताया गया है। उस समय की बिगडी राजनीतिक अवस्था में वे परिवर्तन लाये। आप ने जिन जिन क्षेत्रों में पदार्पण किया उन सभी क्षेत्रों में परिवर्तन उपस्थित किया।

' दोहावली ' नामक उनकी कृति नैतिकता की दृष्टि से अत्यधिक श्रेष्ठता रखती है। उनकी इस मुक्तक रचना में अनेकों विषयों से संबन्धित सुन्दर सूक्तियां मिलती हैं। इसमें कवि तुलसीदास की अपेक्षा सूक्तिकार तुलसीदास का रूप अधिक निखर उठा है। गोस्वामीजी के मन की गहरी भक्ति का भी पता हमें मिलता है।

' विनयपत्रिका ' में भी भक्त तुलसीदास के दर्शन हम कर सकते हैं। कवि के हृदय की भक्ति - नदी यहां खूब छलक पडी है। उनके वैयक्तिक जीवन की जानकारी भी इससे मिलती है।

समन्वयकारी तुलसीदास की समन्वयात्मक प्रवृत्ति इसमें दीख पड़ती है। भक्ति - प्रधान ग्रन्थ होने के कारण भक्ति से संबन्धित अधिकांश पंक्तियां इससे मिलती हैं। कलियुग की कुरीतियों से पीड़ित तुलसी भगवान राम को अपना एकमात्र सहारा मानते हैं।

तुलसीदास की अन्य रचनाओं में ' कवितावली ' का श्रेष्ठ स्थान है। ' वैराग्य सन्दीपनी ' में विरागी तुलसी दीख पड़ते हैं। उनकी दृष्टि में संत अत्यधिक पूज्य व्यक्ति हैं। ' पार्वती मंगल ' और ' जानकीमंगल ' में कुछ व्यावहारिक सूक्तियां मिलती हैं। 'रामाज्ञाप्रश्न ' का अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि तुलसी ज्योतिर्विद्या के क्षेत्र में भी प्रवीण हैं। इसमें अच्छे और बुरे शकुनों के बारे में थोड़ी चर्चा मिलती है। भगवान कृष्ण से संबन्धित उनका एकमात्र ग्रन्थ 'श्रीकृष्णगीतावली ' है। उनकी अन्य रचनायें सूक्तियों की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं।

सूक्तियों का अध्ययन करने से हम महान कवि तुलसी के व्यक्तित्व और विचारों से संबन्धित ज्ञान पा सकते हैं। कवि के मन का प्रतिफलन है उसकी कविता। कवि के जीवन में जो जो अनुभव होते हैं उन सभी का लेखा-जोखा है उसकी कविता। वैसे गोस्वामीजी की कविताओं का अध्ययन करने पर भी उनके व्यक्तित्व का पता मिल सकता है। वे तो विनयशील प्रकृति के व्यक्ति हैं, उनकी आकृति भी सुन्दर है। उनके विचार तो गंभीर हैं। उन्होंने अपने को सभी लोगों से निम्न कोटि में रखा है। यह उनकी महत्ता का और एक कारण है। साधारण लोगों के विचारों से इनके विचार खूब मेल खाते हैं।

सूक्ति के गंभीर अध्ययन के सिलसिले में सूक्ति के स्रोत को ढूंढने का जो परिश्रम किया है उस परिश्रम में करीब करीब सफलता मिली है।

परिशिष्ट में सूक्तियों की अकारादि सूची रखी गयी है।

परिशिष्ट - १

सूक्तियों की अकारादि - सूची

(१) अंक अगुन आखर सगुन समुझिअ उभय प्रकार ।
खोएं राखें आपु भल तुलसी चारु बिचार ।।

तुलसीदासकृत- दोहावली
संपादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-८७

(२) अंतर जामिहु ते बड़ बाहेर जामि हैं राम जे नाम लिये ते ।
धावत धेनु पन्हाइ लवाइ ज्यों बालक बोलनि कान किये ते ।।

तुलसीकृत - कवितावली
संपादक - श्रीश्रीकान्त शरण
पृष्ठ-४६६

(३) अग जग जीव नाग नर देवा ।
नाथ सकल जग काल कलेवा ।।
अंड कटाह अमित लयकारी ।
काल सदा दुरित क्रम भारी ।।

तुलसीकृत -मानस
टीकाकार- विजयानन्द त्रिपाठी
उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६२

(४) अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा ।
अकथ अगाध अनादि अनूपा ।।

तुलसीकृत- मानस
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
बालकाण्ड,पृष्ठ-६१

(५) अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी ।
उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी ।

तुलसीकृत - मानस
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
बालकाण्ड,पृष्ठ-५८

(६) अग्य अकोविद अंध अभागी । काई विषय मुकुर मन लागी ।
लंपट कपटी कुटिल बिसेखी । सपनेहु संत सभा नहिं देखी ।।
कहहिं ते बेद असंमत बानी । जिन्ह कें सूझ लाभ नहीं हानी ।
मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना । राम रूप देखहिं किमि दीना ।।

तुलसीकृत- मानस
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
बालकाण्ड,पृष्ठ-२१७

(७) अति अनीति नीकी नहीं ।।

तुलसीकृत- श्रीकृष्ण गीतावली
संपादक- श्री श्रीकान्त शरण
पृष्ठ-१४

(८) अति आरत अति स्वारथी अति दीन दुःखारी ।
इनको बिलगु न मानिये बोलहिं न बिचारी ।।

तुलसीकृत- विनयपत्रिका
संपादक- राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-१२६

(९) अति खल जे बिषइ बक कागा ।
एहिं सर निकट न जाहिं अभागा ।।

तुलसीकृत- मानस
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
बालकाण्ड,पृष्ठ-१००

(१०) अति दुर्लभ कैवल्य परम पद ।
संत पुरान निगम आगम वद ।
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं ।
अनइच्छित आवै बरिआईं ।।

तुलसीकृत-मानस
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२१

(११) अतुलित महिमा वेद की तुलसी किए बिचार ।।

दोहावली
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१५६

(१२) अधम ते अधम अधम अति नारी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड
पृष्ठ-५८३

(१३) अधिकारी बस औसरा भलेउ जानिबे मंद ।
सुधा सदन बसु बारहें चउथें चउथिउ चंद ।।

दोहावली
टीकाकार-हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१७२

(१४) अनरथ असगुन अति असुभ, सीता अवनि प्रवेस ।
समय सोक संताप भय कलह कलंक कलेस ।।

तुलसीकृत-रामाज्ञाप्रश्न
संपादक-श्रीकान्त शरण
पृष्ठ-१४४

(१५) अनसमुझें अनसोचनो अवसि समुझिए आपु ।
तुलसी आपु न समुझिऐ पल पल पर परितापु ।।

तुलसीकृत- दोहावली
टीकाकार-हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१६७

(१६) अनहित भय परहित किएं पर अनहित हित हानि ।
तुलसी चारु बिचारु भल करिअ काज सुनि जानि ।।

तुलसीकृत-दोहावली
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१६०

(१७) अनुचित उचित काजु किछु होऊ ।
समुझि करिअ भल कह सबु कोऊ ।।
सहसा करि पाछे पछिताहीं ।
कहहिं बेद बुध ते बुध नांही ।।

मानस- अयोध्याकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२३४

(१८) अनुचित उचित बिचारु तजि जे पालहिं पितु बैन ।
ते भाजन सुख सुजस के बसहिं अमरपति ऐन ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२४५

(१९) अनुभव सुख उतपति करत, भव भ्रम धरै उठाय ।
ऐसी बानी संत की जो उर भेदै आय ।।

तुलसीकृत- वैराग्य सन्दीपिनी
संपादक-श्रीकान्तशरण
पृष्ठ-२५

(२०) अपनी समुझि साधु सुचि को भा ।

मानस-अयोध्याकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-३७८

(२१) अमर दानि जाचक मरहिं मरि मरि फिरि फिरि लेहिं ।
तुलसी जाचक पातकी दातहि दूषन देहिं ।।

दोहावली-प
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१२६

(२२) अमल अदाग सांतिपद सारा । सकल कलेसन करत प्रहारा ।
तुलसी उर धारै जो कोई । रहै अनद सिंधु महं सोई ।।

वैराग्य सन्दीपिनी
संपादक-श्रीकान्त शरण
पृष्ठ-४८

(२३) अवसर कौडी जो चुकै बहुरि फिरें का लाख ।
दुइज न चंदा देखिए उदौ कहा भरि पाख ।।

दोहावली
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-११८

(२४) अवसि देखिअहिं देखन जोगू ।

मानस-
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-३८६

(२५) असुभ बेष भूषन धरें भच्छाभच्छ जे खाहिं ।
तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर पूज्य ते कलिजुग माहिं ।

दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१८६

(२६) असुर, सुर, नाग, नर, जच्छ ,गंधर्व ।
खग रजनिचर सिद्ध ये चापि अन्ने ।
संत संसर्ग त्रै वर्ग पर परमपद ।
प्राप निष्प्राप्य गति त्वयि प्रसन्ने ।।

विनयपत्रिका
संपादक-राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-१७८

(२७) अहंकार अति दु:खद डमरू आ ।

दंभ कपट मद मान नहरुआ ।।
तृस्ना उदर बृद्धि अति भारी ।
त्रिविध ईषना तरुन तिजारी ।।
मानस-उत्तरकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२३३

(२८) आगम निगम पुरान कहत करि लीक ।
तुलसी नाम राम कर सुमिरन नीक ।।
तुलसीकृत-बरवै रामायण
संपादक-श्रीकान्तशरण
पृष्ठ-८८

(२९) आगे कह मृदु बचन बनाई ।
पाछे अनहित मन कुटलाई ।।
जाकर चित अहि गति सम भाई ।
अस कुमित्र परिहरेहिं भलाई ।।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-१८

(३०) आपन छोडो साथ जब ता दिन हितू न कोइ ।
तुलसी अंबुज अंबु बिनु तरनि तासु रिपु होइ ।।
दोहावली
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१८३

(३१) आपने तौ एक अवलंब अंब डिम ज्यों ।
समर्थ सीतानाथ सब संकट विमोच है ।।
तुलसीकृत- कवितावली
संपादक-श्रीकान्त शरण
पृष्ठ-४०२

(३२) अपनो हित रावरो सों जो पै सूझै ।
तौ जनु तनु पर अछत सीस सुधि क्यों कबंध ज्यों जूझै ।।
विनयपत्रिका
संपादक-राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-४७१

(३३) आपु आपु कहं सब भलो अपने कहं कोइ कोइ ।
तुलसी सब कहं जो भलो सुजन सराहिअ सोइ ।।
दोहावली
टीकाकार-हनुमानप्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१२३

(३४) आरत काह न करइ कुकरमू ।
मानस-अयोध्याकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२६२

(३५) इच्छित फल बिनु सिव अवराधें ।
लहिअ न कोटि जोग जप साधे ।।
मानस-बालकाण्ड
टीकाकार-विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-१५२

(३६) इहै कह्यो सुत बेद चहूं ।
श्रीरघुबीर चरन चिंतन तजि नाहिंन ठौर कहूं ।।
करुनासिंधु भगत चिन्तामनि सोभा सेवत हूं ।
और सकल सुर असुर ईस सब खाये उरग छहूं ।।
विनयपत्रिका
संपादक-राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-२३१

(३८) ईश्वर अंस जीव अविनासी ।
चेतन अमल सहज सुखरासी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड

पृष्ठ-२१३

(३९) ईस उदार उमापति परिहरि अनत ते जाचन जाहीं ।
तुलसिदास ते मूढ़ मांगने ,कबहुं न पेट अघाहीं ।।

विनयपत्रिका

संपादक-राजनाथ शर्मा

पृष्ठ-६५

(४०) ईस सीस बिलसत बिमल तुलसी तरल तरंग ।
स्वान सरावग के कहे लघुता लहै न गंग ।।

दोहावली

टीकाकार-हनुमानप्रसाद पोद्दार

पृष्ठ-१३१

(४१) उचित आचरत पांच मल लोलहिं ।

तुलसीकृत- जानकीमंगल

संपादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार

पृष्ठ-२७

(४२) उत्तम मध्यम नीच गति पाहन सिकता पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुन की बैर बितिक्रम जानि ।।

दोहावली

हनुमान प्रसाद पोद्दार

पृष्ठ-१२१

(४३) उदासीन अरिमीत हित, सुनत जरहि खल रीति ।।

मानस-बालकाण्ड

विजयानन्द त्रिपाठी

पृष्ठ-१८

(४४) उघरहिं विमल विलोचन ही के ।
मिटहिं दोष दुख भव रजनी के ।
सूझहिं रामचरित मनि मानिक ।
गुप्त प्रगट जहं जो जेहिं खानिक ।।

मानस-बालकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-६

(४५) उपजहिं एक संग जग माहीं ।
जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं ।।
सुधा सुरा सम्म साधु असाधू ।
जनक एक जग जलधि अगाधू ।।

मानस-बालकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-१६

(४६) उपरोहित्य कर्म अतिमंदा ।
वेद पुरान सुमृति कर निंदा ।

मानस-उत्तरकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-८८

(४७) उमा जोग जप दान तप, नाना मख व्रत नेम ।
राम कृपा नहिं करहि तस जसि नि:केवल प्रेम ।।

मानस-लंकाकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-४१५

(४८) उमा राम गुन गूढ़, पंडित मुनि पावहिं बिरति ।
पावहिं मोह विमूढ़ , जे हरि बिमुख न धर्म रति ।।

मानस-अरण्यकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-४७६

(४९) डर आनहि प्रभु कृत हित जेते । सेवहि लखे अपनपौ तेते ।
दुख सुख अरु अपमान बड़ाई । सब सम लेखहिं बिपति बिहाई ।।
सुनु सठ काल ग्रसित यह देही । जनि तेहि लागि बिदूषहि केही ।
तुलसीदास बिनु असि मति आये । मिलहिं न राम कपट ली लाये ।।

विनयपत्रिका
राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-२६१

(५०) बरषी पर कलहीन होइ ऊपर कला प्रधान ।
तुलसी देखु कलाप गति साधन धन पहिचान ।।

दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१८४

(५१) ऊगुन पूगुन बि अब कुम आम व मू गुरु साथ ।
हरो धरो गाड़ो दियो धन फिरि चढ़इ न हाथ ।।

दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-~~१६~~ २२९

(५२) ऊसर बरषै तृन नहिं जामा ।
जिमि हरिजन हिय उपज न कामा ।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-३६

(५३) एक अंग जो सनेहता निसि दिन चातक नेह ।
तुलसी जासों हित लगै वहि अहार वहि देह ।।
दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१०६

(५४) एक ईहै " तुलसी " सकल सिद्धि ताके जाके ।
कृपा पाथ नाथ सीतानाथ सानुकूल हैं ।।
कवितावली
श्रीकान्तशरण
पृष्ठ-१४०

(५५) एक सनेही साँचिलो केवल कौसलपालु ।
प्रेम कनौडो राम सों नहिं दूसरो दयालु ।।
विनयपत्रिका
राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-४०४

(५६) एकहि एक सिखावत जपत न आप ।
तुलसी राम प्रेम कर बाधक पाप ।।
बरवै रामायण
संपादक-श्रीकान्तशरण
पृष्ठ-६३

(५७) एहि के एक परम बली नारी ।
तेहि ते उबर सुभट सोइ भारी ।।
मानस-अरण्यकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-५६१

(५८) एहि तन कर फल विषय न भाई ।
स्वर्गौ स्वल्प अंत दुखदाई ।।
नरतनु पाइ विषय मनु देही ।
पलटि सुधा ते सठ विष लेही ।।

मानस-उत्तरकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-८१

(५६) एहि ते अधिक धरमु नहिं दूजा ।
सादर सास ससुर पद पूजा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-६३

(६०) एहि मंह रघुपति नाम उदारा ।
अति पावन पुरान श्रुति सारा ।
मंगल भवन अमंगल हारी ।
उमा सहित जेहि जपत पुरारी ।

मानस-बालकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२६

(६१) एहि विधि जग हरि आश्रित रहई ।
जदपि असत्य देत दुख अहई ।।

मानस-बालकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२२३

(६२) ऐसहि हरि बिनु भजन खगेसा ।
मिटइ न जीवन केर कलेसा ।।

हरि सेवकहिं न व्याप अविद्या ।
प्रभु प्रेरित व्यापै तेहि विद्या ।।

मानस-उत्तरकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-१३६

(६३) ऐसेहु सुसाहिब सों जाको अनुराग न सो,
बड़ोइ अभागो, भाग - भागो लोभ लाल को ।

कवितावली
संपादक-श्रीकान्त शरण
पृष्ठ-२८१

(६४) औरु करै अपराधु कोउ, और पाप फल भोगु ।
अति विचित्र भगवंत गति, को जग जानइ जोगु ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-११६

(६५) औरौ ग्यान भगति कर, भेद सुनहु सुप्रबीन ।
जो सुनि होइ राम पद प्रीति सदा अविछीन ।।

मानस-उत्तरकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२१३

(६६) कंचन कांच हि सम गनै, कामिनि काठ पषान ।
तुलसी ऐसे संत जन, पृथिवी ब्रह्म समान ।।

वैराग्य संदीपिनी
श्रीकान्त शरण-संपादक
पृष्ठ-३०

(६७) कंटक करि करि परत गिरि सखा सहस्र खजूरि ।
मरहिं कुनृप करि करि कुनय सों कुचालि भव भूरि ।।

दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१७६

(६८) कटु कहिये गाढे पर सुन समुझि सुसाई ।
करहिं अनभलेउ को भलो आपनी भलाई ।।
समरथ सुभ जो पाइये वीर पीर पराई।
ताहि तकै सब ज्यों नदी बारिधि न बुलाई ।।

विनयपत्रिका
राजनाथ शर्मा -संपादक
पृष्ठ-१२८

(६९) कठिन करम गति कछु न बसाई ।

मानस-अयोध्याकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-१४७

(७०) कठिन करम गति जान विधाता ।
जो सुभ असुभ सकल फल दाता ।।

मानस-अयोध्याकांड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-४१०

(७१) कठिन कुसंग कुपंथ कराला ।
तिन्ह के बचन बाघ हरि व्याला ।।

मानस-बालकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-१००

(७२) कनको पुनि पषान ते होई ।
जारेहु सहजु न परिहर सोई ।।

मानस-बालकाण्ड
पृष्ठ-१६५

(७३) कपट मार सूची सहस्र बांधि वचन परबास ।
किया दुराउ चहै चातुरी सो सठ तुलसीदास ।।
दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-१४२

(७४) कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं ।।
मानस-किष्किन्धाकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-४०

(७५) कबहुंक दुख सब कर हित ताके ।
तेहि कि दरिद्र परस मनि जाके ।
परद्रोही कि होहि निःसंका ।
कामी पुनि कि रहहि अकलंका ।
मानस-उत्तरकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-७२

(७६) कबहुं कि कांजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ ।।
दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-७२

(७७) कमठ पीठि जामहि बरु बारा । बन्ध्यासुत बरु काहुहिं मारा ।
फूलहिं नभ बरु बहु विधि फूला । जीवन न लह सुख हरि प्रतिकूला।।
मानस-उत्तरकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२३६

(७८) करइ स्वामि हित सेवकु सोई ।
दूषन कोटि देइ किन कोई ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी
पृष्ठ-२६५

(७६) करके मन के मनहिं वचन बचन गुन जानि ।
भूपहि भूलि न परिहरे विजय विभूति सयानि ।।
दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-२७७

(८०) करत न समुझत झूठ गुन सुनत होत मति रंक ।
पारद प्रकट प्रपंचमय सिद्धि नाउं कलंक ।।
दोहावली
हनुमान प्रसाद पोद्दार
पृष्ठ-६०

(८१) करम कीच जिय जानि सानि चित ।
चाहत कुटिल मलहि मल धोयो ।।
तृषावंत सुरसिरि बिहाय सठ फिरि फिरि बिकल अकास निचोयो ।।
विनयपत्रिका
राजनाथ शर्मा
पृष्ठ-४८२

(८२) करम भूमि कलि जनम कुसंगति मति बिमोह मद माति ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-४६६
राजनाथ शर्मा

(८३) करम वचन मन छाडि छलु, जब लगि जनु न तुम्हार ।
तब लगि सुख सपनेहु नहिं, किये कोटि उपचार ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(८४) करहिं सदा सेवक पर प्रीति ।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-८३

विजयानन्द त्रिपाठी

(८५) करिहौं कोसलनाथ तजि जबहिं दूसरी आस ।

जहां तहां दुख पाइहौं तबहीं तुलसीदास ।।

दोहावली- पृष्ठ-३४

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(८६) करु बिचार चलु सुपथ भल आदि मध्य परिनाम ।

उलटि जपे जरा मरा सूधे राजा राम ।।

दोहावली,पृष्ठ-१२६

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(८७) कलह न जानब छोट करि कलह कठिन परिनाम ।

लगति अगिनि लघु नीच गृह जरत धनिक धन धाम ।

दोहावली,पृष्ठ-१४६

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(८८) कलिजुग सम जुग आन नहिं , जौं नर कर बिस्वास ।

गाइ राम गुन गन बिमल भवतर बिनहि प्रयास ।।

प्रगट चारि पद धरम के, कलिमहु एक प्रधान ।

जेन केन बिधि दीन्हे , दान करै कल्यान ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७६

विजयानन्द त्रिपाठी

(८९) कलि नहिं ग्यान बिराग न जोग समाधि ।

राम नाम जपु तुलसी नित निरुपाधि ।।

बरवै रामायण,पृष्ठ-६६

श्रीकान्त शरण

(६०) कलिमल समन दमन मन राम सुजस सुखमूल ।
सादर सुनहि जे तिन्ह पर रामु रहहिं अनुकूल ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-४६३
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१) कल्प कल्प भर एक एक नरका ।
परहि जे दूषहिं श्रुतिकरि तरका ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२) कवनिउ सिद्धि कि बिनु बिस्वासा ।
बिनु हरि भजन न भवभय नासा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१५४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३) कवि बृंद उदार दुनी न सुनी ।
गुन दूषक ब्रात न कोपी गुनी ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१७५
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४) कसें कनकु मनि पारिखि पाएं ।
पुरुष परिखिअहि समयं सुभाएं ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४११
विजयानन्द त्रिपाठी

(६५) कहत कठिन समुझत कठिन साधत कठिन बिबेक ।
होइ घुनाच्छर न्याय जौं पुनि प्रत्यूह अनेक ।।
दोहावली, पृष्ठ-६४
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(९६) कह तुलसिदास बस जासु उर मारुत सुत मूरति बिकट ।
संताप पाप तेहि पुरुष पहिं सपनेहुं नहिं आवत निकट ।।

तुलसीकृत-हनुमान बाहुक,पृष्ठ-६
टीकाकार-पं० महावीर प्रसाद मालवीय
वैद्य ' वीर '

(९७) कह मुनीस हिमवंत सुनु, जो विधि लिखा लिलार ।
देव दनुज नर नाग मुनि, कोउ न मेटनिहार ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४८
विजयानन्द त्रिपाठी

(९८) कहहिं संत मुनि वेद पुराना ।
नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२१०
विजयानन्द त्रिपाठी

(९९) कहहु भगति पथ कवन प्रयासा ।
जोग न मख जप तप उपवासा ।
सरल सुभाव न मन कुटिलाई ।
जथा लाभ संतोष सदाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००) कहा करम सों चारो ।।

तुलसीकृत- श्रीकृष्ण गीतावली,पृष्ठ-८२
श्रीकान्त शरण

ग्रा०

(१०१) कहिव कठिन कृत कोमलहुं हित हठि होइ सहाइ ।
पलक पानि पर ओड़ियत समुझि कुघाइ सुघाइ ।।
दोहावली, पृष्ठ-१११
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१०२) कहु खगेस अस कवन अभागी ।
खरी सेव सुरधेनुहि त्यागी ।।
प्रेम मगन मोहि कछु न सोहाई ।
हारेउ पिता पढ़ाइ पढ़ाई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०३) काटेहि पै कदली फरै । कोटि जतन कोउ सींच ।
विनय न मान खगेस सुनु, डाटहिं पइ नवै नीच ।।
मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०४) कादर को आदर काहू के नाहिं देखियत ।
सबनि सोहात है सेवा - सुजात टाहली ।।
कवितावली, पृष्ठ-२६७
श्रीकान्त शरण

(१०५) कादर मन कहु एकु अधारा ।
दैव दैव आलसी पुकारा ।।
मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०६) का भाषा का संस्कृत प्रेम चाहिए सांच ।
काम जु आवै कामरी का लै करिअ कुमाच ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१०७) काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि ।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०८) काम क्रोध मद लोभ परायन ।
निर्दय कपटी कुटिल मलायन ।
वयरु अकारन सब काहू सों ।
जो कर हित अनहित ताहू सों ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-७५
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०९) काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुख रूप ।
ते किमि जानहि रघुपतिहि मूढ़ परे तम रूप ।।
निर्गुण रूप सुलभ अति सगुन जान नहि कोइ ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२८
विजयानन्द त्रिपाठी

(११०) काम धेनु हरिनाम काम तरु राम ।
तुलसी सुलभ चारि फल सुमिरत नाम ।।
बरवै रामायण-पृष्ठ-६१
श्रीकान्त शरण

(१११) कामिहि नारि पियारि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२५
विजयानन्द त्रिपाठी

(११२) कामी वचन सती मन जैसे ।।

मानस-अयोध्याकांड,पृष्ठ-४२१

विजयानन्द त्रिपाठी

(११३) काय मन वचन सुभाय तुलसी है जाहि ।
राम नाम को भरोसो ताहि को भरोसो है ।।

कवितावली,पृष्ठ-४०८

श्रीकान्त शरण

(११४) कारन ते कारजु कठिन, होइ दोष नहिं मोर ।
कुलिस अस्थि तें उपल तें लोह कराल कठोर ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५४

विजयानन्द त्रिपाठी

(११५) काल करम गति अघटित जानी ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२३१

विजयानन्द त्रिपाठी

(११६) काल तोपची तुपक महि दारू अनय कराल ।
पाय पलीता कठिन गुरु गोला पुहुमी पाल ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७७

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(११७) काल धरम नहिं व्यापहिं ताही ।
रघुपति चरन प्रीति अति जाही ।
नट कृत बिकट कपट खगराया ।
नट सेवकहिं न व्यापै माया ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८२

विजयानन्द त्रिपाठी

(११८) काल बिबस कहुं भेषज जैसें ।।

मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-१६८

विजयानन्द त्रिपाठी

(११६) काल बिलोकत ईस रुख भानु काल अनुहारि ।

रबिहि राउ राजहि प्रजा बुध व्यवहरहिं बिचारि ।।

दोहावली, पृष्ठ-१७३

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१२०) काल सुभाउ करम बरिआईं ।

भलेउ प्रकृति बस चुकइ भलाईं ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२१

विजयानन्द त्रिपाठी

(१२१) कालदंड गहि काहु न मारा ।

हरै धर्म बल बुद्धि बिचारा ।

निकट काल जेहि आवत सांईं ।

तेहि भ्रम होइ तुम्हारेहि नाईं ।

मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-२५३

विजयानन्द त्रिपाठी

(१२२) का बरषा सब कृषी सुखाने ।

समय चुके पुनि का पछिताने ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४३८

विजयानन्द त्रिपाठी

(१२३) कासीं बिधि बसि तनु तजें हठि तनु तजें प्रयाग ।

तुलसी जो फल सो सुलभ राम नाम अनुराग ।।

दोहावली, पृष्ठ-१७

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१२४) काहु न पावकु जारि सक । का न समुद्र समाइ ।
का न करइ अबला प्रबल । केहि जग कालु न खाइ ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१२५) कियेहु कुबेष साधु सनमानू । जिमि जामवंत हनुमानू ।
हानि कुसंग सुसंगति लाहू । लोकहुं वेद विदित सब काहू ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१२६) किसमी किसान कुल बनिक भिखारी भाट
चाकर चपल नट, चोर चार चेटकी ।
पेट को पढ़त गुन गढ़त चढ़त गिरि ,
अटत गहन गन अहन अखेट की ।
ऊंचे नीचे करम धरम- अधरम करि,
पेट ही को पचत बेचत बेटा-बेट की ।

कवितावली,पृष्ठ-४३१
श्रीकान्त शरण

(१२७) कीट मनोरथ दारु सरीरा ।जेहि न लाग घुन को अस धीरा ।
सुत वित लोक इंषना तीनी । केहि के मति इन्ह कृत न मलीनी ।

मानस-उत्तरकाण्ड
पृष्ठ-१२३

(१२८) कीबे कहा, पढ़िबे को कहा ,फल बूझि न वेद को भेद विचारै ।
स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम को नाम बिसारै ।
बाद विवाद बढ़ाइ कै, छाती पराई औ आपनी जारै ।।

चारिहु को, छहु को, नव को दस- आठ को पाठ कुकाठ-
सों फारे ।

कवितावली,पृष्ठ-४४६
श्रीकान्त शरण

(१२९) कीरति भनिति भूति भलि सोइ ।
सुरसरि सम सब कहं हित होइ ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१३०) कुटिल नारि मिस होइ छल अनमल आजु कि कालि ।

तुलसीकृत-रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-२७
श्रीकान्त शरण

(१३१) कुदिन हितू सो हित सुदिन हित अनहित किन होइ ।

दोहावली-पृष्ठ-११०
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१३२) कुलगुरु सम हित माय न बापू ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४२५
विजयानन्द त्रिपाठी

(१३३) कुलिस कठोर निठुर सोइ छाती ।
सुनि हरिचरित न जो हरखाती ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ२१५
विजयानन्द त्रिपाठी

(१३४) कुसमय जाय उपाय सब केवल करम विपाकु ।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१६३
श्रीकान्त शरण

(१३५) कूप खनत मंदिर जरत आएं धारि बबूर ।
बवहिं नवहिं निज काज सिर कुमति सिरोमनि कूर ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६७
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१३६) कृत जुग त्रेता द्वापर, पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि नाम ते पावहिं लोग ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१७७
विजयानन्द त्रिपाठी

(१३७) कृपिन देह पाइय परो बिन साधन सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समुझि जो कीजिय सुभ सोइ ।।

दोहावली, पृष्ठ-६२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१३८) कृषघन सखहि न देब दुख मुएहुं न मागब नीच ।
तुलसी सज्जन की रहनि पावक पानी बीच ।।

दोहावली, पृष्ठ-१२६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१३९) केहिं मग प्रबिसति जाति केहिं कहु दरपन मैं छांह ।
तुलसी ज्यों जग जीव गति करी जीव के नांह ।।

दोहावली, पृष्ठ-८४
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१४०)

केहि न सुसंग बडप्पनु पावा ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-३०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१४२) कै जूझिवो कै बूझिवो दान कि काय कलेस ।
चारि चारु परलोक पथ जथा जोग उपदेस ।।
दोहावली, पृष्ठ-१५४
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१४३) कै निदरहुं कै आदरहु सिंघहि स्वान सिआर ।
हरषत विषाद न केसरिहि कुंजर गंज निहार ।।
दोहावली, पृष्ठ-१३०
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१४३) कै लघु कै बड़ मीत भल सम सनेह दुख सोइ ।
तुलसी ज्यौं घृत मधु सरिस मिलें महाविष होइ ।।
दोहवली, पृष्ठ-११०
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१४४) कोउ विश्राम कि पाव तात सहज संतोष बिनु ।
चलै कि जल बिनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिव ।।
दोहावली, पृष्ठ-६५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१४५) कोटि कलप तरु सरिस संभु अवराधन ।
पार्वतीमंगल, पृष्ठ-६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१४६) कोटि विरक्त मध्य श्रुति कहई ।
सम्यक ज्ञान सकृत कोउ लहई ।
ज्ञानवंत कोटिक महु कोऊ ।
जीवन मुक्त सकृत जग सोऊ ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६७
विजयानन्द त्रिपाठी

(१४७) को न क्रोध निरदह्यो काम बस केहि नहिं कीन्हो ?
को न लोभ दृढ़ फंद बांधि त्रासन करि दीन्हो ?
कौन हृदय नहिं लाग कठिन अति नारि नयन सर ।
लोचन युत नहिं अंध भयो श्री पाइ कौन नर ?
सुर नागलोक महि मंडलहु को जो मोह कीन्हो जय न ?
कह तुलसिदास सो ऊबरै जेहि राख राम राजिव नयन ।।

कवितावली,पृष्ठ-४७६
श्रीकान्त शरण

(१४८) कोमल बानी संत की, स्रवै अमृत मय आय ।
तुलसी ताहि कठोर मन, सुनत मयन होइ जाय ।।

वैराग्य संदीपिनी,पृष्ठ-२४
श्रीकान्त शरण

(१४६) कोसल पाल विना तुलसी सरनागत पाल कृपाल न दूजो ।
कूर कुजाति कुपूत अघी सबकी सुधरै जो करै नर पूजो ।।

कवितावली,पृष्ठ-२५३
श्रीकान्त शरण

(१५०) क्रोध कि द्वैत बुद्धि बिनु, द्वैत कि बिनु अज्ञान ।
मायावस परिछिन्न जड़ जीव कि ईस समान ।।

मानस,उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५१) क्रोधु पाप कर मूल ।
जेहि बस जन अनुचित करहिं ।
चरहिं विस्व प्रतिकूल ।।

मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-४६४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५२) छत्रिय तनु धरि समर सकाना । कुल कलंकु तेहि पांवर आना ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४७३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५३) खल अघ अगुन साधु गुन गाहा ।
उभय अपार उदधि अवगाहा ।।
तेहि ते कछु गुन दोष बखाने ।
संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५४) खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू ।
मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५५) खल उपकार विकार फल तुलसी जान जहान ।।

दोहावली,पृष्ठ-१३६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१५६) खल कै प्रीति यथा थिर नांही ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५७) खल प्रबोध जग सोध न को निरोध कुल सोध ।
करहिं ते फोटक पचि मरहिं सपनेहुं सुख न सुबोधा ।।

दोहावली,पृष्ठ-६५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१५८) खलन्ह हृदय अति ताप बिसेखी ।
जरहिं सदा पर संपति देखी ।
जहं कहुं निंदा सुनहि पराई ।
हरखहिं मनहु परी निधि पाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१५६) खोजत घर घर जनु दरिद्र मनु फिरत लागि धन धायो ।

गीतावली,पृष्ठ-२६१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१६०) गगन चढ़इ रज पवन प्रसंगा । कीचहि मिलइ नीच जल संगा ।
साधु असाधु सदन सुकसारीं । सुमिरिहिं साधु देहिं गनि गारी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६१) गगन समीर अनल जल धरनी ।
इन्ह कइ नाथ सहज जड़ करनी ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६२) गज-बाजि-घटा,भले भूरि भटा,बनिता सुत भौंह तकैं सब वै ।
धरनी धन धाम सरीर भलो, सुरलोकहु चाहि इहै सुख स्वै।।
सब फोकट साटक है तुलसी, अपनो न कछू सपनो दिन द्वै ।
जरि जाउ सो जीवन जानकी नाथ जियै जग मैं तुम्हरो बिनु ह्वै ।।

कवितावली,पृष्ठ-३३४
श्रीकान्त शरण

(१६३) गठि बंध ते परतीति बडि जैहिं सब को सब काज ।
कहब थोर समुझब बहुत गाडे बढ़त अनाज ।।

दोहावली,पृष्ठ-१५५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१६४) गिरा अरथ जल वीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६५) गिरा गौरि गुरु गनप म गल मंगल मूल ।
सुमिरत करतल सिद्धि सब होइ ईस अनुकूल ।।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-३
श्रीकान्त शरण

(१६६) गिरिजा ते नर मंदमति, जे न भजहिं श्री राम ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३१२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६७) गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन ।
विनु हरिकृपा न होइ सो, गावहिं वेद पुरान ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६८) गुन अवगुन जानत सब कोई ।
जो जेहिं भाव नीक तेहि सोई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६६) गुनकृत सन्यपात नहि केही । कोउ न मान मद तजेहु निबेही ।
जोबन ज्वर केहि नहि बलकावा । ममता केहि कर जसु न नसावा।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६६)ब गुन सागर नागर नर जोऊ ।
अल्प लोभ भल कहइ न कोऊ ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३८
विजयानन्द त्रिपाठी

(१७०) गुनग्राम गुमान गभीर बड़ो, कल्पद्रुम काटत मूसर को ।।

कवितावली,पृष्ठ-४४७
श्रीकान्त शरण

(१७१) गुरु के बचन प्रतीति न जेही ।
सपनेहुं सुगम न सुख सिधि तेही ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८५
विजयानन्द त्रिपाठी

(१७२) गुरु पद प्रीति नीतिरत जेई । द्विज सेवक अधिकारी तेई ।
ता कहुं यह विशेष सुखदाई । जाहि प्रानप्रिय श्री रघुराई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४७
विजयानन्द त्रिपाठी

(१७३) गुरु पितु मातु बंधु सुर साईं । सेइ अहिं प्रान की नाईं ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१११
विजयानन्द त्रिपाठी

(१७४) गुरु पितु मातु स्वामि सिख पाले ।
चलेहु कुमग पग परहिं न खाले ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४५६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१७५) गुरु प्रसाद मंगल सकल राम - राज सब काज ।
जन्म, बिवाह ,उछाह,व्रत सुभ तुलसी सब काज ।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१४७
श्रीकान्त शरण

(१७६) गुरु बिनु भवनिधि तरै न कोई ।
जौं बिरंचि संकर सम होई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१७७) गुरु संगति गुरु होइ सो लघु संगति लघु नाम ।
चार पदारथ मैं गनैं नरक द्वारहू काम ।।

दोहावली,पृष्ठ-१२३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१७८) गुरु सरसइ सिंधुरवदन ससि सुरसरि सुरगाइ ।
सुमिरि चलहु मग मुदित मन होइहि सुकृत सहाइ ।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-२
श्री कान्त शरण

(१७९) गूढ़ौ तत्व न साधु दुरावहिं ।
आरत अधिकारी जहं पावहिं ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१८०) गौतम तिय तारन चरन कमल आनि उर देखु ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब करतल सगुन बिसेखु ।।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-६१
श्रीकान्त शरण

(१८१) ग्यान अगम प्रत्यूह अनेका । साधन कठिन न मन कहुं टेका ।
करत कष्ट बहु पावै कोऊ ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१८२) ग्यान अनभले को सबहि भले भलेहू काउ ।
सींग सूंड रद लूम नख करत जीव जड़ घाउ ।।
दोहावली-पृष्ठ-११६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१८३) ग्यानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार ।
केहि कै लोभ बिडंबना, कीन्हि न येहि संसार ।।
श्रीमदवक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि ।
मृगलोचनि के नयन सर को अस लाग न जाहि ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१८४) ग्रह ग्रहीत पुनि बस, तेहि पुनि बीछी मार ।
ताहि पिआइअ बारुनी , कहहु काह उपचार ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१८५) ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग ।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१८६) घर कीन्हें घर जात है घर छांडे घर जाइ ।।

दोहावली,पृष्ठ-८६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१८७) चढ़े न कूरे चंग ज्यों ज्यों ग्यान ज्यों सोक समाज ।
करम धरम सुख संपदा त्यों जानिबो कुराज ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१८८) चरन चोंच लोचन रंगी चली मराली चाल ।
क्षीर नीर बिबरन समय बक उघरत तेहि काल ।

दोहावली,पृष्ठ-११५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१८९) चरित राम के सगुन भवानी ।
तरकि न जाहिं बुद्धि बल बानी ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३१७
विजयानन्द त्रिपाठी

(१९०) चलइ जोंक चल बक्र गति जद्यपि सलिलु समान ।

दोहावली,पृष्ठ-७६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१६१) चलब नीति मग राम पग नेह निबाहब नीक ।
तुलसी परिहरिव सो बसन जो न पखारैं फीक ।।

दोहावली-पृष्ठ-१६२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१६२) चहिव विप्र उर कृपा घनेरी ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४७०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६३) चहुं जुग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ ।
कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६४) चहुं जुग तीनि काल तिहुं लोका ।
भये नाम जपि जीव बिसोका ।
वेद पुरान संत मत एहू ।
सकल सुकृत फल राम सनेहू ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६५) चातक हंस सराहिअत , टेक विवेक विभूति ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६६) चाहिव धरमसील नरनाहू ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१६७) चीन्हीं चौर जिय मारिहै ।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-५१८
राजनाथ शर्मा

(१६८) चूक चपलता मेरियै तू बडो बडाई ।
होत आदरे ढीठ है, अति नीच निचाई ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-१२८
राजनाथ शर्मा

(१६६) चौदह भुवन एक पति होई । भूतद्रोह तिष्ठै नहिं सोई ।
गुन सागर नागर नर जेऊ । अल्प लोभ भल कहइ न कोऊ ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१३८
विजयानन्द त्रिपाठी

(२००) छमा रोष के दोष गुन सुनि मनु मानहि सीख ।

दोहावली, पृष्ठ-१४६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२०१) छल मलीन मन तीय मिस विपति विषाद बिनास ।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-२८
श्रीकान्त शरण

(२०२) छली न होइ स्वामि सनमुख ज्यों तिमिर सातह्य जानसों ।

तुलसीकृत-गीतावली, पृष्ठ-३३१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२०३) छिद्यो न तरुनि कटाच्छ सर करेउ न कठिन सनेहु ।
तुलसी तिन की देह को जगत कवच करि लेहु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१४६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(२०४) छूटै न बिपति भजे बिनु रघुपति श्रुति सन्देह निबेरै ।
तुलसिदास सब आस छांडि करि होहु राम कर चेरो ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-१३२
राजनाथ शर्मा

(२०५) छूटै मल कि मलहि के धोएं ।
घृत कि पाव कोइ वारि विलोएं ।
प्रेम भगति जल बिनु रघुराई ।
अभि अंतर मल कबहुं कि जाइ ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२०६) छोटो बडो, खोटो खरो जग जो जहं रहत ।
अपने अपने का भलो कहु को न चहत ।
विधि लगि लघु कीट अवधि सुख सुखी दुख दहत ।
पसु लौं पसुपाल ईस बांधत छोरत नहत ।।

विनयपत्रिका-पृष्ठ-३०१
राजनाथशर्मा

(२०७) छोटो बडो चहत सब स्वारथ जो बिरंचि बिरचो है ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-४६२
राजनाथ शर्मा

(२०८) जग जांचिये कोऊ न जांचिये जानकी - जानहि रे ।
जेहि जांचल जांचकता जरि जाइ जो जारति जोर ।।

१६।अहि२- कवितावली,पृष्ठ-३०८
श्रीकान्त शरण

(२०६) जगदीस जुबति जनि सिरजहिं ।

पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१०

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२१०) जग बहु नर सरि सर सम भाई ।
जे निज बाढ़ि जलपाई ।।
सज्जन सकृत सिंधु सम कोई ।
देखि पूर बिधु बाढ़इ जोई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६

विजयानन्द त्रिपाठी

(२११) जग बिधि अधीन ।

गीतावली,पृष्ठ-२०१

संपादक-हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२१२) जग बौराइ राजपद पाएं ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३३०

विजयानन्द त्रिपाठी

(२१३) जगु मल मलेहि पोच कहुं पोचू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३१३

विजयानन्द त्रिपाठी

(२१४) जड चेतन गुन दोषमय विश्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१

विजयानन्द त्रिपाठी

(२१५) जथा अमल पावन पवन पाइ कुसंग सुसंग ।
कहिअ कुबास सुबास तिमि काल महीस प्रसंग ।।
दोहावली, पृष्ठ-१७३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२१६) जथा दरिद्र बिबुध तरु पाई ।
बहु संपति मांगत संकुलाई ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२१७) जथा धर्मसीलन्ह के दिन सुख संजुत जांहि ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२१८) जथा लाभ संतोष सुख रघुबर चरन सनेह ।
तुलसी जो मन खूंद सम कानन बसहुं कि गेह ।।
दोहावली, पृष्ठ-३१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२१९) जदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा ।
जाइअ बिनु बोलेहु न संदेहा ।
तदपि बिरोध मान जहं कोई ।
तहां गए कल्यान न होई ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४०
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२०) जदपि साधु सबही बिधि हीना ।
तदपि समता के न कुलीना ।।

यह दिन रैनि नाम उच्चरै ।
वह नित मान अगिनि में जरै ।।

वैराग्य सन्दीपिनी, पृष्ठ-४४
श्रीकान्त शरण

(२२१) जदपि जग दारुन दु:ख नाना ।
सब तें कठिन जाति अपमाना ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४२
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२२) जदपि जग दारुन दु:ख नाना ।
सब तें कठिन जाति अपमाना ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२१) जननी सम जानहिं परनारी ।
धनु पराव विष ते विष भारी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२३) जनमत मरत दुसह दुख होई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६१
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२४) जनम पत्रिका बरति कै देखहु मनहिं बिचारि ।
दारुन बैरी मीचु के बीच बिराजति नारि ।

दोहावली, पृष्ठ-६२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२२५) जनम मरन सब दुख सुख भोगा ।
हानि लाभु प्रिय मिलन वियोग ।
काल करम बस होहिं गोसाईं ।
बरबस राति दिवस की नाईं ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२१३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२६) जनि अचरजु करहु मन मांही । सुत तप तें दुर्लभ कछु नाहीं ।
तप बल तें जग सृजै विधाता ।
तप बल विस्नु भए परित्राता ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८४
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२७) जप जोग धर्म समूह ते नर भगति अनुपम पावईं ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६२
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२८) जप तप मख सम दम व्रत दाना ।
विरति विवेक जोग विज्ञाना ।
सब कर फल रघुपति पद प्रेमा ।
तेहि बिनु कोउ न पावै छेमा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२२९) जरउ सो संपति सदन सुखु सुहृद मातु पितु भाई ।
सनमुख होत जो रामपद करइ न सहस सहाइ ।।

दोहावली,पृष्ठ-५२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(२३०) जरै बरै बरु खीझि खिझावैं । राग द्वेष महं जनम गवांवैं ।
सपनेहुं सांति नहीं उन देही । तुलसी जहां जहां व्रत एही ।।
वैराग्य संदीपिनी, पृष्ठ-५८
श्रीकान्त शरण

(२३१) जलदु जनम भरि सुरति बिसारउ ।
जांचत जलु पवि पाहन डारउ ।।
चातकु रटनि घटें घटि जाइ ।
बढ़े प्रेम सब भांति भलाई ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२९३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२३२) जस आमय भेषज न कीन्ह तस कहा दिर मानी
सपने नृप कहं घटै बिप्र-बध विकल फिरै अघ लागे ।
बाजि मेघ सत कोटि करै नहिं सुद्ध होइ बिनु जागे ।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२८५
राजनाथ शर्मा

(२३३) जहं लगि नाथ नेह अरु नाते ।
पिय बिनु तियहिं तरनिहु ते ताते ।।
तनु धनु धामु धरनि पुर राजू ।
पति विहीन सबु सोक समाजू ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-९८
विजयानन्द त्रिपाठी

(२३४) वहां सांति सतगुरु की दई । तहां क्रोध की जर जरि गई ।
सकल काम बासना बिलानी तुलसी यहै सांति सहि दानी ।।
वैराग्य संदीपिनी, पृष्ठ-५३
श्रीकान्त शरण

(२३५) जाके प्रिय न राम बैदेही । सो छांड़िये कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-३७७
राजनाथ शर्मा

(२३६) जाके हृदय भगति जसि प्रीती । प्रभु तहं प्रकट सदा तेहि रीती ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-३१७
विजयानन्द त्रिपाठी

(२३७) जाको मन जासो बंध्यो, ताको सुखदायक सोइ ।
सरल सील साहिब सदा, सीतापति सरिस न कोइ ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४०४
राजनाथ शर्मा

(२३८) जागै बुध विद्या हित पंडित चकित चित ।
जागै लोभी लालची धरनि धन धाम के ।।

कवितावली-पृष्ठ-४५६
श्रीकान्त शरण

(२३९) जाति पांति कुल धर्म बड़ाई । धन बल परिजन गुन चतुराई ।
भगति हीन नर सोहै कैसा । बिनु जल वारिद देखिय जैसा

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-५८३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२४०) जानहु ब्रह्म सो बिप्रवर ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६०
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२४१) जानै जानन जौहरी बिनु जाने को जान ।

दोहावली, पृष्ठ-४१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२४२) जाय कहब करतूति बिनु जाग जोग बिन षेम ।
तुलसी जाय उपाय सब बिना राम पद प्रेम ।।

दोहावली, पृष्ठ-४३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२४३) जाय जोग जग छेम बिनु तुलसी के हित राखि ।

दोहावली, पृष्ठ-१६२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२४४) जाय सो सुभट समर्थ पाइ रन रारि न मंडै ।
जाय सो जती कहाय विषय - वासना न छंडै ।।
जाय धनिक बिनु दान जाय निर्धन बिनु धर्मंहि ।
जाय सो पंडित पढ़ि पुरान जो रत न सुकर्मंहि ।।
सुत जाय मातु पितु भक्ति बिनु, तिय सो जाय ।।
जेहि पति न हित ।
सब जाय दास तुलसी कहत जो न रामपद नेह नित ।।

कवितावली, पृष्ठ-४७४
श्रीकान्त शरण

(२४५) जा रिपु सों हारेहुं हंसी जिते पाप परितापु ।
तासों रारि निवारिएं समयं संभारिब आपु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१४८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२४६) जासु सरोसे सोइये राखि गोद में सीस ।
तुलसी तासु कुचाल तें रखवारो जगदीस ।।

दोहावली, पृष्ठ-१३६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२४७) जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।
सो नृपु अवसि नरक अधिकारी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२४८) जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई ।
कोटि भांति कोउ करै उपाई ।।
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई ।
रहि न सकै हरि भगति बिहाई ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२२१
विजयानन्द त्रिपाठी

(२४९) जिन्ह के मन मगन भए हैं रस सगुन तिन्ह के लेखे अगुन
मुकुति क वनि ।।

गीतावली, पृष्ठ-२७१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२५०) जीव करम बस सुख दुख भागी ।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२०
विजयानन्द त्रिपाठी

(२५१) जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना ।
श्रवन रंध्र अहि भवन समाना ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२५२) जिन्ह हरि भगति हृदय नहिं आनी ।
जीवत सव समान तेइ प्रानी ।
जो नहिं करै राम गुन गाना ।
जीह सो दादुर जीह समाना ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१४
विजयानन्द त्रिपाठी

(२५३) जीव अजान मैं आयो जहां सो तहां तुलसी तिहुं दाह दहो है ।
दोष न काहू कियो अपनो सपनेहु नहीं सुख लेस लह्यो ।।

कवितावली,पृष्ठ-४२५
श्रीकान्त शरण

(२५४) जीवन मुक्त ब्रह्म पर चरित सुनहि तजि ध्यान ।
जे हरि कथा न करहिं रति तिनके हिय पाखान ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२५५) जीव हृदय तम मोह विसेखी ।
ग्रन्थि छूटि किमि परै न देखी ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२१४
विजयानन्द त्रिपाठी

(२५६) जुग - जुग जग साके केसव के समन-कलेस कुसाज सुभाजी ।
तुलसी को न होइ सुनि कीरति कृष्ण कृपालु भगति पथ राजी ।।

श्रीकृष्णगीतावली,पृष्ठ-१६७
श्रीकान्तशरण

(२५७) जूझे ते भल बूझिबो भली जीति ते हार ।
डहके ते डहकाइबो भली जो करिअ विचार ।।

दोहावली, पृष्ठ-१४८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२५८) जे असि भगति जानि परिहरहीं ।
केवल ग्यान हेतु श्रम करहीं ।
ते जड़ काम धेनु गृह त्यागी ।
खोजत आकु फिरहिं पय लागी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२५९) जे एहि कथहिं सनेह समेता ।
कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता ।।
होइहहिं राम चरन अनुरागी ।
कलिमल रहित सुमंगल भागी ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६०) जे कामी लोलुप जग माहीं ।
कुटिल काक इव सबहिं डेराहीं ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२३४
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६१) जे गावहिं यह चरित संभारे । तेइ एहि ताल चतुर रखवारे ।
सदा सुनहिं सादर नर नारी । तेइ सुर बर मानस अधिकारी ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६२) जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं ।
तै जनु सकल विभव बस करहीं ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-७
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६३) जे गुर पद अंबुज अनुरागी ।
ते लोकहुं वेदहुं बड़ भागी ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३७६
विजयानन्द त्रिपाठी,

(२६४) जे ग्यान मान विमद तव भय हरनि भगति न आदरी ।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ।।
विस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे ।
जपि नाम तव श्रम तरहिं भवनाथ सो समरामहे ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६५) जे जन रूखे विषय रस चिकने राम सनेहं ।
तुलसी ते प्रिय राम को कानन बसहिं कि गेहं ।।

दोहावली,पृष्ठ-३१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२६६) जे न भजहि अस प्रभु भ्रम त्यागी ।
ग्यान रंक नर मंद अभागी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-६०९
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६७) जे न मित्र दुख होहिं दुखारी ।
तिन्हहिं विलोकत पातक भारी ।।

निज दुख गिरि समरज करि जाना ।
मित्र के दुख रज मेरु समाना ।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-१७
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६८) जे पर दोष लखहिं सहसांखी ।
पर हित घृत जिनके मनमाखी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६९) जे मद मार विकार भरे ते अचार-बिचार समीप न जाहीं ।।
कवितावली,पृष्ठ-४२६
श्रीकान्त शरण

(२७०) जे सकाम नर सुनहिं ते गावहिं ।
सुख संपति नाना विधि पावहिं ।।
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं ।
अंतकाल रघुपति पुर जाहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(२७१) जे सठ गुरसन इरषा करहीं ।
रौरव नरक कोटि जुग परहीं ।
त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा ।
अयुत जनम भरि पावहिं पीरा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२७२) जे हरिकथा न करहिं रति, तिनके हिय पाखान ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२७३) जेहिं अनुरागु लागु चितु सोइ हितु आपन ।।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-१३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२७४) जेहि कर मनु रम जाहि सन ।
तेहि तेही सन काम ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२७५) जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू ।
सो तेहि मिलै न कछु संदेहू ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४३५
विजयानन्द त्रिपाठी

(२७६) जेहि ते नीच बड़ाई पावा ।
सो प्रथमहिं हति ताहि नसावा ।
धूम अनल संभव सुनु भाई ।
तेहि बुझाव घन पदवी पाई ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१८४
विजयानन्द त्रिपाठी

(२७७) जैसें जनम दरिद्र महामनि पावइ ।
पेखत प्रगट प्रभाउ प्रतीति न आवइ ।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-२२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

)२७८) जाके सुधि मन कुटिल गति खल विपरीत ।
अनहित सोनित सोण सो सो हित सोणन हारु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१३७
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२७९) जो अति आतप व्याकुल होई ।
तरु छाया सुख जानै सोई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८०) जो अनुराग न राम सनेही सो ।
तो लह्यो लाहु कहा न देही सो ।
जो तनु धरी, परिहरि सब सुख, भये सुमति राम अनुरागी ।
सो तनु पाइ अघाइ किये अघ अवगुन उदधि अभागी ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४१०
राजनाथ शर्मा

(२८१) जो आपन चाहइ कल्याना । सुजसु सुमति सुभ गति सुख नाना ।
सो परनारि लिलार गोसाईं । तजै चौथि के चंद कि नाईं ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१३८
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८२) जो कोइ कोप भरे मुख बैना । सनमुख हने गिरा सर पैना ।।
तुलसी तऊ लेस रिस नाहीं । सो सीतल कहिए जगमाहीं ।।

वैराग्य सन्दीपिनी, पृष्ठ-५१
श्रीकान्त शरण

(२८३) जो चेतन कहं जड़ करइ जड़हि करइ चैतन्य ।
अस समरथ रघुनायकहिं भजहिं जीव ते धन्य ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२३
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८४) जो जस करइ सो तस फल चाखा ।

मानस,अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३१५
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८५) जोग जुगुति तप मंत्र प्रभाऊ ।
फलै तबहिं जब करिय दुराऊ ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६१
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८६) जो जो जेहिं रस मगन तहं सो मुदित मन मानि ।
रसगुन दोष बिचारिबो रसिक रीति पहिचानि ।।

दोहावली,पृष्ठ-१२७
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२८७) जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृतनिंदक मंदमति, आत्माहन गति जाय ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८२
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८८) जो परि पायं मनाइए तासों रूठि बिचारि ।
तुलसी तहां न जीतिए जहं जीतेहु हारि ।।

दोहावली-पृष्ठ-१४७
विजयानन्द त्रिपाठी

(२८६) जौ पै कृपा रघुपति कृपालु की । बैर और के कहा सरै ।
होइ न बांकी बार मक्त कौ, जौ कोउ कोटि उपाय करै ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-३१५
राजनाथ शर्मा

(२६०) जौ पै रहनि राम सौं नाहीं ।
तौ नर खर कूकर सूकर सम वृथा जियत जग माहीं ।।
विनयपत्रका, पृष्ठ-३७८
राजनाथ शर्मा

(२६१) जौ पै रामचरन रति होती ।
तौ कत त्रिविध सूल निसि बासर सहते बिपति निसोती ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-३६८
राजनाथ शर्मा

(२६२) जौ मजे भगवान सयान सोई । तुलसी हठ चातक ज्यौं गहि कै ।
नत और सबै विष बीज बये हर हाटक कामदुहा नहि कै ।
कवितावली, पृष्ठ-३१६
श्रीकान्त शरण

(२६३) जौ मधु मरै न मारिऐ माहुर देइ सो काउ ।
दोहावली, पृष्ठ-१४८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२६४) जौ रघुबीर चरन अनुरागे । तिन्ह सब भोग रोग सम त्यागे ।
काम भुजंग डसत जब जाही । विषय नींब कटु लगत न ताही ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२६१
राजनाथ शर्मा

(२६५) जौं सुनि समुझि अनीति रत जागत रहै जु सोइ ।
उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होइ ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(२६६) जौं सेवकु साहिबहि संकोची ।
निज हित चहइ तासु मति पोची ।
सेवक हित साहिब सेवकाई ।
करइ सकल सुख लोभ विहाई ।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६७) जौं अस हिसिषा करहिं नर, जड़ विवेक अभिमान ।
परहिं कलप भरि नरक महुं जीव कि ईस समान ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१५०
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६८) जौं घर बरु कुलु होइ अनूपा ।
करिअ विवाहु सुता अनुरूपा ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१५२
विजयानन्द त्रिपाठी

(२६९) जौं लरिका कछु अचगरि करहीं ।
गुरु पितु मातु मोद मन भरहीं ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४६३
विजयानन्द त्रिपाठी

(३००) जौ न होहिं मंगल मग सुर बिधि बाधक ।
तौ अभिमत फल पावहिं करि श्रमु साधक ।।
पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३०१) जौ निज मन परिहरै बिकारा ।
तौ कत द्वैत जनित संसृति -दुख संसय सोक अपारा ।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-२८८
राजनाथशर्मा

(३०२) जौं बालक कह तोतरि बाता । सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता ।
हंसि हसिं कूर कुटिल कुविचारी । जे पर दूषन भूषन धारी ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३०३) ज्यों कुरंग निज अंग रुचिर मद अति मतिहीन मरम नहीं पायो ।
खोजत गिरि तरु लता भूमि बिल परम सुगंध कहां धौं ।।
ज्यों सर बिमल बारि परि पूजन ऊपर कछु सिवार तृन छायो ।
जारत हियो ताहि तजिहौं सठ चाहत यहि बिधि तृषा बुझायो ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-४८०
राजनाथ शर्मा

(३०४) ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुण दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खल पतिहिं भजै ।
लोलुप भ्रमत गृहपसु ज्यों जहं तहं सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुं न मूढ़ लजै ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-२३५
राजनाथशर्मा

(३०५) ज्ञान पंथ कृपान कै धारा । परत खगेस होइ नहिं वारा ।
जो निर्विघ्न पंथ निरबहई । सो कैवल्य परम पद लहई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२१
विजयानन्द त्रिपाठी

(३०६) ज्ञान मान जहं एको नाहीं । देख ब्रह्म समान सब मांहीं ।
कहिअ तात सो परम विरागी । तृन सम सिद्धि तीन गु न त्यागी ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५२०
विजयानन्द त्रिपाठी

(३०७) ज्ञान विराग काल कृत करतब हमरेहि सिर धरिबे हो ।
श्रीकृष्णगीतावली,पृष्ठ-६४
श्रीकान्त शरण

(३०८) ज्ञान वैराग्य धन-धर्म- कैवल्य ।
सुख सुभग सौभाग्य सिव सानुकूल ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-७४
राजनाथ शर्मा

(३०९) झूठि न होइ देवरिषि बानी ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४८
विजयानन्द त्रिपाठी

(३१०) टेढ़ जानि सब बंदै काहू । वक्र चन्द्रमहि ग्रसै न राहू ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३११) ठाढ़ो द्वार दै सकै तुलसी जे नर नीच ।।
दोहावली,पृष्ठ-१३०
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३१२) ठीक प्रतीति कहै तुलसी।
जग होइ भले की भलाई भलाई ।।

कवितावली, पृष्ठ-४६६
श्रीकान्त शरण

(३१३) ढोल गंवार सूद्र पसु नारी ।
सकल ताड़ना के अधिकारी ।।

मानस-पृष्ठ-१७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(३१४) तजि अभिमान अनख अपनो हित कीजिय मुनिबर बानी ।

श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-११८
श्रीकान्त शरण

(३१५) तजि माया सेइअ परलोका मिटहिं सकल भव संभव सोका ।
देह धरे कर यह फलु भाई । भजिअ राम सब काम बिहाई ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-५४
विजयानन्द त्रिपाठी

(३१६) तन करि मन करि बचन करि काहू दूषत नाहिं ।
तुलसी ऐसे संत जन, रामरूप जग मांहि ।।

वैराग्य सन्दीपिनी, पृष्ठ-१६
श्रीकान्त शरण

(३१७) तनु गुन धन महिमा धरम तेहि बिनु जेहि अभिमान ।
तुलसी जिअत बिडंबना परिनामहु गत जान ।

दोहावली, पृष्ठ-१३३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३१८) तनु तिय तनय धामु धनु धरनी ।
सत्यसंध कहं तृन सम बरनी ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(३१९) तनु बिनु वेद भजन नहि बरना ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६४
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२०) तप अधार सब सृष्टि भवानी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२१) तप तीरथ मख दान नेम उपवास ।
सब ते अधिक राम जपु तुलसीदास ।।

बरवै रामायण,पृष्ठ-७४
श्रीकान्त शरण

(३२२) तपबल रचै प्रपंचु विधाता । तप बल विस्नु सकल जग त्राता ।
तपबल संभु करहिं संघारा । तपबल सेषु महि मारा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२३) तपु सुखप्रद दुख दोष नसावा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१५४
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२४) तब लगि कुसल न जीवन कहुं सपनेहुं मन बिश्राम ।
जब लगि भजत न राम कहुं सोक धाम तजि काम ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१५३
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२५) तब लौं दयावनी दुसह ख दारिद को,
साथरी को सोइबो, आढ़िबे भूने खेस को ।
जब लौं न भजै जीह जानकी जीवन राम,
राजन को राजा सो तौ साहिब महेस को ।।
कवितावली, पृष्ठ-४६०
श्रीकान्त शरण

(३२६) ताको भलो अजहूं तुलसी जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की ।
कवितावली, पृष्ठ-४२०
श्रीकात शरण

(३२७) तात अनल कर सहज सुभाऊ । हिम तेहि निकट जाय नहिं काऊ ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२८) तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुं छोभ ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६१
विजयानन्द त्रिपाठी

(३२९) ता बिन आस को दास भयो, कबहुं न मिट्यो लघु लालच जी को ।।
कवितावली, पृष्ठ-५३४
श्रीकान्त शरण

(३३०) ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुं मन बिश्राम ।
भूत द्रोह रत मोहबस राम बिमुख रति काम ।।
दोहावली, पृष्ठ-६४
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३३१) ताहि भजिअ मन तजि कुटिलाई ।
राम भजे गति केहि नहिं पाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३३२) तुलसिदास बड़े भाग मन लागेहूं ते सब सुख पूरति ।

श्रीकृष्णगीतावली,पृष्ठ-५८
श्रीकान्त शरण

(३३३) तुलसिदास व्रत दान ग्यान तप सुद्धि हेतु स्रुति गावै ।
राम चरन अनुराग नीर बिनु मल अति नास न पावै ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-२२६
राजनाथ शर्मा

(३३४) तुलसिदास भव त्रास मिटै तब, जब मति इहि स्वरूप अटकै ।
नाहिंत दीन मलीन हीन सुख कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भटकै ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-१६६
राजनाथशर्मा

(३३५) तुलसिदास सब विधि प्रपंच जग जदपि झूठ स्रुति गावै ।
रघुपति भक्ति संत संगति बिनु को भव त्रास नसावै ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-२८३
राजनाथ शर्मा ।

(३२६) तुलसिदास सो भजन बहावो जाहि दूसरो भावो ।

श्रीकृष्णगीतावली,पृष्ठ-७२
श्रीकान्त शरण

(३३७) तुलसीदास हरि गुरु करुना -बिनु । बिमल बिबेक न होई ।
बिनु बिबेक संसार घोर निधि पार न पावै कोई ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२७३
राजनाथ शर्मा

(३३८) तुलसी अपनो आचरन भलो न लागत कासु ।
तेहि न बसात जो खात नित लहसुनहू को बासु ।।
दोहावली, पृष्ठ-१२२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३३९) तुलसी असमय के सखा धीरज धरम बिबेक ।
सहित साहस सत्यव्रत राम भरोसो एक ।।
दोहावली, पृष्ठ-१५३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३४०) तुलसी उद्यम करम जुग जब जेहि राम सुडीठि ।
होइ सुफल सोइ ताहि सब सनमुख प्रभु तन पीठि ।।
दोहावली, पृष्ठ-३५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३४१) तुलसी किएं कुसंग थिति होहिं दाहिने बाम ।
कहि सुनि सकुचिअ सूम खल गत हरि संकर नाम ।।
दोहावली, पृष्ठ-१२४
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३४२) तुलसी खल बानी मधुर सुनि समुझिअ हियं हेरि ।
दोहावली, पृष्ठ-१३७
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३४३) तुलसी गुरु लघुता लहत लघु संगति परिनाम ।
दैवी देव पुकारिअत नीच नारि नर नाम ।।
दोहावली, पृष्ठ-१२४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३४४) तुलसी चातक ही फबै मान राखिबो प्रेम ।
बक्र बुंद लखि स्वातिहू निदरि निबाहत नेम ।।
दोहावली, पृष्ठ-६८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३४५) तुलसी चाहत साधु सुर सब सनेह सनमानु ।
दोहावली, पृष्ठ-११६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३४६) तुलसी चित चिंता न मिटै बिनु चिंतामनि पहिचाने।
मानस-विनयपत्रिका, पृष्ठ-४६८
विजयानन्द त्रिपाठी

(३४७) तुलसी जग जीवन अहित कतहुं कोउ हित हानि ।
सोषक भानु कृसानु महि पवन एक घन दानि ।।
दोहावली, पृष्ट-११६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३४८) तुलसी जप तप नेम व्रत सब सबही तें होइ ।
लहै बडाई देवता इष्टदेव जब होइ ।।
दोहावली, पृष्ट-११०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३४६) तुलसी जसि भवितव्यता तैसइ मिलि सहाइ ।
आपुन आवइ ताहि पाहिं ताहि तहां लै जाइ ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३५०) तुलसी जे कीरति चहहिं पर की कीरति खोइ ।
तिनके मुंह मसि लागिहै मिटिहि न मरिहै धोइ ।
दोहावली,पृष्ठ-१३३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३५१) तुलसी जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निसि बासर राम रटौ ।
कवितावली,पृष्ठ-४१२
श्रीकान्तशरण

(३५२) तुलसी जो लौं विषय की मुधा माधुरी मीठि ।
तौ लौं सुधा सहस्र सम राम भगति सुठि सीठि ।।
दोहावली,पृष्ठ-३[illegible]
हनुमान प्रसाद पो[illegible]

(३५३) तुलसी तजि आन भरोस भजै ।
भगवान भलो करिहैं जन को ।
कवितावली,पृष्ठ-२७१
श्रीकान्त शरण

(३५४) तुलसी तुलसी मंजरी मंगल मंजुल मूल ।
देखत सुमिरत सगुन सुभ कलपलता फल फूल ।।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-६२
श्रीकान्त शरण

UNIVERSITY

(३५५) तुलसी त्यों त्यों होइगी गरुई ज्यों ज्यों कामरि मीजै ।।

श्रीकृष्ण गीतावली, पृष्ठ-११४

श्रीकान्त शरण

(३५६) तुलसी दिन भल साहु कहं भली चोर कहं राति ।
निसि बासर ता कहं भलो मानै राम इताति ।।

दोहावली, पृष्ठ-५५

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३५७) तुलसी देखि सुबेषु भूलहिं मूढ़ न चतुर नर।
सुन्दर केकिहि पेखु बचन सुधा सम असन अहि ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२८२

विजयानन्द त्रिपाठी

(३५८) तुलसी निरभय होत नर सुनिअत सुरपुर जाइ ।
सो गति लखियत अछत तनु सुख संपति गति पाइ ।

दोहावली, पृष्ठ-१७०

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३५९) तुलसी परिहरि हरि हरहि पांवर पूजहिं भूत ।
अंत फजीहत होहिंगे गनिका के से पूत ।।

दोहावली, पृष्ठ-३२

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६०) तुलसी प्रीति प्रतीति सों राम नाम जप जाग ।
किएं होइ विधि दाहिनो देइ अभागेहि भाग ।

दोहावली, पृष्ठ-२४

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६१) तुलसी प्रेम पयोधि की ताते नाम न जोख ।।

दोहावली,पृष्ठ-६७

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६२) तुलसी बैर सनेह दोउ रहित विलोचन चारि ।
सुरा सेवरा आदरहिं निंदहिं सुरसरि बारि ।।

दोहावली,पृष्ठ-११२

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६३) तुलसी भगत सुपच भलो भजै रहनि दिन राम ।
ऊंचो कुल केहि काम को जहां न हरि को नाम ।

वैराग्य संदीपिनी ,पृष्ठ-४१

श्रीकान्त शरण

(३६४) तुलसी भलो सुसंग तै पोच कुसंगति सोइ ।
नाउ किंनरी तीर असि लोह बिलोकहु लोइ ।

दोहावली,पृष्ठ-१२३

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६५) तुलसी भेडी की धंसनि जड़ जनता सनमान ।
उपजत ही अभिमान भो खोवत मूढ़ अपान ।।

दोहावली,पृष्ठ-१६६

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६६) तुलसी मिटै न मरि मिटेहुं सांचो सहज सनेह ।
मोर सिखा बिनु मूरिहूं पलुहत गरजत मेह ।

दोहावली।पृष्ठ-२०६

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६७) तुलसी मिटै न मोह तम किये कोटि गुनग्राम ।
हृदय कमल फूलै नहीं, बिनु रविकुल रवि राम ।।
वैराग्य सन्दीपिनी,पृष्ठ-३
श्रीकान्त शरण

(३६८) तुलसी मीठी अमी तैं मागी मिलै जो मीच ।
साधु सुकाकर समय बिनु कालकूट तैं नीच ।।
दोहावली,पृष्ठ-१५३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६९) तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान ।
पाप पुन्य द्वै बीज हैं, बवै सो लवै निदान ।।
वैराग्य सन्दीपिनी,पृष्ठ-६
श्रीकान्तशरण

(३७०) तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रय ताप ।
सांति होइ जब सांति पद,पावै राम प्रताप ।।
वैराग्यसन्दीपिनी,पृष्ठ-१०
श्रीकान्तशरण

(३७१) तुलसी रघुबर की कृपा सकल सुमंगल खानि ।
दोहावली,पृष्ठ-७९
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३७२) तुलसी राम कृपालु सों कहि सुनाउ गुन दोष ।
होय दूबरी दीनता परम पीन संतोष ।।
दोहावली,पृष्ठ-४१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३७३) तुलसी राम जो आदरयो खोटो खरो खरोइ ।
दीपक काजर सिर धरयो सुधारयो धरोइ ।
दोहावली,पृष्ठ-४४
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३७४) तुलसी राम नाम जपु आलस छांड ।
राम विमुख कलिकाल को भयो न मांड ।।
बरवै रामायण,पृष्ठ-६६
श्रीकान्तशरण

(३७५) तुलसी राम नाम सम मित्र न आन ।
जो पहुंचाव राम पुर तनु अवसान ।।
बरवै रामायण,पृष्ठ-६७
श्रीकान्त शरण

(३७६) तुलसी राम सुदीठि तें निबल होत बलवान ।
दोहावली,पृष्ठ-४५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३७७) तुलसी रामहि परिहरें निपट हानि गुन ओझ ।
सुरसरि गत सोई सलिल सुरा सरिस गंगोझ ।
दोहावली,पृष्ठ-३३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३७८) तुलसी रामहु तें अधिक राम भगत जियं जान ।
दोहावली,पृष्ठ-४५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३७९) तुलसी लोग रिझाइबो करीष कातिबो नान्ह ।
दोहावली,पृष्ठ-१६६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३८०) तुलसी श्रीरघुबीर तजि करै भरोसो और ।
सुख संपति की का चली नरकहुं नाहीं ठौर ।।
दोहावली, पृष्ठ-३२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३८१) तुलसी संगति पोच की सुजनहि होति मदानि ।।
दोहावली, पृष्ठ-१८४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३८२) तुलसी समयहिं सब बडो बूझत कहुं कोउ कोउ ।
दोहावली, पृष्ठ-१५२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३८३) तुलसी सहावे बिधि सोइ सहियतु है ।
कवितावली,
पृष्ठ-४४ श्रीकान्त शरण

(३८४) तुलसी सहित सनेह नित सुमिरहु सीता राम ।
सगुन सुमंगल सुभ सदा आदि मध्य परिनाम ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३८५) तुलसी साधु समाज सुख सिद्ध दरस सुभ काज ।।
रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-४६
श्रीकान्त शरण

(३८६) तुलसी सुखद सांति को सागर ।
संतन गायो करन उजागर ।

तामैं तन मन रहै समोई ।
तहं अगिनि नहिं दाहै कोई ।।

वैराग्य संदीपिनी, पृष्ठ-५४
श्रीकान्तशरण

(३८७) तुलसी सुखी जो राम सों दुखी सो निज करतूति ।
करम बचन मन ठीक जेहि तेहि न सकै कलि धूति ।।

दोहावली, पृष्ठ-३६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३८८) तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगलमय नभ जल थली ।

गीतावली, पृष्ठ-३४०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३८९) तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि ।
वेद पुरान पुकारत कहत पुरारि ।।

बरवै रामायण, पृष्ठ-८३
श्रीकान्त शरण

(३९०) तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृति तेई जे एहि रंग रए ।

गीतावली, पृष्ठ८८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३९१) तुलसी सो समरथ सुमति सुकृति साधु सयान ।
जो बिचारि व्यवहरइ जग खरच लाभ अनुमान ।

दोहावली, पृष्ठ-१६२
हनुमान प्रसादपोद्दार

(३६२) तुलसी स्वारथ सामुहो परमारथ तन पीठि ।
अंध कहे दुख पाइहै डिठि-आरो केहि डीठि ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६३) तुलसी हरि अपमान तें होइ अकाज समाज ।
दोहवली, पृष्ठ-३२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(३६४) तुलसी है सनेह दुख दायक नहिं जानत ऐसो को है ?
श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-८५
श्रीकान्त शरण

(३६५) तृष्णा जाइ बरु मृगजाल पाना । बरु जामहि सस सीस विषाना ।
अंधकार बरु रविहि न सावै । राम विमुख न जीव सुख पावै ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३६६) तृष्णावंत जिमि पाइ पीयूषा ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६
विजयानन्द त्रिपाठी

(३६७) तेज प्रताप रूप जहं तहं बल बूझई ।।
जानकीमंगल, पृष्ठ-१६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(३६८) तेज होत तन तरनि को, अचरज मानत लोइ ।
तुलसी जो पानी भया, बहुरि न पावक होइ ।।
वैराग्य संदीपिनी, पृष्ठ-५६
श्रीकान्तशरण

(३९९) तै धीर अछत बिकार हेतु जे रहत मनसिज बस किए ।।

पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१०

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४००) तौ लौं लोलु लोलुप ललात लाची लबार ।
बार बार लालच धरनि-धन- धाम को ।।
तब लौं बियोग रोग सोग भोग जातना को ।
जुग सम लागत जीवन जाम जाम को ।।
तौ लौं दुख दारिद दहत अति नित तनु ।
तुलसी है किंकर बिमोह- कोह काम को,
सब दुख आपने, निरापने सकल सुख ।
जौ लौं जन भयो न बजाइ राजा राम को ।

कवितावली,पृष्ठ-४८६

श्रीकान्तशरण

(४०१) त्रिविध एक बिधि प्रभु अनुग अवसर करहिं कुठाट ।
सूधे टेढ़े सम विषम सब महं बारहबाट ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७२

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४०२) त्रिविध पाप संभव जो तापा ।
मिटहि दोष दुख दुसह कलापा ।।
परम सांति सुख रहै समाई ।।
तहं उतपात भेदो आई ।।

वैराग्य सन्दीपिनी,पृष्ठ-४६

श्रीकान्तशरण

(४०३) दंडक वन पावन करन चरन सरोज प्रभाउ ।
ऊसर जामहिं खल तरहिं होइ रंक ते राउ ।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-४६
श्रीकान्त शरण

(४०४) दंभिहि नीति कि भावई ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ१०२
विजयानन्द त्रिपाठी

(४०५) दया में बसत देव सकल धरम ।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४८६
राजनाथ शर्मा

(४०६) दरस परस मज्जन अरु पाना ।
हरै पाप कह वेद पुराना ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(४०७) दरिद्र मनु फिरत लागि धन धायौ ।

गीतावली, पृष्ठ-२६१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४०८) दारिद दमन दुख दोष दाह - दावानल,
दुनी न दयालु दूजो दानि सूलपानि सो ।।

कवितावली, पृष्ठ- ३६
श्रीकान्त शरण

(४०९) दास रता एक नाम सों, उभय लोक सुख त्यागि ।
तुलसी न्यारे ह्वै रहै, दहै न दुख की आगि ।।

वैराग्य संदीपिनी , पृष्ठ-४४
श्रीकान्तशरण

(४१०) फिरं पीठि पाछें लगै सनमुख होत पराइ ।
तुलसी संपति छांह ज्यों लखि दिन बैठि गंवाइ ।।
दोहावली,पृष्ठ-८६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४११) दीपसिखा सम जुबति तन मन जनि होसि पतंग ।
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सत संग ।
दोहावली,पृष्ठ-६३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४१२) दीरघ रोगी दारिदी कटुबच लोलुप लोग ।
तुलसी प्राण समान तउ होहिं निरादर जोग ।।
दोहावली,पृष्ठ-१६४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४१३) दुइज द्वैत मति छांडि चरहि महि मंगल धीर ।
बिगत मोह माया पद हृदय बसत रघुवीर ।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-४२१
राजनाथ शर्मा

(४१४) दुखित दोष गुन गनहिं न साधू ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५०
विजयानन्द त्रिपाठी

(४१५) देखिअहि रूप नाम आधीना । रूप ग्यान नहिं नाम बिहीना ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४१६) देव कहँ अपनी - अपना अवलोकन तीरथ राज चलो रे ।
देखि मिटैं अपराध अगाध निमज्जत साधु समाज भलो रे ।।
कवितावली,पृष्ठ-५१७
श्रीकान्तशरण

(४१७) देव नदी कहं जो जन जानि किये मनसा, कुल कोटि उधारे ।
कवितावली,पृष्ठ-५१६
श्रीकान्त शरण

(४१८) देस काल करता करम बचन बिचार बिहीन ।
ते सुरतरु तर दारिदी सुरसरि तीर मलीन ।
दोहावली,पृष्ठ१४२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४१९) देह जीव जोग के सखा मृषा टांचन टांचो ।
किये बिचार सार कदली ज्यों मनि कनक संग लघु लसत बीच
बिच कांचो ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-५३२
राजनाथशर्मा

(४२०) दोष दुरित दुख दारिद दाहक नाम ।
सकल सुमंगल दायक तुलसी राम ।
बरवैरामायण,पृष्ठ-८५
श्रीकान्तशरण

(४२१) दोष निलय यह विषय सोक प्रद कहत संत श्रुति टेरे ।
जानत हूं अनुराग तहां अति सो हरि तुम्हारेहि प्रेरे ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-३६५
राजनाथशर्मा

(४२२) दासु देह जननिहि जड तेहं ।
जिन्ह गुर साधु सभा नहिं सोहं ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८२
विजयानन्द त्रिपाठी

(४२३) द्विज गुर कोप कहहु को राखा ।
रा से गुर जौ कोप विधाता ।
गुरु विरोध नहिं कोउ जग त्राता ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४२४) द्विज देव गुरु हरि संत बिनु, संसार - पार न पाइये ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-३१०
राजनाथ शर्मा

(४२५) द्विज द्रोह किये कुल नासा ।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ,४३
विजयानन्द त्रिपाठी

(४२६) द्विज द्रोहिहिं न सुनाइय कबहूं ।
सुरपति सरिस होइ नृप जबहूं ।
रामकथा के तेइ अधिकारी ।
जिन्ह के मत संगति अति प्यारी ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४२७) धन्य जनमु जगतीतल तासू ।
पितहि प्रमोदु चरित सुनि जासु ।

चारि पदारथ करतल ताकें ।
प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकें ।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(४२८) धन्य देस सो जहं सुरसरी ।
धन्य सो भूप नीति जो करई ।
धन्य सो द्विज निज धरम न टरई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४५
विजयानन्द त्रिपाठी

(४२९) धन्य धन्य माता पिता, धन्य पुत्रवर सोइ ।
तुलसी जो रामहि भजे, जैसेहु कैसेहु होइ ।।

वैराग्य सन्दीपिनी, पृष्ठ-४०
श्रीकांताशरण

(४३०) धरम नीति उपदेसिअ ताही ।
कीरति भूति सुगति प्रिय जाही ।।
मन क्रम वचन चरन रत होई ।
कृपा सिंधु परिहरिअ कि सोई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१०८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४३१) धरमु न दूसर सत्य समाना । आगम निगम पुरान बखाना ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(४३२: धरम न सत्य समान ।।

दोहावली, पृष्ठ-७६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४३३) धर्म तें बिरति, जोग तें ग्याना ।
ग्यान मोच्छ प्रद वेद बखाना ।।
जाते वेगि द्रवउं मैं माई ।
सो मम भगति भगत सुखदाई ।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ, ५२३
विजयानन्द त्रिपाठी

(४३४) धाइ लगे लोहा ललकि खैंचि लेइ नइ नीचु ।
समरथ पापी सों बयर जानि बिसाही मीचु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४३५) धाम को गांव प्यार ते जानिय ज्ञान विषय मन मोरे ।
तुलसी अधिक कहे न रहे रस गूलरि को-सो फल फोरे ।।

श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-१०७
श्रीकान्त शरण

(४३६) धीरजु धर्म मित्र अरु नारी । आपद काल परिखि अहि चारी ।
वृद्ध रोग बस जड़ धनहीना । अंध बधिर क्रोधी अति दीना ।
ऐसेहु पति कर किए अपमाना । नारि पाव जमपुर दु:ख नाना ।
एकै धर्म एक व्रत नेमा । काय वचन मन पति पद प्रेमा ।।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-८८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४३७) धीर बीर रघुबीर प्रिय सुमिरि समीर कुमारु ।
अगम सुगम सब काज करु करतल सिद्धि बिचारु ।
दोहावली, पृष्ठ-७९
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४३८) धूम कुसंगति कारिख होई । लिखिअ पुरान मंजु मसि सोई ।
सोइ जल अनल अनिल संघाता । होइ जलद जगजीवन दाता ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२३
विजयानन्द त्रिपाठी

(४३९) धेनु धूरि बेला विमल सकल मंगल मूल ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-५२७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४४०) नकुल सुदरसन दरसनी क्षेमकरी चक चाष ।
दस दिसि देखत सगुन सुभ पूजहिं मन अभिलाष ।
दोहावली, पृष्ठ-१५८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४४१) नगर नारि भूचिव सेवक सखा अगार ।
सरस परिहरें रंग रस निरस बिषाद बिकार ।
दोहावली, पृष्ठ-१६३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४४२) न मिटै भव संकट दुर्घट है, तप तीरथ जनम अनेक अटो ।
कवितावली, पृष्ठ-४१२
श्रीकान्त शरण

(४४३) न यावद् उमानाथ पादारविंदं ।
भजन्तीह लोके परे वा नराणां ।।
न तावत्सुखं शांति संताप नाशं ।
प्रसीद प्रभो सर्व भूताधिवासं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४४४) नरतन भव वारिधि कहुं बेरो ।
सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो ।
करन धार सद्गुरु दृढ़ नावा ।
दुर्लभ साजु सुलभ करि पावा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८२
विजयानन्द त्रिपाठी

(४४५) नरतन सम नहिं कवनिउ देही ।
जीव चराचर जाचत जेही ।
नरक स्वर्ग अपवर्ग निसेनी ।
ज्ञान विराग भगति सुभ देनी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४४६) नरवर धीर धरम धुर धारी ।
निगम नीति कहुं ते अधिकारी ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१०७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४४७) नर सरीर धरि जे पर पीरा । करहिं ते सहहिं महा भव भीरा ।
करहि मोह बस नर अघनाना । स्वारथ रत पर लोक नसाना ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७

(४४८) नर सहस्र महहु पुरारी । कोउ एक होइ धर्म व्रत धारी ।
धर्म सील कोटिक मह कोई । विषय विमुख विरागरत होई ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४४९) नवनि नीच क अति दुखदाई । जिमि अंकुस धनु उरग बिलाई ।
भयदायक खल कै प्रिय बानी । जिमि अकाल के कुसुम भवानी ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-५५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५०) नवहिं बुध विद्या पाये ।।
मानस- किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३५
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५१) नहिं असत्य सम पातक पुंजा ।
गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा ।
सत्यमूल सब सुकृत सुहाए ।
वेद पुरान विदित मनु गाए ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५२) नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं ।
प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं ।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५३) नहिं दरिद्र सम दुख जग मांही ।
संत मिलन सम सुख जग नांही ।।

पर उपकार क्वन मन काया ।
संत सहज सुभाउ खगराया ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५४) नातो मिटत न मोर ।।

गीतावली,पृष्ठ-२४२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४५५) नाथ न चली गो बल अनल भयावनो ।

कवितावली,पृष्ठ-२०१
श्रीकान्त शरण

(४५६) नाना कर्म धर्म व्रत दाना । संयम दम जप तप मख नाना ।
भूतदया द्विजगुरु सेवकाई । विद्या विनय विवेक बड़ाई ।
जहं लगि साधन वेद बखानी । सब कर फल हरि भगति भवानी ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५७) नाम ओट लेत ही निखोट होत खोटे खल ।
चोट बिनु मोट पाइ भयो न निकालु को ?

कवितावली,पृष्ठ-२८५
श्रीकान्तशरण

(४५८) नाम कामतरु काल कराला । सुमिरत समन सकल जगजाला ।
राम नाम कलि अभिमत दाता । हित परलोक लोक पितु माता।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७०
विजयानन्द त्रिपाठी

(४५६) नाम गरीब निवाज को राज देत जन जानि ।
तुलसी मन परिहरत नहिं धुर वनिआ की बानी ।
दोहावली, पृष्ठ-१७
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४६०) नाम राम को कल्पतरु ,कलि कल्यान निवासु ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६१) नाम रूप गति अकथ कहानी ।
समुझत सुखद न परति बखानी ।
अगुन सगुन बिच नाम सुसाखी ।
उभय प्रबोधक चतुर दुभाखी ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-५६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६२) नामु सप्रेम जपत अनयासा ।
भगत होहिं मुद मंगल वासा ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-६३
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६३) नारि जनमु जग जाय सखी कहि सोचहिं।
पार्वतीमंगल, पृष्ठ-३६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४६४) नारि धरम पति देव न दूजा ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६५) नारि विश्व माया प्रकट ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२११
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६६) नारि सहज जड अग्य ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१३३
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६७) नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं ।
अवगुन आठ सदा उर रहहीं ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४६८) नाहिनै काहू लह्यौ सुख प्रीति करि इक अंक ।
कौन भीर जो नीरदहि जेहि लागि रटत बिहंग ।।
मीन जल बिनु तलफि तनु तजै सलिल सहज असंग ।
पीर कछु न मनिहिं जाके बिरह बिकल भुअंग ।।
व्याध विसिख विलोक नहिं कलगान लुबुध कुरंग ।।

श्रीकृष्णगीतावली,पृष्ठ-१३६-१४०
श्रीकान्तशरण

(४६९) निगम अगम साहिब सुगम राम सांचिली चाह ।
अंबु असन अवलोकित सुलभ सबै जग मांह ।।

दोहावली,पृष्ठ-३६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४७०) निज कवित्त केहि लाग न नीका ।
सरस होउ अथवा अति फीका ।।

जे पर भनित सुनत हरखाहीं ।
ते वर पुरुष बहुत जग नाहीं ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४७१) निज गुन घटत न नाग नग परखि परिहरत कौल ।
तुलसी प्रभु भूषन किए गुंजा बढ़े न मौल ।

दोहावली,पृष्ठ-१३१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४७२) निज दूषन गुन राम के समुझे तुलसीदास ।
होइ भलो कलि कालहूं उभय लोक अनयास ।

दोहावली,पृष्ठ-३५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४७३) निज संगी ,) निज सम करत दुरजन मन दुख दून ।
मलयाचल हैं संत जन, तुलसी दोष विहून ।।

वैराग्य संदीपिनी,पृष्ठ-२३
श्रीकान्त संदीपिनी

(४[illegible]) निज सुख विनु मन होइ कि थीरा ।
परस कि होइ विहीन समीरा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५५
विजयानन्द त्रिपाठी

(४७५) निठुरता अरु नेह की गति कठिन परति कहीन ।

श्रीकृष्णगीतावली,पृष्ठ-१४२
श्रीकान्त शरण

(४७६) निडर ईस तें बीस कै बीस बाहु सो होइ ।
गयो गयो कहो सुमति सब भयो कुमति कह कोइ ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६७
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४७७) निमिष दंड भरि एकै बारा ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४७८) नीचगुडी ज्यों जानिबो सुनि लखि तुलसीदास ।
ढीलि दिएं गिरि परत महि खैंचत चढ़त अकास ।।
दोहावली, पृष्ठ-१३८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४७९) नीच निचाई नहिं तजइ सज्जनहू के संग।
तुलसी चंदन बिटप बसि बिनु बिष भए न भुअंग ।।
दोहावली, पृष्ठ-११६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४८०) नीच निरादरहीं सुखद आदर बिसाल ।
कदरी बदरी बिटप गति पेखहु पनस रसाल ।।
दोहावली, पृष्ठ-१२२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४८१) नीच निरावहिं निरस तरु तुलसी सींचहिं ऊख ।
पोषत पयद समान सब विष पियूष के रूख ।।
दोहावली, पृष्ठ-१२६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४८२) नीति निपुन सोइ परम सयाना ।
श्रुति सिद्धान्त नीक तेहि जाना ।
सोइ कवि कोविद सोइ रन धीरा ।
जो छल छांडि भजै रघुवीरा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५
विजयानन्द त्रिपाठी

(४८३) नीति विरोध न मारिय दूता ।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-११३
विजयानन्द त्रिपाठी

(४८३) नीच मीचु लै जाइ जो राम रजायसु पाइ ।
तो तुलसी तेरो भलो न तु अनभलो अघाई ।

दोहावली,पृष्ठ-५७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४८४) नृप न सोह बिनु बचन नाक बिनु भूषन ।

जानकीमंगल,पृष्ठ-२१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(४८५) नैहर जनमु भरब बरु जाई । जियत न करवि सवति सेवकाई ।
अरि वस दैउ जियावत जाही । मरनु नीक तेहि जीवन चाही ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३४
विजयानन्द त्रिपाठी

(४८६) पति वंचक परपति रति करई ।
रौरव नरक कल्प सत परई ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८६

(४८७) पय नहाइ फल खाहु परिहरिअ आस ।
सीय राम पद सुमिरहु तुलसीदास ।

बरवै रामायण,पृष्ठ-६१
श्रीकान्तशरण

(४८८) पर अकाज लगि तनु परिहरहीं ।
जिमि हिम उपल कृषी दलि गरहीं ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४८९) पर उपदेश कुसल बहु तेरे ।
जे आचरहिं ते तर न घनेरे ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(४९०) परद्रोही परदार रत परधन पर अपवाद ।
ते नर पावंर पापमय देह धरें मनुजाद ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७५
विजयानन्दत्रिपाठी

(४९१) परसु हानि सबु कहं बड लाहू ।
अविन मौर नहिं दूषन काहू ।।

मानस-अयोध्याकाड,पृष्ठ-२५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(४९२) परबस जीव स्वबस भगवंता ।
जीव अनेक एक श्रीकंता ।
मुधा भेद जद्यपि कृत माया ।

बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१३५

विजयानन्दत्रिपाठी

(४६३) पर संपदा बिनासि न सांही ।
जिमि ससि हति हिमि उपल बिलांही ।
दुष्ट उदय जग अनरथ हेतू ।
जथा प्रसिद्ध अधम ग्रहकेतू ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२६

विजयानन्द त्रिपाठी

(४६४) पर सुख संपति देखि सुनि जरहिं जे जड़ बिनु आगि ।
तुलसी तिन के भाग ते चलै भलाई भागि ।।

दोहावली,पृष्ठ-१३२

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(४६५) परहित बस जिन्ह के मन मांही ।
तिन्ह कहुं जग दुर्लभ कछु नाहीं ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५७६

विजयानन्द त्रिपाठी

(४६६) परहित लागि तजै जो देही ।
संतत संत प्रसंसहिं तेही ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६६

विजयानन्द त्रिपाठी

(५६७) परहित सरिस धरम नहिं भाई ।

परपीडा सम नहिं अधमाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७७
विजयानन्द त्रिपाठी

(४९८) परहित हानि लाभ जिन केरें ।
उजरे हरख विषाद बसेरें ।।

मानस-पृष्ठ -१५ बालकाण्ड
विजयानन्द त्रिपाठी

(४९९) पराधीन सपनेहु सुख नाहीं ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१९७
विजयानन्द त्रिपाठी

(५००) परिजन प्रजउ चहिअ जस राजा ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६२
विजयानन्द त्रिपाठी

(५०१) परिनाम पचहिं पातकी पाप ।।

गीतावली,पृष्ठ-३१०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५०२) पांवर करहिं गुमान ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-११०
विजयानन्द त्रिपाठी

(५०३) पाके पकए बिटप दल उत्तम मध्यम नीच ।
फल नर लहैं नरेस त्यों करि बिचार मन बीच ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५०४) पात पात को सींचिबो न करू सरग तरु होत ।
कुटिल कटुक फर फरैगो तुलसी करत अचेत ।।
दोहावली,पृष्ठ-१५५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५०५) पाप ताप सब सूल नसावै । मोह अंध रवि वचन बहावै ।
तुलसी ऐसे सद्गुरु साधू । वेद मध्य गुन बिदित अगाधू ।।
वैराग्य सन्दीपिनी ,पृष्ठ-२६
श्रीकान्तशरण

(५०६) पारस जौ घर मिलै तौ मेरु कि जाइव ।
पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(५०७) पावन प्रेम राम चरन कमल जनम लाहु परम ।
राम नाम लेन होत, सुलभ सकल धरम ।।
जोग मख बिबेक बिरति बेद बिदित करम ।
करिबे कहं कटु कठोर सुनत मधुर नरम ।।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-२६६
राजनाथशर्मा

(५०८) पावन जस कि पुन्य बिनु होई ।
बिनु अघ अजस कि पावै कोई ।।
लाभु कि कछु हरि भगति समाना ।
जेहि गावहिं श्रुति संत पुराना ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२००
विजयानन्द त्रिपाठी

(५०६) पावहिं मोह विमूढ़ जे हरि विमुख न धर्म रति ।

मानस, अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-४७६

विजयानन्द त्रिपाठी

(५१०) पाही खेती लगन बट रिन कुब्याज मग खेत ।

बैर बडे सों आपने किए पांच दुख हेत ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६४

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५११) पिअहि सुमन रस अति बिटप काटि कोल फल खात ।

तुलसी तरुजीवि जुगल सुमति कुमति की बात ।।

दोहावली, पृष्ठ-११८

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(५१२) पितु आयसु सब धरमक टीका ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६५

विजयानन्द त्रिपाठी

(५१३) प्रिय वियोग सम दुख जग नांही ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६७

विजयानन्द त्रिपाठी

(५१४) पीतम बिरह तौ सनेह सरबसु सुत ।

औसर को चूकिबो सरिस न हानि ।

गीतावली, पृष्ठ-२६६

हनुमानप्रसाद, पोद्दार

(५१५) पुत्रवती जुवती जग सोई । रघुपति भगत जासु सुत होई ।
नतरू बांझ भलि बादि बिआनी । राम बिमुख सुत तें हित जानी ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-११२
विजयानन्द त्रिपाठी

(५१६) पुन्य एक जगमहु नहिं दूजा । मन क्रम वचन विप्रपद पूजा ।
सानुकूल तेहि पर मुनि देवा । जो तजि कपट् करै द्विज सेवा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८४
विजयानन्द त्रिपाठी

(५१७) पुन्य पुरुष कहुं महि सुख छाई ।।
मानस-बाल काण्ड,पृष्ठ-४८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(५१८) पुन्य प्रीति पति प्रापतिउ परमारथ पथ पांच ।
लहहिं सुजन परहरहिं खल सुनहु सिखावन सांच ।।
दोहावली-पृष्ठ-१२२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५१९) पुरुष त्याग सक नारिहि, जो बिरक्त मति धीर ।
तनु कामी बिषयाबस बिमुख जो पद रघुबीर ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२११
विजयानन्द त्रिपाठी

(५२०) पुरुष प्रताप प्रबल सब भांति ।
अबला अबल सहज जड जाती ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२११
विजयानन्द त्रिपाठी

(५२१) पुरुषारथ स्वारथ सकल परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब सगुन सुभ सुमिरत सीताराम ।।
दोहावली, पृष्ठ-१६१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५२२) पूंछ सों प्रेम, बिरोध सींग सों,
यहिबिचार हितहानी ।।
श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-१२२
श्रीकान्त शरण

(५२३) पेखि सप्रेम पयान समै सब सोच बिमोचन छेमकरी है ।
कवितावली, पृष्ठ-५६६
श्रीकान्त शरण

(५२४) पेट न फूलत बिनु कहें कहत न लागइ ढेर ।
सुमति बिचारें बोलिए समुझि कुफेर सुफेर ।।
दोहावली, पृष्ठ-१४६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५२५) प्रकृति पार प्रभु सब उरबासी ।
ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी ।
इहां मोह कर कारन नांही ।
रवि सनमुख तम कबहुं कि जांही ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२५
विजयानन्द त्रिपाठी

(५२६) प्रभु अगाध सत कोटि पताला ।
समन कोटि सत सरिस कराला ।
तीरथ अमित कोटि सत पावन ।
नाम अखिल अघपुंज नसावन ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५७
विजयानन्द त्रिपाठी

(५२७) प्रीति प्रतीति सुरीति सों राम राम जपु राम ।
तुलसी तेरो है भलो आदि मध्य परिनाम ।

दोहावली,पृष्ठ-२०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५२८) प्रीति बिना नहिं भगति ढिढाई ।
जिमि खगपति जल कै चिकनाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५३
विजयानन्द त्रिपाठी

(५२९) प्रीति राम पद नीति रति धरम प्रतीति सुभायं ।
प्रभुहि न प्रभुता परिहरै कबहुं बचन मन कायं ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५३०) प्रीति राम सों नीति पथ चलिय राग रिस जीति ।
तुलसी संतन के मते इहै भगति की रीति ।।

दोहावली,पृष्ठ-३८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५३१) प्रेम तृषा बाढति भली घटें घटैगी आनि ।।
दोहावली, पृष्ठ-६६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५३२) प्रेम न परखिअ परुषपन पयद सिखावन एह ।
जग कह चातक पातकी ऊसर बरसै मेह ।।
दोहावली, पृष्ठ-१०२
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(५३३) प्रेम पियूष रूप उडुपति बिनु कैसेहो
बलि पैयत रवि पाहीं ।।
श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-१५३
श्रीकृष्ण शरण

(५३४) प्रेम सरीर प्रपंच रुज उपजी अधिक उपाधि ।
तुलसी भली सुबैदई बेगि बांधिऐ ब्याधि ।।
दोहावली, पृष्ठ-८३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५३५) फरइ कि कोदव बालि सुसाली ।
मुकता प्रसव कि संबुक काली ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(५३६) फल भारन नमि बिटप सब, रहे भूमि निअराइं ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसंपति पाइं ।।
मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६५
विजयानन्द त्रिपाठी

(५३७) फूले फरै न बेत , जदपि सुधा बरषहिं जलद ।
मूरख हृदय न चेत, जौ गुरु मिलहिं विरंचि ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२११
विजयानन्द त्रिपाठी

(५३८) फोरहिं सिल लोढ़ा सदन लागें अढ़ुक पहार ।

दोहावली,पृष्ठ-२६२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५३९) बंचक बिरोध न कुसल कुल कुसगुन कोटि कुचालि ।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-६६
श्रीकान्तशरण

(५४०) बंचक चोर प्रपंच कृत, सगुन कहत हित हानि ।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-५५
श्रीकान्तशरण

(५४१) बचन बिचार अचार तन मन करतब छल छूति ।
तुलसी क्यों सुख पाइए अंतरजामिहि धूलि ।।

दोहावली,पृष्ठ-१४२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५४२) बचन बेष क्यों जानिऐ मन मलीन नर नारि ।।

दोहावली,पृष्ठ-१४०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५४३) बचन बेष तें जो बनइ सो बिगरइ परिनाम ।
तुलसी मन तें जो बनइ बनी बनाई राम ।।

दोहावली,पृष्ठ-५७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५४४) बटु बिस्वासु अचल निज धरमा ।
तीरथ राज समाज सुकरमा ।
सबहिं सुलभ सब दिन सब देसा ।
सेवत सादर समन कलेसा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१२
विजयानन्द त्रिपाठी

(५४५) बड़ कलेस कारज अलप बड़ी आस लहु लाहु ।।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१५८
श्रीकान्तशरण

(५४६) बडि प्रतीति गठिबंध तें बडो जोग तें छेम ।
बडो सुसेवक साइं तें बडो नेम तें प्रेम ।।

दोहावली,पृष्ठ-१६२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५४७) बडे भाग अनुराग राम सन होय ।

बरवै रामायण,पृष्ठ-६२
श्रीकान्तशरण

(५४८) बडे भाग पाइब सत संगा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(५४९) बडे सनेह लघुन्ह पर करहीं ।
गिरि निज सिरनि सदा तृन धरहीं ।
जलधि अगाध मेलि वह फेनू ।
संतत धरनि धरत सिर रेनू ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२९०
विजयानन्द त्रिपाठी

(५५०) बड़े ही की ओट, बलि बांचि आये छोटे हैं।
चलत खरे के संग जहां तहां खोटे हैं।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-३८१
राजनाथशर्मा

(५५१) बढ़ी गहे ते होत बड़ ज्यों बावन कर दंड।।

दोहावली, पृष्ठ-१८२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५५२) बर कन्या अनेक जग माहीं।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६५
विजयानन्द त्रिपाठी

(५५३) बरै बालकु एक सुभाऊ।
इन्हहि न संत बिदूषहिं काऊ।
तेहिं नाहीं कछु काज बिगारा।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१६५ ४
विजयानन्द त्रिपाठी

(५५४) बरषत हरषत लोग सब करषत लखै न कोइ।
तुलसी प्रजा सुभाग ते भूप भानु सो होइ।

दोहावली, पृष्ठ-१७४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५५५) बरषा को गोबर भयो को चहै को करै प्रीति।
तुलसी तू अनुभवहि अब राम बिमुख की रीति।।

दोहावली, पृष्ठ-३४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५५६) बरषि बिस्व हरषित करत हरत ताप अघ प्यास ।
तुलसी दोष न जलद को जो जल जरै जवास ।।
दोहावली,पृष्ठ-१२०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५५७) बवा सो लुनिअ लहिअ जो दीन्हा ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२७
विजयानन्द त्रिपाठी

(५५८) बसि कुसंग चह सुजनता ताकी आस निरास
तीरथहू को नाम भो ` गया ` मगह के पास ।।
दोहावली,पृष्ठ-१२८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५५९) बहु उपाय संसार- तरन कहँ बिमल गिरा श्रुति गावै ।
तुलसिदास मैं - मोर गये बिनु जिउ सुख कबहुं न पावै ।
विनयपत्रिका,पृष्ठ-२८२
राजनाथशर्मा

(५६०) बहु सुत बहु रुचि बहु बचन बहु अचार व्यवहार ।
इनको भलो मनाइबो यह अग्यान अपार ।।
दोहावली,पृष्ठ-१६४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५६१) ब्रह्म राम ते नामु बड़ बरदायक बरदानि ।
राम चरित सत कोटि महं लियै महेस जिय जानि ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(५६१) बांझ कि जान प्रसव कै पीरा ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(५६२) बादि बीर जननी जीवन जग छत्रि जाति गति मारी ।।

गीतावली,पृष्ठ-१६०
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(५६३) बारक नाम कहत जग जेऊ ।
होत तरन तारन नर तेऊ ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३१२
विजयानन्द त्रिपाठी

(५६४) बाल दोष गुन गनहिं न साधू ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४६१
विजयानन्द त्रिपाठी

(५६५) ब्यालहु तें बिकराल बड़ ब्याल फेन जियं जानु ।
वहि के खाएं मरत है वहि के खाएं बिनु प्रानु ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५६६) बिगरी जनम अनेक की सुधरै अबहीं आजु ।
होहि राम को नाम जपु तुलसी तजि कुसमाजु ।

दोहावली, पृ०-२०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५६७) बिगरे सेवक स्वान ज्यों साहिब सिर गारी ।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-३३६

राजनाथ शर्मा

(५६८) बिन आंखिन की पानहीं पहचानत लखि पाय ।

चारि नयन के नारि नर सूझत मीचु न माय ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५६९) बिनय न मानहिं जीव जड़ डाटें नवहिं अचेत ।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१११

श्रीकान्तशरण

(५७०) बिनु कामना कलेस कलेस न बूझई ।।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-१६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५७१) बिनु गुरु होइ कि ज्ञान ज्ञान कि होइ बिराग बिनु ।

गावहिं वेद पुरान सुख की लहिअ हरि भगति बिनु ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१५३

विजयानन्द त्रिपाठी

(५७२) बिनु तप तेज कि कर विस्तारा ।

जल बिनु रस कि होइ संसारा ।।

सील कि मिल बिनु बुध सेवकाई ।।

जिमि बिनु तेज न रूप गुसाईं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१४४

विजयानन्द त्रिपाठी

(५७३) बिनु तव कृपा राम-पद पंकज,सपनेहुं भगति न होई ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-७२

राजनाथशर्मा

(५७४) बिनु प्रपंच छल भीख भलि लहिव न दिएं कलेस ।

बावन बलि सों छल कियो दियो उचित उपदेस ।।

दोहावली,पृष्ठ-१३४

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५७५) बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहि न रामु ।

रामकृपा बिना सपनेहुं जीवन लह बिश्राम ।।

दोहावली,पृष्ठ-५९

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५७६) बिनु बिज्ञान कि समता आवै ।

कोउ अवकास कि नभ बिनु पावै ।

श्रद्धा विना धरमु नहिं होई ।

विनु महि गंध कि पावै कोई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५४

विजयानन्द त्रिपाठी

(५७७) बिनु विश्वास भगति नहिं, तेहि विनु द्रवहि न राम ।

रामकृपा विनु सपनेहु जीवन लह विश्राम ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५५

विजयानन्द त्रिपाठी

(५७८) बिनु श्रम नारि परम गति लहई । पतिव्रत धर्म छांडि छल गहई ।

(५७८) पति प्रतिकूल जनम जहं जाई । विधवा होइ पाइ तरुनाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-४६०

विजयानन्द त्रिपाठी

(५७६) बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग ।

मोह गएं बिनु रामपद होइ न दृढ़ अनुराग ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०८

विजयानन्द त्रिपाठी

(५८०) बिनु सत्संग विवेक न होई । रामकृपा बिनु सुलभ न सोई ।

सतसंगत मुद मंगल मूला । सोइ फल सिधि सब साधन फूला ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१४

विजयानन्द त्रिपाठी

(५८१) बिनु सन्तोष न काम नसाहीं । काम अछत सुख सपनेहु नाहीं ।

राम भजन बिनु मिटहिं न कामा । थल बिहीन तरु कबहुकि जामा ।।

मास-उत्तरकाण्डपृष्ठ-१५३

विजयानन्द त्रिपाठी

(५८२) बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा ।

रामकृपा बिनु सुनु खगराई ।

जानि न जाई राम प्रभुताई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१५२

विजयानन्द त्रिपाठी

(५८३) बिपरीत गति बिधि बाम की ।

जानकीमंगल,पृष्ठ-२३

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५८४) बिपुल बनिज बिद्या बसन सुख बिसेषि गृह काज ।
सगुन सुमंगल कहब सुभ सुमिरि सीय रघुराज ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१४७
श्रीकान्त शरण

(५८५) बिमल हृदि - भवन कृत सांति -परजंक सुभ सयन
विश्राम श्रीराम राया ।
छमा करुना प्रमुख तत्र परिचारिका जत्र हरि तत्र नहिं भेद माया ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-१५२
राजनाथशर्मा

(५८६) बिरुचि परखिए परखिए सुजन जन राखि परखिए मंद ।
बडवानल सोषत उदधि हरष बढ़ावत चंद ।।

दोहावली, पृष्ठ-१२८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५८७) बिसरे गृह सपनेहुं सुधि नाहीं ।
जिमि पर द्रोह संत मन नांही ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३८
विजयानन्द त्रिपाठी

(५८८) बीर महा अवराधिये साधे सिधि होय ।
सकल काम पूरन करै, जानै सब कोय ।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२६३
राजनाथशर्मा

(५८९) बुझै न काम अगिनि तुलसी कहुं बिषय भोग बहु घीते ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४१४
राजनाथ शर्मा

(५६०) बुध जुग धरमु जानि मन माहीं ।
तजि अधरम रति धरम कराहीं ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८०
विजयानन्द त्रिपाठी

(५६१) बुध नहिं करहिं अधम कर संगा ।
कवि कोविद गावहिं असि नीती ।
खल सन कलह न भल नहिं प्रीति ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८५
विजयानन्द त्रिपाठी

(५६२) बुध विश्राम सकल जन रंजनि ।
रामकथा कलि कलुष विभंजनि ।।
रामकथा कलि पन्नग भरनी ।।
पुनि विवेक पावक कहुं अरनी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७६
विजयानन्द त्रिपाठी ।

(५६३) बुध सो विवेकी विमलमति जिन्ह के रोष न राग ।
सुहृद सराहत साधु जेहि तुलसी ताको भाग ।।

दोहावली,पृष्ठ-१२२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(५६४) प्रभु तें प्रभु गन दुखद लखि प्रजहि सँभारै राउ ।
कर तें होत कृपान को कठिन घोर घन घाउ ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६११) बेदहू पुरान कही, लोकहू बिलोकियत ।
राम नाम ही सों रीझे सकल भलाई है ।
कवितावली, पृष्ठ-३८८
श्रीकान्तशरण

(६१२) बैन बिसद बोलनि मधुर मन कटु करम मलीन ।
तुलसी राम न पाइऐ भएं बिषय जल मीना ।।
दोहावली, पृष्ठ-५६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१३) बैर मूल हर हित बचन प्रेम मूल उपकार ।
दोहा सुभ संदोह सो तुलसी किएं बिचार ।।
दोहावली, पृष्ठ-१४८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१४) बोल न मोटे मारिए मोटी रोटी मारु ।
जीति सहस सम हारिबो जीतें हारि निहारु ।।
दोहावली, पृष्ठ-१४७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१५) बोलै बचन बिचारि कै, लीन्हे संत सुभाव ।
तुलसी दुख दुर्बचन के, पंथ देत नहिं पाव ।।
वैराग्य सन्दीपिनी, पृष्ठ-१७
श्रीकान्त शरण

(६१६) भए तुरत जग जीव सुखारे ।
जिमि मद उतरि गये मतवारे ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१७३
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१७) भक्त कामतरु नाम राम परिपूरन चन्द चकोर को ।
तुलसी फल चारों करतल जस गावत गई बहोर को ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-१२१
राजनाथ शर्मा

(६१८) भगति करत बिनु जतन प्रयासा ।
संसृति मूल अविद्या नासा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१९) भगति सुतंत्र सकल सुख खानी ।
बिनु सत संग न पावहिं प्रानी ।।
पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता ।
सत संगति संसृति कर अंता ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८९
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२०) भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा ।
उभय हरहिं भव संभव खेदा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२१०
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२१) भगति हीन गुन सब सुख ऐसे ।
लवन बिना बहु विंजन जैसे ।
भजनहीन सुख कवने काजा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१४४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२२) भजनहीन नरदेह वृथा , खर-स्वान फेरुकी नाईं ।।

गीतावली,पृष्ठ-२५३

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६२३) भनिति विचित्र सुकवि कृत जोऊ

राम नामु बिनु सोह न सोऊ ।।

मानस-पृष्ठ-३०,बालकाण्ड

विजयानन्द त्रिपाठी

(६२४) भय बिनु होइ न प्रीति ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१७२

विजयानन्द त्रिपाठी

(६२५) भरत भारती रिपुदवन गुरु गनेस बुधवार ।

सुमिरत सुलभ सुधरम फल विद्या विनय बिचार ।।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-३

श्रीकान्तशरण

(६२६) भरदर बरसत कोस सत बर्चे जो बूंद बराइ ।

तुलसी तेउ खल बचन सर हए न पराइ ।।

दोहावली,पृष्ठ-१३८

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६२७) भरद्वाज सुनु जाहि सल होइ विधाता वाम ।

धूरि मेरुसम्य जनक सम ताहि व्याल सम दाम ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३०२

विजयानन्द त्रिपाठी

(६२८) मल अनमल निज निज करतूती ।
लहत सुजस अपलोक विभूती ।
सुधा सुधाकर सुरसरि साधू ।
गरल अनल कलिमल सरि व्याधू ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२६) मलि भारत भूमि मली कुल जन्म समाज शरीर मलो लहि कै ।
करुणा तजि कै, परुणा बरका हिम मारुत घाम सदा
सहि कै ।।
जो मजे मगवान सयान सोई तुलसी हठ चातक ज्यों गहि कै ।
नत और सबै विष बीज बये हर हाटक काम दुहा नहि कै ।।

कावितावली,पृष्ठ-३१६
श्रीकान्तशरण

(६३०) मलेहु चलत पथ पोच भय नृप वियोग नय नेम ।
सुतिय सुभूपति भूषिअत लोह संवारित हेम ।।

दोहावली,पृष्ठ-१७३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६३१) मलो कहहिं बिनु जानेहुं बिनु जानें अपबाद ।
ते नर दादुर जानि जियं करिय न हरष विषाद ।।

दोहावली,पृष्ठ-१३२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६३२) मलो मलाइहि पै लहै लहै निचाइहि नीचु ।
सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु ।।

मानस,बालकाण्ड,पृष्ठ-१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३३) भली भले सों छल किएं जनम कनौड़ो होइ ।।

दोहावली, पृष्ठ-१३५

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६३४) भव कि परहिं परमात्मा बिन्दक ।

सुखी कि होहिं कबहु हरिनिंदक ।

राज कि रहै नीति बिनु जाने ।

अघ कि रहहिं हरि चरित बखाने ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२००

विजयानन्द त्रिपाठी

(६३५) भव भेषज रघुनाथ जसु, सुनहि जे नर अरु नारि ।

तिनकर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-६८

विजयानन्द त्रिपाठी

(६३६) भव सरिता कहं नाउ संत, यह कहि औरन समुझावत ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-३६२

राज नाथ शर्मा ।

(६३७) भव सागर चह पार जो पावा ।

रामकथा ताकहुं दृढ़ नावा ।

बिषइन्ह कहं पुनि हरि गुनग्रामा ।

श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६६

विजयानन्द त्रिपाठी

(६३८) भव सिन्धु अगाध परे नर ते पद पंकज प्रेमु न जे करते ।
अति दीन मलीन दुखी नितही जिन्ह के पद पंकज प्रीति नहीं ।।
अवलंब भवंत कथा जिन्ह के प्रिय संत अनंत ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३५
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३९) भाग छोट अभिलाष बड़ ,करौं एक विश्वास ।
पैहहिं सुख सुनि सुजन सब खल करिहहिं उपहास ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४०) भागें भल ओड़ेहुं भलो भलो न घालें घाउ ।
तुलसी सब के सीस पर रखवारो रघुराउ ।।

दोहावली,पृष्ठ-१४५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६४१) भाय कुभाय अनख आलस हूं ।
नाम जपत मंगल दिसि दसहूं ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७१
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४२) भूत द्रोह रत मोह बस राम विमुख रत काम ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३२८
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४३) भूपति भावी मिटै नहिं जदपि न दूषन तोर ।
किए अन्यथा होइ नहिं विप्र साप अति घोर ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३००
विजयानन्द त्रिपाठी

()६४४) मैद कि सिरिस सुमन कन कुलिस कठोरहि ।

जानकीमंगल,पृष्ठ-२८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६४५) भोजन करिअ तृप्ति हित लागी ।
जिमि सो असन पचव जठरागी ।
असि हरि भगति सुगम सुखदाई ।
को अस मूढ़ न जाहि सुहाई ।

मानस -उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४६) भ्राता पिता पुत्र उरगारी । पुरुष मनोहर निरखत नारी ।
होइ विकल सक मनहिं न रोकी । जिमि रवि मनि द्रव रविहि ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४७) मंगल करनि कलिमल हरनि, तुलसी कथा रघुनाथ की ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४८) मधुर बचन कटु बोलिबो बिनु श्रम भाग अभाग ।।

दोहावली,पृष्ठ-१४६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६४९) मन कामना सिद्ध नर पावा ।
जे यह कथा कपट तजि गावा ।।

(कहहिं सुनहि अनुमोदन करहीं ।
ते गोपद इव भवनिधि तरहीं ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४८
विजयानन्द त्रिपाठी

(६५०) मन क्रम वचन छाडि चतुराई ।
भजत कृपा करिहहिं रघुराई ।।

मानु-बालकाण्ड,पृष्ठ-३४५
विजयानन्द त्रिपाठी

(६५१) मन क्रम वचन जनित अघ जाई ।
सुनहि जे कथा श्रवन मनु लाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६५२) मनि बिनु फनि जल हीन कीन तनु त्यागइ ।
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ।।

पार्वतीमंगल,पृष्ठ-१६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६५३) मनि मानिक मुकुता छवि जैसी । अहि गिरि गज सिर सोह न तैसी ।
नृप किरीट तरुनी तनुपाई
लहहिं सकल सोभा अधिकाई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६५४) ममता रत सन ग्यान कहानी । अति लोभी सन बिरति बखानी ।
क्रोधिहिं सम कामिहि हरिकथा । ऊसर बीज बए फल जथा ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड-पृष्ठ-२५

(६५५) मसक कहुं खगपति हित करहीं ।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-४१६

विजयानन्द त्रिपाठी

(६५६) महंगी माटी मगहू की मृगमद साथ जू ।

कवितावली,पृष्ठ-२८६

श्रीकान्तशरण

(६५७) महा अजय संसार रिपु ,जीत सकै सो वीर ।
जाके अस रथ होइ दृढ़, सुनहु सखा मतिधीर ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३३३

विजयानन्द त्रिपाठी

(६५८) महिमा मृगी कौन सुकृति की खल -बच बिसिखन बांची ।।

गीतावली,पृष्ठ-२४३

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६५९) मातु पिता गुर प्रभु कै बानी ।
बिनहिं बिचार करिअ सुभ जानी ।।

मानस-बाल काण्ड,पृष्ठ-२५९

विजयानन्द त्रिपाठी

(६६०) मातु पिता गुर स्वामि निदेसू ।
सकल धरम धरनी धर सेसू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४४३

विजयानन्द त्रिपाठी

(६६१) मातु पिता गुरु स्वामि सिख, सिर धरि करहिं सुभायं ।
लहेउ लाभु तिन्ह जनम कर नतरु जनमु जग जाय।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६२) मातु पिता भ्राता हितकारी । मित प्रद सब सुनु राजकुमारी ।
अमित दानि भर्ता बैदेही अधम सो नारि जो सेव न तेही ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६३) मातु पिता स्वारथ रत ओऊ ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६४) मानुष तनु गुन ग्यान निधाना ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८३
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६५) मान्य मीत सों सुख चहै सो न छुए छल छांह ।
ससि त्रिसंकु कैकेइ गति लखि तुलसी मन मांह ।।
दोहावली,पृष्ठ-१११
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६६) माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम ।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि बाम ।।
बरवै रामायण,पृष्ठ-६८
श्रीकान्त शरण

(६६७) माया जीव सुभाव गुन काल करम महदादि ।
इंस अंक तें बढ़त सब इंस अंक बिनु बादि ।।
दोहावली, पृष्ठ-७०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६८) माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ
नारि वर्ग जानै सब कोऊ ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२१२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६९) मारग अगम सहाय सुभ होइहि राम प्रसाद ।
रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-६६
श्रीकान्तशरण

(६७०) मार खोज लै सौंह करि करि मत लाज न त्रास ।
मुए नीचे ते मीच बिनु जे इनके बिस्वास ।।
दोहावली, पृष्ठ-१३६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६७१) मारग सोइ जाकहुं जोइ भावा ।
पंडित सोइ जो गाल बजावा ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७२) मित्र करै सत रिपु कै करनी ।
ता कहुं विबुध नदी बैतरनी ।
सब जगु ताहिं अनलहु तै ताता ।

जो रघुवीर बिमुख सुनु भ्राता ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७३) मिथ्या माहुर सज्जनहि खलहि गरल सम सांच ।
तुलसी छुवत पराइ ज्यों पारद पावक आंच ।।

दोहावली,पृष्ठ-११७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६७४) मिलइ न जगत सहोदर भ्राता ।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२६२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७५) मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा ।
किए जोग तप ग्यान विरागा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०८
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७६) मिलै जो सरलहि सरल ह्वै कुटिल न सहज बिहाय ।
सो सहेतु ज्यों बक्र गति व्याल न बिलहिं समाइ ।

दोहावली,पृष्ठ-११५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६७७) मीठ काहि कबि कहहिं जाहि जोइ भावइ ।

पार्वतीमंगल,पृष्ठ-२०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६७८) मीठो अरु कठवति भरी रौताई अरु छेम ।
स्वारथ परमारथ सुलभ राम नाम के प्रेम ।
दोहावली, पृष्ठ-१८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६७९) मुखिआ मुखु सो चाहिए खान पान कहुं एक ।
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित बिबेक ।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४५६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६८०) मुनि तापस जिन्हें तें दुखु लहहीं ।
ते नरेस बिनु पावक दहहीं ।
मंगल मूल बिप्र परितोषू ।
दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू ।।
मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-१८२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६८१) मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पावहिं बिनहि प्रयास ।
जे येह कथा निरन्तर सुनहि मानि बिस्वास ।।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६८२) ~~जहुजिजलुल~~ मुद मंगल मय संत समाजू ।
जो जग जंगम तीरथ राजू ।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-११
विजयानन्द त्रिपाठी

(६८३) मेटि को सकइ सो आंकु जो बिधि लिखि राखेउ ।

पार्वतीमंगल,पृष्ठ-२०

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६८४) मोह न अंध कीन्ह केहि केही ।

को जग काम नचाव न जेही ।

तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा ।

केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२२

विजयानन्द त्रिपाठी

(६८५) मोह न नारि नारि के रूपा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२११

विजयानन्द त्रिपाठी

(६८६) मोह मूल बहु सूल प्रद, त्यागहु तम अभिमान ।

भजहु राम रघुनायक कृपा सिंधु भगवान ।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१११

विजयानन्द त्रिपाठी

(६८७) मोह सकल व्याधि कर मूला ।

तेहि ते पुनि उपजहि बहु सूला ।

काम बात कफ लोभ अपारा ।

क्रोध पित्त नित छाती जारा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३१

विजयानन्द त्रिपाठी

(६८८) यथा पंख बिनु खग अति दीना ।
मनि बिनु फनि कविवर कर हीना ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-२६३
विजयानन्द त्रिपाठी

(६८६) यह न रहस्य रघुनाथकर , बेगि न जाने कोइ ।
जो जाने रघुपति कृपा, सपनेहु मोह न होइ ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२१३
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६०) रघुपति भक्ति सुलभ सुखकारी । सो त्रय ताप शोक भय हारी ।
बिनु सतसंग भक्ति नहीं होई । ते तब मिलै द्रवै जब सोई ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-३०६
राजनाथ शर्मा

(६६१) रघुपति भगति करत कठिनाई ।
कहत सुगम करनी अपार जाने सोइ जेहि बनि आई ।
जो जेहि कला कुसल ताकहं सोइ सुलभ सदा सुखकारी ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-३६६
राज नाथ शर्मा

(६६२) रघुपति भगति सजीवनी मूरी ।
अनूपान श्रद्धा अति रूरी ।।
एहि विधि भलेहि रोग नसांहीं ।
नांहित जतन कोटि नहिं जांहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३५
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६३) रघुपति विमुख जतन कर कोरी ।
कवन सकै भव बन्धन छोरी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३४५
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६४) रघुबर कीरति सज्जननि सीतल खलनि सुताति ।
ज्यों चकोर चय चक्कवनि तुलसी चांदनि राति ।।

दोहावली,पृष्ठ-६८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६५) रघुवंश भूषन चरित यह नर कहहि सुनहि जे गावहीं ।
कलिमल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२५०
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६६) रवि हर दिसि गुन रस नयन मुनि प्रथमादिक बार ।
तिथि सब काज नसावनी होइ कुजोग बिचार ।।

दोहावली,पृष्ठ-१५७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६७) रयनि को भूषन इंदु है, दिवस को भूषन भान ।
दास को भूषन भक्ति है, भक्ति को भूषन ज्ञान ।
ज्ञान को भूषन ध्यान है, ध्यान को भूषन त्याग ।
त्याग को भूषन सांतिपद तुलसी अमल अदाग ।।

वैराग्य संदीपिनी,पृष्ठ-४५
श्रीकान्त शरण

(६६८) रसना सांपिनि बदन बिल जे न जपहिं हरिनाम ।

तुलसी प्रेम न राम सों ताहि बिधाता बाम ।।

दोहावली, पृष्ठ-२५

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६६) रहत न आरत के चित चेतू ।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३६०

विजयानन्द त्रिपाठी

(७००) राकापति षोड्स उअहिं तारा गन समुदाइ ।

सकल गिरिन्ह दव लाइअ बिनु रबि राति न जाइ ।

दोहावली, पृष्ठ-१३२

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७०१) राखिअ नारि जदपि उर मांहीं ।

जुवती शास्त्र नृपति वश नांहीं ।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५८६

विजयानन्द त्रिपाठी

(७०२) राज धरम सरबसु एतनोई । जिमि मन मांह मनोरथ गोई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४५७

विजयानन्द त्रिपाठी

(७०३) राज नीति बिनु धन बिनु धर्मा ।

हरिहि समर्पे बिनु सतकर्मा ।

विद्या बिनु विवेक उपजाएं ।

श्रम फल पढ़े किये अरु पाएं ।

संग तें जती कुमंत्र ते राजा । मान ते ग्यान पान ते लाजा ।।

प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी ।
नासहि बेगि नीति असुनी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५५३
विजयानन्द त्रिपाठी

(७०४) राज सुरेस पचासक को, विधि के कर को जो पटो लिखि पाये ।
पूत सपूत पुनीत प्रिया निज सुंदरता रति को मद नाये ।
संपति सिद्धि सबै तुलसी मन की मना चितवै चित लाये ।
जानकि जीवन जाने बिना जन ऐसेउ जीवन न जीव कहाये ।

कवितावली,पृष्ठ-३३६
श्रीकान्तशरण

(७०५) राम अनंत गुन, अमित कथा बिस्तार ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(७०६) राम कथा कलि कामद गाई । सुजन सजीवन मूरि सुहाई ।
सोइ बसुधा तल सुधा तरंगिनी । भय भजनि भ्रम भेक भुअंगिनी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(७०७) राम कथा कलिमल हरनि, मंगल करनि सुहाइ ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२५५
विजयानन्द त्रिपाठी

(७०८) राम कथा जग मंगल करनी ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(७०६) रामकथा सुरधेनु सम, सेवत सब सुखदानि ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२१५
विजयानन्द त्रिपाठी

(७१०) रामकाज मनि हेम हय राम रूप रविवार ।
कहब नीक जल लाभ सुभ सगुन समय अनुहार ।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१८६
श्रीकान्तशरण

(७११) राम कामतरु परिहरत सेवत कलि तरु ठूंठ ।
स्वारथ परमारथ चहत सकल मनोरथ झूंठ ।।

दोहावली, पृष्ठ-३५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७१२) राम की भगति बडी बिरति - निरत ।
जाने बिनु भगति न, जानिबो तिहारे हाथ ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४६३
राजनाथ शर्मा

(७१३) राम के बिरोधे बुरो बिधि हरिहर हू को ,
सब को भलो है राजा राम के रहम को ।।

कवितावली, पृष्ठ-१६३
श्रीकान्तशरण

(७१४) राम कृपा थिर काज सुभ सनि बासर बिश्राम ।
लोह महिष गज बनिज भल सुख सुपास गृह ग्राम ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१४८
श्रीकान्तशरण

(७१५) रामकृपा तुलसी जन की, जग होइ भले को भलोई भलाई ।।

कवितावली, पृष्ठ-४६८

श्रीकान्तशरण

(७१६) रामकृपां तुलसी सुलभ गंग सुसंग समान ।
जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान ।।

दोहावली, पृष्ठ-१२४

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७१७) रामकृपा नासहिं सब रोगा ।
जौ इहि भांति बनै संजोगा ।
सद्गुरु वैद वचन बिस्वासा ।
संजम यह न विषय कै आसा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३५

विजयानन्द त्रिपाठी

(७१८) रामकृपा संतोष सुख होहिं सकल दुख दूरि ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-४४

श्रीकान्तशरण

(७१९) रामचन्द्र के भजन बिनु जो चह पद निरवान ।
ग्यानवंत अपि सो नर, पसु बिनु पूंछ विषान ।।
राकापति षोडस उअहिं तारागन समुदाइ ।
सकल गिरिन्ह दव लाइये, बिनु रवि रात न जाइ ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१३५

विजयानन्द त्रिपाठी

(६२०) राम चरन पंकज प्रिय जिन्हहीं ।
विषय भोग बस करहिं कि तिन्हहीं ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२१) राम चरन रति जो चह अथवा पद निर्वान ।
भाव सहित सो येहि कथा, करौ श्रवन पुट पान ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४७
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२२) राम चरित अति अमित मुनीसा ।
कहि न सकहिं सत कोटि अहीसा ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२० २
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२३) राम चरित चिन्तामनि चारू ।
संत सुमति तिय सुभग सिंगारू ।।
जग मंगल गुन ग्राम राम के ।।
दानि मुकुति धन धरम धाम के ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२४) राम चरित जे सुनत अघाहीं ।
रस विशेष जाना तिन्ह नाहीं ।
जीवन मुक्त महा मुनि जेऊ ।
हरिगुन सुनहि निरंतर तेऊ ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६५
विजयानन्द त्रिपाठी

(७२५) राम चरित राकेस कर सरिस सुखद सब काहु ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-८५

विजयानन्द त्रिपाठी

(७२६) राम जनम सुभ सगुन भल सकल सुकृत सुख सारु ।

पुत्र लाभ कल्यान बड़ मंगल चारु विचारु ।।

रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-७२

श्रीकान्तशरण

(७२७) राम जपु, जीह जानि प्रीति सों प्रतीति मानि ।

राम नाम जो जैहै जिय की जरनि ।।

राम नाम सों रहनि राम नाम की कहनि कुटिल।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-४८५

राजनाथ शर्मा

(७२८) राम दूरि माया बढ़ति घटति जानि मन मांह ।

भूरि होति रबि दूर लखि सिर पर पगतर छांह ।।

दोहावली,पृष्ठ-३३

हनुमान प्रसाद पोद्दार

(७२९) राम नाम अवलंब बिनु परमारथ की आस ।

बरषत बारिद बूंद गहि चाहत चढ़न अकास ।।

दोहावली,पृष्ठ-१६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७३०) राम नाम कर अमित प्रभावा ।

संत पुरान उपनिषद गावा ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१२५

विजयानन्दत्रिपाठी

(७३१) राम नाम कलि कामतरु राम भगति सुरधेनु ।
सकल सुमंगल मूल जग गुरु पद पंकज रेनु ।
दोहावली, पृष्ठ-२१
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(७३२) राम नाम कलि कामतरु सकल सुमंगल कंद ।
सुमिरत करतल सिद्धि जग पग पग परमानंद ।।
रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-६०
श्रीकान्त शरण

(७३३) राम नाम कामतरु जोइ जोइ मांगि है ।
तुलसीदास स्वारथ परमारथ न खांगि है ।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-२०६
राजनाथशर्मा

(७३४) राम नाम के जपे जाइ जिय की जरनि ।
कलिकाल अपार उपाय ते उपाय भये ।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-३६०
राजनाथ शर्मा

(७३५) राम नाम जप जापकहि तुलसी अभिमत देत ।
दोहावली, पृष्ठ-१५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७३६) राम नाम जपु ' तुलसी ' नित निरुपाधि ।।
बरवै रामायण, पृष्ठ-६६
श्रीकान्त शरण

(७३७) राम नाम जपु तुलसी होइ बिसोक ।
लोक सकल कल्यान नीक परलोक ।।
बरवै रामायण, पृष्ठ-७३
श्रीकांतशरण

(७३८) राम नाम पर तुलसी नेह निबाहु ।
एहि ते अधिक न एहि सम जीवन लाहु ।।
बरवै रामायण, पृष्ठ-८५
श्रीकान्त शरण

(७३९) राम नाम पर नाम तें प्रीति प्रतीति भरोस ।
सो तुलसी सुमिरत सकल सगुन सुमंगल कोस ।।
रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-३८
श्रीकान्तशरण

(७४०) राम नाम रति नाम गति राम नाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल दुहुं दिसि तुलसीदास ।।
दोहावली, पृष्ठ-२५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७४१) राम नाम सुमिरत सुजस भाजन भए कुजाति ।
कुतरुक सुरपुर राजमग लहत भुवन बिख्याति ।
दोहावली, पृष्ठ-१८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७४२) राम निकाईं रावरी है सबही को नीक ।।
दोहावली, पृष्ठ-४३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७४३) राम प्रेम पथ पेखिए दिएं बिषय तन पीठि ।
तुलसी कैंचुरि परिहरें होत सांपहु दीठि ।

दोहावली,पृष्ठ-३७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७४४) राम प्रेम बिनु जानिबो जैसे सर सरिता बिनु बारि ।
नाना पंथ निरबान के नाना बिधान बहु भांति ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-४०६
राजनाथ शर्मा

(७४५) राम भगति मनि उर बस जाके ।
दुख लवलेस न सपनेहु ताके ।
चतुर सिरोमनि तेइ जग मांहीं ।
जो मनि लागि सुजन करांहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२४
विज्ञानन्द त्रिपाठी

(७४६) राम राम , राम राम, राम राम जपत ।
मंगल मुद उचित होत कलि मल छल छपत ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-१६४
राजनाथ शर्मा

(७४७) राम रावरो नाम साधु सुरतरु है ।
सुमिरे त्रिविध घाम हरत, पूरत काम ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-४६६
राज नाथ शर्मा

(७४८) राम लखन कौसिक सहित सुमिरहु करहु पयान
लच्छि लाभ लै जगत जसु मंगल सगुन प्रमा न ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१०
श्रीकान्तशरण

(७४९) राम विमुख लहि विधि सम देही ।
कवि कोविद न प्रसंसहि तेही ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-९४
विजयानन्द त्रिपाठी

(७५०) राम विमुख संपति प्रभुताई जाइ रही पाई बिन पाई ।
सजल मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं । बरषि गए पुनि तबहिं सुखाहीं ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१११
विजयानन्द त्रिपाठी

(७५१) राम सनेही राम गति राम चरन रति जाहि ।
तुलसी फल जग जनम को दियो बिधाता ताहि ।।

दोहावली, पृष्ठ-३०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७५२) राम सो साम किये नित है हित ।
कोमल काज न कीजिए टांठे ।।

कवितावली। पृष्ठ-२०८
श्रीकान्तशरण

(७५३) रामहि डरु करु राम सों ममता प्रीति प्रतीति ।
तुलसी निरुपधि राम को भएं हारेहुं जीती ।।

दोहावली, पृष्ठ-४०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७५४) रामहि सुमिरत रत मिरत देत परत गुरु पायं ।
तुलसी जिन्हहि न पुलक तनु ते जग जीवत जायं ।।
दोहावली,पृष्ठ-२५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७५५) रामु अनंत अनंत गुनानी । जनम करम अनंत नामानी ।
जलसीकर महिरज गनि जाहीं । रघुपति चरित न वरनि सिराहीं ।।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६४
विजयानन्द त्रिपाठी

(७५६) राहु सीम संगम बिगम असगुन उदधि अगाधु ।
ईति भीति खल दल प्रबल सीदहिं भूसुर साधु ।।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१५०
श्रीकान्त शरण

(७५७) रिपु तेजसी अकेल अपि, लघु करि गनिअ न ताहु ।
अजहुं देत दुख रवि ससिहिं सिर अवसेषित राहु ।।
मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२६५
विजयानन्द त्रिपाठी

(७५८) रिपु , रुज, पावक, पाप प्रभु , अहि गनिअ न छोट करि ।।
मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५५३
विजयानन्द त्रिपाठी

(७५९) रीझि आपनी बूझि पर खीझि बिचार बिहीन ।
ते उपदेस न मानहीं मोह महोदधि मीन ।।
दोहावली,पृष्ठ-१६६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६०) रीझि खीझि गुरु देत सिख सखा सुसाहिब साधु ।
तोरि खाइ फल होइ भल तरु काटे अपराधु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१७६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६१) रीझे बस होत, खीझे देत निज धाम रे ।
फलत सकल फल कामतरु नाम रे ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२०८
राजनाथ शर्मा

(७६२) रुचे मागनेहि मागिबो तुलसी दानिहि दानु ।
आलस अनख न आचरज प्रेम पिहानी जानु ।।

दोहावली, पृष्ठ-११२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६३) रूप विशेष नाम बिनु जाने ।
करतल गत न परहिं पहिचाने ।।
सुमिरिय नाम रूप बिनु देखे ।
आवत हृदयं सनेह विसेषे ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६४) रे मन सब सों निरस ह्वै सरस राम सों होहि ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-५८
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६५) रैयत राज समाज घर तन धन धरम सुबाहु ।
सांत सुसचिवन सौंपि सुख बिलसइ नित नरनाहु ।।
दोहावली, पृष्ठ -१७८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६६) रोष न रसना खोलिए बरु खोलिअ तरवारि ।
सुनत मधुर परिनाम हित बोलिअ बचन बिचारि ।।
दोहावली, पृष्ठ-१४६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६७) लखइ अघानो भूख ज्यों लखइ जीति मैं हारि ।
तुलसी सुमति सराहिऐ मग पग धरइ बिचारि ।।
दोहावली, पृष्ठ-१५१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६८) लखि गयंद लै चलत भजि स्वान सुखानो हाड ।
गज गुन मोल अहार बल महिमा जान कि राड़ ।।
दोहावली, पृष्ठ-१३०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६९) लखि सुबेष जग बंचक जेऊ ।
बेष प्रताप पूजिअहि तेऊ ।
उघरहिं अंत न होहि निबाहू ।
काल नेमि जिमि रावनराहू ।।
मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(७७०) लछ न फूटी कौडिहू को चाहै केहि काज ।

दोहावली, पृष्ठ-४४

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७७१) लागहिं कुमुख वचन सुम कैसे ।
मगहं गयादिक तीरथ जैसे ।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-६८

विजयानन्द त्रिपाठी

(७७२) लाभ राम सुमिरन बडो बडी बिसारें हानि ।

दोहावली, पृष्ठ-२०

हनुमानप्रसादपोद्दार

(७७३) लाभ समय को पालिबो हानि समय की चूक ।
सदा बिचारहिं चारुमति सुदिन कुदिन दिन टूक ।।

दोहावली, पृष्ठ-१५२

हनुमानप्रसादपोद्दार

(७७४) लुनिहै पै सोई जोई जेहि बई है ।

गीतावली, पृष्ठ-१३६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७७५) लेत देत मन संक न धरई । बल अनुमान सदा हित करई ।
विपति काल कर सतगुन नेहा । श्रुति कह संत मित्र गुन एहा ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-१८

विजयानन्द त्रिपाठी

(७७६) लोक रीति देखी सुनी, व्याकुल नर नारी ।
अति बरषे अनबरषे हूं, देहिं दैवहिं गारी ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-१२६

राजनाथ शर्मा

(७७७) लोक रीति फूटी सहहिं आंजी सहइ न कोइ ।
तुलसी जो आंजी सहइ सो आंधरो न होइ ।।

दोहावली, पृष्ठ-१४५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७७८) लोक रीति विदित बिलोकियत जहां तहां ।
स्वामी के सनेह स्वानहू को सनमान है ।।

कवितावली, पृष्ठ-३६८
श्रीकान्तशरण

(७७९) लोक वेद मत भूप भलाई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४५६
विजयानन्दत्रिपाठी

(७८०) लोकहु वेदहु बुध सम्मत दोऊ ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८१) लोकहूं वेद सुसाहिब रीति ।
विनय सुनत पहिचानत प्रीति ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८२) लोग मगन सब जोगहीं जोग जाय विनु छेम ।
त्यों तुलसी के भागवत राम प्रेम विनु नेम ।।

दोहावली, पृष्ठ-४३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७८३) लोगनि भलो मनाव जो भलो होन की आस ।
करत गगन को गेंडुवा सो सठ तुलसीदास ।।

दोहावली, पृष्ठ-१६८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७८४) लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नारि ।
क्रोध के परुष वचन बल मुनिवर कहहि विचारि ।।

मानस-अरण्यकाण्ड, पृष्ठ-५६१
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८५) लोभी लोलुप कीरति चहई ।
अकलंकता कि कामी लहई ।।
हरिपद विमुख परम गति चाहा ।
तस तुम्हार लालचु नरनाहा ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४४८
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८६) वंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे ।
कर्म कि होहि स्वरूपहिं चीन्हे ।
काहू सुमति कि खल संग जामी ।
सुभगति पाव कि परत्रियगामी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८७) वचन परम हित सुनत कठोरे ।
सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे ।।

मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-१६७
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८८) वातुल भूत बिबस मतवारे ।
ते नहिं बोलहिं बचन बिचारे ।
जिन्ह कृत महामोह मद पाना ।
तिन्ह कर कहा करिअ नहिं काना ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(७८६) बादि बसन बिनु भूषण भारू ।
बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५२
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६०) बायस पलिअहिं अति अनुरागा ।
होहिं निरामिष कबहुं कि कागा ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६१) बारि मथे घृत होइ बरु सिकता तें बरु तेल ।
बिनु हरि भजन न भव तरिअ यह सिद्धान्त अपेल ।।

मानस,उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६२) बिधि करतल पर किछु न बसाई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६३) विधि केहि भाँति न लाई ।

गीतावली, पृष्ठ-२४१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(७६४) विधि गति वाम सदा सब काहू ।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-८४
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६५) विधि विपरीत चरित सब करहं

मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-३७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६६) विधि प्रपंचु अस अचल अनादी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४१०
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६७) विधि सों कछु न बसाई ।।

श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-७३
श्रीकान्त शरण

(७६८) विधि हरिहर कवि कोविद बानी ।
कहत साधु महिमा सकुचानी ।।
सो मोसन कहि जात न कैसें ।
साक बनिक मनि गुन गन जैसें ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४
विजयानन्द त्रिपाठी

(७६६) विधिहुं न नारि हृदय गति जानी ।
सकल कपट अघ अवगुन खानी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२२७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८००) विनय न मानत जलधि जड़ ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०१) विफल होइ सब उद्यम ताके ।
जिमि परद्रोह निरत मन साके ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३५७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०२) विमल कथा हरिपद दायनी । भगति होइ सुनि अनपायनी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६४
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०३) विरति ज्ञान विज्ञान दृढ़ रामचरित अति नेह ।
वायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-६७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०४) विषई जीव पाइ प्रभुताई ।
मूढ़ मोह बस होहिं जनाई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०५) विष ते विषय विनय अनहित की सुधा सनेही गारि ।।

श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-५५
श्रीकान्त शरण

(८०६) विषय अलंपट सील गुनाकर ।
पर दुःख दुःख सुख देखे पर ।।
राम अभूत रिपु विमद विरागी ।
लोभा मरष हरष भय त्यागी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०७) विषयहीन दुख मिलै बिपति अति सुख सपनेहुं नहिं पायौ ।
उभय प्रकार प्रेत पावक ज्यौं धन दुख प्रद स्रुति गायौ ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-४१५
राजनाथशर्मा

(८०८) विषयी साधक सिद्ध सयाने ।
त्रिविध जीव जग वेद बखाने ।
राम सनेह सरस मन जासू ।
साधु सभां बड़ि आदर तासू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४०२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८०९) वैर न विग्रह आस न त्रासा ।
सुखमय ताहि सदा सब आसा ।।
अनारंभ अनिकेत अमानी ।
अनघ अरोष दच्छ बिज्ञानी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-८५
विजयानन्द त्रिपाठी

(८१०) वैर प्रेम नहिं दुरइ दुराएं ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३८३
विजयानन्द त्रिपाठी

(८११) वैखानस सोइ सोचइ जोगू ।
तपु विहाइ जेहि भवइ भोगू ।
सोचिव पिसुन अकारन क्रोधी ।
जननि जनक गुरु बंध विरोधी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४३
विजयानन्द त्रिपाठी

(८१२) शंकर प्रिय मम द्रोही , शिव द्रोही मम दास ।
ते नर करहि कलप भरि, घोर नरक महुं वास ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ१८५
विजयानन्द त्रिपाठी

(८१३) शत्रु मित्र सुख दुख जग मांही ।
माया कृत परमारथ नांही ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-२०
विजयानन्द त्रिपाठी

(८१४) शास्त्र सुचिंतित पुनि पुनि देखिय ।
भूप सुसेवित बस नहिं लेखिय ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८८
विजयानन्द त्रिपाठी

(८१५) श्रवन घटहूं पुनि दृग घटहूं घटउ सकल बल देह ।
इति घटे घटिहै कहा जौं न घटै हरि नेह ।।

दोहावली,पृष्ठ-१६३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८१६) श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि ।
मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि ।।
दोहावली, पृष्ठ-६१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८१७) श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन हरन भव भय दारुन ।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-१४६
राजनाथ शर्मा

(८१८) श्री हरि गुरु पद कमल भजहु मन तजि अभिमान ।
जेहि सेवत पाइय हरि सुख निधान भगवान ।।
विनयपत्रिका, पृष्ठ-४२१
राज नाथ शर्मा

(८१९) श्रुति गुन कर गुन पु जुग मृग हय रेवती सखाउ ।
देहि लेहि धन धरनि धरु गएहुं न जाइहि काउ ।।
दोहावली, पृष्ठ-१५६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८२०) श्रोता सुमति सुसील सुचि, कथा रसिक हरिदास ।
पाइ उमा अति गोप्य मपि, सज्जन करहिं प्रकास ।
मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१२०
विजयानन्द त्रिपाठी

(८२१) संकट सोच बिमोचन मंगल गेह ।
तुलसी राम नाम पर करिय सनेह ।।
बरवै रामायण, पृष्ठ-६५
श्रीकान्तशरण

(८२२) संकट सोच सबै तुलसी लिये नाम फटै मकरी के से जाले ।।

हनुमान बाहुक,पृष्ठ-१८
टीकाकार- महावीरप्रसाद
मालवीय वैद्य ' वीर '

(८२३) संत असंतन्हि कै असि करनी ।
जिमि कुठार चंदन आचरनी ।।
काटै परसु मलय सुनु भाई ।
निज गुन देइ सुगंध बसाई ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-७२
विजयानन्दत्रिपाठी

(८२४) संत दरस जिमि पातक टरई ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(८२५) संत विटप सरिता गिरि धरनी ।
परहित हेतु सबन्ह कै करनी ।।

मानस,उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४२
उत्तरकाण्ड, विजयानन्दत्रिपाठी

(८२६) संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही ।
चितवहिं रामु कृपा करि जेही ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२०
विजयानन्द त्रिपाठी

(८२७) संत संग अपवर्ग कर, कामी भव कर पंथ ।
कहहिं संत कवि कोविद श्रुति पुरान सद ग्रंथ ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८२८) संत समाज तब होइ जब रमा राम अनुकूल ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-४५
श्रीकान्तशरण

(८२९) संत सहहिं दुख परहित लागी ।
पर दुख हेतु असंत अभागी ।
भूर्ज तरू सम संत कृपाला ।
परहित नित सह विपति बिसाला ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२२९
विजयानन्द त्रिपाठी

(८३०) संत हृदय जस गत मद मोहा ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(८३१) संत हृदय नवनीत समाना । कहा कविन्ह कहै न जाना ।
निज परिताप द्रवै नवनीता । पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४२
विजयानन्दत्रिपाठी

(८३२) संत हृदय संतत सुखकारी ।
विस्व सुखद जिमि इंदु तमारी ।।

(८३२) परम धाम श्रुति विदित अहिंसा ।

पर निंदा सम अघ न गिरीसा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३०

विजयानन्द त्रिपाठी

(८३३) संभावित कहुं अपजस लाहू ।

मरन कोटि सम दारुन दाहू ।।

मानस-~~उत्तर~~अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१४२

विजयानन्द त्रिपाठी

(८३४) संसय समन दमन दुख सुखनिधान हरि एक ।

साधु कृपा बिनु मिलहिं न करिय उपाय अनेक ।

भव सागर कहं नाव सुद्ध संतन के चरन ।

तुलसिदास प्रयास बिनु मिलहिं राम दुःख हरन ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-४१२

रामजनाथशर्मा

(८३५) संसृत रोग सजीवन मूरी ।

राम कथा गावहिं श्रुति सूरी ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४७

विजयानन्द त्रिपाठी

(८३६) संसृति मूल सूल प्रद नाना ।

सकल सोक दायक अभिमाना ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१२८

विजयानन्द त्रिपाठी

(८३७) संसृति सन्निपात दारुन दुख बिनु हरिकृपा न नासै ।
संजम जप तप नेम धर्म ब्रत, बहु भेषज समुदाई ।।
तुलसिदास भव रोग रामपद प्रेम हीन नहिं जाई ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२२४
राजनाथ शर्मा

(८३८) सकल विघ्न व्यापहिं नहिं तेही ।
राम सुकृपा बिलोकहिं जेही ।
सोइ सादर सर मज्जनु करई ।
महा घोर त्रयताप न जरई ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१०२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८३९) सकल सिद्धि कर कमल तल सुमिरत रघुबर दूत ।

दोहावली, पृष्ठ-७६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(८४०) सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुनगान ।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिन्धु बिना जलयान ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१७७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८४१) सकल सुमंगल मूल जग भूसुर आसिरबाद ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-८
श्रीकान्त शरण

(८४२) सखि सरोज प्रियदोष बिचारत प्रेम पीन मन कीजै ।

श्रीकृष्णगीतावली, पृष्ठ-११०

श्रीकान्तशरण

(८४३) सगुणोपासक मोक्ष न लेहीं ।

तिनह कहुं राम भगति निज देहीं ।।

मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-४०४

विजयानन्द त्रिपाठी

(८४४) सगुन ध्यान रुचि सरस नहिं निर्गुन मन ते दूरि ।

तुलसी सुमिरहु राम को नाम सजीवन मूरि ।।

दोहावली, पृष्ठ-१५

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८४५) सगुन सत्य ससि नयन गुन अवधि अधिक नयवान ।

होइ सुफल सुभ जासु जसि प्रीति प्रतीति प्रमान ।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१६६

श्रीकान्तशरण

(८४६) सचिव वैद गुर तीन जौं, प्रिय बोलहिं भय आस ।

राज धर्म तन तीनि कर, होइ बेगिही नास ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१३७

विजयानन्द त्रिपाठी

(८४७) सठ सहि सांसति पति लहत सुजन कलेस न कायं ।

गढ़ि गुढि पाहन पूजिए गंडकि सिला सुभायं ।

दोहावली, पृष्ठ-१३४

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८४८) सठ सुधरहिं सत संगति पाई ।
पारस परस कुधातु सोहाई ।।
विधि वस सुजन कुसंगति परहीं ।
फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं ।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४
विजयानन्द त्रिपाठी

(८४९) सत संगति दुर्लभ संसारा ।
निमिष दंड भरि एकौ बारा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३९
विजयानन्द त्रिपाठी

(८५०) सत संगति महिमा नहिं गोई ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१३
विजयानन्द त्रिपाठी

(८५१) सत्य कहहिं कवि नारि सुभाऊ ।
सब विधि अगहु अगाध दुराऊ ।
निज प्रतिबिम्बु वरुकु गहि जाई ।
जानि न जाइ नारि गति भाई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(८५२) सत्य बचन मानस बिमल कपट रहित करतूति ।
तुलसी रघुबर सेवकहि सकै न कलिजुग धूति ।।

दोहावली, पृष्ठ-३८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८५३) सद् गुरु मिले जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदाइ ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४३
विजयानन्द त्रिपाठी

(८५४) सदा न जे सुमिरत रहहिं मिलि न करहिं प्रिय बैन ।
ते पै तिन्ह के जाहिं घर जिन्ह के हिएं न नैन ।।

हनुमान प्रसाद पोद्दार
दोहावली,पृष्ठ-११३

(८५५) सदा राम जपु, राम जपु, राम जपु, राम जपु , राम जपु,
मूढ़ मन बार बारं ।
सकल सौभाग्य सुख खानि जिय जानि सठ मानि बिस्वास
बद बेदसारं ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-१४८
राजनाथ शर्मा

(८५६) साधक सगुन सधरम सगन सबल सुसाइं महीप ।
तुलसी जे अभिमान बिनु ते त्रिभुवन के दीप ।।

दोहावली,पृष्ठ-१८२
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८५७) सन इव खल पर बंधन करई ।
खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई ।
खल बिनु स्वारथ पर अपकारी ।
अहि मूषक इव सुनु उरगारी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८५८) सपने होइ भिखारी नृपु , रंक नाकपति होइ ।
जागे लाभु न हानि कछु तिमि प्रपंच जिय जोइ ।।

मानस-अयोधाकाण्ड,पृष्ठ-१३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८५९) सब कर मत खगनायक एहा ।
करिब राम पद पंकज नेहा ।
श्रुति पुरान सब ग्रन्थ कहांहीं ।
रघुपति भगति बिन सुख नांहीं ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३६
विजयानन्द त्रिपाठी

)८६०) सबके प्रिय सेवक यह नीति ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६१) सब कै निन्दा जे जड़ करहीं ।
ते चमगादुर होइ अवतरहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६२) सब तें सेवक धरमु कठोरा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६१
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६३) सब भरोस तजि जो भज रामहि ।
प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि ।।

VERSITY LI

[सो भवतरु कछु संसय नाहीं ।
नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६४) सब विधि सोचिय पर उपकारी ।
निज तनु पोषक निर्दय भारी ।
सोचनी सबहीं विधि सोई ।
जो न छाडि छल हरि जन होई ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४३
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६५) सबहि समरथहि सुखद प्रिय अच्छम प्रिय हितकारि ।।
कबहुं न काहुहि रामप्रिय तुलसी कहा बिचारि ।।
दोहावली,पृष्ठ-३४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८६६) सभय सुभाव नारि कर सांचा ।।
मंगल महु भय मन अति कांचा ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-१३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६७) समउ फिरे रिपु होहिं पिरीते ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८६८) समय सगुन कह करम - बस दुख सुख जोग बियोग ।।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१६३
श्रीकान्त शरण

(८६६) समय सराहहिं साधु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१५३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(८७०) समुझत सरिस नाम अरु नामी ।
प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी ।
नाम रूप दुइ ईस उपाधी ।
अकथ अनादि सुसामुझि साधी ।।

मानस-पृष्ठ-५७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७१) समुझै खग खगही कै भाषा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-१०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७२) सरनागत कहुं जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पामर पापमय तिन्हहि विलोकत हानि ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१४८
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७३) सरल बक्र गति पंच ग्रह चपरि न चितवत काहु ।
तुलसी सूधे सूर ससि समय बिडंबित राहु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१३५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(८७४) सरल सुलभ हरि भगति सुधाकर निगम पुराननि गाई ।।

श्रीकृष्ण गीतावली, पृष्ठ-१२८
श्रीकान्तशरण

(८७५) सरुज सरीर वादि बहु भोगा । बिनु हरि भगति जायं जप जोगा ।
जाय जीव बिनु देह सुहाई । वादि मोर सब बिनु रघुराई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२५२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७६) सस्त्री मर्मी प्रभु सठ धनी ।
बैद बंदि कवि भानस गुनी ।।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५६२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७७) सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ ।

मानस-अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-४६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७८) सहज सनेह स्वामि सेवकाई ।
स्वारथ छल फल चारि बिहाई ।
अग्या सम न सुसाहिब सेवा ।
सो प्रसादु जन पावइ देवा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८७९) सहज सुहृद गुरु स्वामि सिख, जो न करइ सिर मानि ।।
सो पछिताइ अघाइ उर अवसि होइ हित हानि ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६६
विजयानन्द त्रिपाठी

(८८०) सहि कुबोल सांसति सकल अंगइ अनट अपमान ।

(तुलसी धरम न परिहरिय कहि करि गए सुजान ।

दोहावली, पृष्ठ-१५६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८८१)   सात दीप नव खंड लौं, तीनि लोक जग मांही ।

तुलसी सांति समान सुख अपर दूसरी नाहिं ।।

वैराग्य सन्दीपिनी, पृष्ठ-५२

श्रीकान्त शरण

(८८२)   सात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला एक अंग ।

तूल न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत संग ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-७६

विजयानन्द त्रिपाठी

(८८३)   साधन समय सुसिद्धि लहि उभय मूल अनुकूल ।

तुलसी तीनिउ समय रम ते महि मंगल मूल ।।

दोहावली, पृष्ठ-१८५

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८८४)   साधन सांसति सब सहत सबहि सुखद फल लाहु ।

तुलसी चातक जलद की रीमि बूमि बुध काहु ।।

दोहावली, पृष्ठ-१००

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८८५)   साधु अवग्या तुरत भवानी ।

कर कल्याण अखिल कै हानी ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१४५

विजयानन्द त्रिपाठी

(८८६) साधु चरित सुभ चरित कपासू ।
निरस विसद गुनमय फल जासू ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१२
विजयानन्द त्रिपाठी

(८८७) साधु ते होइ न कारज हानी ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड,पृष्ठ-८१
विजयानन्द त्रिपाठी

(८८८) सापत ताड़त परुष कहंता । विप्र पूज्य अस गावहिं संता ।।
पूजिय विप्र सील गुन हीना । सूद्र न गुन गन ग्यान प्रबीना ।।

मानस,अरण्यकाण्ड,पृष्ठ-५८१
विजयानन्द त्रिपाठी

(८८९) सासति करि पुनि करहिं पसाऊ ।
नाथ प्रभुन्ह कर सहज सुभाऊ ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१७७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८९०) सास ससुर गुर सेवा करहू ।
पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-५५७
विजयानन्द त्रिपाठी

(८९१) सास ससुर गुरु मातु पितु प्रभु भयौ चहै सब कोइ ।
होनो दूजी और को सुजन सराहिय सोइ ।।

दोहावली,पृष्ठ-१३३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८९२) साहब तें सेवक बड़ो जो निज धरम सुजान ।।

दोहावली, पृष्ठ-१८९

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८९३) साधक फलद सुसाधन ।।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८९४) साधुसहीं कै कोप बस किएं कठिन परिपाक ।।

दोहावली, पृष्ठ-१४२

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८९५) साहिब सीतानाथ सों जब घटिहै अनुराग ।
तुलसी तबहीं भाल तें भभरि भागिहैं भाग ।।

दोहावली, पृष्ठ-३३

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८९६) सिद्ध समागम संपदा सदन सरीर सुपास ।
सीतानाथ प्रसाद सुभ सगुन सुमंगल बास ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१५२

श्रीकान्तशरण

(८९७) सिव पद कमल जिन्हहिं रति नाहीं ।
रामहि ते सपनेहुं न सोहाहीं ।।
बिनु छल बिस्वनाथ पद नेहू ।
राम भगत कर लच्छन एहू ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२००

विजयानन्द त्रिपाठी

(८९८) सिव साधु निंदकु मंद अति जोउ सुनै सोउ बड़ पातकी ।।
पार्वतीमंगल,पृष्ठ-२१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(८९९) सिष्य सखा सेवक सचिव सुतिय सिखावन सांच ।
सुनि समुझिअ पुनि परिहरिअ पर मन रंजन पांच ।।
दोहावली,पृष्ठ-१९३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९००) सीतल बानी संत की ससिहू तै अनुमान ।
तुलसी कोटि तपनि हरै जो कोउ धारै कान ।।
वैराग्य सन्दीपिनी,पृष्ठ-२५
श्रीकान्तशरण

(९०१) सीता चरन प्रनाम करि सुमिरि सुनाम सुनेम ।
होहिं तीय पति देवता प्राननाथ प्रिय प्रेम ।।
दोहावली,पृष्ठ-७५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९०२) सुकृत न सुकृती परिहरइ कपट न कपटी नीच ।।
दोहावली,पृष्ठ-११७
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९०३) सुक सुमंगल काज सब कहब सगुन सुभ देखि ।
जंत्र मंत्र मनि औषधी सहसा सिद्धि बिसेषि ।।
रामाज्ञाप्रश्न,पृष्ठ-१४८
श्रीकान्तशरण

(६०४) सुख जीवन सब कोउ चहत सुख जीवन हरि नाथ ।।

दोहावली, पृष्ठ-६१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६०५) सुख संपति सुत सैन सहाई ।
जय प्रताप बल बुद्धि बडाई ।।
नित नूतन सब बाढ़त जाई ।
जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-३०७
विजयानन्द त्रिपाठी

(६०६) सुख साधन हरि विमुख वृथा ,
जैसे श्रम फल घृतहित मथे पाथ ।।
यह बिचारि तजि कुपथ कुसंगति चलि
सुपथ मिल भले साथ ।।

विनयपत्रिका , पृष्ठ-२२६
राजनाथ शर्मा

(६०७) सुख हरषहिं जड दुख बिलखाहीं ।
दोउ सम धीर धरहिं मनमाहीं ।।
धीरजु धरहु विवेकु बिचारी ।।
छाडिअ सोचु सकल हितकारी ।।

मानस- अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२१३
विजयानन्द त्रिपाठी

(६०८) सुखी प्रजा जनु पाइ सुराजा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-३४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(६०६) सुगम अगम अति धरम विचारू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१०) सुजन कहत भल पोंच पथ पापि न परखइ भेद ।
करम नाम सुरसिरित मिस बिधि निषेध बद बेद ।।

दोहावली,पृष्ठ-१२०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६११) सुजन सुतरु बन ऊख सम खल टंकिका रुखान ।
परहित अनहित लागि सब सांसति सहत समान ।।

दोहावली,पृष्ठ-११८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१२) सुजस समाज सकल गुनखानी

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१०
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१३) सुतदार अगार सखा , परिवार बिलोकु कुसमाजहि रे ।
सबकी ममता तजि कै समता सजि संत सभा न बिराजहि रे ।।
नर देह कहा करि देखु बिचार बिगारु गंवार न काजहि रे ।
जनि डोलहि लोलुप कूकर ज्यों तुलसी भजु कौसलराजहि रे ।।

कवितावली,पृष्ठ-३११
श्रीकान्तशरण

(६१४) सुत मानहिं मातु पिता तब लौं ।
अबलानन दीख नहीं जब लौं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१५) सुत वित नारि भवन परिवारा ।
होहिं जाहिं जग बारहिं बारा ।

मानस-लंकाकाण्ड, पृष्ठ-२६२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६१६) सुधा कि रोगिहि चाहइ रतन कि राजहि ।।

पार्वतीमंगल, पृष्ठ-१६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१७) सुधा पान करि मूक कि स्वाद बखावै ।

जानकीमंगल, पृष्ठ-२६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१८) सुधा साधु सुरतरु सुमन सुफल सुहावनि बात ।
तुलसी सीतापति भगति सगुन सुमंगल सात ।।

दोहावली, पृष्ठ-१५८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६१९) सुनहिं विमुक्त विरत अरु विषई ।
लहहिं भगति गति संपति नई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२०) सुनहु असंतन केर सुभाऊ। भूलेहु संगति करिअ न काऊ ।।
तिन्हकर संग सदा दुखदाई । जिमि कपिलहि घालै हरहाई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-७४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२१) सुनिअ सुधा देखिअहिं गरल सब करतूति कराल ।
जहं तहं काक उलूक बक मानस सकृत मराल ।।

दोहावली, पृष्ठ-११६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६२२) सुनि सनमानहिं सबहिं सुबानी ।
भनिति भगति नति गति पहिचानी ।
यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ ।।
जानि सिरोमनि कोसलराऊ ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-७२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२३) सुनि सीतापति सील सुभाउ ।
मोद न मन, तन पुलकि नैन जल, सो नर खेहर खाउ ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२५२
राजनाथ शर्मा

(६२४) सुनु कान दिये नित नेम लिये, रघुनाथहि के गुननाथहि रे ।
सुख मंदिर सुन्दरसुन्दर रूप सदा उर आनि धरे धनुमाथहि रे ।।

कवितावली, पृष्ठ-३१०
श्रीकान्तशरण

(६२५) सुनु खेगेस हरि भगति बिहाई ।
जो सुख चहहिं आन उपाई ।
ते सठ महा सिंधु बिनु तरनी ।
पैरि पार चाहहि जड़ करनी ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२६) सुनु जननी सोइ सुत बड भागी ।
जो पितु मातु क्चन अनुरागी ।
तनय मातु पितु तोष निहारा ।
दुर्लभ जननि सकल संसारा ।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-६६
विजयानन्दत्रिपाठी

(६२७) सुनु प्रभु बहुत अवग्या किये ।
उपज क्रोध ग्यानिन के किये ।
अति संघर्षन जो कर कोई ।
अनल प्रगट चन्दन ते होई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६८
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२८) सुनु मुनि मोह होइ मन ताकें ।
ग्यान बिराग हृदय नहिं जाकें ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२३८
विजयानन्द त्रिपाठी

(६२६) सुभ अरु असुभ करम अनुहारी ।
ईसु देइ फलु हृदयं बिचारी ।।
करै जो करमु पाव फलु सोई ।
निगम नीति असि कह सबु कोई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-११६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३०) सुभ अरु असुभ सलिल सब बहई ।
सुरसरि कोउ अपुनीत न कहई ।।
समरथ कहुं नहिं दोषु गोसाईं ।
रवि पावक सुरसरि की नाईं ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३१) सुमति कुमति सब के उर बसहीं ।
नाथ पुराण निगम अस कहहीं ।
जहां सुमति तहं संपति नाना ।
जहां कुमति तहं विपति निदाना ।।

मानस-सुन्दरकाण्ड, पृष्ठ-१४२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३२) सुमति बिचारहि परिहरहिं दल सुमनहुं संग्राम ।

दोहावली, पृष्ठ-१४६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६३३) सुमिरत जाहि मिटै अग्याना ।
सोइ सरबग्य रामु भगवाना ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१२६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६३४) सुमिरन सेवा राम सों साहब सों पहिचानि ।
ऐसेहु लाभ न ललक जो तुलसी नित हित हानि ।

दोहावली, पृष्ठ-५१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६३५) सुमिर सनेह सों तू नाम राम राय को ।
संबल निसबंल को सखा असहाय को ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२०५
राज नाथ शर्मा

(६३६) सुमिरु सनेह सहित सीतापति ।
राम चरन तजि नहिंन आन गति ।
जप तप तीरथ जोग समाधी ।
कलि मति बिकल न कछु निरुपाधी ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२६२
राजनाथ शर्मा

(६३७) सुमिरहु नाम राम कर सेवहु साधु ।
तुलसी उतरि जाहु भव उदधि अगाधु ।।

बरवै रामायण
श्रीकान्त शरण

(६३८) सुरगुरु गुरु सिय राम गन, राउ गिरा उर आनि ।
जो कछु करिअ सो होइ सुभ खलहिं सुमंगल खानि ।।

रामाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-१
श्रीकान्तशरण

(६३९) सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल ।
अस बिचारि मन माहिं भजिअ महामाया पतिहिं ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-२५४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४०) सुर नर मुनि सब के यह रीति ।
स्वारथ लागि करहिं सब प्रीति ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४१) सुर राज सों राज समाज समृद्धि बिरंचि धनाधिप सों धन सो ।
पवमान सों पावक सों जम सोम सों पूषन सों भव भूषन भो ।
करि जोग समीरन साधि समाधि कै धीर बड़ो बसहू मन भो ।
सब जाय सुभाय कहै तुलसी जो न जानकी जीवन को जन भो ।।

कवितावली,पृष्ठ-३३५
श्रीकान्तशरण

(६४२) सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी ।
रौरव नरक परहि ते प्रानी ।
होहिं उलूक संत निंदारत ।
मोह निसा प्रिय ज्ञान भानु गत ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४३) सुर सरि जलकृत बारुनि जाना ।
कबहुं न संत करहिं तेहि पाना ।
सुरसरि मिले सो पावन जैसे ।
ईस अनीसहि अंतरु तैसे ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ१५०
विजयानन्द त्रिपाठी

(६४४) सुलभ प्रीति प्रीतम सबै कहत करत सब कोइ ।

(तुलसी मीन पुनीत तें त्रिभुवन बड़ो न कोइ ।।

दोहावली, पृष्ठ-१०६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६४५) सुलभ सिद्धि सब प्राकृतहु, राम कहत जमुहात ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४५१

विजयानन्द त्रिपाठी

(६४६) सुसमय दिन द्वै निसान सबके द्वार बाजै ।
कुसमय दसरथ के दानि तैं गरीब निवाजै ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२२३

राजनाथ शर्मा

(६४७) सुहृद समाज दगाबाजि ही को सौदा सूत ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-५१४

राजनाथ शर्मा

(६४८) सुहृद सुजान सुसाहिबहिं, बहुत कहब बड़ि खोरि ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-४३६

विजयानन्द त्रिपाठी

(६४९) सूधे मन सूधे बचन सूधी सब करतूति ।
तुलसी सूधी सकल बिधि रघुबर प्रेम प्रसूति ।।

दोहावली, पृष्ठ-५६

हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६५०) सूर समय करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ।

विद्यमान रत पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-४६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(९५१) सूर सिरताज महाराजनि की राजा राम ।
जाको लेत ही सुखोत होत ऊसरो ।।

कवितावली, पृष्ठ-२८३
श्रीकान्तशरण

(९५२) सूर सुजस संग्राम महि मरन सुसाहिब काज ।।

रमाज्ञाप्रश्न, पृष्ठ-५६
श्रीकान्त शरण

(९५३) सोइ साधु गुरु समुझि सिखि रामभगति थिरताइ ।
लरिकाईं को पैरिबो तुलसी बिसरि न जाइ ।।

दोहावली, पृष्ठ-५३
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(९५४) सेवक प्रभुहि परै जनि भोरे ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-८
विजयानन्द त्रिपाठी

(९५५) सेवक सठ नृप कृपिन कुनारी ।
कपटी मित्र सूल सम चारी ।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड, पृष्ठ-१८
विजयानन्द त्रिपाठी

(९५६) सेवक सदन स्वामि आगमनू ।
मंगल मूल अमंगल दमनू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-१६
विजयानन्द त्रिपाठी

(९५७) सेवक सुख चह मान भिखारी ।
व्यसनी धनु सुमगति विभिचारी ।
लोभी जसु चह चार गुमानी ।
नभ दुहि दूध चहत ए प्रानी ।

मानस-अरण्यकाण्ड,,पृष्ठ-५४२
विजयानन्द त्रिपाठी

(९५८) सेवक सुत पति मातु भरोसे ।
रहइ असोच बनै प्रभु पोसे ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-९
विजयानन्द त्रिपाठी

(९५९) सेवक सुमिरत नामु सप्रीती ।
बिनु श्रम प्रबल मोह दल जीती ।
फिरत सनेह मगन सुख अपनें ।
नाम प्रसाद सोच नहिं सपनें ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-६५
विजयानन्द त्रिपाठी

(९६०) सेवक सेव्य भाव बिनु भव न तरिय उरगारि ।
भजहु राम पद पंकज , अस सिद्धान्त बिचारि ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६१) सेवकु सो जो करै सेवकाई ।
अरि करनी करि अरिव लराई ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-४५५
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६२) सेवत विषय विवर्ध जिमि, नित नित नूतन मार ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ-३६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६३) सेवत साधु द्वैत - भय भागै । श्री रघुबीर चरन लौ लागै ।
देह जनित बिकार सब त्यागै । तब फिरि निज स्वरूप अनुरागै ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-३१०
राजनाथ शर्मा

(६६४) सेवत सुलभ उदार कल्पतरु ।
पारवती - पति परम सुजान ।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-६३
राजनाथ शर्मा

(६६५) सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों ।
बिहूने गुन पथिक पियासे जात पथ के ।

कवितावली,पृष्ठ-२६६
श्रीकान्तशरण

(६६६) सेवा सील सनेह बस करि परिहरि प्रिय लोग ।
तुलसी ते सब राम सों सुखद संयोग वियोग ।।

दोहावली,पृष्ठ-५५
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(६६७) सोइ पंडित सोइ पारखी, सोई संत सुजान ।
सोई सूर सचेत सो, सोई सुभट प्रमान ।
सोइ ज्ञानी सोइ गुनी जन सोई दाता ध्यानि ।।
तुलसी जाके चित भई, राग द्वेष की हानि ।।

वैराग्य संदीपिनी, पृष्ठ-५८
श्रीकान्त शरण

(६६८) सोई सर्बज्ञ तज्ञ सोइ पंडित ।
सोइ गुन गृह विज्ञान अखंडित ।
दच्छ सकल लच्छन जुत सोई ।
जाके पद सरोज रति होई ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-६०
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६९) सोई राम नाम को सनेह सो प्रताप जन,
ताकी महिमा क्यों कही है जाति अग मैं ।।

कवितावली, पृष्ठ-३६४
श्रीकान्त शरण

(६७०) सोई है खेद जो बेद कहै न घटै न जन सो रघुबीर बढ़ायो ।।

कवितावली, पृष्ठ-३६२
श्रीकान्त शरण

(६७१) सो कुल धन्य उमा सुनु, जगत पूज्य सुपुनीत ।
श्री रघुवीर परायन जेहि नर उपज बिनीत ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२४६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७२) सोच संकटनि सोच संकट परत, जर ।
जरत प्रभाउ नाम ललित ललाम को ।।
बूड्यो तरति बिगरियो सुधरति बात ।
होत देखि दाहिनो सुभाउ बिधि- बाम को ।
भागत अभाग, अनुरागत बिराग, भाग ।
जागति आलसि तुलसीहू से निकाम को ।।
धाइँ धारि फिरि कै गोहारि हितकारी होति ।
आइँ मीचु मिटति जपत राम नाम को ।।

कवितावली, पृ ष्ठ-२६१
श्रीकान्तशरण

(६७३) सोचिय गृही जो मोह बस, करइ करम पथ त्याग ।
सोचिय जती प्रपंच रत, बिगत बिबेक बिराग ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२४२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७४) सोचिय पुनि पति बंचक नारी ।
कुटिल कलह प्रिय इच्छाचारी ।।
सोचिय बटु निज व्रतु परिहरई ।
जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड, पृष्ठ-२४२
पृष्ठ-२४२ विजयानन्द त्रिपाठी

(६७५) सोचिअ बयसु कृपन धनवानू ।
जो न अतिथि सिव भगति सुजानू ।
सोचिअ सुद्र विप्र अवमानी ।
मुखरु मानप्रिय ग्यान गुमानी ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४२
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७६) सोचिअ विप्र जो वेद विहीना ।
तजि निज धरमु बिषय लयलीना ।।
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना ।
जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(६७७) सो जन जगत जहाज है, जाके राग न दोष ।
तुलसी तृष्ना , त्यागि कै गहेउ सील संतोष ।।

वैराग्य संदीपिनी,पृष्ठ-२१
श्रीकान्तशरण

(६७८) सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर ।
होहिं बिषय रत मंद मंदतर ।।
कांचु किरिच बदले ते लेहीं ।
करते डारि परसमनि देहीं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२८
विजयानन्द त्रिपाठी

(९७९) सो धन धन्य प्रथम गति जाकी ।
धन्य पुन्य रत मति सोइ पाकी ।
धन्य घरी सोइ जब सत संगा ।
धन्य जन्म द्विज भगति अभंगा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२४५
विजयानन्द त्रिपाठी

(९८०) सो न टरै रचै विधाता ।।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-१८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(९८१) सो मनिजदपि प्रगट जग अहई ।
राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई ।।
सुगम उपाय पाइबे केरे ।
नर हतभाग्य देहिं भट भेरे ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२२५
विजयानन्द त्रिपाठी

(९८२) सो सब सहिब जो दैउ सहावा ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३५६
विजयानन्द त्रिपाठी

(९८३) सो सुकृती, सुचिमंत , सुसंत, सुसील, सयान सिरोमनि स्वै ।
सुर तीरथ तासु मनावत आवन, पावन होत हैं ता तन छ्वै ।।
गुन गेह, सनेह को भाजन सो, सबही सों उठाइ कहउं भुज है ।
सतिभाय सदा छल छांडि सबै तुलसी जो रहै रघुवीर को ह्वै ।।

कवितावली,पृष्ठ-३२१
श्रीकान्तशरण

(९८४) सोह न राम प्रेम बिनु ग्यानू ।
करन धार बिनु जिमि जल जानू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-४०३
विजयानन्द त्रिपाठी

(९८५) स्याम सुरभि पय बिसद अति गुनद करहिं सब पान ।
गिरा ग्राम्य सिय राम जस गावहिं सुनहिं सुजान ।।

दोहावली,पृष्ठ-६६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९८६) स्वारथ को परमारथ को कलि, राम को नाम-प्रताप बली है ।

कवितावली,पृष्ठ-४११
श्रीकान्तशरण

(९८७) स्वारथ परमारथ रहित सीता राम सनेह ।
तुलसी सो फल चारि को फल हमार मत एह।।

दोहावली,पृष्ठ-३१
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९८८) स्वारथ परमारथ हित एक उपाय ।
सीय - राम - पद ' तुलसी ' प्रेम बढ़ाय ।।

बरवै रामायण,पृष्ठ-६३
श्रीकान्तशरण

(९८९) स्वारथ मीत सकल जग मांहीं ।
सपनेहु प्रभु परमारथ नाहीं ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-८६
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६०) स्वारथ सांच जीव कह एहा ।
मन क्रम वचन राम पद नेहा ।
सोइ पावन होइ सुभग सरीरा ।
जो तनु पाइ भजै रघुवीरा ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१६४
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६१) स्वारथ सुख सपनेहुं अगम परमारथ न प्रवेस ।
राम नाम सुमिरत मिटहिं तुलसी कठिन कलेस ।।

दोहावली,पृष्ठ-१८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६२) हंसनि मिलनि बोलनि मधुर कटु करतब मन मांह ।
छुवत जो सकुचइ सुमति सो तुलसी तिन्ह की छांह ।।

दोहावली,पृष्ठ-१४०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६३) हम हमार आचार बड़ भूरि भार धरि सीस ।
हठि सठ परबस परत जिमि कीर कोस कृमि कीस ।।

दोहावली,पृष्ठ-८३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(६६४) हरगिरि ते गुरु सेवक धरमू ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-३६७
विजयानन्द त्रिपाठी

(६६५) हरति सब आरती राम की ।

दहन दुख दोष निमूलिनी काम की ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-१५४
रामनाथ शर्मा

(९९६) हरन अमंगल अघ अखिल करन सकल कल्यान ।
राम नाम नित कहत हर गावत बेद पुरान ।।

दोहावली, पृष्ठ-२४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९९७) हरन विषाद राग रोष गुन दोषमई, विरची बिरंचि
सब देखियत दुनिये ।।

हनुमान बाहुक, पृष्ठ-३६
महावीर प्रसाद मालवीय,
वैद्य 'वीर'

(९९८) हरिं नरा भजंति ये तिदुस्तरं तरंति ते ।।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३८
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(९९९) हरि इच्छा भावी बलवाना ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१३१
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०००) हरि गुर निंदक दादुर होई ।
जन्म सहस्र पाव तन सोई ।
द्विज निंदक बहु नरक भोग करि ।
जग जनमै वायस सरीर धरि ।

मानस-उत्तरकाण्ड, पृष्ठ-२३०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००१) हरिजन हिय उपज न कामा ।।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-३६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००२) हरिपद बिमुख लह्यो न काहु सुख, सठ यह समुझ सबेरो ।।

विनयपत्रिका,पृष्ठ-२३२
राजनाथ शर्मा

(१००३) हरि भगति पाइ श्रम तजहि आश्रमी चारी ।

मानस-किष्किन्धाकाण्ड,पृष्ठ-४२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००४) हरि माया कर अमित प्रभावा ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१०६
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००५) हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं ।
[illegible] ।।
भजिअ राम सब काम तजि अस बिचारि मन माहिं ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१८२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००६) हरि हर निन्दा सुनै जो काना ।
होइ पाप गोघात समाना ।।

मानस-लंकाकाण्ड,पृष्ठ२४१
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००७) हरि हर विमुख धर्मरत नाहीं ।
तै नर तहं सपनेहुं नहिं जाहीं ।

मानस-बालकाण्ड,पृष्ठ-२०३
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००८) हरै सिष्य धन सोक न हरई ।
सो गुर घोर नरक मह परई ।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-१७०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१००९) हांडी हाटक घटित चरु रांधे स्वाद सुजान ।

दोहावली,पृष्ठ-६६
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१०१०) हाथ कछू नहिं लागिहै किएं गोड़ की गाइ ।

दोहावली,पृष्ठ-१७६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१०११) हानि कि जग एहि सम कछु माई ।
भजिय न रामहि नर तन पाई ।
अघ कि पिसुनता सम कछु आना ।
धर्म कि दया सरिस हरिजाना ।।

मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२०२
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०१२) हानि लाभु जीवन मरनु, जसु अपजसु विधि हाथ ।।

मानस-अयोध्याकाण्ड,पृष्ठ-२४०
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०१३) हित पर बढ़इ बिरोध जब अनहित पर अनुराग ।
राम बिमुख बिधि बाम गति सगुन अघाइ अभाग ।।
दोहावली,पृष्ठ-१४४
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१०१४) हित पुनीत सब स्वारथहिं अरि असुद्ध बिनु चाड़ ।
निज मुख मानिक सम दसन भूमि परे ते हाड़ ।।
दोहावली,पृष्ठ-११३
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१०१५) हित सों हित , रति राम सों रिपु सों बैर बिहाउ ।
उदासीन सब सों सरल तुलसी सहज सुभाउ ।
दोहावली,पृष्ठ-४०
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१०१६) हिमि ते अनल प्रगट बरु होई ।
बिमुख राम सुख पाव न कोई ।
मानस-उत्तरकाण्ड,पृष्ठ-२३७
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०१७) हिय फाटहुं फूटहुं नयन जरउ सो तन केहि काम ।
द्रवहिं स्रवहिं पुलकइं नहीं तुलसी सुमिरत राम ।।
दोहावली,पृष्ठ-२५
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१०१८) हृदय सो कुलिस समान जो न द्रवइ हरिगुन सुनत ।।
कर न राम गुन गान जीह सो दादुर जीह सम ।।
दोहावली,पृष्ठ-२८
हनुमान प्रसाद पोद्दार

(१०१६) ह्वै है कीच कौ ठिला घोर ।

कृष्णगीतावली, पृष्ठ-१८
श्रीकान्तशरण

(१०२०) होइ न बिमल बिबेक नीर बिनु बेद पुरान बखान्यौ ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-२३४
राजनाथ शर्मा

(१०२१) होइ न विमल विवेक उर, गुर सन किये दुराव ।।

मानस-बालकाण्ड, पृष्ठ-१२५
विजयानन्द त्रिपाठी

(१०२२) होइ भलै कै अनभलौ होइ दानि कै सूम ।
होइ कपूत सपूत कै ज्यौं पावक मैं धूम ।।

दोहावली, पृष्ठ-१२६
हनुमानप्रसाद पोद्दार

(१०२३) हौं समुझत साईं- द्रोह की गति छार छिया रे ।।

विनयपत्रिका, पृष्ठ-१२८
राजनाथ शर्मा ।

प रि शि ष्ट - २

सहायक - ग्रन्थ - सूची

हिन्दी रचनायें

१: अपभ्रंशमुक्तक काव्य - (अपभ्रंश साहित्य)
लेखक - प्रो० हरिवंश कोछड़
प्रकाशक- भारती साहित्य मंदिर, फव्वारा, दिल्ली।

२: अवधी और उसका साहित्य-
संपादक- क्षेमचन्द्र 'सुमन'
प्रकाशक- राजकमल प्रकाशन
प्रथम संस्करण-१९५४

३: आधुनिक संस्कृत साहित्य -
लेखक- डा० हीरालाल शुक्ल
प्रकाशक- जीत मल्होत्रा
रचना प्रकाशन,खुल्दाबाद,इलाहाबाद-१

४: उत्तरी भारत की संत परंपरा -
लेखक - आचार्य परशुराम चतुर्वेदी
प्रकाशक- भारती भंडार,इलाहाबाद
द्वितीय संस्करण- संवत् २०२१

५: कबीर ग्रन्थावली- (सटीक)
टीकाकार- प्रो० पुष्पपाल सिंह
प्रकाशक-अशोक प्रकाशन,नई सड़क,दिल्ली-६
द्वितीय संस्करण,-१९६५

६: कवितावली- (तुलसीदास कृत)(सिद्धान्त तिलक)
लेखक और प्रकाशक - श्रीकान्त शरण
प्रथमावृत्ति- संवत् -२०१५, पुस्तक भंडार,पटना-४
प्राप्ति स्थान- सिद्धान्त- तिलक कार्यालय
सद्गुरु कुटी, गोलाघाट,श्री अयोध्याजी

७: कृत्तिवासी बंगला रामायण और रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन ।
लेखक- श्री रामनाथ त्रिपाठी
प्रकाशक- भारत प्रकाशन मन्दिर,अलीगढ़,
सन्-१९५७ ई०

८: कृष्ण भक्ति काव्य -
लेखक- डा० जगदीश गुप्त
प्रकाशक- वसुमति, १८ मीरो रोड़, इलाहाबाद-१
प्रथम संस्करण,१९६८ ई०

९: क्रान्तिकारी तुलसी -
लेखक- श्री नारायण सिंह
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग
संस्करण-शाक-१८८०

१०: खड़ीबोली का लोक साहित्य -
लेखक-डा० सत्यागुप्ता
प्रकाशक-हिन्दुस्तानी एकेडेमी,इलाहाबाद
प्रथम संस्करण-१६६७

११: गीतावली- (तुलसीकृत)
मुद्रक तथा प्रकाशक- हनुमान प्रसाद पोद्दार
गीताप्रेस,गोरखपुर
अनुवादक- मुनिलाल
नवम संस्करण- सवंत्-२०१७

१२: गोस्वामी तुलसीदास -
लेखक- श्यामसुन्दर दास, पीतांबर दत्त बड़थ्वाल
प्रकाशक-हिन्दुस्तानी एकेडेमी,उत्तरप्रदेश,इलाहाबाद
द्वितीय संस्करण- सन् १६५२

१३: गोस्वामी तुलसीदास -
लेखक- आचार्य सीताराम चतुर्वेदी
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन, चौक, बनारस-१
संस्करण- १६५६ ई०

१४: गोस्वामी तुलसीदास-
लेखक- राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
प्रकाशक- एस चन्द्र एण्ड कम्पनी
दिल्ली , नई दिल्ली, जालन्धर, लखनऊ , बम्बई
संस्करण-१६६३

१५: गोस्वामी तुलसीदास -
लेखक- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा,काशी
अष्टम संस्करण,संवत्-२०१६ वि०

१६: गोस्वामी तुलसीदास और राम कथा -
लेखक- सत्यदेव चतुर्वेदी
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य सृजन परिषद,
चौक,जौनपुर, उत्तरप्रदेश
प्रथम संस्करण,१६५७ ई०

१७: गोस्वामी तुलसीदास का सामाजिक आदर्श -
लेखिका- श्रीमती सुधारानी शुक्ल
प्रकाशक- लखनऊ विश्वविद्यालय

१८: गोस्वामी तुलसीदास की समन्वय साधना :-
लेखक- व्यौहार राजेन्द्र सिंह
प्रकाशक- काशी नागरी प्रचारिणी सभा,
वाराणसी
संस्करण-संवत् -२०२६

१६: गोस्वामी तुलसीदास - विवेचन, विश्लेषण और अध्ययन
लेखक- राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
प्रकाशक- एस चन्द एण्ड कम्पनी, दिल्ली,नई दिल्ली,
जलन्धर,लखनऊ, बम्बई
संस्करण,१६६३ ई०

२०: गोस्वामी तुलसीदास : व्यक्तित्व ,दर्शन, साहित्य ।
लेखक-रामदत्त भरद्वाज
प्रकाशक- गौरीशंकर शर्मा, मैनेजर, भारती साहित्य मंदिर,फव्वारा,दिल्ली
संस्करण-सन्-१९६२

२१: जानकीमंगल- (गोस्वामी तुलसीदास कृत)
प्रकाशक- घनश्याम दास जालान,
गीताप्रेस, गोरखपुर
प्रथम संस्करण-संवत्-२०१४

२२: तुलसी-
लेखक- प्रो० रामबहोरी शुक्ल
प्रकाशक- हिन्दी भवन, जालंधर और इलाहाबाद
तृतीय संस्करण-सन्-१९५२

२३: तुलसी आधुनिक वातायन से -
लेखक- डा० रमेश कुन्तल मेघ
प्रकाशक- भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशक,कलकत्ता,-२७
प्रथम संस्करण-सन् १९६७

२४: तुलसी और उनका काव्य :-
लेखक- सत्यनारायण सिंह
प्रकाशक- रामलाल पुरी,
आत्माराम एण्ड संस,दिल्ली-६
संस्करण-सन्-१९६४

२५: तुलसी का गवेषणात्मक अध्ययन -
लेखक- प्रो० कुमार
प्रकाशक- फूलचन्द सुमन, सरस्वती पुस्तक सदन,
मोतीकटरा, आगरा
प्रथम संस्करण-संवत्-२०१२

२६: तुलसी काव्य मीमांसा-
लेखक- उदय भानु सिंह
प्रकाशक- ओम प्रकाश, राधाकृष्ण प्रकाशन
दिल्ली-७
संस्करण- सन्-१६६६

२७: तुलसी काव्य में नैतिक मूल्य -
लेखक -डा० चरणदास शर्मा (शास्त्री)
प्रकाशक- भारतीय ग्रन्थ निकेतन
१३३, लाजपतराय मार्केट, दिल्ली-६
प्रथम संस्करण-सन्१६७२

२८: तुलसी की काव्यकला और दर्शन -
लेखक- रामगोपाल शर्मा `दिनेश`
प्रकाशक- सरस्वती संवाद, कार्यालय, आगरा
प्रथम संस्करण-१६६५

२६: तुलसी की जीवन भूमि-
लेखक- चन्द्रबली पांडे
प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा,काशी
प्रथम संस्करण,संवत्२०१२ वि०

३०: तुलसी की विचारधारा -
लेखक- डा० नारायण प्रसाद
प्रकाशक-लोक भारती प्रकाशक,महात्मागांधी मार्ग
इलाहाबाद
प्रथम संस्करण-सन्-१६७०

३१: तुलसी के गीति काव्य-
लेखक-हरिकृष्ण देवसर
प्रकाशक-नन्द किशोर एण्ड संस ,चौक,वाराणसी
प्रथम बार,सन् १६६३

३२: तुलसी के चार दल- प्रथम भाग , द्वितय भाग
लेखक- सद्गुरु शरण अवस्थी
प्रकाशक- इंडियन प्रेस लिमिटेड,प्रयाग
द्वितीय संस्करण-सन्-१६५२

३३: तुलसी के भक्त्यात्मक गीत -
लेखक- डा० वचन देव कुमार
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य संसार,दिल्ली-६,पटना-४
प्रथम संस्करण-१६६४

३४: तुलसी-ग्रन्थावली - दूसरा खण्ड
लेखक -आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
प्रकाशक- नागरीप्रचारिणी सभा,काशी,चतुर्थ संस्करण
संवत्-२०१५ वि०

३५: तुलसी दर्शन मीमांसा -

लेखक - डा० उदय भान सिंह

प्रकाशक- लखनऊ विश्वविधालय,लखनऊ

प्रथम संस्करण-संवत्-२०१८ वि०

३६: तुलसीदास-

लेखक - प्रो० दामोदर दास गुप्त (आलोचनात्मक अध्ययन)

प्रकाशक-हिन्दी साहित्य संसार,पटना-४,दिल्ली-६

द्वितीय संस्करण-१९६२ई०

३७: तुलसीदास -

लेखक-चन्द्रबलि पांडे

प्रकाशक-नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण-संवत्-२०१४ वि०

३८: तुलसीदास-

लेखक- माता प्रसाद गुप्त

प्रकाशक-प्रयाग विश्वविधालय,हिन्दी परिषद्,प्रयाग

तृतीय संस्करण-सन् -१९५३

३९: तुलसी नव मूल्यांकन -

लेखक-डा० रामरतन भटनागर

प्रकाशक-स्मृति प्रकाशन,६१ महाजनी टोला,इलाहाबाद-३

प्रथम संस्करण-सन्-१९७२ ई०

४०: तुलसी पूर्व राम साहित्य -

लेखक-डा० अमरपाल सिंह

प्रकाशक- रचना प्रकाशन?इलाहाबाद-१

प्रथम संस्करा-१९६८

४१: तुलसी प्रतिभा -

संपादक- इन्द्रनाथ मदान
प्रकाशक- लोक भारती प्रकाशन
१५,ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-२
तीसरा नया संस्करण,१६७२

४२: तुलसी मानस रत्नाकर-

डा० भाग्यवती सिंह
प्रकाशक-सरस्वती पुस्तक सदन,मोतीकटरा,आगरा
प्रथम संस्करण-सन्-१६६२

४३: तुलसी रसायन -

लेखक- डा० भगीरथ मिश्र
प्रकाशक- साहित्य भवन-प्र०लि०,इलाहाबाद
पंचम संस्करण,-१६६६

४४: तुलसी साहित्य रत्नाकार अथवा महाकवि तुलसीदास -

लेखक- पं० रामचन्द्र द्विवेदी
प्रकाशक- सत् साहित्य प्रकाशक मण्डल,पटना
प्रथम संस्करण-वि०संवत् -१६६८

४५: तुलसी साहित्य और सिद्धान्त-

लेखक- यज्ञदत्त शर्मा
प्रकाशक- राम लाल पुरी, आत्माराम एण्ड संस,दिल्ली
संस्करण-१६५५

४६: ~~तुलसी सूक्ति -सुधा-~~

~~संपादक- वियोगी हरि~~

४६: तुलसी-सूक्ति-सुधा :- संपादक :- वियोगी हरि
प्रकाशक- कृष्णदास गोपालदास पोसाल,
साहित्य सेवा सदन, बनारस
चतुर्थ संस्करण, संवत् -२०१२

४७: तुलसीदास और उनका साहित्य-
लेखक-डा० विमल कुमार जैन
प्रकाशक- साहित्य सदन, देहरादून

४८: तुलसीदास और उनके काव्य -
लेखक- डा० रामदत्त भारद्वाज
प्रकाशक- सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली
प्रथम संस्करण, सन्-१९६४

४९: तुलसीदास और उनके काव्य -
लेखक-पं० रामनरेश त्रिपाठी
प्रकाशक- राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
तृतीय संस्करण, १९५८

५०: तुलसीदास और उनका युग -
लेखक- डा० राजपति दीक्षित
प्रकाशक- ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी (बनारस)
प्रथमबार-संवत्-२००९, द्वितीयावृत्ति-संवत्-२०१८

५१: तुलसीदास और उनके ग्रन्थ-
लेखक- भगीरथ प्रसाद दीक्षित
प्रकाशक- अशोक प्रकाशन, लखनऊ साहित्य प्रेस, लखनऊ
प्रथम संस्करण- १९५५

५२: तुलसीदास का कथाशिल्प-
लेखक- डा० रांगेय राघव
प्रकाशक-म०प्र० साहित्य प्रकाशन, बिलासपुर
संस्करण-१६५६

५३: तुलसीदास : काव्यकला और दर्शन
संपादक- डा० रामगोपाल शर्मा 'दिनेश'
प्रकाशक- सरस्वती संवाद कार्यालय, आगरा
प्रथम संस्करण-१६६५

५४: तुलसीदास का घर-बार -
लेखक- रामदत्त भारद्वाज
प्रकाशक-नेशनल इन्फारमेशन एण्ड पब्लिकेशन लिमिटेड
बम्बई, प्रथम संस्करण-१६४६

५५: तुलसीदास का प्रगीतकाव्य-
लेखक - प्रो० विनयकुमार
प्रकाशक- आरियण्टल बुक डिपो, नई सड़क, दिल्ली
प्रथम संस्करण, १६६२

५६: तुलसीदास का सौन्दर्य बोध -
लेखक- छोटेलाल दीक्षित
प्रकाशक- नन्द किशोर एण्ड सन्स
पो० बक्स- नं०२७, चौक वाराणसी
प्रथम संस्करण-१६६५

५७: तुलसीदास की कारयित्री प्रतिभा का अध्ययन -
लेखक- डा० श्रीधरसिंह
प्रकाशक-ओमप्रकाश बेरी, हिन्दी प्रचारक, वाराणसी-२
प्रथम संस्करण-१६६८

५८: तुलसीदास की भाषा -
लेखक- डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव
प्रकाशक-लखनऊ विश्वविद्यालय
संवत्-२०१४ वि०

५९: तुलसीदास - जीवनी और विचारधारा -
लेखक- डा० राजाराम रस्तोगी
प्रकाशक-अनुसंधान प्रकाशन,आचार्य नगर,कानपुर
संस्करण-संवत्-२०२०

६०: तुलसीदास - वस्तु और शिल्प :-
लेखक-डा०आनन्द प्रकाश दीक्षित
प्रकाशक- आचार्य विश्व प्रकाश दीक्षित ' बटुक '
सरस्वती पुस्तक सदन,आगरा
प्रथम संस्करण-१९५९

६१: दोहावली (गोस्वामी तुलसीदास कृत)
अनुवादक- हनुमान प्रसाद पोद्दार
मुद्रक तथा प्रकाशक- मोतीलाल जालान, गीताप्रेस,गोरखपुर
सतरहवां संस्करण-संवत्-२०२२

६२: नीति-सूक्ति कोश-
संपादक-डा० राम सरूप शास्त्री ' रसिकेश '
प्रकाशक- सन्मार्ग प्रकाशन,दिल्ली-७
प्रथम संस्करण- १९६८

६३: पार्वतीमंगल (गोस्वामी तुलसीदास)-
टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार
मुद्रक तथा प्रकाशक- मोतीलाल जालान,गीताप्रेस गोरखपुर
षष्ठ संस्करण-संवत्-२०२४

६४: पालि साहित्य का इतिहास -
लेखक- राहुल सांस्कृत्यान
प्रकाशक- हिन्दी समिति, सूचना विभाग,लखनऊ
प्रथम संस्करण- १९६३

६५: प्राकृत और उसका साहित्य -
लेखक - हरदेव बाहरी
संपादक- क्षेम चन्द्र सुमन
प्रकाशक- सरस्वती सहकार , दिल्ली शाहदरा
राज कमल प्रकाशन,दिल्ली,इलाहाबाद,बंबई

६६: प्राकृत साहित्य का इतिहास -
लेखक-डा० जगदीश चन्द्र जैन
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन,वाराणसी
प्रथम संस्करण-वि० संवत् - २०१८

६७: प्राचीन कवियों की काव्य साधना -
लेखक- राजेन्द्र सिंह गौड
संपादक- श्री राम नाथ सुमन
प्रकाशक- साधना सदन,इलाहाबाद
चतुर्थावृत्ति-१९५८

६८: बरवै रामायण- (तुलसीदास कृत) (सिद्धान्त तिलक)-
टीकाकार- श्री श्रीकान्त शरण
प्रकाशक- पुस्तक भण्डार,पटना-४
संस्करण- संवत् -२०१४

६६: भक्ति आन्दोलन का अध्ययन -
लेखक- डा० रतिभानु सिंह नाहर
प्रकाशक- किताब महल,इलाहाबाद

७०: भक्ति का विकास-
लेखक- डा० मुंशीराम शर्मा
प्रकाशक-चौखम्भा विद्या भवन,चौक, वाराणसी-१
संस्करण-१६५८

७१: भक्ति काव्य में माधुर्य भाव का स्वरूप -
लेखक- डा० जयनाथ नलिन
प्रकाशक- बंसल एण्ड कम्पनी,नवीन शाहदरा,दिल्ली-३१
प्रथम संस्करण-१६६६

७२: भक्ति साहित्य में मधुरोपासना -
लेखक- परशुराम चतुर्वेदी
प्रकाशक- भारती भण्डार, इलाहाबाद
प्रथम संस्करण-संवत् २०१८ वि०

७३: भविसयत कहा तथा अपभ्रंश कथा काव्य -
लेखक- डा० देवेन्द्र कुमार शास्त्री
संपादक एवं नियामक- लक्ष्मीचन्द्र जैन
प्रकाशक- भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन
प्रथम संस्करण-१६७०

७४: भागवत दर्शन -
लेखक - हरवंश लाल शर्मा
प्रकाशक- भारत प्रकाशन मन्दिर,अलीगढ़
संस्करण-२०२० वि०

७५: भागवत - संप्रदाय-

लेखक- पं० बलदेव उपाध्याय
प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
प्रथम संस्करण-२०१० वि०

७६: भारतीय नीति का विकास-

लेखक- डा० राजबली पाण्डेय
प्रकाशक- बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्,पटना
प्रथम संस्करण,१९६५

७७: भारतीय संस्कृति का इतिहास -

लेखक- दिनेश चन्द्र भारद्वाज
प्रकाशक- विनोद पुस्तक मन्दिर,आगरा
प्रथम संस्करण -१९६२

७८: भारतीय संस्कृति के उपादान -

लेखक- डी०एन०मजुमदार
प्रकाशक- पी०एस०जयसिंघे द्वारा एशिया पब्लिशिंग हाउस,बम्बई-१
संस्करण-१९५८

७९: भारतीय सन्त परंपरा और समाज -

लेखक- डा० रांगेय राघव
प्रकाशक- किताब महल, इलाहाबाद
प्रथम आवृत्ति - १८८४ , शकाब्द

८०: भारतीय साधना और सन्त तुलसी -

लेखक- [illegible] डा० हरस्वरूप माथुर
प्रकाशक- साहित्य निकेतन,कानपुर
प्रथम संस्करण-१९६५

८१: मध्यकालीन कृष्णकाव्य -

लेखक - डा० कृष्णदेव भारी

प्रकाशक- हिन्दी साहित्य संसार, नई सड़क, दिल्ली-६

प्रथम संस्करण-१६७०

८२: मध्यकालीन धर्मसाधना -

लेखक -आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

प्रकाशक- साहित्य भवन, इलाहाबाद

तृतीय संस्करण-१६६२, ईसवी

८३: मध्यकालीन भारतीय संस्कृति -

लेखक- रायबहादुर महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचन्द ओझा

प्रकाशक- हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

तीसरा संस्करण-१६५२

८४: मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति -

लेखक- श्री रमा शंकर मेहरा

प्रकाशक- विनोद पुस्तक मंदिर, हास्पिटल रोड, आगरा

प्रथम संस्करण-१६६३

८५: मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति-

लेखक -दिनेश चन्द्र भारद्वाज

प्रकाशक- कैलाश प्रसाद अग्रवाल

कैलाश पुस्तक सदन, ग्वालियर

संस्करण-१६६७

८६: मध्ययुगीन काव्यसाधना -
लेखक- रामचन्द्र तिवारी
प्रकाशक- विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर
प्रथम संस्करण-१९६२

८७: मध्ययुगीन वैष्णव संस्कृति और तुलसीदास -
लेखक- रामरतन भटनागर
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली-६
प्रथम संस्करण-१९६२

८८: मध्ययुगीन सगुण एवं निर्गुण हिन्दी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन -
लेखक- डा० आशागुप्ता
प्रकाशक- मौलिचन्द्र शर्मा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
प्रथम संस्करण-सन्१९७०ई० शकाब्द-१८९२

८९: मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन-
लेखक- डा० सत्येन्द्र
प्रकाशक-विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
प्रथम संस्करण-सन् -१९६०

९०: महाभारत का में धर्म -
लेखिका- डा० शकुन्तला रानी
प्रकाशक- पाटल प्रकाशन, बालुगंज, आगरा
प्रथम संस्करण-१९७०

९१: मानस की (रूसी) भूमिका-
मूललेखक- स्व० श्री ए०वी०वरान्नीकोव
अनुवादक- डा० केसरी नारायण शुक्ल
प्रकाशक- विद्यामन्दिर , रानी कटरा, लखनऊ
पहलीबार-१९५५

६२: मानस की राम कथा -

लेखक- परशुराम चतुर्वेदी

प्रकाशक- किताब महल, इलाहाबाद

संस्करण-१६५३

६३: मानस-दर्शन-

लेखक- श्रीकृष्ण लाल

प्रकाशक- हिन्दी विश्वविद्यालय,काशी

६४: मानस- मंथन -

लेखक- डा० स्वामीनाथ शर्मा

प्रकाशक- आशुतोष प्रकाशन,चेतगंज,वाराणसी-२

प्रथम संस्करण-१६६६

६५: मानस माधुरी -

लेखक - डा० बलदेव प्रसाद मिश्र

प्रकाशक-साहित्य रत्न भंडार,आगरा

प्राम संस्करण-१६५८

६६: मुक्तक काव्य परंपरा और बिहारी -

लेखक- डा० रामसागर त्रिपाठी

प्रकाशक- अशोक प्रकाशन- नई सड़क ,नई दिल्ली

प्रथम संस्करण-१६६०

६७: रामकथा (उत्पत्ति और विकास) -

रेवरेंड फादर कामिल बुल्के

प्रकाशक- हिन्दी परिषद प्रकाशन,प्रयाग विश्वविद्यालय,

प्रयाग,द्वितीय संस्करण-१६६२

राम महिमा :

"राम स्थाण करने वाले हैं। वे सभी की भलाई के लिए
काम करने वाले हैं ।जी का कल्याण राम में ही अधिष्ठित हैं।
उनके अनन्य भक्त स छत्रछाया में रहना पसन्द करते हैं। राम के अलावा
कौन अपने भक्त कीदरेगा । १

राम अपने से दरिद्र को भी मूल्यवान बना देता है। अर्थात् एक
कौड़ी भी हाथ में न रह मनुष्य को समाज में प्रतिष्ठित स्थान चाहने पर
भी नहीं मिल सकता । गांधीजी यह भी दिखाना चाहते हैं कि धन ही
मनुष्य को उच्च पद दिलाता। धन के अभाव में उसका स्थान निम्न कोटि
का होता है। उसकी भलाई मैं भी नहीं चाहता। लेकिन रामचन्द्रजी के
प्रभाव से उसे गौरवपूर्ण स्थान ल सकता है। अपने को दरिद्र मानने वाले
गोस्वामीजी का जीवन रामजी ने ही बना दिया। २

राम निर्बल को भी बलवान बना देते हैं। यही राम की महिमा
का निदान है। राम की दृष्टि पड़ते ही उनकी निर्बलता दूर भाग जाती है।३

...ीका जो यह साची है।

१- राम निकाई रावरी है सबही को ...
सदा तो नीको तुलसीक ।
दोहावली-पृष्ठ-४३

२- लहइ न फूटी कौड़िहु को चाहै केहि काज ।
सो तुलसी महंगो कियो राम गरीब निवाज ।।
दोहावली-पृष्ठ-४४

३- तुलसी राम सुदीठि तें निबल होत बलवान ।
बैर बालि सुग्रीव के कहा कियो हनुमान ।
दोहावली-पृष्ठ-४५

९८: राजस्थानी कहावतें - एक अध्ययन -
लेखक- कन्हैयालाल सहल
प्रकाशक- भारती साहित्य मन्दिर ,दिल्ली
प्रथम संस्करण-१९५८

९९: रामचरित मानस- गोस्वामी तुलसीदास कृत (भाग-१)
(विजया टीका सहित)
टीकाकार- मानस राजहंस पं० विजयानन्द त्रिपाठी
प्रकाशक- मोतीलाल बनारसीदास,नेपाली खपरा,
बनारस
संस्करण-संवत्-२०१२ सन्-१९५५

१००: रामचरित मानस- भाग-२
टीकाकार- पं० विजयानन्द त्रिपाठी
प्रकाशक- मोतीलाल बनारसीदास
नेपाली खपरा, बनारस
प्रथम आवृत्ति-संवत्-२०११ सन्-१९५५

१०१: रामचरित मानस- भाग-३
टीकाकार-पं० विजयानन्द त्रिपाठी
प्रकाशक- मोतीलाल बनारसीदास
खपरा नेपाली,बनारस
संवत्-२०१२ सन्-१९५५

१०२: रामचरित मानस और साकेत -
लेखक- परमलाल गुप्त
प्रथम संस्करण-१९६२
प्रकाशक- नेशनल पब्लिशिंग हाउस,नईसड़क,दिल्ली

१०३: रामचरित मानस का कथा शिल्प -
लेखक - श्रीधर सिंह
प्रकाशक- संपूर्णानन्द, आनन्द पुस्तक भवन,
वाराणसी
प्रथम संस्करण-१९५९

१०४: रामचरित मानस का काव्यशास्त्रीय अनुशीलन -
लेखक- डा० राजकुमार पाण्डेय
प्रकाशक- अनुसन्धान प्रकाशन, आचार्य नगर, कानपुर
प्रकाशन तिथि -१९६३

१०५: रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन -
लेखक- डा० शिवकुमार शुक्ल
प्रकाशक- युगवाणी प्रकाशन, कानपुर
प्रकाशनकाल-१९६४

१०६: रामचरित मानस की पाश्चात्य भूमिका -
लेखक- सुखवीर सिंह
प्रकाशक- सन्मार्ग प्रकाशन , दिल्ली
प्रथम संस्करण-१९७१

१०७: रामचरित मानस की भूमिका-
लेखक- रामदास गौड
प्रकाशक- हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
ज्ञानवापी, बनारस
द्वितीयबार-१९५०

१०८: रामचरित मानस में अलंकार योजना -
लेखक- डा० वचन देव कुमार
प्रकाशक- हिन्दी साहित्य संसार, पटना-४
नई सड़क, दिल्ली-६
प्रथम मुद्रण-१६७२

१०६: रामचरित मानस में भक्ति -
लेखक-डा० सत्यनारायण शर्मा
प्रकाशक- सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा-३
प्रथम संस्करण-१६७० संवत्-२०२६

११०: रामचरित मानस में लोकवार्ता -
लेखक- चन्द्रभान
प्रकाशक- सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा
प्रथम संस्करण-१६६५ ई०

१११: राम भक्ति में रसिक संप्रदाय -
लेखक- डा० भगवती प्रसाद सिंह
प्रकाशक-अवध साहित्य मंदिर, बलरामपुर, उ०प्र०
प्रथम संस्करण-संवत्-२०१४

११२: रामभक्ति शाखा -
लेखक-रामनिरंजन पांडेय
प्रकाशक- नवहिन्दपब्लिकेशन, हैदराबाद
प्रथम संस्करण- १६६०, मकर संक्रान्ति-२०१६

११३: रामाज्ञाप्रश्न (सिद्धान्त तिलक)
टीकाकार- श्री श्रीकान्तशरण
श्री सद्गुरु कुटी, गोलाघाट, श्री अयोध्याजी
संस्करण-संवत्-२०१४

११४: रामानन्द संप्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव-
लेखक- डा० बदरीनारायण श्रीवास्तव
प्रकाशक- हिन्दी परिषद,प्रयाग विश्वविद्यालय,प्रयाग
प्रथम संस्करण-१९५७ ई०

११५: लघु हिन्दी शब्दसागर-
संपादक- करुणापति त्रिपाठी
प्रकाशक-नागरी प्रचारिणी सभा,काशी
प्रथम संस्करण-संवत्-२०२१

११६: वाल्मीकि और तुलसी (साहित्यिक मूल्यांकन) -
लेखक- डा० रामप्रकाश अग्रवाल
प्रकाशक- प्रकाशन प्रतिष्ठान,सुभाष बाजार
मेरठ

११७: वाल्मीकि रामायण एवं रामचरित मानस का तुलनात्मक अध्ययन-
लेखक-डा० विद्या मिश्र
प्रकाशक- विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन,
लखनऊ विश्वविद्यालय
संस्करण-१९६३ ई०

११८: विनयपत्रिका-
संपादक- राजनाथ शर्मा
प्रकाशक- विनोद पुस्तक मंदिर, हास्पिटल,रोड ,आगरा
प्रथम संस्करण,सन्-१९६३

११९: विनयपत्रिका दर्शन-
लेखक- तपेशकुमार चतुर्वेदी
प्रकाशक- राजकिशोर अग्रवाल,विनोद पुस्तक मंदिर
हास्पिटल रोड,आगरा

१२०: विष्णु पुराण का भारत-
लेखक-डा० सर्वानन्द पाठक
प्रकाशक- चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ आफिस,बाराणसी
प्रथम संस्करण-वि० संवत्-२०२४

१२१: वैदिक साहित्य और संस्कृति-
लेखक - बलदेव उपाध्याय
द्वितीय संस्करण-१६५८
प्रकाशक - शारदा मन्दिर,गणेश दीक्षित,काशी

१२२- वैराग्य संदीपिनी- (तुलसीदास कृत) (सिद्धान्त तिलक)
तिलककार- श्री श्रीकान्त शरण
संस्करण- संवत्-२०१४
प्राप्ति स्थान- श्रीसद्गुरु कुटी,गोलाघाट,श्री अयोध्याजी

१२३: वैष्णव-भक्ति आन्दोलन का अध्ययन-
लेखक-डा० मालिक मोहम्मद
प्रकाशक- राजपाल एण्ड सन्ज,काश्मीरी गेट,दिल्ली
पहला संस्करण-१६७२

१२४: ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास -
लेखक -प्रभुदयाल मीतल
प्रकाशक- राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,दिल्ली
प्रथम संस्करण-१६६६ ई०

१२५: ब्रज के धर्म संप्रदायों का इतिहास -
लेखक- प्रभुदयाल मीतल
प्रकाशक-साहित्य संस्थान,मथुरा
प्रथम संस्करण-२०१५ वि०,१६६८ ई०

१२६: श्रीकृष्ण गीतावली (तुलसीदास कृत) (सिद्धान्त तिलक)-
लेखक और प्रकाशक- श्री श्रीकान्त शरण
प्राप्ति स्थान- सिद्धान्त तिलक कार्यालय
सद्गुरु कुटी, गोलाघाट, अयोध्याजी
प्रथमावृत्ति-संवत्-२०१३

१२७: संत साहित्य की सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि -
लेखिका- सावित्री शुक्ल
प्रकाशक- विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
संस्करण-१९६३

१२८: संस्कृत साहित्य का इतिहास-
लेखक-वाचस्पति गैरोला
प्रकाशक- चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी
प्रथम संस्करण-वि०संवत्-२०१७

१२९: संस्कृति के चार उपाध्याय -
लेखक-रामधारी सिंह दिनकर
प्रकाशक- उदयाचल, आर्यकुमार रोड, पटना-४
तृतीय संस्करण-१९६२ ई०

१३०: सन्त वैष्णव काव्य पर तांत्रिक प्रभाव-
लेखक- डा० विश्वंभरनाथ उपाध्याय
प्रकाशक-विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
प्रथम संस्करण-१९६२

१३१: सन्त साहित्य की पृष्ठभूमि -
लेखक- डा० ओमप्रकाश शर्मा
प्रकाशक- हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद
प्रथम संस्करण-१९६५

१३२: साहित्यकोश- भाग-१
संपादक-धीरेन्द्रवर्मा
व्रजेश्वरवर्मा
धर्मवीर भारती, रामस्वरूप चतुर्वेदी
प्रथम संस्करण-संवत्-२०१५
प्रकाशक-ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी-१

१३३: साहित्यकोश- भाग-२
संपादक- धीरेन्द्रवर्मा
व्रजेश्वरवर्मा
धर्मवीर भारती, रामस्वरूप चतुर्वेदी
द्वितीय संस्करण-संवत्-२०२०
प्रकाशक- ज्ञानमंडल, लिमिटेड, वाराणसी-१

१३४: साहित्य सम्राट तुलसीदास -
लेखक- पंडित गंगाधर मिश्र
प्रकाशक- सरस्वती मंदिर, वाराणसी
प्रथम संस्करण -संवत्-२०१६

१३५: सुभाषित सप्तशती -
संकलन कर्ता तथा संपादक- मंगलदेव शास्त्री
प्रकाशक- सस्ता साहित्य मंडल, प्रकाशन, नई दिल्ली
पहलीबार-१९६०

१३६: सूक्तिसागर-
संकलनकर्ता - रमाशंकर गुप्त
हिन्दी समिति ग्रन्थमाला-२६
प्रकाशनशाखा- सूचना विभाग,उत्तरप्रदेश
प्रथम संस्करण-१६५६

१३७: सूरदास - (जीवन और काव्य का अध्ययन)
लेखक- डा० ब्रजेश्वर वर्मा
प्रकाशक-हिन्दी परिषद्, प्रयाग विश्वविद्यालय,प्रयाग
तृतीय संस्करण-१६५६

१३८: सोलहवीं शती के हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि -
लेखिका- रत्नकुमारी
प्रकाशक- भारतीय साहित्य मंदिर,फव्वारा,दिल्ली
संवत्-२०१३ वि०

१३६: हनुमान बाहुक- (गोस्वामी तुलसीदास कृत)
टीकाकार- पं० महावीर प्रसाद मालवीय वैद 'वीर'
मुद्रक और प्रकाशक- मोतीलाल जालान,
गीताप्रेस,गोरखपुर
प्रथम संस्करण- १६६० वि० संवत्

१४०: हिन्दी आर्यासप्तशती-
गोवर्धनाचार्य विरचिता
व्याख्याकार-पं० रमाकान्त त्रिपाठी
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन,वाराणसी-१
प्रथमसंस्करण-१६६५,वि०संवत्-२०२२

१४१: हिन्दी एवं मराठी के वैष्णव संत साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन-
लेखक- डा० न०चि० जोगलेकर
प्रकाशक- जवाहर पुस्तकालय,मथुरा
वि०संवत्-१४०० से २७०० तक

१४२: हिन्दी और तेलुगु वैष्णव भक्ति साहित्य -
(तुलनात्मक अध्ययन)
लेखक- के- रामनाथन
प्रकाशक- विनोद पुस्तक मन्दिर,आगरा
प्रथम संस्करण-१९६८

१४३: हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि -
डा० द्वारिका प्रसाद सक्सेना
प्रकाशक-विनोद पुस्तक मन्दिर,आगरा
प्रथम संस्करण-१९६४

१४४: हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग -
लेखक- डा० नामवरसिंह
प्रकाशक-लोक भारती प्रकाशक,इलाहाबाद-१
तृतीय परिवर्द्धित संस्करण-१९६२

१४५: हिन्दी के श्रेष्ठ काव्यों का मूल्यांकन -
संपादक- डा० यशगुलाटी
प्रकाशक- सूर्य प्रकाशन,नई सड़क,दिल्ली
प्रथम संस्करण-१९६९

१४६: हिन्दी नीतिकाव्य-
लेखक- डा० भोलानाथ तिवारी
प्रकाशम-विनोद पुस्तक मन्दिर,आगरा
प्रथम संस्करण-१९५८

१४७: हिन्दी भक्त वार्ता साहित्य -
लेखक- डा० ललता प्रसाद दुबे
प्रकाशक- साहित्य सदन, पल्टन बाजार, देहरादून
प्रथम संस्करण-१९६८

१४८: हिन्दी भक्ति रसामृत सिंधु -
भाष्यकार- आचार्य विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि
संपादक- विजयेन्द्र स्नातक
प्रधान संपादक- डा० नगेन्द्र (संयोजक)
प्रकाशक- हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली
प्रथम संस्करण- १९६३

१४९: हिन्दी भक्ति साहित्य में लोक तत्व -
लेखक - डा० रवीन्द्र भ्रमर
प्रकाशक- भारती साहित्य मंदिर, फव्वारा, दिल्ली
प्रथम संस्करण-१९६५ ई०

१५०: हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास-
लेखक- डा० शंभूनाथ सिंह
प्रकाशक- ओम प्रकाश बेरी,
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी-१
द्वितीयावृत्ति-१९६२

१५१: हिन्दी में नीतिकाव्य का विकास
लेखक- डा० रामस्वरूप शास्त्री रसिकेश
प्रकाशक- दिल्ली पुस्तक सदन, दिल्ली, पटना,
जयपुर द्वारा प्रकाशित
संस्करण-१९६२

१५२: हिन्दी वैष्णव भक्ति काव्य -
लेखक- डा० योगेन्द्र प्रताप सिंह
प्रकाशक- साहित्यभवन, प्रा० लिमिटेड
इलाहाबाद-३
प्रथम संस्करण-१९६६

१५३: हिन्दी सगुण काव्य की सांस्कृतिक भूमिका-
लेखक- रामनरेश वर्मा
प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी
प्रथम संस्करण, संवत्-२०२०

१५४: हिन्दी साहित्य - प्रथम खण्ड
संपादक- धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान)
ब्रजेश्वर वर्मा (सहकारी)
प्रकाशक- भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग विश्वविद्यालय,
प्रयाग
प्रथम संस्करण-१९६२ई० संवत्-२०१९

१५५: हिन्दी साहित्य- द्वितीय खण्ड
संपादक-धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान)
ब्रजेश्वर वर्मा (सहकारी)
प्रकाशक- भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग
प्रथम संस्करण-१९५९ ई०

१५६: हिन्दी साहित्य का अतीत -
लेखक- विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
प्रकाशक- वाणी वितान प्रकाशन,वाराणसी-१
प्रथम संस्करण-संवत्-२०१५

१५७: हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास -
(संवत् ७५० - १७५०)
लेखक- डा० रामकुमार वर्मा
प्रकाशक- रामनारायण लाल बेनीमाधव,प्रयाग
पंचम संस्करण-१९६४

१५८: हिन्दी साहित्य का इतिहास-
लेखक- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
प्रकाशक- काशी नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी
चौदहवां पुनर्मुद्रण-संवत्-२०१६

१५६: हिन्दी साहित्य और साहित्यकार -
लेखक- सुधाकर पाण्डेय
प्रकाशक- नन्द किशोर एण्ड संस, चौक, वाराणसी
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, ज्ञानवाणी,
बनारस
संक्षिप्त संस्करण- १९५६ ई०
संक्षिप्त संस्करण-१९५७ ई०

१६०: हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास-
प्रथम भाग- संपादक- राजबली पांडेय
प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा,काशी
प्रथम संस्करण-संवत्-२०१४ वि०

१६१: हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास -
पं० परशुराम चतुर्वेदी
चतुर्थ भाग
संवत्-१४०० -१७०० वि०
(भक्तिकाल- निर्गुण भक्ति)
प्रकाशक- नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी
प्रथम संस्करण-२०१५ वि०

१६२: हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास-
डा० रामरतन भटनागर
प्रकाशक- साथी प्रकाशन,सागर (म०प्र०)
द्वितीय संस्करण-१९६४

१६३: हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियां -
डा० जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल
प्रकाशक- विनोद पुस्तक मन्दिर,आगरा
प्रथम संस्करण-१९७२

१६४: हिन्दी साहित्य की भूमिका -
लेखक- डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, शास्त्राचार्य
प्रकाशक- हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर,बंबई-४
छठीबार-१९५६

१६५: हिन्दी साहित्य - युग और प्रवृत्तियां -
लेखक-डा० शिवकुमार शर्मा
प्रकाशक- अशोक प्रकाशन,नई सड़क,दिल्ली-६
प्रथम संस्करण-१९६२

१६६: हिन्दी साहित्यानुशीलन -
लेखक- स्नातक सत्यकाम वर्मा
प्रकाशक- रामनारायण लाल बेनीमाधव,प्रयाग
पंचम संस्करण-१६६४

१६७: हिन्दी साहित्य रत्नाकर अथवा महाकवि तुलसीदास -
लेखक- रामचन्द्र द्विवेदी
प्रकाशक- रामचन्द्र द्विवेदी
सत् साहित्य प्रकाशक मण्डल,नया टोला,पटना
प्रथम संस्करण -विक्रम संवत् -१६८६

१६८: हिन्दू संस्कार -
लेखक- डा० राजबली पाण्डेय
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी
द्वितीय संस्करण -१६६६

संस्कृत ग्रन्थ

१: कुमारसंभवम्-
कालिदास कृत
हिन्दी व्याख्याकार- श्री प्रद्युम्न पांडेय
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन,वाराणसी
प्रथम संस्करण-१६६३

२: पंचतंत्रम् -

विष्णु शर्मा प्रणीतं
टीकाकार- स्व० गोकुल दास गुप्त
संपादक- पं० रामचन्द्र झा
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन
विद्याभवन संस्कृत ग्रन्थमाला, वाराणसी
प्रथम संस्करण-वि०संवत् -२०१५

३: प्रसन्न राघवम् -

महाकवि जयदेव
व्याख्याकार- आचार्य शेषराज शर्मा रेग्मी
प्रकाशक- चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी -१
द्वितीय संस्करण-वि०संवत्-२०२०

४: मनुस्मृति-

पं० हरगोविन्द शास्त्री,
मणिप्रभा- हिन्दी व्याख्योपेता
प्रकाशक- चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ आफिस, वाराणसी-१
द्वितीय संस्करण-संवत्-२०२१-१९६५

५: शतकत्रयम्-

भर्तृहरि
अनुवादक- श्रीकृष्ण खरे
संपादक- श्रीकृष्णदास
प्रकाशक- मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद

६: शब्द कल्प द्रुम: - पंचमो भाग :

स्यार राजा राधाकान्तदेव बहादुरेण विरचित:

प्रकाशक- चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस,वाराणसी-१

तृतीय संस्करण-संवत्-२०२४ वि०

चौखम्बा संस्कृत ग्रन्थमाला, ग्रन्थ संख्या-९३

७: श्रीमद्भागवत महापुराणम्-

महर्षि वेदव्यास प्रणीतं

सरल हिन्दी व्याख्या सहित

प्रकाशक- गीताप्रेस, गोरखपुर

प्रथम खंड- पंचम संस्करण-संवत्-२०२१

द्वितीयखंड-पंचम संस्करण-संवत्-२०२१

८: श्रीमद्भागवत और विष्णु सहस्रनाम -

प्रकाशक-मोतीलाल जालान,गीताप्रेस,गोरखपुर

छप्पनवां संस्करण-संवत्-२०२७

९: श्रीमन्महाभारतम् (मूलमात्रम्)

महर्षि श्रीकृष्ण द्वैपायन प्रणीतं

प्रकाशक- गीताप्रेस,गोरखपुर

प्रथम संस्करण- भाग-१ - वि०संवत् -२०१३

भाग-२ - ,, -२०१४

भाग-३ - ,, -२०१४

भाग-४ - ,, -२०१५

१०: श्रीवाचस्पत्यम्- (वृहत् संस्कृताभिधानम्)
तर्कवाचस्पति श्री तारानाथ तर्कवाचस्पति
भट्टाचार्येण संकलितम्, षष्ठोभागः
प्रकाशक- चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१
षष्ठोभाग- संस्करण - ई० १९६२
वि०२०१८

११: सुभाषित रत्न भाण्डागारम् -
परबोपाह्वपाण्डुरंगात्मजकाशिनाथशर्मणा
समुद्धृत:
सूक्तिसंग्रह: पंचमं संस्करणम्
पणशीकरोपाह्वविठ्ठलात्मज लक्ष्मण शर्मतदनुजन्मा
वासुदेव शर्मणा परिष्कृत्य संशोधितम्
शाक: - १८३३ सन् -१९२२

१२: हनुमन्नाटक -
हनुमान
प्रकाशक- चौखम्बा संस्कृत सीरीज़, बनारस,
प्रथम संस्करण-वि० संवत् -२०२४

१३: हितोपदेश -
संपादक- श्रीनारायण पण्डित
प्रकाशक- पण्डित पुस्तकालय , काशी

English Books

1.Akbar the great Mogul (1542-1605)

by Uincent A.Smith.C.I.E.

Published by S.Chand & Co.Delhi

by arrangement with the Oxford University

Press,Bombay.

Second edition,Revised

Second Indian Reprint-1962

2.A History of Hindi literature.

By K.B.Jindal

with a forward by

Pandit Amaranath Jha

First Published,June,1955

3.Encyclopedia-

By Waverley

Edited by gardon Stowell

Printed in Great Britain by

Amalgamated Press Ltd., London

The Waverley Book Company Ltd. London.

4.Encyclopedia of Literature

By Cassell

Edited by S.H.Steriberg

Volume I

First Published.1953

Cassell and Company Ltd.London

5. On Tulsidas.

By G.A.Grierson
Volume VIII
Latest edition 1971
Editor-James Hastings
Publishers-Edimburgh.T&T Clark
38,George Street (New york)
597,Fifth Avenue

6. The Ramayana of Goswami Tulsidas.

By S.P.Bahadur
Publisher.Jaico Publishing House,
Bombay
First edition-1972

7.Social life during the Mughal age
(1526-1707)
By P.N.Chopra
Pran Nath Chopra
Pran Nath Chopra
foreward by Humayun Kabir,
Shiv Lal Agarwala & Co.P.Ltd
Publishers-Jaipur,Agra,Indore,
First Edition-1963

8.The Cultural Heritage of India .
Volume II
Introduction by Dr.C.P.Ramaswami Aiyar
Culcutta- The Rama Krishna Mission
Institute of Culture.

Published by Swami Nitya Swarupananda
Secretary
Second Edition-1962
Board of Editors-Chairman
Dr.S.Radha Krishnan
Haridas Bhattacharya

9. The Cultural Heritage of India.
Volume III
Editor.Haridas Bhatta Charyya
The Rama Krishna Mission Insitute of Culture
Second Edition-1953

10.The Cultural Heritage of India
Volume IV
Editor Haridas Bhatta Charyya
Introduction by Bharataratna Bhagavan
Second Edition-1956

11.The Randon House Dictionary of the English Language
Editor-Jess Stein-
Editor in chief.
Laurence hrdany-Mamaging editor
Published in New York by Random House
Copyright 1979,69,67,66
BY Random House

12. Tulsidas Ramayana.

Author-Kunti Sharma

Publisher- Higginbothams Pvt.Ltd.

Mount Road,Madras-2

First Edition-1967

मलयालम ग्रन्थ

१: शब्दतारावली-

श्री कंठेश्वरम् जी पद्मनामपिल्लै

मलयालम कोश

साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघ

नाशनल बुक स्टाल,कोट्टयम्

पांचवां संस्करण-१६६४

पत्र - पत्रिकायें

१: कल्याण- ४-८-७०

लेखक- श्री जे०डी०शुक्ल

अध्यक्ष- राजस्व परिषद्,उत्तरप्रदेश

२: कल्याण- वर्ष-४४ , अंक-११

लेखक- श्रीकृष्ण दत्तजी भट्ट

३: ~~तुलसीदास~~ तुलसीदल - १६-६-७२

संपादक एवं प्रधान संपादक -पं० शंभूनाथ शुक्ल

४: तुलसीदास - १९-१०-७२
प्रधान संपादक-शंभू नाथ शुक्ल

५: तुलसीदास - मानस रचनाकार - संत शिरोमणि श्री तुलसीदास जी
वर्ष-११ ,अंक-१,जून-१९७०

६: नवभारत टाइम्स- दैनिक पत्र
१९७० अगस्त-११

७: युगप्रभात- उदय मान मिश्र
१६ जुलाई ,१९७२ , कालिकट ,केरल

८: युगप्रभात- उदयमान मिश्र
कालिकट,केरल,२६-२-१९७२

९: रसवती - ५-१०-७२
संपादक- प्रेमनारायण टंडन
नंदन प्रकाशन,रानीकटरा,लखनऊ-३

१०: हिन्दी सन्देश की फाइल - १९५२-५३
हिन्दी साहित्य कोश- भाग-१
संपादक-धीरेन्द्रवर्मा, धर्मवीर भारती,रामस्वरूप चतुर्वेदी
रघुवंश (संयोजक)
प्रकाशक- ज्ञानमंडल लिमिटेड ,वाराणसी-१
द्वितीय संस्करण,संवत्-२०२०